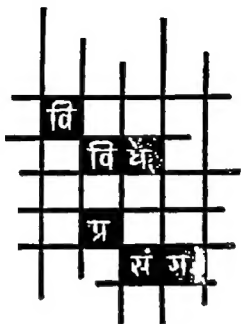




विविध प्रसंग

३





३

हरि प्रकाशन  
इ ल य ना बा द



● अमृतपत्र

प्रकाशक

ईश प्रकाशन इलाहाबाद

मुद्रक

पियरलेस प्रिंटेर्स इलाहाबाद

माखरस-सज्जा

कृष्ण चंद्र श्रीवास्तव

प्रथम संस्करण

प्रेमचंद स्मृति दिवस १९६२

मूल्य—₹ १२ ५०

## भूमिका

सब जानते हैं, प्रेमचंद ने अपने साहित्यिक जीवन का धारम उर्ध्व से किया था। बरसों केवल उर्ध्व में लिखते रहने के बाद वह हिन्दी की तरफ घाये। उपन्यास और कहानियाँ तो सिन्धी ही साहित्य, संस्कृति, समाज राजनीति से संबन्ध रखनेवाले विविध प्रसवों पर डेरों लेख भी लिखे। इस प्रकार के लेखन का उनका क्रम प्राचीन जमाना और सुंशीजी के पूर्ण साहित्यिक व्यक्तित्व और बेन को समझने के लिए उनका महत्व सुंशीजी के कथा-साहित्य से अत्युत्तम कम नहीं है।

इस खदाने की तरफ अब तक किसी का ध्यान नहीं गया था, और शायद इन रचनाओं के लेखक का भी न जाता अगर सुंशीजी की प्रामाणिक जीवनी लिखने के लक्ष्य ने उसे मजबूर न किया होता कि वह उन सब चीजों की खान-खान करे जो-जो सुंशीजी ने जब-जब और जहाँ-जहाँ लिखीं। पुरातत्व विभाग की इसी कुशाई में यह खोजी जा हाय लय गया !

यह लयमय खोज ही पृष्ठों को सामग्री है जो 'विविध प्रसव' के तीन खण्डों में भी जा रही है।

पहले खण्ड में १९३३ से लेकर १९२० तक के लेख और समीक्षाएँ हैं, काल-अनुक्रम से। 'तुर्की में वैज्ञानिक राज्य' शीर्षक लेख भूल से प्रस्तुत अग्रह पर लय गया है।

दूसरे और तीसरे खण्ड में १९२१ से लेकर १९३६ तक के लेख, टिप्पणियाँ और समीक्षाएँ हैं जिनको 'राष्ट्रीय राजनीति' 'अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति' 'हिन्दू मुक्तमान' 'छूत-आपूत' 'किसान-मजूर साहित्य-वर्धन' 'धर्म-समाज' 'महिला, अपत्य' 'समीक्षाएँ' 'संज्ञा-लिपियाँ' आदि शीर्षकों के अन्तर्गत विषय-क्रम से प्रस्तुत करना अधिक सार्थक जान पड़ा।

छोटी टिप्पणियों को भी हमने बड़ी स्याम दिया है जो बड़े लेखों की, सिर्फ इसलिए नहीं कि सुंशीजी ने उन्हें लिखा है बल्कि इसलिए कि वह लिखने में चाहे जितनी छोटी हों पर बाब यहूत करती हैं। अपने उस छोटे-से कलेवर में भी उनका अतथ्य स्पष्ट है, महत्वपूर्ण है और उनकी उपेक्षा नहीं की जा सकती।

समीक्षार्थ कुछ छोड़ दी गयी है। बी बी का रूही हैं, उनमें दो प्रकार की समीक्षार्थ हैं। कुछ तो बहुत जागी-जागी पुस्तकों की समीक्षार्थ हैं। उनके संबंध में कुछ कहने की जरूरत नहीं है। कुछ प्रकाश-सौ पुस्तकों की समीक्षार्थ हैं। उनको देना इसलिए जरूरी समझा गया कि उन पुस्तकों को निमित्त बनाकर मुंशीजी ने अपनी कोई बात कहनी चाही है।

‘बिबिध प्रबंध’ के पहले अंक में अखिलीय लेखक बंधु के प्रसिद्ध पत्र ‘जमाना’ से लिखे गये हैं जिससे मुंशीजी का आलोचन बहुत आत्मीय संबंध रहा। ‘जमाना’ की पूरी प्रशंसा किसी एक जगह नहीं मिल सकती—‘जमाना’ के अपने घर में भी नहीं। इस कमी को लखनऊ विरबिद्यालय और अलीगढ़ विश्वविद्यालय के संबंधों से काड़ी हब तक पूरा कर लिया गया है, तो भी कुछ टुकड़े बचे जो धायब भावे कमी किये। इस बीच में बंधु के प्रसिद्ध पालीक प्रोफेसर एडवोकेट गुरुदेव, जो अक्सर प्रयाग विरबिद्यालय में उच्च विद्या के अध्यक्ष हैं और अक्टर क्लब रईस से, किन्हीं प्रेमबंध के उपपत्तियों पर काम करके डाक्टरेट ली है और जो इन दिनों दिल्ली विश्वविद्यालय में उच्च के अध्यक्ष हैं, बहुत मरब मिली है और मैं हृदय से उनका आभारी हूँ।

इस अर्थ में मुंशीजी ने ‘जमाना’ के अलावा और भी अनेक उर्दू पत्रों में जैसे मौलाना मुहम्मद अली के ‘हमबंद’ और ‘इस्लामिक असी ताज’ के ‘कृष्णा’ ‘जमाना’ आदि से जो निकलनेवाले साप्ताहिक ‘आबाद’ और अकबर के मासिक पत्र ‘सबह-ए-अमीर’ में काड़ी नियमित रूप से लिखा। दुर्भाग्यवश अब तक उनकी और दूसरे अनेक उर्दू पत्रों की प्रशंसे नहीं मिल सकी है जिसको देखना निश्चय जरूरी है क्योंकि उनमें कथानियों के साथ-साथ यश-करा सुख लेख होने की भी पूरी समाखवा है। बहरहाल उर्दू पत्रों को ललाख और क्लबों का यह काम सबा है और काड़ी दिनों तक चलते रहना होगा।

‘उत्तारे जमाना’ के नाम से एक स्वामी स्तंभ मुंशीजी ने ‘जमाना’ में बहुत असें तक लिखा लेकिन अक्षिप्तता से घात पर मुंशीजी का नाम नहीं आता था और अब से अब तक यह स्तंभ उनके हाथ में रहा इसका भी कहीं कहीं संकेत नहीं मिलता। १९३० में जब ‘जमाना’ का प्रेमबंध-स्थिति टंक निकला था तभी जमाना-संपादक मुंशी बखारामन विद्यम के लिए यह बतलाना अंतम हो गया था कि प्रेमबंध के लिये हुए ‘उत्तारे जमाना’ के कालम कीम से हैं अब तो इसकी पड़ताल का कोई ललाख ही नहीं पठता। अक्षययोग के दिनों में, मोकरी छोड़ने के ठीक पहले, मुंशीजी ने ताजीमी नाम-अपेक्षापरिधान पर एक लेख लिखा था पर वह अब तक कहीं नहीं मिलता।

उर्दू के इन सब लेखों को क्यों का क्यों छाप देना हिन्दी पाठकों के लिए बहुत कठिनाई उपस्थित करता इसलिए उनका हिन्दी क्वाण्टर चकरी ही गया।

ही क्वाण्टर करते समय इस बात का विशेष ध्यान रखा गया है कि सुशीली की भाषा और शैली की पूरी तरह रखा हो और केवल ऐसे ही शब्द और वाक्यांश बरसे जायें जिनको बदले बिना काम न चलता ही।

त्रिविध प्रसंग के दूसरे और तीसरे खण्डों में मूल हिन्दी सामग्री है। कुछ छुटकर लेख और टिप्पणियाँ और समीक्षाएँ मासुरी और मर्यादा, स्वदेश धारि पत्री से ली गयी हैं (त्रितका संकेत जो लेख के अंत में दे दिया गया है) लेकिन धार्पकांस सामग्री 'हंस' और 'बागएण' से संकलित है। मासिक पत्र होने के मते, 'हंस' से ली गयी सामग्री के अंत में केवल महीना और सग मिलेया 'बागएण' साप्ताहिक या उसमें तारीख जो मौजूद है।

'हंस' और 'बागएण' की इस सामग्री के लिए मैं वंदित चिनोद शंकर ध्यास का अनन्य धानारी हूँ जिन्होंने अपनी जतन से रची हुई आइलें सुने चीपकर इस कार्य को संभव बनाया। जहाँ तक मैं जानता हूँ 'हंस' और बागएण की पूरी आइल, निधेयत बागएण की और कहीं भी उपलब्ध नहीं है। उनके सौहाय और सहयोग से ही प्रेमचंद का यह लेखनी पत्रकार का कम हिन्दी सप्ता के सामने प्रस्तुत करना संभव हो रहा है।

इन लंबे शोध-काम में त्रितका मूत्रपात बीचनी लेखन से हुषा माई मह-देव साहा की निरंतर प्रेरणा का मैं कितना आणो हूँ इसकी स्वीकृति धर्मों से नहीं मोन से ही की जा सकती है।

माई भीमाय पाएडेय ने कुछ लेख कलकत्ते से बुँडकर भेजे। मैं उनका धानारी हूँ।

दूसरे भी कई जिनों का सुखत सहयोग मुझे इस कार्य में मिला है। उन सबके प्रति मैं अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ।

असूत राय





उपन्यास-रचना ११ प्राचीन मिस्र काति के धर्म-तत्व २१ उपन्यास ३३ पम्पांक का प्रस्ताव ३१ साहित्य की प्रगति ४८ बीजक और साहित्य में बुद्धा का स्थान ३६, साहित्य और कला में बुद्धा की उपभोगिता ३७ राशिद-उल-खैरी की सामाजिक कहानियाँ ३१ हल्बी की गौठनाला पताही ६६ प्रेमचंद की प्रेम-सीमा का उत्तर ७० सम्पादकों के पुरस्कार ७२ शांति-निवेदन में ७३ मेरी रसीसी पुस्तकें ७६ सम्पादन-कला की शिक्षा ७८ साहित्य का उत्थान या पतन ७८ क्या यह लेखिकाओं के साथ पक्षपात है? ७९ वं अनाहरामास बी की निराशा ८ खोबि मट कस में प्रकाशन ८१ लेखकों को बर्नाइसा का उपदेश ८३ साहित्यिक संधिपात ८३ हुसी बीजक ८४ समिपत्वन सत्य और सामारख जनता १ सम्पादन कला-विद्यालय की आवश्यकता ११ हिन्दी में पुस्तकों का प्रकाशन ११ साहित्य सम्मेलन का एक महत्वपूर्ण प्रस्ताव १३ बिहार-राष्ट्रीय-साहित्य-सम्मेलन पुष्पिका १४ इन्दीर हिन्दी साहित्य सम्मेलन १६ तुमसी जयन्ती का तुमसी बुधपतिपि ११, तुमसी-स्मृति-तिथि कैसे मनानी जाय १० साहित्यिक मुद्रापन १ २ इंटरन्यू क्या है १ ३ मयर मर्ही क्या हुआ १ ३ मार टीम साहित्य और वं अनाहरामास नेहक १०३ राष्ट्रमाया कैसे समझ हो १०८ निबेदी से हमारा नम्र निवेदन ११० साहित्यिक कलाओं की आवश्यकता ११३ पटना का हिन्दी साहित्य परिषद् ११४ हिन्दी-साहित्य के विद्यालय ११६ भारतीय साहित्य परिषद् ११७ प्रगतिशील लेखक-संघ ११८ हिन्दी लेखक संघ का एक रूप ११९ पुस्तकालय मान्दी लन १२० बरिठोप १२१ पत्रों के छात्रों का भावतिजनक व्यवहार १२८ बापान में पत्रों का प्रचार १२९, एक सांकेतिक साहित्य-संस्था की आवश्यकता १३ हिन्दी लेखक संघ १३१ पटना का हिन्दी-साहित्य परिषद् १३४ संकलन में भारतीय साहित्यकारों की एक नवी संस्था १३६ साहित्य सम्मेलन के विषय में १३८ अखिल भारतवर्षीय पुस्तकालय-संघ १३९, श्री कम्प्य और माची जयत् १४ ।

### धर्म-समाज

तस्वीर के दो रूप १४७ समिपत्वन १४८ राष्ट्र के शिक्षार १४९ धर्ममेर में भाववानन्द-निर्वाण धर्मशास्त्री १५ सहारमा बी का शीघ्र मिशनरी को जबाब १५ स्मरतीय रामकम्प्य संधिपात १५१ बिरेरा यात्रा और आयत्तिव १५२ धर्मो और बुरी धार्मिकविषय १५२ अति मेह मिटाने की एक सामीजना १५३ कस में धर्म विरोधी मान्दीलन १५४ हिन्दू समाज के बीमत्त बुरय १ १५४ हिन्दू समाज के बीमत्त बुरय-२ १५७ हिन्दू समाज के बीमत्त बुरय ३ १६ ।

## स्वदेशी

१६३ से १७८

स्वदेशी की भाङ में झूट १६५ प्रयाग की स्वदेशी प्रदर्शनी १६३ स्वदेशी पर मानवीय भी १६६ भारतीय भीगी के कारखानों का प्रयाग १६७ अरुमी धीर लक्ष्मी स्वदेशी भीजे १६८ लखनऊ मिर्चों की भूम १६८ स्वदेशी १६९ भारतीय कपड़ा धीर भारतीय बई १७१ शकर पर एकसाइड झूटी १७२ सरखल नवी रजा बाग १७२ झाड़कों का बसिद्यान मिल-जाजिका के लिए १७३ मि मोड़ी की उबारता १७४ संर जयों की भूम १७५ धान इंडिया स्वदेशी नव १७५ कोइ पर खान १७६।

## शिक्षा-संस्कृति

१७९-२४६

कुच्छुल हांगड़ी में तीन दिन १८१ बच्चों की स्वाधीन बनाओ १८५ मानसिक पठनीयता १८८ राष्ट्रीय कवियों में गुलामी १९८ अंग्रेजी माया का रोग १९५ श्रीजी कालेज की धापोजना १९६ नवीन धीर प्राचीन १९६ संयुक्त प्रान्त के बी कम्पोजिटन १९८ स्वामी अज्ञानम् धीर भारतीय शिक्षा प्रवर्धनी २ १ सवाक किर्मा के दिन गिने हुए हैं २ ३ भाषति २ ४ भाषति-२ २०६ बैहमी के जानेवा मिलिमा की रिपोर्ट २ ३ सर पी सी राम का मुबकों को धारैत २१ इलाहाबाद युनिवर्सिटी के नये बाइल बांतलर २११ स्कूलों में स्वास्थ्य-परीक्षा २११ गोरखपुर में शिक्षा सम्मेलन २१२ सम्मेलन सम्मेलन २१३ संयुक्त प्रान्त में शिक्षा का प्रचार २१३ बच्चों का शान्ति-निर्देशन २१३ फेन होनेवाले लड़के २१६ काशी में शिक्षा मन्त्री का सुनामन २१६ लखनऊ विरबिद्यालय २१७ भाग्य में लाल साहित्य २१७ सिम्ह संसार में एक नयी योजना २१८ डाइकास्टिंग बैहमी में २१९ प्रयाग में रामलीला २१९ एक उचित पठमर्त २२ शिक्षा का नया धारण २२१ भारत में प्रथ २२२ प्रयाग की रामलीला बंद २२३ अस्तित्व संय के बीरे २२४ हिन्दी साहित्य में ईश्वर की धीरानेवर २२४ कारमाइलन साइलरी की हीरक जयन्ती २२७ सिनेमा धीर मुबक २२८ सर पी सी राम का धीरान्त भावण २२७ सर लेक बहापुर सयू का प्रयाग २३ डाक्टर टीनेर बन्दई में २३१ साम्प्रदायिकता धीर संस्कृति २३२ हुआ का लल २३३, बर्मनी में नाच पर बरिस २३६ स्वामी-सत्यदेव पाठशाळा २३६ भारतीय कमा की धारणा २३७ नवकरों के लिए संतीय की बाह २३८ लोहारों में बने २३९ भारत में गुर प्रया २३९ स्वास्थ्य धीर शिक्षा २४१ महात्मा पी को जयन्ती २४३ प्रयाग महिला-विद्यापीठ की साहित्यिक प्रगति २४४ प्रयाग महिला विद्यापीठ की नयी योजनाएँ २४५।

मिस्टर हरमिनाथ शारदा का नया कानून २४६ नारि-जाति के अधिकार २४६  
 लताओं की संख्या क्यों बढ़ती जाती है ? २४ सिनेमा स्टाॅरों के धर्ममन्त्र किन् २४१  
 पानीपुर के की-वापरेटिव सम्मेलन में संछान निग्रह २४१ महिला-समाजों में संछान-निग्रह  
 का प्रस्ताव २४२ मित्र मेयो की धारणा एक पारसी महिला के रूप में २४२ भारतीय  
 महिलाओं में नवीन जाति २४१ बालिकाओं का सुकार्य २४४ इंग्लैंड का नैतिक पठन  
 २४४ कायस्थ काण्डर्सेल २४५ एक उपयोगी प्रस्ताव २४६ सर हर्षिचंद्र मौड़ का समाज  
 किन् २४७ लखनऊ की बेरयाओं में नयी जाति २४६ एक कुली वान २६ धौरतों  
 का रूप-विज्ञान २६१ बेरयाकुति २६२ धनापिनी विद्या २६३ विद्याओं के गुजारे का  
 बिहारी संसद २६२ प्रयाग में महिला-व्यायाम अधि २६३ विद्याओं के गुजारे का  
 किन् २६४ महिला सम्मेलन में संछान-निग्रह २६३ कुमारी शिक्षा का धारणा २६६  
 महिलाओं की शिक्षा पर पं जवाहरलाल नेहरू २६६ क्ल का नैतिक उत्थान २६७  
 वैवाहिक सेन-सेन और कानून २६८ नया स्थियों का पाठ्या पठनमा जुम है ? २६८  
 संछान निग्रह और प्राइवेट नियम २६६ नारियों के साथ धर्ममन्त्र क्यों २७ ।

राष्ट्रमाया

भारत की राष्ट्रमाया २७१ बड़ीया राज्य में हिन्दी २७४ हिन्दू-विरवविद्यालय  
 में हिन्दी बाद-विचार २७४ हिन्दी द्वारा उच्च शिक्षा २७५ पुत्नी जर्न २७६ बच्चों में  
 हिन्दी प्रचार २७७ वृत्तीय बच्चों भारत हिन्दी-प्रचारक सम्मेलन २७६ हिन्दी ज्ञान  
 दानी मवडल की हिन्दी भाषियों से अपील २८ हिन्दुस्थानी एकादमी २८२ तिमाही या  
 वीमासिक २८३ एक हिन्दी-साहित्य विद्यालय की बकरत २८३ लेडी धर्मुल कारिन् का  
 राष्ट्रमाया प्रेम २८४ कारवीर की एसेम्बली में जर्न २८४ लेडीस में हिन्दी-साहित्य सम्मे-  
 लन पर एक बुद्धिपाठ २८५ प्रथम विगत २८६ टयरा किन् २८६ तीसरा किन् २८७  
 चौथा किन् २८७ वे राष्ट्रमाया का राष्ट्र २८८ हिन्दी का नामा २८९ उपमायाओं का  
 उदार २८९ हिन्दी जर्न और हिन्दुस्थानी २८२ बच्चों भारत में हमारी हिन्दी प्रचार  
 याया २८९ सरकारी सूच में हिन्दी और मुम्बली का बहिष्कार ३१ हिन्दुस्थान की  
 कीनी बचान ३१४ हिन्दुस्थानी एकादमी का सामाना जमना ३१४ राष्ट्रमिति ३१५,  
 हिन्दुस्थानी एकादमी का वार्षिक सम्मेलन ३१६ दिल्ली में हिन्दुस्थानी समा ३१८ ।

## नीर-क्षीर

३२१—३६३

## अज्ञाजसियाँ

३६७-४४४

मुंठी पोरख प्रसाव 'द्वयण' ३१३ हेंगामए हसण ४० स्वर्गीय पंडित ममन  
 दिवेरी ४ ३ शैशवन्तु बिठरंजन दास ४ ४ मीनागा हसण मोहानी ४११ मुंठी विन्तु-  
 नाउयण मागव ४१४ कर्मवीर विद्याधी की ४१७ वं पयसिह की कर्मा का स्वर्गबास  
 ४१३ डाक्टर एनी बेसेंट की शिपासवीं जयन्ती ४२ कृष का धाम्य-विधाता ४२१ सर  
 धलीइमाम की स्वर्ग-यात्रा ४२२ मि बामस बाटा ४२२ श्रीयुक्त सङ्गल का पद-त्याग  
 ४२३ बबाईयाँ ४२४ धर्मिलाल ४२५ द्विव की को बबाई ४२८ की राहुन साङ्करमा-  
 यन की ४२८ अज्ञाजसि ४२९ राजा राममोहन राय ४३१ मिसेज एनी बेसेंट का स्वर्ग  
 बास ४३२ मृत्यु पर विजय ४३२ श्री रंजितसामी झाईगर की लोकजनक मृत्यु ४३४ राजा  
 सर मोतीचंद का स्वर्गबास ४३५ स्व पंडित बरदीनाथ मट्ट ४३५ स्वर्गीय वं०  
 बन्नेखर सासनी ४३७ स्वर्गीया मैरम क्यूरी ४३८ डाक्टर हीराबाल का स्वर्गबास  
 ४३८ कामा-कांकर नरेश का स्वर्गबास ४३९ अज्ञाजसि ४४ स्वर्गीय सुबंनान ठकुर  
 ४४१ स्वर्गीय मीनागा हाली की शताब्दी-जयंती ४४१ मि किष्किय का स्वर्गबास  
 ४४२ सम्राट बार्ज पंचम का स्वर्गरोहण ४४३ हसण राशिब खैरी का स्वर्गबास  
 ४४३ श्रीमती कमला मेहक का स्वर्गबास ४४४ श्री मैकली सरण स्वर्ण-जयन्ती  
 ४४४ डाक्टर ए० ए घंसाठी का स्वर्गबास ४४५ ।

## फुटकर घुटकुसे

४४७-४६४

व्याप का धरम ४४९ बनारस की खैरी कचहरियाँ ४५० व्याप में मिलज्व  
 धन्याय है ४५१ घिरेकी व्याप-परम्परा ४५२ अज्ञानों में खोती ४५२ समुक्त प्राण में  
 फलों की कारत ४५३ कारनिवर्तों में बुधा ४५४ बुध का युग ४५४ बुध का युग  
 ४५५ मारों में बुधनाएँ ४५६ मूव फल बाधो ४५७ परिचयी व्यापान का पागलपन  
 ४५७ मोटर व्यवसाय ४५८ टैहरी और बहीनाय का मन्दिर ४५९ ह्माठी संस्थाओं में  
 व्यक्तिपठ हैप ४६ मार्गट एबरेस्ट की बहाई ४६ श्री प्राणनाथ विद्यालंकार की  
 मद्भुत खीब ४६१ बंगा सम्मेलन ४६२ भारत के कीरी ४६२ कारी में पोस्टमैनों की  
 कार्डिस ४६२ श्री एन जय्यु रैजवे ४६३ जिरेसी कपड़े पर कारिये की मुहर ४६४  
 ताबुन की बेस-रेख ४६४ खण्ड के लिए खैर की सजा ४६४ फलों की खैरी बीजे

बढ़ती जाय ४६३, विज्ञापन-कला ४६३, बेकारी का स्वास्थ्य पर प्रभाव ४६३ भीषण  
 रूटमा ४६६ पञ्चदश दिनों में मकड़ों की फसल ४६७ अंग्रेजी समाचारपत्रों का प्रचार  
 ४६७ एक्सेट की विजय ४६७ बास का बरतण्ड ४६८ रिश्तों की गम बाजारी ४६८  
 हवाई सर्जिनी दावतें ४६९ भीषण नाम बुर्जटमा ४७१ नया रेनवे बोर्ड ४७२ मध्य  
 भारत में धामकाटी से आगवनी ४७२ काशी में विजली ४७३ उम्माकू पीने पर सजा  
 ४७३ कस्पवा की सजा ४७६ काशी में कविदलों की बोड़ी ४७६ यात्रीपुर का संनम  
 ४७६ इस साल की कैद ४७७ प्रयाग में मारुट्टा की बट्टि ४७७ आठिशाबादियों का  
 बन्धक परिवान ४७८ बेकारी के करिरे ४७८ सामाजिक नियन्त्रण की उन्नत है या  
 नहीं ४७९ पेरिस में भीषण बुर्जटमा ४८० एम सी० सी० की भूम ४८० एम सी  
 सी की नय ४८१ सी० पी सरकार की सतकता ४८१ बैंकों की करियाद ४८२  
 डाक्टर की संरक्षण चाहते हैं ४८२ कोर्ट-रिप ४८३ डाकों की भूम ४८३ अंग्रेजी  
 दीपनियों का बल-पूर्वक प्रचार ४८४ पत्रों में धमूरी सबरें ४८५ बातबीठ करने की  
 कला ४८५, बहीकण्ड का नया रूप ४८ ।

हुस कथा

४९१—४०४

कुछ धपने विषय में ४९३ भारतीय साहित्य का संगठन ४९४ 'हुस' नये रूप में  
 ४९७ 'हुस' का नया रूप ४९९ भारतीय साहित्य के संगठन की एक आलोचना ५०  
 की मुंठी बुनावण एम० ए० का पत्र ५०३ प्रोफेसर सिकन्दर नेगी का सच्यवाच ५ ४ ।



A 4x4 grid with handwritten text in some cells. The text is written in a stylized, possibly Devanagari script. The grid is tilted slightly to the right.

१०			
	१०	२१	
	२१		





साहित्य-दर्शन



## उपन्यास-रचना

भारत-निवासियों ने यूरोपियन साहित्य के किसी ग्रंथ की इतना पढ़ा नहीं किया जितना उपन्यास को। यहाँ तक कि उपन्यास ग्रंथ हमारे साहित्य का एक अनिच्छेय घन हो गया है। उपन्यास का जन्म चौदहवीं-पन्द्रहवीं शताब्दी के अग्रिम हुआ। रोमरॉपियर ने अपने कई पाठकों की रचना इटालियन उपन्यासों के ही आधार पर की है। यह हीनी इतनी प्रिय हुई कि प्रायः समस्त जगत् ने साहित्य पर उपन्यास ही का प्राथम्य है। यह पचास वर्षों में भारत की साहित्यिक सभ्यता का जितना उपभोग उपन्यास-रचना में हुआ उतना शायद साहित्य के और किसी भाग में नहीं हुआ। संवत्सा ने बंकिम वैद्य किया सुबहती ने चोखिन्दास मराठी ने घापटे उद्गु ने रतननाथ और शरद जो संसार के किसी उपन्यासकार से बढकर नहीं है। हिन्दी ने पहले धनुष रस के उपन्यासकार पद्म किने पर धन बीरे-बीरे उसके चरित्र-चित्रण मनोमाल और बामुची के उपन्यास किने पर धन बीरे-बीरे उसके चरित्र-चित्रण मनोमाल और बामुची के उपन्यास प्रकटित होने लगे हैं, और धारा है कि वह जोड़े ही किनों में इस विषय में किसी प्राम्ति यथा से दबकर नहीं रहेगी। वास्तव में उपन्यास-रचना को शरद साहित्य (Lathi Literature) कहा जाता है, इसलिए कि इसके पाठकों का मनोरञ्जन होता है। प उपन्यासकार को उपन्यास लिखने में उतना ही शिमाग सगाना पड़ता है, जितना किं बालकिक को रत्न-राज के ग्रन्थ लिखने में। उसे सबसे पहले उपन्यास का विषय चोजना पड़ता है। क्या लिखे? नैतिक बीमब की बखारता दिवाणे या मनोमालों का पारस्परिक संबंध? कोई युद्ध रहस्य बुने या किसी ऐतिहासिक बटना का चित्रण करे? लेखक अपनी रचि और प्रकृति के अनुकूल ही इनमें से कोई विषय पसन्द कर लेता है। विषय निर्धारित हो जाने के पश्चात् उसे प्लाट की विन्दा होती है। वह सोचा हो या प्रामता बतता या बँटा इसी विन्दा में बुना रहता है। कभी-कभी उसे चोखिन्दास में मझेनो बरसों लय बरटे है। इस विन्दा में लेखक जितना ही व्यस्त होया उतनी ही जलम उसकी रचना होगी—

उपन्यास की बुनियाद पड़ गयी। अब हम अपना मनन चढ़ा करने के लिए मसाने की आवश्यकता होती है। उसके मुख्य साधन ये हैं

- १—अनुभव २—अनुमान ३—स्वाध्याय ४—अनुपमिति ५—जिज्ञासा

बहुते हैं,। अमरीकन के सुविख्यात साहित्यकार माक ट्वेन ने इस बात का अनुभव प्राप्त करने के लिए कि बिना टिकट रत्न-द्राम में सफर करनेवालों के चित्त की क्या दशा होती है कई बार बिना टिकट सफर किया। ऐसे ही एक और अग्रिम ने ऐतिहासिक

के बचनों की उसीर खींचने के लिए महीनों शोहरों घोर गुणों की संगति की। एक तीसरे महाराज ने जोर के रूप के मार्गों को जानने के लिए स्वयं संघ तक मारी। इसका अरथ यह जान पड़ता है कि पारशास्य देश के लेखक कल्पना-शून्य होते हैं। उपन्यासकार को ऐसी कथाओं और मनोभावों के बखन करने में अपनी कल्पना-शक्ति ही सबसे बड़ी मददगार है। ऐसा बिरला ही कीर्ति प्राप्ति होपा जिसने बचपन में पसे या मिठाई न चुरायी हो या जोरी से मेला या बंगम देखने न गया हो अपना पाठशाळा में अध्यापक से बहाने न किये हों। यदि कल्पना-शक्ति तीव्र हो तो इतने अनुभव को जोरो घोर इकट्ठों के मनोभाव चित्रित करने में कुतकाय कर सकती है। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि कृत्रिम व्यवस्थाओं में जो अनुभव प्राप्त होते हैं वे स्वाभाविक नहीं हो सकते। फिर भी उपन्यास की सफलता के लिए अनुभव अवप्रधान मन्त्र है। उपन्यास-लेखक को महासाध्य मने-मने कुर्यों को देखने और मने-मने अनुभवों को प्राप्त करने का कोई अवसर हाथ से न जाने देना चाहिए।

प्रासिद्धों के मनोभावों को व्यक्त करने के लिए दूसरा साधन अपने भावों की टटोलना है। सर किसिप सिङ्गनी का कहना था कि 'धरती मियाह अपने हृदय में बातों और जो कुछ हसो लसो। लेखक अपने को कल्पना के द्वारा जिसनी ही मिस-मिस परिस्थितियों में रक्त सकता है, उसता ही सङ्घ-मनोरथ होता है। तुलसीदास ने पुन-लोक कितनी सफलता से रिलामा है। निश्चित ही है कि उन्हें इस लोक का प्रत्यक्ष अनुभव न था। अपने को शोकातुर, बियोगी पिठा के स्थान में रक्तकर ही उन्होंने उन मार्गों का अनुभव किया होमा।

स्वाध्याय से भी उपन्यासकार को बड़ी मदद मिलती है। एक श्रुति का बचन है कि स्वाध्याय मनुष्य को सम्पूज बना देता है। कुछ लोगों का कहना है कि उपन्यास लेखक को पढ़ना न चाहिए, इससे उसकी मौलिकता मारी जाती है। पर स्वर्गीय डी एन राय ने कहा है—'बिना लेखक की मौलिकता पुस्तकबन्धोक्त से मारी जाती है उसमें मौलिकता है ही नहीं। स्वाध्याय का सहैदक यह न होना चाहिए कि किसी कुशल लेखक के भाव और विचार सङ्घम बाधे बलिष्ठ अपने भावों और विचारों की धन्य लेखकों से तुलना की जाय और उसमें बखली रचना करने के लिए अपने को प्रोत्साहित किया जाय। अगर हमें किसी लेखक को रचना में ऐसा कोई स्थान दिखायी है जहाँ उसकी कल्पना शिबिल पड़ गयी है तो हम प्रयत्न करें कि उसी के अनुभव स्थान पर उससे बखला मिल सकें। लेखक का—धीरे धियेप कर उपन्यास-लेखक को—बिबिध साहित्य का समीक्षाधि अध्ययन किये बिना कलम न उठाना चाहिए। यह बात नहीं है कि बिना बहुत फेरे कोई बखला उपन्यास नहीं लिख सकता। जिन्हें देखर ने प्रतिभा दी है, उनके लिए बहुत पढ़ना धनिवार्य नहीं है। किन्ति मिस प्रकार बिना व्याकरण पढ़े हुए बाहै हम कुछ लिखें पर मनुष्यों से बचने के लिए हमारे पास कोई साधन नहीं रहता उसी प्रकार

तुलना और स्वाध्याय से हमें अपनी भूटियों का बोध होता है हमारे बुद्धि विकसित होती है और उन भावनों की समझ मिल जाती है जिनके द्वारा किसी बड़े सेवक से सम्प्रदा प्राप्त हो।

कुछ लोगों को भ्रम है कि अपने रचनाओं के विषय में किसी से कुछ पूछना या प्य सेने से उम्हका अपमान होता है। पर वास्तव में सेवक को विज्ञाना की उतनी ही बरफत है जितनी कि किसी विद्यार्थी को। फ्रान्सिस बेकन के विषय में कहा गया है कि वह सब ऐसे पुण्यों से विज्ञाना करता रहता था जो किनी विषय में अपने अधिक ज्ञान रखते थे। कोई बावसी चाहे वह जितना ही प्रतिभाशाली क्या न हो सब विद्याओं का ज्ञान नहीं हो सकता। उसे अगर किसी से कुछ पूछना पड़े तो मकोष क्यों करे ? ही एम० एच० महोदय जब कोई ज्ञाना लिखते थे तो उस अपने रसिक मित्रा को मुनाते थे उनकी धामोचना का उत्तर देते थे और जहाँ करी कायल हा ज्ञान के अपनी रचना में काट-घाट कर देते थे। कभी उन्हें अध्याय के अध्याय और सीम के सीम बरसने पड़ जाने थे। सेवक को सर्वत्र अपना धामोष ऊभा रखना चाहिए। उसके मन में यह धारणा होनी चाहिए कि या तो कुछ लिखूया ही नहीं या लिखूया तो कोई बावसी बीज जिनमें वडकर उसी विषय पर फिर ज्ञान कोई न मिल सके।

कनो-कनी ऐसा होता है कि उस्ता बचपे-बचपे कोई नयी बाल मूढ जाती है अपना कोई नया कुर्य धाँका के सामने से गुजर जाता है। सेवक में ऐसा पुख होना चाहिए कि वह उसे माको और दुखों को स्मृति-पट पर धरिष्ठ कर ले और धारणपकता पढ़ने पर उनका व्यवहार करे। कुछ सेवकों की धारणा होती है कि वे अपने साथ मोट बुक रखते हैं और ऐसी बातें उछम तुल्य टाँक लेते हैं। जिस सेवक को अपनी स्मरध-रक्ति पर निरवास न हो उसे अपने साथ मोटबुक धारण रखनी चाहिए। डायरी लिखना भी अपने विचारों को लेख-बद्ध करने की धारत धारता है।

प्लाट उन घटनाओं को कहते हैं जो उपन्यास के चरित्रों पर घटित हा। लेकिन केवल घटनाओं का बखान करने ही से कहानी में मनोरंजकता का मुख नहीं पैदा हो सकता। उन घटनाओं को बरपना द्वारा ऐसा सजीव बनाना चाहिए कि उनमें वास्तविकता झलकन लये। एक उपन्यासकार ने लिखा है कि उरुनेरिसा की बालि हम लोगों को अपनी क्या सामने रख देगी चाहिए और तब उसके हल करने में प्रस्तुत हो जाता चाहिए। उरुनेरिसा की विचार मूलाभा में कोई ऐसी युक्ति प्रविष्ट नहीं हो सकती जिसके लिए वहाँ धर्मिधार्य रूप से स्थान न हो। हम भी उसी का अनुसरण करके उच्च कोटि के उपन्यासों की रचना कर सकते हैं। साधारणतः प्लाट बहु कथा है जो उपन्यास पढ़ने के बाद साधारण पाठक के हृदय-पट पर धरिष्ठ हो जाती है। पूछने इस की कथाओं में बस प्लाट ही प्लाट होता था। उनमें रंभ और रायन की माना न रहनी थी इसलिए

पूना की व्यावितिकार युक्ति ( Euclid )—सं

वह बिना इतना महत्त्वपूर्ण न होता था। धारकण पाँच सौ पृष्ठों के उपन्यास की कथा दस-पाँच पंक्तियों में ही समाप्त हो जाती है। लेकिन इन्हीं दस-पाँच पंक्तियों के सोचने में उपन्यासकार को चिन्ता मनन और चिंतन करना पड़ता है, चतना द्वारा उपन्यास लिखने में भी नहीं करना पड़ता। वास्तव में प्लाट सोच लेने के बाद फिर लिखना बहुत आसान हो जाता है। लेकिन प्लाट सोचने के साथ ही चरित्रों की कल्पना भी करनी पड़ती है, जिनके द्वारा यह प्लाट प्रदर्शित किया जाय। जार्ज बर्नेट्स के विषय में लिखा है कि जब वह किसी नये उपन्यास की कल्पना करते थे तो महीनों तक अपने कमरे को बन्द कर विचार-मग्न पड़े रहते थे न किसी से मिलते थे न कहीं सर करने ही करते थे। जब बो-लींग महीने के बाद उनके मित्रादि बुलते थे तो उनकी दशा किसी रोगी से बर्दाश्त न होती थी मुझ पीसा ग्रस्त भीतर को बँसी हुई लपेट चुपचा। वैक्रे के विषय में लिखा हुआ है कि वह सन्ध्या समय किसी गरीब के लट पर बैठकर अपने प्लाट सोचा करता था। पर प्लाट को जल्द या देर में कल्पित कर लेना लेखक की बुद्धि-सामर्थ्य पर निर्भर है। जार्ज एडवर्ड प्रान्स की सुविख्यात भेदिका है। उसने छौं से कम उपन्यास नहीं लिखे। पर उसे प्लाट सोचने में बुद्धि नहीं बढ़नी पड़ती थी। वह क्लेम हाम में लेकर बैठ जाती थी और लिखने के साथ ही प्लाट भी बनता चला जाता था। सर वास्टर स्कॉट के बारे में यही मस्तूर है कि वह प्लाट सोचने में मस्तिष्क नहीं सँभलते थे। कुछ कहानियाँ ऐसी भी होती हैं जिनमें कोई प्लाट ही नहीं होता। मार्क ट्वेन का Innocent Abroad इसी श्रेण का उपन्यास है।

प्लाटों की कल्पना निम्न-निम्न प्रकार की होती है। साधारणतः उनके छः भेद माने गये हैं—

- १—कोई अद्भुत घटना।
- २—कोई गुप्त रहस्य।
- ३—मनोभाव-विषय।
- ४—चरित्रों का विश्लेषण और तुलना।
- ५—जीवन के अनुभवों को प्रकट करना।
- ६—कोई सामाजिक या राजनीतिक मुद्दा।

(१) अद्भुत—कहानी नहीं अद्भुत होती है जो प्रकृति के नियमों के विरुद्ध हो। प्राचीन कथाएँ बहुधा इसी श्रेण की होती थीं। ऐसी कहानी का उद्देश्य केवल पाठकों का मनोरंजन है। पहले ही कल्पना की बुद्धि होने के कारण बहुधा बालकोपयोगी कहानियों में यह प्रचलित उपयुक्त समझी जाती है। प्रीयन्तवा में ऐसी कहानियों में भी नहीं ममता। बहुधा नैतिक और साधारण-सम्बन्धी उपदेश भी एनी कहानियों द्वारा दिये जाते हैं। इन्हीं के विख्यात लेखक मियटने 'कुसीयर की यात्रा' नाम की प्रसिद्ध पुस्तक में समाज पर व्यंग किया है। वह भी अद्भुत घटनाओं का ही सहारा लेता

है। बहुधा दुष्टाचारों या 'ऐमीबरी' में अद्भुत घटनाओं द्वारा जीवन के मूळ तत्व हुए किसे जाते हैं। इंग्लैंड में जाल बनियन का 'पिपमिन्स प्रोसेस' अद्वितीय ऐमीबरी है। हमारे यहाँ प्राचीन ऋषियों ने बहुधा दुष्टाचारों द्वारा ही जन-साधारण को उपदेश दिये हैं। महाभारत पुरुष उपाधिपर्यन्त यात्रि में ऐसे दुष्टाचार जरे पडे हैं। वर्तमान समय में टालस्टाय और हॉर्नर ने बहुत ही शिक्षाप्रद और घनूठे दुष्टाचार रचे हैं। अतएव आधुनिक घटना-अवस्था उपन्यासों की रचना यदि बहुत धरम है तो उसके साथ ही अत्यन्त कठिन भी है।

(२) गुप्त रहस्य—जासूसी के उपन्यास सब इसी श्रेणी में आते हैं। इस प्रकार के उपन्यास लिखने में लेखक को दो बड़े संकष्टों का सामना करना पड़ता है। सम्भव है रहस्य धारण से ही कुछ जाप अथवा लेखक का रहस्योद्घाटना पाठक को संतोषप्रद न हो। भारतवर्ष में पहले ऐसे कहानियों की प्रथा न थी। योरोप में ऐसी कहानियों को लोग बड़े शौक से पढ़ते हैं। इधर कुछ दिनों से पत्राधिक बटवाएँ भी रहस्योद्घाटन द्वारा प्रकट की जाय जाती हैं। इंग्लैंड में कॉमन डायन इस श्रेणी के उपन्यासकारों में बहुत सिद्ध हस्त हैं, जिनमें से मार्स लेखक और अमरीका में पो। कॉमन डायन अती जीवित हैं और अथ प्रापराधिक विषयों की ओर उनकी अधिक शक्ति है। जासूसी उपन्यासों में लेखक कोई घटना सोचकर एक कल्पित पासुस को उसके अनुसरण में मगर देता है। ऐसी घटनाओं में सबखेद गुण यह है कि उस घटना का रहस्य का अन्तना जाहिर अन्तमत्त प्रतीत हो पर लेखक जब उसे लोग से ली पाठक को आश्चर्य हो कि मुझे यह बात क्यों न सूची यह तो विन्मूढ साधारण बात थी। इसके साथ पाठक उम रहस्य को किसी दूधरी टैडि से खोलने में असमर्थ हो। लेखक का कौशल इस बात में है कि जिस शक्ति को पाठक और लेखक स्वयं वापी समझते हों वह अंत में निरपराध सिद्ध हो जाने। ऐसे उपन्यास बहुत ही रोचक होते हैं और उनके पढ़ने से बुद्धि तीव्र होती है, कठिन समस्याओं में विभाग खदाने की शक्ति पैदा होती है। मगर उनका मित्रना इतना कठिन है कि अब तक हिन्दी में सिवा कॉमन डायन या अन्य लेखकों की कहानियों के अनुवाद के सिवा किसी ने स्वतन्त्र रचना नहीं की।

(३) मनोमत्त का मित्र—ऐसे उपन्यासों में लेखकों का ध्यान घटना-वैचित्र्य की ओर बहुत कम रहता है। वह ऐसी ही घटनाओं की आलोचना करता है जिनमें उसके शक्ति को अपने मनोमत्तों के प्रकट करने का अवसर मिले। घटनाएँ कम होती हैं पारों के विचार अधिक। टालस्टाय के उपन्यासों में यही गुण प्रबल है। ऐसे उपन्यासों को रचने के लिए आवश्यक है कि लेखक अपने को विविध अवस्थाओं पर रख सके। इस प्रकार की कहानियों में लेखक को पाठकों के सामने अनिश्चय रूप से अधिकतर धरना हो हृदय खोलकर रचना पड़ता है। घटनाओं के मनोमत्त भावों को खोलने का उनके पास और क्या साधन ही पड़ता है? कोई खाने मन का भाव किसी से नहीं कहता बल्कि



धीर बिनाया है। अगर किसी को किसी मिन के मनोभावों का ज्ञान हो भी सकता है, तो बहुत कम। इसलिए ऐसे उपन्यास लिखना जोड़े के बने बनाना है। उपन्यासकार को निरय अपने धंठर की धीर ध्यान रखना पड़ता है। आज इमिक्ट के उपन्यास अधिकांश इसी श्रेणी के हैं।

(४) चरित्रों का विरलेपण और (५) जीवन के अनुभवों को प्रकट करना—इन दोनों प्रकारों के उपन्यास लिखने के लिए जरूरी है कि लेखक में दिव्य कल्पना-शक्ति के साथ धनसोकन धीर निरीक्षण भी प्रचुर मात्रा हो। इसीलिए कहा गया है कि उपन्यासकार को सभी श्रेणी के मनुष्यों से मिलना-जुलना आवश्यक है। उसे अपनी भाँति धीर कान सड़क खुले रखने चाहिए। एक ही परिस्थिति में दो भिन्न-भिन्न बिचारों के व्यक्ति क्या करते हैं, एक ही बटना दोनों को किस प्रकार प्रभावित करती है, इसका निष्पत्ति सहज नहीं है। अनुभव बाह्य जगत्-सम्बन्धी भी होते हैं और धंठर-जगत्-सम्बन्धी भी। लेखक को प्राकृतिक दूरियों का विभिन्न बटनाओं का बड़े ध्यान से धनसोकन करना चाहिए। प्रातःकाल समीर के धँकों में नती को ठरगों की कैसी छटा होती है, माकरठ कौन-कौन से रूप धारण करता है, ऐसे अनिश्चित ब्रह्म सफ़लता के साथ बही लिख सकता है जिसने स्वयं उनको गौर से देखा हो। केवल कल्पना यहाँ काम नहीं ले सकती। जाजिन है कि लेखक बही दूरय रिखावे उन्हीं चरित्रों की तुलना करे, जिनका उसने स्वयं अनुभव किया हो। जिधने समुद्र नहीं देखा वह किसी बंधन का ब्रह्म क्योंकर लिखेगा? जिधने धामीश्यों की संवृति नहीं की वह धामीश्व जीवन का चित्र क्योंकर खींच सकता है? यही सफ़लता प्राप्त करने के लिए योरोप के कई विख्यात उपन्यासकारों ने धैर्य बरतकर उन स्थितियों का अध्ययन किया है जिनके धाधार पर वे अपना उपन्यास लिखना चाहते थे।

(६) कोई सामाजिक या राजनीतिक सुधार—किसी उद्देश्य विरोध से लिखे गये उपन्यासों की संख्या धनसोकन सभी भाषाओं में बहुत अधिक है। उन्में भी ऐसे जिनमें ही उपन्यास है, मुख्य भाषाओं का तो कहना ही क्या? धनसोकन 'सुधार-सुधार' के धीर नाद से साध धामुर्मंडल निर्माचित हो रहा है। कहीं पुलिस के सुधार की चर्चा है, कहीं काठगारों की कहीं म्यायासकों की कहीं सामाजिक प्रथाओं की कहीं रिवाज-व्यक्ति की। यह बिनाशास्त्र विषय है कि उपन्यास किसी उद्देश्य से लिखना चाहिए या नहीं। प्रवीण समालोचकगण की राय में साहित्य का उद्देश्य केवल माध-विषय ही होना चाहिए। उद्देश्य से लिखी हुई कहानियों में बहुधा लेखक को विवश होकर धरंधर बातें धरुसानी पड़ती हैं, धनावरमक बटनाओं की धायोजना करनी पड़ती है, धीर सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि उसे उपदेशक का स्थान ग्रहण करना पड़ता है। अगर उचित समाज किसी से उपदेश लेना नहीं चाहता उसे उपदेशों में धार्मिक है धीर उपदेशकों में बूझा। वह केवल मनोरंजन धीर मनोपसन चाहता है। पर इसका माध ही यह भी मानना पड़ेगा कि कत

रक्षाधी में पारभास्य क्षेत्रों में जितने सुधार हुए हैं उनमें अधिकांश का बीजारोपण उप  
 न्यासों के ही द्वारा किया गया था। जिनके के प्रायः सभी उपन्यास टास्टराय के कई  
 उत्तम उपन्यास मैक्सिम गोर्की तुयनेव वासन्तक हगो मेरी करेसी बोसा आदि  
 प्रधान उपन्यासकारों ने सुधारों ही के उद्देश्य से अपने ग्रन्थ रचे हैं। ही कुशल सेलक  
 का यह कृत्य होना चाहिए कि वह सुधार के क्षेत्र में कबा की रोचकता को कम न  
 होने दे। वह उपन्यास और अपने चरित्रों को उन्हीं परिस्थितियों में रखे जिनको वह  
 सुधारना चाहता है। यह भी परमावश्यक है कि वह सुधार के विषय को सूत्र रूप में  
 और व्युत्पन्न से काम न ले नहीं तो उसका प्रभाव कभी सफल न हो सकता। सेलक  
 बन्द प्रायः अपने काल के विचारों होते हैं। उनमें अपने देश को अपने समाज को कुछ  
 न्याय तथा मिथ्याचार से मुक्त करने की प्रबल आकांक्षा होती है। ऐसी दशा में असम्भव  
 है कि वह समाज को अपने मनमाने माप पर बसने दे और स्वयं कड़ा हाथ पर हाथ रखे  
 देकर रहे। वह अगर और कुछ नहीं कर सकता तो कम से कम तो बसा ही सकता है।  
 रोचकपियर और क्रमिवास के समय में सुधार की आवश्यकता धात से कम न थी लेकिन  
 उस समय राजनीतिक ज्ञान का इतना प्रसार न था। रूस लोग भोग-विनास करते थे  
 कि और सेलक उनकी विनास-वृत्तियों को और उल्लिखित करते थे। प्रजा पर क्या गुज-  
 रती है, इतर किसी का ध्यान न था। यह समय जीवन-संग्राम का है। धात हम को  
 विवश कहलाते हैं, टटस्य होकर अग्याय होते नहीं देकर सकते।

प्लाट का महत्व जानने के बाद अब हम यह जानना चाहें कि अच्छे प्लाट में  
 कौन-कौन सी बातें होनी चाहिए। समालोचकों के मतानुसार वे ये हैं—उत्तमता मौलिक  
 कथा रोचकता।

प्लाट सरल होना चाहिए। बहुत उलझा हुआ पेशीय शैतान की घात पड़-  
 पड़ते की उलझा बाब ऐसे उपन्यास को पाठक उलझकर छोड़ देता है। एक प्रसंग अपनी  
 पूरा नहीं होने वाला कि दूसरा था गया वह अपनी प्रकृति ही था कि तीसरा प्रसंग था  
 पया इसके पाठक का चित्त बन्धन जाता है। पेशीय प्लाट की कल्पना इतनी मुश्किल  
 नहीं है, जितनी किठी सरल प्लाट की। सरल प्लाट में बहुत-से चरित्रों की कल्पना नहीं  
 करनी पड़ती इसीलिए सेलक की अल्पसंख्यक चरित्रों के धात-विचार, गुण-योग धातार  
 व्यवहार को सूक्ष्म रूप से दिखाने का अवसर मिल जाता है, इसके उसके चरित्रों में समीपता  
 था आती है और वह पाठक के हृदय पर अपना प्रभाव का कुछ अवसर छोड़ पाते हैं। यह  
 बात बहुतसंख्यक चरित्रों के साथ नहीं प्राप्त हो सकती। प्लाट में मौलिकता का होना भी  
 बन्ती है। जिस बात का विषय को धन्य सेलकों ने लिख डाला हो उसे कुछ हेर-फेर  
 करके अपना प्लाट बनाने की चेष्टा करना अनुपयुक्त है। प्रेम बियोग आदि विषय इतनी  
 बार लिखे जा चुके हैं कि उनमें कोई समीपता नहीं बाकी रही। धात ही पाठक कहानियों  
 में नये भावों का नये विचार का नये चरित्रों का विन्दन चाहते हैं। धात 'सुन्दरहट्टो

से पाठकों को तस्कीन नहीं होती। प्लाट में कुछ न कुछ ताज़गी कुछ न कुछ धनोत्थान प्रसरण होना चाहिए। रही रोचकता वह मौसिकता की सहगामिनी है। मौसिक प्लाट है तो वह रोचक भी जरूर ही होता। लेकिन कहानी की रोचकता किसी एक बात पर निर्भर नहीं है। प्लाट की सुन्दरता चरित्रों का विशिष्ट बटना का वैशिष्ट्य सभी सम्मिश्रित हो जाते हैं तो रोचकता व्याप ही व्याप या जाती है। हाँ उपन्यासकार यह कभी नहीं भूल सकता कि उसका प्रधान कथ्य पाठकों का यम प्रसन्न करना उनका मनोरंजन करना है। और सभी बातें इसके आधीन हैं। अब पाठक का भी ही कहानी में न क्या तो वह क्या सेकक के आधों को समझेगा? क्या उसके अनुभवों से लाभ उठानेगा? वह बच्चा के साथ पितामह को पटक देया और सदा के लिए उपन्यासों का निरुद्ध हो जावेगा। आब भी कितने ही ऐसे व्यक्ति मिलते हैं जिन्हें उपन्यासों से शिक है। उन्होंने प्रसन्न कर लिया है कि उपन्यास कदापि न पढ़ेंगे। कारण यही है कि हिन्दी के वर्तमान उपन्यासों ने उन्हें निरास कर दिया है। नये उपन्यास-लेखकों का कर्तव्य है कि वे उपन्यास-साहित्य के मुह को उन्मूलन करे इस बदनामी के दान को मिटा दें।

माधुरी २३ अक्टूबर १९२२

## प्राचीन मिस्र जाति के धर्म-तत्त्व

प्राचीन मिस्र जाति के लोग बड़े अमनित्य होते थे और उनके धर्म-सिद्धान्त उनके जीवन के प्रत्येक क्षण में सम्मिश्रित रहते थे। वह मूर्ति-पूजक थे और जीवन-उपयोगी वस्तुओं की प्रतिमाएँ बनाकर उनकी पूजा करते थे। बस मूर्ति धर्म नील नदी घाटों पर मात्रमा भूय गन्धर्व और मृतात्माओं का आराधन करते थे। लेकिन समस्त जाति सब देवताओं की अनुयायी न होती थी। मिश्र-मिश्र प्राणियों के देवता भी पृथक् होते थे और उन प्राणियों के लोग अपने ही देवताओं को सबभ्रष्ट समझते थे। यद्यपि उनके मुख्य-मुख्य देवताओं के स्वल्प में धन्तर वा लेकिन वास्तव में वह सब एक ही थे। उदाहरणार्थ हेमियोपॉलिस नगर में 'रा' नाम से सूर्य की पूजा होती थी लेकिन तब नगर में उसी को 'ग्रामन' के नाम से पूजते थे। इन दोनों स्थानों में भूय की प्रतिमा मिश्र-मिश्र थी।

वह लोग अपने देवताओं को मनुष्य की मूर्ति जोरबारी समझते थे ही बुद्धि ज्ञान बस और पराक्रम में उन्हें मनुष्यों से ऊँचा मानते थे। मनुष्यों की तरह उनमें भी दृष्टांत और भावनाएँ मौजूद थीं। यह देवतागण गणपरिवार थे उनका स्त्री कामक और धर्म सम्बन्धी भी थे। उनकी पत्नी और पुत्र भी देवताओं की तरह पूज्य माने जाते थे। बाह्य नगरों में देवताओं की जगह देवियों की ही पूजा होती थी। पर विद्वानों के मता-नुसार मिस्र में उच्च शक्ती के लोग एक्केरबगारी थे।

मिस्र के देवताओं में सबसे प्रतिभाशाली सूर्य था। उसका स्वरूप धीरे धीरे धानुपुष्प आकारों के सदृश था। उसके तिर पर धान का संज्ञक धीरे धीरे एक सौंभ बना होता था जो तेज की प्रकृति का सूचक था। लोगों की कल्पना थी कि वह वायुमंडल में एक मान पर बैठा हुआ है और कई मस्माह उम्र यात्रा को सींचते हैं। जब वह क्षितिज के ऊपर आता है तो उसके मोचनों की तेजस्वी शिखारें ममस्त भूमिर्मंडल को धानोक्ति कर देती हैं और प्राणियों को बल और तेज प्रदान करती हैं। वह नित्य अपने मान पर बड़ा होकर अपने शत्रुओं में लड़ता और उन्हें परास्त करता है। संघ्या हो जाने पर वह पताल में जाकर शयन करता है। सूर्य के प्रकाश का एक धमक देवता का त्रिभुजा नाम 'होबम' था। वह प्रतिदिन प्रातःकाल एक सुन्दर भवबुधक के रूप में प्रकट होकर प्राकृत-मंडल में विचरता है और भयङ्कर के देवता के त्रिभुजा नाम 'नित' है नित्य लड़ता रहता है।

धाकास के देवताओं के बाद मिस्रों लोग धर धीरे धीरे के देवताओं धीरे देवियों को मानते थे त्रिभुजा नाम भूमि को उपजाऊ बनाता है।

यह निश्चय था कि मिस्र के पुषक-पुषक स्थानों में त्रिभुजा-नित देवता मान्य मानने लगे थे। लेकिन कालान्तर में जब मिस्र में एक सर्वशक्तिमान राज्य स्थापित हो गया तो यह वाचस्पयि नित गया। समस्त देवबन्ध सावनीय हो गये।

इन सब देवताओं-में 'आइमिस्र' धीरे 'उजेरिसस' भवप्रधान थे। यह 'उजेरिसस' प्रकाश का देवता था और अपने भाई 'नित' का जो त्रिभुजा-नित ममस्त आता था दुःखमन था। उसके विषय में यह निश्चयनी थी कि वह प्रजापति को धाकास-नागर से निकलकर दिन भर अपना प्रकाश फैलाता रहता है। रात को उमरु भाई 'नित' इवचर उसे धार कर टुकड़े-टुकड़े कर शानता है। उसकी पत्नी 'आइमिस्र' उसके तब पर बैठकर विलाप करती है। 'नित' का उका बजने लगता है और संसार में धंभकार छा जाता है। लेकिन 'उजेरिसस' स्व पुत्र 'होबम' क्षितिज से निकलकर अपने मिस्र को हृष्या का बदला लेता है और 'नित' को मारकर फिर संसार में गति फैलाता है। यह धर्मनय नित्य होता रहता है।

मिस्र देश के बहुत से नगरों का नाम था कि 'उजेरिसस' के शरीर के टुकड़े इनके मन्दिरों में भूमिष्ठ हैं। 'उजेरिसस' का मातम मनाने के लिए वर्ष में एक दिन नियत कर दिया गया था। इस दिन ममस्त देश में धाकास भुजाओं देता था और महिमारें 'उजेरिसस' के नामों के शोक में अपने केश मोच शानतो थीं।

'माई' नगर के पुराणी एक ज्योति के तट पर उजेरिसस के जीवन-मरुत और पुनर्जीवन की घटनाओं की ताजिमा बनाकर विलाते थे। प्रसिद्ध इतिहासकार हिरोडोटस ने त्रिभुजाओं का यह वृत्त देखा था लेकिन उसे ताजोद कर ही गयी थी कि वह इनका कहीं जल्लेस न करे।

मिस्री देवताओं की प्रतिमाएँ अपनी विचित्रता में भारतीय प्रतिमाओं से कम नहीं। मिस्री का बड़ मनुष्य का था तो सिर पशु का और किसी का बड़ पशु का था तो सिर मनुष्य का था। होहस का सिर चिड़िया के सिर के सदृश है। धाइसिक का पाप के सिर के सदृश। 'मानोबीस नामक देवता का सिर गीबक का है और 'अठाह का सिर बैल के समान है।

मिस्र देश-निवासी बहुधा पशुओं को पवित्र समझते और उनकी पूजा करते थे। उनमें से सिंह, बाघ गाय तियाह, बिस्ती मेहा और तथा धादि विशेष धारणीय थे। इन पशुओं को मारना या किसी प्रकार का कष्ट देना बर्जित था। रोमवासियों ने जिन समय समस्त रुसार पर धाधिपत्य बना लिया था उस समय एक रोम-निवासी ने एक बिस्ती को मार डाला था। जनता ने उससे बिस्ती के खून का बदला लेना चाहा। मिस्र के राजा ने जो रोम का करव था चाहा कि उसे लोगों के हाथ से बचा ले लेकिन उसका कुछ बरा न बना। बिस्ती के जातक को लोगों ने मार ही जता। प्रत्येक मन्दिर में इन पशुओं में से एक न एक सबरय ही पाला जाता था और भक्त-जन जाकर उसकी पूजा करते थे। एक ईसाई पादरी ने इस प्रथा का इन शब्दों में मजाक उड़ाया है—'जब कोई धारमी मन्दिर में जाता है तो पुजारी महात्म्य समीरता और औरक के साथ कुछ गहरे और परदा उठा बैठे हैं कि उठे देवता के दर्शन कराये। तब वह धारमी क्या देवता है कि एक बिस्ती या एक मगर या एक साँप या कोई दूसरा जानवर प्रकट होता है जो एक सुसज्जित फटा पर बैठा या सेटा हुआ रहता है।

तिब नगर के व्यापारियों ने एक बड़ियाल को हिमाचल उमक कानों में सोने की बानियाँ और हाथों में कगन पहनाये थे।

यूनान देश के एक यात्री ने जो ईसा मसीह का समकालीन था सही नगर क बड़ियाल का वर्णन किया था। वह उसका यों बखान करता है—

'पुजारी कुछ मीठी रोटियाँ कुछ तली मधुमियाँ और कुछ शहद लेकर घर बाह भीस पर गया। बड़ियाल भीस के चिनार सेटा हुआ था। जो धारणियों ने उसका मुँह फकड़कर खोला एक धारमी ने पहले रोटियाँ उसके मुँह में डाल दीं फिर मधुमियाँ और कुछ शहद धाधि भी डाले गये। तब बड़ियाल भीस में बुर गया और बूसरे चिनारे पर जाकर सेट रहा। उसी समय एक और यात्री वह बस्तुएँ लाया। पुजारी उसे भी लेकर भीस पर गया और बड़ियाल को वह चीजें फिर निला दी।

अरुधम नगर के लोग एक बड़ियाँ की पूजा करते थे और हजियेपोलिथ नगर का देवता एक पत्नी का जिसे यूनान के लोग 'थीमिका धर्मान् उम्हा करते थे। मिस्रवाले उसके विषय में बड़ी विचित्र कथाएँ बयान करते थे। उनका विश्वास था कि हर पाँच ही बरों में एक बार उन पत्नियों में से एक 'रा' नगर के मन्दिर में जाता है। वह अपने साथ अपने बान की लाता भी लाता है। उमका मूर में जो एक प्रकार का गुणवित मोह

है मरेटकर वहाँ रक्त होता है। वह पहले मूर का घड़े के धामर का बाता है फिर उसमें द्रव्य करके मात को उसमें रखकर घैर को बन्द कर देता है। यह पक्षी कई जवाबियों तक सीमित रहता है और जब मरने के विल निकल घाते है तो बहु मुगन्धित अर्कियों का एक छोटा-सा पित्ररा बनाकर उस पर चढ़ता है और अस्म हो जाता है। उसको राज से एक बचान बाहर निकलकर उड़ने भवता है। धराब और धरसी पक्षों म भी इन्हीं कमाधों का मयमन किया गया है।

मंजोर मयर में एक ऐसा माय को पूजा करने को प्रमा यो विमका रंब काना माने पर उमसा और विकीक बान और पूज पर चने धान हो। उडे धागोन कहते थे। मिस के सोनों का कवन वा कि ऐसी गाय धाकात मे बमकनेबानो विबत् से पैदा होती है। जब ऐसी गाय कहीं विन जाती थी तो बुझारी भोव उनके चिन्हों को भरोमार्ति देव कर उडे धानोस का स्वाल देते थे। किन्तु इस पुग्पवध पर कोई वाय पक्षीम बयों से अधिक न रहने पत्नी थी। अयग कोई इस धवन्ना को पहुँच जाता यो तो बुझारीवध उडे एक पवित्र बल-सोत में मय्य कर देते थे और उसकी अपह कोई दूसरी गाय उमाठ कर लाते थे। यदि धानोस पक्षीम बयों के पहले मर जायों थोतो उसको मात मे मसाना मयाकर कब मे नाइ देते थे। जिस समय विव अवर मिस देस का साब्राग्य-स्वान हो गया तो उस मयर का देवता 'धामने' अग्य सब देवतायो से अद्वय माना जाने मया। वह धनादि धतन्ध और सबसक्तिमान समभ्य जाता था। वह उमार का मृष्टि करने-बान्ना सब बायों का बान और सब मताधों को माता स्याम किया जाता था। भोव इन शक्तों में उसकी स्तुति करते थे—

‘तू धाम यो धाकात को धोना सीमाधों के माबिक यो बमकने-अमकनेबाता देव तू धाकातों में अमख करनेबाना है, तेरे शत्रुधों का सवनाय हो। तू पापियों को निर्वामित कर देता है। तूने नास्तिकों की मोरता और पराक्रम को बून मे मिसा दिया है। तू सम्य है, नास्तिक निवत है, तू ऊँचा है और नास्तिक मोचा है, तू सत्कथ और सेव शत्रु धतक्य है। यो जोधों के धाकार, तू हमारे वारसाइ को चिरेबोयो बना चबकी मत्र धोर बम से परिपूरित का उसके बालों के मिए, मुगन्धि प्रदान कर। संघार तेरे प्रकास से उभोतिमन है। तू बह है जितके परों से बिनको पैदा होतो है, तू बह विह बोव है जिसकी परज शत्रुधों को मयभीत कर देती है तू बह पुत्र है यो मिय्य जन्म मेता है तू बह बुध है यो धमर है। तू उत स्वाल का स्वामी है जहाँ तक कोई नही पहुँच सकता।

समस्त मिस-निकासिनी का मित्रवास वा कि जब कोई प्राणी मर जाता है तो उनमें भीई अंश जोजित रहता है। इन मंस को बहु धात्वा कहते थे। धरबा का धाकार मरिद के समान और धन्त स्वकन विचार के समान है। वह अदूर्य है उडे स्वत करना समभव है। उनका यह अनुमान था कि जलो समय थीव मुँह से निकलता है। उनके

मतानुसार यह जीव अपने शरीर पर अक्षय्यवित्त रखता है। अगर काना सुरक्षित न रही तब तो जीव इधर-उधर मारा-भारा फिरता है। मृतक की सबसे बड़ी सेवा और उसके जीव के साथ सबसे बड़ा उपकार यह है कि शव सड़न-गमने से बचाया जाय। इसीलिए मसाने मसाने की प्रथा पड़ गयी थी। हिरोडोटस ने मसाने लगाने की प्रथा का सविस्तार बखान किया है। वह सिखाता है कि मिस्र के प्रत्येक नगर में कुछ लोग ऐसे रहते हैं जो मसाने लगाने का व्यवसाय करते हैं। जब मृतक का बारिस शव को मसाने लगानेवाले के पास ले जाता है तो वह उसे मकड़ी के मसूमे लिखाता है। यह मसूमे तीन प्रकार के होते हैं उत्तम मध्यम और निम्न। हर मसूमे का मूल्य उसकी हिसमत के अनुसार होता है। जब मजूरी तय हो जाती है तो बारिस जात को मसाने लगानेवाले को सौंपकर घर चला जाता है।

उत्तम मजूरी का मसाने लगाने के लिए पहले शव के सिर का ब्रेजा निकालते थे इस तरह कि कोई थक सिर में पहुँचाकर उसमें भेजे को हल करते थे फिर एक धाँकड़ा मांस के मसलों में डालकर भेजे को बाहर निकालते थे। तब मांस की पसमी-पीटकर धाँके बाहर निकाल लेते थे और शराब से बनेकर धाँके में सुगन्धित धाँकड़ियाँ भर देते थे। इसके पश्चात् मांस को सत्तर दिन खारे मसक में रखते थे फिर उसको बोटे में धीरे धीरे लगाने हुए कपड़ की पट्टियाँ उस पर सपेटते थे। मसाने लगा चुकने के बाद जास बारिस को ले भी जाती थी। वह मांस के धाँकर का एक लाना बनवाकर मांस को उसमें रख देता था और वह बीवार के सहारे से खड़ा कर दिया जाता था।

मध्यम मजूरी के मसाने की विधि यह थी कि एक प्रकार का गोंब मली द्वारा मुँह के पेट में पहुँचाते थे और पेट को फाँके और धाँक को निकाले बिना ही धैर को बन्द कर देते थे जिसमें गोंब बाहर न निकल सके। फिर शव को सत्तर दिन एक खारे मसक में रखते थे। तब मसक में से उसे निकालकर गोंब का पानी बाहर निकाल देते थे। उस पानी के साथ शराब का मस भी निकल जाता था। खार न रहने के कारण मांस पस जाता था और मांस में हल्की धीरे खमड़ के सिवाय और कुछ बाकी न बचता था।

निम्न मजूरी के मसाने की विधि इससे भी सरल थी। मांस के धाँकर गोंब पहुँचाकर उसे खारे मसक में रख देते थे। गरीब लोग प्राय इसी तरह के मसाने लगवाते थे।

मिस्र के कश्मिरालो में ऐसी जातें बहुत-सी मिलती हैं और यूरोप के लोग ऐसी हजारों जातें लोड ले गये हैं। वहाँ के प्रसिद्ध प्रजापक्षियों में मसाने लगी हुई जातें मौजूद हैं।

प्राचीन मिस्र-निवासियों का विश्वास था कि जीव को भी प्राणियों की भाँति मोहन-बराबर की आवश्यकता होती है। गरीब लोग तो मसाने-लगी जातों को बामू में बाँड़ देते थे लेकिन धनीयों में उसके लिए घसस मद्यन बनवाने की प्रथा थी। यह मकान

एक बिल्कुल गृह या कम से कम एक कमरे के बराबर होता था। धार्मिकता के बादशाहों के समय में यह शव-शाला मीनार के मूरत की बनवायी जाती थी। मंफ्रीस नगर के समीप एक शहर के बराबर भूमि तब शालाघो से ही भरी हुई है। कोई-कोई मीनार पश्चिम में बनाये गये हैं जैसे मधुमी में रहने के घर बने होते हैं। बहुत ऊँचे मीनारों में बायशाहों को धीरे-ऊँचे छोटे मीनारों में धमीरों को बफन करते थे क्योंकि मीनारों के बनाने में समय बहुत पड़ती थी। कम के लिए रत के नीचे या पत्थर में तहबाना और उनके सामने एक छोटा-सा नमाजखाना जो बाहर की तरफ मुस्ता था बनाते थे। नमाजखाने में प्रवेश करने पर पिछली दीवार में एक बड़ी शिजा दिखायी देती थी। उसके नीचे एक छोटी देव होती थी जिस पर पूजादि की सामग्री रखते थे। केवल यह नमाजखाना ही कम कम यह मय था जहाँ धारमी था सफटा था। लेप थाय मूरत के लिए ही होता था धीरे किसी को धन्दर बाकर मूरतया की शान्ति में बिज डालने का धर्मिकार न था। इसीलिए मत्र का दरवाजा न बनाते थे। नमाजखाने के पीछे एक बानान होता था। जहाँ मूरत की मूर्तियाँ रखी जाती थी। कभी-कभी एक मूर्त के लिए बीस से अधिक मूर्तियाँ बनायी जाती थीं। इसका धर्मिप्रान यह था कि धन्दर मसालेशर शय नष्ट हो जाय तो उसकी जगह मूर्ति रख दी जाय। नमाजखाने के एक कोने में एक कुँधा पत्थरों की बुनाई से बनाया जाता था। कुँध के नीचे एक छोटा-सा एस्ता बना होता था जहाँ पत्थरों की कन्दरा बनायी जाती थी। यह मूरत का शयनगार था। उसने मय में मुँदर का कले पत्थर की लेंदी पर पड़ा हुआ मुर्दा धन्य मिश्र में मय रहता था। उसके निकट बड़े-बड़े बदन पानी से भरकर धीरे-धीरे तथा माँघ रख देते थे। इसके बाद उस एस्ते को म्द करके कुँध की पत्थरों से पाटकर बन्द कर देते थे। फिर कोई मनुष्य धन्दर न था क्या था। वह कुँध थाय भी जैसे ही है जैसे बार-बार हजार वष पहले थे। ज्यों भी ही सुपचित रहता थे भी। जहाँ तक कि बातों दलों धीरे-धीरे से भी कोई परिवर्तन नहीं हुआ था। मूरत के बरबाने जब उसके लिए फिर जाने-बीने की बीजे पहुँचाना चाहते थे तो धन्दर न था सकने के कारख खाद्य पदार्थों को नमाजखाने में रख देते थे। कभी-कभी मूर धारि भी बनाते थे ताकि उनकी सुगन्धि मूरत की नाक में पहुँच जाय।

कुछ काम के बाय लोगों का यह विचार हो गया कि मूरत के लिए भीतिक पदार्थों की आवश्यकता नहीं है, बरन् ईश्वर से विनय करनी चाहिए कि वह उन्हें लुधा की पीड़ा से बचावे। इसलिये नमाजखाने की शिजा पर यह प्रार्थना लिख देते थे—'हम उबेरियस को सिजवा करते हैं धीरे उससे विनय करते हैं कि वह उन तमाम बीजे को जिनका सेवन वह धाप करता है—धन्यि रोटी माँघ कुछ शराब नख सुगन्धि—मूरत को भी प्रदान करे।

कुछ समय के बाद मिस्र-निवासियों को यह विस्वास हो गया कि जीव को केवल ध प्राचीन मिख जाति के धम-राज...



‘मोक्ष पदार्थ के चिन्हों हो वे संतोष हो जाता है। उनके लिए रोटी का चित्र बना देना फाड़ो है। अतएव कालान्तर में नमाजखाने को बीबारों चित्रांकित हो गयी। सोच बिच बीब को मृतक तक पहुँचाना चाहते थे उसका चित्र बीबारों पर धँकित कर देते थे। जो चित्र वहाँ बने हुए है उनमें किसानों के चित्र भी हैं जो जमीन को बोत धीर वो रहे हैं। कोई खलिहान से धनात्म उठा रहा है। वहाँ कपड़ा धीर भोबी बूत सी रहे हैं। इसी भाँति बदर्, राम नाचने-गानेवाले धीर बाजीगरों की तस्वीरें भी हैं। इसके अतिरिक्त मृतक की मित्र-मित्र भीमित अन्वयार्थें भी धँकित की गयी हैं। कहीं-कहीं वह अपनी स्त्री के साथ बैठे हुए मोक्षण कर रहा है, या खंजस में शिकार खेल रहा है, या भीनों के छट पर मछलियों का शिकार खेलन में व्यस्त है।

बहुत काम तक मिसबाओं की यह धारणा थी कि बीब उसी कब्र में रहता है, वहाँ उसकी देह धोत्र भी जाती है। लेकिन कुछ समय बाद उनका यह मत परिवर्तित हो गया धीर यह कल्पना की जाने लगी कि समयसे बीब भूमि के नीचे उस स्थान पर एकत्र होते हैं वहाँ सूर्य अस्त होता है। वहाँ उबेरियस राज्य करता है। वह बीबा की कर्मनुसार परीक्षा करने के उपरान्त उन्हें वहाँ निवास करने की आज्ञा देता है। लोगों का कल्प था कि जब बीब शरीर से निकलता है तो एक नीला में बैठकर भूमि के नीचे जल-सागर में अमल करता है। वहाँ उसे बड़े मर्यकर देव्य दिखायी देते हैं जो उसे मछल करना चाहते हैं लेकिन बीबाओं के रक्षक देवयल उसकी सहायता करते हैं धीर उसे स्वाभाविक तक पहुँचा देते हैं। वहाँ उबेरियस स्वायत्त पर विराजमान होता है। उसके ब्याजीस सहायक मंत्री होते हैं जो इस बात का अनुसंधान करते हैं कि बीब ने ब्याजीस कुख्यातों में से किसी का धावरण तो नहीं किया है। बीबाओं का उनके कर्मनुसार ही बंद या फल मिलता है। पापी बीबाओं को कौड़े मनाये जाते हैं वे साँप-बिच्छू आदि से कबलये जाते हैं। पुण्यारमाएँ देवताओं का सहवास करती हुई नृतर के वृक्षों की छाँह में ध्यानपूर्वक अमल काम वरु विधाम करती हैं। वह उबेरियस के माण रस्तरखाल पर बठती धीर उन पदार्थों का मोक्षण करती हैं जो एक देवी उनके लिए बनाती है धीर उत्तम प्रकार के इत्र मँसती हैं।

मिसबाओं का यह धनीष्ट था कि जब बीब उबेरियस के स्वाय-सहासन के सम्मुख आता हो तो वह अपने को निरपराध सिद्ध कर सके। इसलिये एक छोटी-सी पुस्तक टाबूत के धन्दर रस देते थे। उस पुस्तक में वह उत्तर लिखे होते थे जो उबेरियस धीर उसके सहायकों को देने चाहिए। उदाहरणतः अपनी निर्दोषता सिद्ध करनी चाहिए—

‘मैंने कभी अपट-व्यवहार नहीं किया किसी को बोया नहीं दिया। मैंने किसी धनात्म विषया को नहीं सताया किसी विधाम में भूठ नहीं बोला। धनने कठम्य-याजन में कभी ध्याप्त्य नहीं किया। किसी एमी वस्तु को नहीं धुमा जिने देवताओं ने निषिद्ध

छूटाया हो किसी की हत्या नहीं की मन्दिरों की बनमूर्ति और देवताओं के भोग-प्रसाद की धोर से कमी दाखिल नहीं रहा मृतकों को भोजन और जल पहुँचाता रहा मनाज लम्बने में कभी कभी नहीं की किसी की ज़मीन बर्हमानी से नहीं ली ठीक धीरे मात्र से कम नहीं बेचा देव-समर्पित पशुओं को नहीं मारा पुत्र पत्नियों का काम में नहीं पकड़ा पवित्र मद्यमियों का शिकार नहीं किया किसी नहर को मल नहीं किया धीरे न उसे काटा ; मैं निर्दोष हूँ । बल्कि मैंने मूर्तों को भोजन दिया है प्यासा को पानी दिया है, गेयों को कपड़े पहनाये है माचियों को मौका से सहायता दी है देवताओं की बेड़ी पर भेंट चढ़ायी है धीरे मुर्तों की मोजनारि से सेवा की है । ऐ इन्द्रियों ! मझे मुक्त करो धीरे कुश के सामने बेरी बुलाई मत करो क्योंकि मेरा मुख धीरे दोनो हाथ पवित्र है ।

यह उत्तर वहुधा कम की बीमारों पर यहाँ तक कि मुठक क मुँह पर भी लिख लिये जाते थे ।

माधुरी : मार्गशीर्ष १६७८

## उपन्यास

उपन्यास की परिभाषा विद्वाना ने कई प्रकार से की है, लेकिन यह कायदा है कि जो भी जितनी ही सरल होती है उसकी परिभाषा उतनी ही मुश्किल होती है । कविता की परिभाषा आज तक नहीं हो सकी । जितने विद्वान हैं उतनी ही परिभाषायें हैं । किन्हीं दो विद्वानों की परिभाषायें नहीं मिलती । उपन्यास के विषय में भी यही बात कही जा सकती है । इनकी कोई ऐसी परिभाषा नहीं है जिस पर सभी मत्प सहमत हों । मैं उपन्यास को मानव चरित्र का जिव मान समझता हूँ । मानव चरित्र पर प्रकाश डालना और उसके रहस्यों का खोलना ही उपन्यास का मूल उद्देश्य है । किन्हीं भी दो पात्रमियों की सुरतें नहीं मिलती उसी भाँति पात्रमियों के चरित्र भी नहीं मिलते । जैसे सब पात्रमियों के हाथ पाँव बाल कान नाक मुँह हलने हैं पर इतनी समानता पर भी इनमें बिभ्रता मौजूद रहती है उसी भाँति सब पात्रमियों के चरित्रों में बहुत कुछ समानता होते हुए भी कुछ विभिन्नताएँ होती हैं । इसी चरित्र-समानता धीरे बिभ्रता बिभ्रता धीरे मित्रत्व धीरे मित्रत्व में बिभ्रतत्व रिस्ताना उपन्यास का मुख्य कर्मण्य है । सन्तान प्रेम मानव चरित्र का एक व्यापक गुण है । ऐसा हीन प्राणी होना जिसे धनी सन्तान प्यारी न हो । लेकिन इस सन्तान-प्रेम की मानाएँ हैं उसके भेद हैं । कोई तो सन्तान पर मर बिटसा है, उनके लिए कुछ छोड़ जाने क लिए धाय

गता प्रकार के कष्ट भेसता है लेकिन बर्न-बीस्ता से अनुचित रूप से धन संग्रह नहीं करता। उसे शंका होती है कि कहीं इसका परिणाम हमारी सतान के लिए बुरा हो। कोई धीबिस्व का लेशमान भी बिचार नहीं करता जिस तरह भी हो कुछ धन संभय करना अपना ध्येय समझता है, चाहे इसके लिए उसे दूसरो का गमा ही क्यों न काटना पड़े। वह संतान-भ्रम पर अपनी आत्मा को भी बलिदान कर देता है। एक तीसरा सन्तान-भ्रम यह है जहाँ सतान की सञ्चरित्रता प्रबल कारण होती है जब कि पिता सन्तान का कुञ्चरित्र देखकर उससे उपाधीन ॥ जाता है, उसमें लिए कुछ छोड़ जाना या कर जाना ब्यब समझता है। अगर आप बिचार करेंगे तो इसी सन्तान-भ्रम के अग्रलिखित भेद आपको मिलेंगे। इसी भाँति धर्म्य मानवीय यणों की भी मात्राएँ धीर भेद हैं। हमारा अरिबाध्यन जितना ही सूच्य जितना ही बिम्बुत होगा उतनी ही सफलता से हम अरिओं का बिचरु कर सकेंगे। सतान-भ्रम की एक दशा यह भी है कि जब पुत्र को कुमान पर चलते देखकर पिता उसका जातक शानु हो जाता है वह भी संतान भ्रम ही है जब पिता के लिए पुत्र की का मङ्गु होता है, जिसका टेढ़ापन उसके स्वाभ में बाधक नहीं होता। वह सतान-भ्रम भी देखने में आता है जहाँ सरज्जो बुभायी पिता पुत्र-भ्रम के बशीभूत होकर यह सारी बुरी भावतें छोड़ देता है। अब यहाँ प्ररन होता है कि उपन्यासकार को इन अरिओं का अध्ययन करके उनको पाठक के सामन रख देना चाहिए, उसमें अपनी तरफ से नाट-श्रीट कमी-बेसी कुछ न करनी चाहिए या किसी उद्दरय की पूति के लिए अरिओं में कुछ परिवर्तन भी कर देना चाहिए जहाँ से उपन्यासकारों के दो बिरोह हो गये हैं, एक Idealist या आरशावाशी बुसरा Realist या यथायवाची। Realist अरिओं को पाठक के सामन उनके यथाय यन्न रूप में रख देता है, उसे इससे कुछ मतमब नहीं कि सञ्चरित्रता का परिणाम बुरा होता है या कुञ्चरित्रता का परिणाम अशुभा उसके अरिअ अपनी कमबारिमां या बूबियाँ बिखाते हुए अपनी बीबन-बीला ममाप्य करते हैं, धीर चूँकि संसार में सबैब नेकी का फल नेक धीर बरी का फल बब नहीं होता बल्कि इसके बिपरीत हुपा करता है नेक धारनी बबके लाते हैं यातनाएँ सहत हैं मुसीबतें भेलसे हैं अपमानित होते हैं, उनकी नेकी का फल उनटा मिमता है बुरे धारणी बैन करते हैं नामबर होत है बरास्वी बनते हैं, उनकी बरी का फल उनटा मिमता है। प्रकृति का नियम बिबिन्न है। calist धनुभब की बड़ियों में अकड़ा होता है धीर चूँकि संसार में बुरे अरिओं की प्रबानता है, यहाँ तरु कि उज्जबल से उज्जबल अरिओं में भी कुछ न कुछ शानु-भयं रहते हैं इसलिये Realism हमारी बुबसताओं हमारी बिपमताओं धीर हमारी कृताभा का गन्न बिन्न जाता है। बास्तब में Realism हमको Possibilist बना दता है, मानब अरिना पर से हमारा बिबबाध उठ जाता है, हमको अपने चारो तरफ बुरा ही बुरा नजर धाने समती है। हममें सम्बद नहीं कि गमाअ की बुप्रपा की धीर ध्यान िताने के लिए Realism

पर्याप्त उपयुक्त है, क्योंकि इसके बिना बहुत समझ है कि हम जम बुराई को दिवाने में प्रयुक्ति से काम ले और बिना को हमने कहीं काया रिपाईं कितना वह मानव म है। लेकिन जब Idealism दुबलतायो का चित्रण करण से शिष्टता की सीमाया म घ्राये बढ़ जाता है तो वह प्रातिजनक हा जाता है। फिर मानव स्वभाव को एक विशेषता बह मो है कि वह जिस घम और लक्षता धीर कपट से घिरा हुआ है उसी की पुनरावृत्ति उसके चित्त को प्रभाव नहीं कर सकती। वह बोने बेर क लिए हम संसार म उठकर पहुँच जना चाहता है जहाँ उसके चित्त को ऐसे कुम्भित भावों से मजात मिले वह मूल बात कि चिन्ताओं के बन्धन म पडा हुआ है जहाँ उसे मनीष मङ्गल्य उपाय प्राणिया के दान हों वहाँ धन धीर कपट विरोध धीर बेधनस्य का एसा प्राबाल्य न हो। उसके चित्त में क्याम होता है कि जब हम किन्हे-कहानिया म भी उन्की लोणा से छात्रा है चित्तके छाया धाटा पहर व्यवहार करना पडता है तो फिर ऐसी फुटक पड ही क्यों। संवेदी कोठरी में काम करते-करते जब हम यह जते हैं तो इच्छा होती है कि किमी बाह में निकलकर निमल स्वच्छ वायु का प्राबल्य उठाय। इन कमी को Idealist बूध करता है। Idealism हम ऐसे चरित्रा से परिचित कराता है, जिनके हृदय पवित्र होते हैं जो स्वान धीर वागवा से रहित होत है जो साधु-वृत्ति होते हैं। यद्यपि एने चरित्र व्यवहार-कुशल नहीं होये उनको मरगतता उन्हे व्यावहारिक विषयो में बोला देती है लेकिन कौटुम्बिक से उन्हे हुए प्राणियों को एने सगल एने व्यावहारिक ज्ञान विहीन चरित्रों के दान स एक विशेष ध्यान होता है। Realism यदि हमारी धीरे लोण देता है, तो Idealism हम उठाकर किमी मनोरम स्थान म पहुँचा देता है। लेकिन वहाँ Idealism में यह युध है वहाँ हम बात की धी शका है कि हम ऐसे चरित्रा को न चित्रित कर बैठें जो निद्राया की वृत्ति मान हों। किन्ही देवता की कामना करना सुरिषम नहीं लेकिन उक्त देवता म प्राप्त-प्रतिष्ठा करना मुश्किल है।

इसलिए हम वही उपन्यास उच्च कोटि के समझते हैं वहाँ Idealism धीर Idealism का समन्वय हो गया हो। उने धार Idealistic Realism कह सकते हैं। Ideal को मनीष बनाने के लिए Realism का उपयोग होना चाहिए धीर अर्थात् उपन्यास को वही विशेषता है। उपन्यासकार की मकस बढ़ी विभूति एने चरित्रों की मधि करता है वा अपने मध्यव्यवहार धीर मधुविचार स पाठक को मोहित कर ले। जिस उपन्यास के चरित्रों में यह गुण नहीं है वह दो कौड़ी के है। चरित्रा को उत्कृष्ट धीर धारण बनाने के लिए यह जरूरी नहीं कि वह निर्दोष हों। महान स महान पुण्यो म भी दुष्ट न पुष्ट कमजोरियाँ होती हैं। चरित्र को मनीष बनाने के लिए उनकी कमजोरियाँ का निग्रहान कठिन म कौई हाजि नहीं होती। यही कमजोरियाँ उम चरित्र की मनुष्य बना देगा है। निर्दोष चरित्र तो देवता का जायण धीर हम उसे ममक ही न करेंगे। एम चरित्र का हमारे ऊपर कौन प्रभाव नहीं पड सकता। हम Idealist हैं। हमारे प्राचीन

साहित्य पर Idealism की छाप लगी हुई है। हमारा प्राचीन साहित्य केवल मनोरंजन के लिए न था। उसका मुख्य उद्देश्य मनोरंजन के साथ धार्मिक-परिष्कार भी था। साहित्यकार का काम केवल पाठकों का मन बहसाना नहीं है। यह तो भाटों और मशरियों जिदूयकों और मसखरों का काम है। साहित्यकार का यह हमसे कहीं ऊंचा है। वह हमारा पथ-प्रदर्शक होता है, वह हमारे मनुष्यत्व को जगाता है हमसे सद्भावों का उचार करता है हमारी बुद्धि को फैलाता है। कम से कम उसका यहो उद्देश्य होना चाहिए। इस मनोरंजन को सिद्ध करने के लिए जरूरत है कि उसके चरित्र Positive हों जो प्रलोभना के धामे तिर न झुकें बल्कि उनको परास्त करें जो कामनाओं के पंजे में न फँसे बल्कि उनका दमन करें जो किसी विषयी सेनापति की त्रिंति शत्रुघा का संहार करके विजय-गाव करते हुए निकले। ऐसे ही चरित्रों का हमारे ऊपर सबसे अधिक प्रभाव पड़ता है।

उपन्यास-साहित्य पर थोड़ी-सी विवेचना करने के बाद अब हम अपने हिन्दी उपन्यासों पर बुद्धिपाठ करना चाहते हैं। पाठक यह यह तो जानते ही हैं कि उपन्यास एक पश्चिमी वीणा है जो भारतवर्ष में लगाया गया है। हमारे यहाँ उपन्यास-काल से पहले ऐसे क्रिस्ते-कहानियों का बहुत प्रचार था जिनमें प्रेम और विरह के बदन ही प्रधान होते थे। प्रमी एक निगाहे मारुका का 'कुरतए नाव हो जाता था। मारुका अपनी सहेलियों से अपनी विपत्ति कहानी सुनाती थी धार्मिक साहस बाहें भरते थे निर मुन्ते से घर-घर खबर होती थी याद समझने के लिए क्या हो जाते थे हृषीम दबा करने जाते थे पर इरक के बीमार पर किसी दबा या समझने-बुझने का धरर न होता था। दोनों महीनों बरनों बुदाई की तकलीफें भेजने के बाद किसी द्विस्मृत से मिल जाते थे। प्रमसर क्रिस्ते में तिमिरम और ऐवारी के विचित्र दय होते थे जिससे बुद्धिबल बढ़ता था। उरू में 'तिमिरम होतएबा' बड़े-बड़े पूठा के सत्ताइन क्रिस्ते में उत्प होता था और 'बोस्ताने लबाल' सत्त क्रिस्ते में। उस बक्त तक हिन्दी में उपन्यास का मेरान प्रायः खामी था। जो एक धनुबाय धवरय निकल गये थे पर कोई उपन्यास-लेखक न पैदा हुआ था। उरू में तो उनक पहले 'इसताना आम्ना' के रचयिता पंडित रतनभाय दर 'चरखार मीन्वी इशुम हसीम शरर, मीलाना मुहम्मद अपनी धारि कई बख्शे उपन्यासकार हो गये थे। बँपला में भी बँकिम बाबू क उपन्यास निकल चुके थे लेकिन हिन्दी में मैराल खामी था। उस समय स्वर्णम बाबू बेबडीतन्वन लकी के 'बन्धकान्ता' और 'बन्धकान्ता सतति' की रचना हुई और यह हिन्दी में धनोकी एकदम गयी थीज थी। हिन्दी पाठक टूट पड़े और 'बन्धकान्ता की मूय भूम ही गयी। यद्यपि 'बन्धकान्ता सतति' 'तिमिरम होतएबा' का धनुकरएव मात्र है, मकिन् हिन्दी में धार्मिक-धार्मिक की जो कबारें छपती थी जिनमें न कोई भाव होता था न कोई प्रभाव उन पाठकों के लिए बन्धकान्ता ही गनीमत थी।

तमस में नहीं जाता कि जब अन्य भाषाओं में ऐसे-ऐसे उपन्यासकार पंग हुए जिनका जोड़ अब तक पैदा नहीं हुआ तो हिन्दी में क्यों यह वैशाल लाम्बी रहा ।

'बनरकान्ता' के बा-देबकीलग्न ने कई सामाजिक उपन्यास लिखे जिनमें उपन्यास के संस्कार मौजूद थे । ऐयारी की एसी हवा खँपी कि उनके बाद भी बहुत दिनों तक ऐयारी के सिन्धे निकलते रहे । उसके बाद बामुनी उपन्यास निकलने शुरू हुए जो अभिकांश *European detective stories* के अनुबाद होते थे । कुछ दिनों तक बामुनी उपन्यासों की खूब बूम रही और बहुत समय था कि उसके बाद मौलिक उपन्यासों की बाटी जाती लेकिन इसी बीच में बंगला उपन्यासों का रोसा शुरू हुआ और वह धमी तक जारी है । बँगला में प्रचलित-बुरे क्लिष्टे उपन्यास मिल सकते हैं उनका बिना कुछ सोचें-समझे अनुबाद कर लिया जाता है । किसी अन्य भाषा के रत्नों से अपना भंडार भरना प्राप्ति की बात नहीं । सम्पन्नतम भाषाओं में अन्य भाषाओं के अनुबाद होते रहते हैं लेकिन वह भाषा ही क्या जहाँ सब कुछ अनुबाद ही हो और अपना कुछ न हो । इस पदचू से देखिए तो 'बनरकान्ता सतर्त' का महत्त्व बहुत कुछ बढ़ जाता है । कम से कम अपनी वस्तु तो है । हमारा ध्येय है कि हिन्दी भाषा को राष्ट्रभाषा बनायें । क्या अनुबाद से राष्ट्रभाषा का पर प्राप्त किया जा सकता है ? एक मिन से इस विषय पर बातलाप होने लया तो उन्होंने कहा हम यह मानते हैं कि अनुबाद से भाषा का महत्त्व नहीं बढ़ता लेकिन जिन लोगों के लिए अनुबाद जीविका का प्रबल है उन्हें धाय क्या कह सकते हैं । इसका धारान वह हुआ कि जो लोग और किसी उपाय से जीविका का प्रबल नहीं कर सकते वे ही अनुबाद किया करते हैं । मगर इसी तरहकोब से तो किसी त्याग्य विषय की रक्षा की जा सकती है । जोर के लिए जोरी भी तो जीविका ही का प्रबल है फिर जोर को सजा क्यों ही जाती है ? फिर अब हम देखते हैं कि हिन्दी जाननेवाला धायमी एक महीने में बंगला का इतना ज्ञान प्राप्त कर सकता है कि बँगला की साधारण पुस्तकें समझने लगे तो बंगला से अनुबाद करने के लिए और भी कोई उद्ग नहीं रह जाता । अगर अनुबाद ही करना है तो उन भाषाओं से किया जाने जो बंगला से कही सम्पन्न है । हमने धमी तक जिन गिने-गिनाये *French* या *Russian* पुस्तकों का हिन्दी में अनुबाद किया है संघर्षी अनुबादों से किया है । हमारे मुक्कों को जिनका बिचार साहित्य-सेवा करने का हो उनको उचित है कि वे योरोपियन भाषाएँ सीखें और उनके रत्नों से हिन्दी का भंडार भरें । वह हम कोई ऐसी चीज द मर्केने जिन्हें प्राप्त करने के हमारे यहाँ बहुत कम साधन हैं ।

साहित्य का सबसे ठँबा धाण्ड वह है जबकि उसकी रचना केवल कला की पूर्ति के लिए की जाय । *Art for Art's Sake* के सिद्धान्त पर किसी को प्राप्ति नहीं हो सकती । वह साहित्य चिरायु हो सकता है जो मनुष्य की मौलिक प्रवृत्तियों पर धवलम्बित

हो। ईर्ष्या और प्रेम क्रोध और भोग धनुराग और विराम दुःख और लज्जा—यह सभी हमारी मौलिक प्रवृत्तियाँ हैं। इन्हीं की छटा दिखाता साहित्य का परम उद्देश्य है। बिना उद्देश्य के तो कोई रचना हो ही नहीं सकती। जब साहित्य की रचना क्लिष्ट सामाजिक राजनैतिक और धार्मिक मत के प्रचार के लिए की जाती है, तो वह अपने ऊँचे पथ से विर जाती है, इसमें कोई सन्देह नहीं। लेकिन धार्मिक परिस्थितियाँ इतनी तीव्रवृत्ति से बदल रही हैं इतने नये-नये विचार पैदा हो रहे हैं कि शायद अब कोई लेखक साहित्य के धारण को ध्यान में रख ही नहीं सकता। यह बहुत मुखर है कि Author पर इन परिस्थितियों का असर न पड़े वह उनसे दानोन्निवृत्त न हो। यही कारण है कि धार्मिक भारत ही न नहीं योरोप के बहुत बड़े विद्वान भी अपनी रचनाओं द्वारा किसी न किसी धार का प्रचार कर रहे हैं। वे इसकी परवा नहीं करते कि इससे हमारी रचना बीजित रहेगी या नहीं। अपने मत की पुष्टि करना ही उनका ध्येय है, इनके विचार उन्हें कोई इच्छा नहीं। मगर यह क्याकर मान लिया जाय कि जो उपन्यास क्लिष्ट विचार के प्रचार के लिए लिखा जाता है उसका Interest खण्डित होता है। ह्यमो का ना मिचरेबुल टास्स्टाव के अनेक ग्रन्थ डिफेन्स की किन्ती ही रचनाएँ विचार-प्रधान होती हुए साहित्य की उच्च कोटि की हैं और अब तक उनका Interest कम नहीं हुआ। धार भी शाँ बस्स आदि बड़े-बड़े लेखकों के ग्रन्थ प्रचार ही के उद्देश्य से लिखे जा रहे हैं। हमारा क्या है कि कुशल कसाकार कोई विचार प्रधान रचना भी इतनी सुन्दरता से करता है कि उनसे मनुष्य की मौलिक प्रवृत्तियों का संरक्षण निभाया रहे। Art for Art Sake का समय यह होता है जब बेरा सम्पन्न और सुखी हो। जब हम देखते हैं कि हम सौख्य-सौख्य के राजनैतिक और सामाजिक बन्धना न बंधे हुए हैं विचार निवाह छठी है दुःख और दरिद्रता के योग्य दूर्य दिखायी देते हैं, विपत्ति का कष्ट-अनुभव मुनामी देता है तो हमें सम्मत् है कि किन्ती विचारहीन प्राणी का रिक्त न रहने उठे। हाँ उपन्यास कार को इसका प्रयत्न अवश्य करना चाहिए कि उसके विचार परोक्ष रूप से व्यक्त हों उपन्यास की स्वाभाविकता में उस विचार के समावेश से कोई विघ्न न पड़ने पावे करना उपन्यास नीरस हो जायगा।

धर्म में हम अपने सहृदय मनीन लेखकों से धनुरोप करते हैं कि यदि धार उपन्यास निम्ना चाहते हैं तो पहले तैयारी कीजिए। बिना मानव शास्त्र का उचित ज्ञान प्राप्त किये कभी न कसम उठाइयें। यों तो किन्हीं रचना की ईश्वरवत् शक्ति प्राप्त है वह धार ही धार मिलेंगे लेकिन मन में धीरमत्त हान पर भी तो शास्त्र का कुछ ज्ञान इला परमावश्यक है। सबसे प्रधान मनोवृत्ति है। एक बार किन्ती प्रसिद्ध विचारकार से एक शरीर ने पूछा कि एसे सुन्दर रंग प्राप्त कहीं से लाते हैं? विचारकार ने मुस्कराकर उत्तर दिया 'जमाव अपने रिमाण में।

समासोधक जनवरी १९२५

## गल्यांक का प्रस्ताव

विशोपार्थों के निकालने में कदाचित् मजसत हिन्दी पत्रिकाओं में 'बाँव' ही को प्रथम स्थान प्राप्त है। अपने जगत् से लेकर जब तक 'बाँव' के भी विशेषांक निकल चुके हैं। इस रूप में हमने चार विशेषांक निकालने का निश्चय कर लिया है। उनका रूप सम्भार से शक होता है और गत मास 'बाँव' का प्रस्ताव विफल हुआ है। उसके बाद ही यह गल्यांक प्रकाशित करने का प्रस्ताव उसके सम्पाक और व्यवस्थाक के धर्म्य उत्साह का धोतक है। हिन्दी में पत्र-पत्रिकाओं की जो दशा है वह सुदृग्जनो से छिपी नहीं है। इन कठिनाइयों से बच भी धारास्थित न होकर बराबर धाये करम बढ़ते जाना धर्म्य धारावाचिता के सिवा और क्या कहा जा सकता है। किन्ती कवि ने कहा है—

किन्ती जिन्दाविसी का नाम है  
सुरासिन्धु क्या छाक जिया करते हैं।

यही उत्साहसौलता यही धारावाचिता जीवन है और जीवन में धारावाच का होता स्वामाधिक है। यही कारण है कि जो 'बाँव' धारा से चार-पाँच रूप पहले एक हजार छपता था धारा समस्त भारतवर्ष की मासिक पत्रिकाओं में सर्वोच्च स्थान पर धार्य होने का एक कर सकता है। 'बाँव' धारावाच-शक्ति का धारा भी तो है। धारा में एक महीना पहले जब 'बाँव' के सुवाच्य सम्पाक ने मुझे गल्यांक प्रकाशित करने का प्रस्ताव किया तो मैं विस्मित रह गया। प्रस्ताव किन्तुम तत्काल धार्य धारावाच का। मुझे मय हुआ कि कहीं गल्यांक का मन्दा न उद्योग जाय। नये विचार कदाचन कमिन्धुओं की दृष्टि में हास्यास्पद होते ही हैं। जोम नाक में सेकोइने सगे यह क्या सुपुच्छत है। मना कोई सुक भी तो हो गया म एमी कौन-सी विशेषता है कि उनको यह महत्त्व दिया जाय। किन्तु साहित्य में गल्प के महत्त्व पर जब विचार किया तो मुझे इन प्रस्ताव का सह्य स्वागत करने और इन धर्म का सम्पादन भार लेने में कोई बाधा न दिखती थी। गल्प कतमान साहित्य में एक नयो धर्म है। लेकिन इसके नाक ही उसका धर्मिधाय धर्म है। कोई पत्रिका गल्पों के बिना रोषक नहीं हो सकती और हिन्दी में न नहीं अन्य समुदाय भाषाओं में तो एमी कितनी ही पत्रिकाएँ हैं जिनमें गल्पों के सिवा और कुछ होता ही नहीं।

वास्तव में गल्प में सिवा और किन्ती प्रकार के लेखों में यह गुण नहीं है कि वह धर्मका धर्म्य और अनधिकत रूप में समाज में नवीन भावों निष्ठाओं और तर्कों का प्रचार कर सके। हमारे देश में पराधीनता के कारण जीवन-अधाम इतना भीषण है कि हमारे माटी मलमिक और शारीरिक शक्ति उनमें समाप्त हो जानी है। शुष्क और सुप्याह विषयों का धर्म्ययन करने की हममें क्षमता ही नहीं रह जाती। हम नये विचार



ग्रहण तो करना चाहते हैं पर इस तरह कि हमें परिष्कृत या शोधयन न करना पड़े। यह विमूर्ति गल्प ही में है कि वह मनोरंजन करते हुए हमें विज्ञान अध्यात्म राजनीति इतिहास भूगोल मखिल शिल्प स्वास्थ्य बाणिज्य आदि की शिक्षा दे सकती है, यहाँ तक कि धातु औद्योगिकी की बिक्री का भी काम इसके सिवा जाता है। इसे धातु औद्योगिकी की धमकीयता समझिये जो कुकाम से लेकर उपेक्षित तक में समान रूप से धपमा चमत्कार दिखाती है। बाबकल सिनेमा का प्रचार विनोदित डाकगाड़ी की नाम की तरह बढ रहा है। इसने साहित्य के एक प्रधान बांग नाटक का नामा धोटा दिया। धमी सिनेमा में स्वर की कमी है। संसार के विज्ञान इस समस्या को हल करने में वक्षचित है। और धामा है कि बहुत बड़े काल में सिनेमा व विषय वार्ते भी करेगे गीत भी गावेंगे। उच दिन ज्ञाना का प्राखान्त ही समझिये।

कविता केवल भावों से सम्बन्ध रखना ही नहीं है। वह हमारे उत्कृष्ट कामना भावों ही को कर्मित कर सकती है। किन्तु कविता-लेखी को कल-कारखानों की स्तिमा ऊँची-नीची अट्टाभिकार्यों और बाणिज्य तथा व्यापार की कचन-मरी कोटिओं बुझा है। उसे तो हरे-जरे जल-तट मधुर स्वर से गानेवासी गणियों निज्जन पवित्र भावों ही से कुछ विशेष प्रेम है। वर्तमान परिस्थिति उनके लिए अनुकूल नहीं। उसे प्रेम सबय और इन्द्र से विच है। अब और साहित्य में क्या रह गया? निबन्ध। निस्सन्देह, सकिन् यह शिक्षा को मगल करने की वस्तु है मनोरंजन की नहीं।

अब उपन्यास ही बाकी बच रहता है। लेकिन जिस सिनेमा ने नाटक की हत्या कर डाली वही उपन्यासों का भी कूल कर रहा है। अपने घाट घाने लक्ष करके केवल ५-६वीं बने में जब हम विकल्प ह्यगो टान्चटान करे तथा हाथों जैसे बुरम्बर बडानों की मर्बोत्कृष्ट रचनाओं का नमुषित धान्ध उठा सकते हैं तो पुस्तक सकर अपनी कोटरी में कर्न-कई गिनों तक पढ़ने का कर्ण क्यों उठाने सगे? माना कि सिनेमा में भाषा के सारस्व उल्लिखों की सुन्दरता विचारों की भवनीता और मौलिकता बाबकों में मनोहर विन्यास शब्दों की मनोहारिणी मजाबट मीठी-मीठी चुम्बियों हृदय में चुम्बानेवाले ब्यंभ्यों का रसास्वादन हम नहीं कर सकते लेकिन धपिकरंश प्राणी मनोरंजन चाहते हैं और सिनेमावाले रचना के मर्मस्पर्शी स्वभावों को विभित करने में नहीं चून्ते। इस साहित्य का स्वाध सरगरी तीर से पढ़ने से नहीं मिलता। हमारे मुसेगक-बुन्द शब्दों को शब्दों में ऐसा विपारी है कि जब तक एक भाष्य की बार-बार में पढ़िये उसका प्रा धान्ध नहीं मिलता। धोग यहाँ हमना धक्कास नहीं। बस बन्ने बस्तर या लखरी में गिर मारने क बाद धक्क मस्तिष्क में इतनी ताकत बही कि साहित्य से सर मारें।

ऐसी परिस्थिति में गल्प ही एक ऐगी वस्तु है या उपयोगिता मनोरंजनता और धम से कम समय देने में सिनेमा ने टक्कर से मचता है। उपन्यास पढ़ने को कर्न दिन

बाहिए धीर वह भी एकान्त । यहाँ दो म एक भी प्राप्त नहीं । मिनेमा दाने क विग  
 भी ठीपारी की बहुरत है । शाम ही को मोजन घाँि मे छुट्टी कर सो तीन बटाँ के  
 लिए कर से वापस रहो वहीं से भी बजे बाघ-पापे वायम-बुँबी मे पर सौते मिलमा  
 हाल में भी तीन घन् भोड-माइ म आगम जमाये तपस्या करते रहां । क्या इनम कुछ  
 कम कष्ट है ? नहीं हमारी धनुपस्विति म कोई घाँिया का घाँया घोर गोंड का पूरा  
 मुश्किलन या पका तो शिकार प्राप से निश्चय जाने की सम्भावना ही है । मन्म इन मत्र  
 भंयों बढेडा से पाक है । बस्तर कचहरो विद्यालय टुकान बायुमेवन कै-मऊ कड़ी  
 बाते हों 'बाँि' का मर्याद उठा सीजिए घोर चम सीजिए । म्म म तो मन्म घानक  
 लिए घनिकाय है । उनके बिना घापका समय किमी तरह कर ही नहीं सकता । घान  
 घान्को लम्बा छठर करना है मन्मई स विल्ली या कलकला जाता है घोर बह या कम  
 से कम सेकण्ड स्थान में तब तो घान कायाकल्प कन्धकान्ता गृहबाइ दगिवात काँ नी  
 तपस्याउ लकर पड़ सकते है ।

सकिम धपर छठर छोटा है, बमारस म मखमऊ या प्रयाग जाता है घोर बह  
 भी हटर या तीवरे दरजे म तब घापक सिग मन्मऊ के निशान घोर काड उताम  
 नहीं । उन विपत्ति में इसी के हाको घाप का निम्नार होया उस पीक पर घापका पही  
 दुकान-पतसा छोटा-भोट मिग ही काम घापया । तोर घोर मशीन-पन बडा मडाई के  
 लिए है घोर कुर्मामिकर बड़ी लडाइयाँ नी दो सी बप म कही एक बार होना है ।  
 सिस्तीन घोर तन्मे की पकरत तो घापको घाटे पहर रहती है । कम म कम हाय म  
 एक मत्रकूठ बड़ी तो होनी ही चाहिए । घोर न मही कोई कुण माहक ही घान म  
 सामस्वाइ उतम पड़ तो ? मन्म घापकी घाँी है विन घाप मऊ म किमी तरह नहीं  
 छोड़ सकते ।

टुकान पर बैठे बाहूकों की बाट देखते-देकने जब घान की घानि दुमने पग बट  
 मन्मऊ उठा सीजिए ठिर बाड़े बाहूक घाय या न घाये घापकी वया मे घानका  
 बाहूका की परबा न रहेवी । घान संघ्या समय बिना एक सिने का मान बच प्रठम-बिल  
 बर सौ मकते है । किमी दफ्तर क इकमान मे परकी करके भीटन के बाँ हुमेरे  
 इनमान मे जाते है पहले यदि दम-बीम मिगट का भी घबठर बिग यया तो मन्मऊ  
 घापके साथ है । यह समय बड़े मजे स बट जायगा । घानको घरली की घावात्र ही  
 घोर कल न लमाये रहना पड़ेगा । घरली की पुकार लुद-बलुद घानके कल म पहुँचनी  
 घोर इकी जस्ट पहुँचनी कि घानको घारबय होगा । यदि घानमे मन्म गमाप्त कर लिया  
 है तो 'बाँि' को मेर पर दम दीजिए घोर तेनी मे लपके हुए जाइए—इतनी तेनी से  
 नहीं कि जली के दम घोर बिसम्भ ही घोर जोट घाटे म मिमे । यदि घाँी मन्म  
 बमाप्त नहीं हुआ तो पकिका को हाप मे लिये देकने जाइए, इकमान तक जाते जाते  
 उनके बचे हुए दो-एक पूरा समाप्त हा जायेंगे । घम्पारक महोदयों को तो हृष मन्म

॥ मर्याद का प्रस्ताव ॥

पढ़ने की समाप्त न होने। उनके पास न समय की कमी है, न धनकाश की। वह उन्हें तो तिम्बिस्ते होशब्दा की घटाइय जिन्से बोस्ताने खबान के सात भाग चन्द्रकान्ता सन्तति के चौबीस हिस्से या धमिष्ठ सेना की हजारों रातों धानश्रुतक समाप्त कर सकते हैं।

भक्ति विद्यावियों के गस्याध्ययन के ह्य कट्टर पक्षपाती हैं। उपन्यास तो वे बेचारे पढ़ ही नहीं सकते इतना धनकाश कहीं पोट की पोट पुस्तकें पढ़नी हैं और परीक्षा का भूत सिर पर सवार हैं। ही परीक्षा में उत्तीर्ण हो जाने के बाद वे चाह तो उपन्यास पढ़ सकते हैं क्योंकि तब बरसों सिवा उपन्यास पढ़ने के और कोई काम न रहेगा। ही जीवन की मौलिक धामशयकताओं से निरिचिन्त रहने को रत हैं। लेकिन अध्ययन-काल में तो यन्त्र ही उनका उधार कर सकता है। वही ईन्किसे से जो ऊँचे षट गस्याक उठाएँ और पन्द्रह-बीस मिनट में आपका रिमाय ठावा हो जायता सिर का बन्दक भाग सड़ा होगा और धाय मयी स्फूर्ति से माया-विज्ञान पर बाधा करेंगे। जिस विद्यार्थी के पास यह अमृतपात्र है उसे फिर किसी दूसरी मनोरञ्जनीपथि की जरूरत ही नहीं। एक बंद जल या शककर न मिलाकर उत्तर सीजिए लबीयत हरी हो जायती सारी विपत्ति-बाधा पलायन कर जायेगी। धवी ह्य तो कहते हैं, लेखक हीन न भी यदि आपकी नीच धान ससे तो चुपके से यस्याक निदान सीजिए और बेबड़क डेस्क पर रख सीजिए। आपकी निहा काफूर हो जायती। गिरफ्तार होने की जरा भी शंका नहीं। अध्यापक महोप्य की मारी केतना और उपकेतना-सक्ति तत्त्वविवेचना में संलग्न ही रही है।

महिमाभा का तो गल्प न बिना जीवन ही दुस्तर समझिए। उनके लिए न सिनेमा है न उपन्यास न चहुलकरमी। इन स्वर्गीय पदाओं से विचि-बाम ने उन्हें किसी पूर कुसंस्कार क प्रायश्चित रूप में बन्धित कर दिया है। मध्या समय सिनेमा देखने जायें तो बताइए भोजन कौन बनाये? अगर कोई मिलानी लपी हुई है तो भोजन की चिन्ता नहीं। लेकिन नन्हें-नन्हें बाककों की हटीसी चंचल कमाह मिय सेना तो साथ न छोड़ेगी। एक दजन न गठी मकर धामे दजन बच्चों को माय से जाता क्या मुँह का दौर है या लामा पी का चर? अगर पुण्या को एक दिन यह मूमीकत पड़ जाय तो घटी का दूध माय भा जाव। और ती क्या न्हें पनाम सिकडे पुण्य तो उसी दिन बैराग्य धारण कर सें। अगर संगार-भोग्यता बहुत बडी हुई है तो क्वाचित् इतनी जरूर से बैराग्य न सेंगे लेकिन मन्तान-निशह की पुस्तकों के लिए तो और कार्यालय को तुरन्त ही काह धाम रिषा जायता। र्गर बनाव गुन न करे कि पुण्या के गिर यह बला धारे नहीं तो सृष्टि का धन्त ही गमभिए धम्माइ गिया को अपने प्रीडा-वैराग्य के लिए दूधरे हो प्रकार की दुनिया रचनी पड़ेगी। धीरो की बात तो नहीं चलने ह्य तो उसी दिन जहर लारु गो रहने। धव बताइये यह धामे दजन बछड़े बाँबे किये जायें? मव क सब तो पोर में धा ही नहीं मानें। धिवरा होकर एक बग्गी करनी पड़ी। चलिए, दो रुपये की चान पड़

गयी। उससे मैं बच्चा की मूक का क्या ठिकाना ? हलवाई की पूछान देखी या मोमबे  
 बामे की धाराब सुनी धीर मूक सगी। पाँच बजे के बच्चे-बच्चे कहीं मात बने निनमा  
 मदन के पाम पहुँचे। मगर इगकी शावर ही कमी जीवत धाता है। धविक्कर ता यही  
 सुना है धीर दो एक बार बेसन म भी धाना है कि महिमाधा का धम्म बीच भी हाप  
 से बाता रहता है धीर उन्हें धामे गम्ने से बर सौत्ता पन्ता है। धमर किमी तरत गेने  
 बोते निनेमा पहुँच भी गयी धीर हाप में भी जा पहुँची ता यह न सममिस् कि धमात्रत  
 का बात्मा हो गया। धसनी विपति तो धब शक होता है। कोई कुरमी को उतरता है  
 कोई किमी के चुटकी काटता है, कोई रो-रोकर दुनिया मिर पर उटता है माता बेचागे  
 किस-किस को सममाये। छोटे तो बमबाने न मान प्रा जाने है बड़े दिन मे धारा पी  
 कि शान्ति से बटोते उन्हें मो बहाँ धाकर नग्वटी मुम्हो है। उनके प्रग्नी का उतर  
 देना स्वयं एक बसा है। बनाब बह विस्म-या मचता ह कि मारा हाँन धबग उटता  
 है। सोय रीत वीम-वीमकर धीर मुट्टियाँ बाँब-बाँधकर रह जाते हैं। कम्पनी का जमला  
 है। वहीं मबाबो होती तो सुन ही कइ इम्ने। उबर बच्चे है कि धरमी शगरत मे वान  
 ही धाते। धमागिनी माता को तमारो वा नशामार भी धानब मही मिनता। माग  
 गन धीर मनोयोग बच्चों के शालम को मेट हो बाता है। कम पकडती है कि धब कमी  
 बिती है तो मातो उते निर्बाण प्राप्त हो जाता है। धम पकडती है कि धब कमी  
 स्तनेमा का नाम न लगे। दस बच्चे दरइ पन् गय माता जुरमाता से धाप। यह तो  
 सिनेमा का हाल हुआ। बही धियेटर हुआ तब तो मरगु ही ममग्ने। लइका का कोना-  
 हल माँले गरी बर कर मचता पर काम तो धम सकता है। उबर स्त्र मे मा रे गा मा  
 की धानि उटी इबर मुम्ह मे पंचम स्त्र मे धनापता शुरू कर दिया। कि बनाइए बटाक  
 सोम क्यों न बात वीमे धीर क्यों न धपता माया पीटे धानी बूटे। धागवप में रपने  
 दो बच्चे मरकारी कम्पारियों के लिए विशेषतः पुलीम धीर रजिस्ट्री विभागवानों के लिए  
 तो कोई बड़ी बात नहीं लकिन हुमा-शुमा के लिए ता बनाब एक बस्या एक मात के  
 बटाबर है। दिन भर बीडे-बीडे कमर टा गयी धामे फूँ गयी मेत्रा छ गया पमीने की  
 नरी बह ययो तब बाक मुद्रा देवी के बशन प्राप्त हुए, तब यह कने मम्मब है कि उवी  
 मर-बट प्राप्त मुद्रा में मरीदे हुए धानन म बाबा पडने देखकर हम मीन रह बाँय ?  
 हुवरों की बात हम नहीं बनाने। मम्मब है एम लोग भी हों जा लुन वा घूँट पीकर रह  
 बाँय। लकिन मरे लिए ता यह धमग्ने है। यहाँ ता धपन ही बच्चा क शाग्नुत मे बामे  
 मे बाइर हो बाता है। जब तक बर पर रहता है मारा ममय चपतबासी में ही ध्यतीव  
 कराता है। यही तक इम काम में धम्मग्ने हा गया है कि यदि बमी देवी जी धपनी सेना  
 लेकर गया-मान को बनी जानी है तो बार-बार हायों में लज्जा होगी है धीर कोई  
 नहीं मिनता ता बुरे लीकर ही पर बो-बार हाब साड कर बना है।  
 निनमा धीर धियेटर का तो यह हाप हुआ उन्पाम कोई महिला बीसे एड

॥ गधर्वाक का प्रस्ताव ॥

सकती है ? यह तो उसके लिए बर्बित फन आकाश-कुसुम है । प्रातः से लेकर धायो रात तक तो हम मारने का प्रयत्न नहीं मिसता । धरम सबेरें वर्षों को नास्ता न मिसने तो वह भीता ही मोक्ष बालें उनसे भी निस्ती तरह प्राण बच जायें तो स्वामी भी बच में एक मिनट की दर हान पर मेकबत् गरज उठते हैं । उनकी यह गगनमेवी ध्वनि सुम्कर स्त्री के तो प्राण ही निकल जाते हैं । मामुम होता है घर की बीमारें हिस रही है घरती काप रही है । घोर बयो न गरबें । उग्रे इसका सोमहो घाने घबिक्कर है । स्त्री घोर है ही किस मरज की दबा । टैर, मारते से तो घभी फुरसत मिसने नहीं पायी की कि मोक्ष की बारी या पहुँची । निमी तरह यह बसा भी टमी स्वामी अपने काम पर बने घोट लड़के स्कूल सिघान् ठो छोटे दग्धा के दुबदमे पेश होन मय । मयर न्यायाधीश को घबिक्कर को बरज बैकर जो फुरसत मिन जाती है । उनका यहाँ नाम भी नहीं । दबड दिया तो कान के परबे फड़बाने के लिए भी तैयार रहना पक्ता है । बो-भार मुकरने पेश होते-होठ निग तीन बजे घोर लडक स्कूल स या बहूँये । घबिक्कर तो ऐमा होता है कि एक या दो बजने के पहलं हो या पहुँचते हैं घोर ऐमा तो शायब ही कमी होता है कि घर घाने पर हीन न बजते हों । न जाने स्कूलबाने घडी तेज कर घेते हैं । या लडके छुट्टी हीन के पहलं ही माय लड होत है । घाव विल एक न एक त्योहार ब्यब की छुट्टी । घाव क्या है ? घ्यास पुजा की छुट्टी है । घाव क्या है ? मीनी बसाबसा की छुट्टी है । घाव क्या है ? निर्जसा एकदमी है । इन त्योहारो न घोर ता कुछ नहीं होता ही घुडिची का उत्तरबामित्व भदकर माया में बड जाता है । घोर विल तो निग न पीडा ही होकर रह जाती है छुट्टिका में तो मोठ का मामना होता है । विल ता लैर किसी भक्ति का पया पर रात को कासी बसा ही नमघ्ये कमी किसी बच्च को दस्त या रहे है कमी कोई प्यर न पका है कमी वंठ मिछन रहे है कमी ठंड बग लयी है । तिरु-कुयपा के कण् माठा के मिबा घोर कीन भेस गकता है ? रातें बीठ-बीठ बट जाती है । पति महालय पास ही पसों पर पड़ नाक की यहमाई बना रहे है । ऐमी बरबनी घानाब निछन रही है मारों काई मुत्ता मुरी रहा हा । बेचारी बबमा मुन-मुन मारे भय क मुची का रही है, पर पति को बगान की हिम्मत नहीं पड़ती । सम्भव है पति बैबठा की जिहा भंम हो जाती है पर घानि नहीं गोमते । उठना तो बुर रहा शायब घाने विल में सोकठे है मै घपसा नाम परा कर मुका मै क्यों घपन घाराय में घमन बालें । तुम्हार निर बर जो पडे बह तुम घाय भुगयो । इमी भय चिन्ता घोर म्यानि में बहुबा घबरायों का जीवन ब्यटीठ हो जाता है । उच्च गार्ह्य एमे विपद्-घसत प्राणियो का नाक नहीं देता बह चिन्ता से मुक्ति देनकाली बस्तु नहीं चिन्ता का निमगल बैनेबानी बस्तु है । बह बरबा है बर के तारें काम-नाम छोड़कर मेरो उतापना करो तब मै बरबान पूगा एक तुम्हें मुम्मे माघाल् होगा । इन तार-मुक नील-गुमार, मार-बाइ हाव-तीबा में मै नहीं घाता इग घान का मने गारन ही नहीं होना । भावन बगाना है कोई चिन्ता नहीं ।

नन्का रोता है, रोने दो। स्वामी के धाने का समय हुआ धाने दो। कुछ परवा नहीं  
 कर के काम-धन्धे को त्रिपावनि दे दो धीर मेरो हो जाओ। अतएव मस्त्रिभार्ग उरग्यातो  
 से मन मगते मयभीत होती है। उनक दुख रद का मापी ता बेकाग गम्य हो है। बाप  
 का पानी चूहे पर चडा हुआ है। इन इन मियटा के महुगयोग का मन्ने उतम उराम  
 यही है कि मत्पाक सोसकर बठ जाय। जब तक पानी गम होगा धान किनी मानम  
 प्रदश की संर करके सोट धाउंगी। बच्चे का पाकिडा देकर मुपाने-मुचाने मा इन मन्तो-  
 धान म एक बार प्रमण कर सकतो है। यहाँ समय नष्ट होम का मय नहीं। यह माधु  
 का प्राशोर्बाद है जो धान राठ बनते प्रात कर सकतो है यह धान ममन का  
 Bye-Product ( धानमू र्वाकार ) है।

यहाँ हम उस बखी के मजना का विस्तृत नून तय जिनका ममन किनी  
 सख् कटे गही कटवा मानो किनी रीठ का चरवा हा। मम बखी क तीन  
 नेर है, बैरा हड्डोम धीर डाक्टर। यहाँ डाक्टर का धाराय बह डाक्टर नहीं  
 को डाक्टर रबीन्द्रनाथ मा डाक्टर समू का है। मन्प धानियं य मजजन एक  
 काँटा भी नहीं निकाल सकते। यहाँ डाक्टर का धाराय बह मनुष्य है मा जावन का  
 रबा क लिए निप खिलाता है, जिसको उतरोत्तर बृद्धि क माव प्राडुनासक कीटा  
 को भी बद्धि हो रही है, जिसन मानव जीवन को कीटा का कीडस्थम बना दिया है।  
 इसम सन्नेह नहीं कि कस्मियुप वास्तव मे कस्मियुप है। धीर का वाजार गम ह। मेकिन  
 फिर भी कस्मियुप डाक्टर मन्की भारते ही देखे जाते हैं। बच्चे धार दिन धवन कमरे  
 में बैठे प्रायस का धारसकचक स पत्थर मुडकाया करते हैं कि किनां मति कोई शिकार  
 खे। कुछ मेत्र मोला धम की रट मगाया करत है। कोई मिर दम का रोपी नी धा  
 खेवा तो समझ सौ उस गरीब की जान की कुशाम नहीं। कोई धरकर रोम मेकर  
 बड़े विडतापुप नाक से यह ठत्व निवालकर रक दिया कि जनाध धारका galloping  
 phasis ( यलपिय धारमिय ) हो रहा ह। इतना मुनते ही बेचारे रोपी क प्राण पबेक  
 उड़ जात है फिर इन मन्ना को बह हृदय मे नहीं निकाल सकता। मान-बापते यही  
 एवा उनके मिर पर मबार रहती है यहाँ एर नि धन्त को galloping phasis के  
 एण्ट दृष्टिगोचर होने लगते हैं धीर डाक्टर माह्व की मन्विष्यबाओ पुणे हा जातो है।  
 सब रोपी बाप की शरध धा धया धापक चरणा पर धरने धापका ममनय कर दिया।  
 इन बा-बडकर हाव मारिय धानकी बहार है। धीपधियाँ के बिम न चुका मके तं उमका  
 बा-बार कुछ करा सीजिए, मयर जाने न सीजिए, क्याकि ऐसे शम धवनर रोज नहीं  
 मितते बीना धापको स्वयं धनुमभ है। इन महालघाओं से इयाय निबहन है कि इन  
 धारामय प्रतीक्षा के समय का धान मनीमोति मनुष्याय कर मकने है। क्या उरग्याम  
 पडकर ? कर्गार नहीं। उनका धानय उठान के लिए जिन मकासता की बनरत है वह

घापको कहीं नहीं ? घापकी घाँसें तो मरक पर धाले-धालेबासों की धोर सयी हुई हैं ? इस मानसिक व्यवस्था की वशा में गल्प ही बहु यत्न है जो घापको शान्ति प्रदान कर सकता है । उदा मीरजिए गल्पोंक । इसमें घापका दोहना प्रयत्न है । अभी पच्छि घापको हाथ पर हाथ घने बटा देखता है तो समझता है घाप गरबमन्थ है । घाप को पड़ते देखेना तो समझेगा घाप बडे अध्वयमशील है । गिर्य शास्त्र-सम्बन्धी पुस्तकें पढ़ा करते हैं । इससे घापकी प्रतिबिम्बि बढ़नी धौर कहीं किमो राजा-नर्मि की निगाह पड गयी-तो घापका देहा पार है । घाप उसके पारिवारिक चिकित्सक नियुक्त हो जायेंगे पाँचो घी म होंगी । यह भी याद रखिए कि यदि घापकी स्मृति म मनोरंजक गल्पों कर काफ़ी खजला हो तो घाप अपने रोगियों का समझे कहीं अधिक उपकार कर सकते हैं । किटना अपनी कड़वी जहरीली दबाएँ पिक्ककर । हाँ यह ध्याम रहे कि बहानियाँ बरा हस्त्यपूछ हों ।

इस बीबन-संघाम में साहित्य पर जो सबसे बुरा धरर पड़ा है बहु यह है कि बहु महिमा बना जाता है । कोई पत्र-पत्रिका या पुस्तक उदा सीरिए, धारि से धन्त ठक रमानेबासी बाठा से भरा पाइएया । यहाँ ठक कि हमारी नखन-बैनी भी इतनी पवीर हो ययी है कि उसे शोक-बीबी कह सकते हैं । यह हम म मानेंगे कि बतमान परिस्थितियों में हमें शाकबासी बना दिया है । धासिर हम धारस में बैठकर हँसते-बोसते तो है ही हँसना भूल तो नहीं गये । हाँ धरर कुछ दिन यही हस रहू तो सम्भव है कि अनुपयोद के कारण यह शक्ति हमसे छीन नी जाय । विकास न पाने के कारण उसका जोध हो जाय । रोने का ठेका साहित्य-सेवी ही क्या हैं ? मजा यह है कि हमारे नवयुवक सेवक जब कलम हाथ में लेते हैं तो तुम्हें पक्षपक्ष-सामा गाम्भीर्य वाग्य कर लते हैं । कदाचित् बहु समझते हैं कि बिगोह हमारी शान व सिमाक है छिछोरान्त है । धरर बहु ऐसा समझते हैं तो यह उनकी बड़ी भारी—महत्त्वा बाँधी के शर्त्तों में हिमासियन—भूल है । हास्य साहित्य-रसों म धरर प्रचलन मही तो एक प्रचलन रस धररय है । हम तो बही कहेंगे कि यह प्रचलन रस बसिक उससे भी बार धंयुन ऊँचा है । न जाने शृंवार को क्यों प्रचलन रस माना जाता है । जिग रस का धारम्भ सचरह बर्ष से पहले नहीं होता धौर कदाचित् जासीम बाय के पहले ही समाप्त हो जाता है । उये प्रचलन क्यों माना जाय ? हास्य क्या न प्रचलन रस माना जाय जिसका विकास मिश्रु के धररों माता से ही होने मकता है धौर बीबन-यत्न राता है यहाँ तरु कि मरक-सीया पर पडा हुया रोगी भी मृग्यु से धो-बार मिगट पहले तक हँसता देगा गया है । घाप बहुय गात्रक बिपत्ति म होंगी नहीं धाती । घाँसें तो कार्यों-कुर्यों कर रहते हैं घाप नहीं है हँसिय । मजा इन रसा में नहीं हँसी धानी है ? हँसी तो पेट जगन पर ही धाती है । म नये मही मानता । गाँसों की वला मिठमी बघबीष है, इगज निगज को जकरत मही । बचारे किमान पहर पड रहे म काम करने मगते हैं । धौर पहर गत तक बराबर काम करने रहन है । टन बीब म कदाचित् एक बार भी उग्रे के भग भाजम नहीं मिलता । न बरस पर काना है न

पेट में धान न बँह पर मौस जमींदार की बौस धमक मगान की चिन्ता उगार से। एक  
 मगान ही क्यों वो कहिए कि बेकारे चिन्ता के एम्भासिटिव सागर में बुकियाँ ला रहे  
 हैं। लेकिन यहाँ भी हँसी का धमाक नहीं। वे भी हँसते देखे जाते हैं वे भी कमी-कमी  
 बुझम धीरे विमोह में मग्न हो जाते हैं। पर हमारे साहित्य-ममात्र पर स्वानि धीरे दम्क  
 का ऐसा घाटी बोझ लगा हुआ है कि उसको कसम के मोर्कों पर हसी घाने का नाम नहीं  
 मेली। क्या वे कसम खा सकते हैं कि मित्र-समाज में वे कमी हँसग ही नहीं घदानती  
 कसम नहीं। सच्ची बँपाजनी उग सकते हैं? हम कह सकते हैं हँसना मनुष्य-मात्र के  
 लिए अनिवार्य है। धाय हँसते हैं धीरे सुब किमसिलाकर। धायक कहकह शीबाना को  
 हिमा देते हैं। मगर न जाने क्यों कसम हाथ में लेते ही धाय गम्भीरता न मान्य न  
 बुनने-उठाने मसते हैं। कस से कम नवयुवको के भेद में तो बिनाब की प्रधातता होनी  
 चाहिए। गम्भीरता उनके लिए धस्बागविव है। हम सुब कुसट रोम के लिए क्या बोझ  
 है जो हमार नवयुवक भी इस काम में हमार हाथ बटावे। नहीं चाहक हम धाय की  
 सहायता की धावरयकता नहीं। हम अपने-इतना रो सकते हैं कि कहिए धाँधा ध गया  
 बहा है कहिए महासागर सँवैरित कर दे। हमार धाँधे महवि धयस्त्य के चिन्मू से जो  
 मर भी कम नहीं है। धाय हमारे शेष में धाकर इमारे ताप ज्वदस्ती करते हैं। हम  
 इस धाक का उटना ही स्वर्णित रसना बाढ़ते हैं जिठना हमारे मोरोपीय साम्राज्यवादी  
 मुमबदन को। जिस तरह उन्हें यह धसहा है कि कोई धयक जाति एक धंयुन जमीन पर  
 धपना कम्बा जमा से उठी तरह हमें भी धसहा है कि नवयुवक महाशय धाकर हमारे  
 धय में हस्तक्षेप करें। हम धायको समझते देते हैं मगर धाय माग नये तो खैर नहीं  
 तो जनस हमने भी पुनीठ का दरबाजा देखा है। जान पर खेतकर एक रोषम-मुद्रा  
 निकालते धीरे दापोडा की को नजर देकर बढ-भट रपट कर देंगे तब धायको घाट-दास  
 का नाव मानुम होना। कुछ धपनी जायदाद के किठने भीमी होते हैं यह शायद धायको  
 का नाव मानुम नहीं हम धायको इतना प्रमाथ दे लेंगे। धाय में नया जोश है, नया रक्त है  
 नया जीवन है, नयी स्फूर्ति है धाय मगर रोम पर उठाक होय तो प्रलम ही कर डाबेंगे।  
 फिर हम मरीचों के लिए नहीं प्रयह रहे जायनी सिवस्य परलोक क। इसलिए हम पर  
 बया कीजिए धीरे बैराय्य नैराय्य बिपाय के विषय हमारे लिए रिजक रखकर धपने  
 लिए, विमोह दरिद्रस धीरे शीय रख लीजिए। इस तरह हमारे धीरे धायके बीच वे  
 समन्वैता ही जाने से कम्ह कम माय बग्न हो जायया।

हम यह मानते हैं कि बतमाग चलवायु हाम्य के विकास के अनुकूल नहीं।  
 गरिम हमें धपनी प्रबल धासागविद्या से इस नैराय्य-सिमिर को हटाना होगा। रोने के  
 लिए हमार मर ही क्या बोझ है कि हम धपने साहित्य-रुज में धाकर भी नहीं रोना-  
 भोना शुरू कर। साहित्यकार को जिन्दारिम होन की नहीं बकरत है। हमसे कई बुरे  
 धायमियों ने कहा है कि देखी को भीज मिलिय जिसमें हँसी धाय। धाय सोय तो येनी



ही चीजें निकलते हैं जिसे पककर रोना हो जाता है और मन और भी दुखी हो जाता है । दुखी हृदय जिस चीज का अपने पास-पास समाव पाता है उसे वह साहित्य में जोड़ता है । लेकिन उसे जब यहाँ भी निराशा होती है तो वह साहित्य से भी उदासीन हो जाता है । धाव हमारी बनता चार्मी सैपलिन की मकर्स बेलकर क्यों घाट-घोट हो जाती है ? किस दिन उसका समाशा होता है उस दिन क्यों हाम ठसठस भर जाता है ? इसीलिए कि वहाँ हम जोड़ी दर के लिए अपनी दुखमय परिस्थितियों को विस्मृत कर देने की प्रार्था होती है । मिट्टी माया को भीलिए, उसके हाम्य-वरिष ही उसकी जान होते हैं । ही हस्त्य सीकम्पपुय होना चाहिए, यह नहीं कि वहाँ भी अपने रिक्त के फ्लोन फोड़ कार्ये । हम इस सम्म निपत्ति के रोय मे प्रसिध है हम ऐसी धीपधि की बकल है जो यह दुख हरे, हमारे सन्तान को मिटावे हम संमाने । और ऐसे साहित्य का उत्थान नवयुवका हाप ही हो सकता है । निपत्ति रोग से नहीं कटती । रोने से तो वह और भी प्राधुवाक हो जाती है । उसे हम हंसकर ही काट सकते हैं । कम से कम निपत्ति का मार कुछ तो हमका हो जाता है । एत को बन में मटका हुआ पम्कि धीपक की प्योति देखकर जिस प्रति उसकी धोर लपकता है, उसी तरह हम जाह्य है कि निपत्ति के मारे हुए प्रमी पाटक साहित्य की धोर लपके । उन्हें निरवास हो कि यहाँ हमारे दुःख का जोक कुछ हमका होमा हमें सुख का अनुभव होगा हमारा एत प्रगत होया । हस्त्यमय बन्नों द्वारा यह उद्देश्य कुछ न कुछ प्रबन्ध पूरा हो सकता है । ही हस्त्य धरमीनता-उहित निर्मल उधार होना चाहिए । साहित्यिक हस्त्य और सामाजिक हस्त्य में बड़ा अन्तर होता है । नहीं बात जिससे मित्र-गोष्ठी में पेटों में बस पड़ जाते हैं साहित्य में निम्न ही जाती है । सुखरो और बीरबल की कबाएँ यों बहुत ही हस्त्यपूय है लेकिन अनमं अधिकारी ऐसी है जिन्हें साहित्य न जाना साहित्य का अपमान करना होया ।

शब्द : विसम्बर, १९२६

## साहित्य की प्रगति

साहित्य की संकड़ी परिभाषाएँ की गयी हैं और उनमें से हम अपना मतलब निरूपण के लिए एक से जेंगे । परिभाषा है तो पीठियों की बस्तु, मगर जब दर बनाना है तो नीब गमनी ही पड़ेगी । हवा न मकान बना सकते तो क्या बात की लेकिन धमी विज्ञान वह सिधा नहीं जान पाया है । साहित्य जीवन की धालीबना है, इस उद्देश्य से कि सत्य को जोख की जाय । सत्य क्या है और धनत्व क्या है, इसका निखय हम धाव तक नहीं कर सके । एत के लिए जो सत्य है वह दूसरे के लिए प्रगत्य । एक मशानु हिनू के लिए धीरविता अयतार महान सत्य है—संतार की कोई भी बस्तु बन जाती

पुत्र पत्नी उसकी नजरों में इतनी सत्य नहीं है। उस सत्य की रक्षा के लिए वह अपनी ही नहीं अपने पुत्रों की प्राकृति भी दे देगा। इसी प्रकार क्या एक के लिए सत्य है पर दूसरा उसे संसार के सब दुःखों का मूल समझता है और इसलिए असत्य कहता है। इसी सत्य और असत्य का संघाम साहित्य है। पतन और विमान का उद्धार भी यही है लेकिन वह बुद्धि के रास्ते से नहीं पहुँचा जा सकता है। बेचारा साहित्य भी यही यात्रा कर रहा है लेकिन गंभीर विचार से मौन न रहकर केवल बकन गिटाने के लिए अपनी कब्र खोदकर पाठा भी जाता है। यह रास्ता तो काटमा ही पड़ेगा तो क्यों न हँस खेसकर काटो। इसी 'दया सत्य पर बड़े-बड़े बर्षों की बुभियार पड़ी यह मानो मानव जाति की ओर से इन्द्र को ललकार भी उनका सिंहासन छीनने के लिए सक्रिय प्राण उसका मजाक उड़ाया था रहा है।

यह सत्य और असत्य की यात्रा उसी बल से मनुष्य में धारणा का विकास हुआ। इसके पहले तो उसकी सारी कृतितया प्रकृति से अपने भोजन के लिए सड़ने में ही खस हो जाती थी। जब यह चिन्ता लगी हो कि प्राण बचने कायेंसे क्या या प्राण रक्त की सर्पों काटने के लिए प्राण कैसे बने तो सत्य और असत्य के रम कौन जाता। उस बल सबसे बड़ा सत्य वह भूख और ठंड थी। साहित्य और कर्तव्य सत्य भीवन के लक्ष्य है जब हमम इतना सम्पूर्ण प्रा जाय कि पेट के सिवा कुछ और भी सोच सकें। रोटी-वाल से निश्चिन्त होने के बाद ही खीर और पकीड़ी की सूझती है। प्रादि में मनुष्य में पशु-प्रकृति की ही प्रचालना थी। केवल पशुवत् ही सबसे बड़ा अधिकार था। मगर जब मनुष्य प्रायेणिक के कलह और रुधय से तग घा गया तो तरह-तरह के नियम बने और मर्तों की सृष्टि हुई। नये-नये सत्यों का आविष्कार हुआ जो प्रकृत सत्य न थे बल्कि मानव सत्य थे। मनुष्य ने अपने को नीति के बन्धनों से बंधना शुरू कर दिया। जातिवादी बनी उपजातिवादी बनी और जायशत्र के आधार पर समाज का संगठन हो गया। पहले दस-पाँच मेड़-बकरियाँ और बोग-सा नाम ही सम्पत्ति थी। फिर स्थावर सम्पत्ति का आविर्भाव हुआ और चूँकि मनुष्य ने इस सम्पत्ति के लिए बड़ी-बड़ी कुर्बानियाँ की थी बड़े-बड़े कष्ट उठये थे वह उसकी नजरों में सबसे बहुमूल्य वस्तु थी। उसकी रक्षा के लिए वह अपनी और अपने पुत्रों के प्राणों की बाजी लगा सकता था। विवाह प्रका को ऐसा रूप दिया गया कि सम्पत्ति पर से बाहर न जाये पाये। और उस प्रकृति से धान तक का मानव-इतिहास केवल सम्पत्ति-रक्षा का इतिहास है। सब समाज में दो बड़े-बड़े क्षेत्र हो गये। जो संसार के इस संघाम में परास्त हो गये उन्होंने ईश्वर परम का ध्यान लिया और संसार को माया कहकर उससे विरक्त हो गये और नये-नये बन्धन बनने लगे यहाँ तक कि हमारा लोभ संकृषित होते-होते कठियों का एक कारागार सा बन गया। धर्म के नाम पर हजारों तरह के पालंड समाज में चुस घाये बिनमें इतना-कर मानव-समाज की गति रुक गयी। धर्म सब चीज को कुलकर होती है। यह प्रकृति

का नियम है। वही सच्चाई जिसका निर्माणा समाज के कल्याण के निमित्त किया गया था अन्त में समाज के पाँव की बेड़ियाँ बन गयीं। वही क्रम जो एक मात्र म धर्म है उस मात्रा से बढ़कर विघ्न हो जाता है। मानव-समाज में शांति का स्थापन करने के लिए जो-जो साधनाएँ सोच निकाली गयीं वह सभी क्रमान्तर में या तो बीख हो जाने के कारण अपना काम न कर सकीं या कठोर हो जाने के कारण कष्ट देने लगीं। जो पहले कुशलपति या बहु राजा बना। फिर वह इतना शक्तिशाली बन बैठा कि अपने को सम्राज्य का कारकून समझने लगा जिससे वाकपुर्ण करने का किसी मनुष्य को अधिकार न था। उसकी अधिकार-तुच्छता बढ़ने लगी। उसकी इस तुच्छता पर समाज का रक्त बहुते सरा। अन्त में अन्त अन्ति में इन इलाकों के प्रति विद्रोह का माह उत्पन्न हो गया। मनुष्य की धर्मता इन निरपेक्ष ही नहीं। पातक बन्धनों को मक्की के वास्ते की मालि ठोड़-ठोड़ करके निम्न स्वच्छ मुक्त धर्मज्ञान और वायु में विचारण करने के लिए प्रचुर हो उठी। बीच-बीच में किन्तनी हो बार ऐसे विद्रोह छटे। हमारे जितने मत हैं वह सब इसी विद्रोह के स्मारक हैं किन्तु उन विद्रोहों में कबहूँ की जो मुख्य वस्तु की बहु व्यो की र्यों बनी रही। सम्पत्ति में हाथ मथाने का किसी को या तो साहस ही न हुआ या किसी को सुख ही नहीं। जो इन सारे दुष्प्रवृत्तियों का मूल था वह इतना हीन वेत में बर्न और विघ्न और नीति के आवरण में महान बना हुआ बैठा था कि किसी को उसकी ओर सन्देह करने की भी प्रेरणा न हुई। हार्निक ली के इतारे और सहयोग से समाज पर निर नये-बन्धन समाने का रहे हैं। यह बड़े-बड़े व्यापारक और यह साम्राज्यवाद और ये बड़े बड़े व्यापार के केन्द्र ली के रहे हुए मिलीने हैं। ये विघ्न-निघ्न अन्त उनके खिलाफों के सिवा और क्या है। यह पात-पात यह ठीक-नीच का धैर ली की छोड़ी हुई धूमधड़की है। यह कहने जो मानव-समाज के कोड़ हैं उनके कर विमोह है। व हुनाएँ धर्मक्य विषयों से हमारे लालों मजूर जो पशुओं की शक्ति जीवन काट रहे हैं उसी धर्ममयी के धूमन्तर की विभूतियाँ हैं। उसने Puritanism का कुछ ऐसा निवेधात्मक रूप बहुष कर लिया है, कि जो उससे बहुत मात्र भी विमुख हो जाय उसकी खेरिफत लीं। उसका कानून मात्म-मा से वही पठोर, वही बाल-लेखा है। उसकी लपीम के लिए कहीं कोई Tribunal नहीं है। सारांश यह कि उसने जीवन को इतना संकीच इतना उममन्तर, इतना धर्ममयूष इतना स्वार्थमय इतना दुषिम बना दिया है कि मानवता उससे भयभीत ही उठी है और उसको पछाड़ देकर के लिए, उसके पजों से निकल जाने के लिए वह धर्मता पूरा और समा रही है। इन रक्षियों ने इन बंधनों ने इन धर्मय भाषाओं में ब्रह्मचर की ध्यानक वेतना में जो बर्न-ले बना दिये हैं जिनमें बन् होकर बहु धपभी स्वच्छमृता हो बैठे हैं मात्र हुनाएँ धात्मा उन र्यों को तीरकर उध व्यापक वेतना से सामंजस्य प्राप्त करने के लिए उतार हा गयी है। संभव है, रसी को और से लीकर इसक दृष्टे के साथ ही वह

तबान-बवान

धरने ही बार में फिर पड़े। संभव है पित्रों में बन्धु बन्धु की भाँति पित्रों से निष्पन्न  
 वह हिंकारी विद्वियों का प्रायः बन्धु बन्धु पर उसे विरता मंजूर है। प्रायः बन्धु बन्धु मंजूर  
 है, उन दोनों में रहना मंजूर नहीं। संसार को भी भर कर भोगने की धारणा सातसा जिसे  
 सखियों की *Partisanship* ने खूबवार बना दिया है। सन्-सखी बन्धु बन्धु पाइती है।  
 निषेधों की उसे बिलगुम परवाह नहीं है। वह पाप को पुण्य असत्य को सत्य और धनुष  
 को पुण्य बना देता टान बैठती है। उसने *Partisanship* का सखियों तक व्यवहार करके  
 देख लिया है और धन बिना उसे अमीन में वफा किये उसे बंधन नहीं। भूठ बोसना पाप  
 है। क्यों पाप है? अगर उस भूठ से समाज का ग्रहित होता है तो वह बेशक पाप है।  
 अगर उससे समाज का फायदा होता है तो वह पुण्य है। निरपेक्ष सत्य के प्रतिष्ठा को  
 ही वह स्वीकार नहीं करती। बोरी को तुम पाप कहते हो? तुम बाटते हो कि संसार  
 को सारी सम्पत्ति बढ़ोकर उस पर एकाधिपत्य बनाओ। कोई उसे छेड़ तो उसके लिए  
 बेल है, फौजी है। हमने और तुममें इनके सिवा और क्या खतर है कि तुम सफल बोर  
 हो और हम बोर-कला में तुम्हारी बराबरी नहीं कर सकते। इस *Partisanship* ने हमारी  
 भात्मा को कितना शुष्क काठ का-सा कठोर बना दिया है कि उसमें रस का लोप हो  
 गया। कविता निराली ही सुन्दर और प्राणमयी हो वह उसका प्राणत्व नहीं उठ सकती।  
 इससे वासनाओं का उदीपन होता है। चित्रकला से तो उसे दुरस्ती है। अन्ना मनुष्य की  
 क्या मजान है कि वह परमात्मा के काम में लक्ष्मण है। सृष्टि परमात्मा का काम है।  
 मनुष्य अगर उसकी मज्जम करता है तो उसे सूखी पर चढ़ा दो छाँची पर लटका दो।  
 इतिहास में ऐसे धर्मन्यायों की कमी नहीं है जिन्होंने पुस्तकालय बना दिने विद्यालयों  
 को भूमिस्थ कर दिया मंगीत के उपासकों को निर्वासित कर लिया। तीर्थ स्वार्थों में जो  
 पितामहीनताएँ होती हैं वह इसी *Partisanship* का प्रसार है। धार्मिक भारत में जो पाँच  
 करोड़ धर्म भी कराइ मुसलमान और सायब एक करोड़ ईसाई हैं और जिस धर्मके के  
 कारण राष्ट्र के विकास में बाधाएँ बढ़ी हो गयी हैं उसका जिम्मेदार इस *Partisanship*  
 के सिवा और कौन है? और बयहों में तो प्युटिनिज्म से क्या हानि नहीं होती। मत  
 शाखा पियो मठ बाँध जायो। इनके बयैर समाज की को हानि नहीं। इतिहास में ऐसे  
 का दुष्प्रभाव किसी तरह भी कम नहीं। लेकिन इससे पैदा होनेवाली धर्मन्यायता तो और  
 भी बुरा है। त्याग और समय स्तुत्य है, उनी हानत में जब वह धर्मकार को म धर्मुरित  
 होने के सेविन दुर्भाग्य से इन दोनों में कारण और भाव का-सा सम्बन्ध पाया जाता है।  
 जो कितना ही नीतिवान है वह उतना ही धर्मकारी भी है। इसलिए समाज धार्मिकानों  
 को सम्बेह की धारों से देखता है। एक शराबी या प्यास भारमी अगर उधार हो सहायु  
 मूर्ति रखता हो सनानीत हो सेवा-भाव रखता हो तो समाज के लिए वह एक पक्के धार्मिक  
 धारो निम्न अनुदार, धर्मवीर, लक्ष्मण-दूत बुरा से कहीं ज्यादा उपयोगी है। प्युटिनिज्म  
 मनुष्य के इस हाथ में रहती है कि जिसका पाँच किगम और वह वास्तवी बनाय।

प्युटिनिज्म धीर धनुवारता को पर्यन्त-से ही यमे है धीर जहाँ सेवक का प्रेम या भावना है वहाँ तो वह नंगी ललवार बाहर का डेर है । यहाँ वह किसी तरह की नमी नहीं कर सकता । उसे अपने निबनों की रक्षा के लिए किसी का जीवन मर्यद कट देने में एक प्रकार का वीरक-मुक्त धान्य प्राप्त होता है । भीम उसकी दृष्टि में सबसे बड़ा पाप है । बोरी करके हम समाज में रह सकते हैं बोसा देकर झूठी गवाही देकर निबनों को कुचलकर, मित्रों से विश्वासघात करके अपनी स्त्री को बंधों से पीटकर हम समाज में रह सकते हैं उसी मान धीर प्रकृति के धाम लेकिन भोम प्रकृत्य धराम है । उसके लिए कोई प्रायश्चित्त नहीं । पुरुषा के लिए तो बाड़े किसी तरह समा सुख भी हो पाय किन्तु स्त्रियों के लिए समा के डार बन्द है धीर उन पर अभीष्टशासा बाण मीमर का तासा पड़ा हुआ है । धनी का यह प्रसार है कि हमारी बहने धीर बटिवाँ धाम विम तीर्क-स्वानों में ललार खीर ही जाती है धीर इत तरह उन्हें कुलित जीवन बिताने के लिए मजबूर किया जाता है । हम केशवो धराराही को बंध देकर समुष्ट नहीं होते उनके कुटुम्ब का उसकी सन्तान का धीर सन्तानों की भी सन्तान का बहिष्कार कर देते हैं । इस स्त्री या पुरुष पिछी के लिए भी ध्यनिधार के समकक नहीं लेकिन यह कहीं का ध्याय है कि किस धराराव के लिए पुरुष को बंध देने में हम असमर्थ हों उसी धराराव के लिए कुमागियो मा निबदाधों को कर्तव्य किया जाय ? मीमाम्यवधियों को हमने इसलिए धीर दिया है कि परिस्थितियाँ उनके अनुकूल है धीर समाज उन्हें बंध देने में असमर्थ है । का पुरुष स्वयं बड़े बड़सने से ध्यनिधार करता है, वह भी अपनी स्त्री को पिछरे में बन्द रखता जाइता है धीर यदि वह मानव स्वभाव से प्ररित हलार पिछरे से निकलने की इच्छा करे तो उसकी मरकम पर धुरी खेले से भी नहीं हिचकता । यह सामाजिक विपत्ता धमदा ही पडी है धीर वह बड़ी ठेकी से विद्रोह का रूप धारण कर रही है ।

इन सामाजिक कस्ताधों का हमने इसलिए संक्षिप्त बखन किया है कि जैसा हमने धारम में कहा है—साहित्य जीवन की धानोचना है उन उदरय में कि जससे सत्य धीर सुन्दर की लोभ की धाय । बाह्य धमदा हमारे मन के धमदा प्रवेश करके एक कुलरा बन्द बन जाता है, विम पर हमारे मुक्त-मुक्त मय-विस्मय रजि या धरवि का सहारा नब बड़ा होता है । एक ही लल विम-विम हुरबो में विम धाम सत्यप्र करता है । एक धारमी धरने सङ्के की इसलिए पीट रखा है कि लङ्का सेभाड़ी है मन लया कर नहीं पड़ता । हम पर तरह-तरह की धानोचनार्ण होती है । धान का धम है कि मङ्क को धुराव धमते देते तो उधे ठाड़ना है । यह सगलतन रीति है । धूरता बहता है— नहीं लङ्का सेवक इसलिए सेभाड़ी हो गया है कि उन प्रम ल पड़ाया नहीं जाता । यह धान का धीर है । लीमरा धान्नी एक मरम धीर धामे जाता है धीर कइता है—ललना मङ्कों का स्वाभाविक धम है यही उसकी रिधा है । धान को कोई धचिधर नहीं है कि वह सङ्के के प्रादृष्टिक विधान में बाधक हो । एक धीर धारमी धान की धम

ताड़ना में पुत्र-स्पर्ह का नहीं—स्वाध्याय नाम बन्ध का रंग मन्मथता हुआ देखता है। बाह्य जपत और मनुष्य जगत में यही अन्तर है। साहित्य की रचना करनेवाले तो वही हाने हैं जो जपत-मति से हितोपकरण से प्रभावित होते हैं। जिनके मन में ससार को कुछ अधिक सुन्दर, कुछ अधिक उत्कृष्ट देखने की महत्वाकांक्षा होती है। वे अमुन्दर को देखकर जितने दुखी होते हैं, उतना ही सुन्दर को देखकर प्रसन्न होते हैं। और वे अपने हृदय या शोक को अपने मन में ही रखकर सतुष्ट नहीं होते। वे ससार को भी अपने हृदय या शोक का एक भाग देना चाहते हैं। भाव को अपने बनाकर सब का बना देना यही साहित्य है। डा. रवीन्द्रनाथ ने अपने 'नीत्य और साहित्य' नामक निबन्ध में लिखा है—

'सौन्दर्य-भाव जितना विकसित होता जाता है, उतना स्वतन्त्रता के स्थान पर सुमति धारण के स्थान पर अल्पकाल आधिपत्य के स्थान पर मानस्य हम धान्य देता है।

हम हमसे इतना और निभा बने—अनुशरता को जगह उशरता भेद की जगह में प्रण की जगह प्रम।

नवीन साहित्य की शक्ति अजिबकुस यही विकास गहरा था रहा है। वह अथ धारण शक्तियों की कल्पना नहीं करता। उसके अर्थ अथ उस अर्थी से मिले जाते हैं जिन्हें कोई प्युरिटन धुला भी पसन्द न करेगा। मेक्सिम गोर्की अनातोलीय फ्रान्स रोमा रोमा एष की बेन्स धारि मोरोन के स्वर्गीय रतननाथ मरसाट, शरद्वन्द्व धारि भारत के—अ ममी हमारे आनन्द के अर्थ को फिमा रहे हैं। उमे मानसरोवर और कैनाथ की शक्तियों से उतारकर हमारे गली-कूचों में उखा कर रहे हैं। वह किन्ती शरती की किन्ती उधाटी को किन्ती विपरी की देखकर बुद्धा से भुह नहीं फेर लेते। उनकी मानवता पतितों में वह अर्थियाँ उससे नहीं बड़ी भाषा में देखती हैं। या अम ध्वजाधारियों में और पवित्रता के पुकारियों में नहीं मिलती। बुने आन्धी को अन्धा समझकर, उनसे प्रम और धारण का व्यवहार करने उनका अन्धा बना देने की जितनी सम्भावना है उतनी उससे बुद्धा करके उनका अन्धाकरण करके नहीं। मनुष्य अ जो कुछ सुन्दर है, बिसाल है धारणशील है, आनन्दप्रसन्न है, साहित्य उमी की मूर्ति है। उसकी मो" में उन्हें धारण मिलना चाहिए, या निराश्रय है जो पतित है या अनाथ है। माता उस बालक से अधिक से अधिक स्नेह करती है, या दुःख है बुद्धिहीन है, मरत है। मरुत देने पर वह अन्ध करती है। उनका हृदय दुःखी होता है, कर्तुर्वीरि के लिए। कर्तुर्वीरि में वह अपने मानु-आत्मन् को टिका पाती है। बीस अन्धोंस साथ पहले बेस्य साहित्य से अन्धियन की। अन्धर कभी वह साहित्य अ लायी जाती थी तो केवल अन्धमानित किये आन के लिए। रचयिता की प्युरिटन-मनावृत्ति बिना उसे मनमाना अन्ध दिव्य विधायन न लेती थी। अब वह साहित्य में अन्धमान की वस्तु नहीं धारण और प्रम की वस्तु बन

गयी है। गऊ को हत्या के लिए बेचनेवाला अगर बोपी है तो खरीदनेवाला कम बोपी नहीं है। खरीदनेवाले का अगर समाज में धार है तो बेचनेवाले का क्यों अभाव हो ? बेस्या में बेटीपन है, मातापन है, पत्नीपन है। उसमें भी भविष्य और भद्र है, सहृदयता है। उसका तो जीवन ही पर-मुक्त के लिए अर्पित हो गया है। वह समाज के गद्य की सुक्ति है। उसकी शोभा इसी में है कि वह गद्य में सुम-मिलकर सम्पूर्ण गद्य को सजीव और चमत्कृत कर दे। सुक्तियों को चुनकर धन्य कर देने से उनका सुक्तिपन क्यों का र्वों रहता है, समाज शुष्क हो जाता है। अगर कोई ईश्वर है, तो ये बेवशासिताँ हिंस्र के दिन उससे पुछेंगी—हमने सदा पर-मुक्त चेष्टा की सबैव बूझों के बन्ध पर मरहम रक्खा बन्धो भी किया लेकिन प्राण देने के लिए नहीं बन्धि अपना प्रम Injunct करने के लिए। क्या उसका यही पुरस्कार था ?—और हमें विश्वास है ईश्वर उन्हें कोई अज्ञान न दे सकेगा। प्राचीनकाल की अन्धकारों तो बेवशासिताँ और अज्ञानियों की मजूरे-गजार थीं। हम उनकी कमबुगी बेटियों का किस मुँह से अज्ञान कर सकते हैं।

ईश्वर का बिना बड़े मीके से ध्या गया। साहित्य की नवीन प्रगति उनसे विमुक्त हो रही है। ईश्वर के नाम पर उनके उपासकों ने भू-भण्ड पर जो धन्य किये हैं, और कर रहे हैं उनके देखते इस विरोध को बहुत पहले उठ सका होना चाहिए था। धार्मिकता के रहने के लिए शहरों में स्थान नहीं है, मगर ईश्वर और उनके मित्रों और कमचारियों के लिए बड़े-बड़े मन्दिर चाहिए। धारणी भूषा मर रहे हैं मगर ईश्वर अन्धे से अन्धा सायागा अन्धे से अन्धा पहनेगा और कृष्ण बिहार करेगा। अपनी सुक्ति की टावर सेना समने छोड़ दिया तो साहित्य भी जो ईश्वर के दरबार में प्रजा का बकील है, साफ-साफ कह देना—आपकी यह स्वाभिमता धारणी शान के विनाश है। लेकिन ईश्वर की भीला कुछ एसी विचित्र है, कि हम मुँह से बितने ही धनीश्वरवादी बनते हैं धारमा से उठने ही ईश्वरवादी बन जाते हैं। अब तक मुँह से ईश्वरवादी के आत्मा से पक्के नास्तिक ; अब परिस्थिति बदल रही है और गन्धा ईश्वरवाद उबा की सात्त्विकता से उचित हो रहा है। भूषा जो ईश्वरवाद से क्या प्रवोजन। जहाँ मेन है, साम्बन्ध है नमन्ध है, वही ईश्वर है। नकनी ईश्वरवाद से धारमवाद प्रस्तुत हो रहा है।

लेकिन हमके माय मुक्तों का जीतान और मुक्तियों का चित्तनीपन भी नवीन प्रगति का एक लक्षण है, जिसके हम नमन्ध नहीं। प्रथम मेन्ध ममोबिनोर की बस्तु मड़ी। वह इससे कड़ी पवित्र और महान है। वह धारम-नमण्ड है, स्वी के लिए प्री और पुण्य के लिए भी। मनुमान बोरोपोय साहित्य बड़े बेग में धारम प्रम की ओर जा रहा है। वैवाहिक मैनी और वैवाहिक परीक्षा की समस्याएँ साहित्य में हम को जा रही हैं। यह पेट्रोग की स्वा-मिणा है। ससार का मारा बन चौककर व धर निरिन्ध हो गये हैं और निरिन्ध धारणी कामरता की ओर न जाय तो क्या करे। वैवाहिक

विकास के लिए रसिकता परमावश्यक है। रग की उपेक्षा केवल दुबल और रक्तहीन प्राणी ही कर सकता है। जो स्वस्थ है, समबल है, उसका रसिक होना अनिवार्य है, लेकिन रसिकता और कामुकता में जो अन्तर है, उसे योरोप का साहित्य मूलतः बा रखा है। सदियों के बन्धन और निग्रह के बावजूद जो उसे यह बस्तु मिली है तो वह सम्मती हो जाना चाहता है। इस अनुभूति की वशा में उसे साध और यत्नाय कुछ नहीं सूझता। स्त्री और पुरुष दोनों ही वैवाहिक जीवन की विमोक्षितियों से भाग रहे हैं। अगर वह प्यूरिटनिज्म सीमा का अतिक्रमण कर गया था तो यह रसिकता भी सीमा के बाहर निकली जा रही है। अब तक पुरुष इन क्षेत्र में विजय-कामना किमा करता था। अब स्त्री भी योरोपीय साहित्य में उमी मनोवृत्ति का प्रदर्शन कर रही है। उस शीत-प्रवाह देश के लिए सबसे उत्तमना की आकरत है। वहाँ जमे हुए जो को पिघलाने के लिए थोड़ी-सी गर्मी चाहिए ही। यहाँ तो भी यों ही पिघला रहता है। उसके लिए प्रायः शिक्षा की आकरत नहीं। रसिकता मोहन-रूपी जीवन के लिए बटनी के समान है, जो उसके स्वाद और रस को बढ़ा देती है। केवल बटनी जाकर तो कोई जीवित नहीं रह सकता।

विषय बहुत बढ़ा है। एक छोटे-से मापख में उसकी काफी व्याख्या नहीं की जा सकती। समाज का वर्तमान संकटन द्रुपित है। कुछ दरिद्रता व्याप्य ईर्ष्या द्वेष आदि मनाधिकार, जिनके कारण ससार नरक के समान हो रहा है। इनका कारण द्रुपित समाज-संघटन है। सोशियलिस्टों के साथ साहित्य भी इसी प्रश्न को हल करने में समा हुआ है।

मार्च, १९३३

## जीवन और साहित्य में घृणा का स्थान

### जीवन में घृणा का स्थान

निम्न क्रोध और घृणा यह सभी दुर्गुण हैं। लेकिन मानव जीवन में से अगर इन दुर्गुणों को निकाल बीजिए, तो संसार नरक हो जायगा। यह निम्न हो का भय है, जो दुष्टचारियों पर संकुल का काम करता है, यह क्रोध ही है जो न्याय और सत्य की रक्षा करता है और यह घृणा ही है जो पालंज और मृतता का क्षय करती है। निम्न का भय न हो क्रोध का धार्तक न हो घृणा की धारक न हो तो जीवन विमृल्लत हो जाय और समाज नष्ट हो जाय। इनका जब हम दुरूपयोग करते हैं तभी ये दुर्गुण हो जाते हैं लेकिन दुरूपयोग तो अगर दया करुणा धर्तसा और शक्ति का भी किया जाय

हिन्दू विरविद्यालय के विहारी ऐमीगिएशन के वार्षिकोत्सव पर पढ़ा गया।



तो वह दुर्गुण हो जायेंगे। धन्वी क्या अपने पाप को पुण्यायुक्तीन बना देती है, धन्वी कदवा काकर धन्वी प्रशंसा बर्माही धीर धन्वी भक्ति भूत। प्रकृति जो कुछ करती है, जीवन की रक्षा ही के लिए करती है। धात्म-रक्षा प्राणी का सबसे बड़ा धर्म है और हमारी सभी माननाएँ धीर मनोवृत्तियाँ इसी उद्देश्य की पूर्ति करती हैं। कौन नहीं जानता कि बही विष या प्राणों का नाश कर सकता है, प्राणों का संकट भी दूर कर सकता है। अक्सर धीर धर्मका का मेव है। मनुष्य को मन्वी से दुग्न्व से अक्षय्य वस्तुओं से क्यों स्वाभाविक बूणा होती है? केवल इसीलिए कि मन्वी धीर दुग्न्व से बचे रहना उसकी धात्म-रक्षा के लिए आवश्यक है। बिना प्राणियों में ब्रह्मा का भाव विकसित नहीं हुआ उनकी रक्षा के लिए प्रकृति ने उनमें दबकने धर्म साध धेने या विष जाने की शक्ति बाल ही है। मनुष्य विक्रम-क्षेत्र में उत्पत्ति करते-करते इस पद को पहुँच गया है कि उसे हानिकर वस्तुओं से धाव हो धाव बूणा हो जाती है। बूणा का ही उद्घ रूप भय है धीर परिष्कृत रूप विवेक। ये तीनों एक ही वस्तु क नाम है उनमें केवल भावा का अन्तर है।

तो बूणा स्वाभाविक मनोवृत्ति है धीर प्रकृति द्वारा धात्म-रक्षा के लिए सिरबी गयी है। या मैं कहो कि वह धात्म-रक्षा का ही एक रूप है। धरर हम उससे संबंध हो जावें तो हमारा अस्तित्व बहुत निर न रहे। जिस वस्तु का जीवन में इतना मूल्य है, उसे क्षिप्त होने देना अपने पाप में कुन्हाही मारना है। हममें धरर भय न हो तो साइस का उदय कहीं से हो। कल्पित जिस तरह बूणा का उद्घ रूप भय है, उनी तरह भय का प्रबंध रूप ही माइस है। अकरत केवल इस बात की है कि ब्रह्मा का परित्याग करके उस विवेक बना दें। हमका धर्म यही है कि हम व्यक्तियों से बूणा न करके उनके बुरे धाकरण से बूणा करें। जब स हमें क्यों बूणा होता है? इसीलिए कि उनमें कृता है। अयर धाव वह कूर्तता का परित्याग कर दें तो हमारी बूणा भी जाती रहेगी। एक शायबी क मुँह से शराव की दुग्न्व जाने के कारण हमें उसमें बूणा होती है, लेकिन बोड़ी धेर के बाद जब उसका मशा उत्तर जाता है धीर उसके मुँह से दुग्न्व धाला धर्म हो जाती है तो हमारी बूणा भी धायव हो जाती है। एक पान्डी पुत्रापी को मरत धामीसा को टगट देकर हम उसमें बूणा होती है लेकिन जब उनी पुत्रापी को हम धामीसों को मेवा करते देखें तो हमें उससे भक्ति होयी। बूणा का उद्घय ही यह है कि उसमें दुग्न्वा का परिष्कार हो। पान्डी भूणता धग्वाय बसात्कार धीर ऐसी ही धग्वा दुग्न्ववृत्तियों क प्रति हमारे अन्तर जितनी ही प्रबंध बूला हो उतनी ही कग्पाउधारी होगी। बूणा क क्षिप्त होने से ही हम बहुधा स्वयं उन्ही बुराध्यों क पद अपने हैं धीर स्वयं मैमा ही धग्वाय व्यवहार करने लगते हैं। जिसमें प्रबंध बूणा है वह जान पर नेमकर भी अपने धनना रक्षा करेगा धीर उनी उन्ही जब तोरकन फेंक देने में वह धनन प्राणों



तो वह कुर्गुण हो जायेंगे। धर्मो बसा अपने पाप को पुण्यावहीन बना देती है। धर्मो कसूटा कावर, धर्मो प्रशंसा बमझी धीर धर्मो भक्ति धूर्त। प्रकृति जो कुछ करती है, जीवन की रक्षा ही के लिए करती है। धात्म-रक्षा प्राणी का सबसे बड़ा धर्म है और हमारी सभी भावनाएँ धीर मनोवृत्तियाँ इसी उद्देश्य की पूर्ति करती हैं। कौन नहीं जानता कि बही विष ओ प्राणों का नाश कर सकता है, प्राणों का सकेट भी बुर कर सकता है। धरहर धीर धवस्था का भेद है। मनुष्य को धर्मो से दुग्न्ध से जन्म्य वस्तुधर्मों से क्या स्वाभाविक पूछा होती है? केवल इनीलिए कि गन्धी धीर दुग्न्ध से बचे रहना उसकी धात्म-रक्षा के लिए धावरयक है। जिन प्राणियों में बूछा का मन्ध विकसित नहीं हुआ उनकी रक्षा के लिए प्रकृति में उनमें बचकने धम धाम धेने या धिय जाने की शक्ति बल की है। मनुष्य विज्ञान-बोध में उन्नति करते-करते इस पद को पहुँच गया है कि उसे हानिकर वस्तुधर्मों से धाय ही धाय बूछा ही जाती है। बूछा का ही उच्च रूप धर्म है धीर परिष्कृत रूप विबन्ध। ये तीनों एक ही वस्तु के नाम हैं उनमें केवल मात्रा का धन्तर है।

तो बूछा स्वाभाविक मनोवृत्ति है धीर प्रकृति द्वारा धात्म-रक्षा के लिए सिखी गयी है। या मैं कहूँ कि वह धात्म-रक्षा का ही एक रूप है। धगर हम उससे बन्धित हो जायें तो हमारा धास्तित्व बहुत जिन न रहे। जिस वस्तु का जीवन में इतना मूल्ध है, उसे तिबन्धित होन वेना धपने पाँव में कुल्हाडी मारना है। हममें धगर धम न हो तो सल्लस का उद्य कहीं से हो। बन्धित जिस तरह बूछा का उच्च रूप धर्म है, उसी तरह धर्म का प्रबन्ध रूप ही सल्लस है। जकरत केवल इस बात की है कि बूछा का परिधाला करने उसे विवेक बना दें। इसका धम यही है कि हम ध्यन्धियों से बूछा न करके उनके बुरे धावरण से बूछा करें। धूस से हमें क्यों बूछा होती है? इनीलिए कि उसमें धूठता है। धगर धाज वह धूठता का परिधाला कर दें तो हमारी बूछा भी जाती रहेगी। एक शरावी के मूँह से शराब की धूर्धन्ध धाने के कारण हम उससे बूछा होती है, लेकिन बोड़ी धेर के बाद जब उसका मन्धा उतर जाता है धीर उसका मूँह से दुग्न्ध धाना बन्ध हो जाती है तो हमारी बूछा भी गायब हो जाती है। एक पाखडी पुबारी को उरल धामीधों की धन्ते देखकर हमें उससे बूछा होती है लेकिन कल उसी पुबारी को हम धामीधों की सेवा करते दखें ता हम उससे भन्धित होयों। बूछा का उद्देश्य ही यह है कि उससे बुराधर्मों का परिष्कार हो। धामन्ध धूठता धन्धाय बभात्कार धीर ऐसी ही धन्ध धुष्प्रबन्धियों के प्रति हमारे धन्धर जितनी ही प्रबन्ध बूछा हो उतनी ही कन्ध्याउकारी होगी। बूछा के तिबन्धित होने से ही हम बहुधा धन्धय उन्हीं बुराधर्मों में पड़ जायें हैं धीर स्वयं बीसा ही बूधित ध्यबह्यार करने मन्धते हैं। जिसमें प्रबन्ध बूछा है, वह धान पर सेमकर भी उनमें धपनी गन्धा करणा धीर उनी उनकी बड़ खोरकर र्कक धेने में वह धपने प्राणों

की बाजी मया होगा। महात्मा गांधी इसीलिए अग्रतपन को गिटाने के लिए अपने जीवन का समिदान कर रहे हैं कि उन्हें अग्रतपन से प्रथम घृणा है।

## साहित्य और कला में घृणा की उपमोगिता

जीवन में जब कदा का इतना महत्व है तो साहित्य कसे उसकी उपेक्षा कर सकता है, जो जीवन का ही प्रतिबिम्ब है। मनब-हृदय धारि में ही सुधीर कु का रम-स्वन रहा है और साहित्य की सृष्टि ही इसीलिए हुई कि ममार म जा सु या मुडर है और इसलिए कस्याणकर है उसके प्रति मनुष्य म प्रम उत्पन्न हो और कु या असुन्दर और इसलिए धमत्य वस्तुधा से गुणा। साहित्य और कला का मही मुख्य उद्देश्य है। कु और सु का सन्नाम ही साहित्य का इतिहास है। प्राचीन साहित्य धम और ईरवर इतिहास के प्रति मला और उनके अनुयायियों के प्रति श्रद्धा और धरि के मावा की सृष्टि करता रहा। महीन साहित्य समाज का सुन चुपनवाला रम विमारा ह्यकस-बाबा और जनता के अज्ञान से अपना स्वाध मित्र करनेवालों के विरुद्ध उतने ही जोर स धमना उठा रहा है और हीनों धरिटा धम्याय के हाथ सताये हुएों के प्रति उतन ही जोर से सहानुभूति ज्ञापन करने का प्रयत्न कर रहा है। मंभव है वह मानुषता की तरंग में और कठोर सत्य का धार से धरिं बर करने समार म धरिण मबा देने का स्वप्न बैब रहा हो सम्भव है जिन्हें बहु धरिटा के कारण सहानुभूति का पाष ममक रहा है उनकी माटी मुण्डियों को दुःखस्वा और धरिटा के विर मड रहा है। व इतन मोल-माले प्राणी न हों पर धरु मधुग का स्वय-स्वप्न देखने म इतना मम है कि इन समय उसे किसी बाधा-विघ्न की धोर ध्यान देन का धरकास नहीं है। सकिन उन कला कपरा का उद्देश्य क्या महे वा कि वे किसी ध्यक्ति या ममार के प्रति बला केमार्गे ? वे ध्यक्तियों के सनु नहीं है न वे ह्य या दीर्घा के कारण साहित्य का रचना करने है। वे उन परिस्थितियों और प्रवर्तियों क सनु है जिनके हाथों ऐसे ध्यक्ति उत्पन्न होते हैं। ध्यक्तिवा वे उन्हें उतना ही प्रम है, विरता धपन किमी माई से हो सकता है। जिन मूरकोर महाजनों या मजदूरों के पमीने की कमायी पर मो- होलवाले मिल-मामिका के प्रति बहु धपनी इतिथों में बहर उमलता है, उन्हीं की मकट में देखकर बहु उनकी सेवा करना धपना महोमाय ममभेया। बहु जानता है कि यह मरीब सुड धपनी स्वाधरिणता के हाथों दुभी है और धपनी धनलिप्या क शिकर होकर धराधों को मता रहे है। उमे उन्म महानुभूति होती है पर उन परिस्थितियों क साथ न जिनकुन समझीटा नहीं कर सकन हो सकता है उनमें कुछ ऐसे मा हों जिन्हें मूरकोरों क हावा कट्ट उठाने पर हा मय्यव है उन्हीं के हाथों उनका मवनास हो गया हो लेकिन धपर बहु कलाधर है तो उमम

साहित्य में प्रसर करन की ताकत मुमकिन नहीं। हाथप शक्ती का सौन्दर्य बर ही का एक रूप हो जासकिए एस कुशल सिखनबास भी बेसे बये है जिनकी बखन-शेमी म सागे खुबिया मौजूद है मगर न्य नहीं। ऐसे साहित्यकारों की शैली की गठन और बाक्स-बिम्बाम की प्रसंगा वो की जा सकती है मगर पढ़नेबासे के तिस पर उसका धसर नहीं होता।

स्वर्गीय मोसाला राशिय-उम-लेरी ॥ यह तीनो गुण मौजूद बे और यही उनकी साहित्यक सफलता का रहस्य है। उन्होने बहुत ही यत्नब तिस पाया था और उनके साब ही सच्चाई का पच सेनबासा भी। वह गम्भय बय में पेश हुए और उस बय के रहन-सहन के हर पहलू से परिचित बे। उगकी खुबिया और बुराइया दोनों ॥ ननकी कजुरों के सामन की। इधी मोसाइटी म साहिहा जैसी लाजबन्दी और स्वानिमानिनी कइकिया भी बेसी थी और काजिम जैस नेक और सवाचारी बुजुब भी। उनके तिस पर उन पात्र का गहग प्रभाव बा मगर उन्होने यह भी देखा कि धातुनिक समाज में कुछ ऐसी बुराइया बूस गयी है जिनके बिपाक्त बासाबरब में खुबिया बिनीरिन मिट्टी जा रही है और बुराइया रोक ब रोक पाँच फेसाली जाती है। उन्होने ब्यक्तिबारी प्रकृति न पामी थी। उनकी प्रकृति का रंग सामाजिक बा।

साहिहा और काजिम की इंसियत ब्यक्तियों की है मकिल बे धपने वग क प्रति निधि है। इन्हीं के बरिये मोसाला राशिय समाज का नुबार करना बाहते है। सोसाइटी कइकियों की बंधीरो में बकड़ी हुई है। धर्मबिरबाधा ने बय का रूप बारब कर लिया है। फिजुस कर्षों की बा बजाल बग गयी है और अयेबी सम्परा धपने बाइम्बरो और प्रमाननो के साब समाज के धसनी तत्बो को टोइवी-अेइवी जा रही है। उबारता बलन होती जाती है। धपने परिवार को पालने का ब्यायन धमक होया जा रहा है, स्वार्थि भता बकूटी जा रही है इंसिय-मोय का रग जाया हुआ है धाभ्यात्मिकता मुप्त हो रही है मारी पीड़ित है, उसे उसके धबिकानो से बंधित कर दिया गया है उस पर हाटीरक और धारिमक बलन इतने ब्याधा गया विये बये है कि वह धपाहित हो गयी है। वह धपने पति की बीबन-संगिनी न रह कर केबल उसके मनोरबन की बस्तु बन गयी है। उसके धपमान और धब पलन के उदाहरण धामे तिस उनके धनुबब मे धामे होये और धारबय नहीं कि उनका कर्बब तिस उसकी बेकसी पर रो छटता बा और उसके सुधार क लिए बेबन हो जाता बा। उनकी कइकिया और उपम्यास थोट धामे हुए तिस की पुकार है जिनमे तिस पर धसर करने का गुण कूट-कूट कर मरा हुआ है।

हमारा कबि और साहित्यकार धाम तीर पर लिभा शक्ति स शून्य होता है। संसार उनकी मनोरशाओं को प्रेरित करने का साधन ह। उस धपनी मनोरशाएँ संसार से धबिक मिथ है। वह संसार की घटनायाँ से बही तक प्रभावित होता है कि उसके धपने मन की करबटें बाग उठें। इससे ब्यारा उसे बुनिया ये तिसबस्वी नहीं।

मीलाना राशि केवल साहित्यकार न थे वह चिन्तक भी थे और सुधारक भी ।  
 जो उन्हीं में और भी उपन्यासकार हुए हैं जिन्होंने सांस्कृतिक समस्याओं पर कहानियाँ  
 लिखी हैं मगर उनकी कृतियों में शोच नहीं है । एसा मामूज होता है कि उन्होंने विषय-  
 विचार या परवा या तमाक धारि समस्याओं को केवल इनामिए धपना विषय बनाया कि  
 यह सरलता से इस पर धपनी कहानियाँ गढ़ सकते थे या इनामिए कि पत्रिक को इन  
 मसलों से विमचस्वी भी और ऐसी सामयिक कृतियाँ लोकप्रिय हो सकती थीं । एसा नहीं  
 मामूज होता कि सामाजिक समस्याओं से उन्हें धारिभक कष्ट होता है और जो कुछ वह  
 लिख रहे हैं वह सुधार के एक स्वायी धावेय की बशा में लिख रहे हैं । मीलाना राशि  
 उम-बेटी की कहानियों में सम्पाई है, दर है, युस्वा है, बेचारमी है, भूममाहट है जैसे वह  
 समाज की बड़ता और बेचरी से दुखी है और मय्याल से प्राण्णा करते हैं कि उनके  
 जम्ने में धसर पैदा हो भोग उनकी बार्ते सुने और उन पर भोच-विचार और  
 धनन करें ।

उनके जितने सामाजिक उपन्यास और कहानियाँ हैं वे सभी सुधार के धावेय से  
 भर हुए हैं । वह इमीन से भी काम लेते हैं गधीहर्तों से भी शरी के सीधर्य से भी  
 और इस्लाम के इतिहास और रबायतों और शरीयत के हुकमों से भी । बाहटे है कासा  
 उनकी धामाज में सरे इमराज्जिन की-सी तास्त और धनन होता । इस धावेय में कमी  
 कमी उनकी कृतियों में कला की दृष्टि से कृटियाँ भी उत्पन्न हो गयी हैं । कमी-कमी ऐमा  
 ज्जाल होन समता है कि यह किसी उपवेशक को धपीन है कोई साहित्यक मटि नई ।  
 धसर सुधारक और चिन्तक साहित्यकार पर हाबी हो गया है लेकिन मीलाना राशि  
 सम्पाइयों से धवने करेन वे और उनसे इतना धसर लेते थे कि उनका मन कमा के  
 मिद्धान्तों को धाच से धोमन कर बेमे के लिए विचर हो जाता था । बेरक दुनिया  
 धाटिस् के सीमित चिन्तन से कही ज्जाघा यज्ञे है । जुबा की दुनिया और इमान की  
 दुनिया में कोई मुकाबला नहीं । जुबा की दुनिया में धाये रिन ऐसी सूरतें पैदा धाटी  
 रही हैं जिन्हे इम्मान की दुनिया गभारा नहीं कर सकता वो मनुष्य की बुद्धि से  
 परे है ।

वास्तविकता बाहलो है कि धाटिस् दुनिया को जसी तरह चिन्तये जैसे वह उस  
 देखता है । मगर इससे उसकी मालन धनुधृतियों को धावात पहुँचता है तो पहुँचे धगर  
 धमन उसकी ज्जाघ-बुद्धि का शीट मगती है तो मग पर उस वास्तविकता से इमर-उमर  
 हलन की इमाजठ नई । मगर साहित्यकार सब कुछ समझने पर भी धाटिस्मिस् बन्दने  
 पर मजबूर है । जब तक उसकी मजर में समाज का कोई धधिक धुनर रूप नहीं है  
 वर्तमान समाज के वैपम्य जैसे उमे उज्जिन करेंगे ? हमने धगर चिन्ती नहीं देखी है तो  
 हम धपन इन्हे की धावनी और सहाय मे क्योकर मजार होंगे । धसन्तोप के लिए किनी  
 जैसे धाटिस्म का दिमाग में होगा य्करो है । ध भोचना नहीं कर सकता है वो टीक बात

तो हमें तो इसमें हानि के बचने का ही गंभीर ध्यान है। चीने या माठमें दरजे तक एक ही भाषा रहने से मुमसमान सड़कों को संस्कृत के धीरे हिन्दू सड़कों को फारसी के सैकड़ों शब्द धर्मिवाय रूप में भाषुम हो जायेंगे धीरे इयने उनके परस्पर व्यवहार में मुनिबा ही होगी। जिसे साहित्य पठने का शौक है वह चीना या मित्रिम पाप करके साहित्य की बो-दीन किताबें चार महीनों में पढ़कर इस कमी को पूरा कर सगा। जब हम धर्मिबा के हजारों शब्दों को अपनी भाषा में धामे से किनी तरह मरी रोक मण्डे (धीरे न रोचना चाहिए) तो मी-बो-मी धार्मी शब्दों के मिल जाने में हिन्दी का ह्यम न होपा।

इस सम्बन्धन के साथ एक कवि सम्बन्धन भी हुआ था जिसके मनापति श्री प्रो. एम. ए. ए. थे। श्री प्रोफेसर सायब स्वयं धण्डे कवि हैं धीरे जीवन में कविता का स्थान क्या है, यह पूछ जाण्डे हैं। धापने बहुत ठीक कहा कि कविता केवल मनोरंजन को वस्तु नहीं धीरे न गाना कर मुगल की चीज है। वह तो ह्यारे ह्यम में प्रख्यापों की बासनेबासी हमारे धबसाय-धस मय में धानन्दमय स्फूर्ति का मचार करनेबासी (स्नेह भासनाधो की नहीं) वस्तु है। कविता में धपर जाण्डि रंग करन की शक्ति नहीं है, तो वह बजान है। धाप हामा बाबे या तग्यो के तार या बुलबुल धीरे इच्छत उचने जीवन को उपपायबासी शक्ति होगी चाहिए। प्रेषिकाधा के नामने बैठकर धर्मू बहाने का यह उमाना नहीं है। उस व्यापार में ह्यने कई सधियां तो वी निरह का रोना रोते-रोते हम कहीं के न रहे। जब हम एमे कवि चाहिए जो ह्यरते इकबाल की तरह हमारे मरी हुई ह्यिजयो में जान डाले। हलिये इस कवि में मनिन को मुरा न नामने न बाकार स्वा धरियाय करायी है धीरे उसका मुरा पर इयना धपर होता है कि वह अपने धरितों को हुकम देता है—

उठो मेरी दुनिया क धरीबो को जपा दो  
 कम्ब<sup>१</sup> उमरा के बरो-रीवार हिमा बो।  
 मरमाधो मुसामों का लहू लोड बडी से  
 कूरिक<sup>२</sup> धरोमाया<sup>३</sup> को शाही<sup>४</sup> ध मड़ा बो।  
 मुसठानिये<sup>५</sup> जमहूर<sup>६</sup> का धावा है उमाना  
 जो मझो कीहन मुमकी मजर धामे मिटा रो।  
 जित लठ ध दहका जो मयस्तर नहीं रोजी  
 उस लोत के हूर सोराण<sup>७</sup> पनुम को जसा रो।  
 क्यो धामिका<sup>८</sup> मयपूक<sup>९</sup> में ह्यपन रह परदे  
 पीरान<sup>१०</sup> कमीमा को कमीमा<sup>११</sup> स उठा रो।

मार्च १९१६

१—महम २—चिड़ा ३—गुच्छ ४—साध ५—प्रजा ६—गुलना  
 ७—निमान ८—वेहू की बास ९—मयटा ११—मयटि १२—मठबारी १३—मिरजे।

॥ बिहान-धार्मीय-साहित्य सम्बन्धन पुरिया ॥

## इन्दौर हिन्दी साहित्य-सम्मेलन

श्री बनेन्द्रभुमार ने इन्दौर साहित्य-सम्मेलन की चर्चा करते हुए अपने पत्र में लिखा है—

'मेरे ज्ञान में सम्मेलन ठीक-ठीक रूप में अब की पहली बार अपने राष्ट्रभाषा सम्मेलन के रूप को अनुभव कर सका है। बस और प्रांतीय भाषाएँ हैं हिन्दी को अब बसा ही नहीं रहना है, हिन्दी अन्तिम राष्ट्र की होगी। इस तरह सम्मेलन को भी उसके अनुबन्ध होना होना।

यह काम चौकी की के सभापतित्व के तले न हो तो और कैसे हा? हिन्दी के सब हिन्दुस्तानी शब्द जोड़कर उनके रूप के सम्बन्ध में सम्मेलन में अपना मन्तव्य स्पष्ट किया है। निरि के लिए विद्वानों की समूह्य कमेटी बैठायी यही है। निरि के प्रश्न के सम्बन्ध में सम्मेलन अन्तिम निर्णय देने से बचा है। यह ठीक भी है। विद्वानों की समिति बस से इस प्रश्न के सब पहलुओं पर विचार करके कुछ स्वर करेगी। अब प्रांतीय भाषाओं के लिए सुगम और निवृत्त होने की दृष्टि से हिन्दी में जो सुधार व केरकार आवश्यक होने उक्त प्रश्न को भी सम्मेलन ने धाका नहीं है। एक और भी महत्वपूर्ण बात इस सम्मेलन में हुई है। निघ-निघ भाषाओं के माध्यम से जो साहित्य का अन्तर प्रांतीय और भारतवर्षीय होने योग्य साहित्य प्रस्तुत कर रहे हैं। उन सब में परस्पर परिचय विचार-विनिमय भी बढ़ती है। अथवा राष्ट्र के जीवन में और साहित्य में एक्य कसे पावे।

प्रायः की भाषाओं की विविधता और विशिष्टता सुरक्षित रहे, फिर भी वे सब क्या न मिलकर एक संयुक्त बलिष्ठ राष्ट्र-वारण के विकास में सहस्रक हा। यह काम प्रांतीय के माध्यम से तो नहीं हो सकता। होगा तो अपुरा हो सकता है। हिन्दी के माध्यम और केन्द्र के द्वारा सब भाषाएँ एक दूसरे के स्पष्ट और परिचय में पावें—इस प्रकार को भी सम्मेलन ने पहचाना और इस आशय का प्रस्ताव स्वीकृत किया।

बम्बई के श्री मुंशी के संयोजकत्व में एक समिति बनी है। श्री मुंशी से इस सम्बन्ध में मेरी कतिपय बातचीत हो गयी। यह इस बारे में उत्तर और उद्यमशील हैं और मुझे विश्वास है, निकट भविष्य में ही कुछ निश्चित फल सामने आयेगा। एक प्रस्ताव-द्वारा साहित्यिकों की अन्तराष्ट्रीय संस्था भी ३ एन में सम्मिलित होने का अनुरोप हिन्दी-साहित्यकारों से किया गया है। यह सब सम्मेलन के पक्ष में दृष्टिकोण के विस्तार के प्रमाण हैं और मैं उनका स्वागत करता हूँ।

रहा यह प्रश्न हिन्दी का वर्तमान साहित्य राष्ट्रभाषा होने के योग्य है या नहीं इस विषय में तो मैं यह कह सकता हूँ कि हिन्दी के राष्ट्रभाषा होने का आचार उसके एतद् कालीन साहित्य की व्यष्टता है ही नहीं। बसक रवीन्द्रनाथ ठाकुर हिन्दी में नहीं



है, मकिन हिन्दी को उस पर सम्प्रभावित्य में परत हो जाना चाहिए। हिन्दी में समय व्यर्थ यदि कम है, तो धीरे होंगे यदि नहीं हैं तो धब उठेंगे। हिन्दी के पक्ष में इसे जैसे कोई भोग हीनता ही समझें, मैं तो इसे सौमन्य समझता हूँ कि वह उतनी सम्पन्न की भाषा नहीं जितनी रूपक धीरे मजबूर की है। उतनी तहजीब की भाषा नहीं जितनी नित्य जीवन की है। यदि हिन्दी की मर्यादा है, तो यही हिन्दी का बल भी है। आज हिन्दी का सेलक इस बात को देखने से बच नहीं सकता कि उसको बाँधने की उद्देश्यता पाठक उसके धाम-वास का ही नहीं है, वह तो पूरे कोने-कोने तक फैला है। ऐसी हानत में द्वितीय-सेलक के लिए यह सुभीता नहीं खोया कि वह अपना भाषा प्रकृति नाम में यत्किन्तु प्रान्तीय प्रतिशय साम्प्रदायिक प्रकृति सही रख सक। राष्ट्र-भाषा की कड़ीयें धब जब रोड ब रोड गड़ कर साठ होती जाती है, तब हिन्दी के सेलक को बरकस उँचा होना पड़ेगा ही नहीं तो वह नहीं पूछा जायेगा। साहित्य में उन्नतिशील बारा को प्रोत्साहन देने और अल्प प्राण स्थूलता को व्यर्थ करने का प्रयोग साधन प्रकृत्या ही हिन्दी को मिल गया है। मैं दूसरी भाषा के बाधत पाठक से निवेदन करूँगा कि वह हिन्दी के वर्तमान साहित्य में सुविधा न पाकर एक दम बिगुल न हो तनिक धीरे धरे धीरे यदि तब जैसे प्रबुद्ध पाठकों की सख्या काटि हो जायें तो वे देखेंगे कि हिन्दी में उनकी रुचि के योग्य सामग्री प्रस्तुत करनवाले सेलकों क भी होत में देर नहीं सगरी। आज तो मैं स्वीकार करता हूँ कि हिन्दी में स्वामी कम है बसता शोध ही जगता है। मच्छ बोझा है, अतिरेक साधारण का ही है पर क्या अन्य भाषा भाषी मौका नहीं देने कि किसान धीरे मजबूर के बल पर जो भाषा परिपाचित है, वह नज़ासत सीख में ?

यह निश्चिन्त है कि इन्दीर सम्मेलन ने निधि भाषा और साहित्य को कौनी रूप देने के लिए तापेठ के मापक उद्योग किया है। अन्तर प्रांतीय साहित्य-उद्योग का आयोजन करके उसमें उस कमी को पूरा कर दिया है, जो बरसों से लोगों को घटक रही थी और यदि हमारा यह उद्योग सफल हुआ तो एक दिन हमारा साहित्य अपने मार्गों में राष्ट्र की सम्पत्ति होगा। इस कमेटी की धीरे से भी कर्तव्यतात्मक मुन्दी न प्रान्तीय साहित्य महारजियों से पत्र-व्यवहार शुरू कर दिया है और हमारे में ही एक परती चिट्ठी नेकी है। जिसमें सब के कायकर्म का रूप स्थिर करने की चेष्टा की गयी है। सम्मेलन क इस प्रस्ताव कर हवाला देने के बाद कहा गया है—

‘इसके पहले कि कमेटी विभिन्न-भिन्न प्रांतीय भाषाओं के प्रतिनिधियों का चुनाव करके काम शुरू करे, यह जरूरत है कि मूल विचार पर प्रांतीय भाषाओं में धन्दी तरह विचार किया जाय। इसलिए मेरा ध्यान से यह निवेदन है कि अल्प धननी प्रांतीय भाषा में किसी एम पत्र-पत्राज जिसे हम आयोजन से महानुभूति ही इसकी बरकत पर विचार करें। मुझे पुरो धारा है कि हमारी प्रांतीय भाषाओं के प्रायः सभी धन्धारी पत्र हम

धायोजना का स्थापन करेंगे। उक्तबीच यह है कि इस काम के लिए या तो मौजूदा मासिक पत्रों में किसी का उपयोग किया जाय या कोई नया पत्र निकाला जाय और उसमें हर एक भाषा के लिए एक-एक खंड नियत कर दिया जाय और प्रांतीय भाषाओं के साहित्यकार प्रतिमास उसके लिए नल मिलें जो हिन्दी में तरजुमा होकर उसमें हों। लेख यथासाध्य छोटे हों और उम विषय में सर्वप्रथम विद्वानों द्वारा लिखे जाय। उनके विषय यह हों—

( १ ) उस भाषा के मूल साहित्य के किसी एक खंड पर एक लेख जैसे उपन्यास का नाम इतिहास या मिश्रण।

( २ ) उस प्रांतीय भाषा की मासिक प्रवृत्ति पर एक लेख।

( ३ ) (क) किसी उपन्यास या काव्य का छोटा-सा कृतांश (ख) उस भाषा के पत्रों में छपी हुई एक या दो कविताएँ।

( ४ ) उस महीने में छपी हुई किसी सुन्दर रचना की धायोजना।

अगर आप इन लेखों को हिन्दी में अनुकूलित करने का प्रयत्न न कर सकें तो बन्दई में इसका कोई इतना नाम किया जायगा जहाँ यह सुचलित है कि प्रायः सभी भाषाओं के जानकर मौजूद हैं। इस तरह हमारे हाथ में अन्तर-प्रांतीय साहित्य का एक पत्र हो जायगा।

अतएव मैं आप से अनुरोध करता हूँ कि आप ऐसे साहित्यकारों का सहयोग प्राप्त करें जो आपकी भाषा में इस धायोजना को कार्यरूप में लाने के इच्छुक हों और मुझे सूचना दें कि (१) आप इस विचार को अमल में लाने और (२) हर महीने मेरे पास लेख भेजेंगे।

उत्तर यथासाध्य जल्द से जिसमें मैं महारमा भी को शीघ्र ही इसकी रिपोर्ट दे सकूँ।

इस पत्र में जो कार्यक्रम रखा गया है, अगर वह व्यवहार में लाया गया तो यह राष्ट्र की एक बड़ी सेवा होगी। भारत के प्रांतों में प्राचीन सांस्कृतिक एकता तो किसी न किसी रूप में मौजूद है लेकिन धारण है कि इस युग में जब कि एकीकरण के अनेक साधन मौजूद हैं, हम संस्कृति के एक मुख्य विभाग में एक दूसरे से परिचित भी नहीं हैं। इस और प्रगति का स्टेडियम और पीसीए का आगमन और स्टेन का साहित्य हमें अंग्रेजी-भाषा सुख है। हम उसकी रचनाएँ पढ़ते हैं, उन पर बहस करते हैं और उनसे अपनी साहित्य-भाषा की तुलना करते हैं। स्वभावतः हम अपने साहित्य में भी वही उत्कृष्ट बही धीरे धीरे प्रतिभा देखने की कामना करने लगते हैं, और तुलना में जब हम अपने प्रांतीय साहित्य को इलका पाते हैं तो उसकी ओर से हमारे मन में स्थान और अपनी हीमता का भाव पैदा हो जाता है मगर वास्तव में हम अपने राष्ट्र के साहित्य से परिचित भी नहीं हैं। प्राप्त तो राष्ट्र नहीं है, राष्ट्र तो प्रांतों का समूह है।

जब तक हम इस प्रांतीय भाषा में का तोड़ न मुकामे राष्ट्र माहित्य अपने सम्पूर्ण रूप में हमारे सामने कैसे आयेगा। अभी जो रंग अलग-अलग सात हरे, नीले पीले नजर पार रहे हैं जब ये सब मिल आयेगी तभी उनमें उज्ज्वल प्रकाश आयेगा। क्या जब मोतामों का समझना हुआ समूह अपने सामने बैलता है, तो उसकी जिह्वा पर जैसे सरसवती बँट जाती है। मोतामों की संख्या कम हुई, तो उसी अनुपात से उसका उत्साह पीछे हो जाता है। उनी तरह सेसक की प्रतिभा भी जब एक विशाल राष्ट्र की भाषणा से सिद्धाती है, तो उनमें कुछ भोग बाध पदा हो जाती है। उन कवि से पूछिए, जो किसी प्रांत इतिहास-कवि सम्मेलन के लिए एक कविता लिख रहा है। उसकी इच्छा यही होती कि अपनी प्रांतीय भाषा का सारा वैभव इस कविता पर गटा दे। धर्म मानन बुरावर कवियों को बँडे देवत की कल्पना ही माना उसकी प्रतिभा को कोड़ लगा-लगाकर बड़ाती रहनी। जिम्मेदारियों के अनुपात से ही हमारे शक्तियों का विकास होता है। जब हमारे साहित्यकारों के सामने वैभव अपना प्रांत नहीं बरन् सम्पूर्ण राष्ट्र होगा तब वह पूरा मनोयोग और पूरी तैयारी और उच्छ्रित साधन के साथ माहित्य की रचना करेगा। यह बात नहीं कि वह इन सब कुछ उठा रखता है, बल्कि खेब का विस्तार अनुभव रूप से समझी बुद्धि को बमका देगा। वह बिडान् भी जो प्रांतीय भाषाओं से काशी प्रोत्साहन न पाकर ना तो कुछ लिखने को चेष्टा ही नहीं करता या संघर्ष में लिखने है सम्भव है तब राष्ट्र भाषा में लिखना अपनी शक्ति का विनाश न समझे। हमें विश्वास है हिन्दी का माहित्य-संसार इस नया प्रवृत्ति का अभिव्यक्ति करेगा और हमारे माध्य सम्पूर्ण-समूह इन माध्यमों को अपनी आलोचना और परामर्श और समझना से जीवन प्रदान करेगा।

जून १९३५

## तुलसी-जयन्ती या तुलसी-पुरयतिथि ?

जन्म-दिन को जो उत्सव मनाया जाता है उसको 'जयन्ती' कहते हैं। उनी को 'बर्धमिठ' या 'सातमिठ' भी कहते हैं। आचार्य शुक्ला मत्स्यी तो गोस्वामी तुलसीदास को निपन-तिथि है इसलिए उस दिन 'जयन्ती' नहीं पुण्य-स्मृति-तिथि मनायी जानी चाहिए। 'तुलसी-जयन्ती' की अपेक्ष 'तुलसी-पुरयतिथि' का ही प्रयोग और प्रचार होना अच्छा है। जब गोस्वामी जी के जन्म मसत् का ही टीक-नीक लिखन नहीं हो सका है, तब उनके जन्म-दिन का टीक पता मपाना कैसे सम्भव हो सकता है ? बूँकि व स्वयं एक दोहे में अपनी निपन-तिथि घोषित कर गये हैं इसलिए उनमें शक करन की कोई गुंजाइश नहीं है। एसी दशा में 'तुलसी-तिथि' राष्ट्र ही मसमा उपयुक्त माध्यम होगा है। हिन्दी

साहित्य-सम्मेलन और काशी-गायत्री-प्रचारिणी सभा को चाहिए कि 'तुलसी-जयन्ती' शब्द का प्रयोग और प्रचार रोकने की कोशिश करें। हिन्दी-पत्र सम्पादकों को इस नियन्त्रण में अधिक सफलता मिल सकती है। हिन्दी प्रेमियों को यह भूल खुझाने का यही उपयुक्त व्यवहार है।

## तुलसी-स्मृति-तिथि कैसे मनायी जाय ?

इस महीन ( जुलाई आखण्ड ) में बगह-बगह तुलसी-तिथि मनायी जायगी। २१ जुलाई ( शनिवार ) को इस देश के अनेक पारों और घासों में विशेष रूप से तुलसीदास सम्बन्धी उत्सव मनाया जायगा। यों ही अन्य ही अरुण्य स्थानों में तुलसीदास जी का गुणवान हुमा करता है पर उस दिन उनके निमित्त कुछ महत्वपूर्ण कार्य होना चाहिए।

हिन्दी-पाठकों को स्मरण होगा कि महायज्ञा मानवीय जी ने काशी के तुलसी-दास का बीछोडार करने के लिए पत्रों में एक असीम अल्पवर्गी है। उस पर बहि सात-भर में इसी एक दिन ध्यान दिया जाय तो कुछ ही बरसों में—धीरे धीरे सुयोग मिल गया तो एक ही घास में—तुलसी-दास का बीछोडार हो जा सकता है।

तुलसीदास जी से सम्बन्ध रखनेवाले अनेक स्थान काशी में हैं और उनकी वसा शोचनीय है। भाषास मन्दिर के अज्ञात में एक कोठरी है जिस लोग गोस्वामी जी का निवास स्थान बतलाते हैं वह घास-भर में एक बार सिर्फ आखण्ड-शुक्ला सप्तमी को खुलती है। क्या उस असीम (!!!) कोठरी का इतना ही सम्मान पर्याप्त है ? जिस स्थान में गद्दीनों और बरसों रहकर गोस्वामी जी ने 'विनय पत्रिका' के समान अनेक विनय-ग्रन्थ लिखा उस स्थान की दुवशा हिन्दीवालों के लिए बोर सम्बन्ध है।

यही हास अस्वी बाटवाले तुलसी-मन्दिर का है। जिस भाषा के हिमायती करोकों हों उस भाषा के सम्बन्ध कवि के प्रति ऐसी उपासीनता। असाध्य तुलसीदास का जो हिन्दुस्तान में हिन्दी के कवि हुए।

हर साल लोग बगह-बगह तुलसी-जयन्ती के नाम से तुलसी-तिथि मनाते हैं। क्यूँ क्या है ? गाँववाले दो-चार सेर भी घास में अनेक बैठे हैं। इनके साथ-साथ अज्ञात-भोजन तो चाहिए ही ? वह भी थोड़ा-बहुत ही ही जाता है। इसके बाद थोपक-भात लेकर लोग तुलसी-द्वय रामायण गाते लगते हैं। बार-बार अष्टे लोग वसा फाड़कर बिस्काते हैं। बस ही गये तुलसीदास से सम्बन्ध ! रहनेवाले एक मोटिल अल्पवर्गी बँटवा बैठे हैं। लोग निश्चित स्थान पर जुटते हैं। भाषण होते हैं लेख पढ़े जाते हैं कविगणें मनायी जाती हैं, सब में बही कहा जाता है कि गोस्वामी जी की कविता ऐसी है, बेसी है, उनके उपचारों का हम बरसा नहीं दे सकते—इत्यादि। बस एक ही तरह की

बार्ते हर साल। मया कोई कहेया कहाँ से? कोई रिमच तो करता नही धीर जो करता है वह -उ उरसक में धाता नहीं। इस तरह एक रस्म-सी पृठी कर था जानी है। वह तो एक तरह से बना टालना है, इससे कुछ ठोस काम नहीं हो सकता।

इस समय धारणयकता इस बात को है कि जहाँ-जहाँ तुमसी-तिथि मनायी जाय वहाँ तुमसी-तिथि के लिए बोज़-बना भी भिन्न सके धर-सघह किया जाय धीर वह दस्य महामना मामनीय भी को इस निवेदन के साथ प्रेस दिया जाय कि वे इते तुमसीदान से सम्बन्ध रखनेवाले स्मार्तो के बीछोडार य मयावे। इस तरह धगर कुछ साल नी तर वगह काम हो तो तुमसी-तिथि य धयेष्ट धन एचन हो सकता है। उससे राजापुर कासी धीर धयोप्या में तुमसीदास भी के जितने स्मृति-बिन्दु है मयकी रखा धीर पूजा-प्रतिष्ठा का प्रबन्ध किया जा सकता है।

तुमसीदास भी ने हिन्दुबाति धीर हिन्दुधय का जो उपकार किया है उसक बडन करने का यहाँ स्वान नहीं है। उन्होने हिन्दु-धम्मता धीर हिन्दु-मस्कृति की बडी रखा की है। हिन्दु-धमात्र धीर हिन्दु-साहित्य उनके उपकार-धार स कमी मुक्त नही हो सकता। इसलिये हिन्दु-बाति का प्रतिनिधित्व करनेवाली हिन्दुमहासभा का नी कठम्य ह कि वह इस विरा में अपनी कुछ शक्ति लगाने। गोस्वामी भी नी रचनाएँ सनात्मबर्न को डाल है पर सगठनधम समायो को देख-हित के माग म रोहे धटकाने स पुनत ही नहीं है मिसठी कि वे धपने धतम्य मररकक की धोर कुछ नी ध्यान दे। धैष्यक-महात्म्यमेसन नी केवल बामिद धम्यों में ही रंसा रहता है—वह सम्पन्न होकर नी तुमसीदान जैसे धतम्य धियोप धाता नहीं है। धतएव हिन्दी-साहित्य से प्रेय रखनेवाले लोग ही इन काम को धपने ह्यय म सें धीर हिन्दी के इस लाकप्रिय महाकर्मि के समुचित सम्मान का धायोजन करें। किन्तु इस धालोजन का धीययेरा इसी २६ जुलाई को हो जाना चाहिये।

कासी में धय्यन एक तुमसीदास भी का मन्दिर भी है, जिसके विषय म कहा जाता है कि वह कसौ-नरेरा को सहायता से बना है। उसमें गोस्वामी जी को एक शुभ षस्तरमूर्ति स्थापित है, जो उनके धसती चित्र के धाधार पर रैधार की गयी है। मुन्ते है, सवी धननी चित्र को कसौ-नागरी-शुचारिणी मया ने प्रकाशित किया है। मकिन हमने धान तक उन मन्दिर की तीर्थ का रूप नहीं दिया। राजापुर की वीधयाना के लिए हम कमी उल्लाहित नहीं हुए। धसो-बाट के तुमसी-मन्दिर म जो खडाई गोस्वामी जी नी रसती है उसकी धोर हमारा ध्ययन कमी नहीं गया। उसी तुमसी-मन्दिर के धान एक तुमसी-पुस्तकालय है, जिसमें तुमसीदास-सम्बन्धी गमस्त माहित्य का मयह करने की हमारी प्रवृत्ति कमी नहीं हुई। फिर हम तुमसी-तिथि क्यों मनाते हैं? लोकधियर को धय्यमयुधि को धंधेजों में स्वयं बना वाला है धीर हमारी मागा के शोफधियर नी जो बता है, वह धातके सामने है।

॥ तुमसी-स्मृति-तिथि कैसे मनायी जाय ? ॥

तुलसीदास के ग्रन्थों से कितने ही लोग झलपटी हो गये बहूतों ने करोड़ों रुपये कमा कर घर में बाम लिये धीरे न जाने कब तक यह काम जारी रहेगा। किन्तु ऐसे लोग में कोई ऐसा माई का नाम धामतक धाने-धाता नहीं बिसाया गया जो तुलसीदास के नाम पर एक परसेंट रॉयल्टी की रकम भी लुत्ती से निकालकर देता। सब तो यह है कि हमसे धमी धपनी माया के रत्नों की परख करने की योग्यता ही नहीं है हम सिर्फ लकीर पीटने में ही बहानुतु हैं। किन्तु सिर्फ पुरानी लकीर पीटकर तुलसीदास जैसे महात्मि को अज्ञात करने से कोई लाभ नहीं।

जुलाई १९३३

## साहित्यिक गुडापन

इस होठ-युग में धर्म व्यवसाय की भाँति पत्र पत्रिकाओं को भी अपने स्वामिना या संचालकों को मजदूरी देने या अपनी अस्तित्व बनाये रखने के लिए उख-उख की चालें चलनी पड़ती है। योरोपवाने तो शब्द-बाम या पत्रिकाओं या साठरियों का सटका निकालते हैं और अपने आहकों को अपनी तकरीर आहमाने का मौका देकर अपनी मरुतम निकालते हैं। हिन्दी में वन के धयाध से और डप की चालें चली जाती हैं। पत्र में किसी उख का बिचार देड़ दिया जाता है, या कला के नाम पर धम नम बिच लिये जाते हैं। धवालठी मोटिछों के लिए आहमकारों की लुत्तापयों की जाती है, उनके धामने तक रगड़ी जाती है, मडाओड़ की लमकी देकर रकने सीधी की जाती है और इसे सत्योव्वाटन का महान् नाम दिया जाता है। या कोई लीकानेवानी बीच धापी जाती है, जिसे पड़कर भागो में उस पत्र की क्वाइमल्वाह चर्चा हो। जहाँ से धाखिरम के प्रेमी बमा हों वही उमी समझनी मरे हुए लेख पर बाठें होने लवें। इनका सिद्धांत है—बदनाम धगर होंगे तो क्या नाम न होगा उन्हें तो पत्रिका के आहक बदनाम चाहिए क्योंकि उनका स्वामी नका आहूता है और नख न हुषा तो बेचारे सम्पादक की बाम की धुरात नहीं बर-बडा सम्मान कर अपने घर की राइ लेनी पड़ेनी। रोटी का सवाल तो बड़ा टंका है। गरीब सम्पादक अपनी धामा की हस्या करके समझनी पडा करने के लिए या तो मास्तिकता के ममधक लेखों को माला निकालन लगता है, या किसी भले धारमी की पगड़ी उखानता है। जान पड़ता है, प्रयाग की मास्तिक पत्रिका 'सरस्वती' धात्र-कल इन्हीं गंभी चालों से धपना कोप भरने के लिए मडबूर है। उसके लुभाई के धक में धं बनारसीदास लुत्तुर्वेदी पर जो आओपपूर्व लेख संस्मरण के रूप में निकला है, उनके लिए इसरा कोई उत्र नहीं हो सकता। धारमी कोई महित काम उमी बल्ल करता है अब उगका जीवन संकट में पड़ जाता है और इन धृष्टि से

यह क्या का पात्र है लेकिन यदि वह केवल अपनी बुद्धि मनोबल को मजबूत करने के लिए किसी को लांछित करता है, तो वह क्या का नहीं बिककार का पात्र है। हम यहाँ समझते हैं इस संस्मरण के लेखक सरस्वती-सम्पादक अक्षर श्रीनामसिंह जी क्या के पात्र हैं, या बिककार के।

अगस्त १९३३

## इंटरव्यू क्या है ?

भारत ने योरोप से वहाँ धीरे-धीरे बहुत-सी आन्धी-बुरी बातें सीसी हैं वहाँ पत्र प्रकाशन भी है धीरे-धीरे पत्र-प्रकाशन में वहाँ भी बड़ी नीति मजबूत है जो योरोप में है। वहाँ प्रथा है कि पत्रों के सम्पादक या प्रतिनिधि विशिष्ट व्यक्तियों से घंट करके किसी सामाजिक धार्मिक राजनैतिक या अन्य महत्वपूर्ण समस्या पर उनकी मम्मलि जनता के सामने रखते हैं। इंटरव्यू का ज़रूरत महत्वपूर्ण विषयों पर अनुभवों महान्मात्रों को राय सुनि-बोध या निखय प्रकाशित करके जनता में जागृति फैलाना या किसी विरोध पक्ष का समर्थन करना होता है। इसके लिए पहले ही में घाबरा ने भी जाती है। वहुधा इंटरव्यू करनेवाले पहले ही से कुछ प्रश्न बना लेते हैं। उन प्रश्नों का जबाब न बदरशा नोट करते जाते हैं। इंटरव्यू समाप्त हो जाने पर पूरा कथन सुना दिया जाता है धीरे-धीरे इंटरव्यू देनेवाले का उस पर हस्ताक्षर ले लिया जाता है। जब इंटरव्यू करने वाले को समझन या संस्मरण की धारणा का अधिकार होता है। वह हमकी पूरी एहसास करता है कि कथन में एक शब्द या वाक्य भी ऐसा न धाले पावे जिससे उस विशिष्ट पुरप के विषय में किसी प्रकार का भ्रम उत्पन्न हो सके। अगर ऐसा कोई वाक्य प्रकाशनी के कारण रह भी जाता है, तो इंटरव्यू देनेवाला उसी वक्त उसका संशोधन कर देता है।

## अगर यहाँ क्या हुआ ?

यहाँ सरस्वती-सम्पादक ने एक नये ढंग का इंटरव्यू किया। धारा कथनगत गये अनुबन्धी से मिले उनसे अपनी मम्मलि धीरे-धीरे धनिल्लता शिक्षायी धीरे-धीरे धार्मिकता की श्रॉक में जिसे सामय इन मम्मलि-प्रशासन ने धीरे-धीरे मरहोरा कर दिया हो अनुबन्धी की व जो कुछ बातें हुईं उन्हें भर धाकर स्मृति से लिया जो कुछ न था धारा वह अपनी सरफ से मिला दिया शायों का हेर-फेर तो कोई बात ही न थी न कोई कथन पकड़नेवाला था। अनुबन्धी जी के मुँह ने जो कुछ कहना था धारा अपनी कथन में निकला। इतनी बातें धारा ने रहीं केवल उनका मात्र धारा रह नजता या धीरे-धीरे

॥ अगर यहाँ क्या हुआ ? ॥

को धपने शर्तों में सिद्धकर बहुत बड़ा धर्म किया जा सकता है। एक धारमी कहेगा  
 है—'राम की कबिताएँ साधारण होती हैं। इस भाष को इस तरह सिद्धकर—'राम  
 के बाप ने भी कभी कबिता की थी वह कबिता करनी क्या जाने' उसका जप किताब  
 विद्वत् किता जा सकता है। ऐसा मानना होता है कि श्रीमद्भागवत भी वह मंजूषा बाँध  
 दर ही नये ने कि इन्टरभू के बहाने इनके मुँह में ऐसी-ऐसी बातें रख हैं कि सभी पत्र  
 सम्पादकों और लेखकों से अनुबेरी भी की सजाई हो जाय और वे सब श्रीमद्भागवत की जो  
 धपना उधारक और हिमायती समझ कर उनकी पीठ ठोकने लयें। मगर हिन्दी के  
 सम्पादक इतनी धारामी से बचने में धानेवाले नहीं हैं। बात के इन स बात करनेवाले  
 क जगिन का पर्याप्त गुण पाता है। मगर कोई धारमी धारण हम से कहे कि पं देवीवत्  
 भी शुक्त बहने से कि धर्म की प्रेमबन्ध प्रयाग धारणों तो उनकी वह शुक्त की धारमी  
 कि कन्दली सिद्धने का नाम न लये तो मैं विचार करूँगा कि कन्दलेवाला किष्ठ हय का  
 धारमी है पुरत शुक्लजी से बहने के लिए तैयार न हो जाऊँगा। जिस प्राणी का मन  
 कुत्ता में बसता है उसका विरवास ही कीम करता है? कुत्ते की निष्ठा करनेवाला  
 पपड़ी उद्योगवाला सजाई मगानेवाला धारमी धारण समझे कि लोग उसका धारण  
 करने तो उसकी भूल है। ऐसे धारमी को पूछा के सिवा और किसी बात की धारणा  
 न रखनी चाहिए। मगल अनुबेरी भी ने कहा कि धर्मक व्यक्ति को लिफने की समीक  
 नहीं या उन्होंने धर्मक व्यक्ति को साहित्य-मन में धारण न बसाया होगा तो वह धर्म तक  
 गुणनाम पडा होता या यह कि नि ऐंझुमक और महात्मा गीभी उनसे पिन मान रखते  
 हैं तो क्या यह बातें सिद्धन की है। धारमी भाठसिवा में साधारणतः कुछ लटक नहीं  
 रखा शर्तों को तोल कर मुँह से नहीं निकालता बल्कि ऐसी ही बातें करता है जिन्हें  
 वह समझता है कि धारणने बीटे हुए व्यक्ति को धारणी लयेंगी। वह मितनवाने की उक्ति  
 और सुझाव देकर उसी इन की बातें करता है। मगर मुझ से कोई सोहवा मितने  
 धारण तो मैं उससे कल्पन की बातें न करूँगा। धपने वर जो धारमी धारण है, उसका  
 धुध न दुध सत्कार करणा नाबिन हो जाता है। श्रीमद्भागवत की जो कथा धारण दि०  
 ऐंझुमक अनुबेरी जी से मितने नये होते तो वह प्रवासी भारतीयों का प्रथम ज्योते।  
 श्रीमद्भागवत की वह धारण गपाने किठकर लुप धपने ही छोदे हुए धरै म धीने मुँह पिर  
 पड़े हैं क्योंकि अनुबेरी जी ने ऐसी ही बातों का पान समझा। धारण श्रीमद्भागवत की वर  
 और जोर मगल तो अनुबेरी जी धपने धारण का गुण मान भी जोल देते। ऐसा कीम  
 है जिधने कभी ठाक मीक न की हो कभी मगलमेषन के स्टेज पर जो धारण धारणन न  
 क्रिये हों। फिर अनुबेरी जी तो युवा के क्रुद्धन से धारणी बुझते से बहुत दूर है और युवा के  
 डहर से रंभुण भी है। श्रीमद्भागवत की धारण बोधी-सी और जालवादी से कपम सेते तो  
 अनुबेरी जी के रसिक कीमन का मंडाफोड भी कर सकते ने पर नवा यह साटी बहुरपी  
 एक प्रतिष्ठित पत्रिका के प्रतिष्ठित सम्पादक के योग्य है, और क्या धारणकी के पाठक



इसीलिए सरस्वती खींचते हैं कि उन्हें हम उन्हें क सेक पढ़ाने जायें ? किन्तु की प्राइवेट  
 बाइपोल को जो उसने हमें अपना मित्र समझकर हमारे ऊपर विश्वास करने की भा  
 पन्निक में माने था हम कोई अधिकार नहीं हैं । अगर हम ऐसा करते हैं तो विश्वास  
 बाध करते हैं । धार्मिक हम इतराग्य से किस समस्या किस प्रश्न किस बात पर प्रकाश  
 पड़ा ? क्या स ध्याना पढ़नेवाला यही समझेगा कि बभागमीशान बडा नीच धारमी है  
 बिलकुल बना हुआ बडा धमी बडा शंखीबाज । अगर किमी धारमी के प्रति बनता म  
 यही भाव फैलने में हम सफल हुए तो यह क्या कोई बड डूब दरब का काम है  
 किसी की इच्छा विवाह बना क्या कोई बडा धार्मिक उदरय है ? धारम म ईमानदारी पडा  
 करा देना क्या बड़ी उराहता वा काम है धीनाबामिह जी मुख्य मित्र बने है धीर बिलने  
 ही मनुष्यों के बारे में ऐसा बात का बुक है कि यदि मैं मित्र ता वह प्रयाग म बहुत  
 हमक हो जायेंगे लेकिन ऐसी बात करना जिसको बड़ी नीचता है उमका बिक्र करना  
 उदर जी बड़ी नीचता है । हम उन्हें के प्रोपगंड सं धीनाबामिह जी न नाशिय का  
 उपकार कर रहे हैं, न 'सरस्वती वा न अपना बरम् मभाग क नामने जिमी के मगाइको  
 की भइ कर रहे हैं उन्हें कमोकिन कर रहे हैं । धारकी यह दुगि वरकर इनक मित्र  
 धीर क्या होगा कि दुनिया बहूयी—जब 'सरस्वती जीमी प्रमिडिन पबिका का मम्पारक  
 ऐसा मफोपायन कर सकता है, तो कि साय" यह धावा ही बिगडा हुआ है ।

अगस्त १६३३

## भारतीय साहित्य और पं० जवाहरलाल नेहरू

जिन दिनों 'हम' के पढे म भारतीय साहित्य के मगइन धीर हम "हरय की  
 पूर्ति क लिए भारतीय साहित्य-मभ स्थापित करन की उन्नत पर विचार दिया जा रहा  
 था उसी दिनों परिष्ठ जवाहरलाल जी धम्मोडा जेन म बैठे हुए स्वार्थ रूप स इसी  
 विषय पर धीर इसी विता में बिलन कर रहे थ । उन्हें ह्यारे धम्मोदन की बिलकुल  
 खबर न थी फिर भी धारके उन सक से जो हान में सहयोयी 'प्रचार में प्रकाशित  
 हुआ है उनके धीर ह्यारे धानोबनों में धरमम मासुरय है । इनके यह मित्र होता है कि  
 राष्ट्र की विचार-बाग सांस्कृतिक एकता की धार बिलन बेग धीर बिलनी एकमता के  
 साथ बीड रही है । नेहरू जी राष्ट्र के प्राण है धीर उनका ह्यय राष्ट्र का ह्यय है  
 बिना राष्ट्र की मम्पुय धानोबायै धीर भावनायै प्रतिबिम्बित होती है । साहित्यिक धीर  
 सांस्कृतिक एकता राष्ट्र के बिकास का मगन धंय है धीर यह बिलन का गुन लच्छ है  
 कि वह भावना राष्ट्र के मग में प्रबल हो उठी है ।

नेहरू जी ने लेख के प्रारंभ में हिन्दी के मधीन साहित्य की दृष्टिता के बिषय में  
 बयाण ही कहा है कि ऐतिहासिक धीर भौषोलिक कारणों से पहले बंधान धीर इनके

चाय महाराष्ट्र और गुजरात में पश्चिम से आयी हुई जाति को ग्रहण किया और कुछ आगे निकल गये। द्वितीय-प्राप्तों में राजनैतिक जाति के रें में हुई और भाषा-भेद के कारण हम दूसरे प्राप्तों की जाति से बन्ध छायवा नहीं उठा सके लेकिन अगर हम उलटी नहीं कर रहे हैं, तो भारत की जो भाषाएँ उन्नत समझी जाती हैं वह भी उत्तर की उत्तम भाषाओं की तुलना में नगदय हैं। इसका मुख्य कारण यही है कि देश की सारी प्रतिभा अंग्रेजी का अध्ययन करने में लगी होती रही और जिनके कर्णों पर उन्नत को आगे बढ़ाने का भार था वे अपनी भाषाओं को ही समझकर उत्तम की ओर से उदासीन हो गये और आज भी अंग्रेजी के प्रति हमारा मोह अत्यन्त ही कम नहीं है, तो दूसरा कारण यह भी था कि प्राचीन भाषाओं में आदान-प्रदान का काम बंद-सा हो गया और उन्नत का साहित्य मात्रा अल्प-अल्प कोठरियों में बंद होकर मुक्त वायु और प्रकाश में जाने के कारण दुर्बल और निर्जीव और निस्तेज होता चला गया। अतएव—

‘हम इस अनुभव से लाभ उठाना चाहिए और देश की सब भाषाओं में किसी तरह का संबंध बना करना चाहिए। उनके साहित्यकारों की एक संस्था बने जिसकी बैठक कभी-कभी हुआ करे। इससे बचाव मुकामों और द्वेष के घास का मेस बनना और हमारा साहित्य एक दूसरे की तरफकी में गहर कर सकेगा। विचार-आदान-प्रदान में तेजी से फैलेगी और हमारी एकता बनेगी। मैंने सुना है कि इसके धारण करने का कुछ प्रयत्न हो रहा है लेकिन उसके बारे में मुझे कुछ ब्यापार मानुम नहीं है। मैं आशा करता हूँ ऐसा भारतीय साहित्य-संघ भारत की सब भाषाओं की बाबत करेगा। द्वितीय और उर्ध्व तो बहनें नहीं हैं, एक ही तरीख पर दो चेहरे हैं। उनका तो हमें करीब से करीब संबंध करना है। बंगला मराठी और गुजराती द्वितीय की छोटी बहनें हैं बल्कि की भाषाएँ हमारे देश में सबसे पुरानी हैं। इनके अभाव और भी भारत की छोटी और बड़ी भाषाओं को उस संस्था में लेना चाहिए। मैं तो यह भी सिफारिश करूँगा कि अंग्रेजी की भी उस में जगह हो। हमारी भाषा वह नहीं है लेकिन फिर भी देश के जीवन में उसका बड़ा हिस्सा है। वह एक तरह की सौतेली भाषा हो गयी है।

हमारा अभाव है कि अंग्रेजी भाषा वर्तमान परिस्थिति में इतनी लाजिमी हो गयी है कि उसे किसी सब या संस्था की मरब की जरूरत नहीं रही। वह सौतेली भाषा नहीं बल्कि प्यारी भाषा है, और भारत की अन्य सभी भाषाएँ उसकी बराबरी की मिथारिखी बनी हुई हैं। हमारे सिद्धित बम की यह हासत हो गयी है कि उनमें से अधिकांश अपनी मातृ-भाषा में एक साक्षर भी शूद्र नहीं मिल सकते। कुल तो यह है कि जो हमारा नेता बनना चाहते हैं उनमें से अधिकांश अपनी मातृ-भाषा से अनभिज्ञ हैं और जिन समाज के नेता जनता से इतनी दूर हट गये हों कि उनमें भाषा का संबंध भी न हो उस समाज की बसा जो हो रही है, वह हम अपनी आँखों देख रहे हैं। और तो और, हम अपनी इस अयोग्यता और अनभिज्ञता पर लज्जित भी नहीं होते कि जाने के लिए कुछ धारा बंधे।

हम स्पष्टबिटा के अभिमान में बैठके कहते हैं—हमें तो अंग्रेजी सिखने और बोलने में क्या मुश्किल होती है ।

आगे चलकर मेहरू जी ने हिन्दी के राष्ट्रभाषा होने और मराठी बंगला पुजारी युष्मकी भाषि के हिन्दी-लिपि में लिखे जाने के विषय में बड़ी विचार प्रकृत किये हैं जिन पर हिन्दी-प्रचार आयोग का पत्र रखा है । उसके बाद आप कहते हैं—

‘दूसरा सवाल यह है कि हमारे साहित्यकारों को दुनिया के साहित्यकारों में सम्मान देना चाहिए और अंतर्राष्ट्रीय साहित्य-सभों में शरीक होना चाहिए । इसके बिना हम दुनिया के अग्रगण्य देशों में नहीं हो सकते । हमको यह मानना होगा कि इस नवयुग में नये विचार योरोप और अमेरिका में धारण हो रहे हैं । उनके बिना हम अज्ञान की दुनिया का सामना नहीं कर सकते । पछुती बात जो यह नवयुग सिखाता है वह यह है कि संसार एक है, उसके अलग-अलग टुकड़े हम नहीं कर सकते और जो अलग होना चाहते हैं वे पीछे पड़ जाते हैं ।

यह कथन अत्यन्त सत्य है । अन्तिम अंतर्राष्ट्रीय सभों में शामिल होने के लिए भी हमें एक राष्ट्रभाषा की जरूरत पनी होगी । हम प्रांतीय भाषाओं के दम पर अंतर्राष्ट्रीय स्तर में नहीं आ सकते । यह स्वप्न देखना कि भारत की सभी प्रांतीय भाषाएँ संसार की अनुभूत भाषाओं के बराबर हो सकती हैं भूल है । एक राष्ट्र एक ही भाषा को लेकर अंतर्राष्ट्रीय सभों के सामने खड़ा हो सकता है । ही प्रांतीय साहित्य के कुछ अग्रणी अनुवाद संसार के सामने रखे जा सकते हैं पर यह तो बीसा ही होना जैसे कोई भाषी अंग्रेजी के अर्थ पहनकर किसी समाज में बैठने का साहस करे । उस अनुवाद से वा सम्मान मिलेगा वह व्यक्ति का सम्मान होगा । और पुस्तक की मूल भाषा का संसार की दृष्टि में कोई गौरव न होगा । आज बसो और स्वीडिश और डैच भाषाओं का जो अंतर्राष्ट्रीय सम्मान है, वह इसलिए नहीं कि उनका अंग्रेजी अनुवाद छप गये बल्कि इसलिए कि वे अपनी मूल भाषा में पढ़ी गयीं और पसंद की गयीं । अब उनकी क्वालिटी हुई तो अंग्रेजी और जर्मन और डैच अनुवाद होने लग । अगर हम संसार-साहित्य में बड़े स्थान प्राप्त करना चाहते हैं, तो हम अपनी राष्ट्रभाषा बनायी होगी और उसी के आधार पर संसार-साहित्य-सभों में भाग लेना पड़ेगा । यह बात तो भी जान सकती है कि किसी समय संसार में पेंसीस करोड़ भारतीयों की एक भाषा का संसार में प्रचार हो जाय । लेकिन यह असंभव है कि भारत की मुख्य भाषा भाषाएँ भी किसी समय संसार की प्रौढ भाषाओं से अलग-थलग का स्थान प्राप्त कर लें ।

लेख के अन्तिम भाग में मेहरू जी ने हमें संसार को अन्वय उन्नत भाषाएँ सोचने का आदेश देते हुए कहा है—

हम में न काठे लोगों को बिदारी भाषाओं में गीतों चाहिए । बहो हमारे लिए दुनिया को देखने की सिद्धिका जागो जिनके अन्वये रूप और ठानी हवा भाषी ।

संप्रेषणी तो हम में से बहुत लोग जानते हैं। इससे हम फायदा उठावेंगे क्योंकि इस भाषा कम फैलाव बढ़ता जाता है। लेकिन संघर्षी काशी नहीं है, और सिर्फ संघर्षी भाषाओं की बजाह से हम अक्सर थोसा जा चुके हैं। हम सारी दुनिया को संघर्षी ऐंग्लो से देखने लगे हैं और यह नहीं महसूस करते कि वह एकतरफ़ी है। अथवा इफ़ूमत अ राजनैतिक मुद्दाबारा करते हुए भी हम विचारों में बहुत कुछ उनके गुनाम हो गये—अगर हम केंच या अमन या वही नितावें या अलवार पर्वें तो मानुम होता है कि दुनिया में कोई और भीतर भी है और अथवाओं का उसमें इतना बड़ा हिस्सा नहीं है, जितना हम समझते थे।

अगर भाषा स्वीकार करते हैं कि हमारे लिए वही ताबाद अ योरोप की अन्य भाषाएँ सीखना मुश्किल है, इसलिए भाषा कहते हैं—

‘यह उचित होता कि विदेशी भाषाओं में जो प्रसिद्ध पुस्तकें हैं उनका अनुबाद हिन्दी में हो। यह मुझे बहुत आश्चर्यक मानुम होता है अगर हम दुनिया की विचार-बाराओं को समझना चाहते हैं।’

अभी हम संघर्षी से बिल पुस्तकों का अनुबाद करते हैं। उनका प्रचार बहुत कम होता है, क्योंकि ऐसी पुस्तकों को समझनेवाले अधिकतर संघर्षी पढे लगे ही हैं, और वह हिन्दी अनुबाद न पढ़कर मूल संघर्षी पुस्तक पढ़ना ज्यादा पसन्द करते हैं। पर योरोप की दूसरी भाषाओं के अनुबादों के विषय में यह बात न रखेयी क्योंकि उन्हें मूल में पढ़ना बिले-बिलाने धान्तियों के लिए ही शुभ होगा।

हम धाता करते हैं कि हमारे पाठक इस प्रश्न पर विचार करे और वह समझन में बिलको प्रम है कि हिन्दी के राष्ट्रभाषा होने से प्रांतीय भाषाओं को हानि पहुँचेगी। प्रांतीय भाषाओं और हिन्दी के सम्बन्ध का वास्तविक रूप समझें। यह काम भारतीय साहित्य-संघ का होगा कि वह निश्चय करे कि प्रांतीय भाषाओं की कौन कौन सी पुस्तकें हिन्दी में लायी जायें और उन्हें किस तरह संसार-साहित्य के सामन रखा जाय। हिन्दी को कोई अलग भाषा समझ कर उससे उदासीन हो जाना प्रांतीय भाषा और साहित्य के लिए साम-प्रद तो न होगा ही राष्ट्र-साहित्य के लिए हानिकर अलवता हो कामना।

नवम्बर १९३५

## राष्ट्रभाषा कैसे समृद्ध हो

हमें यह देखकर हप होता है कि राष्ट्र-भाषा से हमारे नेताओं की दिलचस्पी बढ़ी या रही है। मद्रास में हिन्दी प्रचार सप्ताह के संबंध में अलग मीलबी अमल अहमद भी सी बार्ड नितामशि और अन्य महानुमाना ने जो भाषण किये उनमें राष्ट्रभाषा की उन्नति और प्रचार से पैदा होनेवाली सांस्कृतिक एकता का महत्व सभी ने स्वीकार किया। अगर राष्ट्रपति भी राजेन्द्रप्रसाद ने इस प्रश्न को दूसरी ही दृष्टि से देखा।

मानने बहिष्कार की एक सभा में भाषण देते हुए कहा कि राजभाषा प्रचार से ही समृद्ध होती। अब वह मित्र-मित्र प्रार्थों में व्यवहार में आने लगेगी तब उसमें नये-नये शब्द और मुहावरे बहिष्कार होंगे और उसका संसार दिन-दिन बढ़ता जाएगा। हम उस भाषण का एक अंश यहाँ मद्रक करते हैं—

*My point of view is that Hindi authors and readers should be requested to give up their horror of un-Hindi idioms and uses. The desire must be to absorb as many varieties of expression as are available to them. Some of the articles appearing in this magazine, by their very nature, are untranslatable in Hindi except by a use of the local idioms. In such articles such idioms have been retained with a view to make the language more effective. Hindi readers must develop catholicity of taste and an anxiety to secure enrichment of expression by an absorption of expressive idioms of other provinces.*

[ मेरे विचार में हिन्दी लेखकों और पाठकों में यह निवेदन करना चाहिए कि वे हिन्दी मुहावरों और उनके व्यवहारों पर घाटी पीटना छोड़ दें। उनकी इच्छा यह होनी चाहिए कि अविश्वसिक के विपरीत विभिन्न रूप मिल सकें उन्हें ग्रहण करें। इस मसाले के कई लेख कुछ इस ढंग के हैं कि उनका हिन्दी में अनुवाद होना कठिन है। इनके बिना कि स्पानीश मुहावरों का व्यवहार किया जाय। ऐसे लेखों में वह मुहावरे जो के लिये रखे गये हैं जिसमें भाषा बसाया सजीव हो जाय। हिन्दी पाठकों का अपनी दृष्टि में उदात्ता जानी चाहिए, और उन्हें यह धारणा होनी चाहिए कि अन्य प्रांतों के अग्रपूर्ण मुहावरों से अपनी भाषा को समृद्ध बनायें। ]

सजीव भाषाएँ हमेशा दूसरी भाषाओं से अपना कोष बढ़ाती रहती हैं। हमारे देश-देश-देशों हिन्दी में हमारा अंग्रेजी शब्द और मुहावरे का निम्ने और मिलने का रहे है। अब अंग्रेजी भाषा सार्वभौमिक होने के कारण विश्वव्यापी से बढ़ रही है। मसाले की ऐसी कोई भाषा नहीं जिससे अंग्रेजी में अपना संसार न गया हो। आज कोई अंग्रेज लेखक अथवा जीवन के दृश्य रिकार्डिंग जाहे तो उसे उपयुक्त शब्दों की कमी न होगी। प्रयोगों और प्राचीन अर्थ और अर्थों की सभा से अंग्रेजी का सम्पर्क है और उन देशों का अत्यन्त निम्ने सभ्य अंग्रेज लेखकों को बहूँ के अर्थों और मुहावरों से काम लेना पड़ता है। इस प्रचार द्वारा अंग्रेजी भाषा दिन-दिन समृद्ध होती जाती है। हिन्दी का अर्थ-मार्त की अन्य भाषाओं से बढ़ा है लेकिन अब वह राष्ट्रभाषा बन रही है तो उसे सभी प्रांतीय भाषाओं में सम्बन्ध लेनी पड़ेगी। ही हमका ध्यान रखना पड़ेगा कि अपनी कोष बढ़ाने को मुग में वह अपना रूप ही न लो बैठे। हैरतकार में जिस हिन्दुस्तानी भाषा का व्यवहार होता है वह हिन्दुस्तानी का बियाड़ा हुआ रूप है, और हम उसे हिन्दुस्तानी न कह कर अंग्रेजी कहने के लिए मजबूर हैं। अथवा हिन्दी की भी बही गति

हुई, ता बड़ रचिबनी हिन्दी हो जायगी । हिन्दी के मौखिक रूप हो जायम रहते हुए हम उसे कितना समझ बना सकें उतना ही अच्छा । जिस हिन्दी का बम्बई और पूना और मैसूर और मद्रास जाका या जकीसा म ग्रहिन्दी भाषी बनता द्वारा व्यवहार होता है, अगर कहीं वही हिन्दी मिलने में भी जाने सगी तो हिन्दी का अस्त ही हो जायगा । जिस तरह मिस्र-मिस्र देशों में व्यवहार होने पर भी अंग्रेजी की एक गर्भाश ॥ जिससे कोई बाहर जाने का साहस नहीं कर सकता उसी तरह हिन्दी की भी एक गर्भाश है और उसका चाहे कितना ही विस्तार हो उसकी इस गर्भाश को रखा होनी आवश्यक है ।

नवम्बर १९३५

## त्रिवेणी' से हमारा नम्र निवेदन

मद्रास से निकलनेवाली अंग्रेजी सहयोगिनी 'त्रिवेणी' ने भारतीय साहित्य-संरक्षण की हमारी आयोजना और 'हंस' का स्वागत करते हुए एक छोट-सा नोट लिखा है, जिसे हम नीचे\* दे रहे हैं । हमारी सहयोगिनी ने भी यदि से ही भारत की सांस्कृतिक एकता

### \* A COMMONWEALTH OF LITERATURES

We welcome the efforts that are being made by Mr E. M. Munsh to give an all-India status to our provincial literatures. 'Hansa', the Hindi magazine till now conducted by Sri Prenchaudji will hereafter be edited conjointly by Sjis. Munsh and Prench noj. It will publish articles about the different literatures with personl sketches of writers and poets, and translations into Hindi of the more valuable literary pieces. Triveni has similar aims, and since 1928 it has bestowed a great deal of attention on the literary and cultural movements Andhra, Maharashtra, Karnataka, and other linguistic units of India. In fact, this has been a prominent feature of Triveni, and it is not quite accurate today to say that we know the latest literary and cultural activity in England, but not that of our neighbouring province.

While we readily recognise that it is useful to conduct a magazine in Hindi for the benefit of all Indian provinces, we believe that it is not less important that Indian literature should keep in touch with the literature of the world by the publication of articles on the Indian literatures and translations of poems, plays and stories, in an international language like English. There are many ways in which Triveni and Hansa can co-operate with advantage. There is however a wide spread feeling in South India that, in their zeal for the propagation of Hindi, the precharaks are making exaggerated claims on its behalf and referring

का धारण अपने सामने रक्ता है और बड़ी योग्यता के साथ उसका पालन किया है 'हंस' का उद्देश्य भी यही है। ध्यान रखना इतना ही है कि जहाँ विदेशी भाषायाँ संस्कृति और साहित्य को धरोहर के माध्यम से अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में ले जाना चाहती हैं वहाँ हम भारत के विभिन्न साहित्यों में धारणता पैदा करके और सांस्कृतिक क्षेत्रों को मिश्रित राष्ट्रीय संस्कृति और साहित्य का रूप गिन्न करके क पक्ष में हैं। हमारा विचार है जब तक हमारा एक साहित्य न ही जाय और हमारी संस्कृति में एकता न ही पा जाय हम अपनी वर्तमान दशा में अपने देश को संकर अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में कोई सम्मान का स्थान नहीं पा सकते। जब तक हम साहित्य और संस्कृति में राष्ट्रीयता की अज्ञानता न ही है तो अन्तर्राष्ट्रीयता के लक्ष्य तक पहुँच ही नहीं सकते। राष्ट्रीयता ही अन्तर्राष्ट्रीयता का सीढ़ी है। हम अपने इच्छित स्थान तक इस वर्तमानो मार्ग द्वारा ही पहुँच सकते हैं। जब तक भारतीय साहित्यो में परस्पर परिचय न हो उनके अन्तर्गतो माध्यम में स्थान पाने की बात हो ऐसी ही है कि भारत राष्ट्रीय स्वाधीनता प्राप्त किए बिना ही अन्तर्राष्ट्रीय समाज में स्थान का दावा करे। राष्ट्र क जितना धन है उन धन को परा किए और राष्ट्रीयता हुलस है और जिन देश में राष्ट्रीयता की भावना इतनी विभूतम हो वह अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रो तक अपने के प्रयत्न में पहुँच के इस बीच या गिर तो आसन्न नहीं। अगर भारत में विभिन्न उपराष्ट्र बने रहें और सभी अपने साहित्य और संस्कृति की पुनर्जाती की रक्षा करती रहें और एक दूसरे से मिलने की कोशिश में अपने ही राष्ट्रीयता का विकास करायें तक न होना। इसे अपनी प्राचीन भक्ति को बुझ न बुझ स्थापना पड़ेगा। सांस्कृतिक दृष्टा के बिना अन्तर्राष्ट्रीय एकता हो भी जाय तो स्वामी नहीं हो सकती। अगर हिन्दी के प्रचारक वर्गों या अन्य भाषाओं में हिन्दी को अछूता सिद्ध करने की प्रवृत्ति कर रहे हैं तो इसको जल्द समाप्त कराना चाहिए। जब तक

to the literatures in Kannada, Tamil or Telugu with consideration it is one thing to say that, as Hindi is spoken by the largest number of Indians, it might eventually serve as a medium of communication between province and province. It is altogether different to exalt it to the position of a national language and impose it on all provinces, to the detriment of the local language. We draw a distinction between a common language and a national language. There are several sub-nationalities in India, and to them their mother-tongue is the national language and also the prime vehicle of creative self-expression. Hindi is not inherently superior to Telugu or Bengali nor is its literature as rich and varied as theirs. We respectfully warn Mr. Muzibi against the subtle danger that lurks behind the Hindi movement. The Hansa may well be dear of it.

उन्हें अपने उद्देश्य की शक्ति में विश्वास न धार्येगा वे उनके लिए अपने समय और बुद्धि का बलिदान क्यों करेंगे। किसी नये मत की पीछा सेने के बाद हम में कुछ उद्दता भा ही जाती है। यह स्वाभाविक है। विद्वानों को इसे बालकों का उत्साह समझ सेना चाहिए। हिन्दी राष्ट्रभाषा बनने के लिए धरिी नहीं है। अगर कोई Common language और National language में मेद की कल्पना करके अपने मन को संतोष दे सकता है, तो हमें कोई आपत्ति नहीं। हम हिन्दुस्तानी को Common language ही बनाने के इच्छुक हैं और हमारा उद्देश्य कम यही है कि It might eventually serve as a Medium of Communication between provinces and province. हिन्दी इसलिए सामान्य भाषा नहीं स्वीकार की गयी है कि उनका साहित्य तेजगु या बेगला या किन्हीं अन्य दरबानों साहित्यों से श्रेष्ठ है, बल्कि केवल इसलिए कि उसे व्यास से व्यास समझते और बोलते हैं और इसीलिए साहित्यिक एका प्राप्त् करने के लिए हमें हिन्दी माध्यम की जरूरत है। हमारी समझ में अब तक यह नहीं आया कि इस आन्दोलन से प्रांतीय भाषाओं या साहित्यों को हानि कैसे पहुँच सकती है। क्या यह किसी साहित्य के लिए हानि की बात है कि उसके पाठकों का लोभ बढ़े और उसे अन्य साहित्यों से परिचित होने का अवसर मिले? क्या यह तेजगु या तामिन के कवियों और धुमेककों के लिए हानि की बात है कि उनकी रचनाओं से एक प्राप्त् के बजाय समुच्च राष्ट्र फलना उठने या उनके पाठकों के लिए यह अनिष्ट की बात है कि अन्य साहित्यों की कमल कृतियों से आनन्द उठाने का उन्हें अवसर मिले? संघेबी और संघेबी साहित्य-द्वारा हमें संघार के सभी साहित्यों से परिचय मिलता है—क्या यह हमारे लिए हानि की बात है? अगर यह हानि की बात नहीं तो क्या भारत के अन्य साहित्यों से परिचित होना ही हानिप्रद है, या केवल इसलिए हानिप्रद है कि यह संघेबी द्वारा न हानि हिन्दी बँधी गरीब भाषा द्वारा होता है? अगर नहीं उद्योग संघेबी द्वारा होता तो क्या हमारी सहयोगिनी के लिए अधिक संतोष की बात होती? क्या और किसी भाषा के जरिये यह साहित्यिक एका जाती जा सकती है? अगर नहीं तो हिन्दी वह उद्योग करके कोई बहुत बड़ा अपराध कर रही है? अंतर्राष्ट्रीय व्यवहार के लिए हमें संघेबी अवसर पटना चाहिए, प्रांतीय व्यवहार के लिए मातृ-भाषा ही और राष्ट्रीय व्यवहार के लिए अब हमारे लिए हिन्दी सीखना लाजिम हो गया है। अभी हम हिन्दी की कल्पना कर सकते हैं अगर आपद एक समझ यह धार्येगा अब उसकी अवहेलना न की जा सकेगी।

नवम्बर १९३५





## पटना का हिन्दी-साहित्य परिषद्

२१ २२ सितम्बर को पटना ने अपने साहित्य परिषद् का कई बरसों के बाद मानेवासा कार्यक्रमोत्सव बड़ी बुगधाम से मनाया। हिन्दी के शब्द-जागृकार श्री भाबनमान श्री चतुर्वेदी समापति से धीरे साहित्यकारों का सम्बन्ध बनना था। हम तो अपने बुगधाम से उसमें सम्मिलित होने का बीरब न पा सके। शुक्रवार की संध्या समय से ही हमें खबर हो घाया धीरे बहु सीमवार को उठता। हम छटपटाकर रह गये। रविवार को भी हम यही धारा करते रहे कि धाम खबर उतर जायगा धीरे हम जैसे बायेंने सक्रिय खबर ने उस बलत यथा छोड़ा जब परिषद् का उत्सव समाप्त हो चुका था। पटना बाहर बाट पर सोने से कसठी में बाट पर पड़े रहना ज्यादा मुश्किल था। धीरे में भी बीमारी के समय बाड़े बहु हमकी ही क्यों न हो बुगधामों के मतनुसार धीरे प्रमशास्त्रियों के प्रादेशानुसार कारी क सचीप ही रहना ज्यादा कम्पासकारी होता है—सौन्दर्य धीरे पारसौन्दर्य दोनों दुर्लभों से। अतएव हमें धारा है कि हमारे साहित्यिक बन्धुओं न हमारी पैदावारों को मुष्किल कर दी होवी। इस खबर ने ऐसा सम्बन्ध प्रबन्ध हमसे धीरे लिया इसप्रकार बरसा हम उससे अबरय लेंगे बाड़े हम यहिसा नीति ठोक्नी क्यों न पड़े। समापति का जो भाषण छपकर बासी भास के रूप में मिला है, बहु पम-पर्म किन्तु स्वार्थित होगा—यह सोचता हूँ तो यही भी बाहता है कि खबर महोदय कही फिर विद्वे सेकिन्तु उम्मा कही फता भी नहीं। इस मापण में धीरेन है बाबरा है मना न निवदन है धीरे साहित्यसेविया के लिए धारका है मगर धापने पूबजों का बोध मस्तक पर लावन की जो बल कही बहु हमारी समझ में नहीं आयी। हमारा यमान है कि हम पूबजों का बोध बहरत से ज्यादा लाद हुए है धीरे उसक बोध के नीचे बने जा रहे है। हम धरीत में उम्मे के इतने धारी हो गये है कि वतमान धीरे सक्रिय की बीच हम बिन्दा ही नहीं रही। यारोप धीरे परिचामी बग इसीलिए हमारी ज्येष्ठा करता है कि बहु हम पाँच हजार साल पहले के धनु समग्रता है, जिसके लिए प्रजापदवरो धीरे पित्रराजों में ही स्वान है। बहु हमारे भोजपनों धीरे ताद्वलेकों की साथ-साथकर इसलिये नहीं से बाता कि बरसे ज्ञान का प्रजन कर, बल्कि इसलिये कि उन्हें अपने संग्रहालयों में सुरक्षित रखकर अपने विजय-गर्भ की तुष्टि दे। उसी तरह बीच पुराने जमाने में विजय की जूट के साथ नर-नारियों की भी जूट होती थी धीरे बुलुसों में उनका प्रदत्त किया जाता था। प्राचीन धगर हम शाबरा धीरे भाग बैठा है तो उसके साथ ही बकिर्षी धीरे अन्धबिरबास भी बैठा है। बुनाके धाक राम धीरे कृष्ण रामसीसा धीरे राससीसा की बस्तु बनकर रह गये है धीरे बुद्ध धीरे महावीर ईश्वर बना दिये गये है। यह प्राचीन का भाग नहीं तो धीरे क्या है कि धाम भी धारकन प्राणी जिसमें धर्म-धाम पड़े-निबे धर्मियों की सन्धा है गरियों में नशाकर अपना मन शुद्ध कर लिया करते है? प्राचीन उन रण्डों

घोर जातियों के लिए गव की बग्यु होगी घोर हानी चाहिए या अपने पूज्यों के पुल्याह घोर उनको सामनाओं से घ्राह मात्तामाम हो रहे हैं। जिन जाति को पूर्वजों से पराभव का प्रपमान घोर रक्तियों का तौल ही विरागत में मित्रा से प्राचीन के नाम को बने रोयें। ऐसे घटन को क्या हम लेकर चार्ते जिसने हमारे पूर्वजों को इतना अकम्पद बना दिया कि ब्रह्म बलिपार मिलजी ने बिहार विजय किया तो पता चला कि तारा नगर घोर जिमा एक मित्राण बाधमालय का। बिडान् लोग मन्ने सं राज्य का धाय्य पाते वे घोर अपनी कृटिया म बीटे हुए प्राचीन शास्त्रा म डूब रहते थे। उनके ईर्ष-गिह क्या हो रहा है, दुनिया किस गति से बड़ी जा रही है उन्हें इनकी खबर न थी। घोर शायद बलिपार उन बिडाना से मुकाहिय न होता घोर उनकी कृति क्यो की रयो बनी रहती तो व उसी तगमता सं अपने शास्त्र पर बल्ले घोर धाध्यात्मिक बिचारो के धानन मूठते रहते घोर अमर जीवन की शक्ति बापते बने जाते। उधर पश्चिम के जातिक मन्त्र के तुलन का मुकाबला करके सचार विजय कर रहे व घोर हमारे बाबा-बाबा बडे मुक्ति का मार्ग दे रहे थे। पश्चिम म जिस बस्तु के लिए तपस्या की उसे वह बस्तु मिली। हमारे पूज्यों ने जिस बस्तु की तपस्या की वह उन्हें मिली या मिली। जिसके लिए सचार मिष्या हो घोर शुच का जर हा उनकी यति संसार उपचा करे तो उन्हें शिकायत का करा मौका है। हम स्वय की योग से निश्चित रहना चाहिए। वह हम मिनेगा घोर उधर मिनेया। कतुर्वेदी की के शब्दो म 'ग्रन्थो के बन्धनों के घासी हम स्वामी नाम के कवन में की मुक्ति का नीत हूँहने के बजाय बेहाल का बग्यन इतिम मये। घोर क्यो न हूँहते? बन्धनों के निवा घोर ग्रन्थों के निवा हमारे वाम घोर क्या वा। पंडित लोग पउते ये घोर मोडा लोग मकते ये घोर एक-दुमरे की बेइज्जती करने ये घोर मशाई से कुरतव मिलती की तो व्यभिचार करतें ये। यह हमारी ब्यावहारिक संस्कृति थी। पुनकों में वह जितनी ही अंधी घोर पवित्र थी अजहारा में उतनी ही निन्द्य घोर निन्द्य।

माये अनन्तर समापति की ने हमारी कतमान माहितिक मनावृति का जो चित्र खीचा है उनका एक-एक अक्षर मयाव है—

हम धामी हम धायन को क्या करें? यदि किसी के पास सुनता है तो तुरन्त माल सता है घोर उन ग्रन्थ का पेट में सेहर कर बाहर धाता है घोर अपनी माहितिक पीपी को उन निन्द्य निधि की गैरात बाँटा है। मसार के नायों का मैं जिना प्रनाउ मरम विरवासी प्रता है घोर यह चाहता है कि मये ही तरह मरा पाउन भी मेरी लोक-निन्द्या पर विरवाण करे, किन्तु धरि किसी के मुण्ड किसी की मोतिबता किसी की उन्नता की कर्षा मुगता है तब मैं उनके लिए प्रयाय बगुन करने के इच्छार सेना चाहता है।

घोर भा-उ के धर्मिय शास्त्र तो बडे ही ममस्पर्शी है—

'हम बडे हा या घोर' हमने मर-मर घोर व्यक्ति-व्यक्ति में मरने का डर बोया

है। हमारे लिए मार बालमा ही गुनाह नहीं मर जाना गुनाह हो गया है—प्राय के साहित्यिक चिन्तक पर जिम्मेवारी है कि यह पुस्तक को दोनों हाथों में लेकर बीने का खतरा धीरे मरने का स्वाद अपनी पीठी में बोये। यह पुस्तक शस्त्रधारों से नहीं हो सकता यह दो क्रम के धर्मियों ही के करने का काम है।

अक्टूबर १९३५

## हिन्दी-साहित्य के विद्यालय

दो साल पहले हिन्दी साहित्य के इच्छुकों के लिए पढ़ाई की व्यवस्था केवल नाम की थी। बिहार के पश्चिमी परीक्षार्थों में भोग बैठते थे मगर कुछ घर पर पढ़कर। प्रयाग का हिन्दी विद्यापीठ काशी का भगवानवीर साहित्य विद्यालय और सिरसा का हिन्दी विद्यालय मयासाम्य साहित्य की शिक्षा देते थे मगर धन की कमी और शिक्षकों के अभाव के कारण वे बहुत थोड़े-से छात्रों को लेते थे। न पढ़ाई ही नियमित रूप से होती थी न वे छात्रों के रखने का कोई इन्तजाम कर सकते थे। इसलिए बाहर के छात्रों और छात्रों के बच्चों को यही मुश्किल का सामना करना पड़ता था बेचारे इतनी दूर की यात्रा करने पड़ते थे और यहाँ कोई सुविधा न पाकर निरुत्साहित लौट जाते थे। हृदय की बात है कि साहित्य-प्रेमियों के उद्योग से इधर दो साहित्य-विद्यालय खुल गये हैं, जिन्होंने साहित्य को ही अपना मुख्य धर्म बना लिया है। उनमें एक है बिहार प्रान्त का 'बेबनर साहित्य-विद्यालय' और दूसरा गोरखपुर का 'खोपापुर हिन्दी-साहित्य विद्यालय'। बेबनर का दूसरा नाम 'विद्यालय' है, जो ठीकस्थान भी है और प्रख्यात बलवानु के लिए भी प्रसिद्ध है। यहाँ हिन्दी साहित्य सम्मेलन की परीक्षाओं की पढ़ाई का प्रवर्धन प्रयत्न है। उसके साथ प्रग्रेजी संस्कृत शिक्षा प्रादि की शिक्षा भी की व्यवस्था की गयी है। एक छात्रवास भी है, जहाँ केवल पाँच रुपये महीने में छात्रों को प्रवर्धन भोजन मिल सकता है। व्यायाम के लिए भी इन्तजाम किया गया है। इस विद्यालय के संस्थापक कानूनी के उत्साही मन्थन श्रीमन् मदनमोहन श्री कर्म्या है। विद्यालय का प्रवर्धन योग्य व्यक्तियों के हाथ में है, जिनमें श्री अनारन भद्र 'टिब' एम ए और श्रीमन् मन्थन-नारायण सिंह 'सुभाशु' एम ए एल-एल बी के नाम से हिन्दी-संसार परिचित हैं। हमें यह जानकर विशेष गर्वोप हुआ कि विद्यालय में छात्रों को लेखन और सम्पादन काम की शिक्षा भी दी जाती है।

खोपापुर साहित्य-विद्यालय की खुले केवल तीन साल हुए। यहाँ भी हिन्दी-विशेष-योग्यता और बिहार परीक्षाओं की शिक्षा दी जाती है। इन रूप में प्राप्त धामाम उत्कल महाराष्ट्र, गुजरात और पंजाब प्रादि अहिन्दी प्रान्तों के पश्चिमी भागों को

साधुवृत्ति देकर शिष्या बने की व्यवस्था की जा रही है। साथ ही यह प्रबन्ध भी किया जा रहा है कि ग्रिबी के साथ देश की दो अन्य प्रांतीय भाषाएँ भी सिखायी जायें। विद्यालय के छात्रासकों ने यह प्रबन्ध करके अपनी उदारता का परिचय दिया है, क्योंकि सांस्कृतिक विकास के लिए हमें बुराई को अपनी भाषा देना ही नहीं है। उनसे सेना भी है। तभी दान-प्रतिदान स्थायी हो सकेगा। जिन सम्मनों को कुछ पूछना हो हिन्दी साहित्य विद्यालय खोपापुर, पो देहीवा (योरखर) के पते से पत्र-व्यवहार करें।

अप्रैल १९३६

## भारतीय साहित्य परिषद्

हम पिछले धर्मों में एक अखिल-भारतीय-साहित्य परिषद् की बहुरत पर अपने विचार लिख चुके हैं। हमें यह है कि महाराष्ट्र और गुजरात के साहित्य-परिषदों ने भी इसकी बहुरत उत्तीम की है और उसको कार्यरूप में लाने का आन्दोलन कर रहे हैं। भाषाएँ तो हर एक प्रांत की धनग-धनग हैं मगर सभी भाषाओं में सांस्कृतिक एकता मौजूद है और साहित्य की प्रेरणाएँ भी सभी भारतीय साहित्यों में प्रायः एक-सी हैं। प्राचीन और मध्यकालीन साहित्य सभी भाषाओं में या तो मूलप्रधान है या श्रुत्यार प्रधान मगर नये साहित्य ने मिश्र-मिश्र प्रांतों में धनग-धनग प्रवृत्तियों को विकसित किया है। धन का जीवन बितना बटित हो गया है और उस पर नित्य नये विचारों नये बातों नये दृष्टिकोणों का बिस तरह असर पड़ता रहता है, उसी तरह तवीन साहित्य भी जो उसी उद्यम से निकलता है विषय प्रवृत्तियों धाराओं और विचारों में इतना बहुरपी है कि प्रांतीय साहित्यों में मौलिक एकता होने पर भी अलग-अलग धाराएँ साक नजर आती हैं। अब समय आ गया है कि उन धाराओं का समन्वय किया जाय। पुराने जमाने में साहित्यकार केवल समाज का एक मूल्य मात्र होता था उसका संचालन और मोच करते थे मगर नये जमाने का साहित्यकार इतना संशोपी नहीं है। वह समाज के परिष्कार में दखल देना चाहता है। राजनीतिज्ञों की गतिधियों को सुधारना चाहता है जो काम व्यवस्थापक लोग कालून और बख-निधान से करना चाहते हैं वही काम वह धात्मा को बनाकर धान्तरिक धावेतों से पूरा करन का इच्छुक होता है। समाज में उसने अपना एक स्थान बना लिया है, और धन कोई उन्नत राज उसकी धरहेलना नहीं कर सकता। इसलिए यह बहुरी है कि भारत की सभी भाषाओं के साहित्यकारों का ऐसा परिषद् हो जिसमें साहित्य और कला और संस्कृति की समस्यार्यों पर विचार किया जाय और सभी एक-बुरे के धनुमनों और सिधियों से फायदा उठावें और जो करम उठावें वह व्यवसिधत रूप से। कितने ही ऐसे पेशिषा सामाजिक और बीडिक प्ररग हैं, जिन पर विचार-विनिमय

क्रिये और हम कोई राय कायम करने में अक्षम हो रहे हैं। प्रांतीय परिषदों में परस्पर कोई धारान-प्रदान न होने के कारण वे एक दूसरे की प्रगति से विभक्त बेचकर हैं। एक ही काम को समय-समय स्वतन्त्र रूप से करने से मन और धम की बिलनी चलि होती है, क्या वह समय-समय से कम नहीं की जा सकती? साहित्य अब केवल अस्ति और शून्य नहीं है। वह समाजशास्त्र भी है। धर्मशास्त्र भी है। अर्थशास्त्र भी है और सब कुछ है बिच पर राष्ट्रों का अस्तित्व टिकता है। ऐसे महत्व की वस्तु से हम इतने दिनों से अक्षम रहे यह नहीं समझ में आता। भावा भेद ही हमका कारण था और अब भी है, लेकिन भेद के रहते हुए भी हम साहित्यिक संगठन को मुस्तभी न कर सकते। अतएव यह विचार किया गया था कि ३ और ४ अग्रेज का बधा में भारतीय साहित्यसेविका का परिषद् बनाया जाय और इस शुभकार्य का थीयच्छेद कर दिया जाय लेकिन कई कारणों से हम यह ठापीकें बचानी पड़ी और अब यह तय किया गया है कि नागपुर-साहित्य-सम्मेलन के अखबर पर २३-२४ अग्रेज की भारतीय परिषद् की बैठक भी हो। अब साहित्य सेविका की अन्तर्राष्ट्रीय सभाएँ समय-समय पर होती रहती हैं तो एक ही राष्ट्र के प्रांतीय साहित्यकार एक-दूसरे से बेगाना बने रहें, एक-दूसरे से प्रकाश पाने की कोशिश न करें और साहित्य की प्रगति का उचित निष्पन्न न करें यह तो जीवन के लक्ष्य नहीं। हम मानता हैं इस अखबर पर सभी प्रांतों के महारथी माने का कष्ट करें। साहित्य-सम्मेलन क्या अभी तक यह कैलास नहीं कर पाया कि इस परिषद् की व्यवस्था करना उसका कर्तव्य है?

अग्रेज १६३६

## प्रगतिशील लेखक-संघ

The Indian Progressive Writers Association पर हम किसी विद्यसी सख्या में आलोचना कर चुके हैं। हमने इस तब के उद्देश्य और कार्य-क्रम का भी उल्लेख किया था। हमें हय है कि संघ न अस्तित्व के साथ काम शुरू कर दिया है। उतका मुख्य कार्यक्रम प्रयाग में है। अभीगढ़ लाहौर देहली अमृतसर लखनऊ आदि स्थानों में उसकी शाखाएँ खुल गयी हैं। इलाहाबाद में तो वह एक अजीब साहित्यिक संस्था का रूप धारण करती जाती है। बीसा इसके नाम से आहिर है। संघ उन साहित्य और कला-सृष्टि का पोषक है जो समाज में जागृति और स्फूर्ति लाये जो जीवन की यथार्थ सम्स्याओं पर प्रकाश डाले। संघ न लखनऊ में १० अग्रेज की अथवा सामान्य अस्ता करना निश्चय किया है। जिन अग्रेजों को संघ के उद्देश्यों से हनदरी हो वह भीषुद् इस एस अहीर, ३८ कैनिब रोड इलाहाबाद से पत्र-व्यवहार करें।

अग्रेज १६३६

## हिन्दी लेखक संघ का एक वर्ष

हिन्दी लेखक संघ के जीवन का एक वर्ष पूरा हो गया। उसके मुखपत्र 'लेखक' के जीवन के भी छह महीने समाप्त हुए और अब समय था मया है कि हम उसके कार्य की आलोचना करें। लेखक-संघ की हिन्दी में जल्द ही इसमें तो शायद धन किसी को संदिग्ध न हो। उसके उद्देश्य ठीके हैं। काम-क्षेत्र विस्तृत है और इतने छोटे समय में उसने जो कुछ किया है, उस पर उसके इमे-गिने काबकर्ताओं को हम बधाई दे सकते हैं। अभी तक उसकी शक्ति केवल संगठन और 'लेखक' के प्रकाशन की धोर ही रही है। उसके साहित्यिक और सांस्कृतिक धर्म की धोर बहुत कम ध्यान दिया गया है। सदस्यों की हृदय बद्ध है, मगर यदि हरेक पाठक 'लेखक' का प्राहक बनकर लेखक-संघ में प्रविष्ट हो जाय तो संघ में और आभारण धर्मों में अंतर ही क्या रहता है। सब तो केवल लेखकों की संस्था होगी चाहिए और उसके पास ऐसे साधन होने चाहिए, जिनसे वह लेखकों में आत्मानन्दान का साहित्य और संस्कृति की समस्याओं पर प्रकाश डालने का लेखकों में परस्पर मंत्री और सम्मान पैदा करने का उद्योग कर सके। इन कामों के लिए जन धोर योग्य ध्वितियों के सहयोग दोनों ही की जरूरत है। संघ के पास कानी कौड़ी भी नहीं। नेम्बरों से जो चन्दा मिलता है, वह 'लेखक' के प्रकाशन के लिए भी काफी नहीं होता। यही कारण है कि संघ के कार्यकर्ताओं की धारी शक्ति अपनी हृत्ती बनाने रखने में ही खर्च हा रही है। 'लेखक' के गत छह धर्मों को देखकर हम यह कह सकते हैं कि उसने अभी लेखकों को बहुत उपयोगी सामग्री दी है। प्रत्येक संख्या में ऐसी धर्मक बाँटें रहती हैं जो लेखकों के लिए जरूरी हैं और सम्पादकों ने उसे उपयोगी बनाने में कोई कसर नहीं छोड़ी। जो कमी लगती है, वह यह है कि उसका आलोचनात्मक धर्म बहुत कमधोर है। हासकि इस धर्म में उस पर आस धोर दिया जाता चाहिए। संघ के सदस्यों में आलोचकों की कमी नहीं है। ऐसा प्रयत्न होना चाहिए कि सब आलोचकों की एक मोट्टी बनाकर अपनेआपनी पुस्तकों पर उनकी निष्पक्ष सन्धि प्रकाशित किया करे। इससे लेखकों का हित भी होगा और साहित्य का भी। हम 'हृष' के पाठकों से धनुरोध करते हैं कि वे 'लेखक' के प्राहक बनें। जो धुनक है वह सीलने के लिए बनें जो बयोवृद्ध है वे सिद्धांत के लिए बनें। उनकी विम्भकारी धपनी हृत्तियाँ रखकर ही नहीं मयाप्त हो पाती बल्कि आनेआपों का मार्ग प्रयत्न का भार भी उन्हीं पर है।

दिसम्बर, १९३५

## पुस्तकालय आन्दोलन

हाल में कलकत्ते में पुस्तकालयों को संरक्षित करने और भारत में एक पुस्तकालय में स्थापित करने के विचार से एक असरा हुआ है। पुस्तकालय का राष्ट्र के जीवन में क्या स्थान है, यह सिद्धने श्री सरकार नहीं। इतना ही कह देना काफी है कि वह विद्यालयों से नहीं महत्वपूर्ण है और उनसे नहीं कम अर्थ और उसके साथ ही नहीं बालन शीन। अगर कोई इस बात की खोज करे कि अब तक विद्यालयों में क्या महापुरुष दिया कि या पुस्तकालयों में तो शायद बाकी पुस्तकालयों को के हाथ रहेगी। अब भी संसार के महान व्यक्तियों में अधिकतर नहीं है जिन्होंने पुस्तकालयों के विद्यालयों में शिक्षा पायी। भारत में पुस्तकालयों पर अभी तक बिल्कुल ध्यान नहीं दिया गया। हालीनों की प्रवृत्ति विद्यालयों ही को धोर रही है और इसका नतीजा यह है कि जनता में नये-नये विचारों के प्रचार के सबसे अच्छे साधन से हम वंचित रहे। सरकार ने न स्वाभाविक संस्थाओं में इस धोर प्रयत्न होने की आवश्यकता समझी।

लेकिन वीसा नि नीच बिलसन ने पुस्तकालय सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए कहा—'पुस्तकों का एक स्थान पर संग्रह कर देना ही पुस्तकालय नहीं है। पुस्तकों स्वतः कुछ भी नहीं है। जब पुस्तकालय उन्हें चुनकर, उनका वर्गीकरण करके उन्हें प्राकृतिक रूप से प्रवर्तित करता है तभी पुस्तकालय का निर्माण होता है। यह बात इनारे पुस्तकालयों के अधिकारी अभी नहीं समझ सके हैं और इसीलिए समाज में पुस्तकालयों का भी स्थान होना चाहिए, वह उन्हें प्राप्त नहीं हुआ। अधिकतर पुस्तकालय तो अपना कर्तव्य नहीं समझते हैं कि पुस्तकों की रक्षा करते रहे और पुस्तकों को जहाँ तक हो सके कम हस्तु करें नहीं वे खराब हो जायेंगी। उन्नत देशों में पुस्तकालयों का पर अच्छे विद्वानों को दिया जाता है और इस पर को प्राप्त कर देना गौरव की बात है। भारत में इस पर के लिए कोई ऐत-नीत उपयुक्त समझ जाता है। वह पुस्तक-प्रेमियों को किसी तरह की सहाय नहीं दे सकता न अपने पर के महत्व को समझता है। क्या से क्या वह अपना कर्तव्य नहीं समझता है कि थाप जो पुस्तक भी उसे निकलना दे। और अब तक इस पर पर सुयोग्य व्यक्तियों को न रखा जाना बोड़े-बहुत जो पुस्तकालय मौजूद है उनसे भी जनता को विशेष लाभ न होया। सम्मेलन के स्वागतार्थ्य के शर्तों में—

किन्तु शोक की बात है कि हमारे किन्ते बालक अध्यापकों के प्रापतिजनक दुर्भावहार के कारण पुस्तकों की धरणि के साथ विद्यालय से निकलते हैं। और परि विद्यालयों में हमें बोम्ब और प्रकाशमान अध्यापकों की सरकार है, तो पुस्तकालयों में भी विचारशील और शिष्ट मनुष्यों की सरकार है, जिन्होंने बहुत कुछ पढ़ा हो जो पाठकों के



ससाहकार बन सकें किसी खास विषय पर बच्ची से बच्ची किताबों का चुनाव कर सकें और पाठकों में स्वाभाविक प्रकृति को पुष्ट कर सकें ।

सितम्बर १९३३

## परितोष

'हंस' के धारमकर्मिक निरूपण के पहले सहयोगी 'भारत' ने हम के कायरताप्रा का परामर्श दिया था कि धारमकर्मिक निरूपण से कोई फलवा न होया यह तो केवल धारमविज्ञान का एक बहाना है । मन् यह नहीं थे पर धार कुछ ऐसा ही था । दुर्भाग्यवश मैं धारमकर्म का बड़ा पक्षपाती हूँ और उसे साहित्य का बहुत्वपूर्ण अंग समझता हूँ । मैं बालता हूँ कि उनके इस परामर्श से विश्वमे धारम की गण भी की गये होय हुआ और मैं धारम को कभी से निरूपणनेवाले पाश्चिक पक्ष 'जागरण' में एक छोटे से मोट में प्रकट किया । भारत के सम्पादक महोदय को मेरा यह लेख पड कर धारम हुआ मगर उन्होंने उस लेख को धारमय होय हुए भी धारम ही उचित समझा । हूँ अपनी धारम-शुद्धि के लिए उस पर टिप्पिलिया गया दी । मैंने छाने मे उस लेख को फिर देखा तो मुझे उसके लिखने का खेर हुआ । धारमवारी बुनिया मे इस किस्म के धारम होते रहते है । मुझे शुभव होने की कोई एनी सक्त बकरत न थी । 'भारत' को हमार विचार नहीं पसन्द आता तो यह कोई ससाधारण बाल नहीं थी । किसी उद्योग को सभी पसन्द नहीं करते । दो-चार पसन्द करते है, दो-चार नापसन्द करते है । यह तो बुनिया का इस्तुर है सेमिल कौर भूल तो हो ही गयी धार पक्षताने से क्या हो सकता था । समझ या कौर, मुझे मूल हुई तो भारत ही इस काम करेया मगर 'भारत' के तीसरे अंक मे भारत के सम्पादक पं नन्दबुनारे बाबुपेयी ने मेरे उस लेख का जो उत्तर दिया है, उस पडकर मेरा यह खेद मिट गया । उन्होंने रोटे का जवान कतर से नहीं बमबोले से किया । इससे मुझे सन्ना परितोष हुआ । मुझे मामूम हुआ ये ही शुभव होना नहीं जानता इस कला मे मुझे कही बुरपर कलाविद् पडे हुए है । बाबुपेयी भी करवाते है—

'प्रमथर को के उभगास उनकी प्रीपेयेयडा कृति के बारस काली बन्नाम है और हिन्दी के बडे से बडे समीक्षक ने उनको सिफानत की है—'प्रमथ' के सभी समीक्षक बमते है कि उनका सबसे बडा दीप जो उनकी साहित्य-कला को कमुयित करने मे सभ्य हुआ है—वही प्रीपेयेयडा है ।

यह बमै हुए दिन के शब्द है जो सायद बहुत दिन से भरा बैठा था और इस धारम को बाहर भरपुर और से बाहर करना चाहता है । इसका क्या जवाब दिया जा

सकता है। सभी लेखक कोई न कोई प्रोपेगंडा करते हैं—सामाजिक, शैक्षिक या धार्मिक।  
 प्रथम प्रोपेगंडा न हो तो सद्यः म साहित्य की उन्नति न रहे जो प्रोपेगंडा नहीं कर  
 सकता वह विचाररहस्य है और उक्त कथन हाथ में लेने का कोई अर्थिकार नहीं। मे उस  
 प्रोपेगंडा को नर्क से स्वीकार करता हूँ। मेरा विरोध तो उक्त प्रोपेगंडा के आक्षेप में है  
 जो मान और यश कीर्ति और धन-माह के बस किया जाता है। जिस धारणी में जीवन  
 में एक बार भी किसी साहित्य सम्मेलन या सभा में शरीक होने का गुणाह न किया हो  
 जो प्लेटफ़ॉर्म को मूर्खी का लक्ष्य समझता हो उसे अपना विचार पीटनेवाला कहना  
 स्वाभाविक नहीं है। यों तो यहाँ किसी आर्थिमेंस का भय नहीं जो आक्षेप कोई करना चाहे,  
 कर सकता है। बाजपेयी को मे मनोविज्ञान के विद्यापी की ईशियत से मेरे उस लेख में  
 मेरी प्रोपेगंडा बलि देकर संतोष प्राप्त किया यह मेरे लिए भी धान्य की बात है।  
 एक इन्वाम तो साबित हुआ गया। सब दूसरा इन्वाम सुनिये। फर्क जुम काफ़ी

लम्बी है—  
 'भारत के सम्बन्ध में इतनी बुरी सम्प्रति पढ़कर हमें खोम किंचित नहीं हुआ  
 ( गलत खोम या धापको इतना हुआ जिसकी मुझे स्वप्न में भी आशा नहीं थी कम से  
 कम इसी विचार से कि मैं आपसे उन्नत में बहुत बढ़ा हूँ और मेरे सठिवानों में नेत्रल प्राप्त  
 साम होय है ) क्योंकि उनमें भी हम प्रमत्त भी की उपन्यास-कला का एक रहस्य ही  
 देख पड़ा। उपन्यास लिखने का पुराना तरीका यह था कि एक पत्र की परम शक्ति  
 और और बरेख बनाकर दूसरे को हूब हरख तक उसके विपरीत बना दिया जाय और  
 उन्हीं दोनों विरोधी बलों के संघर्ष से कथा का विकास होया रहे। यह बहुत पुराना ढर्रा  
 था जिसमें मत्स्य की घोर में शीघ्रें नैतिक उपन्यास का ढाँचा लड़ा किया जाता था।

जिसे साधुनिक विचरित साहित्य एक नामाने से छोड़ चुका है।  
 इमका अर्थ है कि मैं उन्हीं पुराने ढर्रे के दक्षिणमूर्खी ढंग की पुरानी सखीर का  
 खरीद बना हुआ हूँ और 'भारत' के यशस्वी सम्पादक नये से नये ढंग के साहित्य के  
 अपट्टक बनाता हूँ—यूरोप के प्रस में उपन्यास-साहित्य की पुस्तकें निकलते ही उनके पास  
 सभी जाती हैं और वह उनकी आभोचनात्मक बुद्धि से पढ़ते हैं औरों को यह सीमाय  
 क्यूँ मनीब। इन्हीं बहुमता और अप टू टट पन की तो बरकत है कि आप 'भारत' में  
 ऐसे साहित्यिक लम्बा का प्रतिपादन करते हैं जिन्हें हम पुरानी सखीर के फकीर समझ  
 ही नहीं सकते—यही सोचकर चित्त की शान्त कर मीते तो शुरुब होने की नीबत क्यों  
 और मझाभारत नाम से लेकर बीगबी नहीं तक बरखर बना जाता है और जब तक  
 साहित्य की मूर्च्छि होती रहणी यह संभव साहित्य का मुख्य धारार बना रहेगा। मानकी  
 दुषय नहीं बरमा करता और न साहित्य-लक्ष्य में परिवर्तन ही नफ़टा है। हाँ सतही  
 धाँकों से बढ़नेवालों का चाहे नये साहित्य में वह समय न नबर आये बरकि नये साहित्य

सेही पुरानी परिपाटी का व्यवहार करते हुए भी नवीन आविष्कार का गौरव प्राप्त करने के लिए मोक्ष की टूटी लड़ी खिंचा करते हैं। धीरे धीरे ऊपर ही ऊपर तैरते हैं उन्हें ऐसा भ्रम हो जाय तो धारण्य नहीं। साहित्य का क्षेत्र है, सौन्दर्य की सृष्टि धीरे धीरे सौन्दर्य सम्बन्धवाचक है। सुन्दर की कल्पना ही बिना प्रयुक्त के नहीं हो सकती जैसे ही जैसे प्रकाश धारण्य के सम्बन्ध से ही व्यक्त हो सकता है। मैंने भी अपनी सभी रचनाओं में इस समय को मुक्त रखने की चेष्टा की है जिसमें मुझे भी नवीन आविष्कार का गौरव मिले धीरे धीरे हमारे मित्र ने मेरा कोई उपन्यास पढ़ा होता तो वह ऐसी प्रसन्न बात न कहते। संभव है बड़े से बड़े समीक्षक ने उनसे यह तिकायत की हो पर उन्होंने स्वयं कोई रचना पढ़ने का कष्ट नहीं उठाया यह सिद्ध है। बिना कोई चीज पढ़े उसकी आलोचना करना धारण्य का जीवन है धीरे मुझे इसकी शिक्षा पत्त नहीं।

इसके बाद दूसरा पैराग्राफ 'भारत सम्पादक के धारण्य-विक्रमवर्षी से शुरू होता है जिसमें आपने घासबे घासमान पर बैठकर जमीन पर पैर बचीटनेवाले जुड़ प्राणियों पर दया-दृष्टि डाली है। फरमाते हैं—

'साहित्य में हम कुछ साहित्यिक संस्कृति चाहते हैं साग-सपेन कुछ भी नहीं। चाहे वह साहित्य का कोई लक्ष्य हो पुस्तक हो धारण्य सस्या हो—हम उसकी परत अपनी इसी मूल भावना को कमीटी पर करते हैं। यदि हम हिन्दी साहित्य सम्मेलन के विषय में हैं तो इसलिये, कि वह वास्तव में साहित्य-सम्मेलन नहीं है'

किन्तु कुछ साहित्य-सुधा-वृष्टि है। धारण्य का एक महान कृतिम रूप है, सत्यमय की नीरवमयी बोधी में रहना चाहे उसकी सख्या एक ही तक परिमित हो। सभी बड़े-बड़े विचार प्रवक्तकों ने अपनी अकमली धारण्य से ससार पर विजय पायी है धीरे धीरे हमारे योग्य 'भारत' सम्पादक उस गौरव के उम्मीदवार हैं तो हमें तिकायत की कोई मुंबाझत नहीं। हम सभी चाहते हैं कि कोई ऐसी बात कहे, जो कोई दूसरा न कह सके कोई ऐसा काम कर दिखाए जो दूसरा न कर सके। नयी यह इच्छा सभी हीवी है कभी महत्वाकांक्षा से प्रेरित। हम इस वाक्येयी जी के बलवान व्यक्तित्व धीरे उज्ज्वल प्रतिभा का प्रमाण समझते हैं। उनको गहर में हिन्दी का कोई सेखक नहीं बँबता में इन बातों से नहीं बँबता। धारण्य हमसे भी कोई बड़ी धारण्यो नयी प्रयुक्तों बात कहिए, मैं धारण्य भी न बँबता। मिनकूंगा ही नहीं। इतने महान आविष्कार की उन्हा कील कर सकता है हिन्दी में ऐसा कोई सेखक नहीं जिसको धारण्यवा सिखने योग्य हा। यहाँ तो सभी धारण्य-विज्ञान का उपासक है। केवल एक धारण्य है, धीरे वह भारत के सुयोग्य सम्पादक परिषद लम्बुकारे वाक्येयी एम ए। धारण्य यही है कि उन्होंने 'भारत' का सम्पादक होना नयी स्वीकार कर लिया क्याकि सम्पादकत्व में धारण्य-विज्ञान कूट-कूटकर भरा होता है। ऐसे ज्ञानी पुरुष के लिए तो कोई मुष्य ही ज्यारा उपयुक्त स्वान होती। यहाँ मैंने मूल पढ़े। बात यह है कि धारण्यी धारण्य धारण्य चाहे स्वीकार करे या न करे,

लेकिन 'हम' नु मा बीमरे मेस्त धापने सेकों त्रिपुखियों के एक-एक शब्द से टपकर पड़ता है और जबकि धाप धपने सेकों को गसतियों से ऊपर समझते हैं उन्हें साहित्य के रत्न मानते हैं इसलिए जब मैंने उन पर अपना विगोपी मत्त प्रकट किया तो धापको भसह्य हो गया। ग्रहकार ने हम और धाप जैसे व्यक्तियों से कहीं महान पुस्तों को हस्त्यास्पद बनाया है। कोई चौकानेवासी बात नहीं।

इसके धाये धाप सप्तम आकाश से भी ऊपर उड़ गये हैं और साहित्य के सहेस्य और सत्र की पबिबठा पर जान से भरी बातें कही हैं। हम उसका एक-एक शब्द स्वीकार करते हैं। बेशक साहित्य सारिबक बीबन है। बेशक वह कठिन तपस्या और महान मत्त है। लेकिन जब कोई सूत्रों में बातें करे जिसको समझने के लिए किसी बार्त्तनिक के पास जाना पड़े तो फिर समझ क्या कभाव ? बात भी तो समझ न धाये। उदाहरणार्थ इन शब्दों को लीजिए—

'जहाँ व्यक्ति न व्यक्तित्व के कोई स्वतन्त्र बिपन नहीं रह् बातें उच्च साहित्य की वह मन्मनूमि है। जहाँ अपरिग्रह का साम्राज्य है। फोटो नहीं खाने जाते। जहाँ बापी मीन रह्ती है गाथा जाने में सुख नहीं मान्ती। उन उच्च स्तर व जितने किन्ना कलाप होते हैं मान्य प्रख्या से होते हैं।

जहाँ बापी मीन रह्ती है वह साहित्य है ? वह साहित्य नहीं बुगापन है। साहित्य का काम भाषों का अन्त करण में अनुभव करना ही नहीं उनको व्यक्त करना है। वह मनोमन्त्र सभी साहित्य कह्नाते हैं जब वह व्यक्त हो जाते हैं बापी म प्रकट होते हैं। तुजसीवास ने रामायण ड्राप अपनी धारणा की व्यस्त किया है अन्धया धान उनका कोई नाम भी न जान्ता। वहीं शब्दिक गोरख धन्वे 'भारत के साहित्यिक लेखों की विरोपताएँ हैं किन्का कोई धब नहीं होता। धबर बापी मीन रह्ने म सुख मानती। धान सधार म साहित्य शब्द का अस्तित्व भी न होता।

इन भाष्यों का सीधा-साधा अर्थ जो हम समझ सके हैं वह यह मान्म होता है 5 साहित्यकारों को धारम-बिज्ञापन नहीं करना चाहिए, यह सभी के लिए निध है और साहित्यिक प्राथियों के लिए और भी अधिक। इसके मानने में किसी को धापसे मतभेद ही हो सक्ता लेकिन क्या धारमकबा और धारम-बिज्ञापन समान है ? बोडे-बहुत धन्वे। बुरे अनुभव सभी प्राथियों के बीबन में हुआ करते हैं। जो सोब साहित्य के बसे क्षेत्र धाकर धपना तन-मन बुनाते हैं वह केवल धारम-बिज्ञापन के भूखे नहीं होते। धाप पने धार्त्निक नाभीर्य के कारण उन्ह जितना चाड़े पठित समझ से पर साहित्य-क्षेत्र जो कोई भी भाता है वह धपनी धारणा की प्रेरणा से ही भाता है। यह बूमरी बात है कि परम पद को प्राप्त कर सके वा न कर सके। स्कूल में सभी लड़के तो नाभी धीर गोखने नहीं हो जाते न सभी 'भारत सम्पादक हो जाते हैं पर वह कद्ना कि वे केवल विद्याभ्यास का स्वाँग रखने धाते हैं ऐसी बात है जिसका कभाव जामोरी है। फिर

हमने यह दावा तो नहीं किया कि हंस का 'ध्यात्मकभाव' धर्म साहित्य बनेगा हम धर्म ऐसी हिमालय करते भी—क्योंकि हम प्रोपगेंडिस्ट हैं—तो 'भारत सम्प्रादय' जैसे मन्तवी पुस्तक को हमारे बाने की उपेक्षा करनी चाहिए थी। लेकिन साहित्य के कूड़े करकट से ही धर्म साहित्य की सृष्टि होती है। कोई धर्म साहित्य के सिक्के का इरादा करके धर्म साहित्य की रचना नहीं कर सकता। जिस पर ईश्वर की कृपा होती है वही इस पद को पालता है। हम तो कहते हैं कि एक मामूली मजदूर के जीवन में भी खोजने से कुछ ऐसी बातें मिल जायेंगी जो धर्म साहित्य का विषय बन सकती हैं। केवल देखनेवाली धीरे धीरे निकलनेवाला प्रथम चाहिए। धाने बनकर आपने इससे भी ज्यादा मार्ग की बातें कही हैं—

'हमारे देश में ध्यात्मकता निकलने की परिपाटी नहीं रही। यहाँ की धार्मिक संस्कृति में उसका विधान नहीं है। यहाँ के सन्त हिमालय की कन्दराओं में गमक बिरबरासि की समृद्धि करते से धीरे करते हैं। प्राचीन भारत अपना इतिवृत्त धीरे अपनी ध्यात्मकता गूँथ कर धाम धिर जीवन का रहस्य बतलाता है धीरे जिन्होंने बाबाएँ सिखी वह जिना बने। इस युग के महापुरुष महात्मा गांधी ने जो ध्यात्मकता सिखी है उसकी मूल भावना है, प्रायश्चित्त धर्मात् वह केवल गकारात्मक योजना है, परन्तु प्रेमधर्म की वैसी ध्यात्मकताएँ सिखा रहे हैं यह बतलाने की जरूरत नहीं है।

फिर वही हृदय शब्दाङ्गण, वही रहस्य मरी बाँटें जो सुनने में घूँट पर वास्तव में निरर्थक है। भारत की धार्मिक संस्कृति में समाचारपत्रों का बिचार जो तो नहीं है। फिर आप क्यों 'भारत' का सम्प्रादय करते हैं? प्राचीनकाल में बहुत-सी ऐसी बाँटें थी जो अब नहीं हैं और बहुत-सी ऐसी बाँटें नहीं थी जो अब हैं। तब कोई धर्मोपदेशी का एम ए भी नहीं होता था। मैं आपसे पूछता हूँ आप धर्म के नाम के सामने बाजपेसी और एम ए की उपाधियाँ क्यों लगाते हैं? केवल ध्यात्म-विज्ञान के लिए या इसमें धीरे कोई रहस्य है? भारत के सन्त हिमालय में घस गये धर्म साहित्य की सृष्टि भी कर गये नहीं तो धाम आप उपनिषद्, वेद रामायण और महानारद के इरण करते हैं? कानिवास धीरे धाम धीरे भास धीरे बास न साहित्य सिखा या नहीं? या वह भी मस मसे धीरे उनके नाम से ध्यात्म-विज्ञान के इच्छुकजनों ने पुस्तकें लिख डालीं? प्राचीन भारत में अपनी ध्यात्मकता नहीं गूँथ की कमी नहीं उनको ध्यात्मकता धाम भी मूर्ध की भाँति कमरू रही है। हाँ केवल उनका रूप यह नहीं था। उन्होंने अपनी ध्यात्मकता मन्त्रों और श्लोकों और ध्यात्मानुभावों के रूप में लिखी। हम धाम गण-नेत्र में धीरे शार्दूलकी मिला रहे हैं। साहित्य में कल्पना भी होती है धीरे ध्यात्म-धनुमध भी। वही जितना ध्यात्मधनुमध अधिक होता है, वह साहित्य उतना ही बिरन्धावी होता है। ध्यात्मकता का धाम है, कि केवल ध्यात्म-धनुमध मिले जायें उपाय कल्पना का लेख भी न हो। बड़े-बड़े लोगों के धनुमध बड़े-बड़े होते हैं। लेकिन जीवन में ऐसे चिन्तने ही

घबराए पाते हैं जब छोटों के अनुभव से ही हमारा कल्याण होता है। मुई की घबराहटसवार नहीं काम दे सकती।

घाये बस कर सहयोगी ने फिर एक घातक विवादास्पद बात कही है। मुझे—

‘साहित्य को केवल बाड़ी-बिनास माननेवासे धारमी उसके उपयोगितावाद की दुहाई दे सकते हैं। बस यीशु प्रेमचंद जो ने सुरेन्द्राब मैगर्जी बगरह का नाम लेकर भी परन्तु हम तो उसे बहुत ही साधारण कोटि की धारणा मानते हैं। लौकिक उपकार ही साहित्य की बसोटी नहीं है और न वह साहित्यकार के विकास में सहायक बन सकती है। नीति के बोहे लिखने के दिन बये। इस समय हिन्दी ने रचनाकारों को अपने सत्कार और अपनी साधना की आवश्यकता है। दूसरा की भासाई का बीडा के घाये कमी उठावेंगे। फिर इस साधारण परोपकारी दृष्टि से भी धारकता लिखने के मौख्य हिन्दी में स्थित धारमी है। विरले ऐसे महत्कारित हैं जिनकी जीवनी हिन्दी बन्ता की पय-नियामक बन सकती है।

इन वाक्यों का क्या अभाव दिया जाय ? जब कोई कहे जाय कि सत्कार में धार घाये ही धार बसते हैं तो उसका अभाव ही क्या हो सकता है। एक धारमी अपने जीवन के एक धारके सामने खड़ा है। धारमी धारता के संघर्ष और संघर्ष लिखता है, धारसे धारमी बीती कहकर अपने विचार को शान्त करना चाहता है। धारसे धारमी करके धारन उठानों के धारित्व पर धार सेना चाहता है। धार धार कहते हैं वह बाधि-बिनास है। बाधि-बिनास धारमकता लिखना नहीं जाती कहना है। धारिता का रूंगार-बखान करना है। धारन हारक-पट को धारमी ठोकरों को धारमी हारों को प्रकट करना धार बाधि-बिनास है। तो फिर साहित्य बाधि-बिनास ही है और इसके सिवाय कुछ नहीं है।

जब उही साहित्य की उपयोगिता की बात। साहित्य का मूलाकार तय सुन्दर और रिज है। साहित्य की धारमी मनुष्य का जीवन है। कमी-कमी धार और धारन बीजनी धार। पर उसका उद्देश्य भी तो कुछ हुआ। क्यों सत्कार के मरण पुरुषों ने साहित्य की रचना की ? बिना किसी उद्देश्य के ? हम उन्हें इतना विध्वंसारी नहीं समझते। केवल धारमी धारता की शान्ति के लिए ? इसके लिए लिखने की जरूरत न थी। साहित्य का धारन उपयोगिता की आवश्यकता बा नहीं है। जो धारन कलाकार हैं वह उपयोगिता को धारन रक्षण में सफल होता है, जो इतना धारन नहीं है, वह उपदेशक बन जाता है और धारमी हंसी उठवाता है। उपयोगिता मानसिक धारमिक व्यवहारिक या केवल मनोरंजक हो सकती है। मुख्य करके धारमी की संस्कृति ही उसका धारन है। धार बाड़ी पुस्तक या धारन में उपयोगिता का धारन नहीं है, वह साहित्य नहीं कुछ भी नहीं। ‘बीजांशु’ को ही साहित्य कहिएगा ? धारमक ने तो साहित्य लिखा ? धारमी धारन धारन ने भी तो साहित्य रचा ? क्या धारमी कुछ भी उपयोगिता नहीं है ? धार उ-

गयी यह बात कि हिन्दी में ऐसे लिखनेवाले मिलने हैं जिनकी जीवनो हिन्दी जनता को एक-निष्ठा बन सकती है। आपका क्या है एक भी नहीं मेरा क्या है कि मेरे घर के मेहतर के जीवन में भी कुछ ऐसे रहस्य हैं जिन्हें हमें प्रकाश मिल सकता है। घण्टर यही है, कि मेहतर में साहित्यिक बुद्धि नहीं केवल म विवेचन शक्ति होती है। साहित्यकार के विकास के घोर क्या कारण हैं ? या तो अपने अनुभव या दूसरों के अनुभव। किसी भी मनुष्य का जीवन इतना शुद्ध नहीं है जिसमें बड़े से बड़े महत्त्वपूर्ण के लिए भी कुछ न कुछ विचार की सामग्री न हो। महत्त्वपूर्ण इतनी तरह बनती है। घुरे पर से भी फूल को बुन लेना निषिद्ध नहीं कहा जा सकता। एक महत्त्वपूर्ण से किसी ने पूछा था—घर इतने बुद्धिमान कैसे हुए ? उसने जवाब दिया—मुझों की सोहबत से।

यहाँ तक तो ऊपर की बातें थीं। अब तब की बात सुनिए। श्रीकृष्ण बाबूजी की कामना है—

‘परन्तु जब ‘हंस’ की घोर से लिखा गया कि आत्मकथाओं को निरन्तर ही तब मैंने उपर्युक्त टिप्पणी लिखी थी जिस पर विचरकर प्रमत्त भी मिलते हैं। ‘हंस’ को मेरे सम्बन्ध की कल्पना नहीं है। प्रमत्त भी यदि साहित्यिक लिप्यन्तार का पाठन नहीं कर सकते तो ऐसा न करने से उनकी असहिष्णुता का असत्य घोर असत्य रूप पाण्डु करती है, सबसे दूसरों को नहीं उनको घोर उनके घर को ही बलि उठानी पड़ेगी—एसी घातक है।

आत्मकथा है ‘आमरस’ के अनुदेशनीय सम्पादन महोदय को इन परिस्थितियों पर कोई टिप्पणी बनाने की जरूरत भी कल्पना न मान्य हुई। आप मुझे एक पत्र भेते हैं मैं कृतज्ञ हूँ मुझे आरपी टाय की कल्पना नहीं मेरी भी इच्छा होगी कब मा। मैं आपकी टाय का पाठन नहीं हूँ। आपने आत्मकथाओं के विकास का विरोध किया। आप ही के जैसे बुद्धि घोर विवेक रखनेवाले बहुत से भाव्यों ने आत्मकथाओं के विकास का समर्थन किया। घनर मस्तिष्क न हा तो मैं ‘आमरस’ के सम्पादन को भी समर्थन ही रूप सकता हूँ। मैं मानता हूँ इतनी ख्याति से मुझे वह भाष्य न लिखना चाहिए था। मुझे उम्मीद थी कि घोर बहुत कुछ परिशोध हो जाने पर अब भी है। लेकिन यह कहना कि हम आत्मकी बात नहीं मानते कठोर होते हुए भी उतना कठोर नहीं है, जितना वह कहता कि तुम असत्य हो घोर असत्य हा घोर इसका उमियाडा तुम्हें उम्मीद पड़ेगा। लेकिन जब आत्मकथा को बात बनती है तो आरपी संयत रहने पर प्रयास करने पर भी बीधना ही जाता है। घंटे में हम श्रीकृष्ण मंदपुरारे की बाबूजी से सभ्यता के साथ निवेदन करते हैं कि मेरी ता आत्मकी-बुद्धि जिन्नी तरह बट गयी घम तो हाव न सगा हाना कि कोसिष्ठ बहुत की घोर अब इस किन्तु से हूँ कि कोई घाँट का पूरा रईम घंटे आप तो अपनी कोई रचना जैसे समर्थन कर हूँ, लेकिन आपकी अभी बहुत कुछ करना है बहुत कुछ सीधना है, बहुत कुछ रचना है। आशा बहुत आत्मकी बीध है, लेकिन संसार में बने

से बड़े धारतवाहियों को भी कुछ न कुछ भुलना ही पड़ता है। यह न समझिए कि जो कुछ आप समझते हैं, वही सत्य है, दूसरे गिरे गाबधी हैं। गठमेद होगा स्वामाजिक है, लेकिन जिससे मतभेद हो उन्हें भी न समझिए। जिसे आप भीचा समझें वह आपकी पूजा न करेगा। अब मुस्सा झुक बीबिए। आपने बिगड़ कर मन को शांत कर लिया हैने आपके बिगड़ने का ध्यान उठाकर मन को शांत कर लिया। भाइए, हाप मिता लें।

मार्च १९३२

## पत्रों के ग्राहकों का आपत्तिजनक व्यवहार

भारतवप मे पत्र-पत्रिकाओं की जो धरा है, वह किसी से छिपी नहीं है। हिन्दी में तो बी-एफ को छोड़कर और सभी जाने पर चल रही है। प्रश्न होगा—कब सभी को चाटा हो रहा है, तो वे कब क्यों नहीं कर बी जाती? जिस बीब के ग्राहक नहीं उसे तैयार करम से कायदा? लेकिन क्या हमारे स्कूल और कॉलेज या विद्यालय कले पर चल रहे हैं? उनका काम सिखा का प्रचार करना है, अपना काम कर रहे हैं। इस पत्रिच उद्देश्य के लिए मुकसाल उठाना बुी बात नहीं। पत्र-पत्रिकाओं का भी यही काम है। वे विचारों का प्रचार करती हैं और कुछ मुकसाल उठाने को तैयार रहती हैं, लेकिन जिस तरह स्कूल या कॉलेज क छात्र माह्वार प्रिस वेना बन्द कर दें तो विद्यालय मुकसाल उठाने के लिए तैयार होने पर भी न चल सकेगा उसी भाँति प्रत्येक पत्र को ग्राहकों पर भी कुछ तकिया करना पड़ता है। वह इस प्रकार के काम में एक तरह से अपने पाठकों को भी सहयोगी बना लेता है। पाठक बार व या ब्रह्म व देकर कमल पत्रिका के ग्राहक ही नहीं होते उस धस्ता द्वारा होनेवाले प्रचार के क्षेत्र के भागी भी होते हैं। यहाँ केवल ग्राहक और हुकलवार का गला नहीं है। ऐसी वसा न अब हम देखते हैं कि पाठक पत्रिकाओं के साथ अपने वक्तव्य और जिम्मेदारी का विलकुल विचार नहीं करते तो बड़ा दुःख होता है। आप किसी पत्र क ग्राहक रहें या न रहें, यह आपकी सुरी। पत्रों के व्यवस्थापक यह ता चाहते हैं कि उनके ग्राहक जितने ही ज्यादा होंगे उतना ही उन पर आर्थिक भार कम पड़ेगा। इसीलिए वे पाठकों की अनुमति करते रहते हैं लेकिन पाठक को इस बात का पूरा अभिप्राय है कि अपना जल्दा पूरा हो जाने के बाद वह नये वप के लिए ग्राहक बने या न बन लेकिन जितना धन्य हो कि वे बी पी की सूचना पहुँचते ही एक काई जालकर अपने इलाकार की सूचना दे दें लेकिन धनुभव यह है कि तीन-तीन महीने पहले से सूचना देने और बार-बार निवेदन करने पर भी कि 'यदि आपको धनने नाम पत्र का ग्राहक बनना स्वीकार न हो तो आप एक काई द्वारा इतना दे बीबिए'



शोर सूचना नहीं आती। मगर जब इस चीज को प्राचीन सिप्टाचार के अनुसार अनुमति का सम्बन्ध समझकर पत्र बी० पी० से भेज दिया जाता है तो प्राहक उसे गुरुरत लीटा बैठे हैं। परा भी नहीं साकते कि बी० पी० के भेजने में निश्चयता रख पड़ा होगा उनके नाम की पत्रिका छापने में भी कुछ न कुछ लक्ष पड़ा ही होया और बफ्तर को जो निहा-परी करनी पड़ती है वह समझ। और और तो यह है कि ऐसे कृपातु पाठको में प्रच्छे-प्रच्छे पढ़े-सिखे सम्भव होते हैं। अपने हीन पढ़े न कर्ष करके पत्रों से प्राठ धान कर्ष कर देना कौन-सी असममनसी या शिष्टता है? इसके सिवा और क्या कहा जाय कि यह भी ह्वाते शरिच के पक्ष का एक चिह्न है जो देश को गुमान बनाये हुए है। जिस देश के शिचित समाज में शिष्टता का इतना सम्भाव्यक प्रभाव हो जहाँ स्वाच की यात्रा इतनी बढ़ गयी हो उस देश का ईश्वर ही मासिक है।

मई १९३३

## जापान में पत्रों का प्रचार

जापान की जनसंख्या सम्भवतः साठे घा करोड़ है। वहाँ व्यापक ही संतीय वैशिक और जो सी पञ्चीस सन्ताहिक और मासिक पत्र निकलते हैं। बाव ईनिकों की प्राहक-संख्या वस में बीस लाख तक है। इन पत्रों की प्रासिक वसा का अनुमान इससे हो सकता है कि 'प्रोसाफा मैनीषो पत्र के कर्षाजय के बसवाने में संतीय साठ खपते सगे दे। टोकियो मीषी' का पत्रन भी करीब-करीब ऐसा ही है। 'सबाही कम्पनी में भी टोकियो में बचीस लाख की लापठ सं एक नितास भवन बनवाया है। एक-एक कर्षाजय में दो-तीन ह्वात प्रादमी काम करते हैं। केवल सम्पादकीय-विभाग में चार-पाँच ही प्रादमी होते हैं। जापान और भारत की सम्भितगत प्रास में इतना बड़ा अन्तर नहीं है। उसकी प्राचारी भी यहाँ की प्राचारी का एक-पाँच सं प्रासिक नहीं है। फिर भी वहाँ के पत्र कियनी उन्नत वसा में हैं। भारत में जो ऐसा शम्भव ही कोई पत्र हो जिसका प्रचार प्रासात ह्वात में प्रासिक हो। इनका कारण तो यह हो सकता है कि यहाँ इरेक प्रास की प्रासल भागा है। लेकिन किन्ही-प्राची प्रान्तों की जनसंख्या जो सम्भवतः जापान की जनसंख्या की इन्ही की पर कीर्ती भी इन्ही ईनिक वहाँ तक हमारा अनुमान है, बीस ह्वात से प्रासिक नहीं पपटा। प्रासिकता सा चार-पाँच ह्वात के प्रास ही रह जाते हैं। एसी वसा में पत्र की प्रासि वरोकर हो मपती है।

फरवरी १९३३

## एक सार्वदेशिक साहित्य-संस्था की आवश्यकता

भारत में विज्ञान और धर्म की इतिहास और पश्चिम की शिक्षा और राजनीति की धारण-बोझिया संस्थाएँ तो हैं लेकिन साहित्य की कोई ऐसी संस्था नहीं है। इसलिए साधारण जनता को धर्म्य प्रान्तों की साहित्यिक प्रगति की कोई खबर नहीं होती और न साहित्य-सेवियों को ही आपस में मिलने का अवसर मिलता है।

बंगाल के बो-आर कलाकारों के नाम से तो हम परिचित हैं लेकिन मुजबूती तामिल सेनमू और मलयनाम घादि भाषाओं के निर्माताओं से हम बिलकुल अपरिचित हैं। घरेबी साहित्य का तो बिक्र ही क्या फ्रांस जर्मनी वर पोर्तुगल स्वीडन बेसवियम घादि देशों के साहित्य से भी घरेबी धनुबाबों द्वारा हम कुछ न कुछ परिचित हो गये हैं लेकिन बंगाल को छोड़कर भारत की धर्म्य भाषाओं की प्रगति या हमें बिलकुल ज्ञान नहीं है। हरेक प्रान्तीय भाषा अपना सम्मेलन धरन-धरन करती है और करना ही चाहिए। हरेक प्रान्त में लोकन कौशिल्य हैं पर प्रान्तीय साहित्यों की केन्द्रीय संस्था कहाँ है? हमारा कयास न ऐसी एक संस्था की खबरत है और यदि साहित्य सम्मेलन इसकी स्थापना करे, तो वह राष्ट्र और हिन्दी की बड़ी सेवा करेगा।

धमी एक हिन्दी ने जो विस्तार प्राप्त किया है वह एक प्रकार से अपनी शक्ति द्वारा किया है। हिन्दी ही एक ऐसी भाषा है जो भारत के सभी बड़े शहरों में समझी जाती है, जहाँ बोनी न जाओ हो। अगर घरेबी बोष न न या बड़ी होती तो धर्म्य प्रान्तों के निवासी एक-दूसरे से हिन्दी ही में बातें करते और प्रक भी करते हैं जबकि नहीं जो घरेबी से धर्नाभिन्न है।

अब वह समय आ गया है कि प्रान्तीय भाषाओं का सम्बन्ध ज्वावा बनियत किया जाय और हमारा संस्कारो का एका सम्बन्ध ही जाय कि हम राष्ट्रीय भाषा का ही नहीं राष्ट्रीय साहित्य का निर्माण भी कर सकें। हरेक प्रान्त के साहित्य की अपनी-अपनी विशेषताएँ हैं। यह आवश्यक है कि हमारी राष्ट्रभाषा में उन सभी विशेषताओं का धार्मिक हो जाय और हमारा साहित्य प्रान्तीयता के धारे से निकसकर राष्ट्रीयता के धर्म में पहुँच जाय। इस विषय में हम धर्म्य भाषाओं के बखबारों की सहायता और महामोव स जितना धाने वह सकते हैं, उतना और किन्ही तरह नहीं बढ़ सकते। जो छो बई बंधना और मघटी के निदान् हिन्दी में बराबर निज रहे हैं और धनुमान किया जा नकटा है, कि हिन्दी का धर्म बनीव फैलता जायया लेकिन ऐसी एक राष्ट्रीय साहित्य संस्था द्वारा हम इस प्रगति को और तेज कर सकते हैं।

धमी हमें बन्वाई जाने का अवसर मिला या। वहाँ हमें मुजरत के प्रमुख साहित्य-विषयों से बाधनीठ करने का हीवाग्य प्राप्त हुआ। हमें मासूम हुआ कि वे ऐसी बंधन के विग स्थितने उत्सुक हैं बल्कि मैं तो बहूँया कि यह प्रस्ताव सभी महानुभावों का या

घोर म हिन्दी साहित्य सम्मेलन के माननीय अधिकारियों से घणुरोध करूंगा कि वे इस प्रस्ताव को कार्य रूप में परिष्कृत करें। हिन्दी का प्रचार समस्त भारत में बढ़ रहा है। यदि साहित्य सम्मेलन ऐसी सस्था का आयोजन करे तो मुझे विश्वास है कि धन्य भाषाओं के लेखक उसका स्वागत करेंगे और हिन्दी का गौरव भी बढ़ेगा और विस्तार भी।

यह कौन नहीं जानता कि भारत में प्रांतीयता का भाव बढ़ता जा रहा है। इसका एक कारण यह भी है, कि हरेक प्रांत का साहित्य भ्रमण है। यह भाषा-प्रधान और विचार-विनिमय ही है जिसके द्वारा प्रांतीयता के सवय को रोका जा सकता है। राष्ट्रों का निर्माण उसके साहित्य के हाथ में है। यदि साहित्य प्रांतीय है, तो उसके पढ़नेवालों में भी प्रांतीयता धमिक होगी। अगर सभी भारतीय भाषाओं के साहित्य लेखकों का वार्षिक परिशेखन होने लगे तो सवय की जगह सौम्य सहकारिता का भाव उत्पन्न होगा और यह निश्चय रूप से कहा जा सकता है कि साहित्यों के मधिकृत हो जाने से प्रांतों में भी सामीप्य हो जायगा। जिन विद्वानों का धर्म हमने नाम ही सुना है उन्हें हम प्रत्यक्ष देखेंगे उनके विचार उनके धीमुख हैं सुर्गे में और उत्सव से बहुत-से भ्रम बहुत-सी संकीकृतार्थ भाषा ही प्राप्त हो जायेगी। अन्त्य हम पी ई एन नामक विश्व साहित्य संस्था का उचित विवरण प्रकाशित कर रहे हैं। जब बड़ी-बड़ी उन्नत भाषाओं को एसी एक संस्था की जकरत मालुम होती है तो क्या भारत की प्रांतीय भाषाओं का एक केन्द्रीय संस्था से सम्बन्ध हो जाना आवश्यक नहीं है? भारत की धारणा अभिम्पक्ति के लिए अपने साहित्यकारों की घोर देख रही है। वार्षिक उनके विचारों को प्रकट कर सकता है वैज्ञानिक उनके ज्ञान की वृद्धि कर सकता है उसका मन उसकी बेचना उसका धान्य उसकी अधिभाषा उसकी महत्वाकांक्षा तो साहित्य ही की वस्तु है और यह महान शक्ति प्रांतीय सीमाओं के अन्तर बकड़ी पड़ी हुई है। बाहर की टाकी हवा और प्रकाश से वह वंचित है और यह वन्धन उसके विकास और वृद्धि में बाधक हो रहा है। सट्टि-घाटाएँ अपने एकान्त पथ पर चलकर मकील और प्रवाह-शून्य हो गयी हैं। इन घाटाओं को समन्वित करके हम उनमें प्रवाह और प्रगति उत्पन्न कर सकते हैं। और यह हिन्दी-साहित्य सम्मेलन का नैसर्गिक कर्तव्य है।

फरवरी १९३४

## हिन्दी लेखक-संघ

हिन्दी लेखक-संघ के मगठन के विषय में भी सरयजीवन जी वर्मा को धान्योत्तन कर रहे हैं उनके विषय में धापने संघठन के लिए एक धपीम प्रकशित की है और धमी ठर के प्रस्तावित विचारों के धाधार पर एक विवरण-पत्र भी बना डाला है। जब सभी धरों में हम समय मगठन होता था रहा है तब कोई कारण नहीं कि लेखकों का भी एक

सगठन न हो। धारा है। अलक्ष्य बग इन आवश्यक समझेगा और भी सत्यजीवन भी बर्मा के पास से प्राप्त करने-यत्र तथा विवरण-यत्र मगाकर प्रस्तावित विवरण को देखकर, सब का सत्य बन जायगा और अपने समुदाय की श्रित-रक्षा में भाग लेगा। भी सत्यजीवन बर्मा ने अलक्ष्य समुदाय से जो अपील की है, वह इस प्रकार है—

मान्यवर महोदय

सेवा-संघ' के सगठन के प्रस्ताव पर पत्रों में काफी चर्चा हो रही है जिसे ध्यान देना होगा। प्रत्येक लोग इस प्रस्ताव से किसी न किसी रूप में सहमत हैं। यह प्रस्ताव नया नहीं। आपने स्वयं भी किसी न किसी समय इस प्रकार की एक मन्त्रा की आवश्यकता का अनुभव किया होगा। प्रस्तुत प्रस्ताव इसी विचारविधि धर्मसाया को पूर्ति के लिए किया गया है।

सगठन का यह युव है। सारा संसार सगठन की घोर दौड़ रहा है। समाज में प्रत्येक धरती के लोग अपना-अपना सगठन कर रहे हैं। यह अत्यन्त वांछनीय है। सब युग बहल गया है। प्रत्येक बग अपने स्वतंत्रों और धारकों की रक्षा के लिए किसी न किसी रूप में बहुमत की आकांक्षा करता है। व्यक्तिगत प्रयत्नों में धारकन कुछ भी नहीं हो सकता। अब तक हमारा एक सच न होगा हम एक मत न होंगे हममें अपने ध्येय की प्राप्ति की उच्छ्रित धर्मसाया न होगी हम उसके निमित्त प्रयत्नशील न होंगे—हम कुछ नहीं कर सकते। इसी हितु हमें सगठन की आवश्यकता होती है।

अब सभी क्षेत्रों में सगठन की आवश्यकता प्रतीत होती है, तो हिन्दी-साहित्य-क्षेत्र इस नियम से परे कैसे रह सकता है? हिन्दी-लेखकों की संख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि होती जा रही है। सभी अपनी शक्ति पहुँच कर अपना और धारकों के अनुसार उसकी सेवा और

जसका बहुत-सा समय और शक्ति मांग देने में गप्ट हो जाती है। उसे धारणरकता है एक केन्द्रीय संस्था को जो उसे अपने व्यवसाय में कुशल सफल बनाने में सहायता पहुँचा सके। उसकी सेवाओं का धारण कर सके और जो उसने मुक्त-दुल में सहायक बन सके। बीरे-बीरे वह समय भी था रहा है जब सेसन-बन्ना एक प्रकार का व्यवसाय समझ था। सभी सम्पन्न नहीं हैं। रोटी का प्रश्न सभी के माथ-साथ मपा रहता है। अपनी धारणरकताओं के निमित्त सब को कुछ न कुछ 'घब' की धारणरकता पड़ती है, अतएव सेसकों के धार्मिक हित की रक्षा के निमित्त उनके लिए समय-कुसमय में धार्मिक सहायता का आयोजन करने के लिए भी एक संस्था की धारणरकता होगी। 'सेसक संघ' की उपयोगिता इस विषय में भी प्रतीत होती है।

महीन हिन्दी-साहित्य की सभी संस्थावस्था है। सभी उसे बड़े माँग से बनना मानना और पालन करना है। वर्तमान साहित्य की मृत्ति में यदि समय और दूरदर्शिता से काम न लिया गया तो आगे चलकर हम एक दिन पछताना पड़ेगा कि हमारी सारी मेहनत व्यर्थ गयी। धार्मिक युग में जहाँ प्रत्येक काम में जीवन के लक्ष्य दृष्टांगोपर होते हैं, वहाँ वह मानना पड़ेगा कि सभी से सारी चट्टाएँ घासखीन ही हैं। अविध्य में क्या होना हम यह नहीं कह सकते परन्तु अविध्य में हम क्या करना है यह हम निश्चय कर सकते हैं। वर्तमान और भविष्य के अनुभव हम अपना सभी कार्यक्रम निश्चय करन में सहायक हो सकते हैं। साहित्य की वर्तमान प्रगति और उसके विषय अनुभवों को सामने रखकर धर्म-व्यक्ति के व्यवहार की कामना कर हमें अपना सभी कार्यक्रम बनाना पड़ेगा जिसमें हमारे सेसक-गण उसके अनुसार चल सकें। हमें अपने सहयोगियों की कठिन माँगों से सतबानसानुबन्ध रक्षा करनी पड़ेगी।

हमारे धार्मिक साहित्य की दशा पर भी यदि ध्यान दिया जाय तो उनकी प्रगति भी कुछ निरुत्साह-सी प्रतीत होगी। पत्रकार और पत्रों ने निश्चित ध्येय और धारण धनी एक-निश्चित नहीं किया है जिसके कारण पत्रों के प्रचार तथा उनकी उपयोगिता में बाधा पड़ रही है। अतः धार्मिक साहित्य की देख-रेख भी हमारा कर्तव्य होना चाहिए। सेसकों को ही सबसे धार्मिक साहित्य का संवाहन है अतः 'सेसक संघ' विशेषरूप से धार्मिक साहित्य का परिवाहन कर सकेगा।

उपर्युक्त सारी बातों को देखकर धारण हमसे पूर्णतः सहमत होंगे कि धर्म 'सेसक-संघ' का संघटन शीघ्र ही हो जाना अनिवार्य होगा। इनकी उपयोगिता के विषय में धारण हमसे अधिक मत्तुष्ट होंगे। हम धारण हैं कि धर्म धारण अपना पूरा सहयोग देकर इस संघ की स्थापना में हार्ण देकर हिन्दी-साहित्य के एक धारण धारणरक कार्य के संवाहन का धर्म करेंगे।

सितम्बर १९३४

## पटना का हिन्दी-साहित्य परिषद्

इन्कीस-बाईस सितम्बर को पटना ने अपने साहित्य परिषद् का कई बरसों के बाद धानेवाला बापिकोत्सव की भूम-धाम से मनाया। हिन्दी के शब्द-जागुर की मातृभूमि की बुजुर्गों की समापत्ति ने धीरे साहित्यकारों का ध्यान अलग था। हम तो अपने दुर्भाग्य से उस समय समिन्धित होने का नीरव न पा सके। शुक्रवार की सन्ध्या समय से ही हमें प्यार हो गया धीरे वह सोमवार को उठता। हम छटपटाकर रह गये। उबिकार को भी इन यही धारा करती रहे कि धाम प्यार उत्तर जायया धीरे हम जैसे जय्ये सेकिन्ध प्यार ने उस बरस गला बोझा बरस परिषद् का उत्सव समाप्त हो चुका था। पटने बाकर बाद पर सोने से कपटी ने बाट पर पड़े रहना क्यासा मुन्नव का धीरे यो भी बीमाटी के समय चाहे वह हमकी ही क्यों न हो बुजुर्गों के मरतनुवार धीरे बर्तमानों के धावेतानुवार काशी के समीप ही रहना क्यासा कन्यालकारी होता है—सीकिन्ध धीरे पारसीकिन्ध दोनों वृष्टियों से। धरतण हमे धारा है, हमारे साहित्यिक बन्धुधों ने हमारी वैद्व्याधिपि मुमाळ कर ही होयी। इस प्यार ने ऐसा धन्धा धरवर हमसे भीन लिया हमका बदमा हम उससे धरवर लेने चाहे इन साहित्य नीति चौकनी क्यों न पड़े। समापत्ति का जो नापख अपकर बाधो मरत के रूप में मिला है वह धम-धम किन्धता स्वाकिन्ध होगा—यह सोचता हूँ तो मही जो बाहता है कि प्यार महोदय कहीं फिर बिसें सेकिन्ध उनका कहीं पता भी नहीं। इन नापख न बीजन है, धावेत है धार्पनिवशन है धीरे साहित्य सेविगों के लिए धारता है धरत धापनं पूर्वको का बोध मस्तक पर लावने की जो बरस कही वह हमारी समरु में न धारी। हमारा धयाम है कि इन पुनवों का बोध बरतर से क्यासा माने हुए है धीरे उनके बोध के नीचे बने जा रहे हैं। हम धरीत में रहने के इतने धारी हो गये हैं कि बर्तमान धीरे मकिन्ध की जैसे हमे किन्धता ही नहीं रही। योरोप धीरे धरिन्धी बर इतीनिप हमारी उपेक्षा कपटा है कि वह हमें पाँच हजार साल पहले के जन्तु समरुटा है, बिसेके लिए धनायबनरों धीरे पिबरापोलों न ही स्वाग है। वह हमारे जोजपत्रं धीरे ताससेको को लाध-मारकर इसलिए नहीं ले बाता कि उनस ज्ञान का धरंन करे, बकिन्ध हमलिए कि धरुं धपने सधहामनों में स्वरकिन्ध ररकर धपने बिजय-धरं को मुक्ति है उती तरह जैसे पुराने जमाने में बिजय की मुट के साथ नर-नारियों की यी मुट होठी थी धीरे बुजुर्गों में उनका प्रधशन किन्धता बाता था। प्राचीन हमे धरत धादरं धीरे मारं देता है तो उनके साथ ही कर्मियाँ धीरे धन्धनिशवास भी देता है। बुजुर्गों धाम राम धीरे इच्छ रामलीला धीरे रामलीला की बस्तु बनकर रह गये हैं धीरे बुजुर्गों धरतनीर धरतनीर बना दिय गये हैं। यह प्राचीन नर मार नहीं तो धीरे क्या है कि धाम भी धरंनय प्राचीन बिजय धन्धे-लामे पड़े-लिखे धादमिनों की काशी संख्या है नरियों में नरकर धपना मन शुध कर लिया करते हैं? प्राचीन उन राट्टों धीरे जालियों के लिए गर्ब की

बस्तु होगी और होती चाहिए, जो अपने पूर्वजों के पुकारार्थ और उनके सापनाओं से घाय मातामता हो रहे हैं। जिस जाति को पूर्वजों से पराजय का क्षयमान और इन्हीं का ठीक ही विरसत में मिला वे प्राचीन के नाम को क्यों रीयें ? ऐसे इतन को क्या हम लेकर जायें जिसने हमारे पूर्वजों को इतना प्रकर्मण्य बना दिया कि वह बलिदान लिखनी ने विहार विजय किया तो पता चसा कि सारा मगर और किना एक विहाम बाचनालय या। विहाम गीय मने से राज्य का साधय पसे ने और अपनी कुटिया में बैठे हुए प्राचीन शास्त्रों में बूबे रहते ने। उनके इव-गिर्य क्या हो रहा है। दुनिया किस गति से बधी जा रही है। उन्हें इसकी खबर न थी। और शाधय बलिदान उन विहामों से मुवाहिम न होता और उनकी बुद्धि क्यों क क्यों बनी रहती तो वे उसी तन्मयता से अपने हास्य पके जाते और साध्यात्मिक विचारों के बालन्य सुटते रहते और समर बीजन की संश्लिष नाल्ये बने जाते। उबर पश्चिम के नासिक समुद्र ने सुधयन का मुवाबला करके संसार विजय कर रहे थे और हमारे बाप शशा बैठे मुक्ति का माग हुई रहे थे। पश्चिम ने जिस बस्तु के लिए तपस्या को उसे वह बस्तु मिसी। हमारे पूर्वज ने जिस बस्तु की तपस्या की वह उन्हें मिसी या मिसेगी। जिसके लिए संसार मिस्या हो और दुःख का पर हो उसकी यदि संसार उपेक्षा करे तो उन्हें शिकायत का क्या बीका है। हमें स्वर्ग की ओर से निरिचल्य रहना चाहिए। वह हमें मिसेया और बकर मिसेया। पनुबंदी की के ही शर्तों में 'बन्धों के बन्धनों के घादी हम स्वामी राम के कथन य भी मुक्ति का गौद हूँने के बजाय बेबाल्य के बन्धन हूँने लगे। और क्यों न हूँने ? बन्धनों के सिवा और बन्धों के सिवा हमारे पास और क्या बा। पंडित लोग पढते थे और योद्धा लोग लड़ते थे और एक-दूसरे की बेइज्जती करतें थे और सड़ाई व फुरसत मिसती थी तो ब्यभिचार कपडे से। यह हमारी ब्यावहारिक संसृति थी। पुस्तकों में वह लिखनी ही डंभी और पवित्र की ब्यवहार में उठनी ही मिस्य और निरुप्ट।

घाने बनकर मभापति की ने हमारे बतमान साहित्यिक मनोबुद्धि का जो चिह्न मींचा है, उसका एक-एक शब्द यथार्थ है—

'हम अपनी इन धारत को क्या करें ? यदि किमी के बोध सुनता हूँ तो तुम्य माल सैठा हूँ और उन धारत को पेट में लेकर फिर बाहर लाता हूँ और अपनी साहित्यिक पीढ़ी को उस मिस निधि की खराब बाँटता हूँ। संसार के बोधों का मैं किना प्रमाद्य मरल विरवासी होता हूँ और यह चाहता हूँ कि मेरी हो लएह मेरा पात्रक भी मेरी मोक-निष्ठा पर विरवाम करे, किन्तु यदि किमी के गुण किमी की मीचिबता किमी की उन्मत्ता की बर्षा सुनता हूँ तब मैं उनसे मिए प्रमाद्य ममूम करने के इबहार लेना चाहता हूँ।

और मापण के बलिदान शब्द तो बडे ही यथार्थ हैं—

‘हम बड़े हों या छोटे हमने घर-घर और व्यक्ति-व्यक्ति में मरने का डर बोया है। हमारे लिए मार डालना ही गुनाह नहीं मर जाना गुनाह हो गया है’ “शास्त्र के साहित्यिक चिंतन पर जिम्मेवारी है कि वह पुरुषाय को दोनों हाथों में लेकर जीने का ऋतु और मरने का स्वाद अपनी पीछी में बोये। यह पुरुषाय सम्प्रदायों से नहीं हा सकता। यह तो कर्म के बगियों ही के करने का नाम है।

अक्टूबर, १९३५

## लंदन में भारतीय साहित्यकारों की एक नयी संस्था

हम यह जानकर सच्चा आनन्द हुआ कि हमारे सुविचित्र और विचारशील युवकों में भी साहित्य में एक नयी स्फूर्ति और जाबुति जाने की धुन पदा हो गयी है। लंदन में The Indian Progressive Writers Association की इसी उत्थय से बुनियाद डाल दी गयी है और उसने जो अपना मैनिफेस्टो भेजा है उसे देखकर यह धारा होती है कि अगले यह समा अपने इस नये माग पर अभी उठी तो साहित्य में नवयुग का उदय होगा। उस मैनिफेस्टो का कुछ अंश हम यहाँ आत्मय रूप में देते हैं—

भारतीय समाज में बड़े-बड़े परिवर्तन हो रहे हैं। पुराने विचारों और विचारों की बड़े हिस्सी जा रही है और एक नये समाज का जन्म हो रहा है। भारतीय साहित्यकारों का धर्म है कि वह भारतीय जीवन में पुराने होमेबामी शक्ति को शब्द और रूप में और राष्ट्र को उन्नति के माग पर चलाने में सहायक हों। भारतीय साहित्य पुरानी सम्प्रदाय के लट्टे हो जाने के बाद से जीवन की यथार्थताओं से भागकर उपस्थान और भक्ति की शरण में जा छिपा है। नतीजा यह हुआ है कि वह निस्तेज और निष्पाठ हो गया है रूप में भी धर्म में भी। और आज हमारे साहित्य में भक्ति और वैराग्य की मरमार हो गयी है। भावुकता ही का प्रदर्शन हो रहा है, विचार और बुद्धि का एक प्रकार से बहिष्कार कर दिया गया है। निष्पत्ती का सचियों में बिसेपकर इसी तरह का साहित्य रचा गया है जो हमारे इतिहास का सम्मान कर रहा है। इस समाज का उद्देश्य अपने साहित्य और दूसरी कलाओं को पुजारियों पंडितों और धर्मगणितोक्त बगों के प्राधिपत्य से निराम कर उन्हें जनता के निकटतम संसर्ग में लाया जाय उनमें जीवन और वास्तविकता लायी जाय जिसमें हम अपने भविष्य को उम्भन कर सकें। हम भारतीय सम्प्रदाय की परम्पराओं की रक्षा करते हुए अपने देश की पतनोन्मुखी प्रवृत्तियों की बड़ी निर्दयता से धालोचना करने और धालोचनमात्मक तथा रचनात्मक कृतियों से उन सभी बातों का संचय करेंगे जिससे हम अपनी संज्ञा पर पहुँच सकें। हमारी धारणा है कि भारत के नये साहित्य की हमारे वर्तमान जीवन के मौलिक तथ्यों का सम्भव



करना चाहिए और वह है, हमारी रीती का हमारी दृष्टि का हमारी सामाजिक व्यवस्था का और हमारी राजनीतिक पराधीनता का प्रश्न । तभी हम इन समस्याओं को समझ सकेंगे और तभी हममें क्रियात्मक शक्ति आयेगी । वह सब कुछ जो हमें निष्क्रियता प्रकटव्यता और अन्धविश्वास की घोर भे जाता है, हेय है वह सब कुछ जो हममें समीक्षा की मनोवृत्ति साठा है, जो हमें त्रिपत्य कर्तव्यों का भी बुद्धि की कठौटी पर कसने के लिए प्रोत्साहित करता है, जो हम कमजोर बनाता है और हममें समझ की शक्ति साठा है, उसी को हम प्रयत्नशील समझते हैं ।

इन उद्देश्यों को मानने रखकर इस सभा ने निम्नलिखित प्रस्ताव स्वीकार किये हैं—

१—भारत के विभिन्न भाग-प्रान्तों में नस्लों की उत्साह बनाना उन संस्थाओं में सम्मेलनों सम्मेलनों द्वारा सहयोग और समन्वय देना । प्रांतीय केन्द्रीय और तबल की संस्थाओं में विद्युत् सम्बन्ध स्थापित करना ।

२—उन साहित्यिक संस्थाओं से जेत जोत पैश करना जो इन सभा के उद्देश्यों के विच्छेद न हों ।

३—प्रगतिशील साहित्य की मूर्ति और अनुवाद करना जो क्यारमक दर्ज में भी निर्देश हो त्रिमते हम सांस्कृतिक व्यवहार को दूर कर सकें और राष्ट्रीय स्वाधीनता और सामाजिक उत्थान की घोर बड़ सकें ।

४—हिन्दुस्तानी को राष्ट्रभाषा और इंडो-रोमन लिपि को राष्ट्र लिपि स्वीकार करने का उद्योग करना ।

५—साहित्यकारों के हित की रक्षा करना उन साहित्यकारों की सहानुभूति करना जो अपनी पुस्तकें प्रकाशित कराने के लिए सहानुभूति चाहते हों ।

६—विचार और राय को आजाद करन के लिए प्रयत्न करना ।

मैनिफेस्टो पर मक्की डा मुन्सरान आनन्द डा के एम भट्ट डा डा सी भोप डा एड मिन्हा एम डी दासीर और एम एल उहीर के शुभ नाम है और पत्रपत्रव्यवहार का पठा—

डा एम धार आनन्द

३२ रमन स्थावर

आनन्द ।

हम इन सभा का हृदय से स्वागत करते हैं और आशा करते हैं कि वह चिरं जीवी हो । हमें आश्चर्य में ऐसे ही साहित्य की उन्नति है और हमने यही आशा अपने सामने रखा है । हंस भी इन्हीं उद्देश्यों के लिए जारी किया गया है । हाँ हम अभी इंडो-रोमन को राष्ट्र-लिपि स्वीकार करने को तैयार नहीं क्योंकि हम नागरी लिपि में संशोधन करने उद्ये इतना पूछ बना मैना चाहते हैं त्रिमते वह भारत की सभी भाषाओं

के लिए समझ रूप से उपयोगी हो। हम यह भी कहना चाहते हैं, कि अगर यह संस्था भारत के उस साहित्य को जो उसके पढ़े-सूने के अनुकूल हो अंग्रेजों में अनुवाद कराके प्रकाशित कराने का प्रयत्न कर सके तो यह साहित्य और राष्ट्र—दोनों ही की सज्जी सेवा होगी। हम हिन्दी लेखक-संघ के सदस्यों से निवेदन कर देना चाहते हैं कि वे इन प्रस्तावों पर विचार करें और उस पर अपना मत प्रकट करें। लेखक संघ के उद्देश्य भी बहुत कुछ इस संस्था से मिलते हैं और कोई कारण नहीं कि दोनों में सहयोग न हो सके।

जनवरी १९३६

## साहित्य सम्मेलन के विषय में

पाठकों का सामुहिक ही है कि इस वर्ष हिन्दी साहित्य सम्मेलन का बतसा ईस्टर की छुट्टियों-में नामपुर में होगा। तैयारियाँ ही रही हैं स्वभाव-समिति बनायी जा रही है। प्रबन्ध मन्त्री भी ने हिन्दी के विद्वानों से निवेदनों के विषय निम्न योजना की है। निम्न ही धारणाओं और पड़े जायेंगे लेकिन हमारे विचार में सम्मेलन को यकीन केवल हिन्दी साहित्य सम्मेलन न होकर ब्रह्म इण्डिया साहित्य सम्मेलन बनने की चेष्टा करनी चाहिए। यदि वह अन्य प्रायों के विद्वानों को नियमित कर सके और जो लोक मार्क-व्यय सेना बल, उन्हें मार्क-व्यय भी द सके तो इससे हिन्दी-साहित्य का बहुत कुछ उपकार होगा। हमें इस बल साहित्य की प्रगति के विषय में भारत के सभी महारथियों से परामर्श करके अपनी कोई नीति स्थिर कर लेनी चाहिए। अथवा हम सब की एक साहित्य-सभा का मेनिफेस्टो प्रकाशित कर रहे हैं। उस पर भी सम्मेलन को विचार करना चाहिए। सम्मेलन में व्यक्तिगत रूप से निम्न पद देने से साहित्य की प्रगति को कोई बिठा नहीं मिल सकती। उसे तो हम प्रगति का संवाहन करने के लिए कोई सिद्धान्त स्थिर कर देने की जरूरत है, जिससे वह साहित्य पर नियंत्रण रख सके। प्रागतिशील और अप्रगतिशील साहित्य में क्या अन्तर है इस पर श्रुत और करके उसे अपना निश्चय देना चाहिए कि वह किस प्रकार के साहित्य को प्राथम्य देना चाहता है और यह माय-प्रदर्शन उसी बल हो सकता है, जब सम्पूर्ण भारत के साहित्य-महारथियों के मत्परामर्श और सहयोग से सम्मेलन अपना कोई मत पक्का कर ले।

जनवरी १९३६

## अखिल भारतवर्षीय पुस्तकालय-संघ

हमारे देश में संस्थाओं और समाजों की विशेष कमी नहीं है किन्तु उनमें प्रथम क्रम ऐसी ही है जो केवल प्रस्ताव पास करने में ही बहाने हैं ! इसका मुख्य कारण है सच्ची सपुनर्जाति उत्साही कार्यकर्ताओं और सहानुभूतिशील जन-जाताओं का अभाव । देश में मुद्रा का अभाव भी संस्थाओं और समाजों की उत्पत्ति में बाधक है किन्तु शिक्षा प्रचार-द्वारा अधिकांश को पूर करने का प्रयत्न भी संस्थाओं और समाजों-द्वारा ही किया जा सकता है । इसलिए मुख्य अभाव सच्चे स्वयंसेवकों और दानियों का ही है । इसी अभाव के कारण बहुतेरे सम्मेलन और सत्र निर्बाध हो रहे हैं । अखिल भारतीय पुस्तकालय-संघ की भी यही वृत्ति है ।

हमें कुछ ऐसा स्मरण है कि साहौर की स्वतंत्रता-सोपिछी कांग्रेस के समय अन्त में महाप्रबोधन आचार्य प्रफुल्लचन्द्र राय के समापनत्व में हुआ था । उसमें कई महत्वपूर्ण प्रस्ताव पास हुए थे । समापन के बाद में भी पुस्तकालयों के संगठन की एक अच्छी स्कीम थी परन्तु प्रस्ताव और स्कीम को कार्य के रूप में परिणत करने के लिए कुछ उद्योग हुआ या नहीं इसका हम पता नहीं क्योंकि पत्र-पत्रिकाओं में कभी इसकी खर्चा खसने में नहीं आया । प्रायः सम-सोसाइटियों का यह अंग देखा जाता है वे सामान्य रूप में ही रहती हैं और धन के अन्त में महाप्रबोधन करने के लिए समापन के अनुसार धारि की खर्चा से पत्रों में कुछ धन मचा देती हैं । अब इस भारतीय पुस्तकालय-संघ की खर्चा भी सिद्ध नहीं है । क्योंकि आगामी ११-१४ सितम्बर को कमकरो में उसका एक बृहत् अधिवेशन होने का ख्याल है । उसके सम्बन्ध होने अगामलाई-बिरबदिविद्यालय के पुस्तकालय डॉक्टर टामस । कमकरो की इन्पिरियल लाइबरी के पुस्तकालय मिस्टर अतादुस्माह उसके मन्त्री का काम कर रहे हैं । प्रतिनिधि-शुल्क चार रुपया निश्चित किया गया है । धारणा ही नहीं विरचान भी है, कि सम्मेलन बहुलाय में सफल होना । विद्वानों के पाठिद्वय पूरा भाग्य होवे । विद्वानों के अन्त में अतिथि से निश्चय हुए अन्तर्गत प्रस्ताव भी पास होंगे किन्तु प्रति बंधनी तरह रसम पूरी करने से कोई ठोस काम नहीं हो सकता । हम सम्मेलन के अन्तर्गत में यह धारणा करते हैं कि अब इस बार कोई ऐसा काम-कर्म निर्धारित करें जिसे क्रियारूप रूप देने में विशेष कठिनाई न हो । उनके प्रारम्भिक उद्योग में सफलता होने के लिए ईश्वर से प्रार्थना करते हुए हम कुछ मोटी-मोटी बातें उनके सामने पेश करते हैं किन पर ध्यान दिये बिना हमारा मतलब है कि हम में सजीवता और कार्य-धमता नहीं पा सकती । बार्ने ये हैं—

मिस्री केन्द्र स्थान में सत्र का निश्चित कार्यक्रम होना चाहिए । व्यवस्था ऐसी की जाय कि कार्यक्रम में नियमित रूप से बराबर काम हो । प्रारम्भ में दो-चार बुक ड्राफ्ट लिए अपने बीच-बीच की मेबाएँ धरित करने की तैयारी हो । त्याग के कारणों पर

मन्त्री मोटती है। त्याग ही की सभ्यता में सिद्धि बसती है। दो-बार त्यागी युवक ही सारे देश को पुस्तकालय-सम्बन्धी आन्दोलन की धोर धातुएं कर सकते हैं। कोई एक युवक समस्त देश के पत्रों में निरन्तर पुस्तकालय सगठन की चर्चा करते रहने का भार उठा ले। वह पत्र-गम्यार्थकों से भी प्रख्या करता रहे कि वे उसके नाम का महत्व समझ कर उसकी सहायता करें। टिप्पणियाँ लिखा करें। धर्मीयें किया करें। वह नियमानुक्रम धारणक पक्ष्यबहार करके ही संघ को सजीव सस्था रखे। ब्रूचण युवक मास-अर सारे देश में भ्रमण करके प्रचार-काम कर। लोगों की सहानुभूति प्राप्त करने का प्रयत्न करे, मन्त्री का सहयोग प्राप्त करे मन्त्री बगहों के छोटे-बड़े पुस्तकालयों का निरीक्षण करके एक रिपोर्ट तैयार करे। हमाग अनुमान है कि देश-अर के पुस्तकालयों की सूची संघ के पास तैयार होगी। उस सूची के सहारे सब पुस्तकालयों के सभामकों से लिखा-पढ़ी करके संघ से सम्बन्ध कराने की आवश्यकता है। संघ के कार्यालय में देश अर के पुस्तकालयों की नियमावली और वार्षिक काय-विबरणों का संग्रह होना चाहिए। अब तक जो संघ के वरिष्ठेशन हो चुके हैं उनकी रिपोर्टों और स्पीचों का भी संग्रह प्रकाशित करना आवश्यक है। संघ की धोर से एक वार्षिक रिपोर्ट भी प्रकाशित हुमा करे जिसमें देश-अर के पुस्तकालयों का मन्त्रित विवरणात्मक परिचय दिया जाय। वह रिपोर्ट देश-अर के वित्तिक पत्रों में प्रकाशित कर भी जाय। यदि कुछ दिनों के बाय स्थिति अनुकूल हो जाय जिसकी पूरी सम्भावना है तो संघ का एक मुखपत्र भी निकाला जा सकता है।

हमारी समझ में यह योजना असाध्य नहीं है। ही इनमें आवश्यकतानुसार संशोधन हो सकता है। हम सब के सभामकों का ध्यान इतर धातुएं करना चाहते हैं। साय ही हिन्दी-पत्रकारों और पाठकों से भी हमारा अनुप्राय है कि वे संघ की सहायता में यथासक्ति हाय दें। इन देश में पुस्तकालयों के सगठन की बड़ी आवश्यकता है। सपटित होकर वे शिक्षा-प्रचार के कर्म को बहुत धावे बध सकते हैं। ज्ञान की व्योधि का प्रसार करने में पुस्तकालय आधुनिक स्कूल-कालेजों से भी बड़कर है। देश में ज्ञान का आलोक फैलाने के लिए पुस्तकालय ही सर्वोत्तम साधन है। पुस्तकालय की सपमोविता को कोई भी अस्वीकार नहीं कर सकता। यदि मन्त्री सपन से इस विधा में काम किया जाय तो आशा है कि देश के बनी-भानी लोग अवरय हो इतर ध्यान देंगे।

जून १९३३

## श्रीकृष्ण और भावी जगत

मनुष्य को प्रायि से मुक्त और शक्ति से जोड रही है और धंत तक रहेगी मालव सभ्यता या इतिहास इसी जोड की कथा है। जिस प्रायि में हम रहस्य को जितना अधिक समझा वह उतनी ही सभ्य और जितना ही कम समझा उतनी ही अमभ्य ममम्भी

जाती है। सोय मित्र-मित्र भागों से चम। किमी ने योग का भाग लिया किमी ने तप का किमी ने भक्ति का किमी ने ज्ञान का किन्तु त्याग मभी भागों का त्यागो लक्ष्य था। 'निवृत्ति को बुझाई सभी के रहे है। मुन का मुन निवृत्ति है सब ने इसी तरह का प्रतिपादन किया। मोक्ष प्राप्तिके बन्धन में छुन जाना सुख और शान्ति की चरम सीमा है। मोक्ष-प्राप्ति के मित्र-मित्र भागों पर दीपक सब के लिए एक है—निवृत्ति।

इसका परिणाम क्या हुआ ? जिने कम का धनुराय हुआ उसने संसार और संसार के व्यापार से मुझे मोड़कर जंगल की राह ली। कम बचन है कम से भागो नहीं। यह बचन पथी में बंधे होगा। तपस्वन धाराएं हो गये। धाव भी मोक्षार्थी वसी धर्म-रत्न पर ध्यान है। बुद्ध ने भी निवृत्ति को ही प्रबल रखा जन मत में भी इसी तरह की प्रबलता रही। निरालों के बिहार बस्ती से दूर बने और वहाँ निर्वाण-वद प्राप्त होन लगा। ईसाई धर्म में भी पोप का राजाधों पर अधिपत्य हुआ धार्मिक बने और कमजोरी सोय बस्ती से दूर जंगल में रहने लगे। इस्लाम ने भी यही शिक्षा दी कि दुनिया से निरत न भगामो। संकर, रामानुज बल्लभाचार्य सभी निवृत्ति भाग के उपासक रहे और यदि अन-साधारण जन भाग पर कमने लगते तो धाव संसार में मानव-बंध मिट गया होता। किन्तु काम क्रोध माह मोभ न मोक्ष प्राप्ति की निवृत्ति में सब बाधा जाती। यह गौरव भयबल हुआ को ही है कि उन्होंने निवृत्ति और प्रवृत्ति दोनों को समुक्त कर लिया। प्रवृत्ति-मुक्त निवृत्ति और निवृत्ति-मुक्त प्रवृत्ति के मात्रा की मृष्टि की। कम करो लेकिन उसमें बंधो मत। कम बचन नहीं है, कम से कम की धारा रचना बंधा है। यज्ञाय जो कम किया जाय जो निष्काम हो उससे बचन नहीं होता। वही मुन और शान्ति का मूल है।

सोबिए किन्ना महान सत्य है ! कितना मौखिक धारण ! निवृत्ति मात्रक स्वभाव से मत नहीं जाती। उसके भाव पर बसनेवाले विरिष्ट जन ही होमे। जन-भावारण के लिए वह माग नहीं है। फिर उनके लिए धर्म का क्या धारण रहे जाण है। बर्खाने धर्म पर चमना। यही ऊच-नीच का भेद उत्पन्न हो जाता है। निवृत्ति-भाग का पवित्र कम के बंधन में फिने हुए प्राधियों में ध्यान को यदि ऊंचा नहीं तो पूषक धारण समझता है। कम मनुष्य के लिए स्वामाधिक क्रिया है। धार्यो हैं तो बैसया पवि है तो बनेगा पद है तो लक्ष्य। कम के पूष विनाश को तो कल्पना भी नहीं हो सकती। ममाधि भी तो कम है। मौन रत्ना भी कम है। मोचना भी कम है। निर्य कम हो या निमित्त कम धाव कम के फेरे से नहीं निकल सकते। फिर कम सदैव बंधन ही क्यों हो। उससे परमाध भी तो किया जा सकता है। नया भी तो की जा सकते हैं। तब यह निष्काम कि स्वाम भाव से कोई कम न किया जाय बरन् विगने कम ही यज्ञाय भाव से निष्काम भाव से ही किने जायें। यहाँ कम का धारण तो मिपठा है, कम है। उत्पन्न होनेवाला नुग नहीं मिलता। न कोई भेद है न उपे है। कम में बुरपाय भी तो है।

लेकिन कर्मयोग के धार्मिक पर बने रहना छोटी बात नहीं है। जयस में समाधि जपाकर बैठ जाना उतना कठिन नहीं है बितना कर्तव्य की बेसी पर अपना बहिराल करना। अपने कर्मों में हानि या लाभ से उवासीन रहना बीरों का ही काम है। और ऐसे कर्मयोगी संसार में बिरले ही होने हैं। ममत्व क पजे न निकलना सिद्ध के मुँह से निकलता है। समय-समय पर ज्ञानी पुण्य अवतरित होते रहते हैं और ममत्व के बंधन को दुःख के मूस को तोड़ने का उद्योग करते हैं पर यह बंधन गटके पाकर कुछ और बढ़ होता जाता है। यहाँ तक कि धाम इस संसार में मण्डल का अर्कतक राज्य है। भारतीय ममत्व पर कुछ रोक की कुछ निग्रह था क्योंकि वह अपने परम्परागत संस्कारों से अपने की मुक्त नहीं कर सकता था। कुछ और यशोक जैसे बरिच को प्रमुता को मात मारकर ज्ञानावन के लिए निकल जाते हो संसार में मुश्किल ही से मिलेंगे। भारत की संस्कृति धर्म की चिन्तित पर लड़ी की बनी थी। हमारे समाज और राज्य की सम्पुष्ट व्यवस्था धर्म पर अवलम्बित थी। लेकिन पारंपारिक देशों न धर्म को जीवन से पुनः रखा गया जिसका फल यह हुआ कि धाम संसार में जीवन-संधाम ने प्रवृत्त रूप धारण कर रखा है। और यह ईरबद्धीन सम्पुष्ट किसी सकार्यक रोक की भाँति फैलती जा रही है। जातियों और राष्ट्रों में अविश्वास है, धास में संघर्ष। स्वामी और मजूर धनीर और गरीब में भीषण युद्ध हो रहा है। जन और प्रमुता की तुच्छता एक विकृत संतु की भाँति समस्त धर्म संसार को नियमनो बनी जा रही है। उदार की जो युक्तियाँ सोची जाती हैं वह फलीभूत नहीं होतीं। हरेक राष्ट्र मरत्न बूसरे की बरत रहा बेलने की बात में लया हुआ है। निजम जातियाँ उनके वेरो के नीचे पड़ी अविम साँठे में रही हैं। मनुष्य एक महीन बनकर रह गया है। जीवन न कुचिमत बढ़ती जाती है। सम्पदा के पीछे संसार पागल हो रहा है। उसकी प्राप्ति में किसी प्रकार के बंधन नहीं बसबाल राष्ट्र निजम राष्ट्रों का बसबाल व्यक्ति निजम व्यक्तियों का मसा दबा रहे हैं। संघर्ष की व्यापक ध्वनि सुनायी दे रही है। कहीं शांति नहीं कहीं सुख नहीं। ईरबद्धीन उद्योग में शांति कहीं। हम नहीं समझते कि किसी युव में स्वाध का हटना प्राबल्य था। बिचारवान लोग कह रहे हैं कि यह प्रलय का मास है, वह संघर्ष एक दिन ध्वनि की भाँति फैलकर सारे राष्ट्रों को भस्म कर दामेगा।

ऐसे समय में संसार के उदार का एक ही उपाय है और वह है कर्मयोग। इसी उल्ल को सम्पुष्ट रखकर हम ममत्व स्वाध और संघर्ष के पंजे से छूट सकते हैं। स्वाध का विमुक्त होना ही प्रेम का प्रसार है, उसी भाँति जैसे धर्मकार का हटना ही प्रकाश है। हिंसा और अप्रेम से बचा हुआ संसार पंगु हो रहा है। हिंसामय अवतरण और हिंसा मय एकत्र में विरोध अन्तर नहीं है। धार्मिकीतिकवाद के बमहीन उल्लों से उदार का उदार न होना। उसमें अध्यात्मवाद की स्फूर्ति जालगी पड़ेगी। धार्मिकीतिकवाद कोटप का धार्मिकार नहीं। हमारे यहाँ चार्बाक के सिद्धान्त भी उसी पक्ष का प्रतिपादन करते

है। पर योरोप का ईश्वरहीन सुखवाद ही आज ससार पर धाबिपत्य जमाये हुए है। 'धबिफार प्रान्धियों का धबिक से धबिक उपकार सिखान्त रूप से निर्णय है सेकिन्त धव तक बहु सिख न हो जाय कि 'उपकार से क्या धमिप्राय है तब तक इस मत का भारत समर्पण नहीं कर सकता। जिस तरह 'उपकार शब्ध का ब्यवहार किया जा रहा है उससे तो यही बियत होता है कि 'उपकार का प्राराय स्वाध के सिखाम धीर कुछ नहीं। यह स्वार्थ-बुधि बतमान धवत को संघाम का श्रेष्ठ बगाये हुए है। समाज म जो बियमता केतो हुई है उसका कारण यही स्वार्थोपासना है। जब तक कर्मयोग के तत्व ब्यबहृत न हूंगे संसार स्वाध के पंजे से बजा पड़ा रहेगा। कर्मयोग ही यह तत्व है जो स्वाध को सिट्कार पराध की धब्बा फहरायेगा। योरोप मे काँट हीमेस शपिनहार धादि बलानिको ने धम्मात्मवाद के बीज बो रिये है। धनेरिका म बेचान्त-उत्थों का जिस उत्साह से स्वाधत किया जा रहा है, भारत के बयोपदेशकों धीर धार्शनिकों का बहाँ जो सम्मान हो रहा है, उससे अनुमान किया जा सकता है कि हवा का प्ल क्लिबर है। यही योग जो स्वाध के सब से बड़े उपकार है उससे धब बिरक्त-से होते जा रहे है। बिचारतीय मनुधम प्रत्येक राष्ट्र में बाह्य ब्यवहारों से पराडमुख होता जा रहा है। योरोप ने अपनी परम्परागत संस्कृति के अनुसार स्वाध को सिटाने का प्रयत्न किया है धीर कर रहा है। समन्टिवाद धीर बोलठेविनम उसके बहु नये धाबिफार है जिनमे बहु संसार मे सुदान्तर कर देना चाहता है। उनके समाज का धाचर इसके धावे धीर जा ही न सकता बा। किन्तु धम्मात्मवादी भारत इससे संतुष्ट होनेवाला नहीं। यह धपने परमोक को ऐहिक-स्वाध पर बनिदान नहीं कर सकता। यह धम्मात्मवाद से अन्कनर दूर जा पड़ा बा जिसके फलस्वरूप उसे एक ह्वाार धव तक युतामी करनी पड़ी। धबकी यह केतेगा तो संसार को भी धपने साध बना देना धीर उध ध्यापन ध्रातृभाव की स्वापना करेना जो ससार के सुख धीर शान्ति का एकमात्र साधन है। धबकी इस बागृति में अंध-नीच धोटे-बड़े का भेद मिट जायगा। समस्त संसार में धहिंसा धीर ध्रम का ब्यभोग युतापी देगा धीर भगवान् कृष्ण कर्मयोग के धम्मात्मा के रूप मे ससार के उद्धारकर्ता हूँगे।

† यह मेस भुंती भी के कारणों में उन्हीं के हस्ताधर में मिल गया। पता नहीं क्यों धपने के लिए नहीं भेजा नहीं गया बा संभव है कहीं किसी धजात पत्र में धपा हो। कब भिखा गया कठना मुश्किल है पर बोड़ा पुठना बकर लयता है।—सं





## तसवीर के दो रत्न

हमें बेकारे महाशय रामोदर साहब के साथ बड़ी सहानुभूति है। हम तो यहाँ के र्क्षितों और धामीयों का सवाचार बेचकर समझ रहे थे कि वह भगवन्मानव जिससे काव्य और महाकाव्य बनते थे भारत से बिदा हो गया अब केवल बिस्मू और मिस्मू धात्री रह गये हैं और अब हम किसी महाकाव्य के प्रावुर्गमि से निराश हो जाना पड़ेगा क्योंकि धार्मिक पुराने जमाने के दुष्यन्त और धनुष और बिक्रम को क्याएँ कहाँ तक बनेगी और फिर पुराने जमाने की बातें धाय कितनी ही नयी माया में और रहस्यवाद की कविता में लिखिए उसमें धाय नयापन तो नहीं ला सकते। लेकिन महाशय रामोदरसाहब जी का सुधा मसा करे। उन्होंने एक पद्ये महाकाव्य की सामग्री जुटा ली और साहित्य-समाज को उनका हस्तक होना चाहिए। उनसे साथ ही भीमसे रत्नप्रया सेषी को भी बग्यबाद देना चाहिए कि उन्होंने रामोदर साहब जी के हृदय में ऐसे स्वासिक्रम प्रेम की सट्टि की। मुमताब् ने वही पाठ बदा किया मगर कितनी खीखासोन्ट के साथ। हमने समझते हैं रामोदर साहब जी को उनका हस्तक साहस का इस प्रकार पर परिचय दिया है और प्रेम के लिए जितना न विम वैदिक साहस का इस प्रकार पर परिचय दिया है और प्रेम के लिए जितना महान् बनिरात किया है वह हुल्ल और इरक के स्लेज पर भी रोड-रोड नही मजूर था। अन्त के बारे में हम चिन्ता नहीं। जो विवाह बेड और सात्पों और बाजे-बाजे के मात्र होते हैं उन्ही का अन्त क्या सबैब शुभ ही होता है? अथर हवा बतुर है और उनके बतुर होन में किसी काफिर को ही तक हो सकता है क्योंकि उसने तजरबे के पाठसाला में वह सिखा प्राप्त की है, तो कोई बजह नहीं कि उसका अन्त मुबमय न हो। रामोदर साहब ने गद्दी छोड़ ली नहीं। मगर अठावह साहब साहबाना की गद्दी का बारिब हारे हारबे नी साहब को साहब अन्कार ही सकता है और नया वह गिट के पूरे अन्तबन को नाम-गारे क महत्त्व को मान में अठावह नाम सेते हैं उनी महत्त्व के बने के प्रति धधडा रिजायेंगे। प्रसम्भव ! फिर हमने कुछ कम त्याग नहीं किया। वह विवाह के पहले वैष्णव-वम्पगार की बीबा साहब हारे के महत्त्व से ले चुकी थी और महत्त्व को भी मेवा में पाँच हवार को धेमी अँट कर चुकी थी। वह कल्पनी नोनियाँ नहीं नेसी हैं। हाँ रामोदर साहब जी के विषय में हमें कुछ मन्तव है अन्तिम हम उन्हें विरवाग निभात हैं कि जिन तरह धाय हम उनकी मरहता कर रहे हैं अथर मुसा न माग्ना कोई अथर धारा तो इतनी ही तन्परा में उनके मात्र सहानुभूति भी प्रकट करेये।

॥ तसवीर के दो रत्न ॥

२७ मार्च १९३३

## अभिवादन

जिसके सामने धारा भारत किसी न किसी रूप में खिर मुलाकात है जिसे धार्मिक धीर मास्तिव साधु धीर नृहस्य ज्ञानी धीर भक्त संघाती धीर कर्मयोगी समान रूप से पूज्य मानते हैं, उसी की शुभ जन्म-तिथि के उत्सव में हम भी इस भरा रिक्त धीर धाँसु भरी धाँसे मिले ध्यान्य मगाने धामे हैं ।

भगवन्, हम अपना रोगा सुनाकर धाप का मन व्यथित न करेंगे । हमारे बाध में फूल धूप दीप मेखल जो कुछ है, वह धापक चरणों पर धरित है । भक्त की इतनी मागरबा तो कीजियेगा ही । फिर हल्ल भोक हो या धीरसावर, जाकर स्वम के कुछ धोविये । जब धाप हमारी कवच-कहानी सुनना नहीं चाहते तो हम भी नहीं सुनना चाहते । जब तक है धाप की पूजा करते हैं जब न रहेंगे तो क्या होगा कर्न जाने । धापके लिए हमारे-सँठे धातक्य है हमारे लिए ता धाप एक ही है । धाप हम बिस्मृत कर हैं हमारे तो रोम-रोम में धापु-धपु में धाप निराज रहे हैं हम धापको सँठे धुमा हैं ।

धान में पीठा का उपदेश देकर समस्त जिया कि उससे अनन्तकाल तक हमें धीवन बस धीर ज्ञान मिलता रहेगा । क्या धापन यह सोचने का भी कष्ट उत्पन्न कि उस उपदेश पर बचने की योग्यता भी हम में है या नहीं ? धाप तो अन्तर्यामी है । अगर वह योग्यता हम में न थी तो क्या धाप उसे प्रश्न न कर सकते थे ? धान न वह सामर्थ्य नहीं है, तो क्या हमें इस बोध में आना चाहते हैं ? सूर्य मेघों की धाड़ में छिपकर यह कहने का साहस रखता है कि उसमें प्रकाश नहीं ? फिर क्या हम उस योग्यता के धधिकारी न थे ? मिथा का धधिकारी मिथुक के सिवा कोई धीर भी होता है मन्वन्—सेकिन क्यों दिसा न ? धाप समर्थ है, धापको धोप देना छोटे मोह बड़ी बात है । हमीं बुबल है, हमीं बोपी है हमीं धधाने है । योनेस्वर को धपने-परये से क्या प्रयोजन ! मोह धीर बात्सल्य तो मानवी बुभता है । मेख का काम तो बरचना है, उसे इससे क्या मतलब कि पृथ्वी की धास बुभती है या मिठी धधागे की रईया बहती है । धापने धमर-ज्ञान की वर्षा कर बी हम उसे नहीं हृधयम कर सके तो धापका क्या धोप ? माठा बाभक के धामम धीवन रल देती है, वह लाता है या नहीं उस इससे क्या मतलब ! यही तो निममज्ञान है । सेकिन ऐसी माठा फिटने धिनो माठा कृतवाने का सब करेवी ? हमारा क्या धिमडा ? हम तो बाधु के कण थे । फिर बाधु में मिल जायेंगे । दुख है तो यही कि धाप के नाम नो कर्लक लनेगा । धापको कुछ धापुम है धाप की इस धग्मभूमि में जहाँ धापने धास-धिया की धी धीर योग धावन भी फिया बा क्या हो रहा है ? उसकी दशा धाँसे से देयनर भी क्या धापको भोट नहीं मगती ? धापनी हम निधुरता

का रहस्य तो यही नहीं है कि हम धापने गहरों से फिर गये। और क्या इसमें साधन योग हमारा ही है? तो अब धाप हो जाता है हम किमकी शरख जायें! शायद धापने वह उपदेश देकर पृथ्वी को स्वर्ग बनाता जाहा था पर पृथ्वी-पृथ्वी बनी हुई है, वहाँ हिंसा स्वाध और अपहरण का राज्य है। धापने यही प्रायना करने की वृष्टता करते हैं कि या तो इस पृथ्वी को स्वर्ग बनाएँ, या हमें इस पृथ्वी पर अपने अस्तित्व को बनाये रखने की शक्ति दीजिए और या या-----संसार में हमारा निस्तान ही क्यों रहे?

अगस्त १९३३

## राहु के शिकार

छान में दो-चार बार भ्रम और चक्र पर राहु के हमले होते हैं पर जिन पर हमने होते हैं उनका तो बाल भी नहीं बौका होता ही तो दो ही धारमियों पर उनका प्रेक्ष उतर जाता है। जिस पेट में भ्रम और चक्र को निगल जाने की शक्ति है वह तो भ्रमपटल के निवासियों को इस तरह चट कर चबता है जैसे अंडे के मुँह में बीटा। ही दो ही को ही निगल कर बह सन्तोष कर लेता है, यह उसकी समझना ही। प्रहृष्ट स्नान और सोमबही स्नान और साजों तरह के स्नानों की बसा हिन्दुस्तान के सिर से कभी टलेगी भी या नहीं समझ में नहीं आता। आज भी संसार में ऐसे अल्पविरवाच की गबाइरा है तो भारत में। अब भी करोड़ों धारमो यही समझते हैं कि मूरख भगवान और पत्र भगवान पर संकट आता है और उन संकट पर पंचा स्नान करना प्रत्येक प्राणी का धर्म है। चित्ने धक्के पाये पत्रे-लिखे सोय भी इतनी धारम्या में पंचा न दुबकियाँ सपत्ते हैं मानों यही स्वर्ग द्वार हो। साजों धारमो अपनी गाडे पसीने की कमायी खर्च करके बक्के साकर पशुओं की भाँति रेश में सादे आकर, रेश में जालें गैबाकर नगी में दुबकर स्नान करते हैं बेजल अल्पविरवाच में पड़कर। चित्ने बक्के और रिजयी को जाती है चित्नी गुहों के हृदयगुहों का शिकार हो जाती है चित्नों के गहने नुच पाते हैं इसका हान तो देव ही जाने। पुराने अमाने में जब सोय पेश यात्रा करने स्नान करने जाले व तो इस यात्रा का कुछ महत्त्व भी था। भाग न बहुत कुछ धनुमन हो जाता था। नरियों क लट पर धर्मोपदेश सुनने का अवसर मिल जाता था। अब वह सब तो कुछ न रहा अजस धिने गैबाकर भाँति-भाँति ने कल्प सहसा रह गया है। अपर पनी भोग ही यह पुण्य भूटने धाले तो जोई बात न थी। रोगा तो यह है कि अकिञ्चल रहित ही धाले है महाजन के रूपये कब मेबर या जोरी में रेश में बैठकर। न जाने यह मिथ्या धर्म भारत का यथा कब छोड़ेगा।

अगस्त, १९३३

## अजमेर में श्रीदयानन्द-निर्वाण अर्धशताब्दी

ऐसा तो भारतवर्ष में शायद ही कोई हो जो अजमेर में अक्षरशास्त्री के उत्पन्न का विरोधी हो। ऐसे उत्सवों में राष्ट्र में जागृति और उत्साह उत्पन्न होता है और अपने उद्धारकों की यादगारी महात्मा सम्प्रदायी जीवन का एक घंटा है। यो ता हर मगर में धर्म समाज के सामाने बसते होते रहते हैं और पुस्तक के उत्सवों में भी समाज के मुख्य कार्य-कर्तव्यों में विचार विनिमय होता ही रहता है। पर स्वामी जी के निर्वाण के पचास वर्ष बीत जाने पर यह आवश्यक है कि जिस संस्था को उस महान् पुण्य ने जन्म दिया उसके प्रमुख मता एक साथ बैठकर यह विचार करें कि जिस माय पर वे अपनी संस्था को न बना रहे हैं वही वर्तमान ब्रह्म में सबसे अच्छा माय है या समझ कुछ रही बरत करने की जरूरत है। और अगर जरूरत है तो क्या है। इस उत्सव के लिए भक्ति-भक्ति के मनोरंजनों और उमात्रों का प्रबन्ध करना उस अवसर के महत्त्व को बटा देना है। इस्लाम धर्म का यही हो सकता है कि इन उमात्रों के बगैर उत्सव सफल ही न होता। उसके साथ ही हम देखते हैं कि वहाँ कई ऐसे सच हैं जो किसी सिद्धान्त से भी उचित नहीं सिद्ध किया जा सकते। मसलन हम जान लुधा है कि वहाँ हवन में दस हजार खर्च करने का निरुत्पन्न किया गया है। बेल में जब एसी आर्थिक बसा फैसी हुई है कि करोड़ों मनुष्यों को एक बरत सूखा बना भी मसलन नहीं दस हजार का भी और सुगन्ध जमा बालना न धर्म है, न ग्याय। हम तो कहेंगे यह समाज के प्रति अन्याय है। क्या इस खर्च का इससे अच्छा कोई खर्च न निकाला जा सकता था? बरत इतना शानदार हवन बेल में एक बिलबल बात होगी। जो सोच हवन-ब्रह्म के चारों ओर बैठे कर्म-कर्ता बने हुए भी के कुप्ये के कुप्ये माय में भोकेये उन्हें और उमात्राडयो की एक प्रकार की सनसनी धरम होवी पर उस सनसनी की इतनी नीमट बहुत व्याथा है। बामिकता भी जास हानतों में आपत्तिजनक हो जाती है।

अक्टूबर, १९२३

### महात्मा जी का बौद्ध मिशनरी को जवाब

उस दिन महात्मा जी ने उस बौद्ध का बड़ा अच्छा जवाब दिया जो बीन से धामा है और भारत में बौद्ध धर्म प्रचार करना चाहता है। महात्मा जी ने कहा कि ब्रह्म धर्म में बौद्ध धर्म का बहुत कुछ घंटा मिला लुधा है और ब्रह्म के गण्य भक्त भारत में ही है। बुद्ध ने भगवान के मिठातों का प्रचार किया उनका प्रबन्ध कितना ही किया जाय उतना हो अच्छा सत यही है कि बौद्ध धर्म के सच्चे मिठातों का प्रचार किया जाय

उसके उन मित्रों विरवालों का नहीं जो हरेक वर्ग के साथ उठी तरह निकल घाते हैं जैसे बात में पीलों के साथ घास निकल घाती है। और धर्म के प्रचार का सामन नहीं है जो महात्मा जी ने बतमाया। उदाहरण—बौद्ध-जीवन के अपने धारण का सामन ही बौद्ध-धर्म का प्रचार है।

१६ अक्टूबर १९३३

## स्थानीय रामकृष्ण सेवाश्रम

शाली के रामकृष्ण सेवाश्रम के द्वारा विगत बत्तीस वर्षों से तीन दुर्गियों की सेवा मुमुपा हो रही है। इस धाधम के तेरहसे वर्ष के कार्य-विबरण से प्रकट होता है कि इसके अस्पताल में सोसह सौ साठ रोमी अन्धे होने पर अस्पताल में बसे गये। कुल एक सौ अठ्ठासी रोगियों की मृत्यु हो गयी। इसकी अधिक मीलों का कारण यह है कि अस्पताल में बा रोमी नहीं होते हैं, ब अधिकतर बहुत बड़े या कमबोर का असाध्य रोमी से पीड़ित होते हैं। अन्धकार तो ऐसे ही रोमी नहीं होते हैं जो मृत्यु के निकट होते हैं। अस्पताल में रोगियों की योजना असाध्य लाबाद एकधी अठारह रही। अन्धकार अकरो रक्तिया और बागे पर ऐसे रोगी पाब बाते हैं जिनकी लबर मेनेबाया कोई नहीं होता। अस्पताल में दो सौ सोसह रोगियों की सेवा-मुमुपा तथा उनकी सब प्रकार की सहायता की गयी। अस्पताल में नहीं हुए रोगियों के सिवाय भी बहुत से रोगियों को धाधम के दबातारों की घोर से दबाइयाँ की गयीं। ऐसे रोगियों की सख्या एकठामीस हजार बार ही गी बी। ऐसे रोगियों की योजना असाध्य लाबाद दो सौ अठ्ठासबे रही। धाधम की घोर से वरीषों की धन्य कई प्रकार की सहायता की गयी है। नठ वर्ष कुल साय तिरसठ हजार एक सौ सतहत्तर ६ और धन्य अस्पताल हजार अठ ही बिहत्तर ६ बा। इसमें बागे और पाई के एक छोड़ दिने गये हैं। धाधम के प्रबान निरीक्षक स्वामी नरोत्तमानन्द समापति राजा नर मोतीचन्द कोषाम्यस्य की बसदेबाइस मन्त्री राय पीबिचन्द घोर स्थागापस सहायक मन्त्री स्वामी सत्पालन्द है। समिति को सेवा का क्षेत्र बढ़ाने के लिए घोर भी धन की धान्यकटा है। हाल ही में धाधम का बाबिकोत्तर कमकटा के हाईकोर्ट के अन्तिम बीम्मबनाब मुन्डी के तमामसिबा में हुआ बा। उस अन्तर पर होडा के एक अन्तन न एक हजार रुपये का गुप्त दान घोर हुलमी जिमे की भीयती धानीवासी दल ने पाब ही रुपये का दान किया बा। यह सखा बीम-मुन्डियों की बास्तबिक सेवा कर रही है। धारा है कि बन्दा इसकी पूरी सहायता करने की विरत यह घोर अधिक सेवाधन्य करने में समर्थ हो गये। ईश्वर-पूजा का सर्वोत्कृष्ण माग बीम-मुन्डियों और धामय हीम रोगियों की सेवा मुमुपा है और यह रामकृष्ण सेवाधम के द्वारा मुबाक रूप से ही मफता है।

२० नवम्बर १९३३

## विदेश यात्रा और प्रायश्चित्त

एक जमाना था कि भारत के मिथुओं ने विदेश-यात्रा करके अपने देश और धर्म का पीरन बढ़ाया था। फिर पाश्चात् का यह चक्र चला कि विदेश जाना पाप हो गया। और आज भी ऐसे नरनाहुरख धार्मिक मिसते रहते हैं कि लोग विदेश से सौट कर प्रायश्चित्त करने के लिए कासो बीड़ते हैं। इस बीसवीं सदी में ऐसा उभोसना भारत-देशे पाश्चात्-ग्रवान देश के सिवा और कहीं हो सकता है, और भारत अध्यात्मवाद का केन्द्र है। आज भी यहाँ के अध्यात्मवादी आप विदेश जाना पाप समझते हैं और उसके प्रायश्चित्त-स्वल्प गोबर खाते हैं, सिर मुकते हैं और भोज बेते हैं। इस धर्मनिष्ठता और पाश्चात्-सिन्धता पर धांसू बहाने की बन्धा होती है। इसी विषय पर खिच भी ने सड़ योनी 'आज' ने एक बड़े मने का नोट लिखा है। आप प्रायश्चित्त की ब्याख्या करने के बर कहते हैं—

'आप धरर समझते हैं कि विदेश यात्रा कोई पाप नहीं तो आपका यह कसम्ब हो जाता है कि इसके लिए प्रायश्चित्त का बबाब डालनेवालों को आप निर्भीकता के साथ रिखा दें कि आप में पाकपद के विरुद्ध युद्ध करने की शक्ति का धभाव नहीं है। और धरर आप ऐसा नहीं कर सकते या स्वयं भी इस प्रकार के पाकपद में विस्वास रखते हैं, तो फिर आपका यह कर्तव्य हो जाता है कि आप विदेश जाने के पाप से ही अपने को बचाने रहे।

इसी पाकपद ने और इन्हीं पाकपदियों ने भारत को चौपट किया और आज भी उनका बैठा ही पाकपद उब है।

अनबरी १९३४

## अच्छी और बुरी साम्प्रदायिकता

इंडियन सोशल रिफ़ॉर्मर संज्ञेनी का समाज सुधारक-पत्र है और अपने विचारों की उबारता के लिए मस्तहूर है। डॉक्टर आसम के एंटी-कम्युनल सोम की धामोपना करते हुए, उनसे कहा है कि साम्प्रदायिकता अच्छी भी है और बुरी भी। बुरी साम्प्रदायिकता को उन्नाड़ना चाहिए। मगर अच्छी साम्प्रदायिकता बह है, जो अपने लोभ में बड़ा उपयोगी काम कर सकती है, उसकी बर्षो बर्षोसना की जाय। अगर साम्प्रदायिकता अच्छी हो सकती है, तो पराधीनता भी अच्छी हो सकती है, मकदरी भी अच्छी हो सकती है, भूठ भी अच्छा हा सकता है, क्योंकि पराधीनता में जिम्मेदारी से बचत होती है मकदरी से प्रफ़्ता जम्मु सोबा किया जाता है और भूठ ने दुनिया को ठगा जाता है। हम तो

साम्प्रदायिकता को समाप्त का कोई समझौता है जो हर एक संस्था में समबन्धी करता है और अपना छोटा-छा शायद बना सभी को उससे बाहर निकाल देती है ।

जनवरी १९३४

## जाति भेद मिटाने की एक आयोजना

बम्बई के मि भी यादव ने अल्पमान भेद भाव को मिटाने के लिए यह प्रस्ताव किया है कि सभी हिन्दू-उपजातियों को ब्राह्मण कहा जाए और हिन्दू शब्द को उड़ा दिया जाए जिससे भेद भाव का बोध होता है । प्रस्ताव बड़े मझे का है । हम उस दिन को भारत के इतिहास में मुबारक समझेंगे जब हरिजन सभी ब्राह्मण कहलायेंगे मगर मि यादव का प्रस्ताव जाने या न जाने (जाने को बुरा भविष्य में भी धारा नहीं) सेलिब्रिटा का एक कह रहा है कि हम-बीस साल में यह सारी बातियाँ जिन्हें हटा कहा जाता है ब्रह्मण नहीं तो खरी बरखरय बन चुकी होंगी । और खरी से ब्रह्मण बनना केवल उनके एक हम उल्लंघन का काम है । मरकर भेद-भाव मिटाने में सहायता क्या देनी उसे तो उसके स्वामी रत्न में जैसे कोई विरोध धारण जाता है । स्कूल में लड़के का नाम मिटाने जायें तुरन्त उसकी बात मिथानी पड़ेगी । जहाँ हिन्दू नाम धारा नहीं उसकी बात धनिकाम रूप से आ जाती है । जन-गणना में तो हमारे बड़े-बड़े निबिलियन समाज-शास्त्र के पंडित जातियों में नयी-नयी लोच करके और सुकी छिपी जातियों का धर्म-धार करके अपना नाम धरकर बैठे हैं । हिन्दू लुप्त जाति-भेद का कितना मकत है, सरकार हम बात में उससे कोस भर धागे बंधे हुई है । और हमारा तो कहना ही क्या हम तो पहले कामस्य या ब्राह्मण या ईस्य है पीछे धारमी । किता से मिस्टे ही हम पहला यथाय यही करते हैं कि धाप बौन साहब है । प्रानीयों में भी यही प्ररन पूछा जाता है—कौन टाकुर ? अगर यह अपनी सजाति हुआ तो उनके लिए चिन्तन भी है, तयान् भी है करना उसमें हम कोई विलचस्पी नहीं रखती । और हम कितने मय से अपने को शर्मा बनी तिबारी जगुर्बेरी मिलाने है कि क्या पृथना ? यह इसके सिवा क्या है कि भेद भाव हमारे रक्त में सन गया है और हममें जो पक्के राजबारी है वे भी अपनी साम्प्रदायिकता का विगुण बजाकर पूरे गरी समझे करना हमकी पकरत ही क्या है कि हम अपने को जगुर्बेरी या जिबेरी नहें । सामकर उस बरदा में कि हमने भेद की मूरत भी नहीं लेनी और इसमें भी मन्बह है कि हमारे पुत्रों ने भी खनी बेरों के बराम किमे से ।

फरवरी १९३४

## रूस में धर्म विरोधी आन्दोलन

रूस में इन दिनों ईश्वर शोही सोवियट सरकार ने फिर जोरों से ईश्वर के विरुद्ध प्रचार करना शुरू किया है। इसपर उसके धनीश्वरवासी प्रोपेमेंडा में कुछ सुस्ती या बर्फी की बिकका गठीबा यह हुआ कि जो गिरजे बन्द कर दिने मये से वह फिर बूम गये धीरे जनता में धम बर्बा फिर बढ गयी। दुनिया में इस पर चाहे जितना बूम मये मगर हम तो यही कहेंगे कि इसकी जिम्मेवारी सोवियट सरकार पर नहीं उन बर्मोपकीबिको पर है जिन्होंने धम के नाम पर मला प्रकार के पाबण्ड र्कना रखे हैं। ईश्वर मन की एक भावना है। उसके लिए मन्दिरो ममजिरो या गिरजाघरो की जरूरत नहीं। वह बट-बट ब्यापी है एक-एक बयू में उसकी ब्यापि है। वह प्रजा की कमापी पर बँत करनेवासा राजा नहीं कि उसे इसकी बिन्ता हा कि लोग उसके बिमुक्त न हा बार्गे। जो लोग ईश्वर मफित की पुन म बडे-बडे महम जनबाते हैं कि ईश्वर इसमें र्कना से प्रसीम को बारवीवारी में बन्द करके ब्यापक ईश्वर का अपमान करते हैं धीरे जो लोग उसकी प्रतिमा बनाकर उसका श्रुपाण करत हैं भोग लपते हैं उसका बिबाह करते हैं धीरे उसके नाम की माला बपते हैं वे तो ईश्वर का बिलौना बनाकर ऐसा पाप करते हैं जिसका कोई प्रामबिषत नहीं। ईश्वर को उपामना का केवल एक माग है धीरे वह है मन बचन धीरे कम की शुद्धता धर ईश्वर इस शुद्धता की प्राप्ति में सहायक है तो लोक से उसका ध्यान कीबिए, लेकिन उसके नाम पर जो हरेक बम म स्वाब हो रहा है उसकी बड़ जोरना किती तरह ईश्वर की बबल बबी संबा है। धीरे सोवियट सरकार इनी पालंड का बन्द करना चाहती है। सबशक्तिमान ईश्वर से भावनी क्या होइ करेया ? गंगा को इसकी क्या परबाह कि कोई उसे पूत बढता है या बूडे। वह दोनों की को ममान कम से बहा ले जाती है।

मार्च १९३४

## हिन्दू समाज के वीभत्स दृश्य—२

### साश की दुर्गति

ममात्र में कुछ बुराईया ऐसी हैं जिनके सुधार के लिए शास्त्रों के प्रमाद्य लोबने पड़ते हैं कुछ ऐसी जिनके लिए कानून में संशोधन कराने की जरूरत है। वह दोनों ही बार्गे बन्द माध्य हैं लेकिन कुछ एगी बुराईया भी हैं जिनके सुधार के लिए न शास्त्रीय प्रमाद्यों की जरूरत है, न कानून की बँबल जनता में एक प्रकार के सद्भाव धीरे मुद्रि की धीरे हिन्दू नारों की दुर्गति उन्ही में एक है। ऐसा जान पड़ता है कि किसी हिन्दू के मग्ते ही



उसके सगे-सम्बन्धियों को उससे भेरा-मात्र भी ममता नहीं रह जाती चटपट वस का टाठ बना सब को रस्सी से कसकर बाँध लोग किसी नदी या मरुभूमि की घोर भाग बसते हैं। अगर किसी भयोर की मारा है तो उन पर रेशमी या शाल का कपड है बरीब की है, तो मामूली नैनगुन का घोर घनाब है तो बिचड़े ही उनका कठम के लिए काफ़ी है मगर बाँध का टाठ और रस्सियों का बन्धन धवरय रहना चाहिए। घोर मारा को संकर सारा कितनी तजकबयो सिखाते हैं कि उसके भोके म सारा गरदन हिलाठी हाथ मटकाठी और पाँच उछापती बसती है, अगर इतनी मजबूती स न बँधी हो ता धवरय ही नीचे गिर पड़े। सारा को बराक घर म डेर तक न रहना चाहिए, क्विन यह क्या कि बिसका बीते इतने प्यार करते थे मरने के बाद उनके साथ जरा भी मुरीबत बरा भी सौजन्य नहीं दिखा सकते। क्या बहु स्वाब का ही सम्बन्ध था ? घोर घब उन सम्बन्ध को निमाने की कोई बन्धन नहीं रही ? कहा तो जाता है कि मरने पर भी सान्ना देह के पाम मँडराठी रहती है लेकिन स्वार्थी हिन्दू समाज हमकी बिनकुन परबारा नहीं करता।

घोर रास्ते में 'राम नाम धरय है' का बहु शोर मचाता है कि कुछ न पूछिए। मगर रात का समय हुआ तो सारे मुहम्मने की गीब गुस जाती है। क्या शोर हमलिए मचाया जाता है कि जनता को जीवन की कणमंगुरता की याद सिना ही बाय—यह धारमी मर गया इसी तरह एक दिन तुम भी घोर तुम्हारे अपने भी राम नाम मत्य हो जायेंगे। मत्य एक ऐसा कठोर मत्य है जिनको बार-बार याद सिनात की जल्गन नहीं। सब जानते हैं हम एक दिन मरेंगे। हिन्दू-समाज म मीठ का भय घोर भी धारिक है। मगर को मीठ का मून गया है तो बहु बन्ध मान्यवान है। क्यों शोर मचा कर उनको मीठ की याद सिना रहे हो। हम शोरगुन मे हमारी धारिकता का नहीं हमारी हुरम शून्यता का बोध होता है। यह नमम इतना गभीर और यह बीना इतनी ममस्पर्ती होती है कि बिस को कम मे कम कुछ डेर क लिए प्रमत्तमुनी हो जाना चाहिए। जिन समय मूक बंदना घोर गहरे धारम बिभ्तन घोर मृतामरु क प्रति सच्ची शुभ कामना घोर मृत्यु क रोब घोर धातक तथा धनगत की कल्पना से हमारे मन को उबानुन हो जाना चाहिए हम इन तरह भागते घोर बिभ्ताने हैं मानों हम शारक कम घोर स्वाधमय भय धारिक है। सिनाइयो घोर भुमसमानों का बेलिग। उनकी धरनेपिट-निक्या कितनी शान्त मंभीर, कोमल और सौजन्य पुल जाती है। बाँध की टिन्डी की जगत या ता लक्ष्म का टानुन होता है या पल्ले। सब उस पर बहुत बीरे मे निटा रिया जाता है घोर ताबुन न जाने जाने पिर भूकावे बहुत ही धारिकता धारिस्ता कब्रिस्तान की तरह जाने है। मानम बरन बाने भी उतो शान्ति मे जगाह के पीछे बसत है। हम कुरम का कल्पनेमाता पर इतना धयर जाता है कि राज बसते लोग जग टिन्ड जाते हैं। मून प्राची के प्रति इन सानों

का यह सम्मान धीरे-धीरे देकर बिच प्रसन्न होता है। उसके बिपरीत हिन्दू शव की किरानी पीसाले-र होती है कि उसे बीमत्स कह सकते हैं।

यह तो हुई रास्ते की बात। इमरान का दुख तो धीरे-धीरे सुखोत्पारक होता है। वह मकड़ी की चिता शव का उस पर गिराया जाना वह भाम का समना वह चिरायन वह मंग-धरङ्ग लोगों का उठे लिये चिता की लकड़ियों का उकसाना धीरे-धीरे शव को उमटना-पमटना वह कपाल क्रिया वह घाँटों का फूटकर बाहर निकलना—इतना रोमाञ्चकारी दृश्य है कि जो उसके धम्मत्स नहीं है उन्हें कई दिन तक म्मानि होती रहती है। इससे कहकर शव की क्या बुराता हो सकती है? यह सीसत रहकर साधारण शवमी मृत्यु से भयभीत हो उठे ता क्या धारण्य है धरर मृत्यु नये जन्म का द्वार है, तो इतना मसुन्दर इतना धमानुपीय क्यों? मृत्यु को इतने गन्म इतने बीमत्स रूप में दिखाकर हम अपनी धात्मा को सुख करते हैं। क्यों शव बाह का कोई ऐसा विमान नहीं घोंचा जाता जिससे मृत्यु हमारे सामने इतने धर्मगत रूप में न घावे हम उसका पैसाधिक ताड्य न देखकर उसका शान्त बीमव देख सकें। अपने ही प्यारो को घाँटों के सामने हम दशा में देखकर बिच म चिराय धीरे-धीरे शीतल से उवासीनता उत्पन्न होता स्वामासिक है।

बिच माता के स्तन से हम पने जिन धाँटों के स्पल म हमने अपार मुक्त का अनुभव किया बिच बालक को हमने गोद में खिलाया धीरे-धीरे जिन मित्रों के मसे लिपट कर हमने मुक्त के बिच काटे उन्हीं को यों बसते चिटकते पटते देखना दुख को कोमल भावनाओं से शून्य कर देता है और शायद यही कारण है कि जीवन म हमारी बाहे किरानी दुःखा हो किरानी ही अपमान महना पडे हम सब कुछ 'धीरे-धीरे माबर की तरह पी जाते हैं। क्या अपने प्रियजनों की बुराता करना भी अस्त्रों म लिधा हुआ है? क्यों ऐसी बीमत्स सीमा देखकर भी हममें उसके प्रति बुरा नहीं उत्पन्न होती? रिवाज शान्तों से भी बुराता बीर्यापु होते हैं यह सत्य है, मकिन् यह भी सत्य है कि समय के प्रबाह के सामने रिवाजो का हुमेला परास्त होना पडा है धीरे-धीरे बजह नहीं है कि इस बिषय म भी मुबार किया जाय। यारण में भी कभी-कभी शव बाह की क्रिया होती है; मेकिन् मन्त्रों की मरुद से यह सीमा इतनी बन्द धीरे-धीरे इतने परिष्कृत रूप से उनास्त हो जाती है कि धरमा की तरह वेह भी शण्ड-मान म धदृश्य हो जाती है।

इस बुराता क बाव सब धात्मा की शान्ति का उदरान शुरु होता है धीरे-धीरे दिन शरु भोजन से उसकी मयाप्ति होती है। भय क नाम पर कौने-कौसे पाल्क किये जाते हैं वह पिन्दान धीरे-धीरे महागात्रों के गहरे धीरे-धीरे चिरायरीवानों का मूर्धों पर तान देकर शवत उडागा—शापी भीमा हिन्दू संसृति को हास्यास्पद बना देती है। जीवन-मरण रहन-महन रम्य-रिवाज से ही हमारी संस्कृति का बीध होता है। धर्म धर्म या जातिधरने हमारे दशन धर्मों को धीरे-धीरे उमिपरीतों को पडने नहीं घाते। वे तो

हमारे रहन-सहन को ही देखकर हमारे विषय में बारखा बना लेते हैं। शायद शब-बाह की बुद्धि देखकर ही अंतरियों और समाधियों का रिवाज पड़ा होगा। इस समय की प्रथा प्रचलित है, उसमें सुधार और सुस्थि की बड़ी आवश्यकता है।

मार्च १९३४

## हिन्दू समाज के बीभत्स दृश्य—२

### अंधविश्वास

हिन्दू समाज में पूजने के लिए केवल एक संघोटी बाँध लेने और दूध में रास मिला कर पीने का रिवाज है। अथवा बाँध और चरस उड़ाने का अभ्यास भी हो जाय ता और भी उत्तम। यह स्वामी भर लेम बाद फिर बाबा भी देवता बन जाते हैं। मूख है मूख है नीच है पर इसमें कोई अयोजन नहीं। बह बाला है। बाबा ने संसार को त्याग दिया माया पर मात मार दी और क्या चाहिए। अब बह जान क संसार है। पुँवे हुए फकीर, हम उनके परामर्शन की बातों में मनमानी बापीकियाँ डूँडते हैं। उनको सिद्धियों का धारण समझते हैं। फिर क्या है, बाबा जी के पास मुराह मीनशासों की मीढ़ बना हात सब्दी है। सेठ साहूकार अमले फैसे बड़े-बड़े बरों की देवियाँ उनके दरजों को धारण करती हैं। कोई यह नहीं सोचता कि एक मूख बुद्धिहीन सम्यक धारणी क्यों कर संघोटी क्यात से सिद्ध हो सकता है। सिद्धि क्या इतनी आसान चीज है। हममें अस्तित्व का अमल ही नहीं शक्ति ही नहीं रही। निदान को तकलीफ नहीं देना चाहते। मर्दा की तरह एक दूसरे के पीछे पीछे चलते जाते हैं, कुँरे में विरें या अमल में इसका दम नहीं। जिस समाज में विचार अदत्ता का ऐसा प्रकोप हो उसको संभलते बहुत निम समझे।

हमारे इस अंधविश्वास से अपना अस्तित्व निवारणकर्तव्यों के बड़े-बड़े अल्पे बन गये हैं, ऐसी कई जातियाँ वेदा हो गयी हैं जिनका वेदा ही है, इस तरह स्वार्थ से मानस अमल को त्याग। य अमल रूप अमल रूप जानते हैं बाबाओं की पेटेंट हासी में अस्तित्व करने का और अमल-अमल अमल-अमल का अमल पूव अभ्यास होता है। एक सिद्ध बन जाता है, कई उसके चेहरे बन जाते हैं और किसी उमाड़ स्वान पर देर रात देर है, मानो धारणियों के साथ से भी भागना चाहते हैं, भोग विनास में सिद्ध अनुप्राय में किसी तरह का संसंग नहीं रहना चाहते। किसी तरह यह अमल-अमल उमाड़ की जाती है कि बाबा जी फीहारी है, केवल एक बार तासा भर रूप ही लेते हैं। एक दिन दो दिन यह अमल-अमल अमल से अमल में अमल अमल पड़ी रहती है। बस अमलों का अमल

शुरू हो जाता है। बाबा जी संसार मिथ्या है का उपदेश देने लगते हैं, उधर भी राफ़र और घाटे की ढ़ड़ी सग बातो है सकड़ियों के कदे गिरने लगते है कुछ भक्त मोन इन श्यागियों के लिए कुटी बनागा शुरू कर देते है और मभ भक्तों से कहीं प्रबिन्न सखा स्त्री भक्तों की होती है। कोई सकड़े की मुराद मेकर घाती है, कोई अपने पति को किन्ती सौतिन के रूप फ़ौस में से छुडाने के लिए। बिन सफ़र्गों को दो घाने रोम की मजूरी भी न लयती वे ही हिन्दुधों के इस धंधबिरवास क कारख़ा खूब तर मास उढ़ाते है दूब गसा पीते है और खूब गीब करते है और बसते बसत सौ-पचास रुपये कोई बड्डामोब कराने या भंडारा बलाने के लिए कसूल कर लेते है। समान सेवा का कोई न कोड़े घापार यह सोन बकर लड़ा कर लेते है। कोई-कोई मंदिर बनवाने का फ़त ठने देठा है, कोई शाबाब खुबवाने का कोई पाठशाळा खोलने वा। और कुछ न हुषा ठी ठीबवाभा ठी है ही। इतनी मूलियाँ रामेश्वरम् की यात्रा करने वा रही है। हिन्दू-भाष का फ़तव्य है कि उन्हें रामेश्वरम् पहुँचाये। बिना हर-फ़िटकरी के मास बोला करने का यह ब्यबसाय इतना धाम हो गया है कि धाब हर पक्षीस धारमियों न एक साधू है। और ऐसे मिश्रुकों की ठी विनती ही नहीं वो ख़रत पर बिस्वगी बसर करते है। ज्याबा नहीं ठी पक्षीस करोड़ मे पाँच करोड़ ठी ऐसे भोग होये ही। बिश समान पर इतने मुफ़्तकोठों का भार लदा हुषा है बड्ड कैसे पनप सकठा है, कैसे बाग सकठा है। ये सोब बार-बार यही प्रयत्न करते रहते है कि समान धंधबिरवास क कत में मुश्किल पड़ा रहे, केतने न पावे। हमें खूब पकपक मास खिलाधो स्वय में तुम्हें इनसे भी बड़िया मास मिसेगा इन हाब वो उस हाब जो। स्वग का रूप भी फ़िखना मोहक खीच रखा है कि इन सोवों की कल्पना शक्ति के कुरबान जाइये। मस्यलोक में वो कुछ दुर्मन है बड्ड सब मही गली-गली मारु-मारु फिरता है। ऐसे मुज के लिए किसी भिक्षु को बोझा-सा भोजन कर देना वा किसी देवता को जन बछा देना वा किसी नदी में एक डूबकी सबा देना कौन भुसी से स्वीकार न करेया। जब इतनी शम्सानी से मोख मिल सकठा है ठी किसी साबना की ज्ञान की सद्ब्यबहार की बकरत ?

और धाब बड़ी-बड़ी जमीदारियों के मामिक फ़िखने ही माग्त है। उनकी सेन देन की बाटियाँ बसती है तरह-तरह के ब्यबसाय होये है और बहुबा उन्ही बालियों की मठानें बिन्होंने कामगार महन्तों को शान बी बी धाम इन्ही महन्तों से कब सेठी है। इनका भाव बिमान और ऐश्वर्य हमारे राजाधो का भी सखिबत कर सकठा है। उन बापदाद का उपमोम धब इगके विबा कुछ नहीं है कि मुस्टडे खीय बंड पेमें और ब्यभिचार करें। राज्य के उत्थान वा जावति में वे भी गक बहुत बड़ी बाबा हैं। धन्ब बिरबागो जनता धब भी उन पर बड्डा रखती है। वे उस एक चुटकी राज्य मे स्वय में बाबिल कर सकते है। ऐसी बिमूनि और फ़िमके पाम है ? इन महन्तों के बुठपार, ऐयाशी और पैशाचिकताधों की लबरेँ कभी-कयो प्रकाश में धा जाती है ठी मानुस होठा

है कि इनका भिन्नता पतन हो गया है, लेकिन मुरादियों को उन पर बही श्रद्धा है। हम इतने धर्ममय हो गये हैं इतने पुरुषार्थहीन कि हमें अपने पुरुषार्थ से ज्यादा भरोसा धार्मिकता पर है एक प्रकार से हमारी विचार-शक्ति मृत हो गयी है। हमारे तीव्रस्वभाव क्या है? क्यों के प्रहारे और पार्श्वियों के धक्काड़े। बिधर बेहिए धर्म के काम का वाजार धर्म है। यमी-यमी मन्दिर गमी-यमी पुजारी और मिश्रक पूरे नगर के नगर इन्ही बीजा से धारा है। जिनका इसके सिवा कोई उद्यम नहीं कि धर्म का डोंग रखकर धक्कड़ बस्तों को टों? जब जनता मुर ठगी जाना चाहती है तो ठानेवाने मो डरकर वेर। होमे। बरुत हो तो धार्मिकर को माँ है।

धर्मों न देर फगात हो। जिस समाज पर एक करोड़ कोतल मूनन धर्मो के भगु-पोषण का भार हो बहु न जगल रहे तो दूयरा कौन रहे! गरीबो पर भी धर्म का जिनता बड़ा टकस है उतना शायद सरकार का भी न हो। कोई प्रहृष समा और जनता तीव्र स्वभाव को धोर बीडी। जो कुछ तन-येट कटकर बचाया या बहु सब धर्म-बिरबास की भेंट बर गया। और धार्मिक स्वभाव भी मिन बाय और यह भी मान लें कि उम बरत किशानों से जगल कम सिवा बायगा और टकनो का भार कम हो जामना फिर भी धर्मबिरबास के सम्मोहन में अचेत जनता हमसे ज्यादा मुबी न होमी। उम उसका परलोक प्रेम और भी बडेवा और बहु और भी धार्मिकी से पार्श्वियों का शिकार हो जायगी। और हम धार्मिक बरिदता से बरकर इस धर्मबिरबास का फल जनता की बौद्धिक बुजलता है जो उसकी सामाजिक उपयोगिता में बाधक होती है। उम कदी न गोता मार सेना या शिबभिय पर बस बडा देना किमी भाई से महानुमुदि रखने या अपने व्यवहारों में लफ्फाई का पालन करने की अपेक्षा ज्यादा फल बायक मानुम होता। उसने धर्ममी धर्म को छोड़ कर जिसरा मून तब है समाज की उपयोगिता धर्म के डोंम को धर्म मान लिया है। अब तक बहु धर्म का यह धर्ममी बन न प्रहृष करेया उसके उधार की धारा नहीं। सिद्धित समाज के मामने जितनी समस्याएँ हैं उनमें शायद सबसे कठिन यही समस्या है। यहाँ उसे धर्मबिरबास की पोषक प्रबल शक्तियों का सामना करना पड़ेगा जो धर्मन्तकाल से जनता की विचार शक्ति पर कब्जा जमाये हुए हैं। किन्तु भीमत्स है बहु दुश्य कि एक भोग-या बटावारी जीव भूनी जमाये बीटा हुया है और एक बजन मनुष्य उनके पास बैठे धर्म के धम गमाकर अपने जीवन को सकल कर रहे हैं। जनता की मनोवृत्ति जब तक एनी है केवल गजनीतिक धर्मिकारों से उमका कस्याय नहीं हो सचता।

मीमात्र से धर्म देर में ऐसे सच्चे सत्यामियों का एक धर्म निरूप धारा है जो समाज-सेवा की धोर राष्ट्रीय जासति को धर्मन जीवन का ध्यय बनाये हुए हैं। लेकिन धर्ममी तक धर्मने निरुत्थे माधुषों में जासति उत्पन्न करने के जितने प्रयत्न किये हैं वे सफल नहीं हुए। न जाने क्या बहु शुभ धर्मतर धायगा कि हमारा माधु-धमात्र धारने

कर्म को समझ जायगा और यह समझ जायगा कि उसके हाथों में देश का भगाने की शक्ति बड़ी शक्ति है ।

२६ मार्च १९३४

## हिन्दू समाज के वीमत्स दृश्य—३

### मंदिरों पर एक दृष्टि

हिन्दू समाज के परम पवित्र तथा माननीय मंदिरों की घोर दुष्टिपाठ करने से हृदय कांप उठता है । वहाँ की दशा कर्णीय ही नहीं विचारात्मक भी है । वहाँ मन्त्रि की आज्ञा की धारम-साधन की तथा उपस्था की निमल धारा बहावर सोचों के जीवन को सुन्दर और सुखकर बनाना चाहिए, वहाँ घाब बुधवार पापवार भ्रष्टता तथा दुष्कर्मों का केन्द्र बँधकर धारमा रो उठती है । उन्हें देखकर एक खोरदार प्रश्न उठता है, कि क्या यही मन्दिर है ? क्या यही मन्त्रानु का निवास है ?

यह बात अब तक किसी से छिपी नहीं है कि इन मन्दिरों की घाड़ में घाब बढ़ बढ़े लज्जा-बन्धक कल्प हो रहे हैं । पुजारियों का महर्गों का और बर्म पुरुषों का जीवन मयान्तक विनाशिता सं भय हुआ है । वे मन्दिरों की घाड़ में अवश्य से बहस्य कर्म करते नहीं समझते । ईश्वर को पाला सुनाकर कृत रखने के लिए उन्हें बस्याएँ चाहिए । इस बहाने वे अपनी राजसी कामना को पूर्ण करते और अपने जीवन को विनाश-वास्तना और पतन के बहरे पड़े में डाल देते हैं । तिस पर भी हिन्दू-समाज के लिए वे पुण्य हैं माननीय हैं और वेवता-मुक्त हैं, क्योंकि वे पुजारी हैं, महत्त हैं और बमगुरु हैं । प्रतिदिन अनेक भोमी-भाभी तथा बर्मभीय मुबतियाँ पुण्य कमाले के लिए मन्दिरों में पहुँचती हैं और वे उन ईश्वर के प्रतिनिधियों के द्वारा वा उनके सनेत-माण से गायब कर बी जाती हैं और उनकी शान-वासना की शिकार बन जाती हैं । हिन्दू समाज को यह सब कुछ मान्य है । प्रतिदिन उसकी बीबों के सामने ऐसे दृश्य घाले रहते हैं लेकिन यह घाँवों पर लही बीब कर बवाल पर तामा समाजर कुप है क्योंकि धामिर व मोम बम के डेन्डार है ।

यहाँ इन पुजारिया तथा बमगुरुओं का जीवन सीधा-सादा पवित्र और त्वाय उपस्था से पूरा रहना चाहिए, वहाँ आज वे इन सब बातों व विपरीत 'सद्गुणों' के भएदार बने हुए हैं । उनके विषय में क्या कहा जाय । विगलाने के लिए तो वे बड़े सबमी हैं त्वापी हैं और तप तथा मन्त्रि के सा-साल् बमताएँ हैं लेकिन अन्धी तए देउने पर ही उनका सबभी रूप प्रबट होता है । उनमें जोय उस और काट नू-नूट

कर मरा हुआ है। यों कहना चाहिए कि उनका चरित्र अद्भुत है। गाँव मधुपती शरण  
गाँवा में धार्मिक धारि बीजों के बिना उनका काम नहीं चल सकता।

यस देश के प्रति उनके व्यवहार पर भी दुष्टिपात कीजिए। वे सहर के कपड़ों  
को स्वयं में भी देखना पाप समझते हैं। देशी मिसो का बरिया कपड़ा उनके कोमल  
शरीर को नुसला है गड़वा है और उससे उनका शरीर किस जाता है। उनके लिए तो  
सात मैकेटर का बना हुआ महीन से महीन समस चाहिए। देशी धीर बिदेशी का  
प्रम उनके लिए एक बेवकूफी का प्रम है। उनको देशी से क्या मतलब उन्हें देश से  
क्या शरोकार? वे तो देश के बमगुरु हैं महत् है पुजारी है। इसलिये वे जन-समाज  
के लिए पूज्य हैं। उनकी बातों में उनके कर्मों में किन्हीं को हस्तक्षेप करने  
का क्या धरिकार। उनके धामन्व में किन्हीं को बिष्णु धामने का बाधा धामने का  
क्या हक?

धीर अब देश में कोई धरिणी वात होती है, कुप्रवाधा के विरुद्ध धामान उठायी  
जाती है प्रचार किया जाता है, पुण्यों धीर सज्जावनन स्त्रिया को मिटा धामन का  
प्रयत्न किया जाता है, या कोई देश-विरुद्धापी नियम या बिष्णु पान होता ह तो वे धन  
के डेकेदार, समय को न देखते हुए, धमने मीच स्वाध-साधन के लिए ऐसे काज से विरुद्ध  
धमने पूरी शक्त लगा देते हैं। बनवा-द्वारा बिये हुए कपड़ा को मन्ता के भी विरोधी  
कर्मों में व्यय करते हैं। कपड़ों को पानी की तरह बहकर वे ऐसे कार्यों के विरुद्ध धामान  
उठाते हैं और देश-विरुद्ध प्रचार करने का प्रयत्न करने हैं। बनवा का कपड़ा  
बनवा की विरोध में खच करते उन्हें बरा भी संकोच नहीं होता। मन्त के लिए  
उनका यह काय धमना है और हस्तधारा का एक धमन्व उदाहरण है पर वे धमने  
पूरी शक्ति लगाकर भी देश को मत्पथ पर जाने से नहीं रोक सकते क्योंकि उनमें कोई  
धन नहीं है। शारीरिक मानसिक धार्मिक तथा नैतिक बल के जोषण धमना ही ने  
उन्हें पतन के गहरे गड में निरा किया है। उनकी बुद्धि को धमना के धमने धमना ने  
धेर रखा है, इसी कारण वे धमना धरिणी की बात धरिणी की धीर धरिणी की बात धरिणी  
को लमन्व रहे हैं। मन्ता मिठा हुआ धीर निःशक्त मनुष्य समय की शक्तिधरिणी महर  
को कैसे रोक सकता है?

धरिणी के यह विधातागण नये युग की धामान की नहीं मुन सकते। नये  
धमने की बोरोदार महर के विरुद्ध लड़े होने में उन्हें मुन मिलता है, पर वह निश्चित  
है कि धरिणी नहीं कम रखा धरिणी उनका यही हाम रखा वा यह धरिणी भा धूर न ही  
है जब कि मन्ता युग की प्रबल शक्ति उनके धरिणी का ही मिठा देगी। धरिणी उन्हें  
इस बात पर बरा भी समझे हो तो वे धमने देशों की धीर बुष्टिपात करें। वे यह धमना  
से धरिणी कि नये धमने की महर से धूर रहकर रम के पुजारियों महरों धीर धमनाधरिणी

ने क्या फल पाया। यह बात पुरानी नहीं है, कम की है। यह बात उन्हें एक मापी  
 इंस्ट की सूचना से रही है और उन्हें साजनाम कर रही है। तिस पर भी यदि वे नहीं  
 से तो वो उनके भाग्य में लिखा है, सो तो होगा ही किन्तु फिर उनके लिए कोई  
 खतर न रहेगा। सबसे धांधला तो यह हो कि वे अपने को सुधारें नवीन युग के  
 अनुकूल बनायें। इसी में सलका हित है, कस्यास है। समय की सहर बहुत बसनाम  
 लेती है। बड़ी से बड़ी शक्ति द्वारा भी नहीं रोकी जा सकती। देश की दशा को भसी  
 ताँति देखते हुए, हम के धाहम्बरों उसकी स्वर्णियों और राजसी नियमों से मुक्त करन  
 की ब धपना अपने धम का अपने समाज तथा अपने देश का सबसे बड़ा हित कर सकेंगे  
 और जनता के हृदयों में जैसा स्थान प्राप्त कर सकेंगे।

अप्रैल १९३४



स्वदेशी



## स्वदेशी की आड़ में लूट

स्वदेशी वस्तुओं का शिथिल प्रभाव देखकर जहाँ हय हय होता है वहाँ यह देखकर खे- भी होता है कि ब्राह्मण के त्वाय के नाम का व्यापारी समाज चिन्तना समुचित लाभ उठा रहा है। कोई स्वदेशी चीज खरीनिये वह उसी नाम की विदेशी चीज से का तो महुँपी होगी या अगर एक नाम हुए, तो नाम बटिया हुआ। नये व्यवहारों के विषय में तो हयें कुछ कहना नहीं लेकिन जो माल व्याज पचाय माल से बनता घाटा है वह क्यों विदेशी माल से बटिया का महुँवा हो। अगर ब्राह्मण से त्वाय की घाटा की जाती है तो माल के करोड़पति मामिकों को क्यों कुछ त्याग करने को प्रेरणा नहीं होती। वह तो सतत बबरपस्ती है कि उरीब ब्राह्मण तो एक की जयह मवा खच करे और बनमान माल घोनर दोनों हाथां से घाना कर मरे। इस बेकारी के जमान में घारपी को एक-एक सेसे की संवी है। मजूरी भी समी हो गयी है, कच्चा माल भी मस्ता हो गया है, पर काड़े का नाम ज्यों का त्वा है। ब्राह्मण यदि एक का सवा देता है तो यह निश्चित है कि वह अपना कोई दूसरा बकरी खर्च कम कर देता है। दूसरा सब यहाँ पे- के बिना और है ही क्या। इस पेट काट कर महुँवा स्वदेशी माल खरीनते है। अगर माल मामिक उयी तरह माल से जीवन के सुख भोय रहा है। उसके विमान में कोई कमी नहीं की जा सकती। वह तो बड़ी जाहता है कि भारत में और कहीं का माल म घाने पावे और वह अपनी चीज के मुँह मिये काम लड़े करे लेकिन यह नीति बहुत शिम नहीं चल सकती न जनता को हुयेसा मुसालये में रखा जा सकता है। अगर माल मामिकों की सोलुपता में ही बड़ती रही तो जनमत की घारा पलट जायगी और फिर परिस्थिति को संभालना कठिन हो जायगा। 'स्वदेशी' राष्ट्र के प्रति श्रुत है और इस श्रुत का पालन दोनों और से होना चाहिए। माल-मामिकों का कल्प है कि वे घरने माल को उरी त्वाय-भाष से सस्ता बेचने का उद्योग करे, जिस त्वाय-भाष में ब्राह्मण उनका नाम सरीरता है।

१९ अक्टूबर १९३२

## प्रयाग की स्वदेशी प्रदर्शनी

दुधवार को प्रयाग में स्वदेशी प्रदर्शनी शुभ गयी। मत्त बय घान-जवन में प्रदर्शनी हुई थी। इस कार्य घान-जवन पर पुनीम का क्रिया है। इमनिय घनीवर की

कोठी में प्रदर्शनी हो रही है। बाबकी करीब दो सौ बूकानें धापी हैं, जिनमें मुर्शिदाबाद, बरौचोर, पञ्जाब धारि दूर-दूर की बूकानें हैं। बूकानों की रोशनी और सफ़ाई सराहनीय है। हम श्रीयुक्त मोहनलाल जी नेहरू और उनके सहकारियों को इस सफल उद्योग पर बधाई देते हैं। विन्दिगी में जिन चीजों की साधारणतः हा गृहस्थ को जरूरत पड़ती है, प्रायः सभी यहाँ मिल सकती हैं। अगर हम एक बार स्वदेशी का बत से भें तो हमें बहुत कम चीजों के लिए बाहरवालों का मुँह देसना पड़ेगा। साथी के लिए पक्क प्रबन्ध किया गया है। हमें एक बूकान पर मिश्र-मिश्र प्रकार की साइ बैसकर बड़ी प्रसन्नता हुई। धानू के लिए, ऊस के लिए, फूलों के लिए, घनम-घनम कारें तैयार की गयी हैं। किसानों की जरूरत की यह एक चीज हमें नजर पडी। इसके सिवा सभी चीजें शिक्षित समाज की ही जरूरतों को पूरा करती हैं। किसी ने कृषि-विषयक कोई चीज नहीं भेजी। शासक असुविधा के कारण ऐसी चीजों का प्रबन्ध न किया जा सका हा। बुधवार को प्रयाग का कोई धनाया ही धारनी होबा जो प्रदर्शनी में न पहुँचा हो। स्वदेश-भ्रम की यह सहर देखकर किसान हृदय धालन्य और गब से न फूल उठेगा। लेकिन अहाँ जनता के हृदय में स्वदेशी वस्तुओं के व्यवहार और प्रचार में इतनी लगन है, वहाँ इन चीजों के व्यवसायियों में चीजों को सस्ती बेचने और उनको उत्तम बनाने की लगन नहीं है। कुछ बोझी-सी चीजों को छोड़कर और सब चीजों में जनता को त्याग करने की जरूरत है। किन्तु स्वाम के आचार पर कोई व्यवसाय बहुत दिनों तक सफल नहीं हो सकता। उसे तो व्यापार के नियमों का पालन करने ही में स्थायित्व प्राप्त होया।

३१ अक्टूबर १९३२

## स्वदेशी पर मालवीय जी

गत २१ अगस्त का कमकता में स्वदेशी कमसिबल म्यूजियम का उद्घाटन करते हुए पं मदनमोहन मालवीय ने स्वदेशी के सम्बन्ध में निम्नलिखित महत्वपूर्ण उद्गार प्रकट किये थे—

‘भारत के समस्त गृहानु नेता और तिसक ही धार दान महारमा मालवी स्वदेशी-भ्रमर पर बहुत धार्थिक जोर देते धार्ये हैं। सब प्रथम बंध भंय से इस धान्दोमन को विशेष रूप से उतजना मिलो। उनके बाद पचीस भय से हाइ इनको धार्थिक महत्व प्रदान करते रहे हैं। इनमें सम्वेह नहीं कि धय यह धान्दोमन बहुत कलियामी हो चुका है सो भी बड़ी लगजा का विषय है कि धय भी हम सम्बन्ध में बहुत-सा धाय करने को रोय है।

‘जीवन निर्वाह के लिए कपड़ा एक बडा जरूरी वस्तु है। भारतीय मिलें और कपड़े धानी नक इत धाररयकता की पूर्ति नहीं कर सके हैं। यह बड़े ही धारण्य का

विषय है कि बाहरवाले भारत के बाजार से रई खरीदकर उसे महाम पर लाकर अपने देश में से जाते हैं और वहाँ से उसका कपड़ा बनाकर फिर इस देश में बेचते हैं फिर भी वह कपड़ा देश की मिलों के कपड़े से सस्ता पड़ता है। जलान की इस समय भारतीय बाजार में प्रचलता है और उसने इस विषय में संकाशापर को भी मत्त कर दिया है पर हमारे लिए आपन और संकाशापर दोनों विदेशी हैं और इसलिए हमको उन दोनों के मत्त का उपयोग नहीं करना चाहिए। हमको एक-मात्र यह विचार करना चाहिए कि हम भारत में बनी चीजों से किस प्रकार अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकते हैं ?

इंजीन एक एक मुक्त-द्वार बाणिज्य की नीति पर बर्ष किया करता था और बाणिज्य नीति का पोषक था। अब उसने मुक्त द्वार बाणिज्य नीति को बठा बठा ही है और समस्त दृष्टिकोण में 'घरेबो मत्त खरीदो' का आन्दोलन बढ़े ओर-ओर से हो रहा है। इससे भी समुद्र न होकर उसने थोटा-सा न साम्राज्य व्यापी स्वदेशी-आन्दोलन को जन्म लिया है। अब इंजीन-जैसे देश को जो अब तक व्यावसायिक-जगत में सर्वोच्च स्थान पर प्रतिष्ठित था अपने देश की बनी चीजों को व्यवहार में लाने का आन्दोलन करना पड़ रहा है तो भारतवर्ष के लिए स्वदेशी प्रचार के आन्दोलन में शक्ति लगाने की कितनी अधिक आवश्यकता है यह समझना कठिन नहीं है।

३१ अक्टूबर १९३२

## भारतीय चीनी के कारखानों का अन्याय

स्वदेशी चीनी को प्रोत्साहन देना हरेक हिन्दुस्तानी का धर्म है लेकिन कारखानों के स्वामियों का भी जनता के प्रति कुछ दाय्य है। इसे वे भूल जाते हैं। एक ही दाम की देशी और विदेशी चीनी नीति। देशी चीनी घापको बढ़िया मिलेगी। चीनी का भी बड़ी हात है। विदेशी चीनी का बढ़ने बहिष्कार हुआ है, यह व्यवसाय बड़ी उन्नति कर रहा है मगर चीनी के कारखानों के मालिक धर्म्य स्वदेशी व्यापारियों की ही प्रति घटिया से घटिया मत्त घाटकों के द्वारा बेचकर अपना उन्मु लीधा करना ही उचित समझते हैं। धर्मो हान में चीनी के एक विशेषज्ञ ने भारतीय चीनी के व्यवसाय पर आलोचना करते हुए कहा कि विदेशी चीनी में बराबराय मत्त रहता है लेकिन भारत की चीनी में बहुत ज्यादा मत्त रहता है। इन्ने धारा है हमारे चीनी के कारखानेशर हम बेतायनी पर विशेष रूप से ध्यान देंगे। विदेशी चीनी पर सरकार न कर लगाकर देशी चीनी की रक्षा की है लेकिन यदि कारखानेशर हम रक्षा का रूपमाय करेंगे तो वे जनता का महामय और महानुभूति को देंगे और उनकी अफ-मोमुपता के हाथों एक बहते हुए व्यवसाय को घना पहुँचने की संभावना है। भारतीय रूपकों के हाथ में अब से-देकर यही

ऊन की खेती रूढ़ गयी है। अगर कारखानेशर जनता को गैसी बीनी खिलाकर अपनी बेव गम करते रहे, तो भोग विवश होकर बिदेसी बीनी खाने लगेंगे और बीनी के कारखानों का विनाश तो हो ही जायगा बेकारे किसान सेंट म मान जायेंगे। मैसी बीनी का स्वास्थ्य पर क्या असर पड़ता है, इसकी खोज तो कोई डाक्टर ही कर सकता है, पर इतना तो सभी जानते हैं कि मैस शरीर के अंदर पहुँचकर कोई लाभ नहीं पहुँचाता।

७ नवम्बर १९३२

## असली और नकली स्वदेशी चीजें

कई दिन हुए जो एमवास की गौड़ ने 'घाब' में एक पत्र लिखकर बतलाया था कि प्रायःकम जिन फीटेमपेनों को हम स्वदेशी करते हैं वे सर्वथा बिदेसी हैं उनमें कोई नाम स्वदेशी नहीं सभी चीजें बिदेस से मँवाकर यहाँ बोज भी गयी हैं। यही हमने मइस्ने से बाजार में स्वदेशी के नाम से बिक रही है और जनता को भोखा दिया जा रहा है। अगर इन हमसो के प्रतिरिक्त और भी किठनी बिदेसी चीजें स्वदेशी के नाम से बिक रही हैं और जनता को धोखा दिया जा रहा है। किठनी ही सुर्वथ किठनी ही ज्नी और रेसमी चीजें किठने ही शीरो और चीनी के सामान किठने ही तरह क कामज यहाँ स्वदेशी के रूप में बिक रहे हैं इन्मार्कि मेरेम के सिवा उनमें कुछ भी स्वदेशी नहीं है। एसे बोखबाज ब्यापारी इस स्वदेशी की हवा में बिलना मूटना चाहे मूट सँ मगर एक दिन उनका परबा फलू हो जायगा और इस बोखबाजी का फल उन्हें मीगना पड़ेगा। स्वदेशी मैसे के ब्यवस्थापको से हमारा यही धनुराच है कि वे बिना प्रच्छी तरह जाँच पड़तास किन्ने ब्यापारियों को स्टपन न दिया करें। बोखबाजों के बुस धाने सँ यही नहीं होता कि बिदेसी मस की खपत होती है बल्कि उन्नी स्वदेशी बस्तुओं को उभरने का अवसर ही नहीं मिलता।

१४ नवम्बर १९३२

## झककर-मिलों की धूम

घाजकस शककर मिलों की धूम है। जिन इलाकों में ऊन पैदा होती है वहाँ धाने दिन नयी मिलें खुलती जा रही हैं। मुगते हैं जाबा चीनी पर घाबाउ कर लग जाने के कारण यहाँ क कारखानों को खूब नफा हा रहा है। किनी-किटी मिल को तो मात्रे तीन रुपय मन का मगा हा रहा है। मया ऐसा मन्त्र देज कर ब्यापारी ममाज की सार क्यों न टपक पड़े। बल्कि ब्यापारी-समाज को इन मिलों से खयवा हो जाय किसानों को

सपत्न मुकसान ही मुकसान है। भिम ने मुकामले में यह शककर तैयार नहीं कर सकते और गुड़ की शककर के मुकामले में सपत्न नहीं। उनके लिए इसके सिवा और कोई रास्ता ही नहीं रह जाता कि ऊँच साकर मिल में पटक दें और जो कुछ हाथ सभे उसे भासते भूत को लपेटते समझ कर अपनी तकवीर ठोकते हुए घर की राह में। अभी तो यह सगहन से ही ऊँच की पेटार्ड में सया रहता है और फागुन तक यह कम पारी रहता है। इतने दिनों उसे रोम बोझ बहुत उस पीने को मिल जाता था कुछ गुड़ या लीड सारा भर जाने को रस सेठा था और ऊँच के सगोले और जूठन उसके जानवर साने से। उसके बसोत्त धाँच के गरीबों को भी बोझ बहुत उस पीने को मिल जाता था। और यह सगहन पूरा भाष फागुन चार नहींने जा किसानों के लिए बड़े ठाले के दिन होते हैं उस गुड़ और बोड़े से धनाम के सहारे बन जाते थे। लीड रास या गुड़ का सभ उसके यहाँ सारा भर रहता है। यही उसका नारता है यही उसके मेहमानों की साधिरधारी का मान है। गुड़ के बगैर उसका निबाह नहीं हो सकता लेकिन मिल का यह भूत उसका रसत बूस लेता है, उधी तरह जैसे लकासापर के मिसों ने उसके जुनाहा और कोरिबों का बूत बूस लिया। मिलवाले चिनती में बोड़े हैं। यह अब चाहे धापन में संपटन करके ऊँच की घर मही कर सकते हैं और बास्तव में ऐसा ही भी रहा है। किसान धामस में सपत्न नहीं हो सकते। साया करोड़ों का संगठित होना असम्भवसा ही है। इसलिये वे मिलवालों को दया पर पड़ने के लिए मजबूर हैं। बेचारे अपनी या माइ की बाड़ी पर ऊँच लाग कर जाते हैं बाइ पाने में कई-कई दिन मिल के हाते में किसी पेड़ के नीचे पड़े रहते हैं और मिल के दसासा को जाती रिरबत बेकर सब अपनी ऊँच तुलना पाते हैं। और मिल बनाउन सुन रही हैं। और बेस म उप्रति हो रही है। जो बन सायो करोड़ों के हाथ में जाता था वह अब बाड़े से ब्यबसाधियों के हाथों में बना हो रहा है, मगर इसकी दबा किसी के पाम नहीं। भारतवाले मिल न जोसेमे ता संभव प्राकर जोसेमे। किसानों के लिए नहीं शरस नहीं है। उनम अधिक्टर ता मिल वाला से पेशवी रूप बनकर अपनी बुसामी का पट्टा सिखा सेते हैं। इसका इलाज कुछ नहीं। ब्यबसाय का यह युग है और हम चाहे या न चाहे उसके पकर से बच नहीं सकते।

२० मार्च १९३३

## स्वदेशी

धामता तथा दखिला स—धानों ही महान् कष्टनायक तथा धपमानजनक रोयों से रसा का एकनाम उपाय स्वदेशी को धपमाना है। मन से बचन से कम में 'स्वदेशी' हा जाना एक कच्चा भाषा भी विभाबती न गरीरना यही एक महामन है

बिस्मिल को जग कर ब्रिटेन में धानी दुनिया अपने अधिकार में कर ली अमेरिका स्वयं-भूमि बन गया और थापान एशिया का ब्रिटेन बना हुआ है। इसी एक संज का पाठ पहले भारत करता था चीन करता था और दोनों अम्मुबय के ठेके पर पर बैठे हुए थे। जिस दिन से भारतीय बाजारों में बिसामती माल भर गया भारत का औरब लुट गया। जिस दिन से चीन ने जिनने स्वयं कागज बनाने का तरीका दुनिया को सिखाया था बिसामती कापड तक अपनी बूकानों में भर लिया उसी दिन चीन की स्वाधीनता की मरम का बंटा बिसामती निर्मायों में बचने लगा।

स्वदेशी की महानता शब्दों में नहीं समझयी जा सकती। जब हम अपने शरीर पर अपने कपड़े में अपने पास एक तिनका भी बिसामती रखते हैं जब कि हम उसके स्थान पर बंदी तिनका रख सकते हैं तो यह स्पष्ट हो जाता है कि हम उस तिनके के बराबर अपना एक स्वयं बूँस रहे हैं अपने प्राई के सामने की बानी छठकर दूसरों को दे रहे हैं। स्वदेशी की पूजा सम्राट से एक तक करते हैं। ब्रिटिश सम्राट पंचम बाब ने एक बार किसी सरकारी कार्यालय का निरीक्षण किया वहाँ ब्रिटेन के बन टाइपराइटर के बजाय अमेरिकन टाइपराइटर का उपयोग होते देखकर उन्हें बड़ा दुःख हुआ। बाब भारत में साखों योरोपियन रहते हैं, पाप बरा इनके पाप बाहर पने बाधने। जमन बर्मनी का बना सामान बरीदता है ब्रिटिश ब्रिटेन का बना हुआ। हमारे वहाँ किसी ऐसे देशी मरेश है जिनके बस्तनों में बेश की बनी चीजें काम में धाती हैं या जो बिसामत बाकर यह पूछते हैं कि— 'आपके यहाँ धमुक बस्तु भारत की बनी हुई बिसती है ?'

स्वदेशी का न अपनाया एक राष्ट्रीय दुर्गुण है। स्वदेशी सामान महंगा पड़ सकता है पर अपने बर का माल महंगा पड़ने पर भी खरीदा जाना है। स्वदेशी माल बराब हो सकता है पर अपनी मूल के लिए अपने ही मंड में अपठ कितने धारमी मारते हैं ? अपना अपना सबसे पहले धम्म होता है। टिक यही वसा स्वदेशी की नी है।

स्वदेशी में सबसे पहले कपड़े का स्थान है। बिसामती कपडा पहनना बान्धन में बेश के प्रति धम्याय है। ईश्वर के प्रति धम्याय है। अपना बेश जब अपना माल बनाता है तो फिर बाजरी माल क्यों खरीदा जाना। हम 'बहिष्कार' का पत्र नहीं पदा रहे हैं। किसी के प्रति भेद भाव नहीं फैला रहे हैं। जगना बेश की वसाह नहीं दे रहे हैं। हम केवल प्रत्येक व्यक्ति का धमन धमन कतध्व बतमा रहे हैं। स्वदेशी एक धर्म है, एक बतध्व है। भारत में राजनीतिक धान्धोलन का प्राबन्ध होते हुए भी बिदेशी माल— बिदेशी कपडा निर्जीव धधिक्रमा से धा रहा है। इस विषय में 'ध्री धम जनत में जो धीकडे धारे हैं उन्हें बेगडर धान्धन होता है। यहाँ पर पाठकों का ध्यान हम उन्हीं धीकडों की धार धाकगित करना चाहते हैं। पत्र विदता है—

'स्वदेशी के प्रति ध्यान बढ़ने तथा धाबिक मन्दी होन पर भी भारत में बिसामती कपड का धायन धनुमान से धधिक धावा में बढ़ना जा रहा है। बम्बई के मिस धाबिक



सब की जो सबसे ठाकी विजयि प्रकाशित हुई है, उससे पता चलता है कि १९३१-३२ तथा १९३२-३३ के वार्षिक बयों ( माघ से माघ ) के विलायती रई के सूत का धायात उन्मास प्रतिशत् और तैयार बागों का धायात घट्टावन प्रतिशत् बड़ गया है। इस बय के पिछमे तीन महीने से विलायती कउड़े का धायात—कबल जागलो मस्ता माल ही नहीं—बहुत बड़ गया है। ब्रिटिश साको कपडा एक बय में ८३३ प्रतिशत् अधिक धाया। आयानी कालो कपडा ३२५ प्रतिशत् अधिक धाया। ३१ माघ १९३१ तक कुल विलायती सूत जो बाहर से धाया ४५१ पीठ बा। पिछमे साल ३१६ साळ गड माल धाया बा। ब्रिटिश सूत का धायात ११९ साळ गज से बड़ कर १३४ साळ गज हो गया आयानी सूत ६२ साळ से ८१ साळ गज। पिछमे साल ७७९६ गज विलायती कपडा धाया बा इस साल १२२५३ साळ गज। मितम्बर १९३२ के बाव सबसे अधिक माल १९३३ की माघ में धाया। विलायती माल बम्बई मद्रास बवाल सिंग और बर्मा—सब सबह करोड-करीब बराबर हो धाया है।

माटीयो सावधान! समूची राजनीति एक ओर और स्वदेशी एक ओर। स्वदेशी प्रकारों को सतक हो जाना चाहिए।

१२ जून १९३३

## भारतीय कपड़ा और भारतीय रई

आयानी कपड़ा बिदेशी होकर भी भारत की रई काम में लाटा है। भारतीय कपड़ा स्वदेशी होकर भी बिदेशी रई इस्तेमाल करता है। तो क्या भारतीय कपड़ा केवल इसलिये स्वदेशी कहा जाय कि वह भारत में बना है? कपड़े में मुख्य चीज रई है। मोटा कपड़ा बनाने का लक तो वैसे हो वैसे गज से अधिक नहीं। जिस कपड़े में केवल बहुत छोटी-सी रकम भारतीय मजूरों के हाथ लगती है और बड़ी रकम बिदेशी रई की मँट कर ही जाती है उसे किस रमीस में स्वदेशी कहा जाय? सब तो अमेरिका का उम्माऊ भी भारत में सिगरेट बनकर स्वदेशी हो जाता है। चाचा का मुड़ भी भारत में चीनी बनकर स्वदेशी शककर हो सकती है। इस बिदेशी रई के बने हुए कपड़े से कही क्याश स्वदेशी तो आयानी कपड़ा है क्योंकि वह भारत को रई से बन्टा है। मेरिन बनता से इस बिदेशी रई से बने कपड़े का स्वदेशी समझने की धारा की जाती है और स्वदेशी रई में बल कपड़ बिदेशी। हमारे मिन-मानिक भारतीय रई नहीं पतीर सकने। जापाल जमी रई से धब्बे में धब्बे कउड़े बनाकर भारत भेजता है पर यही के मिनो के मिये बही रई हय है। जन्हे बोड़ी-सी भारतीय रई केवल मिलावट के लिये चाहिए। रोप रई बिदेशी में हो धावगी। हमारे मिन-मानिकों में बरी इतना स्वदेश-

प्रजा तो उनका पेट भरने के लिए भरती ही है। इसी विषय पर भाषण करते हुए प्रभाव विरबिद्यालय के अध्यक्षों के प्रोफेसर मि. चाम्पसन ने ब्राह्मणों के दृष्टिकोण को इन शब्दों में व्यक्त किया है—

‘ग्रन्थशास्त्र के ज्ञाताओं का उद्देश्य यही है कि भारत अधिकांश सम्पन्न हो जाय जिसका धाराय है कि जनता के जीवन का ध्येय उँचा हो जाय और उसका अर्थ यही है कि लोगों को भोजन और स्वस्थ श्रमुर माया में मिले। यदि जापान से उस्ता कपड़ा आता है, तो गरीबों को अधिक बस्त्र मिल जाता है। मोटे तौर पर पिछले रूप जापानी कपड़े के आयात से यहाँ कपड़े की आपत नवभग अस्ती साक परिवारों में दुगनी हो गयी। इस तरह भारत अधिकांश बस्त्र पाकर बनी तुषा। अब रहा धोजन। जापान ने कपड़े में निष्ठाना बन भारत से लिया वह उससे कहीं कम है जो उसने खर्च करीद कर लिया।

६ नवम्बर १९३३

## मि० मोदी की उदारता

बम्बई के मिलवालों ने संकराहायर के साथ जो पक्ष की सभी की रिवायत की है, उससे धारा है कि साम्राज्य के सार बड़े-बड़े बाजारों में बम्बई के माल की धूम मच जायगी और यहाँ के भरे हुए मोचाम अट-पट खाली हो जायेंगे। हिन्दुस्तान के बाजार की मिलती ही क्या है। यहाँ के मुकल्ल किराल क्या कपड़े करीबेंगे। शायद बम्बईवांस समझते होंगे भारत में स्वदेशी की भावना इतनी बलवती है कि बम्बई निष्ठाना ही महुँगा कपड़ा बेचे बाजार उसके हाथ से नहीं जा सकता। मगर उमे अपनी गमती बहुत अस्द मानूम हो जायगी।

१३ नवम्बर १९३३

## संरक्षकों की धूम

जिसे बेलिए संरक्षक की माँग कर रहा है। बाइसराय से लेकर व्यापारी प्रांग जमींदार एक संरक्षक के पीछे पड़े हुए हैं। जिसके हाथ में शक्ति है, वह तो धाय ही अपनी मरबी से कानून बनाकर संरक्षक प्राप्त कर लेता है। जिसके हाथ में वह शक्ति नहीं है, वह सरकार से संरक्षक माँगता है। कपड़ को संरक्षक मिल गया। मोझे और बनिबानबाने रिसानेबासे सिमीनेबासे गरज मभी अस्तुधों के व्यवसायी संरक्षक की माँग कर रहे हैं। इसलिये जि बाइर से धानेबाप मात के मुकल्लिसे में ब ठहर नहीं सकते। जनता की जेब से जेमे ज्यादा मे ज्यादा पैसे गीब लिये जायें यही टिक नव का

पड़ी हुई है। चीजों को सस्ता बनाकर बाहर के मान को न घाने देने का सामर्थ्य किसी में नहीं है और जनता बेवश है। भारतीय व्यवसायियों ने जमा-खर्च में दखल देने का उसे कोई अधिकार नहीं। व्यवसायी जितनी कमूलखर्ची चाहे करे, जितना कुप्रबन्ध पाहे करे, कोई उससे बोल नहीं सकता। उसे मनमाना मफा करने की भी धाजारी है। वह न मेहनत करेगा न किफायत से काम लेगा न सुप्रबन्ध को अपने पहाँ चुसने देगा। उसने तो घासान मटकना पामा है कि हमें संरक्षण चाहिए। बाहर का व्यवसायी जो चीज घास-धाले में देता है, उसी को वह एक रुपये में देगा और जनता मजबूर है। किसानों को तो संरक्षण की जरूरत है, क्योंकि इससे एक बहुसंख्यक समाज का हित होता है। इसलिए भी कि हम जानते हैं किसानों की दशा बहुत ही खराब है लेकिन वहाँ तो उन्हें भी संरक्षण चाहिए जो सत्तों उड़ाते हैं और केवल अपनी छोटी-सी जमाघत के लिए सारी जनता को मर्हंगी चीज खरीदने के लिए विवश करते हैं। मगर यह व्यवसायियों का दुय है। उनके सामने किसी जनता है।

१० फरवरी १९३४

## आल इंडिया स्वदेशी संघ

जब विसम्बर में बम्बई आल इंडिया स्वदेशी कार्यकर्ताओं की जो सभा हुई थी उसमें स्वदेशी वस्त्रों के प्रचार के लिए कई प्रस्तावों के साथ एक प्रस्ताव इस धाम्य का भी स्वीकृत हुआ कि स्वदेशी व्यवसायियों ने संरक्षणों और जनता की स्वदेशी भावनाओं के बल पर उनमें चीजें मङ्गने लगे म बेचकर जनता की जो झूट मचा रखी है, उसकी निम्न की जाय और व्यवसायियों से अपील की जाय कि वे संरक्षणों के साथ ने बाहकों को भी शरीक करें धर्मज्ञ सस्ता मान बेचें। इसके साथ ही मजूरों के साथ उचित व्यवहार करें।

जब तक स्वदेशी संघ के पास एसा कोई अधिकार नहीं है कि वह स्वदेशी व्यवसायियों की घामदनी और लर्ष की जाँच कर सके तब तक यह व्यवसायी भी ही धंधे में मचाते रहेंगे। जिसे देखिए संरक्षण का मुल मचा रहा है। इसका धाय्य बदलति नहीं हो सकता कि हमारे वहाँ मजुरी की दर ब्याधा है या बन्धन मान बेचना है। फिर संरक्षण क्यों।

१० मार्च १९३४

## काढ़ पर खाज

बम्बई और पहलवाबाद के मिस-मालिकों को संरक्षित मिल गया। बापानी कपड़े पर पचहत्तर फी सदी महसूल बढ़ गया। अब उनकी खीरी है। कपड़े खूब मर्हने दामों बेचें और खूब मफ्त उठायें खूब मोटरें खरीदें खूब बिहार करें। व्यापारियों का राज है। खरीददार तो किसी गिनती में नहीं हैं। उसका बग्न तो इसीलिए हुआ है कि व्यापारियों को मुंह मीचे बाम बे और भुखों मरे। अगर प्रकृति उसकी सहामता करती है, तो व्यापारी म्पदक संरक्षक की शक्य लेता है। कलता की कौन सुनेगा ? अमाचारपत्र व्यापारियों के शासन ब्यबस्था व्यापारियों की अनमठ व्यापारियों के हाथ में प्रोपेमेंटा करने की कला में कौन उनकी बरतवरी कर सकता है। बिधा और प्रतिभा सब कुछ तो उनके सामने बूटने टेकने को तैयार है। इस केकारो और मन्वी मे कम से कम इतना या कि कपड़े सस्ते मिल जाते ये पर हमारा करोड़पती मिस-मालिक जनता का इतना धाराम भी नहीं देख सकता।

जापान के कपड़े भारत में इतने सस्ते बिचते हैं कि वहाँ के मिस उनका मुक्त-बना नहीं कर सकते। हम पूछते हैं—आप क्यों उनका मुकाबला नहीं कर सकते ? अगर आप न सकत नहीं हैं अगर आप को माफ किमामत से बनाना नहीं आता तो जापानियों के बरखों में बैठकर उनसे सीखिये उनकी खागिरी कीबिए। आपकी हिमाकृत बेबकूबी और फिखूक-खरबी का उभावान जनता क्यों दे ? इन्हींबचाले तो वह कह सकते हैं, कि उनके यहाँ मजूरी की दर बढ़ी हुई है और वे अपने मजूरो के जीवन का धारठ नीचा करना नहीं चाहते लेकिन क्या भारत में भी मजूरो की मजूरी की दर बढ़ी हुई है ? क्या व्यापारी लोग यह कह सकते हैं, कि भारत का मजूर जापान के मजूरो से सुखी है ? कहने को तो शकद बे यह भी कहें। जन के मुंह से जो कुछ निकले वह सत्य है, लेकिन हम पर बिश्वास भी बनवाल ही करेंगे। हम तो इतना जानते हैं कि जापानी मजूर कितनी ही बुरी बशा में क्यों न हो भारत के मजूरो से बख्ती बरा में है। फिर भी जापान भारत के बाजार में आकर भारत के कपड़े का बाजार बन्द कर देता है और हमारे इकजमन्त मिस-मालिक संरक्षक का रोना रोने सकते हैं। यह तो खेत में इति कटना है, और कुछ नहीं। निस्सहाम जनता को बूटना है। इसको और कोई नाम ही नहीं दिया जा सकता।

अब कहा जाता है कि जापानियों ने भारतीय रई के बहिष्कार करने की जो शकद दी है वह केवल संघट-मुड़की है। वर्कशाम के बड़े-बड़े व्यापारी पीछत बना प्यड़-प्यड़ बीत रहे हैं घराबारों में बमान प्रकाशित कर रहे हैं कि जापान भारत की रई के बड़ेर निबाह नहीं कर सकता लेकिन हम पूछते हैं कि जब भारत जापान का कपडा न लेया तो जापान उसकी रई लेकर क्या ईषन बनायेगा या होसी बतानेगा ? जापान का कपडा भारत में लपला या इतनाग बहु यहाँ की सस्ती रई लेकर

उससे मात्र तीव्र करता था और कम से कम नज़ा लेकर नहीं मात्र उन्हीं गरीब किसानों के हाथ बेच देता था। जब कपड़े का सबसे बड़ा बाजार उसके हाथ से निकल गया तो हम नहीं समझते कि वह भारत की रई संकर क्या करेगा। अपने देश की गरिबी के लिए वह संभूरिया में काड़ी रई गया कर सकता है। क्या भारत ने मिल-मालिक इस बात का ज़िम्मा लेते हैं। घांटी ठोककर यह कहने का साहस रखते हैं कि अगर जापान की बुद्धको बंदर-बुद्धी न सिख हुई तो वे भारत की मारी रई करीब लेंगे? और उसी जमाने जिन मामों जापान करीबता था? हमने तो मिल-कुबेरों के बलाघात बड़े धीरे से पड़े हैं पर किसी ने भी ऐसा कहने का साहस नहीं दिखाया। उन्हें भारत के किसानों से क्या प्रयोग? भारत का किसान मरे या जिन उनके कपड़े लरीबे जाई और उनकी जेब पय सिने जाई। उनके हाथ से ज़यन है ही वे कोई ऐसा कानून जो पाम कर सकते हैं कि प्रत्येक भारतवासी को प्रति बप इतन मूल्य का कपड़ा करीबना होय। और हम उन्हें बिस्वास दिलाते हैं कि संघकी सरकार उनके इस प्रस्ताव को बड़े हप से स्वीकार करेगी। उसका इतने मरदार फलया है। संकातापर का मात्र कुछ न कुछ ज़ारा लपने मनेता। प्रस्ताव होने की देर है।

अगर मिल-मालिकों ने वह भी सोचा है कि उनके मर्हों कपड़े मंगा कौन? कपड़ ही तो उनके सबसे बड़े खरीदार है। कपड़ के पाम सामदनी का क्या साबन रह गया। वेहूँ बाता नहीं तेनहन कोई पुछता नहीं पाट दाउ-मारा फिर रहा है शक्कर का म्बरताय भी उनके हाथ से निकल गया वह तो बस खड़ी ऊन बेचकर रुपये की खपह बबसो पाकर अपने भाग्य को ठोकता हुआ घर बसा जाता है। थोड़ा बहुत पन उसे इची कपाव से मिल जाता था वह सामन भी उसके हाथ से निकल गया तो वह कहीं से रुपया तामेबा मर्हों कपड़े खरीदने के लिए? खपज तो सवान धीरे पेट को बांधी नहीं होती उन पर धान यह खपज भी उसके हाथ से धीने लेते हैं। वह संघटित नहीं है, कहीं उनकी धाराक नहीं है। उन पर बाड़े को धाराक कीबिए, पर हम बिस्वास है, इस संरक्षण से भारतीय कपड़े की निक्कासी में जरा भी वृद्धि न होगी। जो बीज एक रुपये में मिल रही हो उसे बंड रुपये में खरीदने के लिए हम मंडी धीरे बेकरों के समय भारत की बनता तीव्र नहीं है।

कहा जाता है, जापान ने अपने येन का दर निरा दिया है। हम पूछते हैं—उसी येन से तो जापानी म्पागरी भारत में रई करीबते हैं या करीबते बचत वह कोई दूसरा येन बना लेते हैं? इसके जापानी बुद्धि-कोण से यह सच है कि रई मर्हों है। यह मर्हों रई संकर अगर वह सन्ता कपड़ा बेचता है तो यहाँ के मिलवानों का कलम्य है कि वे जाना जाकर देखें कि वह किस बापू-मंग से इतना मस्ता पाम बनाता है। और वे सर इस विषय में उनकी नज़म क्यों न करें। यह नहीं कि मंड से भारत की बरिठ बनता पर टेन्य मनाकर धरनी खपोपता की कमी बूटे कर भी। सस्ती बीज को मर्हों मामों

बेचना और सस्ती चीज को बाजार से निकाल डालना ऐसम लगाना नहीं तो और क्या है ।

अच्छा तो अगर आपन ने बेम की दर गिराकर ही यह सफलता प्राप्त की है और करेसी की दर गिरा देने से ही सारी समस्याएँ हल हो जाती है तो आप भी क्यों भारतीय करेसी की दर गिराने के लिए और नहीं मयाते ? क्या यहाँ आप की बात नहीं चलती ? क्यों नहीं चलती ? क्यों आप सरकार पर ऐसा बनाव नहीं डालते कि जो व्यवस्था आपन के लिए रामबाण बन गयी है वह आप को भी मिले ? उसके लिए धान्योन्नत कोशिए । या सबसे आसान बटका आपको यही मिला है कि आपनी कपडे को भारत से निकालकर अमरा को धपना महुंया कपडा खरीदने के लिए मजबूर किया जाय ? उस व्यवसाय से क्या फायदा जिसके लिए राष्ट्र को मजबूरन अधिक धान देना पड़े ।

इन सरासरी से संसार लंप या गया है । सब यही चाहते है कि उसका मात्र सारी दुनिया खरीदे और वह निन्दी का मात्र न खरीदे । सारी दुनिया की बीतत उसकी बेनी मे या बाव और उसकी बेनी से एक पाई भी बाहर न निकले । और यह असंभव है । संरक्षक बितने ही बढ़ रहे है उसना ही व्यापार बट रहा है और अब संसार का व्यापार मात्र के पाँच साल पहले के व्यापार का केवल एक तिहाई रह गया है । फिर भी 'संरक्षक का शोर मचा हुआ है । अगर आपन न भारत की सब बन्द कर दी (और वह इस प्रमकी को व्यवहार मे लाने के लिए मजबूर है) तो कपडे की आपत और भी कम हो जायगी । और कपडे की ही आपत नहीं इसना असर और सभी चीजों पर होता । प्रमी बयलें बचा लीजिए, मगर बहुत जल्द हाथ मजना पड़ेगा । अनता न संमठन नहीं है, लेकिन सी समठन का एक समठन तो समकी दिन हुआ रात भीगुनी बकटी हुई बरिखता है । हम आपनी कपडे के बकीस नहीं है पर अनता के बकीस अवरय है और हम चाहते है कि कृत्रिम सामनों से उसका गमा न घोंटा जाय । संरक्षक ने सबसे बड़ी धुराई यह है कि व्यापार को प्रतियोगिता से निरिचलत हाकर अपने घर की सुव्यवस्था करने के लिए कोई प्रयुक्त नहीं रह जाता । यह वह खीसे की कोठरी है, जिसमे बैठकर आप बहुत पिन शान्त नहीं रह सकते । किसी व्यवसाय की वाप्यावस्था में ता संरक्षक का कोई अर्थ हो सकता है, लेकिन जो अवान धपने पैरों लड़ा नहीं हो मकता उससे हमें कोई अमता नहीं हो सकती ।

१६ जून १९५५

शिक्षा-सस्कृति





## गुरुकुल काँगड़ी में तीन दिन

पिछले घाण्ड में मुझे गुरुकुल काँगड़ी के बसों का व्यवहार मिला। इच्छा तो बहुत दिनों से थी मगर यह सोचकर कि उस बेद-बेबायों के क्षेत्र में मुझ-जैसे प्रमुख व्यक्ति का कहीं गुजर कभी जाने की हिम्मत न पड़ी। सौभाग्य से साहित्य परिषद् ने उन्हीं बसों अपना आवक उत्सव करने की ठानो थीर मुझे न्योता मिला। ऐसा व्यवहार पाकर प्रता कंठे चूकता। किसी मुरा पुरी हुई। रात को सखनठ से बसकर प्रात काल हट्टार जा पहुँचा। वहाँ दो बह्णचारि मेरे राह देख रहे थे। गुरुकुल की सिद्धान्त बार्दिवा का कुछ बोझा-सा परिचय मुझे स्टेशन पर ही मिला। एक ठाँगा करने की ठहरी। ठाँवबाने ने शायद यह समझकर कि वो नये यात्रो हूँ कनखन के घाठ घाने माने। इधर से घाँ घाने कहा गया। ठाँवबाने ने शायद कहा घाठ घान से कम न होगे। बह्णचारियों ने बाजिब किराया कह लिया था। ठाँवबान से ठाँव-अंय करना उनकी शान क बिभाफ था। घाय मील जाकर दूसरा ठाँवा उन्हीं बानों पर माने। पहला ठाँवबाना उन्ही बानों पर चलने की तैयार था अपना अघराय समा कपटा था अपनी भूख स्वीकार करता था पर बह्णचारियों को उस पर क्या न घायी। उमन यात्रियों को ठमना जाहा था इमका अख उसे देना जरूरी था। थीर नीति की दृष्टि में क्या था कोई मूल्य नहीं।

ठाँवा घाव बण्ट में कनखन घा पहुँचा। इम लीय उत्तर कर बाट पर पहुँचे। सामने की पहाड़ियाँ हरे-हरे आम्रपण्ड पहले लड़ी थीं। नीचे गगा पहाड़ियों की मोव से निकलकर उधनरी-भूदरी बनी जाती थी। यहाँ कई बाटारें हैं, जो बर्पाकास में मिलकर काँगड़ी के नीचे तक बनी जाती हैं। मने समझ था किसी किरती पर नगी पार करनी पड़ेगी मगर किरती का कहीं पता न था। यहाँ पानी का छोड़ इतना तेज है, नीच का पैदा इतना पथरीला कि बाड़ी दूर क बार किरती घाने जा ही नहीं सकती। तमेदो पर बैठकर लोग अखे-अखे हैं। यह एक प्रकार की बभई है जिसमें मिट्टा न मटकों की पगह टीन के कनखर होते हैं। कई कनखरों को सम्भ-लम्भे रखकर रम्मी थीर बानों से बीच देते हैं। तमेदो बीच में चौड़ा थीर दोनों बिरों पर पतमा होता है। जिन्हें इम पर पहली बार बैठना पड़े उन्हें मन में कुछ सशय होने लगता है कि यह बोंया पार लगेगा या बीच ही में से डूबगा। मगर बोड़ी ही दूर चलकर यह सशय दूर हो जाता है। यह बोंगी डूब नहीं सकती। पानी का बहाव कितना ही तेज हो खेंबर कितन हो भयकर हों बायु कितनी ही प्रचण्ड हो लहरें उधमकर उधके ऊपर ही क्यों न घा जाती

हैं पर उसे पचास नहीं कर सकतीं। बाबनी धरर उस पर बरा घँमसकर बैठा रहे, तो बाड़े धनन्ध तक पहुँच जाय नूब नहीं सकता। इस पुच्छ-सी बस्तु को बिराद घौर प्रकृष्ट बन प्रबाह का इतनी बीरता से सामना करते देखकर ऐसा जान पड़ता था मनों कोई प्रकृष्टी धारता प्राण-सागर की सहुरों को टुकुराती विघ्न-बाधाधो को कुचसती परमपाम की घौर बनी जा रही हो।

धमी घाय बछ्या भी न गुबरने पाया था कि बटा धा मयी घौर बर्पा होने मयी। घारे कपड़े भीय गये हुआ भी बसने मगी। सहुरें उल्लसती ही न भीं घसार्गे भरती थीं। कई बार तमेका नीचे को बट्टान से टकराया घौर हम बिरते-पिरते बचे। दस बकुरे-बकुरे हम काँपड़ी पहुँच गये।

२

पुच्छुन की इमारतें बेबकर बेघकितपार मुँह से निकल गया—नाम बड़े रहल बोड़े। एक ही इमारत है जिसे इमारत कह सकते हैं, पर साधारण हार्द स्कूनों को इमारत भी इतने धक्की होती है। तीन साल पहले यहाँ कई घौर इमारतें थीं। पर सन् १९२४ की बाढ़ में कई इमारतें बह मयी घौर हण-भण बाग बामू से भर गया। बिरे हुए धनना के बँडहर धमी तक नबर पाते हैं। हम सोम एक छोटो-से पक्के बर न टहरे, जिसे यहाँ पक्का बर्मसासा कहते हैं। यक य पँडित पधसिद्ध भी शर्मा भी था बचे थे। हम दोनो इसी कमरे में टहरे। स्वल किमा। इतने में भोजन धा गया। बाले बैठ यय। पेड बहुत स्वादिष्ट थे। अतिथि-सत्कार यहाँ की कितेपता है। मस्कर रोगी भी यहाँ से तुल हुए मिना नहीं जा सकता। सबसे बड़ा बालन्ध मुझे यहाँ के ब्रह्मचारियों को देखकर हुआ। ऐसे सरल-बुधय ईवासीन मुबक हमारे धंरेबी कसनेबों मे बहुत कम है। वह पँडितार्द बावावरण जो कसती की किती संकृत्य पाठशाळा न नबर पाता है, यहाँ नाम को भी न था। यहाँ विद्यालय का महमान प्रारंभ ब्रह्मचारी का मेहुमान है वह उसकी चारपाई बिछा बेना उसके लिए पानी भर बामेना घौर उसकी घोठी भी मुती से छोट बेना। यह विद्यालय नहीं किती श्रमि का धामन मानूम होता है। ऐसे उल्लाहो मुबक मने नहीं बेबे। जो काम कर्ये है उसमें धन-धन से निपट जाते हैं। प्रमाद की मात्रा इनम बहुत ही कम है। कुछ चीन्ने के लिए, कुछ जानने के लिए यह भोग सरब उत्सुक रहते हैं।

साहित्य-परिपक् का उत्सव मँध्या समय हुआ। साधार्य जी का ब्याख्यान हुआ। ब्रह्मचारियों मे धपनी-धपनी रचनाएँ सुनायीं। कुछ साहित्यिक नैल थे दो-भार गर्द्वे थीं एक-बो लेख एतिहासिक थे। इन रचनायां को किती ऊँचे धाररा से तोलना धन्याव होगा—ये प्रौढ़ सेककों की कृतियाँ न थीं पर किती विद्यालय के शिष्यों को धन पर गर्व हो सकता है। हाँ यहाँ जो मंभीत मुनने में धाया उनसे कुछ बिपरा हई। पुच्छुन में संनोठ-शिष्या का कोई प्रकृष्ट नहीं। शायद नवीत ब्रह्मचय के लिए बाधक समझ

जाता हो। मगर मुझे तो ऐसी धार्मिक संकीर्णता यहाँ कहीं न दिखायी दी। सबसे बड़ा धार्ष्ण्य मुझे ब्रह्मचारियों में विचार-म्हात्म्य पर हुआ। उनके राजनतिक सामाजिक धार्मिक विचारों में मुझे संकीर्णता का कोई चिह्न नहीं मिला।

हमारे दिन प्रीतिगोब बा। मोहनगृह में सभी ब्रह्मचारी धीरे धाधाम प्रज्ञा पर बैठकर धार्मिकों में मोहन कर रहे थे। हमारे धर्मगो विद्यालयों में कुत्तियों धीरे मेडो का व्यवहार होता है। यहाँ सभी तक धर्मविषय की बहू हवा गयी धायी। हमारी भारतीय रीति-नीति धाधार-विचार की रक्षा धरपर हो सकती है तो ऐसी ही उस्वाधों में हो सकती है। मगर शायध धव उधकी रक्षा करने की उकरत ही नहीं समझी जाती। धावकम वही पक्का धाय है, जो पाछे धीरे सभी बातों में विदेशियों का गुनाम हो केवल धम्य धर्मावमन्त्रियों का गाली देता धाय।

धाव सध्या समय एक कवि-सम्मेलन बा। पंडित पयसिह जी समाधि के। ब्रह्मचारियों में धपनी-धपनी रचनाएँ सुनायीं। धविकांत कविताएँ हास्यमय ही मगर में ब्रह्मचारियों के साहस की सारोप कक गा कि उन्हें धपनी धावक रचनाएँ सुनाने में केसमान भी सकोध न होता बा। किसी हव तक तो यह बाधोचित साहस सपहनीय है। हमने ऐसे बासक भी देखे हैं, जो किता धमा में लड़े कर िये बायें तो उनकी जिन्गी बंध बायनी। उध मिम्क के देखत तो यह सुधता फिर भी धाधयी है। पर रसिकधनों के सामने ऐसी रचनाएँ न सुनाता ही धाध्या जिन्हु सुनकर हँसी धावे। रचनाधों के धमाप हो जाने के बाद शर्मा जी ने विचारपूख धकनुता धी धीरे ब्रह्मचारियों को कूव हँसाया। शर्मा जो बितने बिद्वान् है उधने ही सरल धीरे उधार है। धीरे मेहमानबाबी तो उनका बीहुर है।

तीसरे दिन हमने मुक्याबिधता जी के धर मोहन किया। उधका स्वाध धयो तक भूमा नहीं। धमकेव जी उन सधकों में है जिनकी बातों से जी नहीं धरता। ध्यों-ध्यों बायें मानुम होती है धीरे धनोरंजन भी होता है। धाय धर्मगो साहित्य क धाधे उधता है धीरे भारतीय इतिहास के तो धाय पूरे माधिर है। ब्रह्मचारियों को उन पर धसीम धडा है। मुककुम धगर कुध न करे तो भी इधने मुककों के सम्मुक धरम धीवन धीरे उध्व विचार का धावता रधता है उधके बाधित रहने के लिए काधी है। धर्मगो कानेबा म ता धाधरयकठाधी की गुनामी सिलायी जाती है धीरे धाध्यापक धोव ही धत विधा के सबसे बड़े सिधक होते हैं। जिन्गी की बीड़ में वे मुकक क्या पेश पा सधते हैं जिनके धीरों में उकरतों की मारी बड़ियाँ पड़ी हों। मकधारी विधायों में बाहू वे धाधे पर पा बायें पर सरकारी धीकरियों से ता रान् नहीं बनते। मुककुम ने धरने जंवन के धोड़े में सार्धों में राष्ट्र के बितने रोधक पैसा किये हैं उधने धीरे किमी विद्यालय में म िये होंगे। धिधियाँ केरत पत्र प्राप्ट करना राष्ट्रीय सेवा नहीं। धाधार धीरे उधार के धार्धों को संभालना ही राष्ट्रीय सेवा है। धव तक मुककुम ने एक भी इकतानोन स्वाधक

निकाले हैं। उनमें सार्वजनिक जीवन में भाग लेनेवालों की संख्या घटायी है। यह कहने में क्या भी शरयुक्ति नहीं है कि हिन्दो भाषा को जितना प्रोत्साहन गुरुकुल से मिला है, उतना समय ही धीरे किसी विद्यालय से मिला हो।

गुरुकुल की उपयोगिता के विषय में पहले अनन्त में बड़ा उद्दिष्ट फँसा हुआ था। पर गुरुकुल से निकले हुए स्नातकों का सांसारिक जीवन देखकर इस विषय की सभी तर्कारें शान्त हो जाती हैं। एक ही इच्छाशील स्नातकों में उन्नीस तो गुरुकुलों में काम कर रहे हैं तो साहित्य-सेवा में मगने हुए हैं तोरैंस धाय-समाज के उपदेशक हैं पाँच मफलस बैठ हैं घट्टाएँ व्यापार में मगने हुए हैं और सात विदेश में शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। इनमें से जो उल्लेख्य होकर मोट घाये हैं। डाक्टर प्राणनाथ हाल ही में इंग्लैण्ड से वाक्टर होकर मोटे हैं एक और महाराष्ट्र वैरिस्टर हो घाये हैं। पिछले साल बार ब्रह्मचारी Senio Cambridge परीक्षा में सम्मिलित हुए और तीन पास हो गये। इससे यह सिद्ध हो जाता है कि ब्रह्मचारियों को संघर्षों में भी काफी सम्मत्त हो जाता है। महाराज सत्सङ्ग जी विद्याभ्यासकार न हाल ही में ब्रह्मचर्य पर संघर्षों में एक ग्रन्थ लिखा है जिसकी सँतो और भाषा दोनों ही परिभाषित हैं। किसी युनिवर्सिटी के विद्यार्थी के लिए ऐसी पुस्तक लिखना सब का कारण हो सकता है।

गुरुकुल विद्यालय में एक आधुनिक विद्यालय भी है। यहाँ ब्रह्मचारियों को बड़ी कृष्टियों तथा रमों का भी ज्ञान हो जाता है। शरीर-विद्यालय को शिक्षा भी इन बच्चों को दी जाती है। हमें आशा है कि यहाँ के पढ़े हुए बच्चों द्वारा आधुनिक का उद्धार होगा। वे केवल पुरानी रास्ते के फकीर नहीं होंगे बल्कि मानव-शरीर के तत्त्वों को जानते हैं और राज्य-चिकित्सा में भी वक्षस रखते हैं।

गुरुकुल की प्राकृतिक लोभा का तो कहना ही क्या। बसवान् चरित ऐसे ही बसवान् में विकसित होते हैं। सामने यंया की बस-क्रीड़ा है पीछे पत्तों का मील संगीत। दाहिने-बाँवें भीला एक शीतल और कल्पे के लूच एसी साक धनी हुई विमल वायु में साँस लेना स्वयं भारतसुद्धि की एक क्रिया है। न शहरों का दूध-नी न यहाँ की स्वच्छ वायु। ब्रह्मचारी गंगा माता की योत्र में किमोर्लें करते हैं और बड़ी दूर तक लैट्टे जैसे बातें हैं। नवतों की दूषित बसवान् में यह गुण कहीं। मगर पिछनी वाद में विद्यालय को भी शक्ति पहुँचायी है उसको देखते हुए सब विद्यालय का स्थान बस इनके का प्रश्न पाषण्डक हा गया है। इनका प्रबन्ध भी हो रहा है।

माधुरी अप्रैल १९२८

## बच्चों का स्वाधीन बनाओ

बहुत से लोग यह शीघ्र देखकर ही चौंक पड़े थे। बाह ! सड़के तो घाग ही स्वाधीन होते हैं। वह तो बचपन ही में न पुद्ग पर हाथ रखने देते हैं न मुँह में लगाय बालने देते हैं और जहाँ परा समझ घायी कि सरपट दौड़ना शुरू कर देते हैं। जल्दत है कि उन्हें घाजा पालन सिलाघो बच्चों का धरम करना सिलाघो संयम गिलाघो। उन्हें स्वाधीन बनाना तो ऐसा ही है जैसा घाग पर लेम छिड़कना।

यह समय है कि सड़के धाजकल उससे कड़ी ज्यादा स्वाधीन है जितन कि उनके माता-पिता इस उम्र में लुप वे। इन स्वाधीन प्रवृत्ति का जो नतीजा हो रहा है उसे देखकर यदि माता-पिता के मन में ऐसी हवा पैदा हो तो कोई धारधप नहीं बलिन इनीसिए तो जरूरत है कि सड़कों को स्वाधीन बलने की शिखा दी जाय। बागक जिनना ही बलशामी होगा उठना ही स्वाधीन भी होया लेकिन घामी हम उम इमकी शिखा मड़ी देत। धवर मुबकों को जूज के लिए भरती किया जाय तो उन्हु बलापय जितान की जरूरत होती है। धवर वे घायक बनना चाहें तो यह सम्भव नहीं है कि जितान सिगमे घाप ही घाप घाने मग बायें लेकिन यह देखकर भी कि हमार बालक बन जितन स्वाधीन घाज है उतने जिनो घरीत कास म न वे। हम उन्हु बचपन में इन घमस्या को हल करने की उचित शिखा नहीं दे रहे हैं।

कोड़े से सड़कों में बालक को प्रभावत एना शिखा देनी चाहिए कि वह जीवन में अपनी रखा घाप कर सके।

वह तो मानी हुई बात है कि घाज के बालक स्वाधीन हैं और घय जितना के हम की बात नहीं है कि हम बचा का पलट दे। इसके बहुत से कारण हैं—परिवारा का देखकों ने निकलकर सड़कों में घाबाय होना जहाँ परिचित जना के पबाय घीर स्वभाव से मोग मुक्त हो जत्ते हैं पुराने नीति-ध्वजहारों का सिपिन हो जाना जिनका पहने बिदेसी मबकों पर बहुत दबाव पड़ता था। मोटरकार मिलेना घीर समावापन मब स्वाधीनता की प्रवृत्ति को मजबूत करते हैं।

लेकिन हम पर घायू बहाने से बाम न पलेया। पुराने जमाने में जब बचन का हुसम घीर घाज मानना ममाज का नब मे माग्य नियम या घीर हर एव छोटी बलिन घपने से ठेकी जाति के मामल घाज मे गिर घराती थी तब बालकों को बचपन ही मे घाज करना सिपाया जाता था घीर उचित भी था लेकिन घाज क्रिया बाहरी मना की घाजाघों को मानने की शिखा देना बालकों को सबसे बड़ी जल्दत की तरफ से घीरें बन्ध कर बना है। मुबकों के घामने घाज या परिस्थिति है उममें घाज घीर मप्रता का इतना महत्व नहीं है जितना ब्यक्तिगत बिचारों घीर कामों की स्वाधीनता का। हम नहीं शिखा का घाजय क्या है ? घाजा-मापन हमारे जीवन का एक घीर है

॥ बच्चों को स्वाधीन बचाओ ॥



ताने । ऐसा बालक मंदिर परिवार के सम्मान को रखा करेगा । यहाँ उसे स्वाधीन रूप  
 काम करने का पाठ सिखा रहा है । हो सकता है कि इस विषय में कुछ माता का कड़वा  
 अनुभव हो—बुबकों ने परिवार के हित को धोर ध्यान न देकर अपने ही अधिकारों पर  
 धोर दिया हा । धर्मिमात धोर विभाग उनको राज में धाबकन के मुबकों में उबरत से  
 ज्पाया मोनुर है लेकिन यह बाबक का रोप नहीं ता बाब का रोप है । बालकों को यह  
 सिखा देने के लिए समय से बुद्धि धोर सहानुभूति की उबरत है । इसका धायय यह है  
 कि बच्चा ज्यों ही धाले धोर पले में फक समझने लगे उनके हाव म पले दे रिये प्रार्थ  
 उनका बजोफा बाँच दिया जाय धोर कुमाराज्बन्दा में ही उन्हें इस सोच्य बना दिया जाय कि  
 वे पले का मूल्य समझने लगे धोर लख को धामरनी के धरर रखने को धामन मीबे ।

यह इन बातों पर ध्यान नहीं देते । कितने ही माँ-बाप ता धाले लडका के विषय  
 उनसे ही बेबर होते हैं कितने धाले ता या कुल के विषय में । बरमात धोर शरीफ  
 बालकों की पारिवारिक स्थिति को परीक्षा मो जाय तो मिड हो जायया कि धाम-काल  
 में जो दोष या जाले है उनका कारण परबालो की नाररबाही है ।  
 बच्चों म स्वाधालता के माय वेग करने के लिए यह उबरती है कि कितनी जल्दी  
 ही मके उन्हें कुछ काम करने का धयनर दिया जाय । धाम तीर पर यह समझ जता  
 है कि धामे माता-पिता का कनम्य धपनी मन्थालो को कठिनाइयो म दूर रबना है ।  
 इनका फल यह है कि उँसे जालराना म नडके क्लिवाहीन हो जाने है । जब उगू बिना  
 कोई उद्योग किये ही मारी बीबेँ मिन जाती है या ठिर के काम क्यों करे ? हाकीकि  
 बिचार शाल्य का यह एक मोटा सिद्धान्त है कि नडको को धरने हाव से धरने उद्योग  
 म कोई काम कर दिखाने में या को-बीब बनकर जहो कर देने में कितना धानन्  
 मिमता है उतना धोर किसी बात में नहीं । नडका धपनी कागड की माय पानी में  
 बातकर कितना लश होता है उतना बने-बने बिराल बहारा का बनने देभकर  
 नहीं होता ।

हमारे सुधामित मररलों में धब इन बात को सोच समझने लगे हैं कि नडकों  
 का हाव से कुछ काम कराना धामन बनेँ की मानिक धोर मैत्रिक साधना है । हर एक  
 घर में एसा ही हावा बाकिग । नडकों म धामन-बिरबाम उपन्र करने का इमन उत्तम  
 कोई मायन नहीं है ।  
 मान्य परा में धरने हाव से कुछ कला धरमाय समझ जाता है । नडकों के  
 हर एक काम के लिए लीकर मये हुए है । धाले-जाने के मिर् मोन्ने हैं उन्हें तीर करने  
 क लिए बूब साड करने पहिना रिये जाते हैं धोर ताकोर कर दी जाती है कि बने  
 मिये न होने पावे । उनके मनोटेन क मिर् निमेया है बिबहापार् है जहाँ उन्हें केवल  
 शीय से दैमने की उबरत है नुर कुछ करना नहीं पडया । इमने पतगपना वा जो बुरी  
 भाव्य पड जाती है नडू किलगी नर गाव नहीं धोरना । लेमे ही कितान में पने हुए

॥ बच्चों को स्वाधीन बनाओ ॥

मुक्त है। जा अपने स्वाम के लिए अपने माइनों का ग्रहित करते हैं, सरकार की बेबा खुशामद करते हैं।

हम बहुधा लड़कों को कोई नया काम करते देखकर भवड़ा जाते हैं। बड़ी धु रण है, कहीं टोच न डाले। सबके ने कमम हाथ में सिमा धीर हूँ हूँ हूँ का शोर मचा। ऐसा नहीं होना चाहिए। सबकों की स्वामानिक रचनाशीलता को जगाया चाहिए। सबका सिसोने बनाया जाये, बेतार का यत्र बनाया जाये, मसुमो का टिकार करना जाये, तरकारियाँ पैदा करना जाये, कपड़े सीना जाये, बीज बनाना जाये गार्कों में प्रमिनय करना जाये, या कविता मिलना जाये, उसे वाचा मत वो। धर कोई बातक छात्र के चर हस्त भी प्राकृतिक शक्तियों क बीज न रहे, घरिया न किरती जनाये मैदान में गाडी जनाये या फावण सकर जेत न काम करे तो उसे घरम-मिस्वास का जो प्रमुमत्र होमा बहु पुस्तको धीर उपदेशो से नहीं हो सकता। धारत्तर्भ वो यह है कि बहु लोग भी बिनकी ज्ञानी कठिनाइयों न दुखरी अपने बासकों की बीजन-संधाम के उत्साह बदलनासे कामो से बचाते हैं।

हम यहाँ यह बतना देना चाहते हैं कि स्वाधीनता से हमारा मतलब क्या है ? इसका यह मतलब नहीं है कि हम बिना रोक-टोक को कुछ जाये करे धीर वो कुछ जाई न करे। इसका मतलब यह है कि बाहरी बबाब की जगह हम में धारम-सयम का उदय हू। सच्चा स्वाधीन धायमी बही है जिसका जीवन धात्मा के शासन से सममित हो जाता है जिसे किमी बाहरी बबाब की जकूरत नहीं पडती। बासकों में इतना विवेक होगा चाहिए कि वे हर एक काम के बुख-भोप को भीतर की धाँको छ देखें।

अप्रैल १९२०

## मानसिक पराधीनता

हम वैहिक पराधीनता से मुक्त होगा तो चाहते हैं पर मानसिक पराधीनता में अपने-आपको स्वेच्छा से जकूरते जा रहे हैं। किसी राष् या जाति का सबसे बहुमुख्य प्रंग क्या है ? उसकी भाषा उसकी सम्मता उसके बिचार उसका कसब। यही कस बर हिन्दू को हिन्दू मुसलमान को मुसलमान धीर ईसाई को ईसाई बनाने हुए है। मुसलमान इमी कसब को रखा के लिए हिन्दुओं से घसब रहना चाहता है, उसे भय है कि सम्मिभस से कहीं उसके कसब का रूप ही बिभूत न हो जाय। इसी तरह हिन्दू भी अपने कसब को रखा करना चाहता है सकिम क्या हिन्दू धीर क्या मुसलमान दोनों अपने कसब की रखा की दुहाई देते हुए भी उसी कसब का बसा बाँटने पर पुने हुए हैं।



कमचर ( सम्पत्ता या परिष्कृति ) एक व्यापक शब्द है । हमारे धार्मिक विचार हमारी सामाजिक कृषियाँ हमारे राजनैतिक विद्वान्त हमारी भाषा और साहित्य हमारा रङ्ग-महल हमारे धाधार-व्यवहार सब हमारे कमचर के अंग हैं पर धाम हम कितनी बेदरी से उसी कमचर को जड़ काट रहे हैं । परिषदवादी को शक्तिशाली देखकर हम इन अम में पड़ गये हैं कि हममें गिर में पाँच तक धोय हो दोय हैं और उनमें गिर से पाँच तक पुण ही मुठ । इस धमभक्ति म हम उनक लीप मो गुण मानुम होते हैं पीर धरने गुण मो दोय । माया ही को मे सोचिए । धाम अंग्रेजी हमारे मध्य-समाज की व्यावहारिक भाषा बनी हुई है । सरकारी भाषा तो यह है ही बपुजों में तो हम अंग्रेजी में काम करना हो पड़ता है पर जब भाग को मत्ता के हल ऐसे बस्त हा गये हैं कि निजी विद्वियों में घर की बातचीत में मो उसी भाषा का बाध्य लेते हैं । स्त्री पुण्य को अंग्रेजी में पत्र लिखते हैं, पिता पुत्र का अंग्रेजी म पत्र लिखता है । दो मित्र मिलते हैं, तो अंग्रेजी में बातचीत करते हैं कोई मना होता है, तो अंग्रेजी म । बावरी अंग्रेजी में लिखी जाती है । बाह ! क्या भाषा है ! क्या मोच है ! कितनी मायिका है, विचारों को व्यक्त करने की कितनी शक्ति शब्द-अंशर कितना विशाल साहित्य कितना बहुमूल्य कितना परिष्कृत कविता कितनी ममस्पर्शाली यद्य कितना अयवोधक ! जिसे देखो अंग्रेजी कबान पर लट्टू उसके नाम पर कुर्बान है । यहाँ तक कि हमारे योग्यता और विद्वता की यही एक परख हा गयी है कि हम अंग्रेजी बोसने या लिखन में कितने कुशल हैं । घाउं क्लास से अंग्रेजी के मुद्दाविरों को रटन शुरू हो बानी है पर्यायों के मूक अचने पर विचार होने समता है, अरनी अंग्रेजी बल्लता में अंग्रेजों का ऐक्सेंट और उच्चारण के साथे इस प्रयत्न में जान कपा ही जाती है । अगर किसी स्वर का उच्चारण अंग्रेजों से उनके मौखिक मल्ल क दोषों के कारण नहीं होता तो हम मो अरने में बही बात पेश करे । धाम तक abc जैसे साधारण शब्द का भी टीक उच्चारण—जो अंग्रेजों को नी जेजे—बहुत कम लाग कर मकने है और हमारे यह मनोवृत्ति राष्ट्रीय भावों के साथ ही साथ बढ़ती जाती है । यहाँ तक कि अंग्रेजी ही पठित-समाज की भाषा बन गयी है । अरनी भाषा में बात चीत करते समय कभी-कभी एकाध अंग्रेजी शब्द धा जाने को तो हम मुमाओ के क बिल समझते हैं लेकिन कुल ता यह है, कि ऐसे मरुतों की नी कभी नहीं है, जो बहुत बोड़ी-सी अंग्रेजी बालकर नी अंग्रेजी ही म अरनी योग्यता का प्रयत्न करते हैं । अन्व स्वयं में भी-किसी अंग्रेज से पीर अंग्रेजी भाषा में न बोवेना मपर यहाँ हम धानस में ही अंग्रेजी बोमकर अरनी मायनिक सामता का विशेष पीटते हैं । मैं उस मनोवृत्ति की कल्पना भी नहीं कर सकता जो एक हो भाषा-मायियों को अंग्रेजी में बात करने की प्रेरणा करती है । किसी मन्राही बंपानी या चीनी से तो अंग्रेजी में बात करन का कोई अर्थ हो मरता है । उनसे बातें करनी उचरी है और इस बल और कोई ऐसी भारतीय भाषा नहीं जिनका मभी "गणवालों का एक-मा जान हो

मगर एक ही प्रांत के रहनेवाले एक ही भाषा के बोलनेवाले क्यों घापस में घंघेड़ी बोलें क्यों घंघेड़ी में पत्र लिखें क्यों प्रहाराग वा 'नमस्कार वा 'बंदे' या 'नमस्ते' वा 'उत्सनीम' करने के बदल 'मानिङ्ग-मानिङ्ग' कहे, यह मेरी सवक मे नहीं घाता । क्यों हल्को ही मुँह से निकले मैं इसकी कल्पना नहीं कर सकता । सभार में ऐसे प्राणियों की कमी नहीं है, जो यैयनी की चीजों का व्यवहार करके भी खिर उठाकर बसते हैं । उन्हें यही खुशी है, कि जोय मुझे इन चीजों का स्वामी समझने हाने । घंघेड़ी का व्यवहार करनेवालों की मनोवृत्ति भी कुछ इसी तरह की होती है । या तो उनका अभिप्राय यह होता है, कि देखें हम लोगों में कौन घंघेड़ी घंघेड़ी बोलता है, या यह कि देखो हम जितनी सफ़ाई से घंघेड़ी बोलते हैं तुम में यह सफ़ाई नहीं है । और इसका परिणाम यह होता है कि घंघेड़ी घंघेड़ी लिखनी और बोलनी तो वा जाती है पर अपनी भाषा भूल जाती है या हेय और तुच्छ समझकर भुला भी जाती है । यह हमारे सिद्धि-समुदाय की सज्जावतक ही नहीं शोकजनक मानसिक शसता है ।

झाँसीसी कवि कब म कविता करता है कमन कमन में कसी रसिबन में कम से कम जिन रचनाओं पर उसे पत्र होता है, वह अपनी ही भाषा में करता है लेकिन हमारे यहाँ के सारे कवि और सारे लेखक घंघेड़ी में लिखने लगे अगर केवल कोई प्रकाशक उनकी रचनाओं को छापने पर तैयार हो जाय । जिन्हें प्रकाशक मिल जाते हैं वह खुशे भी नहीं जाहे प्रसन्न सामोचक उनका मनाक ही क्यों न उठारें मगर वह बुरा है ।

हम मानते हैं कि घंघेड़ी भाषा प्रौढ़ है हरेक प्रकार के भाषों को सामानी से बाहिर कर सकती है और भारतीय भाषाओं में सभी यह बात नहीं घायी लेकिन अब बही मोग जिन पर भाषा के निर्माळ और विकास का दायित्व है बूझती भाषा क उपाय हो जायें तो उनकी अपनी भाषा का अविध्य भी तो सुख्य हो जाता है । फिर क्या विदेशी साहित्य की नीच पर आज भारतीय राष्ट्रियता की दीवार खड़ी करेंगे ? यह हिमाकत है । आज हमारा पठित-समाज साधारण जनता से पूरक हो गया है । उसका रहन सहन उसकी बोल-बाल उसकी बेप भूवा सभी उसे साधारण समाज से अलग कर रहे हैं । आज वह अपने बिल म फूला नहीं समाता कि हम कियेने बिरिष्ट हैं । आज वह जनता को नीच और गैवार समझता है लेकिन वह खुद जनता की नजरों से बिर गया है । जनता उससे प्रभावित नहीं होती उसे 'किरटा वा 'बिगईल' वा 'साहज बहापुर' कहकर उसका बहिष्कार करती है और आज खुश म क्लासता वह किसी घंघेड़ के हर्षों पिट रहा हो तो मोग उसकी दुपति का मजा उठावेंगे कोई बसके पास भी न कटथया । बरा इन गुलामी को बेधिय, कि हमारे विधानों में हिन्दी या उर्दू की घंघेड़ी द्वारा पढ़ायी जाती है । अगर बेचार हिन्दी-श्रीफ सर घंघेड़ी में लेखन न है, तो आज उसे मानावक समझते हैं । घायी क मुर में कर्मक लभ जाय तो यह शर्माता है, उत कर्क

को छिपाता है, कम से कम उस पर भ्रम नहीं करता पर हनुमत्पत्नी दासता के कसक को  
 चिन्तासे किरते हैं, उसकी गुमाशह करते हैं उस पर अभिमान करते हैं मानो वह नेक-  
 नामी का समया हो या हमारी कीर्ति को भ्रमा ! बाहरी भारतीय दासता तेरी  
 बलिहारी है !

माया को छोड़िए, बेप-भूपा पर भाइए । ध्यान उन साहब बहादुर को देख रहे  
 हैं जो हूट-हूट सम्राट से इधर-उधर देखते बभ्रु का रहे हैं । यह हमारे हिन्दुस्तानी  
 आरोपियन हैं । रस्ते से हट जाओ, साहब बहादुर धाते हैं ! साहब को समाम करो  
 धार पूरे साहब बहादुर हैं । धुके लो धाप छिर से पाँव एक मुसाम नजर धाते हैं जो  
 धपनी बुलायी का उली बेशर्मा से प्रशान कर रहे हैं जैसे काई बेरया धरने हाब-नाम  
 का । धारम धारमबल धारम है बडे डूबे दरने का धारमपीरब धार मोरु-मरु को  
 डूकरा बेते हैं किन्ती के नाक-भौ छिकोड़ने की परवा नहीं करते जो धपने स्वाप के लिए  
 लपवोवी या धपनी मनोनुष्टि क लिए बाधनीय समझते हैं वह धबाध्य रूप से करते हैं ।  
 क्या मोरुमरु का धारर करें ! मोरुमरु के मुसाम नहीं लेकिन उली धारमपीरब के पुतने  
 से कहिए, कि बरा राम को बिना फेस्टकैप लवाये किन्ती धिरेजी-स्वत म बना जाय तो  
 उसके हाब-पाँव फूल जायेंगे लून छपडा हो जायगा 'बैहरा फल हो जायगा' क्यों ?  
 इसलिये कि उसका धारम-पीरब केवल धपन माइयाँ पर रोब जमान के लिए है उसमें  
 धार का नाम नहीं । वह जिब समाम म मिलना चाहता है, जमकी छोटी स छाटी बड़िया  
 की भी धबईलना नहीं कर सक्ता । जनता को वह समझता है हवारा कर ही क्या  
 लंबी यह बुरा रहे लो बरा धीर नाराज रहे लो क्या यह हमारु कुछ बना-बिगाड़ नहीं  
 सक्ती । बिनसे कुछ बनने-बिपड़न का मय है उनके सापने वह मीबो बिस्वी बन जाता  
 है । धपने एक मित्र साहब बहादुर से मैने पूछा—गुम इन डल से क्यों रहते हो लो बडे  
 दारुनिक नाब से बोने—इसलिये कि धिरेजी से मिलने जाता हूँ लो जूने बाहर नहीं  
 उठारने पड़ते । जो मोप धचकल धीर टोपी पहनकर जाते हैं उन्हें जूने उठार देने पड़ते  
 हैं । मैं कहता हूँ लो स्वाथ मेकर धिरेजी से मिलने नहीं जाते वह धचकल नहीं मिजइ  
 भी पहने लो लो उन्हें जूने उठारने की जरूरत नहीं धीर लो स्वाथ सेकर जात है वह  
 किन्ती बप में हूँ उनकी धाला दबी रहती है । ऐमे प्राणियों की बया उठ धारमी की  
 ली है, जो धपने कपडे पर एक वाग को छिपाने के लिए साध कपड़ा ही कासा रैप ले ।  
 धार स्वाथ बजबूर कर रहा ही लो धेरे बिचार में लो जूने उठार देना इससे कहीं धभवा  
 है, कि इन उठ धपमान से बचने के लिए बेहयाई का एक धपराथ धीर धपन धिर पर  
 से । यह मरु समझो कि धंजल सुम्हार कोट-नेट देखकर सुम्हार ध्याना धारर करता  
 है । धीर धार ऐना हो भी लो धपना बेव छोड़कर लम धारर को लेना एक प्यहो  
 शोरवे के मिर धपने जम्ब-सिद्ध धीरब को बेचना है । एक बूसरे मित्र से यही प्ररन किना  
 लो बोने—इससे छठर करने में बडा मुनीवा होता है जम्ता समझती है यह कोई

साहज है, येर इन्हे ये नहीं धाती । एक धीर साहज मे कइ—धंधवी कइ पइने से देह मे वड़ी खुस्ती धीर फुरती धा धाती है । परब मोन तरह-तरह की रसीलों से धापका समाधान कर बने । मे पूछता हूँ—क्यों साहज क्या धारी खुस्ती धीर फुरती धंधवी कइनों मे ही है ? क्या यह कोई तिमिरमाती बीज है, कि बदन पर धामी धीर धापकी बेह न स्फूर्ति बीड़ी ! यह रसीलें जगों धीर नजर है । ही इत तक में धनश्य सार है, कि जब साध संसार योरोपीय धप के पीछे धा रहा है, तो धाप उससे धलग नैरे धा सकते है । डूधरी रसील यह हो गकती है, कि हमार कोई जातीय परिधान भी धो नहीं है । निध-निध प्रांतीय परिधानों की धपेधा धो एक सार्वभौतिक योरोपीय परिधान का होना कहीं धच्छा है । बेसक यह टेका प्ररन है । यह बात भी विचारलीय है, कि धन्य देशों मे धमीर-गरीब सबका पहनावा एक ही है धाहे उसके कइने मे क्रिस्ता ही सन्तर हो । धापके यहाँ किसान मिर्बाई धा नीमधास्तीन धा कुर्ता-बोती पहनता है कहीं सलवार है, कहीं पगड़ी कही धांधिया । पहले एक जातीय टाठ की सृष्टि धो कर जीजिय, फिर बिनामती पहनावे पर धाधेप कीबिधा । भावा ही की नीति एक जातीय पहनावा भी बरसों के बाद कहीं धाकर धाधिमृत होता है । क्रिती संस्था धा नीति-धार उसकी सृष्टि नहीं की धा सकती । धमी भारत की एक सार्वभौतिक परिधान के लिए बहुत दिनों तक इन्तजार करना पड़ेया मगर अब तक बह समय नहीं धाता तब तक के लिए हमार विचार में इस नीति को धामने रखना धाहिए, कि यथासध्य जनधधि का धम्मान किया जाय । धबर क्रिती प्राण में धनता कोट पहनती है, धो वहाँ के लिए कोट-पठनून ही उपयुक्त है । इसी नीति जिन प्राणों में साधारण धनता कुरता धीर बोती पहनती है वहाँ कुरता धीर बोती को ही जातीय परिधान के पद पर धम्मानित करना धाहिए । धधिम्राय केवल यह है, कि शिबित-मयात्र केवल धपनी बिनिष्ठता धा प्रमुत्ब धताने के लिए ऐसे धप-नूपा का ध्यवहार न कने जितम बिदेसीधन की ककक धाती हो । हो सक्या है, कि कुछ लोगों को धंधेवी बेप में रहने पर भी धरा धमिमान धा स्वाध-सिद्धि की भावना न हो पर दुर्भाव्यवता यह बिदेसी बेप धनता की धीकों में धटकता है धीर इमे धारस करनेवाले धाहे बेधता ही क्यों न हों वे स्वाधति के होही धीर साधक धाति के धगन्य जल के क्य में मजर धाते है । संभव है, स्वाधीन हो धाने पर यही हमार स्वाधतीय बेप हो धाय मेकिन तब इधमें बह कुर्मत्कार न रहेंगे जिन्होंने इस बलत इधे इतना मयहोमनीय बना रक्या है । धध सोधिए, क्या बह एक पड़े-सिसे ध्यक्ति धो सोभा धैता है कि बह धपना रहन-सहन पेंधा बना ले कि धनता इधे धडा की धटि से बेकने के बरले बुधा धा जय की दृष्टि से देखे । क्रिती समय धन धधि को पद-धनित करने का नतीजा बुध धी हो सकता है धीर यह तो स्पष्ट ही है, कि धगर धनता के धारों में प्रमुत्ब होता धो बहुत से धंधेवी बेप के प्रमी यह बेप धारण करने के पहने ध्याध विचार से काम लेना धानश्यक धमधने मगर हमारो यह मनोभूति

माया घोर बेव तक ही रहती तो अधिक चिंता की बात न थी। हमने हमारे जितन घोर सामाजिक बिचारों पर भी धयना प्रमुख जमा लिया है घोर धर्मो में रोक-बाम न की गयी तो एक दिन हमारी भारतीय संस्कृति ही का लोप हो जायगा। यह एक साधारण-सी बात है कि पराधीन जाति को धरने में भारी बुराईयाँ घोर राज्य करनेवासी जाति में भलाईयाँ ही भलाईयाँ नजर आती हैं। हमारी सम्मता कहती है—धरने जखतों का मृत बख़्तो ताकि तुम्हारी जात में कुटुम्ब घोर परिवार का भी कुप उपकार हो। पश्चिमी सम्मता का धारण है—धरनी जखतों को लूब बख़्तो चाहे उसके लिए दूसरों को बेब हो क्यों न काटना पड़े। धरने हा लिए चिंता घोर धरन हो लिए मरो। हमारी सम्मता कृपि प्रधान थी हम गाँवों में रहते थे जहाँ धरने धारणीयजता का संभग बख़्त-सी बुराईयाँ म हमारी रक्षा करता था। पश्चिमी सम्मता बख़्तमान-प्रधान है घोर बड़े-बड़े नपतों का निर्माण करती है जहाँ हम सारे बखतों से मुक्त होकर दुपारख में पड़ जाते हैं। हमारी सम्मता में सम्मिलित-कुटुम्ब एक प्रधान धंग था। पश्चिमी सम्मता में परिवार का धम है—बेबन स्त्री घोर पुण्य। दोनों म बुराईयाँ घोर भलाईयाँ दोनों ही हैं पर जहाँ एक में बेबा घोर त्याग प्रधान है जहाँ दूसरे म स्वाब घोर सकीलता। हमारा सम्मता में नम्रता का बड़ा महत्व था पश्चिमी सम्मता में धारम प्रत्या को बही स्थान प्राप्त है। धरने को लूब सपहो धरने मुँह लूब मिर्मा-मिट्टू बना। हमारी सम्मता में बन का स्थान गौख था बिदा घोर धारख से धार मिमता था। पश्चिमी सम्मता में बन ही मुख्य बम्पु है। हम भी बन कमसे थे पर बदा के साथ। पश्चिम भी बन कमता है पर बदा का नाम नहीं। हमारी सम्मता का धारार धम था पश्चिमी सम्मता का धारार धमप है।

अकिन यहाँ हम धरन सपुणुओं को प्रत्या नहीं करने बैठे हैं। हमारे कहने का तात्पय बेबन यह है, कि हमें हरेक पश्चिमी लोख के पीछे धारिँ बंद करके धरने की लो प्रकति हो रही है, बहु बेबन हमारी मानिक पदाधन के धारख। हमारी सम्मता में लो रोग थे मगर उसकी दबा योरोपीय सम्मता की धंपमचिन नहीं है। उसकी दबा हमें धरनी हो ससुर्ध म लोखनी थी। योरोपीय सम्मता की नक़न करके हम धरने धरनी भी जन्हीं दबाधों का ध्यधहार करना पड़ेगा लो योरोप कर रहा है। यारोप धप धर्य है, उसे धरने नधर का धरन नहीं घोर धार यारोप क बिधारबलु गौब कह रहे हैं, कि यह संस्कृति धर बिध्वंस के धन में जानेवायी है। क्या हम लो जन्हीं बुराईयाँ की नक़न करके धरनी संस्कृति को भी बिध्वंस क धन में धकेलने का लैयाटी करे? यह समक नीधिप, कि यह राजनीतिध परिध्वित नहीं रहेयी पर हम परिस्थिति में हमने धरने धरिताध को लो धिया धरने धम की नता लो थी धरनी संस्कृति को लो बंडे लो हमारा धंग हो जायगा।

जनधरी १२३१

## राष्ट्रीय कार्यों में गुलामी

हम यह देखकर महान् दुःख होता है कि हमारे राष्ट्रीय कार्यों में अब भी अंग्रेजी का बड़ी प्राधान्य है और महारत्ना भी ने कौबसी कार्यकर्ताओं को हिन्दी में नियम न जो उद्देश दिया जा उस पर ध्यान नहीं दिया गया। अब प्राप्तमाने अगर हमारे प्रांत में अंग्रेजी का प्राधान्य तो तो किसी हद तक समा के पास है मगर तुरंत तो यह है कि इसी प्रांत के कौबसी कार्यकर्ता अंग्रेजी में पत्र-व्यवहार करना अंग्रेजी में रिपोर्ट लिखना अंग्रेजी में मोटिस प्रकाशित करना अपन लिए शान समझते हैं। अब राष्ट्रीय नेताओं के हाथों राष्ट्र भाषा का यह अनादर हो तो किससे शिकामत की जाय। शायद माया में लिखना-पढ़ना हमारे कौबसी नेताओं को भी अपनी मर्यादा के विरुद्ध जान पड़ता है। वह अपनी अंग्रेजी योग्यता का प्रदर्शन करके जनता को शायद प्रभावित करना चाहते हैं। अगर उनकी यह मनोवृत्ति है और इसके सिवा ही क्या सकती है तो ऐसे सम्मान तथा के पास है क्योंकि वह खुद अपनी सामाजिक पराधीनता की डीढ़ी पीट रहे हैं। इसमें बहुत से अंग्रेजी अंग्रेजी योग्यता रखते हैं। वह दिन में सोचते होंगे अगर हिन्दी में लिखा-पढ़ा तो हमारे अंग्रेजी पढ़ने का क्या फल? यह भी हो सकता है कि उन्हें हिन्दी में लिखने का शक न हो। यदि ऐसा है तो जनता को चाहिए, ऐसे गुलाम तरीकत के लोगों का विरस्कार करे। कांग्रेस जो कुछ अन्य देशों में प्रचार के लिए करती है, उसका अंग्रेजी में होना तो हमारी समझ में आता है। अन्य प्रांतों में पत्र-व्यवहार करने के लिए भी अभी कुछ दिन अंग्रेजी का मुँह ठाकना पड़ेगा। लेकिन जो बातें इसी प्रांत तक रह जाती हैं उनके लिए अंग्रेजी के बामन में मुँह खिलाना सम्भाव्य और राष्ट्रीय आदर्शों के सम्बन्ध प्रतिकूल है। कम से कम इस प्रांत में जो लोग हिन्दी लिपि उठानी सरलता से नहीं लिख सकते जितनी सरलता से वह अंग्रेजी लिख लेते हैं उन्हें अपने ऊपर सन्निवत होना चाहिए।

अप्रैल १९३९

## अंग्रेजी भाषा का रोग

हम 'हम के पाठकों का ध्यान इस विषय की ओर पढ़ने भी आकृष्ट कर चुके हैं। हमें यह निश्चय हुआ है कि हमारे राष्ट्रीय कार्यकर्ता भी इस रोग में उठने ही प्रवृत्त हैं जितने सरकार के कर्मचारी या बकीस या कालेजों के अध्यापक। इसमें तन्मूह नहीं कि वे सार पढ़ने लगे हैं पर उनके मनीषाओं में सतमात्र भी संस्कृति नहीं पायी। किसी कर्मचारी की बैठक में जैसे जाइए, प्रायः सारकारी महाराजों को फर्ति से



नही सुनी गयी। पर भारत में चार हजार फ़ीजी अफसर तैयार करने में वैदित्त या सप्तर वर्ष लगते हैं। इनसे सरकार की नीयत साफ़ बाहिर होती है। हम पूछते हैं हमें चार हजार अफसरों की आवश्यकता ही क्या है? जब हमारी देश-रक्षा का भार हमारे ऊपर होगा तो हम निश्चय कर देंगे कि हम इससे कम अफसरों की आवश्यकता ही क्या है। इतने ही वर्षों में हम ऐसे-वैसे दो विद्यालय खोल सकते हैं और वैदित्त वर्ष में जो काम होगा उसे सत्रह वर्षों में पूरा कर सकते हैं। हमारा ता' क्याम है कि फ़ीजी कालेज के प्रसंग होने की आवश्यकता नहीं। हमारे विद्यालयों में जसे माईस का प्रबन्ध है वैसे ही फ़ीजी टापीस का भी प्रबन्ध हो सकता है। पहाड़ छोड़कर बुढ़िया निकालना हमारी सरकार की पुरानी नीति है। और, हमें यही सुझाई है कि कई कमीशनों और कमेटियों के बावजूद यह नीयत तो बान्नी। अब यह देखना है कि इस रिपोर्ट को काय रूप में माने म किठना समय लगता है। रिपोर्ट में १९३२ से कालेज खोल देने की बात कही गयी है। देखिये।

सितम्बर १९३१

## नवीन और प्राचीन

पूरा और परिष्कृत को प्राचीन संस्कृति में विशेष अन्तर न था। हाँ चूँकि नयी संस्कृति का बड़ा भाग परिष्कृत से आया है, इसलिए उसे परिष्कृत की उपाधि मिल गयी है। परिष्कृत संस्कृति हमें बहुत दिनों तक अकार्षणीय में डाले रखा। उसकी बटुक-मटक देखकर हम ऐसे मतबाने हुए, कि जो कुछ सुन्दर और सरल भी हमारा वहाँ का वह भी हमारी नज़रों से गिर गया। वस्तु की पारदर्शी ही लीजिए। हमारा यहाँ पुरानी सम्प्रदाय यह भी कि कोई परिष्कृत या मिश्र जिस वस्तु वाले हमारे पास हो रोक टोक घा सकता था। हम उससे बाँट करके लुप्त होते थे। उस वस्तु हमें यह विचार कभी न सताता था कि इस मनुष्य के आ जाने से हमारा समय लुप्त हो रहा है। एक मिश्र की निकलबोई हमारी निगाह में अपने से कहीं ज्यादा मनुष्यवान थी। लेकिन अब हम हरेक चीज़ को अपने के काँटों पर लीजते हैं, इसलिए किसी ऐसे आत्मी का धाना जिससे हमारा कोई स्वाध न सिद्ध होता हो हमें बाहर-ना लगता है। एक आत्मी आपकी अपना हिनीपी समझकर अपना दुःख रोने या केसल निगोच के लिए आपके पास आता है और धान उतक पाम एक मिनट बैठना भी चार समझते हैं। क्योंकि अब समय का मूल्य अपने से धीका जाता है। मनुष्यता सहानुभूति जिसबोई किसी से प्रबोधन नहीं है। अब जो कुछ है बनया है। अब हमारे बड़े धारमियों के द्वार पर जो भीतर और बाहर का लड़कन लगा रहता है। जिससे स्वाध है, उसके लिए भीतर है। जिससे कोई प्रबोधन नहीं उसके लिए बाहर है। और हम इस संस्कृति का बखान करते नहीं बचने।



परिचय धारमियत का गला बोटकर स्वाध की मसोन बन गया है । वही हम यह मिना रहा है ।

पूर्वज सम्पत्ता धारमियों के आ आन से फूल उठती थी इन धरना धरोभाग्य सम्पत्ती की कि कोई मेहमान धाया वह धारी रात को धाये या पिछली रात को उसकी आतिरवारी में कोई कमी न होती थी । वह घर में सबसे अच्छे जगह पाया या सबसे अच्छा भाजन खाता या पीर सारा घर उनकी सेवा सत्कार में लपा रहता था । धर परिचय की सम्पत्ता न हमें रोने-पीर बनना मिना दिया है । मेहमान धाया पीर हमार प्राण-जन्म उड़ गये । कहीं से कहीं यह बसा गिर पड़ी धर मना गृहे ह कि वह जन्म मे जन्म रखा हो जाय । गृह-स्वामी का भुह उठप हुया है स्वामिनी की भवे कड़ी हुई है । मानुम होतो है कोई धरगल धरनी धेयेरी धाया धामे हुए है । बाबू माद्व धरना कमप नही छोड़ सकते । मेहमान बाहर डरामध में टिक्य शिया बाठा है । स्वामिनी कमाले धर की लोडो नही है, कि जो बाड़े बनरनाला जला धाये धीर बहु धर के लिए मोजन बनाने बंठे । उते तो धरन धरवासों के लिए मोजन बनाना पडाइ हो रहा है । ठर ठर यह धरपूत न जाने कहीं से फट पड़े । धीर धंधर तो देखो पहले स धूषना भी न ही नहीं कोई बहाना कर लेते कि बीमार है या कहीं बाहर जा रहे है । जिस दिन मेहमान शिया होता है धर में जसे गया शिन होवा है । हम इतने स्वार्थी इतने मकीख हो गये है कि नि-स्वाध-भाध से कोई काम नहीं कर सकते । धपर धरिधि कोई मुकधमा नाया हा या सबसे किसी मोटे मरीज के लैमन की धारा हो या उनके धरिये कोई बड़ा धाडर मिनन की सम्भाबना हो तो फिर परिस्मिति बनल जाती है । उम धरिधि कीधूब धातिर होती है मानुब होता है, धारा धर उम पर प्राण है रहा है । यहाँ भी वही रुया वही ह्यप । ह्यप । धीर जो सम्भन लये रंन में जितने रंगे है उनमे यह मकीखना उठनी ही धरिध है । धेधरिधों में मजूतों में धरयो में बह प्रकृति धमी उठनी धीब नही है जितनी शिधित धीर सम्भ समाज म । धरन लिए, जो कुष हो धरने लिए, मही उनका जीवन सल है । हम यह नही बहते कि इस नदी सन्कृति में धीर उस पुरणी धरिधि-नेवा में सब धुराध्या ही धुराध्या या लुधिया ही लुधिया है । पुराने धातिध्व म बहुधा ब्रिकिकर धीर निधम्मे मेहमान गिर धर सवार हो जाते थ । लैकिन ब्रिकिकर या निधम्मे धारमियों के सत्कार में भी तो कुछ सम्भनता धी धुध उदायता थ । इन नदी मफोटाना म तो धीध स्वाध है धीधे लुधसर्गों ।

परिचय मे हमें सबसे जहरीला धो पान पडाया है वह यही लुधर्गी है । ममस्त संसार को स्वाध के परों लने रीदकर बह धर स्वाध का पिशाच हो गया है । उमये न ह्यधर है न कोमलता है न धर है । इस सिर मे धर तब भीतर मे बाहर-ठर स्वाध मरा हुया है । हँसना-ओसना रोना-गाना एक भी स्वाध के लालो नहीं । धाधीन नसकृति में धिकिधमक के लिए निमी मरीज मे धीस लेना ह्यम था । वध धी या हकीम माद्व

का जिस ब्रह्म किन्ती मरीच का बुझाया मिस जाय उसी ब्रह्म भर से ब्रह्म पड़ना धर्मिबाप का उसमें कोई रियायत न थी। हकीम भी धनधर दबा भी न्यूर ही देने से मा कोई मुस्सा मिलते से तो उसम दबा के बहाने फीस बगुल करने की बहाना तक उनके मन में न घाटी थी। मरीच की सेवा करना उनका ब्रह्म ना। इसी को वह प्रपना मौरव समझते से पर धाम जो कुछ होता है, वह हम रोज ही देखते हैं। हाँ उस परिवार का एक चिन्ह धमी बाळी है। भित्तमे ही वैद्य या डाक्टर घर पर मरीच से फीस नहीं सेते। हाँ यथा से कुछ हमकी गजाइत निकाल भी जाती है। यही वह धर्ममोक्षति है जो पश्चिम के इन ब्रेड सी सार्तो मे हमने दी है। बकीम पुराने जमाने में भी होते से धम्पायकों से भी प्राचीन युग जासो न का पर बकीम मरकार से बेतन पाटा का धीर धम्पायक निष्ठा माँकर निष्ठा-दान देता था। मगुष्य स्वाध का पुठता होकर रह गया है। धमर उसमें प्रतिभा ह तो संसार का इससे कोई उपकार नहीं हो सकता। वह बापबाप पैसा करेगा पहाड़ों पर बापबा हवा म चरेगा शराबें उढायेगा। मुस्त म क्यों किन्ती की सेवा करे। उनके पश्चिमी गुरु ने उसे यह नया पाठ पढ़ाया है। धम तो हमारे महात्मा लोग बिना पैस के भारतीयों को नहीं से सकते। पहले बुद्धि या निद्धि की सफसता सेवा धीर उपकार मे भी धम स्वाध-निद्धि म। मरीच के होठों पर प्राण लगे हों डाक्टर माह्व बिना फीस नियं नहीं जा सकते। यह तो दूनी-बौगुनी फीस बसूल करने का मौका है। एसे शिकार क्या रोज लेंगते है। जब सभी स्व र्थ के उपसक है धूर्त में भय पड़ गयी है तो हमारे धम्पायक भी न क्या धपराध किया है। वह भी योरोप जावगे बहो से लौटकर लम्बा बतल लेंगे। 'कैरिय' बनाना ही तो बीबन का उद्देश्य है। बाहू रे पश्चिम। तेरी नीला ईश्वर की भीसा से भी विचित्र है। क्या से दिन फिर कमी धामेंगे अब हमारी पुरानी संस्कृति का धम्पुष्य होगा। उस संस्कृति का जिससे गरीबी कर्षक न थी। क्या धासा है।

नवम्बर १९३१

## संयुक्त प्रान्त के दा कन्वोकेशन

युनिवर्सिटी तो भारत म कोई है नहीं हाँ धनुष्ट बनाने क कई कारखाने है। इन निहाइ से संयुक्त प्रान्त भारत का लकनायार या बम्बई है। यहाँ ऐसे-एसे पाँच बड़े-बड़े कारखाने है जहाँ युवकों को बुम्सल धीर डिब्रूलगर्भी धीर बिलागिता धीर भूरे धर्मिमान की शिक्षा भी जाती है। जो ए पास होने का धम व्यावहारिक रूप से यही है कि धमक युवक इन दुर्गुनों में पाम हो चुका है। वह बिना रस्तर में ब्रह्म धमने के धीर किमी काम का नहीं। उन गरीब का कोई पीप नहीं। वह तो गुरु इन



हैं। हम अपने विद्यालयों से यह धारणा करते हैं कि इस भनामात्र के अन्तर्गत पर वह स्वयं अपना सब काम कर लेते। तब तायद अन्य सरकारी विभागों की धर्मों पुरानी। कम से कम हम अपने विद्यालयों पर गव करने का मुँह होता लेकिन इस नीति से काम लेकर उन्होंने सिद्ध कर दिया कि व भी स्वाभोपासना में दूसरे विभागों से भी मद भी कम नहीं है। हम ऐसे विद्यालयों को अपनी महान् सम्यता का उत्तराधिकारी नहीं समझते बल्कि उसके लिए कर्मक समझते हैं। हमारे विद्यालयों का धारणा कुछ और वा और वह हम भी कुछ छोटे रूप में मुझुनों में देखा जा सकता है। सबसे अन्तर्गत की जो बात सर रमन ने कही वह यह थी—

‘हिन्दुस्तान के विद्यालयों का यह कम नहीं है कि वह इस अन्ति और परिवर्तन की मति का और भी तेज बनाव बल्कि उनका वास्तविक कम है कि वह राष्ट्रीय विकास की इस इत मति के लिए एक ब्रह्म—सकाबट—का काम है। भारत में इस समय जो अन्ति अन्ति हो रही है उसका अन्त हमारी समझ में सर रमन ने नहीं समझा। भारत की अन्ति केवल अपनी धारणा को पा जाने की इच्छा है। हम देख रहे हैं कि मोटोप की स्वाधीनता और कृषिमत्ता और हृषयहीनता भारत को अन्त करती बनी जाती है। हमारे विद्यालयों की स्थापना इसी उद्देश्य से सरकार द्वारा हुई थी और सरकार की अपने उद्योग में पूरी सफलता हुई। हमारी अन्ति अपनी बोधी हुई धारणा को—अपने स्वाग और सरसता और धारणात्र के—फिर आपस जाना चाहती है और इन परिवर्तनी सचप और स्वार्थवाद को मिटाकर उसकी अगह सहयोग और सहान्यता को धारणा देवने की इच्छुक है। इसकी मति में ब्रह्म अगाने का अर्थ यही हो सकता है कि भारत इस पथ को चुनना देवता रहे। अर में धाग मय जाने पर उस अन्त से अन्त बुझना चाहिए क्योंकि विलम्ब से अन्तर्गत की ही सम्भावना है।

अन्तर्गत निरन्तरविद्यमान में सर राधाकृष्णन का आपस अपनी निर्भोक्ता और राष्ट्रीय मन्त्रों के अन्तर्गत से इस प्रकार के अन्तर्गतों में अन्तर्गत है। सर राधाकृष्णन ने अन्तर्गतियों की अन्तर्गत या अन्तर्गत की विलम्ब परवाह न करके सच्ची और बेलाव बाधों को सुनायी है। इस अन्तर्गत-काल में विद्यालयों का अन्त अन्त है और मुझुओं से अन्त धारणा की अन्तर्गत चाहिए इसका अन्तर्गत एक अन्त अन्तर्गत की मति विवेचन किया है। हम हमेशा मुझुओं धारणा है कि अन्तर्गतों को अपनी अन्त की अन्त निकालने में सिखा और अन्तर्गत की अन्तर्गत ही नहीं होती। अन्तर्गतों के अन्तर्गत में अन्तर्गत ही अन्तर्गत अन्तर्गत प्रचलित है पर सर राधाकृष्णन के इस आपस ने सिद्ध कर दिया कि वह अन्तर्गत होते हुए भी राष्ट्र को अन्तर्गत से अन्तर्गत है और अन्तर्गत अन्तर्गत का इस समय अन्त अन्त है इस अन्तर्गत अन्तर्गत है। अन्तर्गत की अन्तर्गत और अन्तर्गत में हमने अन्तर्गत अन्तर्गत में ऐसा आपस नहीं सुना। उसका अन्त-अन्त अन्तर्गत अन्तर्गत करनेवाला है। धारणा अन्तर्गत—

‘बुद्धिमान् धारमी का बहु भाषा नहीं होता कि हरक विषय में बहु कोई न कोई राय दे सकता है, न बहु किसी लेखक का सार एक वाक्य धीरे किसी संस्कृति का तत्त्व एक शब्द में प्रकट करता है। बुद्धिमान् मनुष्य में बुद्धि का विस्तार विचार की स्वाधीनता और नवीनता और अन्य मनोमात्रों को समझने की शक्ति होती है। वह हमेशा उन विचारों से सहानुभूति रखने की तैयार रहता है जिनसे उसे मतमें है।

धार्मे बलकर धारण इन वाक्यों में विचारमयों के पुराने धारण पर प्रकाश डालना—

‘प्राचीनकाल में विद्यालयों के संस्कार की उपाय एक मर्यादा से ही जाती थी जो एक हाथ से दूसरे हाथ धीरे एक युग से दूसरे युग तक चलती रहती थी। यह मर्यादा एक मयकर वस्तु है। इसने जिसने ही धारणों को उठाया है किन्तु ही हमबल बनायी है। वह इच्छा भावना की बोधक है, वह धारण है जो धारण-कर्म और गणनी को बलाकर साफ कर देती है। अथवा हम इन सामाजिक धार्मिक और राजनैतिक धारणों से मयमीत हो जायें जो इन धारण के फलने में पैदा होता है जो हम विद्यालय से दूर ही रहना चाहिए।

धारणों से बलकर कहा कि विद्यालय में युवावस्था का जोश और सजीवता होनी चाहिए। अथवा विद्यालय ऐसे मनुष्य पैदा करता है जो जिस के बोध है जो धरनी जान की संरिक्त मनाते हैं, जो ऐसे धारण के बने हैं जो जोलिम से बचत है तो वह विद्यालय धारणों में धारण नहीं कर सकता। अथवा वह उसाह और पीरय से मरे हुए मुवकों को लकर उन्हें बोधे स्वार्थी और प्रचारों का गुलाम बना देता है अथवा वह उनके विचारों को फटोर कर देता है और उनकी धारणें बढने को शक्ति को निर्बीज कर देता है तो वह धारणों में से दूर बना मया है।

यह धारण धारण से मयत तक इतना धारणस्वी इतनी विद्यता से मयत हुआ है कि हमने से हरक का उसे धार-धार पहना चाहिए।

दिनम्बर १९३१

## स्वामी श्रद्धानन्द और भारतीय शिक्षा प्रणाली

यों तो स्वामी जी प्राचीन धारण धारणों ने पूरा रूप में प्रकट के पर मरे विचारों में राष्ट्रीय शिक्षा के पुनरुत्थान में उन्होंने जो काम किया है उसकी कोई नबोर् नहीं मिलती। ऐसे युग में जब धारण बाहारी धारणों के तरक विद्या विचारों है यह स्वामी जी ही का विचार था जिसने प्राचीन धारण प्रथा में भारत के उदार का तत्त्व समझा। लड़का जैसी शिक्षा पाता है किता ही मनुष्य बनता है। हमारा विद्यालय ही राष्ट्र की

संस्कृति के सबसे बड़े रक्षक हैं। विद्यालय पूछ स्वतन्त्र होना चाहिए, बाहरे स्वराज्य हो या परराज्य। राज्य से किसी प्रकार की सहायता लेना मानो शिक्षा का गला बँटाना है। धीरे धीरे शिक्षा के दरों में बढ़ियाँ पढ़ बर्षों तो उस शिक्षा की योग्यता फले हुए छात्र भी गुमान मनीबन्धि के मनुष्य हों तो कोई धारणा नहीं। राज्य-परिवर्तन होते रहते हैं राष्ट्र के प्रायशः में कोई परिवर्तन नहीं होता। धरर उसके धारण बनन बायें तो उसकी परम्परा नष्ट हो जाय धीरे बह राष्ट्र अपने व्यक्तित्व को खो बैठे। बीड़काम तक मुस्कूल प्रजा भीवित रहो। मुसलिम युग में बह प्रजा नष्ट हो गयी धीरे उसक नष्ट होते ही राष्ट्र नौका का भगर उखड़ गया। जीवन के किसी विभाग पर नियंत्रण न रह सका। बह धीरे धारण को धार संस्कृति के स्तम्भ से धपना धसली इन छोकर बाठ-पाँठ के रूप में धा गये धीरे बेक्य बस्वकारी अकमस्य पेट के बन्नों में संन्यास धीरे बालप्रत्य का स्वान छीन लिया। धंघड़ी राज्य में नये-नये विद्यालय धुन मगर लका प्रायशः धीरे उहुरम कुध धीरे या। बह दफ्तरी शासन का एक विभाग मात्र या किसका उहुरय सत्य का जोब धीरे संस्कृति का विकास नहीं दफ्तरी के सिध कमचारियों का निर्माण या। वही की पुस्तको पर शिक्षाविधि पर, धंघड़ी राज की बाप बी। छात्रों के धारमसम्मान को कुबना जाता या। कोई बुकानकारी भी बहरी पय-पय पर छात्रा से कुध न कुध बसून करने की विडक रहती है। धुर्मानो का मात्र यम है। हाबिर न हो सको तो धुर्माना वो देर में धाधो तो धुर्माना शायरत करो ता धुर्माना सबक मात्र न हो तो धुर्माना दबना तरह की फीस—पढाई की फीस पुस्तकालय की फीस साइंस की फीस इन्वहान की फीस रोशनार्ड की फीस। ऐसी संस्थाया के छात्रा से यह भासा करना कि बह राष्ट्र की कार्य सेवा करें दुरासाभाव है। उनकी तो धारणा कुबली या बुकी है।

भारत के प्राचीन धारण की इन परिधनी धारण से बरा तुनगा बीनिय। वहाँ हमारे बाइन बासलर माहब साहे ठीन हबार फनवा म्हीना बतन पाते हैं। कितना शाग दार धापका बंगला है कितनी धण्डी-बाण्डी मोटरें हैं कितने स्ट्राइक में रहते हैं! प्रिन्सिपल माहब का बतन भी मगमन दो हबार है। उतना शागदार बंदना तो धापका नहीं है पर धान मिनार क्वाया कीमती पीस है। मेडियो में धारकी स्वारा पहुँच है। धुड़बीड़ के शीकीन है ही। प्रोफेसर रीडर लकबरर डोन द्यूटर डिमेंस्टर गरब ऊनर से नीचे तक बहो शाग बही नमुना बहो टाण। इन बालाधरह में बरिध का विडक ही क्या। किनी पुरान संन्यामी का नाकर विठायें तो बह भी विभायती कैशन धीरे फेने का गुमान हा जाय कीमन-हुरय यनकों का पुछना ही क्या। जीवन क बह ठम्मुक धीरे स्पार्ड धीरे मिथ्या मोय के बुरय देन-बेनकर मुषक भी बही रंन पकड़ता है। मिनार धीरे मेबैंडर, बहुसंन्यक मूट धीरे बुरा जाने क्या-क्या बनार् उमके पीछे पड़ जाती है मही बसिक उमके मिर पर मबार हो जाती है। उन व्यक्तनों को पूरा करने क मिर बड़ मठ धन बहानेबाबी गमी बुध करता है वही तक कि धारम-मम्मान तक

तो बैठता है। वह संकटों का जरा भी मुकाबला नहीं कर सकता। उसे किसी न किताब के पाठ्य की आवश्यकता है। धरने वन पर तो खड़ा ही नहीं रह सकता। जो एक बस्तु चाय न मिलन से बरहुवान हो जाय एक बस्तु मिमार न मिले तो पागल हो जाय वह जीवन-संशय का क्या मुकाबला कर सकता है। इस परिस्थिति में भी कभी-कभी रत्न निकल पाते हैं। भक्ति वह अणुकार है।

प्राचीन प्रथा की तरह यों उठाएँ। कुसपति है वह ज्ञान की मूर्ति बिद्या का अग्रगण्य जमीन का अग्र-गम बसे हुए धीरे सतार के प्रयोगों से उँचा उठा हुआ। सम्पत्तिक भी उसी मान में बसे हुए, कही घाइम्बर नहीं कही विद्याविमान नहीं। बहो ज्ञान इसमें नहीं कि कौन विद्वान् व्यक्त हो, किन्तु पास कितने अच्छे कुत्त हैं या कौन सिनेमा रयादा देखा है वकि इस बात में कि किमें रयादा लाभ है किन्तु रयादा भक्ति या विद्वान् है कौन रयादा स्वाध्यायी है किन्तु मन्त्र धीरे महान्ता का भाव अधिक है। दोनों पाठ्यों में विद्वान् अन्त है।

स्वामी सदान्तर जो न इसी भारतीय धारण की विद्या कर दिखाया। समय उनके अनुकूल न था विरोधियां भा पूजना ही क्या चारों तरफ बाधाएँ ही बाधाएँ। पर विद्वान् धारणाकारी से उतने ही हिम्मत के धनी थे। किसी बात की परबाह न करते हुए गुबकुलों की स्थापना कर ले। यद्यपि जमाने न मुबकुल पर भी धरना कुछ न कुछ अन्तर सम्पत्तिया। मुबकुल न निकले स्नातकों का भिन्न दुनिया म धरना पड़ा वह एक धीरे ही दुनिया की धीरे समय सम्मानपूर्वक रहने के लिए उन्हें धरने जीवन न कुछ न कुछ अन्तर करनी पड़ी धीरे वह धारण मजबूत धीरे मुन्तर, धरन प्राचीन गौरव से रोकती बनावट धीरे विद्या की हिकाएत नहीं देना की धारों से देना हुआ प्रतिकूल परिस्थितियों से कुछ विविध पड़ा है—यद्यपि दिनों के इन्तजार में।

शुद्धि समाचार, अख्यान-वलिदान अंक,  
जनवरी-फरवरी १९१०

## सदाक फिल्मों के दिन गिने हुए हैं

एसा शक पड़ता है कि मन्त्र किन्तों की हवा बहुत अन्तर विद्वान् जमाने। मुब किन्तु एक साथ एक पूर्वकाल म प्रकृत हो जाती जो। जामो के अन्तरकाल का धारण अन्तरकालिया अन्त धीरे भीम गभी उठा करने से। मन्त्र किन्तों की धर बहुत तप हो गया है। मन्त्र अन्तों किन्तों का धारण बरी उन्त मन्त्रे है जो अन्तों के जाता है। चिनी देत की धारण अन्त विद्वान् को भाग्यो में इतनी कुशल नहीं होती कि विदेशी धीरे-धाम मन्त्र कर उन्त धारण उठा से धरण मन्त्र किन्तु

बनानेवालों को बराबर बाटा हो रहा है और यह व्यवस्था बहुत दिन नहीं रह सकती ।  
 मूक विज्ञों के दिन फिर लौटेंगे ऐसी धारा है ।

२६ अगस्त १६३२

## जाग्रति

जीवन के लिए जागना जितना जरूरी है उतना ही जरूरी सोना है । दोनों  
 क्रियाएँ एक दूसरे के सहारे पर हैं । नींद का न धाना भी एक बीमारी है, जिससे अनेक  
 प्रकार की बाधाएँ या सुकड़ी है । और जो प्राणी रात-दिन सोता ही रहे, वह तो मरा  
 सा है ही । यदि दोनों क्रियाएँ एक दूसरे की सहायता करती रहे—घाबनी बाये कर्म  
 करने के लिए सोये जियाम करने के लिए—तो जीवन सुखी होता है लेकिन जागना  
 जीवन का मुख्य सस्रक है, सोना अर्थात्—जियाम तो केवल उसका सहायक है । इस  
 लिए, जाग्रति जीवन और अम्युश्य का बिन्दु है और निद्रा पतन तथा ह्रास का ।  
 जाग्रति रज-अवान क्रिया है निद्रा में तम की प्रचलता होती है । कम से कम सोने के  
 लिये अनेक उपान और साधन बताये गये हैं । अधिक से अधिक सोने के लिए घाबलक  
 जिन्दी ने कोई उपान नहीं बताया—उसी तरह, असे स्वस्थ रहने के लिए तरह-तरह के  
 प्रयत्न किये जाते हैं पर बीमारी के लिए भी किसी ने कोई प्रबलन किया है ऐसा कभी  
 सुनने में नहीं आया । वास्तव में स्वास्थ्य का न होना ही बीमारी है—उसी तरह, जैसे  
 प्रकारा का न होना ही अंधकार है । घाबनी जितना ही कम सोये उतना ही जानक है,  
 यहाँ तक कि कई विद्वानों का मत है, सोना कोई आवश्यक क्रिया नहीं । संभव है उप-  
 स्थियों के लिए सोना आवश्यक न ही उनकी प्रकृति में रज और सत ही रह जाता हो  
 तम की सभमा हानि हो जाती हो पर साधारण प्राणियों के लिए भी बही नियम सामू  
 है कि मात्रा से अधिक सोने में हानि है अतएव जब हम किसी राष्ट्र के विषय में जाग्रति  
 की कामना करते हैं तो इसका बोध यह होता है कि वह राष्ट्र मात्रा से अधिक तमो-  
 गुणी हो गया और उसमें जीवन की मात्रा अल्पत से कम है । हम इसी अवस्था में हैं  
 और उससे निरक्षण का प्रयत्न कर रहे हैं । हम इस तरह की मानते हैं कि हमारे लिए  
 जाग्रति की बहुत बड़ी जरूरत है, लेकिन तम जाग्रति का उस अम्युश्य का क्या क्या  
 हो इस विषय में अभी हममें बड़ा मतभेद है, अनेक विचारक अनेक सिद्धांत बताते हैं ।  
 हम जागरण के दो-चार तरीके में इसी विषय की निबन्धना करना चाहते हैं ।

सबसे पहले यह जरूरी है कि हमें यह समझ में—हमारे जीवन का उद्देश्य क्या  
 है । जब तक हम इसका निश्चय न कर लें हम जाग्रति का क्या स्थिर नहीं कर सकते ।





धमिभ्र भी । जब से पच्छिम में कर्त्तों का युग धारण हुआ तभी से बहूँ की संस्कृति में स्वाध  
 धीर सभ्य की प्रमाणता हुई । यद्यपि वह कथन बिलकुल सार-हीन नहीं है फिर भी पच्छिमी  
 संस्कृति का का उद्भव स्वाम है, यानी यूनान धीर रोम वह सभ्य प्रमाण गण्य था ।  
 ईसाई-धर्म जो मूल में बौद्ध धर्म धीर बहुत धर्मता में हिन्दू-धर्म का ही रूपान्तर है,  
 पच्छिम में उस पीढ़े के समान था जो कहीं बिदेस से जाकर धारोपित किया गया हो ।  
 कुछ दिनों तक तो उनमें अपने भीतर की शक्ति से बाहर की प्रतिकूल शक्तियों का  
 सामना किया फिर वह गूट हो गयी । बिदेसी पीढ़ा उस प्रतिकूल अन्तर्बाध में फल-पुल  
 न सका । अन्त पच्छिमी ईसाई कहलते हुए भी ईसाइयत से जोसों दूर है । ईसाइयत की  
 हवा धीर अहिंसा का बहूँ नहीं नाम भी नहीं । रोम धीर यूनान क कवि दार्शनिक  
 बौद्धा तो प्रसिद्ध है पर कोई त्वापी महात्मा था इसमें सन्देह है । वह भाग-प्रबल  
 संस्कृति जो धीर राष्ट्र के सभी धर्म अधिभ से अधिभ भोगने के लिए आसायित रहते थे  
 जिसका परिष्कार आपस के सभ्य के सिवा धीर हो ही क्या सकता था । भारत में हम  
 प्राचीनकाल में एध सभ्य का पता नहीं मिलता । इसका कारण या तो यह हो सकता है  
 कि यहाँ शक्तिशालियों ने दुर्बलों को हतना कुचल आना था कि उनमें धरियात करने की  
 सामर्थ्य न थी या यह कि त्वाय धीर सेवा भाव का हतना प्रसार था कि सभ्य को  
 पनपने के लिए कोई अवसर ही न मिलता था । बलतापो धीर धसुरों में सड़ाइयों की  
 कबाएँ मिलती हैं, लेकिन वह स्वाध का सभ्य न था बल्कि सिद्धांत था । धसुर धोस्वाधी  
 से बलता त्वायकारी । बेबता जब लड़े धारतरखा के लिए धसुरा को परास्त करने उन  
 पर रोव आनने का भाव कभी उनके मन में न आया । योरोप में इसके प्रतिकूल स्वाध  
 का सभ्य था—गरीबों धीर धमीरों की शासकों धीर शासितों की लड़ाई थी । ज्यो  
 संघर्ष की आप पच्छिमी संस्कृति क हरेक धंग पर लगी हुई है । ईसाई धर्म न कई सवियों  
 तक उस स्वामाधिक मनोवृत्ति को बचाये रखा । अंत में वह भी परास्त हो गयी अंतएव  
 योगेय के जीवन में धाव जो स्वाध का उन्माध है यह उनकी स्वामाधिक धीर सनस्तन  
 मनोवृत्ति है । बार-बार अति का हीना ज्यो स्वार्थमय सभ्य का परिष्कार था ।

धरसे सप्ताह में तुम फिर इस प्रश्न पर विचार करें ।

५ सितम्बर १९३०

## जाग्रति

२

विद्यमे धंग में हमले योरोप के सभ्य धीर भारत के अहिंसा धीर प्रेम की बर्धा  
 की थी । हमारी संस्कृति का मूल तन्व अहिंसा है पच्छिम की संस्कृति का मूल तन्व  
 संघर्ष है । यह बात नहीं है कि पच्छिम में अहिंसा भाव का अस्तित्व नहीं या भारत में

संघर्ष कोई घनासी बात है लेकिन हम यहाँ संघर्षों से बहस नहीं। पश्चिमों जीवन की नस-नस में धनु-धनु में संघर्ष भर हुआ है। उसी तरह भारतीय जीवन में संघर्ष में घड़ियाँ और घम बसा हुआ है। संसार की विभूतियों पर अधिकांश पान के लिए और उन्हीं भोगों के लिए संघर्ष और संघर्ष अधिकांश है। अधिकांश से तो केवल सतोप और स्वाम और निवृत्ति का ही विकास हुआ है। योरोप का विवेका किनी संघर्ष में विजय प्राप्त करने के बाद उस विजय से अधिक से अधिक लाभ उठाने का प्रयत्न करता है। यहाँ धन में विजय प्राप्त करके ग्लानि और विराय में डूब जाते हैं। संघर्ष प्रभुता के सिद्ध पर पहुँच कर निवृत्त बन जाता है और धन के प्रचार में अपना जीवन गायक करता है। संघर्ष में मोलबन्धो होती है। अर्थात् एक बय दूसरे बय को बट कर जाय इसलिए प्रत्येक बय अपना संघर्ष करता है और अपने स्वार्थों को रक्षा करने के लिए संघर्ष प्रयत्न करता रहता है। भारत में इस तरह की पुटबंदी का प्रभाव नहीं मिलता। किसी बय को दूसरे बय से हटना भय नहीं कि वह अपना संघर्ष करता। प्रत्येक बय का कामगार निवृत्त था। उस संघर्ष के संघर्ष वह अपना जीवन व्यतीत करता था। संघर्ष संघर्ष और राष्ट्र का नेता था इसलिए नहीं कि उसमें धन बस था या दाहुबस था इसलिए कि उसमें अस्वत्त था। वैश्य धन कमाता था पर उस धन को अतृप्त में खर्च करता था। मनोवृत्तियों कुछ इस तरह की हा मयी थी कि लोग अधिकांश की संघर्षा मयन कर्मियों का आत्म विचार रखते थे। उस वक्त का राजा केवल मिहामन की सोमा न बसाता था बल्कि उसे रक्षक-विन प्रजा के हित की चिन्ता रहता थी। वह निवृत्त संघर्ष संघर्ष का कुछ न कुछ भाग प्रजा का कुछ-कुछ धन में व्यतीत करता था जिससे प्रजा में उसके प्रति सन्धि और प्रजा का भाव उत्पन्न होता था। अधिकांश केवल किसान से मयान बहुत करके धन न करता था बल्कि प्रजा के हित की रक्षा करता था। कुछ और तानात्र भुरबाजा प्रजा और दुग्ध के संघर्ष प्रजा के लिए अपना संघर्ष संघर्ष कर देता उसका धन था। संघर्ष ही सोयी अधिकांश की होने लेकिन संघर्ष में से संघर्षा रहते थे और इसलिए उन्हें प्रजा पर अधिकांश करने का संघर्ष न होता था।

इसके विपरीत पश्चिम में स्वाम और मोम का राज है। क्लो के आधिपत्य ने व्यवसायिकता की एक हुआ-सी पैसा दी है। वह व्यवसायिकता पश्चिमी संघर्षा का संघर्ष है। संसार का अितना धरिण इस व्यवसायिकता से हुआ है और धार्य होया वह धनतुन है। इमी का यह सुपरिखाम है कि जो लोग धन में बैठ कर अपना धन करते थे वे अब जिनमें धनक पुगामी करने पर मजबूर है। धन का स्वामी उससे अधिक से अधिक काम लेकर कम से कम मजूरी देना चाहता है, और यह संघर्ष यहाँ ठरु और पकड़ गया है कि योरोप के प्रत्येक देश में इस उगाड़ धनके का प्रयत्न जोरा में हो रहा है। संघर्ष ने तो उसे उगाड़ ही दिया पर धन्य देशों में भी धन का आजा संघर्ष धिका हुआ है। धनियों के धन में धनूर बहुत से धन-धियों का धन कर

सेते हैं इसलिए बहुत से सोय बेकार रहूँ हैं। इस बेकारी को दूर करने के लिए मिसों में ज्यादा मांस बनाना पड़ता है और उस मांस की आपस के लिए बाजार खोजे जाते हैं। व्यवसायभाव और साम्राज्यभाव इस तरह एक स्वान पर घाकर मिस जाते हैं। व्यापारियों को मांस की आपस के लिए ऐसा बाजार चाहिए जहाँ उनका मांस बे-टोक टोक बिक सके इसलिए कुछ देशों को अपने अधीन रखना उनके लिए धर्मियम हो जाता है। उनका स्वाह इमी में होता है कि उस देश में वासिधय व्यवसाय की उन्नति न हो पायबा उनके मांस की विधि में बाधा होगी। जो कहना चाहिए कि वर्तमान शासन व्यापारियों के ही ह्राय में है। सरकार उन्हीं के बल पर चलती है। उन्हीं की स्वापरचा के लिए बड़ी-बड़ी सेनाएँ रखी जाती हैं। मून की नडियाँ बहायी जाती हैं। योरोप का महाभारत इनके सिवाय और क्या था। घोटाना-सम्मेलन इसके सिवा और क्या है। इस व्यावसायिक सस्कृति ने कम-अबल राष्ट्रों के लिए लाजिम कर दिया है कि उनके धरि का में पराधीन राष्ट्रों की धरि से धरि सख्या हो।

इस संघष का सबसे बध्वा उदाहरण वर्तमान पार्टी बचनमेंट है। राष्ट्र कई राजनैतिक दलों में विभाजित हो जाता है और जिस दल के प्रतिनिधि धरि सख्या में होते हैं उसी के ह्राय में शासन घा जाता है। कभी-कभी तो ऐसा हो जाता है कि राष्ट्र की सारी शक्ति उस पार्टी के ह्राय में घा जाती है, जिसमें उस राष्ट्र के एक सिद्धाई बीबाई या इससे भी कम धारमी होते हैं। बर्त की संघषय मनीषुति किसी ऐसी शासन विधि की कल्पना ही नहीं कर सकती जिसमें सार राष्ट्र-सम्मिलित हो। कहने को तो बहुमत का शासन होना पर वह बहुमत शासन में धल्पत होता है। धगर किसी राष्ट्र में घाठ बल है और प्रत्येक दल के प्रतिनिधियों की संख्या पचीन ही तक रह बाय तो जिस दल की संख्या घबडीस होनी बहु धरिकारी होगा। सेप सारो दल उसका विरोध करके उसे उन्नाइ केंकने की नेटा करती रूँगी। मजा यह है कि ये धार्यों दल अपने निम्न-निम्न सिद्धान्तों के धाबार पर लड़े होते हैं और अपने ही सिद्धान्तों को देश के कल्याण के लिए उपयोगी समझते हैं। सब के अपने-अपने देश सुधार के प्रोवाह हैं। एक मरीज के घाठ विधिरुणक है। चाहिए तो यह बा कि धार्यों घात में सनाह करके रोगी का इलाज करते लेकिन बड़ी प्रत्येक बीघ अपने इलाज से रोगी की विधिरुण करघा है। एक बीघ भी उसे स्वीकार नहीं करघा कि उसके सिवा रोगी की विधिरुण कोई दूसरा कर सकता है। मरीज इस परीक्षा में मरे, या जीरे, यह उसकी तकरीर है एक दल कहता है—दरबेक व्यापार स देश का बस्थाप होगा। दूसरा कहता है—विममुन गमत इमने देश रघासम का बला जायबा। बाहर से धारोबाकी बन्मुपो पर क सपाना चाहिए। बाहिर है कि दो मर्तों में एक धरय धय मूसक है। दो परस्पर विरोध बीबे नमान घम नहीं देश कर मर्ती लेकिन पार्टी-शासन में बहु तागत है कि ब विध को भी धमुत बना देता है। और करने की बात यह है कि जब राष्ट्र पर को

संघट्ट भा पढ़ना है तो सभी बसों को प्रथम गुप्त हो जाती है और बोदे दिनों के सिमे दलबन्दी स्वपित कर भी जाती है। योरोपीय महाभारत के समय इंग्लैंड में किसी एक बस का शासन न होकर संयुक्त राष्ट्र का शासन था। उसने लड़ाई जीत ली। मात्रकम भी किसी एक बस का शासन नहीं राष्ट्र के सभी बसों का सम्मिलित शासन है। इस प्रकार पर सम्मिलित शासन की बड़ी सफलता होगी या नहीं कोई नहीं कह सकता। पर, उन महादुमानों के ध्यान में यह बात कभी नहीं आती कि जब सम्मिलित शासन से हम संघट्टों पर विजय पाने में सफल हो जाते हैं, तो क्या साधारण व्यवस्थाओं में उससे विशेष उपचार न होगा लेकिन जिन लोगों की प्रकृति ही भयबामू हो संघट्ट जिनकी मुदती में पड़ गया हो उन्हें सत्य को स्वीकार करने का साहस कहाँ से आने !

सितम्बर १९३२

## देहली के जामेया मिल्लिया की रिपोर्ट

देहली के जामेया मिल्लिया उन मुसलिम संस्थाओं में है, जिसने राष्ट्र के सम्मुख सच्ची सेवा का ध्यान रक्खा है। पहले यह जामेया (विद्यापीठ) स्व हकीम अक़मलुल्ला साहब के उद्योग से प्रतीमङ्गल में स्थापित हुआ था पर उन्नीस वी बरस के असहयोग-आन्दोलन के बाद जनता के गिरफ्तार से उसे बका पहुँचा और उसे प्रतीमङ्गल से उठा कर देहली में जाया गया। वहाँ कुछ स्थानीय संस्थाओं और कुछ रियासतों और अधिका-तर जनता की सहायता से नई अपना काम करता रहा पर इन बार आन्दोलन शुरू होने के बाद रियासतों से मिलने वाली इमदद बंद हो गई और उसे केवल जनता की सहायता और अपने कर्मचारियों के सहयोग और त्याग का आश्रय रह गया। इस परिस्थिति में श्री अफ्ताबुलक़मल ने किसी ही समय और उस्ताह से काम किया कि बहुत बोड़े से मुझारे पर खूबर भी अरबबर सेवा-काम में लगे रहे। इनमें सभी इतने मुयोम्य है कि उनके लिये किसी संस्था में स्थान मिल सकता था पर उन्होंने जामेया मिल्लिया का काम न छोड़ा और हर तरह का कष्ट उठाठ हुए प्रसन्नमुख और धरम्य उस्ताह से अपने काम में लगे हुए हैं। इन सब बठिमारों के हाते हुए भी उसके पालन धरमो कई इमारतें हैं, पुस्तकालय है और प्रकाशन विभाग है। जब जामेया न देहली से छात मीन पर बोसता में भी सी पचाय एचड जमीन भी प्राप्त कर ली है, जहाँ विद्यालय की निजी इमारतें बनें। यह है मिरालरी मसजिदा से काम करने की विमूर्ति। मुसलमानों में सरकार का मुँह टाकने की जो एक प्रवृत्ति है उसका यहाँ नाम भी नहीं। यह धरम विरथान स्वारत्तम्बल और राष्ट्र प्रेम की जीती-जागती विमान है।

नवम्बर १९३२

॥ देहली के जामेया मिल्लिया की रिपोर्ट ॥

२६

## सर पी० सी० राय का युवकों को आदेश

सर पी सी राय ने साहूँर में विश्व-विद्यालय के छात्रों को उपदेश देते हुए उनका विनासपूर्ण मनोवृत्ति की कड़े शब्दों में आलोचना की और बताया कि वे अपने शौक की चीजों के गुनाम बनकर अपना धीर राष्ट्र का कितना बहिष्कार कर रहे हैं। उन छात्रों को यह उपदेश कबूचा तो लगा होया किन्तु वे विचार करेंगे तो उन्हें ज्ञात होना कि वे जिस रास्त पर जा रहे हैं वह कल्याण का माग नहीं है। वह बमाला जब पया जब विद्यालय से निकलते ही अक्षर उनका स्वागत किया करता था। अब तो यह ज्ञान है कि शायद उन अक्षर का आवाहन करने में उन्हें बरसा लग जायें फिर भी उसके पुरान न हू। अब तो उसी युवक को विचय होयी थी अपनी बकरतों को कम से कम रख सकता है। अभी तुम्हारे मत्ता-पिता तुम्हारा दुभार कर रहे हैं लेकिन वह समय भी आयेगा जब वे तुमसे कुछ सेवा की धारा रनेमें अब तुम्हारे अन्तर गृहस्त्री का बोझ पड़ेगा। अगर तुम यों ही अपनी इन्द्रियों के गुनाम बन रहे तो उस वक्त तुम्हें कितना कष्ट होगा। हम मानते हैं यह तुम्हारे कामे-महाने धीर जेजने के दिन हैं लेकिन इसके साथ तुम्हें भी यह मानना पड़ेगा कि यही समय याने जाने संघाम की ठैयारियों का है। अगर तुमने किष्कयत की धारतें पैदा कर ली हैं अगर तुम अपने हाथ से अपना काम करने में संकोच नहीं करते अगर तुम सिगरेटें और सुपन्थ और टाई-कालर और प्रसेक्स के गुनाम नहीं हो तो मवान तुम्हारे हाथ रहेगा। तुम थोड़े में भी सुधी रहोने धीर अपनी उल्लिषि न लिये यल करते रहाने लेकिन अगर तुमने लर्चीली धारतें पैदा कर ली हैं तो निस्संदिह तुम्हारा जीवन सकटमय ही व्यापका। तुम जीवन के सच्चे सुख का अनुभव न कर सकोगे। मुश्किल तो यह है कि हमारे विश्व-विद्यालयों में छात्रों के सामने का धारत होते हैं उनसे किष्कयती धारतों को प्रोसाहन नहीं मिलता। अम्पा-पकों ही पर छात्रों की दृष्टि रहती है। वे जहाँ महानुभावों के आचार-विचार, रीति-व्यवहार की नकल कर रहे हैं और हमारे अम्पापक महानुभाव एक से एक बड़कर साहब बने रहते हैं। उनके सुट-बूट देखकर बेकते ही रहे जाइए। मानी जगमें होइ मयी हुई है कि वेनेँ ईस्तेकृतपन में कौन बाजी से जाता है। वे सोचते हाने हमने बड़ी-बड़ी उपाधियाँ किम लिय प्राप्त कीं ? अगर मोटा-भोटा जाना पहचाना वा तो विनास्यत जाने धीर परिधम करने की क्या बकरत थी। आतिर वह किसी से कुछ माँगने ली नहीं करते। अपना कमाती ई धीर जाल ख रहती हैं। इसका उन्हें पूरा अविचार है।

किसी को उनका निजी बातों में यत्न देने का कोई हक नहीं। उन्हेंने बीज बोया तो फल क्यों न खाये ? बिलकुल बुररत। इसमें किसी काष्ठिर को ही कनाम हो सकता है। युवकों के लिये धीर कहीं टिकाना है ही नहीं। व अक मारकर विद्यालय में आयेगे अक मारकर फीस देंगे धीर अक मारकर पढ़ेंगे। उनके हमने-भाडे में को



है और डाक्टर साहब उन्हें एक छोटा सा व्याख्यान देकर बिदा करते हैं। इस सम्मेलन की रिपोर्ट दूसरे दिन दैनिक पत्रों में छप जाती है। मंशा पूरी हो जाती है। यह केवल प्रोपेगेंडा है। इसमें कोई छल नहीं। हमारी समझ में लड़कों के स्वास्थ्य की परीक्षा बही कर सकता है जिस पर लड़कों को विश्वास हो जिससे वे अपनी बीमारियाँ निस्संकोच होकर बखु छुटें। दुर्निग कालखों में वहाँ और बहुत से विषय पढ़ाये जाते हैं, वहाँ शरीर विज्ञान भी एक प्रधान विषय होना चाहिए। प्रोपेगेंडा रिपोर्ट और सबकों के मोटे यह सब केवल उभासे हैं जिनका कोई मूल्य नहीं। मुख्य चीज है लड़कों का स्वास्थ्य मानसिक भी और शारीरिक भी। इसके लिये महीनों में एक सेकेंड की परीक्षा प्रदर्शन मात्र है। इस पर सचेत ध्यान रखना चाहिए और यह धम्यापक ही कर सकता है।

दिसम्बर १९३२

## गोरखपुर में शिक्षा सम्मेलन

गोरखपुर में गामनेजेटेड अध्यापक समा के अधिवेशन में मि. डी. एन. मुकरजी ने समापति के भासन से बहुत विचारपूरा भाषण दिया। आपने वर्तमान परीक्षा प्रणाली की आलोचना करते हुए बताया कि इंग्लैण्ड में इस सम्बन्ध की एक शिक्षा कमेटी ने विचारित की है, कि परीक्षाएँ वहाँ तक ही रुकें जहाँ जाया करें और प्राइमरी कोर्ट में केवल अंग्रेजी और हितात्म की परीक्षा की जाया करे। कमेटी की राय में इन दो विषयों की परीक्षा से लड़कों की मानसिक क्षमति का पता लभ जायगा। अनी ही यह हाम है कि लड़कों की छापी मेहनत परीक्षाओं की धोर सगी रहती है। स्काउटिंग कसरत खेल-कूद वाद-विबाद के माधुनिक धारि विषय जिनसे लड़कों का वैदिक और मानसिक विकास विशेष रूप से होता है, इन्तहाल की बेरी पर बड़ा धिये जाते हैं। लड़कों का मुख्य उद्देश्य इन्तहाल पास करना है और अध्यापक का परम कर्तव्य इन्तहाल पास करना है। और एक कुछ पीछे है। यह परीक्षा मनोवृत्ति सिखा कर सबभारा कर रही है और इस कर्म में खल भी अतिशयोक्ति नहीं है, कि सिखित समाज की शारीरिक दुबसताओं का यही मुख्य कारण है। हमारे शिक्षक पुरानी लकीर पीटते बने जा रहे हैं। छात्रों पर उनको इस आहुरवसिता का क्या धमर हो रहा है, उनकी बीनार्द किटनी कमजोर हो रही है उनमें रक्तहीनता का किटना प्रकोप है, यह सब धीयों से देखकर भा ब नहीं देखते। लड़कों के मनोरंजन और विनोर के लिये जो विषय चुने जाते हैं उनकी परीक्षा भी भी जाते हैं और इस तरह परीक्षाओं की संख्या बढ़ती जाती है। एक तो अंग्रेजी भाषा उस पर परीक्षाओं का यह धारक। इन दोनों बकरी के पाटों के



बीच में छात्रों का सवनासत हुआ था रहा। हृष की बात है कि जब शिक्षक समुदाय का प्यान इन बुद्धियों को धोर धार्कपित हुआ है और मंमव है, कि शिक्षा प्रछानी में कुछ सुधार कर सकें मगर हमारे शिक्षक स्वयम् इतन कुप-महबूक है कि वह ऐम विषय में धररर होंये इसकी धारा नहीं होती। प्रंपजी का मूत उनक सिर पर भी सवार है। यही मापख प्रंपजी में रिया गया। प्रो डी एन मुकरजी बंगामी है नेकिन उनके थोटा सब बगामी न बे। वह हिन्दी में धपना मापख दे सकते बे धीर परि हमारे शिक्षकों म इतनी योग्यता नहीं है, कि बे अनठा को माया में धरने विचार प्रकट कर सकें हो उनको शिक्षक बनने का नैतिक धधिकार नहीं है।

जनवरी १९३३

## सम्पादक-सम्मेलन

मठ २१ २७ २८ फरवरी से इन्दौर में बडे समारोह के साथ सम्पादक-सम्मेलन का प्रबिधेशन सम्पादन-कमा क अनुमधी त्याधी थी इन् विद्यावाचस्पति की धम्मधत्ता से मनाया जानेया। धमी तक इम रिता में जो कुछ कान हुआ है वह निरधर-सा ही प्रमानित होता रहा है। केवल सम्मेलन हुआ मापख हुआ धीर कुछ नहीं। पर फल कुछ न निकला। धाज हिन्दी के सम्पादको बेकरर सम्पादकों लेखकों पत्रकारों की जो सुरा है, वह बखानीत है। प्रकाशकों या पत्र-मण्डलों के निये तां सम्पादक क्रियाये का टट्ट है। किसे जब जी में धाया कान पकड़कर निकाला जा सकता है। एक सम्पादक स्वयं दुमरे सम्पादक की क नहीं करता। एक लेखक दुमरे लेखक का धरमाल करना धपना गौरव समकता है। पुरस्कार के नाम पर अनमानित माया में कुछ रुपये पाकर लेख लिखनेबाले या हाड़-माँठ एक कर बडे बाटे से पत्र चलानेबाले सम्पादक-मंचालक दोनों की धता दवनीय है। इउसे धबिक धध्या धधमर नहीं हो सकता जब कि सम्पादक-सम्मेलन इन धधधधों पर विचार करे।

फरवरी १९३३

## संयुक्त प्रान्त में शिक्षा का प्रचार

१९३१ ई में जो पखला हुई थी उसकी रिपोट में शिक्षा-मंबंधी जो धीकडे रिखर है उनसे पता चलता है कि सन् १९११ में माधरमनुष्यों का धीमठ धीठिन प्रति बय मीस था १९२१ में धीठिन प्रति बय मीस धीर १९३१ में धीठापिन प्रति बय मीस।

संख्या नीजिए तो सन् १९११ में साक्षर मनुष्य सोलह लाख बीस हजार सन् १९२१ में सोलह लाख अठ्ठासी हजार और सन् १९३१ में बाइस लाख साठ हजार । यर्थात् पाँच लाखों की वृद्धि पाये हुए हैं ।

प्रथम सिफ-बेक के हिसाब से बेजिए तो—

१९११ में साक्षर पुरुष	१५ ५९४५	या ६१ प्रति बर्ग मील थे ।
	स्त्रियाँ ११२५२	या ५ थीं ।
१९२१ में	पुरुष १५५६६२६	या ६५ थे ।
	स्त्रियाँ १५२२४६	या ६ थीं ।
१९३१ में	पुरुष २ ८३४१	या ८५ थे ।
	स्त्रियाँ २१६२२८	या ९ थीं ।

यद्यपि यह शताब्दी में समस्त अर्धश्री हुई है, फिर भी अल्प राष्ट्रीय की तुलना में बहुत ही कम है ।

निम्न प्रान्तों की साक्षर संख्या का बीसव प्रति बर्ग मील यह है—

बनारस	१९२	मीनीताल	१५९	कानपुर	१३९
बेहटाबून	१९	बालीन	१४५	अंसी	१३७
गढ़वाल	१७३	धामरा	१४३	फर्रुखपुर	११८
प्रसमोड़ा	१६७	मधुरा	१४	धनीगढ़	११५
लखनऊ	१२३	प्रयाग	११८	मेरठ	१ ९
बलिया	१२४				

स्त्री-शिक्षा की दृष्टि से बेहटाबून का प्रथम स्थान है, यर्थात्—५४ ।

इसके बाद क्रमशः लखनऊ धामरा बनारस मीनीताल इलाहाबाद मेरठ मधुरा फर्रुखाबाद अंसी मिर्जापुर हैं ।

इन आँकड़ों से पता चलता है कि साक्षर पुरुषों का बीसव काशी में सबसे ऊँचा है और साक्षर स्त्रियों का बेहटाबून में ।

प्रथम मर्तों की दृष्टि से बेजिए—

	पुरुष		स्त्री	
बन	१९२१	१९३१	१९२१	१९३१
धाम	२९३	३३७	९३	८४
हिंदू (मनामन)	७४	९४	७	१४
और	३६८	५९	७७	१२८

सिक्क	३२७	३७५	३६	३७
मुसलिम	७४	२७	८	१६
ईसाई	३१८	३२७	२६	३१४

सबसे साक्षर धर्म मत-बाले हैं उनके बाद धार्म और तब ईसाई हैं । हिन्दू धर्म मुसलमान सबसे पीछे हैं । स्त्रियों में ईसाई सबसे साक्षर हैं और धार्म इनके बाद । हिन्दू धर्म मुसलमान दोनों ही गण्य हैं ।

मई १९३३

## दक्षिण का शान्ति-निकेतन

कमिन्ड रवीन्द्र के परिश्रम तथा धन के कारण उत्तर भारत में 'शान्ति-निकेतन' एक धारा शिक्षण-संस्था मानी जाती है । उसे यह पत्र ब्यथ ही नहीं प्राप्त हुआ है । निर्मोह बहु सरकारी पाठशालाओं तथा विरब-विद्यालयों में वही धर्मो तत्क नियमित-परिचालित संस्था है । शान्ति-निकेतन काशी विद्यापीठ ग्रेम महाविद्यालय एसी स्वतन्त्र शिक्षण संस्थाएँ उत्तर भारत के लिये सब की वस्तु हैं पर दक्षिण भारत में ऐसी संस्थाओं का निर्यात घमास था । हृष का विषय है कि शान्ति-निकेतन के ही आचार पर दक्षिण में भी एक महान् संस्था काय करन लयी है । बीस बय पूब प्रसिद्ध शिक्षा-प्रमी मि अर्नेस्ट उड व मदनपल्ले में 'मदनपल्ले विद्यालय' की स्थापना की गी । इनके बाद वे विद्यालय बन गये थे । इन बीच में यह संस्था मद्रास विरबविद्यालय के आचार पर शिक्षा देती रही । हिन्दू धर्म मि उड पुन भारत आ गये हैं । उन्होंने मरलीक धरना रूप बीरम इत विद्यालय की सेवा में बिताने का निश्चय किया है । उनके प्रातिरिक्त प्रसिद्ध शिक्षक विरब-मदरक तथा सावन-पूछ डा -० एच कबम्म व इन विद्यालय के लिये अपना तन-मन-धन अदर करने का निश्चय कर लिया है । गय उत्साह व धन प्रारम्भ हो रहा है । मय मन्त्र से दीक्षा हो जायगी । विद्यालय का उद्देश्य होगा—'मन्त्रि-महेश्वर के नाम का प्रचार करते हुए सब ब्यापी शिक्षा देना । पहली बच्चा है बीभी तक मधीठ की शिक्षा अनिबान हायी कम-नूड तथा ब्यापाम की शिक्षा एक निररत के हाम में है । दोनों ही विषय अनिबाय हैं । जो बिना डाफटी मार्टीटिमेट के सेन-नूड या ब्यापाम में रीर हाडिर रूया उनकी स्कूम की हाडिरी काट ली जायगी ।

विद्यालय तथा पाठशाला-मदन नाम हुआर रक्बापर कोट में बना हुआ है और पचहत्तर एकड़ भूमि में फैला हुआ है । मदनपल्ले नगर में इसे 'बहुसा मरी पुपक' करती है । धन के लिये धनेक धर्मो मद्रास है । धानावाग में एक मो नये धानो के रूने के लिये स्थान है । बन्धुओं के लिये धनय धानावाग बना हुआ है ।

विद्यार्थी तीन जुलाई से सुबेगा पाठशाला भीड़ पून से सुस गयी । हम इस प्रयत्न का इस संस्था का स्वागत करते हैं तथा निज उच्च धीर कर्षेस की सफलता की शुभ कामना प्रकट करते हैं ।

जून १९३३

## फ़ैल होने वाले लड़के

कुछ प्रबन्ध विस्तारी है कि हमारे स्कूलों धीर कालों में अब कोई लड़का फ़ैल हो जाता है, तो उसे इसकी यह सवा धी जाती है कि स्कूल से निकाल दिया जाता है, धीर अब अपने स्कूल से निर्वयता से निकाल दिया तो ऐसे निकाले हुए लड़कों को दूसरा स्कूल क्यों लेने सवा । इस प्रकार लड़के के लिये शिक्षा के द्वार धीर से बन्द हो जाते हैं । कितनी दयनीय परिस्थिति है । मगर इधर दूसरी समस्या यह है कि यदि इन लड़कों को रखने दिया जाय तो नये धाने बालों को कहीं से बगह मिले । नये लड़कों को भी तो प्राक्किर प्रबसर मिलना ही चाहिए । बात यह है कि यह तीस लड़कों वाली कैंप ही निरपक है । या तो हमें इतने स्कूल चाहिए, कि सभी लड़के एक सके या मीजूया स्कूलों से इस कैंप को उठकर धीर अपूर्ण निकालनी चाहिए, या फिर सबसे उत्तम है कि इन्तझानों को धीर सरल कर दिया जाय जिसमें प्राक्किर-से-प्राक्किर लड़के पाठ ही सके । अब स्कूल या कालेज की सनख मीकरी के लिये बेकार हो गई है, तो क्यों लड़कों पर इतनी कैंप समायी जावे । फिर क्या लड़के के फेल हो जाने में केवल लड़के ही की कटा है ? स्कूल के अध्यापकों पर उछकी कोई जिम्मेवारी नहीं धाती ? माना अध्यापक बोस कर पिना नहीं सक्ता लेकिन यह निश्चित है कि लड़कों की सफलता वा असफलता बहुत कुछ अध्यापक के व्यक्तित्व अध्यापकधाय प्रोत्साहन पर निर्भर है । फिर किस मुँह से पैस होने वाले लड़कों को निकाल दिया जाता है ।

जुलाई १९३३

## काशी में शिक्षा मंत्री का शुभागमन

शिक्षा-मंत्री के धागमन से काशी म धी तीन दिन लाली बहल-यहल रही । ऐसा मामूब होता वा कि स्वयं गबनर साहब वा नारसराय साहब पधारे हैं । क्योंकि उन्हीं महानुभावों के शुभागमन के धाबसर पर लड़कों पर पुनीम की लाहन लकी की जाती है ।

यह मिनिस्टर छात्रों को भी सम्मेलन कह म्हातु सम्मान प्राप्त हो गया । बलिय नए स्वराज्य विधान के धात्रे-धात्री धीर क्या-क्या बातिरदारियाँ होती हैं ।

अगस्त १९३३

## लखनऊ विश्वविद्यालय

इस साल लखनऊ विश्वविद्यालय ने कानून के विद्यार्थियों की सामाना फीस में वृद्धि क्यवा की बृद्धि कर दी है । कानूनी क्सात से बहने भी काठी बचत हो जाती थी पर वह बचत काफ़ी नहीं समझी गई । मगर एक तरह से उस विद्यालय ने बचका ही किया । कानून में धन नए बकीलों की बयह नहीं है ; कुछ तो इस बाड को रोकने लिये करना ही बाहिए । हमारी रज में बदि ही क्यवा साल की बृद्धि कर दी जाती तो कुछ कतीबा विकसता । वकील क्यवा तो विद्यार्थी कहीं न कहीं से लाकर ले ही वेंगे । धीर सब कीले मन्दी हो रही है । कोई चीज तो तेज रहे । लिखा को तेज कर देना बबो मुगम नीति है । लखनऊ विश्वविद्यालय को बाहिए कि सभी विभागों में खीस दुगनो कर दे । इससे उतकी धामधनी बहुत कुछ बढ़ जायगी । सरकार भी तो बच कम न करके बदन के चिक्र में रहती है ; विद्यालय उसो सरकार का एक धंग तो है ।

अगस्त १९३३

## भारत में लाल-साहित्य

भारत सरकार कह नहीं बाहती कि भारत में लाल पत्तों का लाल-साहित्य का धर्मात् ससल कान्ति की खीज देने वाले बमबायी साहित्य का संक्षेप न कती बोलतेकी साहित्य का प्रचार हो । लाल-कान्ति को हम भी नहीं बाहते पर लाल-साहित्य किने क्यूँ हैं तथा किसे पढ़ने से हमारा दिमाग फिर सकता है यह हम नहीं जानते । बही बल भारत के प्रमुख पुस्तक-बिबेता धी एड की तारापोरबासा एएड सन्ध भी नहीं जानते । इवीलिय उन्होंने भारत सरकार को एक पत्र लिखक पुछा बा कि वह कौन सी पुस्तकों को "लाल समझती है ताकि वे उभ पुस्तकों की सूचना समाचार-पत्रों द्वारा हमें—जनाता को दे सकें पर भारत सरकार की धीर से जो उत्तर दिया गया है उनसे तो बही स्पष्ट है कि वह स्वयं इस विषय में कोई निरचय नहीं कर सकी है । उसे स्वयं कोई नीति निर्धारित करने में कठिनाई है । भारत सरकार तो यह कहकर उत्तर दे बचती है पर भारत के बमकार तथा पुस्तक बिबेता क्या करें । वह नये कानून के धनु-धार हरेक बच से किती बेसी पुस्तक का धंग धायने के लिये जो धभी तक बाजार में

'निक रूढ़ी भी तथा सब लोग पढ़ रहे थे समानता समझ कर सकती है। वह सब धर्म को उस पुस्तक को ही गरकामुनी या उल्लेखक समझ सकती है। पुस्तक लिखना भी उल्लेखक साहित्य रखने का अपराधी हो सकता है। यह बड़ी विषम समस्या है, जिसके विषय में सरकार को अपनी नीति स्पष्ट कर लेनी चाहिये।

अगस्त १९३३

## फिल्म संसार में एक नई याजना

फिल्म हमारे जीवन में घाबे बसकर आये कितना उपयोगी हो और शिक्षा तथा आरोग्य उसके द्वारा कितना ही मुक्त बनाया जा सके पर उसकी वर्तमान प्रगति तो किसी तरह भी आशाजनक नहीं कही जा सकती। हाँ धनर मुक्तों और व्यक्तियों के निर्दोष बुद्धि और आसिम्न और हुरवा तथा अपराध के दुस्व्यों पर ही समाज की आगुति और उन्नति का आरोमधार है, तो निस्सन्देह हम योपी की आल से उन्नति की ओर बढ़े जा रहे हैं। योरोप का विकास तो अपनी सारी दुष्कृतियों के साथ आ ब्या पर योग्य का अक्षयसाय और साहस और उत्सव और अन्य ह्वारों कृत्रिमों को उस विकासिता का परदा डकती है, यहाँ कहीं नजर नहीं आती। कहा जाता है, एक बड़ा भारी उद्योग आरोपित हो गया है जिसकी संभावनाओं का कहीं धष्ठ नहीं है। केनाक उसने उस धन को बाहर जाने से रोक दिया है जो बाहर के फ़िल्म मैदान में हमें देना पड़ता था पर अंदर यही है कि वह ऐसे पूँजीपतियों के हाथों में है जो बड़ी निरंमता से जनता को सामाजिक अनाचार की ओर लिए जा रहे हैं। उन्हें अपने लठे से मसलन है, बैरा बोझ में आन या बहिरत न। हम फ़िल्मों के विरोधी नहीं। उसका जो दुष्प्रयोग किया जा रहा है उनके विरोधी अवरय है। जनता का मनोरंजन होना अत्यरयक है यद्यपि ऐसे हरि बैरा में मनोरंजन से कहीं अकरी जीवन है। लेकिन मनोरंजन का अर्थ यह तो नहीं कि हमारी कुर्मित भावनाओं को और आशुक जगामा जाम। सच्चा मनोरंजन तो हमें मद्भावनार्यों की ओर से आता है। इसलिये हमें यह माधुम करके सुरी हुई कि मद्राम के फ़िल्म मैंगर बोड ने इन बात की जांच करने के लिये एक कमेटी बनाई है कि फ़िल्मों का मद्रकों के मन पर क्या असर पड़ता है। इस कमेटी ने एक प्रस्तावनी बनाकर माता-पितार्यों से अनुरीक किया है कि वे अपनी इच्छानुसार उनके अबाध निगदर कमेटी के पाम मेज रें और जो कुछ ममाह देना चाहें वह भी दे रें। जनम से कुछ प्ररम से है—

क्या मद्रकों के निगता में जाने से अनरी पड़ाई में कोई अापर पड़ती है? मद्रकों को अवरर निमेमा देना चाहिए या कमी-कमो? मद्रके निमेपाचरों से क्या मनोमात्र

सेकर बर घात है ? बर पर से उनका कौसे बिक्र करते है ? क्या से सिनेमा म देखे हुए कुरयो घोर बाक्यो को दुहरते है ? क्या से कित्ती सास ऐक्टर या ऐक्सेस की प्रशंसा करते है ? क्या से उनकी प्रशंसा करते है या बीसे ही जीवन बिताने की इच्छा प्रकट करते है ? मङ्के घोर मुबक सिनमा के बन्धे प्रभाव प्रहण करते है या बुर ? सिनेमा का चरित्र-गठन की सिधा—कठम्यज्ञान दायित्व—पर क्या असर होता है ? क्या सिनेमा से चरित्रपतन के कारणो की शंका हो सक्ती है जो जीवन का चिह्न रूप मङ्को के सामने रखता हो धबसा गुराचरण की घोर उत्तमिष करता हो ? इसके प्रमाण में उदाहरण दीजिए । धाय मङ्को के सिधे किश तरह के किस्मों को अनुकूल समझते है—ऐतिहासिक सांस्कृतिक नाटकीय इत्ययजनक या सिधोपयोगी ? मङ्के अपनी धबसा के अनुसार किश तरह के किस्म ज्वाचा पसन्द करत है ?

हमें धासा है कमेटी इस विषय में उत्तरों का बिचार करने पर अपनी सम्मति प्रकट करेयी जिसकी हम बड़ी उत्संठा से प्रतीक्षा करेये ।

सितम्बर १९३३

## ब्राडकास्टिंग देहातों में

इंग्लैंड में एक महाभाग यहाँ इन बात की जीब करने घाए है, कि यहाँ ब्राड-कास्टिंग के सिधे कौसे यैशन तैयार किया जा मक्ता है । सब की निवाइ देहातों पर है । यौव-यौव ब्राडकास्टिंग का प्रचार हो जाय बन करोड़ों का बार-ब्यार है । ब्राडकास्टिंग से प्रजा का बहुत कुछ उपकार हो सकता है इसमें सन्देह नहीं । यही एक मागन है जिससे उन्हें संसार की बाहमा से निरामा जा सकता है । बड़े-बड़े बिज्ञानों के मागस बड़े-बड़े संनैठाचार्यों के माने सभी कुछ मिलतों में देहातियों तक पहुँचाए जा सकते है । मैरिज यह कम्पनी कोई परोरकारी संस्था तो नहीं है जो अपने प्रोपाम प्रजा के किश को सामने रख कर बनाएयी । उसका उहेरय तो अपना जेब भरना हाया और इन ब्यबसाप के दुब में बीसे घोर हजारों बीजे प्रपदे की जगह मुकसान पहुँचानेवाणी मिड हो रही है उनी तरह इनका भी दुहायोग किया जाय तो क्या ताज्मुब है ।

सितम्बर १९३३

## प्रयाग में रामलीला

हमें यह जानकर मुरी हुई कि प्रयाग में तेरह मास में बार इन मान किर रामनीमा का उत्सव बिना किसी रोक-टाक के मनाया जायगा । प्रयाग के हाकिम रिना

ने इस तरह को स्वीकार करके अपनी व्यापकता का परिचय दिया है कि प्रत्येक समाज को अपने धर्मोत्सव मनाते का अधिकार है।

सितम्बर १९३३

## एक उचित परामर्श

सहयोगी 'लीडर' के कल के पंक्त में एक सम्मान ने शिक्षाध्यक्ष मि. मैकेंजी से बरखास्त की है, कि हरेक स्कूल में शनिवार का छाया दिन पाठ्यक्रम के बाहर के विषयों के लिये सरकारी तौर पर अलग कर दिया जाना चाहिए। वास्तविक त्रुटि स्कार्बटन स्कूल चिकित्सा शांति विषयों को स्कूलों के कर्मचारी छुटना महत्व नहीं देते जितना देना चाहिए। चूंकि अध्यापकों की कारगुजारी लड़कों के पास होने पर मुनहसर है, इसलिये शांति तौर पर अध्यापकाले इन विषयों को फाल्गु सम्भले है क्योंकि इनसे लड़कों की परीक्षा पर कोई धरर नहीं पड़ता। शिक्षा-विभाग यह तो चाहता है कि वे उपयोगी विषय लड़कों को सिखाय जायें पर वह ऐसे हेडमास्टरों की स्वेच्छा पर धीक देता है। मनीषा यह होता है कि जहाँ हेडमास्टरों को इन विषयों में दिलचस्पी होती है, वहाँ तो इन पर कुछ ध्यान दिया जाता है पर जहाँ हेडमास्टर पुराने ढंग का हुमा वहाँ इन विषयों पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता। यदि शिक्षा-विभाग के अध्यक्ष की धीर से इन धारण का कोई हुकम निकल जाय कि स्कूलों के कर्मचारियों को कम से कम एक सप्ताह में एक दिन इन उपयोगी बातों में लगाना चाहिए, तो यह प्रश्न व्यक्तिगत न रहे जाय। यह कहने की जरूरत नहीं कि लड़कों के मानसिक विकास में इन विषयों का जो स्थान है वह किसी तरह गणित या भूगोल से कम नहीं। बल्कि कई संशोधनों में कुछ ज्ञान ही है। एक उदाहरण यह अवश्य है, कि अभी इन विषयों के अच्छे शिक्षक नहीं मिलते और यह काम ऐसे अध्यापकों को सौंपा जाता है, जिन्हें इनसे कोई परिचय नहीं होता। यह भी उनकी उद्योगिता का एक कारण है। हम जिस क्रम में सम्बन्ध होते हैं उसी को दिस लगाकर करते हैं। जब अध्यापक में ही उद्योग नहीं है तो लड़कों को उन विषय से उचित क्यों होने लगी। जहाँ कहीं इन विषयों पर ध्यान भी दिया जाता है, वहाँ भी केवल बेगार की जाती है और बेगार के काम में लड़कों को उद्योग नहीं हो सकता। शिक्षा-विभाग ने अभी तक इन बातों की धीर ध्यान नहीं दिया है। धरर शिक्षा-विभाग के धररकारी मुधापनों में बाहरी बातों को जो कुछ रीच दिया करें और उन्हें भी अध्यापकों की कारगुजारी में शामिल कर दें और उनके साथ उद्योग समय भी निश्चित कर दें तो हमें विश्वास है यह उपयोगी शिक्षा अपनी उद्योग न रहे।

सितम्बर १९३३.





ही को पुष्ट करती है और वह क्रिया शैशव की अवस्था से ही शुरू हो जाती है। सम्प्रदाय माता-पिता अपने बालक का बचपन से ब्यापक लाङ्घन्यार करके और बड़े होने पर उसको दूसरे लड़कों से अछी बसा में रखने की चेष्टा करके उसे इतना निकम्मा बना देते हैं और उसकी बुद्धि को इतना परिवर्तित कर देते हैं कि वह समाज का कून बूझने के सिवा और किसी काम का रह ही नहीं पाता। इस लिहाज से हमारे गुच्छुस प्राण-कर्म के इति या हीरो या राजकुमार कालेजों से कहीं उत्तम नें नहीं समी घाव समान नें। इससे उनमें सामानिकता का भाव पैदा होता ना। अब पश्चिम के विचारकों को भी यह शिक्षा दी देने लगी है कि जिस शिक्षा-प्रणाली को ब सभियों से गने लयाए हुए है वह अरिज को दुबल बना देती है और मनुष्य की घसामाविक भावनामां का प्रबल करके समाज में अममस और पुककता का बीज बोती है। यह सामान्यवाद और व्यवसायवाद और एष्टों में अक्षय इसी कुशिक्षा के फल है जिसने व्यक्ति को प्रभावता देकर उस समाज का हिसक जन्तु बना दिया है।

शिक्षा के धार्यों में जो सबसे बड़ी क्रांति हो रही है वह यह है कि रिजु के पहले पाँच-साल मनुष्य को बीसा बना देते हैं बीसा ही वह बन जाता है। इस शैशवावस्था में उसका अरिज बीसा बन जाता है वह बाद की फिर किसी तरह नहीं बढ़ता जा सकता। सामान्यतः अब तक हम आस्थावस्था को ब्यापक महत्व नहीं देते थे पर इसी अवस्था में हम अपने अज्ञान के कारण बालकों का भविष्य सदा के लिए बिबाइ देते हैं। इसी उम्र में बच्चे हमारे अज्ञान के कारण मूठ बोलना शुरू करने करना और चोटी करना सीखते हैं। इसी उम्र में आत्मस्य की और आरोप्य के सिद्धान्तों के विच्छ अचरख करने की धारत पड़ती है। इसी उम्र में वे विही स्वार्थी और कपूर होते हैं। और इस लिहाज में माँ-बाप पर बालक के अरिज के विषय में पहले से कहीं बड़ी जिम्मेदारि घा पड़ती है। जिसने ही विचारवानों का तो यह कहना है कि बच्चा पहले ही साल में बहुत-सी अछी या बुरी धारणें सीख लेता है। और चूकि इस उम्र में कोई बच्चा झाला नहीं लेता ना सकता इसलिए माँ-बाप का यह कर्तव्य हो जाता है कि वे माँ-बाप बनने के पहले रिजु-आत्मन के सिद्धान्तों से अछी तरह परिचित हो जायें। वह स्वीकार क्रिया जाने लगी है कि अधिकांश बालकों में एक-ही प्रवृत्ति होती है और उन प्रवृत्तियों का अनुपयोग या दुष्प्रयोग उन्हें अछी या बुरा बना देता है।

सितम्बर १९३३

## भारत में प्रेस

'भारत में समाचार-पत्र की बसा' पर ब्याख्यान देते हुए अर जी की रमन ने बहुत ठीक कहा कि पत्रों का सम्पादन एक लगी हुई रस्ती पर चलने के समान है और

सम्पादक को सर्वत्र सचेत रहना पड़ता है, बरना जब भी उसका बीसेस इपर या उम्बर हुआ तो एक घोर बह 'प्रेस ऐक्ट' के गढ़ में गिर पड़ता है, बूखपी घोर हठक के इमजाम के मुंह में। आपने क्रमशः कि ऐसे व्यबसाय में भी जहाँ हर बस्त फिर पर तमवार मटकती रहती है आधिक कठिनाइयों के कारण बरसा धीर भी जटव हो जाती है धीर इसका कारण केवल यही है कि यहाँ लोग बाम देकर पत्र पढ़ना नहीं चाहते। किसी ट्रेन में सफर करते बस्त जब एक सज्जन कोई धतवार मोल लेते हैं तो बित्तमो तल्लुक धाँसे साससा से मटी हुई पत्र की धीर लग जाती है धीर किठनी निजज्जता से लोक धतवार माँपम लगते हैं यह हम रोज धाँको देखते हैं। गरीबी का यहाँ प्ररन नहीं है। पत्रघूँटो से या प्रक्या करने वाले किसानों से कोई धारा नहीं करता कि वे धतवार पढ़ें। मगर जब पत्रे-सिखे धारमी को रोज इस-याँ धाने पाम-सिपरेट में उखा देते हैं मोंपनी माँपकर पत्र पढ़ने की साव मिटा खेते हैं तो समाचार पत्र जैसे बसें धीर देठ में उनका कैसे-बहु प्रयत्न हो को धन्य देशों में पत्रों का है। धपिकाश पत्र विज्ञानों के बल पर बसते हैं धीर सभी तरह के विज्ञापन सापने के लिये उनके कासम तुले रहते हैं। जिन विदेशी बीजों के बहिष्कार के लिये सम्पादक कामम के कासम कासे करता है उन्हीं विदेशी बीजों की साठीको के पुस बहु विज्ञापनों में बाँघता है। मपर बहु मन्बूर है। धन्य देशों में हमारो सुतिचित मुक्क धनर ऐसा न करे तो उसका पत्र एक जिन न बने। यहाँ कोई पुजासा नहीं। समाचार-पत्रों में काम करके नाम धीर बस्त लोगों कमाते हैं। यहाँ कोई पुजासा नहीं।

अक्टूबर १९३३

## प्रयाग की रामलीला बन्द

विद्यमे धंक्र में हमने इस बात पर धपनी लुगी बाहिर की भी कि नी सास के र इन साप फिर रामलीला हो रही है धीर हाकिम बिता ने बिना किसी शत के रामलीला का अनुस निकालने की धनुमति दे दी है, पर जिस बस्त मि बिताप ने यह हुन दिया या प्रयाग के पुनीसाध्यध नीनीतान यने ने। बाद को बहु धाये धीर सुरस्त रामलीला की बाप कमेटियों को सूचना दे भी कि शाम होने के पहले सब पुनुमों को रामलीला के धरान में पहुँच जाना पड़ेया। स्पष्ट रूप से तो यह बाँध कहा गया है पर इस सूचना का धनिप्राय यही है कि शाम की ममाज के पहले पुनुस निकल जाय बरना राँति मंत्र हो जाने की जिम्मेदारी बहु नहीं ले सकये। रामलीला कमेटियों ने इन शप को नहीं स्वीकार किया धीर रामलीला फिर स्वधित हो गई। हम नहीं बहु सफते कि पुनिस सुपरिटेण्डेण्ट ने प्रयाग के मुससपामों से इस विषय में सलाह करके यह गतीया निजाला या उन्हे शांति मंत्र होग का स्वयं विचार उत्पन्न हो गया। जहाँ हमें माणुम है

॥ प्रयाग की रामलीला बन्द ॥

में हंसिगा बुद्ध में रोयेगा मीका पढ़ने पर झूठ भी बोलेगा बेईमानी भी करेगा और  
 बुद्धि वह ईश्वर-मनुष्य है, इसलिये उसकी सारी मानवी क्रियायें ईश्वरत्व के रंग में रंभी  
 हुई, धार्मिक महान्, धार्मिक व्यापक होती। आप पाष-पाष सेर म मनुष्य हो जाते हैं तो  
 ईश्वर क्या मन-यो-मन भी न जाये आप वो चार धार्मिकियों को जीते सकते हैं तो क्या  
 ईश्वर वा चार धार्मिकियों को न जीते आप एक वो शक्तियों से मनुष्य हो जाते हैं तो  
 क्या ईश्वर वो चार हजार शक्तियों से भोग न करे, आपकी ईश्वर-रूपता ही ब्रूयित है,  
 बल्कि यों कहना चाहिये कि आपने ईश्वर की सृष्टि करके ही यह सारी मुराह्माँ पैदा  
 कर ली।

घोर फिर आप पाप घोर पुण्य धम घोर धर्म इनीज घोर धरलीम म भेद  
 ही कहीं रहा ? जब पाप के बड़े-बड़े विद्वान काम-रिखा के प्रचार पर जोर दे रहे हैं  
 जब विनाह सत्ता ही धमानुपीय कही जा रही है, जब यह माना जा रहा है, कि हम  
 जिसे पाप घोर धर्म कह रहे हैं वह केवल सामाजिक धर्म्याय का ही फल है घोर समाज  
 का बीसा संघटन है, उसम इसके सिवा कोई दूसरा फल हो ही नहीं सकता तो फिर  
 धम घोर धर्म का पचका क्यों बाहर। साहित्य जीवन से तो भलग हो गयी सकता  
 फिर आप कबियों से क्यों यह आशा रखते हैं कि वे पवित्रता और परमात्म में मोटे  
 लयाएँ। जब हम लंबा मरुकर पापों से मुक्त हो जाते हैं, तो कवि क्यों न पवित्र-पावनी  
 बना की महिमा पाए। वह जो कुछ मिलता है मनुष्यों के लिये मिलता है बुद्ध भी  
 उसी संस्कार में पना है, उससे आप जैसे यह आशा रखते हैं कि वह अपने संस्कारों से  
 ऊपर उठ जाय।

मपर नहीं धार्मिक जिनकी-कवि उन भावनाओं के ऊपर उठ रहा है। उसके लिये  
 योषियों के हाथ-विनाश में श्याम की रास भीला और भावना बोपी में कोई धार्मिक  
 नहीं रहा। वह गया की स्तुति भी नहीं करता और स्वर्ग की अप्सराओं और मनुष्यापरों  
 की महिमा नहीं गाता। वह मयनों के कलाघ और शिष्ट की जीपी और मुरुर संपीठ और  
 रति-रुत्स्य जैसे कामोत्पीपक प्रसंगों से अपनी कविता को धर्मरुत नहीं करता। उसका  
 विषय मनुष्य का हृदय और उसकी भावनाएँ हैं और वह प्रकृति के सीपय का ही उपा-  
 सक है। उसके यहाँ नामियों का कुम्भन नहीं जन्म की अडा और उम्भान्त है, वह  
 साधार का उपासक नहीं धनन्त और धनाधि की बुन में मस्त है। उसके लिये कृत की  
 पंक्तों जया की लाली पछिया का पाल धनाध क धर्मि किरी बासा का रूप लालित्व  
 या किरी गरीब रिताल की बुटिया या जंगल में मटकता हुधा पथिक समी समाल रूप  
 से मुन्दर, लबीन और धार्मिक है वह समस्त भूमण्डल को सौन्दर्य का धायार समझता  
 है, पय-पय पर उसके लिय मस्ती के सामान्य बिलरे पड़े हुए हैं वह पून की प्वाती में  
 धाम की एक बूँद पीकर लीरे में बूर हा जाता है, वह साहित्य में एक मया धम्बेस क्या  
 जीवन नर् मानाएँ लेकर थाया है जिसमें बासना का धमम दन्म नहीं कवि की

सम्पत्ति धर्मिताया घोर सन्धा प्रेम गन्धक रहा है। वह समान की पवित्रता घोर मान  
 बत्ता की घोर से आ रहा है, क्योंकि उसने साकार ईश्वर के पत्रों से अपना गता धुआ  
 बिया है।

१३ नवम्बर १९३३

## कारमाइकेल लाइब्रेरी की हीरक जयन्ती

कारमाइकेल लाइब्रेरी की स्थापना मन् १८७२ में हुई थी। इस प्रकार इसकी  
 स्थापना हुए साठ बरस से ऊपर हो गये। इसकी हीरक जयन्ती मनाने की तैयारी हो  
 रही है। मद्रास-प्रान्त के शिक्षा मन्त्री माननीय श्री जे. पी. घोषास्वमि ने पुस्तकालय  
 के इस महोत्सव का समारंभ होना स्वीकार कर लिया है। यह पुस्तकालय हम प्रांत  
 के बुढ़ाने पुस्तकालयों में नहीं बल्कि बड़े पुस्तकालयों में भी है। स्वर्गीय राम मच्छा  
 प्रसाद ने इस मन्दिर के प्रमुख लापरिका के सहयोग से इस पुस्तकालय की स्थापना तथा  
 इसका समर्थन किया था। आमेरिका और सरकारी कमचारियों की सहानुभूता से पुस्तकालय  
 मन् की धीरे-धीरे उन्नति होती रही। पहले यह पुस्तकालय ठेठे बाजार के पान  
 चौक से गौरी बाग जाने वाले बागो सड़क पर था। पीछे इसका अपना बसमान भवन बना  
 और मन् १८७६ में इसी में खुलने लगा। गठ बप के विवरण से इसकी बसमान बसा  
 का कुछ परिचय मिल सकता है। पुस्तकालय के हान में जो इस समय बानने पूरा लग्ना  
 और इसकी छुट चौड़ा है पाठकों के पत्रों के तिय १२६ सामयिक पत्र रख जाते हैं  
 इनमें २३ वैलिक-पत्र और ४३ मासिक-पत्र हैं। पुस्तकों की कुल संख्या १७५५६ की  
 जिनमें संस्कृत की ७ ६११ हिन्दी की १ ५६५, उर्दू की २ ८८३ संस्कृत की  
 २ १८३ बंगला की ६३६ मुकराती की १७८ और मराठी की ७६ रही। संख्या की  
 संख्या २१८ की। धान १ ५७२ व और अन्य ११ ८ ७ ६ था। इन विवरण से  
 इस पुस्तकालय का महत्व प्रकट हो जाता है। बसामन् मुनिमिपलिट्टी ने मूठ-पूठ  
 एनिडम्बुडिब मद्रमर राम बहादुर जयन्नाबदामान मेहता का पिता धारमिक बर्षों में पुस्तकालय  
 के पुस्तकालय से इनतिय मेहता जी उनको स्मृति में दो हजार रुपया समार  
 पुस्तकालय के लिए करवा बनवा रहे है। धारा है कि शिक्षा-प्रयी इस पुस्तकालय के  
 सम्बन्ध में अधिक विचारणी लेने इसकी पयात्त महायत्ता करेय तथा इनके प्रकष में  
 मुबार करेय त्रिमसे इनक द्वारा और अधिक शिक्षा प्रचार हो सके। पुस्तकालय के द्वारा  
 बास्तयिक सभा समी हो सती है जब उसमें उत्तम पुस्तकों क संग्रह का बराबर प्रकष  
 हो तथा पुस्तकों की सुव्यवस्थित सूचा हो। इनक पाठ ही हमें इन बात पर भी ध्यान  
 देना श्रिये कि पुस्तकालय की पुस्तकों में अधिक से अधिक सज्जन नाम उगावे। त्रिम

पुस्तकालय में खुली हुई गई थीर पुरानी पुस्तकों का धब्बा संकलन है, तथा उन्हें पढ़ने वालों की सख्या बहुत अधिक है। यही बहुत बड़ा पुस्तकालय है।

२० नवम्बर, १९३३

## सिनेमा और युवक

सिनेमा-चित्रों में प्रायः जिन तरह के दृश्य दिखाए जाते हैं उनका युवकों के चरित्र पर बुरा परिणाम डेकड़कर यूरोप में कई देशों में १९१५ से कम उम्र के कुमारों को सिनेमा देखने का कानूनी निषेध कर दिया है। हत्या और डाके के जो कांड इतने घबराव रूप में दिखाए जाते हैं उनका चिन्ती के चरित्र पर भी धब्बा भरता नहीं पड़ सकता। कुमारों के कोमल हृदय पर तो उसका असर इतना सराब होता है कि किठनों ही में उसे काम रूप में जाने की चेष्टा की है और धार्मिक जेलखानों में बन्धी पीन रहे हैं। शिक्षोपयोगी चित्रों से धम्बलता युवकों का बहुत-बहुत उपकार होने की आशा की जाती है। भूगोल इतिहास आरोग्य धार्मिक विषया की शिक्षा चित्रों द्वारा बहुत ही सरल और मनोरंजक हो गई है, पर शिक्षा-सिद्धांत के समर्थों को ये शिक्षा-विषयक चित्र-पट भी दोष से आती नहीं हो सकते। इनका असर इतना बुरा तो नहीं होता कि कुहुरियों की धोर से जाय पर बौद्धिक विकास में इससे बड़ी बाधा पड़ती है। मड़कों में जो विनाश-वृत्ति होती है उसे शांत करने का यहाँ कोई साधन नहीं। ब केवल धर्मियों से देखते हैं बुद्धि और तुलना शक्ति से काम लेने का उन्हें कोई प्रबन्ध नहीं मिलता। इस तरह उनका मन विनाश-प्रिय हो जाता है और उसमें विचार की शक्ति क्षीयित हो जाती है। यहाँ तक कि उनका कहना है कि बहुतेर बच्चा की मानसिक क्षीयितता इतनी बढ़ गई है कि वे जो दृश्य देखते हैं, उनकी बागेभियों को मार नहीं सके। बालकों में जो क्रियात्मक और मई-मई बालों जो ब निकलने की प्रवृत्ति है वह यहाँ विस्तृत बन जाती है। मगर सिनेमा का प्रचार दिन-दिन बढ़ता जा रहा है, और धम्बे किन्तु बोलने से भी नहीं मिलते। जब तक यह व्यवसाय मुश्किल और विचारहीन तथा चरित्रहीन व्यक्तियों के हाथ में न आवेगा इसके मुहलने की कोई आशा नहीं।

११ दिसम्बर, १९३३

## सर पी० सी० राय का दीक्षान्त भाषण

सर पी० सी० राय ने काशी-विरह-विद्यालय के दीक्षान्त भाषण में कई बड़े महत्व के प्रश्न उठाए जिन पर धीमे-धीमे स ध्यान करने की आवश्यकता है। महत्त्व धार्मिक विचार से विरह-विद्यालय में नेकबतों का होना आवश्यक न होना चाहिए, बल्कि धार्मिक

मैत्रेय पुस्तकालोकन की मगन वेदा होनी चाहिए। विद्यालय छात्रा को पाठ्य क्रम के  
 क्रमेण म फेंकाकर उनको शैक्षिक मौलिकता को नष्ट कर देता है। इनमें संदेह नहीं  
 कि परीक्षाओं और मन्त्रों का बन्धन छात्रों के स्वाध्याय में बाधक होता है और छात्र  
 भी ऐसे ही बितने ही महान् पुरुष मौजूद हैं जिन्होंने निजी विद्यालय का महं नहीं देता  
 मगर हमारे क्वास में भी ए तरह के छात्रा को विरह-विद्यालय का छात्र मन्त्र ही  
 क्या न पाय। हमारे यहाँ जो संकेदरी शिक्षा कर्मणी है, वह मन्त्रिकुमन्त्र ठक मन्त्र  
 ही नानी है पर उस वक्त अधिकांश छात्रा को उस पत्रह से बठाए वय की होती है  
 और उनमें ग्रीक विचार का विकास नहीं हुआ रहता। वास्तव में जो ए तक उनी  
 ग्रीक शिक्षा की कमी पूरी होती है। इनके ऊपर तीन मास का समय विरह-विद्यालय का  
 होना चाहिए, जिसमें छात्रों को लेखकों का मुनना सामग्री में ही और न स्वाध्याय और  
 जोर में धर्मस्त हो सकें। जो ए तक की शिक्षा तो यहाँ तक सली हो सके अधिक  
 से अधिक छात्रा को मिसनी चाहिए। मगर धारण्य यही है कि इस मन्त्री न जमाने में  
 यहाँ लोगों की धारण्यियाँ बट गई हैं। विद्यालय का धर्य बढ़ गया है। बड़ी दफ्तरी  
 रूपमें जो धर्य विभागों में राज्य कर रही है। विद्यालय पर भी धारण्य जमाए हुए है।  
 बही लम्बी-लम्बी उनक्या है बही परीक्षा की पीस है, यहाँ छात्रा पर धारण्य जमाने  
 की पुन है। हमारा साधारण अध्यापक किसी बालशर या डिप्टी प्रैक्टिस ट में कम रोब  
 नहीं जमाता। और यह तो विद्यालय नियम है। इसका पक्ष और विपक्ष शोना ही के  
 समकक्ष मिल जायेंगे मगर मानुभाषा के माध्यम द्वारा शिक्षा का जो धारण्य धारण्य  
 दिया उनमें तो समझ किसी को धारण्य हो ही नहीं सक्ती। हैराबाज में उद्धार  
 दो-से-जैसी शिक्षा ही जा रही है। जो बात उद्धार ही सक्ती है वह धर्य मन्त्राओं  
 पर भी हो सक्ती है मगर यहाँ बटिनाई यह पक्की है कि हरेक प्राण की भाषा धर्य  
 । मन्त्र भाषाओं की संख्या भी एक दमन से कम न होगी। धर्य हरेक प्राण में  
 प्राणीय भाषा ही शिक्षा का माध्यम बना दी गई तो राष्ट्रीयता को चितना बड़ा पक्का  
 पहुँचेगा। उनका धनुमाल नहीं किना जा सक्ता। हमारे धारण्य धर्य-मन्त्र होकर रहे  
 जायेंगे। इनलिये जरूरत यह है कि मानुभाषा को शिक्षा का माध्यम न बनाकर राष्ट्र  
 भाषा को माध्यम बनाया जाय। और यह धर्य ही बुझा है कि हिन्दी क मिला की कुमठे  
 धारा राष्ट्र भाषा बनने लायक नहीं है। यदि बंभान इन प्रस्ताव को स्वीकार कर ल तो  
 हमारा विरहान है कि धर्य प्राप्त करने में धर्य स्वोकार कर लेंगे। यदि राष्ट्र भाषा  
 द्वारा शिक्षा मिलने लगे तो इंटरमीडिएट का कोम सरलता से मन्त्रिकुमन्त्र में पुरा दिया  
 जा सक्ता है। और तब धारा है धारा में वह धर्यमान भी न पया हो जो धर्य  
 धर्य उनमें धा जाता है और उन्हें धर्य धा धारा के धर्योय बना देता है। मगर एक  
 धर्यनी भाषा की जरूरत तो हर हाणत में रहेगी। उनके बिना गुजारा मी ही मक्ता।  
 मन्त्र की प्रगति में किने रहन की निवे हमरी उम्मत है।

॥ सर की सी राव का शीघ्रान्त भाषण ॥

## सर तेज बहादुर सप्रू का भाषण

इस्राहाबाद युनिवर्सिटी के दीक्षान्त मापण में सर तेजबहादुर ने पाठ्य-क्रम में ऐसा परिवर्तन करने के लिए धापह किया जिससे छात्रों की रोटी का सवाल हल हो सके क्योंकि रोटी का सवाल संस्कृति के सवाल से कहीं आवश्यक है। आपने बहुत बार फरमाया कि हज़ारों यवक अपने कानून और धाट और विज्ञान का डिप्लोमा लिए मांग मारे भ्रम रहे हैं। आपने व्यवसायिक और भौगोलिक शिक्षा पर जोर दिया। मगर हम पूछते हैं कि औद्योगिक डिप्लोमा वालों के लिए भी कहीं स्थान है? स्कूली और वाय टेकनिकल स्कूलों को जाने दीजिए ज़ारों मोहुरों और बड्डियों के लिए भी तो काम की इफ़राल नहीं है। अगर जगदी सख्या और बड्ड जाम तो जममें भी बेव्यारी बड्ड जावगो। फिर कौन-सा सद्योग सीकें जहाँ रोटी का सवाल हल हो सके।

मगर यही तो सिर्फ़ रोटी ही का सवाल नहीं है। सम्मान का सवाल है, बेंपने का सवाल है, कार का सवाल है, फस्ट क्लास में सफ़र करने का सवाल है। धीरों में जो महत्वाकांक्षा है क्या युवको में उसका होना बर्जित है? बड्डे वा जमार को फ़िरी ने शान से बेंपने म रखते नहीं देखा। वह बहुत सफल हुआ तो अपनी बीबी के लिए कुछ पहने बमबा देवा या अपने कण्ठे मक न को पक्का करवा लेवा। शान से नही भोग जीवन का निर्वाह कर रहे हैं जिन्होंने कानून पढ़ा है जिन्होंने धाट और विज्ञान की डिग्रियाँ भी हैं। उसी रास्ते पर हमारा युवक भी चल रहा है। उसे किसी तरह सन्तोप नहीं होता कि उसे प्रकृति में बेवजस जूते गाँठने के लिए पवा किया है, और ऊँची शिक्षा उसके लिए हातिकर होगी। वह अपने समीप जो कुछ देखता है उसी का रंग उस पर धसर करता है। जो भोग उस पवती है जो भोग उसे उपवेश देते हैं, जो भोग उसकी ज्ञान वृद्धि करण है जो जीवन के मकने धारस बगकर उसके सम्पुक्त बडे होते हैं कैंव मुमकिन है कि इनका प्रभाव उस पर न पड। ऐसे लोग जब जमसे धौद्यानिक शिक्षा का अनुरोध करतें हैं तो वह अपने धन्दर-ही-धन्दर मुकता है और सोचता है कि धाप भोग तो जिन्यमी के मजे उड़ा रहे हैं हम मजदूरी करण का उपवेश देते हैं। यही कारण है कि माज हज़ारो युवक निराल होने पर भी विद्यालयों की धोर बीडे बने जाने हैं। क्या इरज है थोटी के दो छात्रों के लिए ही कुछ धाता है शेष के लिए कोई धारा नहीं। कौम ज्ञान उमी की तकदीर लख जाम और वह उन दो धारमियों में एक हो। कुछ भी हो वह पहले से ही हिम्मत हार कर न बैठेगा। एक वा तीन बार अपनी किरमल धारमाणा अपनी धालें छोडकर, स्वास्थ जोकर, पर को बरबार कर वह यह परीक्षा करमा और जब धमफम हो जामबा तो उमे यह खड्ड हो जावगा कि उमने बवा-शक्ति उद्योग कर दिया। धर्र मे भाम कर धपन को धयोग्य नगध मेने पर उतधा युवक और मनस्वी धात्मा नगी सेवार नहीं होता।



बात यह है कि समाज का जेसा कुछ संगठन है, उसमें ऐसी स्थिति का पैदा होगा प्रतिभार्य का और वह हुई। जब तक बोर्ड से धारणी मस्तिष्क के बम से अपने स्वाधी को उत्पत्ति करत रहेंगे जब तक गिने-गिनाए धारणियों को भी ऐसे धबधर मिसते रहेंगे कि वे डिप्लोमा का पास-नोट लेकर सम्मान और ऐरबय के प्रदेश में विचार तर्क उस बस्त तक विद्यालयों में छात्रों का यों ही रेलपेस रहेगा चाहे विद्यालय उनकी भाकांचाओं की समाधि ही क्यों न बनता रहे। यह स्थिति कुछ भारत में ही नहीं हुई है। अमेरिका योरप के उत्तम देशों में भी जहाँ कहीं व्यक्ति की प्रथानता है, यही पठा हो रही है। जब तक राष्ट्र समष्टि का रूप धारण न करेगा जब तक बोर्ड से अतुर व्यक्ति नक्षी के रूप पात्र बनते रहेंगे जब तक हरेक को अपनी-अपनी पकी रहेंगी जब तक राष्ट्र इस सत्तरवायित्व को स्वीकार न करेगा कि राष्ट्र के प्रत्येक व्यक्ति को समाज रूप से जीवित रहने और उत्पत्ति करने का अधिकार है, उस बस्त तक पढे सिको की यह भयकर बेकरी दिन-दिन बढ़ती जायगी। यह सत्य है कि धाब बड़े-बड़े राष्ट्रों के विभाजना से शोक है बिभूले विद्यालयों का मुँह तक नहीं देखा। लेकिन मसोमिनी हिटलर और स्टालिन समाज की शोक पर चलकर इस पथ पर नहीं पहुँचे हैं, वे क्रान्ति-मार्ग से अपने उच्चस्वाम पर पहुँचे हैं। और इज्जति बच्चों का खेल नहीं है। हम अपने युवकों के मस्तिष्क में यह स्थान नहीं बनने देना चाहते कि उत्पत्ति के द्वार उनके लिए बन्द है और समाज और राष्ट्र से विद्रोह करके ही वे अपने लिए स्थान निकाल सकते हैं। देश के लिए वह बुरा दिन होगा अगर युवकों के दिल में यह बात बैठ गई। उसक लिए यह परमावरणक है कि राष्ट्र इन सिद्धान्त को स्वीकार कर ले कि डिप्लोमा सम्पत्ति और अधिकार के खजाने की कुम्भी नहीं है। सभी शिक्षा का वास्तविक महत्व प्रकट होगा। अपनी जो शिक्षा भी एक व्यवसाय है और जो अधिक-से-अधिक धन खर्च कर सकता है वह बड़ी-से-बड़ी शिक्षा से सकता है, बशर्ते कि वह निरा कोड़-मार्ग न हो। राष्ट्र के मावी कम्पास के लिए यह बकरी हो गया है कि समाज और राष्ट्र की वह व्यवस्था जिनमें बोर्ड से व्यक्ति संसार की विभूतियों पर धाबिपत्य जमाएँ असतोप और संभव की प्यासा फँसा रहे हैं, बरत ही जाय और हमारी महानता की कसीटी हमारी शान और विस्तारिता न हो बसिक हमारी सेवा और त्यागमय जीवन ही उनको कसीटी हो।

२५ दिसम्बर, १९३३

## डाक्टर टैगोर वर्म्बई में

पत्रिका से जगदा बमूम करना भी एक कला है और इनके कलाविद् भारत में दो हैं। एक महात्मा माधवजी भुवने महात्मा गाँधी। कौन धर्म है कौन बोधम हमना

फैला करना मुश्किल है। दोनों महानुभावों को एक ही बनेट में रखना चाहिए। मामवीयबी ने टेबी व दिनों में लाशों बसूल किए। महारामाबी इस मन्वी घोर बेकारी के दिनों में केवल दो प्रान्तों में बाई तीन लाख रुपये बसूल कर चुके। सुना है मामवीयबी भी निष्कामने वाले हैं। तो बात यह है कि ये महानुभाव इस काम में सिद्धहस्त हो गए। पचास-गचास साल से धर्ममाम जो कर रहे हैं। डाक्टर रबीन्द्रनाथ विश्व-कवि हैं और बहुत बड़े कलाकार हैं। सफिन मिश्रण-कला में उर्दू दोनों पूज्य मिश्रणों से कुछ सीखने की जरूरत है। धनी हाम में इस क्षेत्र में धाये हैं। मामवीयबी अतीत घोर वान घोर अपने बायी कमरकार से होते हैं महारामाबी चम्पा भी होते हैं घोर डाँटते मो हैं उनकी कला में यही विशेषता है। डाक्टर टैमोर ने निकट लगाकर शांति-निकेतन व बामकों बामिकाओं से धर्मिनव करमा खुब भी पार्ट किया लेकिन सुनते हैं धम्पी रकम हाव न लगी। बात यह है कि जिस संस्था के लिये चम्पा माँगा जाव उस संस्था से जनता में कवि घोर उस्ताह हुए बिना चम्पा कैसे मिले। शांति-निकेतन ने धमी जनता के दिल में धर नहीं किया। जब तक वह सेवा घोर त्याग का रकाड जनता के सामने न रखे उस संस्था बड़े-बड़े लोग चाहे केवल बड़ी रकम दान दे दें जनता से मिलना मुश्किल है। मगर हम तो डाक्टर टैमोर जैसे महान अधि का पाठ कुछ घोरपूछा न जान पका। यदि शांति निकेतन से ऐसे छात्र निकलें जा जीवन-सधाम न कुछ कर दिखाएँ तो बेस धाव उसको भी जसी तरह प्यार करेगा जैसे मुदकुनों को।

नवरी, १९३४

## साम्प्रदायिकता और संस्कृति

साम्प्रदायिकता सब संस्कृति का बुझाई दिया करती है। उसे अपने धरनी रूप में निकलते शायद सज्जा धापी है, इसलिये वह धने की भाँति जो सिंह की पाव धोड़ कर धंभ के जानवरों पर राज बमाला फिरता वा संस्कृति का खोन धोड़ कर धापी है। हिन्दू धरनी संस्कृति को कमायत तक स्वरचित रखना चाहता है, मुसलमान धरनी संस्कृति को। दोनों ही धमी तक धरनी-धरनी संस्कृति को धरणी समझ रहे हैं यह मूल गए है, कि धन न कही मुसलम-संस्कृति है, न कही हिन्दू-संस्कृति न कोई धन्य संस्कृति धन संसार में केवल एक संस्कृति है और वह है धार्मिक संस्कृति मगर हम धाव भी हिन्दू और मुसलम संस्कृति का राता रोए जाने जाते हैं। हालाँकि संस्कृति का धम से कोई सम्बन्ध नहीं। धाव संस्कृति है ईरानी संस्कृति है धरन संस्कृति है सेरिम ईसाई संस्कृति और मुसलम वा हिन्दू संस्कृति नाम की कोई भीज नहीं है। हिन्दू मृति पूजक है, तो क्या मुसलमन कन्न-पूजक और स्नान पूजक नहीं है। शांति को शक्य घोर शीरीनी वीन चड़ाजा है समजिध का गुवा का धन वीन समझना है। मगर मुसलमानों में

एक सम्प्रदाय ऐसा है, जो बड़े-से-बड़े पैदावारों के सामने खिर झुकाना भी कुफ समझता है, तो हिन्दुओं में भी एक सम्प्रदाय ऐसा है जो देवताओं को पत्थर के टुकड़े और लकड़ों को पानी की धारा और बम धूम्रों को गणोडे समझत है। यहाँ तो हम दोना सम्कृतिना में कोई धन्तर नहीं बीनता।

तो क्या भाषा का धन्तर है ? बिलकुल नहीं। मुसलमान उलू को अपनी मिल्की भाषा कहें मगर मरामी मुसलमान कं लिए उलू बीनो ही अपरिचित वस्तु है जैसे मरामी हिन्दू के लिए मस्जिद। हिन्दू या मुसलमान जिस प्रायत म रहते हैं सब-भाषाएक की भाषा बोझते हैं चाहे वह उलू हो या हिन्दी बयसा हो या मराठी। बगामो मुसलमान जनी तरह उलू नहीं बोल सकता धीर म समझ सकता है जिस तरह बंगामी हिन्दू। दोनों एक ही भाषा बोझते हैं। पीमा प्रायत वा हिन्दू जनी तरह परतो बोलता है जैसे वहाँ का मुसलमान।

फिर क्या पहनाचे म धन्तर है ? पीमाप्रायत के हिन्दू धीर मुसलमान धारने सामने बड़े कर दिए कार्य कोई समीच नहीं। हिन्दू लकी-पुरुष धी मयममानो के-से शालवार पहनते हैं हिन्दू-स्त्रियाँ मुसलमान स्त्रियो की ही तरह कुरता धीर धोइती पहनती-धोइती है। हिन्दू पुरुष भी मुसलमानों की तरह कुसाह धीर पयडी बाँधता है। धन्तर दोनों ही सड़ो भी रकते हैं। बंगाल म जाइए वहाँ हिन्दू धीर मुसलमा स्त्रियाँ दोनों ही सड़ो पहनती हैं हिन्दू धीर मुसलमान-पुरुष दोनों ही कुरता धीर धोइती पहनते हैं। उलूध म की प्रजा बहुत हाय म बनी है जब से साम्प्रदायिकता ने जोर पकड़ा है।

कान-मान को सीखिए। मगर मुसलमान माँच खाते हैं ता हिन्दू भी धस्ली धी सवी मान लाते हैं। ठीके दरजे के हिन्दू भी शरण पीते हैं जैसे दरजे क मुसलमान भी। नीच दरजे के हिन्दू भी शरण पीते हैं नीचे दरजे का मुसलमान भी। मध्यमबच के हिन्दू मा सो बहुत कम शरण पीते हैं वा मय के गोले बडने है जिसका गता हमारा पंश पुकारी क्याय है। मध्यमबच के मुसलमान भी बहुत कम शरण पीते हैं, हाँ कुछ नीच मस्लीम की पीनक धरम सेते हैं मगर इस पीनक कामी में हिन्दू भाई मयममानो से पीछे नहीं है। हाँ मुसलमान गाय की कुर्बानी करते हैं धीर उनका मान लाने हैं लेकिन हिन्दुमा म भी एसी क्रातियाँ मौजूद हैं जा वाय का माँच लातो है यहाँ तक कि मतरक मान भी नहीं धोइती हामाँकि बकिर धीर मतरक मान में बिरपे धन्तर नहीं है। मगर में हिन्दू ही एक एसी क्राति है जो दो-माँच को धग्गाध या धपविच समझतो ह। तो क्या इसलिये हिन्दुओं को समस्त मंमार से धम-मधाय धीइ देना क्रातिए ?

मंगीत धीर बिच-कला भी मस्कृति का एक धंग है लेकिन यहाँ भी हय कोई साम्कृतििक भेद नहीं पत्ने। वही राग-रागिनियाँ दोनों गाते हैं धीर मुसल मान की बिच

॥ साम्प्रदायिकता धीर संस्कृति ॥

कमा से भी हम परिचित हैं। नाट्य कला पहले मुसलमानों में न रही हो लेकिन धार इस सींगे में भी हम मुसलमानों को उसी तरह पाते हैं जैसे हिन्दुओं को।

फिर हमारी समझ में नहीं आता कि वह कौन-सी संस्कृति है, जिसकी रचा के लिये साम्प्रदायिकता इतना जोर बाँध रही है। वास्तव में संस्कृति की पुकार केवल डोंग है, निरा पाखंड। और इसके अन्वयात् भी नहीं भोग है जो साम्प्रदायिकता की सीतल-धामा में बैठे बिहार करते हैं। यह सीधे-साधे धारमियों को साम्प्रदायिकता की धोर कसीट लाने का केवल एक मंत्र है और कुछ नहीं। हिन्दू और मुसलमन संस्कृति के एक-दूसरे की महानुभाव धोर नहीं समुदाय हैं जिसको अपने ऊपर अपने देशवासियों के ऊपर और सत्य के ऊपर कोई शरोसा नहीं इसलिये अनन्त तक एक ऐसी शक्ति की बकरत समझते हैं, जो उनके धाराओं में सरपंच का काम करती रहे। इन धारियों की अनता के सुख-दुख से कोई मतलब नहीं उनके पास ऐसा कोई सामाजिक या राजनैतिक काम-कर्म नहीं है, जिसे राष्ट्र के सामने रख सकें। उनका काम केवल एक-दूसरे का विरोध करके सरकार के सामने परिचार करना और इन तरह विदेशी शासन को स्पन्धी बनाना है। उन्हें किसी हिन्दू या किसी मुसलमन शासन की अपेक्षा विदेशी शासन प्यारी सझ है। वे धोहरों और रिवायतों के लिए एक दूसरे से बड़ा ऊपरी करके अनता पर शासन करने में हासक के सहायक बनने के लिये और कुछ नहीं करते। मुसलमान धरर हासकों का काम पकड़कर कुछ रिवायतों या यथा है, तो हिन्दू क्यों न सरकार का काम पकड़े और क्यों न मुसलमानों ही की माँति सुख बन जाय। यही उनकी मनोवृत्ति है। कोई ऐसा काम सोच निकालना जिससे हिन्दू और मुसलमान दोनों एक होकर राष्ट्र का उधार कर सकें उनकी विचार शक्ति से बाहर है। दोनों ही साम्प्रदायिक मस्त्रों मध्यवर्ष के धनिकों धमीशरों धोहरेशरों और पय-भोसुपों की हैं। उनका काम लेव अपने समुदाय के लिये ऐसे धरसर प्राप्त करना है, जिससे वह अनता पर हासन कर सकें अनता पर धार्मिक और ध्यावसायिक प्रमुख बना सकें। साधारण अनता क सुख-दुख से उन्हें कोई प्रयोजन नहीं। धगर सरकार की किसी नीति से अनता को कुछ लाभ होने की आशा है और इन समुदायों का कुछ सति पहुँचने का मय है, तो वे तुरन्त उनका विरोध करने को तैयार हो जायगी। धगर और जाता यहाई तक जाय ता हम इन संस्थाधा ॥ धधिकारा ऐसे सञ्जन मिलने त्रिनध कोई-न-कोई निजी हित लया हुआ है। और कुछ न तही तो कुचकाम क बंधनों पर उनही रमाई ही सारल ही जाती है। एक विविध बात है कि इन सञ्जनों की धकमरों की निगाह में बड़ी दृश्यत है, इनकी ब बड़ी गतिर करते हैं। इनका कारण इनके निधा और क्या है कि वे सञ्जते हैं ऐनों पर ही उनका प्रमुख टिधा हुआ है। धारण में लूब लडे जाधा लूब एक दूसरे को मुसलमान पहुँचाधा। उनके पास परिचार से जाधो फिर उन्हें किम वा मय है वे धरर है। यथा यद् है कि बाधों ने यद् पालण्ड कैमाना भी शुभ कर रिधा है कि हिन्दू धारण कुने वर

स्वराज्य प्राप्त कर सकते हैं। इतिहास में उनके उदाहरण भी दिए जाते हैं। इस तरह की घटना कमिटी के माफ़क इसके बिना कि मुसलमानों में और ज्यादा बढ़गुमानी देने और कोई गरीबी नहीं निकल सकता। धरत कोई जमाना था जब मुसलमानों के राज-दास में हिन्दुओं ने स्वाधीनता पाई थी तो कोई ऐसा काम भी था जब हिन्दुओं के जमाने में मुसलमानों ने अपना साम्राज्य स्थापित किया था। उन जमानों को भूल जाइये। यह मुबारक दिन होगा जब हुनायी साम्राज्यों से इतिहास उठा दिया जायगा। यह जमाना साम्प्रदायिक सम्बन्ध का नहीं है। यह धार्मिक युग है और धार्य नहीं गीति लच्छन होनी जिससे जमाना अपनी धार्मिक समस्याओं को हल कर गक जिससे यह संघ निरस्त यह जमान के नाम पर किया गया पालंड यह गीति के नाम पर गरीबों को पुहने की कृपा भिटाई का मके। जमाना को धार्य संस्कृतियों की रक्षा करने का न प्रयत्न है न करण। 'संस्कृति धरियों का पेटनरों का बेकिरों का व्यसन है। हरिडों के लिये प्राण-रक्षा ही सबसे बड़ी समस्या है। उन संस्कृति में या ही बना जिसकी न रक्षा करे। जब जमाना मुक्ति की लव उस पर जब और संस्कृति का मोड़ छापा हुआ था। जमाना जमाने के लिये जमाना कायुत जाती जाती है वह देखने लगी है कि यह संस्कृति कलक कुटेरो की संस्कृति की जो राजा बनकर बिडाल बनकर जयत मेठ बनकर जमाना को कुटती थी। उसे धार्य जमाने जीवन की रक्षा को धार्य चिन्ता है जो संस्कृति की रक्षा से नहीं सम्भव है। उस पुरानी संस्कृति में जलक लिए मोड़ का कोई कारण नहीं है। और साम्प्रदायिकता जमाने धार्मिक समस्याओं की तरक से धार्य बंध लिए हुए ऐसे काम कर पर बन रही है जिससे जमाने परधीनता चिरस्थायी बनी रहेगी।

१५ जनवरी, १९३४

## हवा का रुझान

हिन्दी जन के हॉमलैंड के एक सभारक्षता ने लिखा है कि पश्चिम जाल पहले केमिन्ड में सार्वत्रिय और कविता ही धार्यों के बिचार-विनिमय का बिपक या पत्रनीति से हिन्दी का जल ती दिनकली न थी। जनी केमिन्ड में धार्य कम्युनिज्म का लवने धार्य धरत है। मगर वह महाराज यह भूरा लवे है कि पश्चिम जल पहले कम्युनिज्म की मूरत ही जिसने देखी थी। बिज्ञान में जलोज लव और बैतार बनाए, तो बना राजनीति धर्यों-नी-रनों बैटी रहती। जलोज और परम्परावादी बनने में लवकों के धार्यधार के लिये बना धार्यधर हो लकता है। कम्युनिज्म धर्यधर साम्प्रदाय ना धर्यधर नहीं ती करता है जो हुनरो में धार्यधर लुप लोयना धार्यधर है जो हुनरो को धर्यधर लवना धार्यधर है। जो धर्यधर की धर्यधर के धर्यधर हो लकता है जो धर्यधर में कोई मूरतार वा

पर समा हुआ नहीं देखता जो समझी है उसे साम्यवाद से क्यों विरोध होने लगा । फिर युद्ध तो धारणावासी होते ही है । भारत में ही देखिये । बाप तो साम्प्रदायिकता के उपासक है, और बेटे उसके कट्टर विरोधी । युद्ध क्या नहीं देखते कि वर्तमान सामाजिक और राजनैतिक मगठन ही जगती उबार, ऊँची और पवित्र भावनाओं को कुचस कर उन्हें स्वार्थी और छोटीय और हृदयस्थ बना देती है । फिर वे क्यों न उस व्यवस्था के दुरमन हो जायें जो उनको मानवता को पीछे धकेल रही है और उनमें प्रेम की बगल सच के साथ जगा रही है । उसी सम्भावना के सन्नों में 'एना मुस्लिम से कोई समझदार धारणी मिलेगा जिसमें जरा भी विचार शक्ति है, जो वर्तमान परिस्थिति का साम्यवासी विरुद्ध न स्वीकार करता हो ।

२६ जनवरी, १९३४

## जर्मनी में नाच पर बहिष्कार

द्विजगत की सरकार न हाल में ऐसा करमान जारी किया है कि अत्यन्त बप से कम उम्र के किशोर युवक-युवतियों के गले नाच में न जायें । हाँ अगर उनके साथ कोई तजकबकार धारणी हो तो जा सकते हैं । जर्मनी के रक्षक और मन्त्रालय युवकों ने इस करमान का विरोध किया है लेकिन जर्मन सरकार एम विरोध की परवाह नहीं करती । यूरोप में नान विनाशिता जोरों से बढ़ रही है, और वही नाच जो स्त्रियों के धारण का कुल मचाते हैं नाचिकाओं को मजबूत रूप में देखकर अपनी छाँटों को तृप्त करते हैं । हम तो उन युवकों से कहेंगे कि इस रूप का विरोध न करने के बखते उनका स्वागत करो और बड़ी समय जो तुम मंगा नाच देखने में जाच करछे वे मरगना बस सेमने में लमाओ ।

१२ फरवरी, १९३४

## स्वामी-सत्यदेव पाठशाला

पाठकों को यह जान कर हूय होगा कि हिन्दी के विद्यार्थ सेवक और राष्ट्रीय कार्यकर्ता स्वामी सत्यदेव जी परिषदाय ने काशी की अपने कायदा का केन्द्र बनाया है और अब यही निवास करेंगे । धार धारन मिला से हिन्दी की सेवा ला करत ही रहेंगे अब धारने एक पाठशाला भी स्थापित कर बी है । काशी एम विद्यालय क मिये उामुक्त स्थान है कपारि यह हमेशा न विद्या का केन्द्र रहा है । इस विद्यालय म बहु भी विषय पढ़ाये जायेंगे जो मनुष्य की स्वातन्त्र्यी स्वतंत्र-विचार कमयोगी उगर और विचार-

शौर बनते हैं। स्वामीजी ने बुनियाँ देनी है और राष्ट्रों के उत्थान और पतन का अध्ययन किया है। वह बड़े वीरारम्भ के उपागम नहीं है जो जीवन को अनित्य और संसार को दुःख का मूल समझता है। उन्होंने संसार के मुख्य धर्मों का तुलनात्मक विवेचन किया है। अतएव धारकी सम्पन्नता में किम बंग की शिक्षा मिलेगी इसका अनुमान किया जा सकता है। यहाँ यूरोप का इतिहास पारंपार्य शिक्षा के विकास का इतिहास पूरा और पश्चिम की संस्कृतियों का विचारपूरा अध्ययन धार्मिक विषयों पर व्याख्यान दिए जायेंगे। काशी में यह पाठशाला बनने बंद की प्रतिष्ठोत्त होनी जिसमें पूरा और पश्चिम की सभी सम्बन्धी बातों का सामंजस्य होगा। हम नहीं बन्द सकते काशी जैसे फ़ट्टर पंथी स्थान में ऐसी पाठशाला कहीं तक सफल होगी पर काशी जहाँ प्राचीन है वहाँ उसने सर्वत्र नए प्रगति का स्वागत किया है और हम धारा करते हैं कि स्वामी जी अपने शुभ-उद्देश्य में सफल होंगे।

१६ फरवरी, १९३४

## भारतीय कला की आत्मा

हिन्दू एकतेमेवैती सर मानवम हैमी ने सत्जनक स्कूल आक-घाट की धार्मिक प्रवृत्तियों के अन्तर्गत पर भारतीय कला की बनी सुन्दर विवेचना की। धारने फरमाया कि प्राचीन भारतीय कला कुछ धार्मिक पौराणिक और धार्मिक विषयों को अभिव्यक्ति की को विशेष रूप से भारतीय थे। धार्मिक विचार में यही भारत की जातीय-कला की आत्मा थी। देशक की। मगर उस धर्मत्वता के युग में संसार की किम जाति की कला इससे भिन्न थी? फिर अब संसार में वही कला का यह क्या रूप ल था तो भारत में क्यों होता। यहाँ भी कलाकारों ने अपनी बुद्धि वृष्ण की रास सीमाओं और देवताओं के पौराणिक पात्रों के चित्रित करने में लगाई उनी तरह जैसे बौद्ध कलाकारों ने कई चित्रों परने बुद्ध जीवन को चित्रित करने में लगायी थी या जैसे बार को इटली के मदान् चित्रकारों और मूर्तिकारों ने ईसा और अन्य धर्म सम्बन्धी विषयों में लक्ष की। भारत की आत्मा ही कलाकार की आत्मा है और वह धर्म चित्रों की धार्मिक और माध्यमिक मुनामी से मुक्त होकर व्याप्त स्वाधीन क्षेत्र में धारा चाली है और वही कलाकार धार का राष्ट्रीय कलाकार होना जो इन भावना को रंगों और पत्रों में दर्शाए। देवी-देवता और राजा-रानो के चित्र धर्म केवल प्रतीका के लिए रहे यह है राष्ट्रीय भावना को उन्ने कोई धारता नहीं मिलता। धार भी हमारे यहाँ ऐम धारोचकों को बनी नहीं है, जो वृष्ण की दधि सीमा के चित्र देकर गरवर जा जाते हैं और उनकी प्रतीका में धारियाँ निर्माण कर डालने हैं। मेन्ट्रि एग चित्रों में गीरक या धारणर का

अनुभव करने वाला वही सुखी और सुष्ट जीव है जो धाम के वास्तविक जीवन में नहीं पड़े और न परिस्थितियों के कारण पड़ सकते हैं ।

२६ फरवरी १९२४

## पत्रकारों के लिये सतोष की बात

भारत के पत्रकारों की धाम जो धाम है, वह किसी से छिपी नहीं । इससे कहीं ज्यादा मेहनत सिर्फ गुजारा लेकर सामय ही कोई करता हो । बहुतों को तो गुजारा भी नहीं मिलता । चायबाब है तो उसे बेचते हैं नहीं द्यूतन करके पेट पालते हैं और पत्र निकालते हैं । जिसे हम पाँच बोझकर विदेशियों से कुछ विज्ञापन और कचहरियों से कुछ मोटिस मिल गए वह तो चाहे साम को रोटी बाल का सेवा हो पर जो इसने भ्राम्यवान नहीं है वह तो जिन्ना बरबोर है । क्या निताम है कि बेचारे स्वदेशी-स्वदेशी चित्ता करने कात्म-के-कालम काम करते हैं मगर जन्हीं विदेशियों के विज्ञापन घाप कर अपनी रोटियाँ बनाते हैं । किसी-न-किसी तरह मरग को घपना पत्र तो बनाना ही है । इसलिए पत्रकारों को यह सुनकर खुशी होगी कि कम-से-कम एक बात में वह दूसरों से बाकी मारे हुए हैं मानी न पावस कम होते हैं । बम्बई प्रान्त के पावसदातों की रिपोर्ट से पता चलता है कि पिछले साल जहाँ पाँच हजार घायमी पावस हुए, वहीं उनमें सिर्फ एक पत्रकार था । मगर हमारा तो क्या है कि पत्रकार धौबल से घाबिर तक सभी पावस होते हैं । जिसके पास होस-हुबास है ही नहीं वह क्या पावस होगा । जिसके पास कुरता ही नहीं है वह घामन कहीं से लाये । यह पावसपन नहीं तो और क्या है कि भूखों मर रहे हैं । बाल-बच्चे उसके नाम को रो रहे हैं और वह हजरत पत्र निकाल रहे हैं । बच्चे की मीठी-मीठी लोठमी बातें सुनन की उसे कुरसठ नहीं । वह सर हेनो या सर हैम या सर मिटर का धसेम्बमी बाला मापस पछन और उस पर विचार करने में मर्क है । पुसिए, बन्निन धधिका के हिन्दुस्तानी बुधी वहाँ से निकाल लिए गए तो तुम क्यों पावामे से बाहर हुए या रहे हो । और हा कोई नहीं बामता । बन्निन है वह इतमीनाम से बहस कर रहा है । मरुजन है, वह इतमीनाम से बैठा रुपए की घर्कियाँ बना रहा है । बमीबार है वह इतमीनाम से घनामियों से मजराने बसून कर रहा है और हमारा यह पावस सम्पादक उन घनामै बुधियों के रुप म लून के धीगु बहस रहा है । हिटर ने या मुमोसिमी ने या बन्निन न या कजवेन्ट ने एक बात वह ही बम यहाँ पत्रकार साहब को मातासुसिया हो गया । वहीं डाका पड़ गया और उन्हें ऐसा मातूम हुआ कि कोई इनके धंगड़-रंगड़ उड़ा न गया कहीं पुसिम ने गोमी बना दी और इनके गीने में



शोभी लग गई । यह सब पावनपन गही तो धीर क्या है ? पावन क्या पावन होता ?  
 ह्मण तो खयाल है वह निकलना ही पावनपन है बीबानकी है अनून है ।  
 ३० अप्रैल, १६३४

## त्याहारों में दंगे

दंग की दशा कुछ ऐसी बिचड़ गई है कि कोई ऐसा त्योहार नहीं जाता जिसमें  
 दंग नहीं बल्कि बहि-उत्साह न हा धीर कुछ सोचों की आने न आवें । पुडरम हो या ई  
 होमी ही या प्योहार बने ही हो जाते हैं । इन त्योहारों के धाम से धामन की बरक  
 एक बिन्दा धीर भय का सामना होता है धीर धर स्वोहार जैगियत से बीत बाव तो  
 हम सुटी का सखि बने है । नीबल यहाँ तक पहुँच गई है कि त्योहारों में दंगा वा होना  
 धरम की बात नहीं न होना धरम की बात है । धीर बने होते हैं ऐसी-ऐसी के  
 बुनियात बातों पर कि वेचकर हँसी जाती है, मनों त्योहारों के बाते ही लोयो के तिर  
 पर कोई मूत सवार हो जाता हो । कहीं इसलिए लड़ाई हो जाती है कि एक हिन्दू  
 लड़के की निचकारी से किसी मुसलमान के कपड़ों पर धीरे पड़ गए धीर उसके बीन न  
 बाग धन गए । कहीं इसलिए कि ताजिया एक सास पाली से जायमा या कला ताजिये  
 से बाते जायमा । ऐसी-ऐसी बातों पर लड़कियाँ लुरियाँ बस जाती है धीर बीन की झूठी  
 हिमायत में बैगुनाहों का झूठ बहा दिया जाता है धीर पुरतो से जो भाईबाप बना का  
 रहा है उदरम यहा पोट दिया जाता है धीर धामे के लिए दुखमी का बीज बो दिया  
 जाता है । मना यह है कि ऐसे धरधरों पर पड़े-लिखे लोच नेताबिरी करने के सिमे  
 निरकत जाते हैं । चाहे जिन्दी में एक बार भी नमाज न पढ़ी हो या मन्दिर में न गए  
 हों, न धरमे स्वजातियों से कोई हमदर्दी की हो धर ऐसे धीर पर राहात का दरा  
 सुटने के लिए वे दूब पड़ते हैं । इससे तो नहीं धरधा होता कि त्योहार बन्द ही हो  
 जाते त्योहार जाते हैं इसलिए कि लोच एक-दो दिन लुसी मनाकर रोड धरने बानी  
 कुलधरों को भूल जाय धीर धापस से प्रम से पले मिलें । यहाँ त्योहारों में सुन बहाना  
 जाता है । न जान का तक देता की यह बसा खैरी । जब तक धूत-आप धीर मेर मान  
 धीर धरिमक पालेड बन रहा है दशा के सुभाने का कोई मीका नहीं ।

३० अप्रैल १६३४

## भारत में गुरु-प्रथा

जो तो संसार-भर में गुरु-प्रथा विप्र-विप्र नामों से प्रचलित है मगर भारत की  
 ती उदने धरना यहा ही बना लिया है । इस विषय पर हाल में लखनऊ विरचविद्यालय

के बादस चान्ससर ही पराजने मे एक धरपन्त ज्ञानबद्ध क भावस दिया । धारने धन्व  
 भक्ति और मुक्ति की तुलना करते हुए बतसाया कि प्राचीन हिन्दू जन्मों में गुरु की महिमा  
 इतने मुवासने के साथ बयान की गई है कि गुरु को ईश्वर से भी थोड़ा ऊँचा उठा दिया  
 गया है । गुरु जो कुछ कहे उसे धीरे बन्द करके शिरोधार्य करना होया । कहीं-कहीं तो  
 यह पत्र इतना जोर पकड़ गया है कि जब कोई नव विवाहित बहू जाती है, तो सबसे  
 पहिले गुरु जी के घरखों में अर्पित की जाती है । गुरु जी एकान्त मे उसे क्या धारीर्षा  
 देते है वह श्री से सिवा कोई नहीं जानता या जानता भी है तो वह गुरु जी की सम्प  
 टता नहीं उनकी कृपावृष्टि समझे जाती है । गुरु बनने क लिए यह आवश्यक नहीं है  
 कि वह तपस्वी हो बहुत स गुरु तो राजसी ठग-बाट से रहते है लेकिन यदि गुरु स्वामी  
 हो समाज और शिष्टता के बन्धनों को तोड़कर फेंक चुका हो और केवल एक-दो प्रंगुल  
 की लँगोटी सबाएँ बूमता हो तो उनका बाहु भोगों पर बहुत जल्द धसर कर जाता  
 है । यह गुरु जी माया को धरने पाव नहीं पकड़ने देते उसे को ह्राप से नहीं छूते  
 पैरों से छुकरा बसे है । और उनके ऊपर माया की बर्षा होने लगती है । फिर वह चाहे  
 दोनों हाथा स समेटें लेकिन हाँ त्याग का बोंप बनाने रखती है । मानों वह केवल अपने  
 शिष्यों की खातिर से उनकी भेंट स्वीकार कर रहे है, उन्हें तो माया से डर है । यह गुरु  
 जी चटपट एक नए पन्थ की रचना कर डालते है । बिसरे द्वारा भक्त भोग सीधे स्वयं  
 पहुँच कर आवागमन स मुक्त हो जाते है जो भारतीय के जीवन का मुख्य उद्देश्य है ।  
 उस पन्थ के लिए एक नए किस्म का तिलक एक नए तन्त्र की उपासना सीधे निजामी  
 जाती है, बिसका धारना इतना ऊँचा होता है कि केवल बोंग बनकर रह जाता है । इस  
 पन्थ में वह सब कुछ स्तुत्य बन जाता है जिस पर साधारण ब्रह्मा मे धारमी को मुछा  
 जाती है । मुछ्यों के अतिकार कभी-कभी इतने बढ़ जाते है कि शिष्यों को अपनी धाम-  
 बनी का एक नाम निबन्धित रूप मे गुरु जी को चढ़ाना पड़ता है । गुरु जी के किसी धाम  
 की धामोचना नहीं की जा सकती । और महा यह है कि इन पन्थो मे केवल मूख ही  
 नहीं होते बडे-बडे विद्वान धम्म को तार पर रखकर बिचार को दरिया में डालकर  
 पन्थ की गुप्त क्रियाधा को सम्पूर्ण धम्म भ्रष्टा से करते है और उनका विरवान होता है  
 कि उन्हें धात्मा क आ मुक्त मिल रहा है, उनसे धम्म सभी धरामे प्राणी बंधित है ।  
 संकड़ों की बार इन गुरुओं का अंठाकोड़ हो चुका है । रोज ही किसी-न-किसी गुरु की  
 उमई खुसती है पर जनता पर कोई धरम नहीं होता और वह मा गुरु जी का उमी  
 धम्म भ्रष्टा से स्वामत करने को तैयार रहते है । गुरुजी पहिलियों में बाने करते है  
 ब्रितके मनमाने धम सबाएँ जा सतते है । धरम उनकी बात मच निकल गई तो पूछना  
 ही क्या ! उनकी अमकार शक्ति की घुम मच जाती है । धिय्या हो गई तो वह भी  
 उठनी ही धारानी न मर्य मान ती जाती है । गुरु जी में बुध-न-बुध धनोत्पादन होना  
 परमाधरपद है । धरम वह केवल मूख पीरर या केमे गाऊर या राख फीरकर रह गये

तो चपक सो कि बह देवता हो गए । कहीं-कहीं पर पीहारी मुक भी पाये जाते हैं जो केचक हवा पीकर उठते हैं । धीर धरत मुक को धरत भी मोल सजते हैं । धीर कुछ मनचने मी हैं, तो बह मोरीप धीर अमेरिका जाकर धीर भी बन धीर यत कमा सजते हैं । मालूम नहीं ऐसे पुरुषों का कमी अस्त भी होया या नहीं ।

अक्टूबर १६३४

## स्वास्थ्य और शिक्षा

यों तो हमारा शिक्षा क्रम दोषों से भरपूर हुआ है लेकिन हमारे विचार में इसमें सबसे बड़ा दोष जो है वह इसकी स्वास्थ्य की धोर से उदासीनता है । धारमो के लिए दुनिया में शिक्षा रखने और काम करने के लिए जियामेटी और इतिहास और संख्याओं परमत्रु विषयों की इसी अज्ञानता नहीं मिलनी इस बात को कि हम कैसे स्वस्थ रह सकें । मरीजा यह ही रहा है कि हम अल्प मस्तिष्क का बोध तो भर लेते हैं मज्जिन स्वास्थ्य की धोर से दीनानिष्ट हो जाते हैं । हमारे अधिष्ठित शिक्षित लोग अज्ञान-छिद्रते रोय हैं । किसी को अजीबों का रोय है, किसी को अक्षय का । धीर अस्पष्टितीय तो इतना ग्यारक हो गया है कि कुछ न पूछिए । इसका कारण यही है कि अक्षय में हमको स्वास्थ्य का महत्व नहीं समझपा गया और हममें ऐसी आधुन्य बनने की चेष्टा नहीं की गई कि हम अपनी सेहत की रक्षा कर सकते । धीर अक्षय या अक्षय होने पर अक्षय सेहत धीर उन्मुस्ती का महत्व समझ में आना तो सुखी बाद में पानी डालने से बरा हो सकता है । यह साब अज्ञानता काश्य या पीनिए, माल विटामिनो के पीछे पीनिए, सेहत हान नहीं आते । हमारे अक्षय में विभिन्न स्कूलों में 'तरीक उन्मुस्ती' नाम की एक फिटाब पशारी अगती की अक्षयमें हुआ पानी रोतनी आदि पर छोटे-छोटे पाठ दिए गए थे और आज भी हमारी प्राथमरी पीठों में सेहत समझनी पाठ दिए जाते हैं, लेकिन अक्षयों को बह सबकु ठीकी तच्छ पढ़ाए जाते हैं जैसे अक्षयय या इतिहास । अक्षय अक्षयय धीर इतिहास पर अज्ञान धीर दिया जाता है; अक्षयय इन विषयों में केन ही जाने से अक्षय केन ही जाते हैं । सेहत के पाठ केवल आया की दृष्टि से पढ़ाए जाते हैं । धीर उनका जो मुक अक्षय है उसकी परमाह नहीं की जाती । कुछ तो परीक्षाओं का अक्षयमिता इतना अक्षय है कि अक्षयों को हम मारने को फुरमत नहीं मिलती । धीर कुछ हमारी उदासीनता है, अक्षयके कारण अक्षय में हम अक्षयय को धोरों से उठाने की मुकनी ही नहीं । हमारा अक्षय एम ए की डिपी लाए, फिर जाहे बह धीरों की अक्षयय क्यों न की बंटे धीर अक्षयय का रोय क्यों न पास ले । यह हमारी अनौचित्य है ।

बह विचार आन धीर पर केनता हुआ है कि अक्षय धीर सेहत को अक्षयय बनाने

के लिए की कुछ मकलम धीरे में के का होना सम्भव है। हमारे दिग्गज ही मुकलम धन  
 धार्मिक कठिनाइयों से रतन निराश धीरे उत्साहहीन हो जाते हैं कि किसी प्रकार  
 काम्याम से उन्हें रक्षित नहीं रहती। बचपन से क्या कामयाब बन पुष्टिकारक मानन ना  
 मिमता? कसरत तो ठक करें जब प्राप्त-वास कावाम का हनुमा धीरे दूम मिसे धी  
 में के मिलें जाने म भी मलाई धीरे भाँस भरपुर मिसे। लेकिन उन्हें खबर नहीं ध  
 दिन-दिन विज्ञान द्वारा यह साबित होना जा रहा है कि मामूली सारे जाने म धी  
 मानुषी धान भाबी में शरीर के पोषण करने की शक्ति किसी तरह भी की कुछ म  
 मनों से कम नहीं है। हाँ धपर हम उनका ठीक ठीर से व्यवहार करना जानें। धन  
 हम पञ्चाननस इन पदार्थों का सुफ़ीद हिस्सा फेंक दें तो यह हमारा दोष है, उन बीज  
 का बोध नहीं। खुरी तो यह कहकर होती है कि विज्ञान भी होने उनी तरह से जा रह  
 है बिधर हम पहले से कम रहे हैं। हमने नई सिखा पाकर गरीब जातियों की मज्ज में  
 उन बीजों का व्यवहार करना छोड़ दिया जो हथारी भोजन सामग्री को पुष्टिकर बनाती  
 धी धीरे नई-नई सामग्रियों के फेर म पड़ गए ध किन्तु धोरप के व्यापारी मन्वे-मों  
 विज्ञापन दे-बकर हमारे सामन आते थे यह धोबस्टीन है, यह कबकर भाट यह मास्टे  
 मिस्क है। बस सारी दुनिया की पीष्टिक शक्ति इनम गरी हुई है। जिस मुकल को  
 देखिए इन्ही इस्तिहारों बीजों के फेर म पड़ा हुआ है, लेकिन सब सिद्ध हो रहा है कि  
 हमारे मुकली-माजर धीरे पातक-बचपु में जो पीष्टिक पड़ाव मौजूब है वह इन बहु प्रशंसित  
 सामग्रियों म हो ही नहीं सकते। कुछ धमीरी का धमिमान धीरे धपनी रक्ष धरे मफासत  
 भी हमें पधमल करती है। हम गुड़ नहीं खा सकते जिसम पुष्टिकर तत्व भर पड़े  
 है। हमें तो रतकर जादिए जितनी माफ हो सतनी ही धखी। यह धन फेला दिना  
 गया है कि गुड़ या लौड़ जाने से फोड़ निकसते हैं। मया बाबक भी हम नहीं पाते।  
 हम उसे जितना ही पुचना करके ताण उतना ही हमारी कम्पना प्रथम होती है। वह  
 ऐना रिक्त हुआ होना चाहिए जैसे बने का फूल। यह हम धूल जाने है कि वह जितना  
 ही पुचना होता जाता है धीरे जितना ही उतका पानिध किया जाता है उतना ही  
 निस्सत्व होता जाता है। गेहूँ के विषय में भी हमें कुछ ऐस ही धन है। हम महीन से  
 महीन मैदा माना धमीरी की शान नमकने है मोटा घाँटा जाना पैबाकन है धीरे  
 धमका जोकर ता काई पचा ही नहीं सतता। मया जोकर धीरे धान की बीज है। लेकिन  
 सब विज्ञान के मिश्र हा रहा है कि गेहूँ का सबसे बहुमुष्य भाग उतका जोकर है, जा हम  
 फेंक देते हैं। दातून की बस धीरे टूपेस्ट पर बहुत पहले जोग हो चुकी है मगर हम  
 धभी तक इन धन म पड़ हुए है कि इतस हमार बीत मजबूत होत है।

मगर उबस बड़ा धनध वा उन धमाम से होता है जो हम धपनी इन्धियों क  
 धामाधिक व्यवहार क विषय म है। निशाधपस्या म जब बीजन का विनाश होत सतता  
 है, हमारे जितन ही कामक धज्ञान के बालक धपनी इन्धियों का दुरयोग करके धपनी

सेहत और देह दोनों ही का ध्यान कर बैठते हैं। उन्हें बिल्कुल खबर नहीं होती कि  
 वह दुष्मन्तों में पड़कर अपने जीवन की किस निष्पत्ता से अब खोर रहें हैं। हमारी  
 सभी कर्मविधियाँ अपने-आपने विशेष काम के लिए बनी हैं। यदि मुँह का काम हाथ  
 से लिया जाय और हाथ का काम पाँव से तो जिम्मा रहना कठिन हो जाय। मगर यही  
 धर्यकार है जिस पर प्रकाश ज्ञान का कोई प्रयत्न नहीं किया जाता। धन्य हमारे हार्दिक  
 स्तुता और मुनिविरिधियों में योग्य विशिष्टता से इस विषय पर मातृका काए जार्ज जो  
 निरन्तर हमारे विद्यालयों में जो गुण रूप से वृत्तचरण होता है वह बहुत कुछ कम हो  
 जाय। जल्दतर है कि कौन शरीर शास्त्र का विद्यालय इस विषय पर धन्य के लिए लक्ष्मी  
 सिखा सं भरी हुई पुस्तक लिखकर श्रद्धा का महत्व समझाए। उन्हें बतलाए कि तुम  
 मजान के कारण अपने माय कितना धर्याचार कर रहे हो। अगर मजान-विद्या स्वयं  
 अपने मतकों को यह मान दे सकत तो और भी धर्या होता लेकिन समाज किन स्थितियों  
 में बना हुआ है उनको तोड़ शानता धामन नहीं है और बहुत से लोग इच्छा होन पर  
 इस मुठे संकोच को नहीं तोड़ सकते। हमारे यहाँ काम-शास्त्र सम्बन्धी जो पुस्तकें  
 प्रकाशित हुई हैं वह इन दृष्टि से नहीं लिखी गई हैं उनके प्रकाशकों ने समाज हित के  
 लिए नहीं बल समाज के लिए उन्हें प्रकाशित किया है और ऐसी प्राय सभी पुस्तकों में  
 सीधी राठ विद्या की उठती खेपन नहीं की गई है बितनी बुजुगों का नहीं डाकटों और  
 मर-मुबी पैदा कर देन की। यह नाम कविता और साहित्यिकों का नहीं डाकटों और  
 बहुराजियों का है। इतर कुछ योरोप के विद्वानों ने इस महान् गम्भीर विषय के माय  
 येनका करना शुरू किया है और तरह-तरह की लखर छप्ट और गुमरछ करने वाली  
 राखामों का प्रचार करने लगे हैं। इनके साथ ही विद्यालयों का भी यह कतम्ब होना  
 राखित पत्रिका साहित्य धारा जाय। इनके साथ ही विद्यालयों का भी यह कतम्ब होना  
 नर्हिण कि न अपने कामका के अस्तित्क का पाटना ही कतम्ब को इतिमीन समकें उनकी  
 धामा उनके स्वास्थ और उनके जीवन का कल्याण भी अपना कतम्ब समक।

माघ १६३५

## महात्मा जी की जयन्ती

यहाँ हमारे निय परम गौमाय्य का बात है, कि हम राष्ट्र-माहित्य के धन में जर्म  
 हम धर्यगर पर धा रहे हैं अब गम्भीर देश में राणाभा मरणाभा गांधी की पुण्य जयन्ती  
 मनली जा रही है। हम भी उसक धर्मिनमन में धर्यगी धज्जात्रिनि पाण्य करते हैं। राष्ट्र  
 के निधारों में महात्मा जी के व्यक्तित्त्व में जो जागृति पैदा कर रही है, उसे हम ब्राम्पि कर  
 मरने हैं और जीवन का लक्ष्य धारण जैसा धाने राण के नामने गगा उसने ही

॥ महात्मा जी की जयन्ती ॥

मानवता को देखने में भी उठना उठा दिया जो हमारी आन्त मानवता की सर्वोच्च कल्पना है। और साहित्य हमारी जागृति के स्वप्न के सिवा और क्या है। अगर हम और संदेहों से हमें गांधी-युग के पहले और उसके बाद के साहित्य में स्पष्ट अन्तर दिखायी देगा। गांधी-युग में जिस साहित्य की सृष्टि की है उसमें कमप्यता है विचारों की स्वतन्त्रता है, जीवन की सरलता है निर्मोक्षता है और सिद्धांतों और धारणाओं के लिए बलिदान का उत्साह है। 'कमा उला के सिधे की जो धनमल पर्जा बस रही थी और धात्र भी बल रही है, और जो कला की उपयोगिता को हास्यास्पद समझती है, उसकी खदान पर संयम की मुहर मय गयी। महारत्ना जी ने साहित्य और कला में उपयोगिता के धारण पर धार देकर उसे मातृकता के यत से निकाल लिया। हमारा तो जयान है, कि किसी वस्तु का सुन्दर होना ही उसकी उपयोगिता की दलील है, अगर वह उपयोगी न होती तो सुन्दर न होतो और इसीलिए सत्य भी न होती। हिन्दी भाषा को राष्ट्र भाषा के स्थान पर पहुँचाकर आपने जिस राजनैतिक दूरदर्शिता का परिचय किया है, वह प्राय ही क योग्य है। याद हम भारतीय साहित्य के एकीकरण का जो स्वप्न देख रहे हैं। वह भी आप ही के पुण्य धारण की वरकण है। इसमें दो राजें नहीं हो सकती कि हिन्दुस्तानी भाषा को भारते के सुन वयोग से जो जीवन का प्रकृति जो औरत प्राप्त हुआ है वह अमृतवृक्ष है। आपने राष्ट्र को भाषा देकर बूँतों की खदान से की है और यदि हमने आपके इन महत्त्वान का अनुभव किया तो वह तिन दूर नहीं जब भारत की राष्ट्रीयता साहित्यिक और सांस्कृतिक धारणस्य द्वारा एकप्राण हो जायगी।

अक्टूबर १९३५

## प्रयाग महिला-विद्यापीठ की साहित्यिक प्रगति

प्रयाग महिला-विद्यापीठ ने अपने जीवन के इन चौड़े दिनों में जो उपलब्धि की है, उस हम बहुत संतोषजनक कह सकते हैं। जब उन्होंने अपनी खमीन लरीय ली है, जगता भवन बनवाना शुरू कर दिया है और कुछ बनवा भी लिया है। उद्योग साजाना लर्न बलीम हजार के ऊपर है और संस्थापक महीरय की किष्कापतकारी की बरीमत इस राजें का बड़ा भाग केवल छात्राओं की फीम से ही पूरा हो जाता है, प्युनिवर्सिटी का गवर्नमेन्ट के नामने १५५ फेमाने की उच्चरत नहीं पड़ती। जो कुछ कमी पड़ती है, वह अपने में पूरी हो जाती है। और जब हम देखते हैं कि छात्राओं से बचन घाट खया मास्कार लिया जाता है और जमी में उनके खाने-पीने खर्च-महने का इंतजाम हो जाता है, बल्कि कुछ ऐसी कामकाजों की परवरिश भी हो जाती है जो फीम देने में धनमर्ब

है, तो हमें महात्म्य संगमसाध भी की प्रबन्ध-कला का अध्ययन होना पड़ता है। विद्यापीठ में कम से कम बर्ष में बर्षाधी से बर्षाधी शिक्षा देने का ध्येय अपने सामने रखा है। वह बालिकाओं को केवल तीन साल में बर्षाक्युमर फाइनेम की परीक्षा के लिए तैयार कर देता है। इनके साथ ही पाठ-कला संगीत व्यायाम का भी प्रबन्ध कर लिया गया है। हम यह संकल्प हर्य हुआ कि यहाँ बाल्याम मात्रास ध्यादि प्रान्तो की कई बालिकाएँ भी शिक्षा पा रही हैं। इससे पताश सुती हम बात से हुई कि यहाँ की विदुषियाँ तितलियाँ बनकर नहीं पृहृदेनियाँ बनकर निकसती हैं जो जीवन के किमी क्षेत्र में अपने मह-विज्ञान कीदल से अपने लिए फलान बना सकती हैं। दूसरों पर मार न हीकर उनका उधार कर सकती हैं। अब से धीमती महादेवी बर्मा न हम सस्या का सबाजन मार ले लिया है उसकी प्रवृत्ति धीर भी तेज हो गयी है धीर विद्यालय की मसर्कक्रपता में साहित्य का प्रवृत्त भी होन मगा है। द्विती म पहला महिला-यल्प-सम्मेलन २५ जनवरी को विद्या-पीठ में ही हुआ। धीमती सिबराणी देवी उसकी सभानत्री थी। पत्र-पत्रिकाओं में महिलाओं की कृतानियाँ धक्कर निकसती रहती हैं यहाँ भी महिलाओं ने कई बर्षाधी बर्षाधी कृतानियाँ पकी बिनम सोमती कमला जीवरी धीर कमला देवी शर्मा की कृतानियाँ बहुत सुन्दर थीं। जीवराणी की शैली गम्भीर है। कमला शर्मा की रचना आत्मकव्यात्मक की धीर उसका एक-एक शब्द बाबोचित बिनो म हुआ हुआ बा। एमे सम्मेलना म बहुत गम्भीर साहित्यिक कृतानियाँ पसन्ध नहीं की जातीं। यहाँ तो माया धीर भाव धीर शैली ऐसी होनी चाहिए, निममे कुछ सुहल हो कुछ प्रयुक्तता हो धीर उसके साथ ही पढ़ने का इन भी आकषक होना चाहिए धामी उससे सभापण का-सा प्रवाह धीर भाव धंधी होना जरूरी है। सभानत्री जी के भाषण पर हम अपने धक म विचार करिये।

फरवरी १६३६

## प्रयाग महिला-विद्यापीठ की नई योजनाएँ

विद्यने महीने म हमने प्रयाग महिला-विद्यापीठ की एक अपील प्रकाशित की थी। हमें धारा है मङ्गल्य सङ्गमो ने उन पर ध्यान लिया होगा। ऐसी मस्या जो बर्षाधी धीर बालिकाओं की शिक्षा के प्रश्न को परिस्थितियों के अनुकूल ढंग से हल कर रही है, वेमों के लिए मुहताब दा तो लभ की बात है। कई बारणों से धंधवी स्मूर्तों धीर बाल्यो की प्रणामी हमारी बालिकाओं के लिए स्वस्फर नहीं माबित हो रही है धीर दितकर हो भी तो बह इतनी महीगी है कि साधारण गुरुध उनमे नाम नहीं पद्य मकता। बह तो सम्पन्न लोगों की ही चीज है। महिला विद्यापीठ बहून् बोरे धर्ष में बालिकाओं की ऐसी शिक्षा देना है जिनमे उनमें विषम जागृति नहीं धा जाती वे धर

के काम-बंधे में भी होशियार हो जाती है। इस मास उसने एक ऐसी योजना निराली है, जिससे हिन्दी मिडिल-पास सङ्कियों केवल तीन साल में एडमिशन की परीक्षा पास कर लेयी और नामक ट्रेनिंग विद्युपी तथा बिहार परीक्षा-पास सङ्कियों केवल दो साल में। बिद्यापीठ का सबैब से यह उद्देश्य रहा है कि जिनको और कन्याओं को कम से कम समय में अधिक से अधिक ज्ञान मिले और यह दोनों योजनाएँ इसी उद्देश्य को पूरा कर रही हैं। इस बख्त एडमिशन पास करने में लड़कियों को बिहार या मिडिल पास करने के बाद पाँच साल लगते हैं। पाँच साल का काम जो बिद्यालय दो ही साल में कर दे वह सङ्कियों की शिक्षा को कितना सरल और सुगम बना रहा है, यह स्पष्ट है। और माहवार लक्ष कुम्भ पत्रह रूप्य जिसमें पचाई होस्टल जीवन धारि सब शामिल है। अभी सिर्फ १५ १५ सङ्कियों के लिए यह बात इतना किया गया है। जो माता-पिता इस प्रकार से साम उठाना चाहते हों वह बिद्यापीठ के रेजिस्ट्रार से पत्र-व्यवहार करके अपनी सङ्कियों के लिए आवेद रिख कर सकते हैं।

अप्रैल १९३६



महिला-जगत्



## मिस्टर हरविलास शारदा का नया कानून

सामाजिक प्रश्नों में हम सरकारी हस्तक्षेप के पक्षपाती नहीं थीं हमारे विचार में विवाह की व्यवस्था का कानून बाँटी करके हमने वह काम कानून से किया था जगता के विचारों के सुधार से ही हो सकता है अगर विधवाओं को अपने स्वयंसेवकी पति की आज्ञावाद पर अधिकार दिखाने का जो विधवा शारदा पेश करने का रहे है उससे एक बड़े माँरी सामाजिक धन्याय का परिशोध होना । हिन्दू समाज ने अपनी देविता के माँर बहुत दिनों पूर्व किया थीर अब उसे हम पूर्व की जड़ कोटने में विनाश न करना चाहिए । हम चाहते हैं, मि० शारदा के इस विधवा का देश स्वागत करेगा ।

जनवरी १९२१

## नारी-जाति के अधिकार

यों तो भारतीय नारी सर्वत्र कुम्भेकी समझी गयी है और उसे समाज में पुरुषों से ऊँचा नर प्राप्त है किन्तु धन्याय कारखो है जिनकी विवेचना करने का यह अवसर नहीं है जबका स्वाभ भीख हो गया था । वह मन्दबुद्धिता जिनने एक और पराधीनता की बेड़ी पाँच में बसी कूनरी और नारी जाति नर समाने अत्याचार करती गयी । अन्ध-नीच का ऐसा संज्ञानक रोप कैला कि उसने समाज को ही धिप्र-निप्र कर दिया । बलिक् स्त्री-नुरूप में भी नैर शान दिया । पुरुषों ने नारी जाति के स्वत्वा का अग्रहण करना शुक किया लेकिन उन्नीयता और सद्बुद्धि को जो कहर इस समय घायी हुई है कद् इन समय जेहों को मिटा गली और एक बार फिर हुआती मसालें उनी ऊँचें पथ पर भाकद् होनी को उनका हक है । भारत अपनी माताओं का सर्वत्र भक्त रहा है । माँर गुना उसके पथ का एक मुक्त ग्रंथ है । क्या आज अपनी मातामा हाउ विनयी होकर वह नारी-जाति के स्वत्कों को स्वीकार न करेगा ? भारत के कतन-काम में जब पुरुषों को अपने ही ऊँचर विरवाग न का कद् स्थियों पर क्या विरवाग करणे पर इन एक वर्ष के समयकह-मंघाम ने सिद्ध कर दिया कि भारत की देविता अब भी पथ और कतन्य की गयी पर अपने को होम कर खचती है । यदि पुरुषों को अब भी उन पर शासन बनन का उम्मा हो तो उमे शीघ्र से शीघ्र दूर कर देना चाहिए, क्योंकि वह बात है या न है देविता अपने स्वत्कों को खेनर ही रखेगी । उन्हें हर एक स्थिय में पुरुषों के समान

प्रबिकार होगा चाहिए और इसका निर्णय देवियों ही पर छोड़ देना चाहिए कि वे अपने हितों को स्वयं चालें से हों। हमारे विचार में निम्नलिखित विषयों पर नारियों को असतोष है और इस असतोष की देवियों के इच्छानुसार ही समन करना पड़ेगा—

१—एक विवाह का विषय स्त्री-पुरुष दोनों ही के लिए समान रूप से सामू हो। कोई पुरुष पत्नी के जीवन-काल में दूसरा विवाह न कर सके।

२—पुरुष की सम्पत्ति पर पत्नी का पूरा अधिकार हो। वह उसे रख-बच को कुछ चाहे कर सके।

३—पिता की सम्पत्ति पर पुत्रों और पुत्रियों का समान अधिकार हो।

४—तलाक का कानून जारी किया जाय और वह स्त्री-पुरुष दोनों ही के लिए समान हो।

५—तलाक के समय स्त्री पुरुष की भाँषी सम्पत्ति पावे और यदि मौलवी भाषावाच हो तो उसका एक घंटा।

फरवरी १९३१

## तलाकों की संख्या क्यों बढ़ती जाती है ?

माटोप के एक विद्वान ने तलाकों की भीमांसा करते हुए एक बड़े पत्र की बात कही है। वह कहता है कि ज्यों-ज्यों कृषिगत उपायों से सम्पन्न निम्न की प्रथा बढ़ती जा रही है, तलाकों का रिवाज भी बढ़ता जाता है। सम्पत्तियों के लालन-पालन में माता-पिता के बीच में स्नेह की एक कड़ी बनी रहती थी। विवाहिता की ओर उनकी दृष्टि अधिक न होती थी। अपनी सम्पत्तियों के लिये दोनों पक्षों से परस्पर संयम और त्याग करते थे। सम्पत्तियों का निरोध करके मात्र स्त्री पुरुष दोनों ही विवाहिता में डूबे जा रहे हैं और विवाहिता महिष्णु नहीं होती। दुःख की कठोरता उनके लिये अनिवार्य है। दुनिया कुन्हे में जाय हमारे ता बदन में कटती है जब तक वह मनोभाव न हो धारणी विवाह में रह हा ही नहीं सख्त। फिर मानुष में माता की सार्वभौमिक और मातृमय शक्ति का बड़ा भाग गर्भ हो जाता था। पुरुष की भी बाध्य होकर इस उत्तरदायित्व का कुछ न कुछ भार सेना ही पड़ता था। जब तो स्त्री-पुरुष दोनों ही सम्पत्तियों में मुक्त होकर विवाह में डूब गये हैं। विवाहिता का पोषण नवीनता ही में होता है यह सारी हुई बात है। ऐसी वशा में तलाकों की संख्या न बढ़े ता नया हो।

अगस्त १९३०

## सिनेमा स्टारों के अर्धनग्न चित्र

इंग्लैंड के एक धंधेमी पत्र ने एक दूसरे धंधेमी पत्र को इमपिये जोर को फटकार बताया है कि उसने एक 'सिनेमा-स्टार' से उसका जीवन का अनुभव मिथ्याकर प्रकाशित किया है और इसे 'नग्नता' कहा है। भारत में भी धंधेमी पत्रों को देखा-देखी इंग्लैंड की मनोबुद्धि बढ़ती जाती है जिन स्त्रियों का जीवन इतना 'गुलाब' है कि कोई भ्रमा धारणी धंधेमी लड़की को उसके साथ एक पिन के तिन भी छीड़ना पसन्द न करेगा बहो स्त्री सिनेमा में एकस बनते ही देखी बना भी जाती है और इन्हीं पत्र में उसके चित्र छपते हैं। इनका प्रसंग की बली है और यदि वह अपने जीवन के मनमनी पैदा करने वाले कुत्तों-निम्बे लो उये बड़े रूप से प्रकाशित किया जाता है। हमारे विचार में मयाचार-मनों का कर्तव्य केवल जनता में सजगनी पत्र करना और उनकी मनोबुद्धियों को विपाक करना नहीं बल्कि उनमें स्वस्थ निष्कर्षक सुबधि उत्पन्न करना है। हममें सदेह नहीं कि हम कुछ का पावर करना चाहिए, चाहे वह कबीर के शब्दों में बिलन ही 'मपावन ठौर' में बसा न मिले लेकिन धंधेमी स्त्रियों का निमज्जता पूरा चित्र बीच कर जनता में दुस्सित भावनाओं को उत्पन्न करना अथवा उनके मनोबुद्धि में बलन करके पाठकों में कुवासना को बपाला भारतीय जनता के विच्छेद है।

अगस्त १९३२

## गाजीपुर के को-आपरेटिव सम्मेलन में संतान निग्रह

पत्र की सचह माच का गाजीपुर में प्रांतीय को-आपरेटिव-सम्मेलन हुआ था। उसकी रिपोर्ट हाल में प्रकाशित हुई है। स्कोइल प्रस्तावा में एक संतान-निग्रह के विषय में भी था। को-आपरेटिव में एक विषय भी शामिल है यह एक नई बात है। शासन इस प्रस्ताव का मना यह हो कि देश की जनसंख्या के लिये बहुराज्य-यानन करना आवश्यक है पर प्रस्तावक महोदय को शासन मान्य नहीं कि संतान निग्रह और बहुराज्य-यानन दो भिन्न चीजें हैं। बहुराज्य सज्जि बहुराज्य वाली शापना है, पर संतान-निग्रह दुबल करने वाले इन्धिम शापनों के मजदूरी-संयति को रोकना है। हम इन्धिम संताप-निग्रह से केवल भाषणिया ही की बृद्धि शक्ति है। यूरोप में संतान निग्रह का सूब प्रकार हो रहा है लेकिन उमका जन विभासिता की बृद्धि के बिना और कुछ नहीं है। संतान बृद्धि और यह भी दरिद्र देश में विद्यमान है लेकिन उमका प्रसन्न के लिये इन्धिम भाषणों का प्रकार और भी बढ़ी विद्यमान है। उमका मजदूरी उमका केवल बहुराज्य है।

अक्टूबर १९३२

## महिला-समाजों में संतान-निग्रह का प्रस्ताव

'संतान-निग्रह' का अर्थ है कुत्रिम साधनों से संतान की उत्पत्ति को रोकना । इसके स्वाभाविक साधन भी हैं, पर यह शब्द उस अर्थ में प्रयुक्त नहीं किया जाता । सभी साम-यो-साम पहले यह केवल एक वार्षिक प्रश्न था पर इतने ही दिनों में इसने एक सार्वजनिक समस्या का रूप धारण कर लिया है । और चूँकि गंताल का पालन-पोषण महिलाओं ही को करना पड़ता है और संतानोत्पत्ति की वृद्धि बेचनाएँ महिलाओं ही के हिस्से पड़ती हैं इसलिए इसके प्रकार की धीमी प्रगति हरेक महिला-सम्मेलन में उपस्थित होने लगी है । धीरे धीरे प्रगति बढ़ रही है तो हाल में होने वाले कराची और पंजाब महिला-सम्मेलनों में यह प्रस्ताव पेश होकर स्वीकृत हुआ है । इसके पहले कैम्ब्रिज सम्मेलनों में भी यह प्रस्ताव स्वीकृत हो चुका है । एक समय का जब संतान को संसार की सबसे बड़ी विभूति समझा जाता था । संतान के लिये नाना साधनाएँ की जाती थी और जब संतान मानवीय जीवन की विपत्ति समझी जा रही है । इसका कारण है, वर्तमान धार्मिक संधान । जो परिवार कुछ दिन पहले पचास व म सुख का अनुभव करता था उसके लिये अब दो सौ व की बकरत है । अब हम यह क्षणीय दुःख नहीं देख सकते कि चाहे हम एक बच्चे का पालन पोषण अच्छी तरह नहीं कर सकें पर हमारे के लिये बेबी-बेबताओं की अनिष्टिर्वा करते रहें । स्त्री चाहे अपनी बात से मर रही हो पर बच्चों से अपना रक्त चुसाती रहे । यह सब तो ठीक है । लेकिन इस निग्रह की छाड़ में धीरे धीरे विषय भोग की व्यासंधिनी हुई है तो समाज के लिये निग्रह उठे और हानिकर हो जायगा । वही संतान-निग्रह का बहुत प्रकार है वही संतानों की भी भ्रमण है और समाज-शास्त्र के पंडितों का मत है कि दोनों में अविच्छिन्न सम्बन्ध है । धीरे धीरे निग्रह का पक्ष यह होता है कि हम धर्म का पक्ष से विषय-भोग में पड़ जायें तो यह समाज के लिये बर्तावर्तन की अवस्था उत्पन्न होगी ।

नवम्बर १९३०

## मिस मैयो की आत्मा एक पारसी महिला के वेष में

मिस जार्जिया सोहराबजी बार्-रेट-जा एक पारसी महिला है जिने लिये में कहा जाता है कि उन्होंने मिस मैयो की कर्मस्थित रचना 'मिस इंडिया' के लिये गावदी देकर भारतमाता की सेवा की थी । अब हम यह कर्तव्य रूप शर्म जाती है कि उन्हीं मिस सोहराबजी न इंग्लैंड में भारतीय महिलाओं के विरुद्ध प्रोपोगैंडा शुरू कर दिया है । विषय मिस सोहराबजी के एक नाम अन्तर्गत में चलने भारतीय महिलाओं का इतने लज्जास्पद

सभने में मजाक उड़ाया कि क्याचित् मिस मेयो को भी इतना साहज न होता। मिस सोहराबजी जैसे दरजे की शिक्षा-वाप्त महिला है, हम यह मानते हैं लेकिन शायद उन्हें भारतीय दृष्टियों से मेन-बोस का कमी खबर नहीं मिया और उनका ज्ञान मुनी-मुनाई बस्तों पर है। संभव है उनके बिबेसी रहन-सहन और भाषा-विचार के कारण ही भारतीय घरों में उनका प्रवेश न हुआ हो। या हुआ भी हो तो उन्हीं लोगों में जो स्वयं भारत के लिये कथन-स्वरूप है। लेकिन अगर मान लीया जाय कि उनके कथनानुसार भारत की लिये में बुराईवां भरी हुई है तो उनका धम का कि वह भारत में आकर अपनी बहनों का सुधार करतीं पर धारको जहर उभरने ही न मजा घांटा है। अगर वहाँ भी ऐसी सच्चो घांटाएँ मीरू थीं जिनसे वह उपहान न मुना तमा और दो बहिन महिलाओं न बनीं ऊँचे होकर मिस सोहराबजी को ऐसी परो-नरो बार्से मुनाई कि सापड उन्हें सब जिनो समाज की निम्न करन का साहज न हो। बहिन निम्न करने में नहीं है। इन्हें न जिनो का मान ही होता है न धार ही। जिनको प्रमत्त करन के लिये मिस सोहराबजी यह कीचड उघाल रही थी उन्हीं में धारम में बैठकर उनके इन व्यवहार की धामोचना का होयी। भारत को परिचमी जीवन और सम्पत्ता का धम बोड़ा बहुत धनुमध हो गया है और धम वह किसी ऐसे स्त्री या पुरुष का नगुन स्वीकार नहीं कर सकता जितने परिचमी सम्पत्ता धलिजार कर ली हो और समझता हो कि धम उसे धारे उभाने को मीका समझन का धरिदार है।

नवम्बर १९३२

## भारतीय महिलाओं में नवीन जाग्रति

भारतीय महिलाओं में अपने जागजम व निख कर रिया है कि वे समाज के क्षेत्र में पुरुषों से बिल्ली धावे निचल गई है। विरोध कर जिन बंधनों से पुरुषों ने उन्हें जकड़ रखा था और उन का शासन करने व उन धेरियों को छोड़ खैरने के लिये वह बहुत निचल हो रही है। धारदा-बिन से मुसलमानों की एक बड़ी संख्या का तो धारजित है ही हिन्दुओं में भी कुछ ऐसे पुरुष हैं जो उनका विरोध करते हैं पर स्थितों में जिनमें मुसलमान विजरा भी शामिल है एक स्वर से इन बिन का स्वागत किया है। तलाक का बिन धमी बालून का रूप नहीं भारत का समाज और हिन्दू पुरुषों में धमी इन समाज्या पर बहुत बतमेर है पर हिन्दू धरिधारे उन धर हर एक महिला-गम्येनन न धार देती है। धारनैतिध धेध में भी महिलाओं में अपने परिष्कृत तद्विचार का धरिधय लिया है। वे धारनैतिक निधोचना-विचार धारती है धारदा या लिला की बोर् बीड उन्हे पनन्ध नहीं और राष्ट्रीय एधता का तो जितने धारों में निधियों में हरेक धधधर पर नधधध

निया है, उस पर बहुमत से हिन्दू और असमान पुस्त्या को सज्जित होना पड्या। जिम महानुभाषों को हमारी बेबियों की बिचारशीलता पर छुदेह का उम्ह सब धपन बिचारों में तरमीम करनी पडंगी। भारतीय महिलामार्ग ने धर की बारीबारी क धपन बिच तरह धपनी बचवा प्रमाणित की है उसी तरह राष्ट्र के बिलुत क्षेत्र म ब पुस्त्यों से धपने रहेंगी।

दिसम्बर १९३०

## बालिकाओं का सुकार्य

गत स्यारुह निम्ब्वर रबिवार को स्थानीय क्यागल हार्ड स्कूल में धार्य-क्या क्यायम मन्विर बडीबा की क्यागो का गया लम्भ डिग्दी तलवार धुरे, धातन तथा धाय क्यायम देलवर हम बड़ी प्रसन्नता हुई। बालिकायें सभी पुर्तीनी कपन सिबित तथा बच भी। उमक बेहरे से पबिक्ता सक्परिपता तथा समय प्रकट हो र्छा था। उनका परका माच तस्कृत म कवनापकचन को सडकियो का क्याबान उनकी सिधा को व्यक्त करता था। इससे यह साठ मानुम होता है कि उम्ह क्यायम के साच मानसिक सिधा भी बाली ही जाती है। ध बच की उम्र को सडकी कानंज म भर्ती की जाती है और यह सोमह कर्प की उम्र म बिदुपी स्वस्व तथा धारम-रचा के योग्य होकर बालक से निकलती है। क्या जो कुछ नहीं केवल बायु काया मानिक पडता है। ममात्र का एक धंग बहुत ही दुबल होन के बायु ही हम इतनी हीन क्या म है। हमार यहाँ की पुपन बमाने की सभालियी रचधन म शान का धामना करती थी पर धारकन की सडकियाँ धपन स्वसन्ध की रचा नहीं कर सक्ती उनकी सखान भी बापुरप और दुबल पैवा होती है। इन बहुत बड़ी कमी को यह बिद्यालय पूरा कर रहा है। और इमी वर्सम के प्रचारक कुछ सडकिया की सेकर ब भारत धमल क निवे निरने है। हा इस मरइल के सनुधोय म पुर्ण सफलता की बामना करत है।

दिसम्बर १९३२

## इंग्लैंड का नैतिक पतन

भीमठी निम्न वोजन म 'मण्डल म इंगवी' का जिम सामाजिक बसा का बिच सीबा है उसी हेगतर हम धबाध रू जात है। सब तरु हरेत मात म इंगवी-हकार धारण का और सब भी है। हम धपनी रीनि-नीति म लगी का धनुगरण कर रहे है। हमारी धरनीतिक और सामाजिक सस्थाएँ इंगवीड की सस्थाओं क मयन पर ही निर्वाड

॥ बिबिध प्रसंग ॥



की जा रही है। घोर बातों में जाते हममें मतभेद हो लेकिन अल्प के नियम में हम ईपसीड के पूरी तरह कायल हैं। लेकिन उक्त महिला ने जो धिक् सींचा है वह बड़ा ही रोमांचकारी है और हम अतापनी देता है कि पारबास्थ की नकल करने में हम बहुत विचलित हो काम सना होगा। धाप मिलती है—

'घातकण होटलों और विधाम मुहा में हूँ' करने की बर्तमान धीरे-धीरे बोधवाजी देखी जाती है। राज ही एसी तबरे घाली है कि घात फलौ होटल के मेजर को अरका दिया गया कम उस होटल के मानिक की। अरुतर बोधवाज होटलों में घाने है कई दिन टहरते हैं और नकली अंक देकर भाग जाते हैं।

वहाँ के दरिद्रों की बसा का बखल बड़ा ही कफलाजगल है। घान मिलती है— 'ललिन तथा पीड़ितों की दशा। मने उन लरिबां का जो उरका करल-करते अकमरे हो गय ये प्रान्त देखा का जो ईपसीड के हर एन भाग से सम्मिलित हान घाये ये हान मुसमरों के जुमूय को देखन के लिये फिना ही महिमाएँ मोटरा पर बैठ कर घाई थी। उरु उनकी दशा पर अरारणय का पर दया न थी। वे हूये समग्रा समझती थी। व इन दरिद्रों को अचना सम्पत्ति-वीजय दिना कर उनकी धाँसा में अकाशीय हापने के लिय ही हाय' अघनी मङ्गीली मोटरा पर अडकर तिलमिया की तरह इपर-उपर बूम रही थी। ओह! ये अमीर कहमाने जाने विलास-प्रिय लोच विलने कूर हो सकते हैं। मनुष्य का मनुष्य के प्रति यह व्यवहार अस्पना में भी नहीं पर सकता।

ऐसी दशा में अघर अमीरो के प्रति इय की घान करने तो क्या अरारणय है।

दिमन्वर १६३२

## कायस्थ कान्फर्सेस

अवकी अघान में कायस्थ कान्फर्सेस हूँ। कुछ लोच इपर-उपर से घा गए, कुछ अस्तान हुए, कुछ अस्तान पाम अिग वए और कान्फर्सेस का काम सपाठ हो गया। कायस्थों को इन तरह अलने करल मगभम जानीम साल हा गया लेकिन कायस्थ समाज घात भी नहीं है जहाँ जानीम साल पहुँचे या अलिक उनकी दशा और भी अरुध ही पर है अहेम या अगराधर की जुटाई सब करते हैं। अघर बहो अरुधम जो ममा में मधमे अघारा विस्तार है सबसे अघारा अरारणय करल है और सबसे अघनी रकम अकरते हैं। ऐसे अरुधगीन अरुधगीन अरुधगीन अरुधगीन का ममात्र पर कोई अघर नहीं पद नकना। अघर अघानी इग लाल अघनी अरुधगी की शारी करली है तो अघर सभा में शरीर होकर अरुधगीन का रौना रौयेये अलिन कम अर घातके अेने के विचार का अघर अघानी तो अघर अघानी के अघर अरुधगीन। अघा हृदय-हीन समाज अिलने अरुधगीन और अघर

में कोई मेल नहीं जो स्वास् पर धरणी धारमा बेच डालना भी पाप नहीं समझता कभी नहीं उठ सकता। उसका दिन-दिन सब पतन होता जामना घोर एक दिन कोई उसका नाम भी न लेगा। करारबाद को रोक्मे के लिये जो विधान सोचे गए जैसे बहिष्कार निकेटिंग या सड़कों की घोर से विबाह से इंकार, इनमें से एक भी सफल न होगा। धरम मुबकों म इतना धारम-सम्मान होता तो रोना फाह का था। यहाँ तो बर अपने पाप से भी दो क्यम जाने हैं। मोटर का ठकावा नहीं करता है। इंग्लीश जाने के लिये चर्च की मांग बर ही करता है। जिस समाज म ऐसे निमज्ज पुण्याधून मुबक हूँ वह बहुत दिन बीतित नहीं रह सकता। हमें तो धारम कायस्थ समाज म एक भी उदाहरण नहीं मिला यहाँ लेन-देन का वृद्धित व्यापार न हुआ हो। कहीं राह खच के रूप म कहीं सिखा के चर्च के रूप म कहीं मयाँश-रक्षा के बहाने से रुपये उँठे जाते हैं। बेचारा बर का पिता अपने संबंधियों के दबाव से मजबूर हो जाता है। उसकी मिलजुल सता नहीं। वह तो खुद करारबाव से मजबूर करता है, लेकिन मजबूर है। उसके बहलीई घोर फूका घोरामामा नहीं मानते। धारिकर वह ऐसे निकटवासी की जेखा कँजे करे। जिस समाज में ऐसे-ऐसे घूत हैं उसका रसात्म के सिखा बीर कहीं ठिकाना नहीं है घोर वह बड़े बैप से उस घोर का रखा है। पहले चार-पाँच सौ रुपये धीसत बरजे का ख़ेब था। अब वह चार-पाँच हजार तक पहुँचा है। जिस बर में दो-तीन कम्पार् घा गई है उस समझ तो उसका सम्मान ही गया। माता-पिता के लिये धर इसक सिखा घोर कोई साथ नहीं है कि वे अपना पेट काटें उन काटें बोबापरी से रूपए लावें। उनका साथ बीबन मारकीय हो जाता है। मगर समाज के मुसिया रकमें बहारते जाते हैं घोर कमी-कमी सभा में धारकर रोते-जाते हैं। अब तो इन धनीति की कोई दबा है तो यही कि बलिष्कारें स्वयं धरना भाव्य अपने हाथ में लें घोर विबाह के बन्धन में उस बस्त तक न पड़े जब तक कोई ऐसा बर न मिले जो प्रेम-भाव से उनके सामने माना न टेके। जब बालिकाओं में वह धारम-सम्मान उदय होया तभी इस जाति का उद्धार होया। सड़कों घोर सड़कों के बापों को हमने बहुत देखा घोर जगते जाता करना छोड़ दिया।

जनवरी १९३३

## शक उपयोगा प्रस्ताव

परी-निभी जातियों में धरपश्य होतो हुई भी कामस्थ जाति बहुत ही निघड़ी हुई है। इन जाति क सगमग मध्य प्रतिशत सीग मीटरी-मैसा घोर कलम की सेवा करके पेट पालते हैं। इसा कारण जातिमाम दरिद्र घोर घोरों के नौकरी के उम्मीदवारों के डेब का चारण बनी हुई है। ऐसी हालत में जायब ही किनो जाति को धीरोपिक सिखा तथा

उद्योग-जीवी होने को इतनी बखरत हो जितनी कायस्थों को । पुरत दर पुरत लौकरी-वेसा होने के कारण इसकी तरतों में बुलायी कम गयी है, इसलिये राज बेकारी के बमाने में भी लौकरी के लिये ये धारे-धारे फिरते हैं । इस पर भी तुरत यह कि जो लोप व्यापारी है जो कामस्थ व्यापार की ओर लय गये हैं उन्हें लौकरी निगाह में रखा जाता है ।

कायस्थों के समूह की एक ही रचनात्मक संस्था है—कायस्थ पाठशाला । वह भी केवल लौकरी के उन्मोचक एकजुट ही तैयार करती जाती है । यद्यपि इकर तीन बप ठे मुंशी हरमन्त प्रसाद इसके नेतृत्व में हुए हैं धीरोपिक-शिक्षा का बहुत प्रबन्ध हुआ है, पाठशाला में काफी उपति की है फिर भी प्रपत्त निरी काम-बन्धा म है । इस स्थिति में हमें एक सेमोरेण्डम प्राप्त हुआ है । इसके नेतृत्व है विमालपुर ( मध्य प्राय ) के सम्मानित नामरिष लक्ष व्यापारिक मुंशी रायचन्द्रमाल वर्मा । उनका प्रस्ताव है, कि यदि भारत के दो लो पचहत्तर लाख कायस्थ केवल एक कथा एक बार लया ली दें तो वो लो पचहत्तर लाख कथा ही जावे और इस कथे से इतने अधिक कारणों लोमें ल सकते हैं, कि दो लो पचहत्तर लाख कायस्थ कुल लौकरियां लोड कर अपना वेत भर सकते हैं । ल कलात्मकी ही नहीं किन्तु बहुत ही उपल हो जावये । इस प्रपत्त को प्रारम्भ करने के लिये वे अपनी केश से लई हजार कथा के लिये तैयार हैं । प्रस्ताव लड़ा उपयोनी है तथा विचार करने लोय्य है । प्रस्ता है लोम इसको मनलवेये और प्रस्तावक को लतावता देंगे ।

जनवरी १९२३

## सर हरिसिंह गौड़ का तलाक-बिल

। धरौ बहुत दिम लगी हुए कि तलाक का नाम लुनकर हिन्दू लमाल के लाल लवे ही लते वे और लल दोरोप की लक्ष्म लमलकर विरल्लुड कर दिव लार ल । पर इन कई लवों में बहुत लड़ा लामाजिक विरल्लुड हो लवा है और लमाल की ल्याल-लैलना बहुत लुड लल्लुड हो लई है । लल यह लोविलर लिम लाल लमा है कि लो और लुग लोनों के लयिकार लमाल होने लारिए । धरौ लो यह लाल है कि लुग में लारै लिने ही लोर ही लारै लल किन्तु ही लल्लुड ल । ललक लाल लिने ही लरलललर करे और ल के लि लहीं लाल लरी । लल ललली ललल लैल लोड वे ललली लुलरी लारी कर लें किन्तु लो पर ललल लयिकार ल्यों लल लकों लला लरुता है । लरी में लल ल लो लल लूरुड लो ललल लललल ल लोली लो ल लिली लारल-लल ललले लल्लुड ल लो ललले लिये ललला ललक है । लेल्लुड लुग में लिने ही लुरल्लुड लो लो के लिये लहीं लरण लरी । लल लल्लुड ली ली लल लिल लली लेल्लुड लल लहीं लल ललली । लल लो ललर का

तलाक़ा है कि स्त्री को भी वही अधिकार प्राप्त हों। सर हर्बिसिंह ने तलाक़ के लिये तीन कारणों का निर्देश किया है—

- १—जबकि पुरुष अश्वस्थित पितृ हो।
- २—जबकि पुरुष को क्रोध की बीमारी हो।
- ३—जबकि वह अपुत्रक हो।

स्त्री पुरुष में मनोमात्स्य के धीरे बहुत हैं कारण हो सकते हैं। उनका इस बिल में कोई बिक्र नहीं है। हम नहीं समझते वर्तमान रूप में किसी को उससे क्या प्राप्ति हो सकती है। हिन्दू-विवाह का आदर्श बहुत उँचा है। हिन्दू-विवाह और तलाक़ दो परस्पर विरुद्ध बातें हैं लेकिन इस बात का मुख्य बहुत कम हो जाता है, जब उसके पालन का भार केवल स्त्रियों पर रखा दिया जाता है। विशेषकर जब हिन्दू बेटियाँ कुछ इस बिल की माँग पेश कर रही हैं तो पुरुषों को उसे स्वीकार करने के सिवा धीरे कोई मार्ग नहीं रह जाता। जब तक बेटियाँ कुपचाय बिना किसी तरह का असन्तोष प्रकट किए अपने कर्तों को छुड़ करती जाती हैं पुरुषों के पास अपने को बीबा बने का एक बहाना था। वह कह सकते थे—हमारी बेटियाँ पतिव्रत पर अपनी जान देने वाली हैं कि चाहे पुरुष क्रिपण ही खुश करे उनके मन में कोई दुर्भावना या ही नहीं सकती। अब भी हमारी अभिक्रम बहनों की यही मनोवृत्ति है लेकिन क्यों-क्यों उनमें रिश्ता का प्रचार हो रहा है उनमें अपनी वर्तमान अवस्था से निर्रोह उत्पन्न हो रहा है और तलाक़ की माँग उठी निर्रोह का सूचक है। पुरुषों को अब उनसे समझौता करना हीया। उनकी शिकायतों की परहेलना करके अब वे अपने पुरुषत्व को कर्मक से नहीं बचा सकते। यह मत्व है कि तलाक़ प्रथा का दुष्प्रयोग किया जा सकता है। पश्चिमीय देशों में उसकी जो सीधालेवर हो रही है वह हम मित्य अवधारणों में देखते हैं। भारत में भी तलाक़ ने मुकदमों अभिक्रम ईसाई धीरे ऐम्प्लीईडियन बम्पत्तियों की धीरे से ही बाबर किये जाते हैं लेकिन वर्तमान हिन्दू विवाह में तो ऐसी मुद्रास्त्रा या बर्द है नहीं तलाक़ बिल की आवश्यक ही क्या थी।

हाँ इस बिल के साथ इस बात का भी विचार करना आवश्यक है कि पुरुष की जायदाद में स्त्रियों का कुछ अभिक्रम रहे। सम्पत्ता ऐसा हो सकता है कि नित नए पुत्रों का उस सेनाधी मनोवृत्ति तलाक़ को एक बहाना बना लें।

कुछ लोगों का यह कहना है कि पड़े लिले समाज का एक अल्प भग्न ही इस बिल के पक्ष में है। इसलिए वर्तमान प्रथा में अमर ही ने दो-बार शारियाँ दुष्प्रय हीती है तो उन दो-बार के लिये सारे समाज को क्यों अष्ट करने की चेष्टा करते ही। उन्हें हमारा यही उत्तर है कि यह बिल उन्हीं दुष्प्रय बम्पत्तियों के लिये बनाया जा रहा है। मुनी बम्पत्तियों के लिये उस बिल का होना न होना दोनों बराबर है। विधवा-विवाह का बिल पाठ हो पागे से सभी विधवाएँ विवाह तो नहीं करने लगीं। शारिया कानून न भी

तो बाल विवाह नहीं बन्द कर दिया ही उसमें कुछ एकादश प्रथम बाल ही । सबसे बड़ा कानून बन-मठ है । लेकिन फिर भी ऐसे कानूनों का हमें स्वागत करना चाहिए जिनका उद्देश्य सामाजिक व्यवस्थाओं को दूर करना हो ।

मार्च १९३३

## लखनऊ की वेश्याओं में नई जाग्रति

पश्चिम किन्हीं एकदोनों की विन-दूनी रात-बीगुनी बहती देखकर बेरयाओं की आँखें भी खुल ही पड़ीं । ये बेचारी बस-बस साध तक रियाज करें फिर भी समाज में झुका नहीं खान नहीं । राहों से निकाली जाती हैं । कोई भसा घावमी बिना अपनी हजबत में बट्टा लगाये उनसे बोझ नहीं सकता । सोय उनके साथ से भी बचते हैं । कुछ बर्मीदार, ठासुनेवार बकर उनके कबरदानों में वे धीर बक्कर सेठ सल्लुकारों की महुकियों में मंगलामुखियों का धावर होता था पर इस मन्वी ने दोनों ही का काफिया रंग कर दिया है । धब इन बरीबों का भार कौन संभाले । सरकारी नौकरों में तो इतनी बाल ही नहीं रहती । हाँ बानेदार धीर डिप्टी मजिस्ट्रेट बकर उन्हें सरफराज किया करते हैं मगर ये लोग सबसे बेगार में काम लेते हैं । बेरयाओं को उनसे क्या फेद पढ़ूँच सकता है । उबर किन्हीं को एकसे है कि माने में बोझा सुद-बुद था मया बस स्टार बन बैठे । पबिकाओं में उनके बिब निकसने लगे । पोस्टों में उनके बिबों पर लोगों की आँखें बमने लगीं । धब्बे-धब्बे समाचार पत्रों में उनकी एफिंग की टापीकों के पुल बाँधे जाने लगे । यों समझे कि प्रसूत मालों ईसाई हो गया । धब उसे कौन प्रसूत कह सकता है । मय बहु साहब है धीर सोय उसे साहब कहे है । तो धब मंगलामुखियों ने सिनेमा पर धावा बीन देने का निरवम किया है । धीर रसिकों के शहर लखनऊ की बेरयाओं ने एक संस्था की सृष्टि भी कर डाली है जिसका नाम होया कि बहु बेरयाओं को सिनेमा क्षेत्र में लाये । अब सजी बातियों में जाग्रति फैल रही है तो बेरयाओं में क्यों न फैलती ? धीर लखनऊ की बेरयाओं में भी बर्तमान युग में बेरयाओं का कैवितम है । एक बार बहु सिनेमा में कुछ आयें फिर बही सोय जो उनके कोठों की धीर टाफना ऐब समझते हैं तक उन्हें निर्मित कर धपने को धन्य समझेंगे । उनको तसवीरें बीबान धानों की रोमा बढ़ायेंगी । बहूँ पाड़े से रसिकों तक ही उनकी कैविति भीमिठ रहती थी बहूँ एक ही बकत माओं धारमी उनके कसा बीबान पर मुग्ध होंगे ।

अप्रैल ११-३३



नजबूती है। इसविषय में इतरकामी करके कोई ऐसा नजबूत जो लाभीमजाऊना उन्दुरम्न हो और जिसके पाँ बाग के विचार सम्बन्धे हा मुझे बतान्ये।

यह जामा साहब गिदारा इष्टी कपटन के पास गये ही क्या? इसविषये कि वह भी साहब और होमत देखते हैं। एसा क पास ता उम का भी म जाइए। एसे मजहूँ का भीजिए जिमक मा बाद मिषार चुक है। उनका मजागा इतर धामे कडाइए और पा-पार हजार जो बाग के मकें कपडा के नाम म बंक म जमा कए मन्की की पास चुक के दीजिये। इन जामा साहब के इबाइ म परम भी न जाय। सोइ दीजिए कपडा का मजदूर और सम्मानित कुल म विवाग्म क मो का। मम जुवा म लडकियाँ कमी मुयो नहीं रखी। विद्यालय म कए म मम पुबक विषय का बरिबाल है विचारणीय है मजबूतवासी है पर कोई उनका मजागा काम बता नहीं। मम मुजहूँ में घाँट भीजिए और उनके माय कए का पामि-उरम कए दीजिए।

अप्रैल १६३३

## औरतों का क्रय विक्रय

महपामी 'नेशनल सोम' को उमरे कएदुर के मजराइना म मम मम के पकड़े जाल की लबर का है का औरता का मजागा कपडा है। इस पर म कर्न चींग मो मिना। यह सोप धाम ताम क डिना मे चींगता का कइकाए म उठए मने है चींग मुता'मरा' शाहजहाँपुर धारि जियो म बच देते है। इस पर म ममी लाल'म' के धारमी है मैडिन म जाल कब मे पा बुलिठ मरराइ इतना होशियारी म कएन बरे धान है कि किमो को लबर म हूइ। यह सब हमारे बरिब गतन के लक्षण है। इस मम मिये गये है कि धनप्राप्तन के मजगाय' लयेक निजाने रहत है यहाँ मच कि धानी बहनों और बटियो के बँचन मे भी मजाक लगी कएन। उन मरु की बगइयाँ का मजरा गाल धरिदक कए ही है। बँचारी दिन-दिन बढ़ता जाती है। मजहूँ की मजहूँ मही मपनी किमाम ठकाइ हूए जा रहे है पर लिख धारमी मजरा मर गूँ है मजरागिया बर निधाम निजना जा रहा है। किन लमी बागघाँ बरा न हों और मजरा म बचन धारमा हा। धारना का कुजकगर भी बहुधा मिजों के पतन का कारण लघा करला है बरिब धरमर तो औरता का मजनाइ मजराउने उनके पर क मउते होने है जो पास ही उनको बरिबचार का माबन बनाते है और पीछे म बरनाया के मर मे उनको पर मे निजान देत है चींग बहु धरगायाँ इंगी मुटा क हाको म मानी है। बटिना और मुगला की बरिबारी है।

मइ १६३३

## शक दुखी बाप

एक सम्बल जिनका नाम बताना हम मुनासिब नहीं समझते हमारे पास एक पत्र मिला है, जिससे विदित होता है कि धार्मिक धरणी कन्याओं का विवाह करने में पिताओं को चिन्ता मुसीबत का सामना करना पड़ता है। उक्त सम्बल ने हमसे उन मुसीबत का इत्तफा पूछा है। हम इस विषय में उतने ही निम्नहाय हैं, जितने स्वयं बड़ हैं। हम तो इसका एक ही इत्तफा नजर आता है और वह यह है कि लड़कियों को धार्मिक शिक्षा भी जान और उन्हें सत्कार से धरणी रास्ता धार बनाने के लिये छोड़ दिया जान उची तरह जैसे हम अपने लड़कों का छोड़ देते हैं। इनको विवाहित देखने का मोह हम छोड़ देना चाहिये और जैसे मुन्को के विषय में हम उनके पत्र पढ़ें हो जाने की परवाह नहीं करते उची प्रकार हम लड़कियों पर भी विश्वास करना चाहिये। एक यदि बड़ मुहिछी-बोवन बसर करना चाहेंगी तो धरणी इच्छानुसार धरणी विवाह कर सेंगी अन्यथा धरणीवाहित रखेंगी। और सब पक्षों तो यही मुनासिब भी है। हमें कोई धरणीकार नहीं है कि लड़कियों की इच्छा के विरुद्ध केवल लड़कियों के मुतासक बनकर केवल इस मय से कि खानदान की नाक न कट जाये लड़कियों को किसी न किसी के गले में बड़ हैं। हम विश्वास रखना चाहिये कि लड़कें अपनी रक्षा कर सकेंगी तो लड़कियाँ भी धरणी रक्षा कर सकेंगी।

उस पत्र का एक पक्ष हम ऐसे ही और यद्यपि हम विश्वास नहीं कि उस पत्रकार किसी को कुछ धरणी होगी लेकिन कम से कम यह संतोष तो हो जायगा जो धरणी कुछ दूसरों को सुनाकर होता है—

मैं धार्मिक एक फिक्कर में मुबतिला हूँ। मेरा खयाल है कि इत्तफा धार के धार हो सकता है। मुझे धरणी मुयोम्य कन्या की शायी भी फिक्कर है। बड़ा कही भी बाधनीत करता हूँ नहीं से खयो की बड़ी धारवा की माँग होती है। धारके शहर में ही एक प्रसिद्ध रईस बाबू—रिटागर्भ डिप्टी कमिश्नर है। उन्होंने मुझसे पाँच हजार नरक धरणी सामान-बहेज के मांगे। धार विचार करें कि लड़कें पाँच हजार के अर धरणी धार हजार का सामान और इतना ही अर चाहिये। धरणी किसी धर में तीन लड़कियाँ हुई तो धरणी लड़कें अपने उनके विवाह के लिये रक लेना बकरी है। धार विचार धरिजिये कि कापसको के पाम को नौकरी करके नजर करते हैं। इतने खये कहीं से धा सकते हैं और फिर ईमानधारी क साध नाम करके कोई भी नौकरी करके इतने खये पैसा नहीं कर सकता। मैं करारवाह क सकत खिलाफ हूँ। मैंने धरणी लड़के की शायी में करारवाह मुतासक नहीं किया जिस हूर शकत जानता है। धरणी करारवाह करडा तो मुझे भी काछी खये मिल सकत से लेकिन लड़की की शायी में करारवाह करण को धरणी हूँ क्योंकि



नजबूरी है। इसलिये मेहरबागी करने की ई एसा लड़का जो तालीमयाफता तन्दुरस्त हो और विच्छेद भां बाप के विचार अच्छे हो मुझे बताइये।

यह साक्षात् साहब रिटायर डिप्टी कमिश्नर के पास गये हो क्यों? उनलिये कि बाप भी चाहता और बीमता देखते हैं। एसा के पास तो जय कर भी न जाय। ऐसे लड़कों को भीखिए जिनके भां बाप विचार बुद्धे हैं। उनका सज्जता देकर भाग बगलान और सो-चार हजार जो बाप के मर्के कया न नाम से बंकरु म जमा करके पान्की को पास बुद्धे दे दीजिये। इन काजदान बाजा क न्याय पर कबल भी न जाय। छोड दीजिए कया को सम्पन्न और सम्मानित बुद्धे म विधाने क मोह बा। एसा बुद्धे म सज्जिमी कभी सुयो नहीं रहती। विद्यालय म बहुत से ऐसे मुद्धे विद्या या कनिजान् है विचारतीस है यदुस्वाकोपी है पर को उनको यज्ञता कय बापत नहीं है। एसे मुद्धे मे छांट लीजिए और उनके साथ कया का परिप-वहल कर दीजिए।

अप्रैल १९३३

## औरतों का क्रय विक्रय

सहयोगी 'नेशनल काम' को अपने जालपुर के महाद्वारा म एक एसे एम के पकडे जय की छतर दी है जो औरता का ब्यापार करता है। इन एम म कई औरत भी भिजी। यह तोय बाय-गाम क विधा से औरता को बहुराज ए उठाना मात है और बुद्धेसारा साजबहापुर बाधि जिनो म चल बेते है। इन एम म यमी नीक उत्रे क घासमी है सेटिन न जले कच म यह बुद्धे क्यारार इतनी होशियारी से करने कय घान है कि किमी को लपर न हुई। यह सब हमारे बरिज उत्तम क सज्ज है। एम इनत गिर गय है कि घनाशरत के मजबसपर तरीके निजानते रहते है यमी लच कि घानी बहनों और बेदिपो के बेकन म भी संराष मही कय। इन छट्ट की बुद्धेबा बा मय गगय बादि क बाट्ट ही है। बेकारी निम-निम कयगी जारी है। मजुरा की मजुरो मही पपची किमल उबाह एए बा रहे है। पंड-निये घासमी भूयो मर रहे है क्यारारिया बा विद्याल निधला या रा है। किन एमी बादाने बजा न ही और बजे म कयम साबा ए। परबायो बा बुद्धेसारा या बहुबा सिबरा क एएन बा बाग्य हुया करता है बरिज बादतर तो औरतो बा मबनाश करनान उनके बर के प्राखो होये है बा परमे तो उनको ब्यभिचार का साधन बगले ए और पीछे मे बजनामी के भर मे उनको घर मे निजान देने है और बहु मजुराई इमी दुष्टों के हाथों पड जाती है। बरिजता और मुगता को बनिहारी है।

मई १९३३

## वेश्यावृत्ति

मि ई अहमबशाह मुक्त प्रांतीय कौंसिल के उन बचानाम मेम्बरों में से हैं जो सर्वत्र प्रजा-पक्ष की विरोध ही करते रहे हैं। कौंसिल के विगत अधिवेशन के प्रबन्ध पर वे श्वेत-पत्र के 'सम्बन्ध' सम्बन्ध में। इसी कारण उनके किसी भी कार्य में अन्धता को यह धारणा रहती है कि वह वास्तव में प्रजा के हित में है या विरोध में पर यह धारणा यह नहीं है कि मि शाह जो कुछ करते हैं वह अन्धता के विरोध में ही होता है। उदाहरणार्थ बेरया-वृत्ति-निवारण तथा सिन्यों की लरीय-विधि रोकने के लिये जो बिल उन्होंने पेश किया है तथा इसी नैनीताल के अधिवेशन में जो 'सेलेक्ट कमेटी' के सुपुर्ष भी हो गया हो वास्तव में बड़ा उपयोगी और धारणापक्ष बिल है। एल्फ-गरिपड ने भी 'ट्रैफिक इन विमेन' सम्बन्धी इसी प्रकार के विधायक बनाये हैं पर न जाने क्यों मि चिन्तामणि ऐसे व्यक्ति भी इस बिल का विरोध कर रहे हैं। इस विरोध में कोटी बलवन्ती ही नहीं है ? मि चिन्तामणि ने इस बिल के विरोध में जो व्याख्यायण दिया था वह उच्छ्वहीन था उसमें केवल नये होममेम्बर की प्रस्तावना को (बिना प्रस्तावना को होममेम्बर ने सङ्घ 'नौटाया' था) और भी मि शाह की खिल्ली। हमारी सम्मेलन में मि चिन्तामणि धारणा का विरोध केवल बलवन्ती का फल है और यदि यह बिल न पास हो सका तो इसमें भी उनका तथा उनके समर्थकों का होगा।

जुलाई १९३३

## अभागिनी विधवा

कई दिन हुए देहली में एक हिन्दू विधवा ने रैल की साइन पर बैठ कर बाल बेना चाहा। संयोग से ड्राइवर ने ब्रेक लिया और इन्जिन को रोक दिया। जब पौरत को इन्जिन के नीचे से निकाला गया तो उसने यह ककशा में दूरे हुए खम्ब कहे— 'मे नाम विधवा हूँ। मे अपनी जिन्दगी के तम था चुको हूँ। इस दुनिया में नहीं रहना चाहती। तुम लोग मुझे क्यों तप करते हो मुझे मर जाने दो।

और उस विधवा पर धन धारण हरया के अण्डर मे धारिणीय बन रहा है।

जुलाई १९३३

## महिला विद्यालयों में बिहारी-सतसई

पंजाब के पत्रों में कुछ दिनों से यह बहुत चिन्नी हुई है कि बिहारी सतसई को महिला विद्यालयों से क्यों न उठा दिया जाय। जिन पुस्तकों में श्रुतार का मन्म और

निम्नग्रह रूप दिखाया गया हो उन्हें सड़कियों से ही क्यों लड़कों से भी उठा देना चाहिए। हमारे पुराने ब्रह्मनाया के धर्मरत्न जिगद्री शापरी का उद्देश्य ही अपने धामपदाचार्यों की लोक-विकासिता और अयुक्तता को उच्छान्त और उभारना था श्रुत्यार वैसे पवित्र विषय को इतना संशय और चिन्ता बना गए हैं कि धाम उन कवियों पर दबा जाती है, जो अपनी मुक्ति की हत्या करने के लिये मजबूर थे। हम यह नहीं चाहते कि बिहारी को स्कूलों से विलक्षण उठा दिया जाय। बिहारी न कविता के धारणा में ऐसी अंधी उड़ान को है और ऐसे-ऐसे अछूते और नाजुक समाज पैदा किये हैं कि उनसे अचित रहना साहित्य के एक बड़े धान्य से वंचित रहना है। लेकिन स्कूलों के लिये बिहारी का एक सुख एरीशन होना चाहिए जिसमें वे कुर्याचपूर्व होई निकाल लिए जायें। उन्हें कवि ने उनकी रचना में कम ही क्या न तोड़ ही हो। देव और मठिराम और पदाकर प्राणि की रचनाओं के भी स्कूलों एरीशन निकलना चाहिए। हम नहीं समझते कोई अध्यापक या अध्यापिका युवकों या युवतियों के सामने उन बच्चों या कवियों की व्याख्या कैसे कर सकती है जिनमें बूट-बूट कर रचित रहस्य भरा हुआ है। इंग्लैंड में कुछ धर्मनिकों का प्रस्ताव है कि युवकों और युवतियों के लिये रचित टिप्पण स्कूल लाने जायें। इन श्रुत्यारी कवियों को ऐसी स्कूलों में विशेष रूप से स्थान मिलना चाहिए।

सितम्बर १९३१

## प्रयाग में महिला व्यायाम मन्दिर

प्रयाग महिला विद्यापीठ ने महिला व्यायाम मन्दिर सम्भाल बड़ा सामाजिक उपकार किया है। हमारे विरले हुए स्वास्थ्य की रोग-बाध जितना महिमाएं कर सकती है और कोई सक्रिय नहीं कर सकती। इन व्यायाम मन्दिर से यह धारणा तो नहीं की जा सकती कि प्रयाग-महिलाओं की कोई बड़ी संख्या इससे लाभ उठा सकेगी। इसका बाप तो केवल महिलाओं के सामने एक नमूना रक्त देना और कभी-कभी प्रदर्शन करके उनके मन्द होने वाले प्रस्ताव को उभारना होगा। महिलाओं के दिल में अगर यह बात बिट्टाई जा सके कि अपने परिहार के लिये पुष्टिकर भोजन की व्यवस्था करना धामपदों से नहीं प्रयाग मरुत ही बल है और अपने बच्चों में व्यायाम की आदत बालक से उतके आब अपने बड़ा उपकार कर सकती है तो राष्ट्र के लिये बड़े संघर्ष की बात ही।

सितम्बर १९३३

## विधवाओं के गुजारे का बिल

श्री हरिद्विभास शारदा ने अपनी सामाजिक सेवा से भारत के इतिहास में धमक पड़े प्राप्त कर लिया है। अब उन्होंने हिन्दू-विधवाओं से गुजारे का बिल प्रेमसेवनी में पेश करके समाज की ओर धारा की है उसके लिये समाज को उनका कृतज्ञ होना चाहिये। हिन्दू समाज के पतन का मुख्य कारण धर्म का पतन है तो विधवाओं की पुनरा भी उसका शत्रु मन्त्र है। वही स्त्री जो पति के जीवन-काल में घर की स्वामिनी थी और जिसने उठ गृहस्त्री के निर्माण में पति के साथ शारीरिक कठिनाइयों में भी पति के मरते ही अपना ही बनायी है। उसी की मर्त्य के लक्ष्य उससे धर्म के फेर लगे हैं और उसकी जो दुर्गति होती है वह हम लिये अपनी धीलो देखने है। उस कबल अपने लक्ष्य का पति के लक्ष्यों की दया का प्रबलमन्त्र रह जाता है। पति की छोटी हुई सम्पत्ति पर उसका कोई अधिकार नहीं रह जाता। धर्म सम्मिलित परिवार है वह तो उनकी वशा और भी शोचनीय हो जाती है। वह स्वामिनी से लौड़ी हो जाती है और सार घर की सेवा करके अपने जीवन के दिन ब्याती है। इस लक्ष्य में कितनी ही घर से निकल जाती है कितनी प्रेमालय और कठिनाइयों से संघर्ष धारण पतिता हो जाती है। यह बिल विधवाओं को अपने पति की सम्पत्ति में कानूनी अधिकार देने के लिये बनाया गया है। अब हमारी समझ में ऐसा शायद ही कोई सिद्धि सम्पत्ति हो जो इस बिल का विचार करे, मन्त्रि-कट्टर सम्प्रदाय के महानुभावों ने हम शक्य है जिनकी मर्त्य से सम्पत्ति में कम नहीं है, करना प्रकृतियों का मन्त्रि प्रवेश बिल अब तक कबल का पास हो चुका होगा। शक्य उनकी ओर से इस आधार पर विरोध किया जाय कि विधवा सम्पत्ति पत्नर उस अपने मर्त्यालय को से वेगी या कोई उत्तमन पैसा की जा सकती है पर इन महानुभावों से हमारा यही निवेदन है कि यदि आप हिन्दू समाज के हितचिन्तक हैं तो इस बिल में रोड़े न घटकवाए। धर्म पुरुष अपनी सम्पत्ति का जिस तरह चाहे उपयोग कर सकता है, तो स्त्री को क्यों उस अधिकार से वंचित किया जाय। अब सम्पत्ति पर उसका कानूनी अधिकार हो जायगा तो उसके लक्ष्य के धर्म का लक्ष्य सभी उनका धारण करेंगे और किसी को उनकी मर्त्य के लिलास कोई काम करने का साहस न होगा। औरत मर्त्य की ओर सब आपसी है, अब समुदाय में कोई बात नहीं पूछता। अब समुदाय में उसे धारण और रक्षा मिलेगी तो वह मर्त्य के लिये जाने लगी। जो कुछ भी हो इन समय हमारा सामाजिक धर्म यह है कि शास्त्रों और स्मृतियों की शरण लेकर इस बिल को रद्द कराने की चेष्टा न करें। विधवाओं के साथ समाज ने बड़ा प्रेमपाय किया है और प्रेमपाय को पालकर कोई समाज संसृष्ट नहीं हो सकता।

अक्टूबर १९३३

## महिला-सम्मेलन में सन्तान-निग्रह

धामी हाथ में प्रयाग में प्राचीन महिला-सम्मेलन हुआ उसमें धीरे धीरे महत्त्व के प्रस्तावों के साथ सन्तान-निग्रह का प्रस्ताव भी स्वीकृत हुआ धीरे धीरे स्पिनिसिपमिटिया धीरे सकारों से इसकी विधि सिद्धान्त का प्रबन्ध करण का आदेश किया गया । अत्रिनेक सम्मन यह कहता है कि देश में अग्रगण्य स्त्री-पुरुषों को सुदृढभाइय बन देना चाहिए अर्थात् उन्हें जनन शक्ति से बाधित कर देना चाहिए धीरे देश में सन्तान उत्पन्न करने का अधिकार ऐसे प्राणियों को मिलना चाहिए, जो निम्न श्रेणी धीरे हट नीचे में मजबूत हो पाएँ इसका मार ही सुगम्यता भी है । यजुरा धीरे अब सिद्धिध स्त्री-पुरुषों को सम्मेलनोत्पत्ति का अधिकार में होना चाहिए । अतएव देश में जो विज्ञान प्रतिभागाली वैज्ञानिकी स्त्री पुरुष हैं उन्हीं पर देश में प्रायः सन्तान पैदा करने को जिम्मेदारी धानी है । अतएव इन सम्मेलन की विद्वानी मनम्बी स्वामिमाली देविया का जहाँ यह प्रचार करने को अग्रगण्य है कि अयोग्य स्त्री पुरुष सन्तान उत्पन्न न करें वहाँ धामी योग्य बदला का सुयोग्य सन्तान उत्पन्न करण की प्रेरणा करनी चाहिए । पुरुष-मिली विचारगाली दविना धीरे उन्नत विचार बाने पुरुष सन्तान-निग्रह नहीं कर सकन धीरे न गलत उह इन जिम्मेदारी से आशान कर सकता है । उन्हीं का सन्तान उत्पन्न करके उनका पालन करना ही पड़ना अन्वय हैस में अयोग्य सन्तान भ्रम जायसी । देश में अयोग्य का रण्य करण धारकी पदापत्तिताना धीरे धारकी इन पर पर पत्रैचाना । धारकी शान में रण का क्या अन्वय पड़ैचा ।

उपर कह-कह विज्ञानशास्त्री इन धम्म में है वि अयोग्यनी में निम सग्न का सन्तान चाहें पैदा कर सकें । एक विज्ञान में तो यहाँ तक अविचारवादी की है कि जो हजार तीवीर तक इन विषय में बहुत अविचार-गोत्र ही बुरा होमी धीरे अन्वय ही नहीं विरिचत है कि जो हजार एक ही तीवीर तक विज्ञान द्वारा उत्पन्न स्त्री-पुरुष समाज में हलचल मचा रहे हाने । इनविषये हमारे उन्नत मन्त्राज की यह अन्वय बाह ही रिना तक अन्वयनी पणैपी । किंग विज्ञान उन्हीं इन जिम्मेदारी में सकन कर देगा । तब तब मोहन की सकस्या भी इन ही बुरी होपी । एक योगी आकर ह्यारी सन्तान उठना ही योग्य प्रान कर सकपी विठला धारकन बूध धीे अमि-अमिनी नरएण गच्छन भा नगी निम सगना । बम मार रिन कीर धीरे धाना धीरे विहाय हागा । अरुणाण उम अन्वय में हम न हाग ।

जबम्बर १९३३

## कुमारों शिक्षा का आदर्श

शिक्षा-विभाग के अध्यक्ष मि. मेर्सेनी ने मुरादाबाद की एक कन्या पाठशाला में कुमारियों की शिक्षा का जो आदर्श उपस्थित किया उस पर हमारी देखियाँ उनसे कुछ होंगी या नाउर यह हम नहीं जानते। आपके विचार में कुमारों और कुमारियों की शिक्षा में वही अन्तर होना चाहिए, जो उनके जीवन में है। समीकरण और सामुदायिक से उनके जीवन का कोई उपकार नहीं होता। वर्तमान शिक्षा प्रणाली उन्हें मात्र और गृहिणी बनने के योग्य नहीं बनाती। मुश्किल तो यह है कि पुरुषों ने महिलाओं को इतना सतारा है कि अब वे माताएँ और गृहिणी न बनकर अपनी आर्थिक स्वाधीनता प्राप्त करने पर तुल्य हुई हैं। अगर पुरुष अपने पासना और ओज्ज्व पकाना नहीं चाहते तो स्त्री क्यों सीखे। जो शिक्षा पढ़कर पुरुष रोटी कमाता है और इसलिए धीरों को अपनी सीधी समझता है वही शिक्षा स्त्रियाँ भी सीखना चाहती है। वह जाना क्यों पकड़ें कफालत क्यों न करें, आम्पायिका क्यों न बनें? इसका फैसला हमारी देखियों को ही करना चाहिए कि उनकी कन्याएँ कैसी शिक्षा पाएँ, स्वार्थी पुरुषों का फैसला वह क्यों संभर करने लगीं।

जनवरी १९३४

## महिलाओं की शिक्षा पर पं० जवाहरलाल नेहरू

किसी विद्वानी संख्या में हमने मि. मेर्सेनी के स्त्री शिक्षा-संबंधी विचार की आलोचना की थी। मि. मेर्सेनी महिलाओं को माता और गृहिणी बनने की शिक्षा देना चाहते हैं, और समावरक विषयों को उनके विभाग में डूँडकर वही पकती नहीं करना चाहते जो लड़कों की शिक्षा में की गई। लड़कों को पत्रों के लिए क्लार्क बनना प्रतीक था। लड़कियों के सामने वह यह आदर्श नहीं रखना चाहते। पंडित जवाहरलाल नेहरू ने महिला विद्यापीठ के बीकानेर मापक में इसके विपरीत मत प्रकट किया। आपके अनुसार है कि महिलाओं को केवल वैवाहिक जीवन के लिये क्यों तैयार किया जाय। उन्हें अब एक आर्थिक स्वाधीनता न प्राप्त होगी उस वकत एक परिस्थिति में साम्यवाद व उत्पन्न होगा। अगर साम्य का एक मास आचार आर्थिक ही हो जाय तो भी कमी-बेसी का अन्तर्गत रहेगा ही। अगर देवी भी एक ही रूपमा जाती है, और देवता भी एक ही शीघ्र रूपमा तो अन्तर ही कुछ छोड़ी ही अस्मिता का जायगी। जहाँ तरह देवी की ज्योता कमाती है, तब भी अस्मिता पैदा होगी। दोनों अन्तर जायें तभी मीथाल डिक-डेवी। इसका अर्थ यह होगा कि मुश्किल से ही में पाँच अन्तरि सुखी होंगे। बात यह

है कि वेस्टाघों में प्रचानता की जो भावना उत्पन्न हो गई है यह केवल उनकी मूर्खता के कारण है। यह समझते हैं वे बाहर से पन कमाकर लाते हैं, इसलिए उनका महत्व घटिक है। उन्हें यह मूल ज्ञाता है कि स्त्री घर में जो काम करती है, वह उनकी कमाई से कई गुना ज्यादा महत्व की चीज है। वहाँ पुरुष विसकुल धने नहीं है वहाँ पराधीनता और स्वाधीनता की संघ एक नहीं है। दोनों ही एक दूसरे के समान रूप से पराधीन हैं। पुरुषों के दृष्टिकोण में परिवर्तन हो जाने से यह सारा विचार भिन्न सकता है, और पारिवारिक विच्छेद के लज्जास्पद दृश्यों से समाज की रक्षा हो सकती है।

अनवरी १९३४

## रूस का नैतिक उत्थान

रूस को बदनाम करने वाले संघर्षी धरुकारों में बराबर यही मिथ्या जाता है कि रूस में विवाह प्रथा प्रायः उठ सी गई है, पारिवारिक संकटन गूट हो गया है, स्त्री-पुरुष स्वैच्छा से सहवास करते रहते हैं आदि। लेकिन इधर ही-एक भारतीय संकटनों न वहाँ का जो धौधौ देखा जुगत मिथ्या है उसल तो मामूम होणा है कि रूस ने और कितनी विभाग में बड़े प्रगति की हो या नहीं लेकिन नैतिक दृष्टि से तो वह पश्चिम की प्रगति सभी उन्नत पाठियों से आगे निकल गया है। वहाँ बाजारों में बेरघाई धरने टिकर की उलास में बकर नगरी नहीं मकर धाती न होटलों और कहवा-खानों में धौरतों के नने चिन्न ही घटघटे मकर धाते हैं वैसे योरोप और अमेरिका के प्रायः सभी देशों में देखा जाता है। यही नहीं जुडाक और उपरंत आदि बीमारियाँ जो योरोप में दिन-दिन बढ़ रही हैं, रूस में बहुत कम हो गई हैं और वहाँ के डाक्टरों को धारा है कि कुछ दिनों में यह किरंगी बीमारियाँ नेस्त-नाबूद हो जायेंगी। बेरघावृत्ति का मूस कारण धार्मिक संकट है, जो बार को मानसिक दुबलता का रूप धारण कर लेता है। वहाँ धन धोड़े से धारमियों के हाथ में है वहाँ साक्षिमी है कि धनवान सोप धरमी विनासिता को तप्य करने के लिये प्रमोदनों में काम लें। उसी से बीमारियाँ भी फैलती हैं। जब किमी के पास इतना धन ही न रहे कि वह उसे विनासिता में उड़ा सके तो बेरघावृत्ति धार ही धार मुप्त हो जायगी। फिर जब रितियों के लिये जीवन के विसी विनाय में कोई स्कावट नहीं तो वे क्यों इन सज्जालय नृत्ति का धारण लें। धन के लिये रूप जो वेचना कोई पश्य नहीं करती। वह तो धन के लिये ही धारम-अमपण करना चाहती है। यदि वह पश्चिम से धरने जीवन को मुनी बना सधती है तो वह यह पृथिव धारण क्यों न लेयो।

अरवरी १९३४

## वैवाहिक लेन-देन और कानून

'बीर' के एप्रिल के अंक में श्री केशवानन्द वर्मा ने बहुत कम-विक्रम धारि कुप्रथाओं को कानून द्वारा बन्द कराने का प्रस्ताव किया है। ऐसी प्रथाओं को कानून द्वारा तो क्या यमराज द्वारा भी बन्द कराया जा सके तो हम धारणति नहीं मन्दि हूमे मय ह कि यहाँ कानून हमारी कुछ सहमता नहीं कर सकता। या बात धमी कुत्तम-कुत्ता होती है ठक मुक्त रूप से होगी और किसी को खबर तक न हागी। या प्राप्ती विवाह का इच्छक है वह अपना सब कुछ बेपकर लडकी खरीदेया। उस प्राप किसी तरह नहीं रोक सकता। इमी तरह लडकी का बाप भी बर को जरीबन के लिए अपना बर तक बेच देता ह। कानून तो तब बीच म या सचता है कि कोई परिवार करे ? हाँ विवाह के बाद कम निकाली जा सकती है और सेनेवालों को बडा बर दिलाया जा सकता है। लेकिन ठक तो बड़ी जनबाने धपम हा जाते है। कौन अपनी पत्नी के प्यारे पिता या झनल दामाण पर मुख्यमा जन्तापगा ? नहीं मात्र यह बस मुँग बढने की नहीं। हाँ सरकारी कानून अगर इतना कर ह कि बर-बच के जोड बना दे और जबरबस्ती या रबाधमी से उनका विवाह करा ह तब शायद कुछ उपकार हा सके। मगर ठक वह एकम बर या कन्या के पिता की जेब म न बाबर पुषिम की बेच म जायगी। शायद ससस ज्यान। समन्या गडो है। जब तक जन-जन ममाज म वृथा की दृष्टि मे न बडा बायमा धीर जनमत उस जनन्य न समझन जगेगा तब तक यही दशा रहेगी। हमे अपनी सारी शक्ति यह जनमत मयार करने म जगाली होषी। मुश्किल यह है कि बड़ी धारणी या प्राज कन्या से विवाह म रिफारम बनता है और दहेज को बान्त करता है कम पुन के विवाह म संवी एकम इकार जाता है। कैसे काम बस।

अप्रैल १९३४

## क्या स्त्रियों का पाजामा पहनना जुम है ?

या तो काले-धोरे का मेर हम ममार म सभी जग मीजुप है यहाँ तक कि इंग्लैंड और फ्रांस तक म भी कामा या धपमाड होता रहता है। लेकिन यह मरज यच्छिण धप्रिका मे बडे बोगे पर है और शायद बडता जा रहा है। कथर है कि किसी हिन्दुस्वामी स्त्री को गोरी औरता की दसा देखी पाजामा पहनने का शोक बरिया लेकिन कामी औरत भोरो औरतों की मकम करने का साहम कर—यह बात बड़ी के मविन्दुट छाटक को मागवार चुकरी। इस स्त्री पर मुख्यमा जन्ताया गया धीर उसे जुमनि की सबा दी गई। गहाँ शैलनों क वाज बेवार ठकुर किसी नूड को मुर्ता टोपी पहने बेकन



कामे से बाहर हो जाते हैं और उसकी शक्ति ठीक सम्मत् करती है । मगर ये बेचारे ठाकुर मूख हैं । यहाँ शिक्षित मजिस्ट्रेट एक महिला का सेमों की मरुत करण के जुम में सजा देता है । क्या वह भी इतना ही उन्मत्त नहीं है ? हम तो उस कानो देवों को कुर्बान पर गया घाती हैं जो माओ एमो मोक्षरार चोख को छाड़कर वाकामा पहनने चली । सबसे क्रिटर के जमनी म घायल की और अपनी संस्कृति की बिनाइ रखने की को नई नीति निकाली है, तब से कामे गोर का नेत्र शायद और भयंकर हो गया है ।

सङ् १९३४

## सन्तान नियम और प्राकृतिक नियम

ब्रह्मचर्य के मरुत को हिन्दू शास्त्रकारों ने जितना सम्मत् का उतना शायद और कहीं न सम्मत् गया हो लेकिन इसका उद्देश्य सन्तान-नियम नहीं बल्कि मनुष्य के बल बुद्धि की रक्षा करना था । उत्तम सन्तान के लिए भी बल-बुद्धि की रक्षा आवश्यक थी लेकिन हम उस धारक से विरते-विरत यहाँ तक विरे कि बाल-विबाह को प्रसार होने सगी और उले रोस्ने के लिए जानन बनाया पडा । प्राचीन धारक ह्यु-गुष्ट सन्तानो से मरुत पूरा पर था । उस युग में धाबारी को उन्नत की घोर रागे का प्रम इतना बढिन न था । सब जमाना बरम रखा है और संसार म अन्त से उगाश घादमी हा पवे है । इसके साथ ही बच्चों के पासन-पोषण का भार भी बढ गया है । हम धरन बासका को पुष्टिपरक जीवन और धरती सिखा देना चाहते हैं और बहुत से बच्चों का बाल सिर पर सादकर अपनी डिग्री नहीं रख्य करना चाहते । मापारण्ड बिल के घादमी को धरन माठ-माठ लड़कों लड़कियों का लख सटाया पडा तो समझ लो कि उनकी और उनके बच्चों की शानत है । अपनी भी सासत और बच्चा की भी सासत । हमी उन्नत में सन्तान-नियम के बिचार को बरम लिया । हमम ता किमी को घापति नहीं है कि संतान-नियम आवश्यक बन्नु है । मरुतेश इसी म है कि बहु उद्देश्य ब्रह्मचर्य द्वारा पूरा किया जान या कुर्विम उपानां मे । धारक ब्रह्मचर्य द्वारा हो मरुत तो मरुत उलम सचिन बहु न ही मके तो हम कुर्विम साधनों की भी बुरा नहीं मरी सम्मत् । कुछ बिद्वानों का कथन है कि हम प्राकृतिक विधान म सापक न होना चाहिए बरकि हमम परिधाम भोगत होता है । मगर मानव मनुष्यि ता प्राकृतिक विधान के विरुध का ही नाम है । धरन हम प्राकृतिक-माग पर ही चलन ता धारक भी कडगमा म रख्य और निराध पर किन्गी बमर करते गे । प्राकृतिक विधान पाना तो मानवी मरुतता का मरुत हो है । ही संतान-नियम के विरुध जा मरुत विचारने माग्य जान न ब-पडा है कि हमम स्त्री गुरुप की भाव मानना बढ जाती है और निराम प्रकृति घृश रखने के लिए विग

त्याग और बलिदान की बहुरत है, उसके विविध ही जाने के कारण स्त्री-मुख्य में प्रेम बन्धन बीना हो जाता है और वह गृह कर्माह और प्रसन्नोप के रूप में प्रकट होता है। इसके सिवा कुछ बीमारियाँ पैदा हो जाने की शंका भी रहती है, अतएव हमारे विचार में सम्पत्ति को अपनी बहुरत स्थिति स्वात्म्य प्राप्ति का विचार करके ही इस विषय में निश्चय करना चाहिए। इसके लिए कोई व्यापक नियम नहीं बनाया जा सकता।

मई १९३४

## नारियों के साथ अन्याय क्यों

प्रब तक समस्त संसार में यह कथना जा कि नारी को एक ही काम के लिए पुस्वों से कम मजूरी मिलती थी। पुस्व चार घाने पाता है तो नारी को तीन घाने ही दिए जाते हैं। शायद यह कारण ही कि नारी पुस्व के बराबर काम नहीं कर सकती। या यह कि पुस्व को एक परिवार का पालन करना पड़ता है और नारी को कुछ पत्नी है। सब अपने ही ऊपर कार्य करती है। लेकिन समय बरन रहा है या बरन गया है और सब नारियों ने सिद्ध कर दिया है कि बहुत से कामों में वह पुस्वों के बराबर ही नहीं पुस्वों से ज्यादा काम करती है। रहा परिवार का पालन। ती सब यह बहुरती नहीं रह गया है कि नारी परिवारहीन हो। इस बेकारी के अमाने में कितने ही पुस्व अपनी पत्नियों की कमाई पर पुस्व-बसर करते हैं। और सब तो अविवाहित स्त्री भी विचकारियों द्वारा संतानवती हो सकती है, फिर किस कारण से उसको कम वेतन दिया जाय ? हाँ नारियों से हमारा मत निवेदन है कि सब वे एकान्तभाव की बान छोड़ें और अपने बेकार पुस्वों की उरी तरह नाइबरबारी करें जैसे—पुस्व सब एक अपनी बेकार दिवनों की करता रहा है।

मई १९३४

राष्ट्रभाषा



## भारत की राष्ट्र भाषा

‘अंग्रेजी बोला सब में भाषण देते हुए भारत के मूलपुत्र बायसराय नाथ गिदिय ने इस बात पर बड़ा सन्तप्त हर्ष तथा गर्व प्रकट किया कि गोलमेड में आयें हुए प्रतिनिधियों में कुछ तो बड़े ही काबिल हैं क्योंकि वे बड़ी दृष्टी अंग्रेजी बोलते हैं। अब नाथ महोदय भारत में वे उन्हें यह देखकर बड़ा हर्ष हुआ कि यहाँ पर अंग्रेजी भाषा का बड़ा प्रचार हुआ। आप कहते हैं—“अंग्रेजी भारत की राष्ट्र भाषा है। अंग्रेजी भाषा शान्ति और व्यवस्था की भाषा है। भारतीय राष्ट्र भाषा क्या है यह अपनी तक बड़े शिष्य भी नहीं तय कर पाते हैं। बहुत सोच-समझकर ‘हिन्दुस्तानी’ को ही यहाँ की राष्ट्रभाषा निर्धारित किया है। बहुत बड़े अंग्रेजीवादी भी कभी अंग्रेजी को यहाँ की राष्ट्रभाषा नहीं मानते। हमारी समझ में साइ महोदय ने बड़ी जल्दी यहाँ की राष्ट्र भाषा तय कर ली। यह क्या संस्कारों की योग्यता का सबूत; यह तो हर एक मुसलमान देह अपन स्वामी की भाषा को अपनी भाषा बना ही लेता है। यदि बंगाली कोई ठीका पालता है तो उसकी राष्ट्र भाषा बेंगला होती है। उसी ठीके की समान किन्ती हिन्दी बोलनेवाले के यहाँ पसकर हिन्दी को ही अपनी भारतीय-इबाल बना लेता है। बाह ठीके तो अपनी असली भाषा यहाँ तक भूल जाते हैं कि ‘ऐ-ऐ’ की कमी नहीं कहें। टीक इनी प्रकार कुछ नव रण क भारतीय हिन्दी इतनी भूल जाते हैं कि अपने माँ-बाप को भी वे अंग्रेजी में ही बात लिखा करते हैं। विनायक से नीटकर ‘तुम’ को बपह ‘दुम’ कहना मामूली बात है। हम भारतीय भाषा के विचार में भी अंग्रेजों के इतने दास हो गये हैं कि अल्प अति बनी तथा सुन्दर भाषाओं का हमें कभी ध्यान नहीं आता। उदाहरणार्थ यह तो सत्य ही है कि कौन अंग्रेजी से कहीं अधिक प्रिय मधुर तथा व्यापक भाषा है। सीटोप में ही नहीं दुनिया के अधिकांश भागों में इसका अधिक प्रचार है। इसका पता हमें सब लगता है जब हम इंग्लैंड छोड़कर और कहीं जाते हैं और वहाँ अंग्रेजी जानने के कारण हमें बेबकूफ बनना पड़ता है। अंग्रेजी बड़ी अपनी भाषा है पर जिनका तथा जिन बुद्धि में हम इसे धारर देते हैं वह हमारे लिए सब की बात नहीं है।

यह क्या शान्ति तथा व्यवस्था की भाषा। इसका सबूत तो हम आज दिन मिलता है। विनायकी मजाधार-पत्र इनी टेनीशाफ या डेनी मिरर या इनी न्यूज (तीनों ही मन्त्र के हैं तथा अनुशासन के प्रमुखात्र हैं) जो अंग्रेजी में ही छाप हैं पर इंग्लैंड

की राजनीति के अधिकांश सूत्र प्रायः इन्हीं के हाथ में हैं और इनकी भाषा प्रायः सबसे अधिक कटु, दुष्ट, अहरीनी और गिन्ध होती है।

२ दिसम्बर १९३३

## बड़ोदा राज्य में हिन्दी

बड़ोदा हिन्दुस्तान की उन रियासतों में है जिसे बहुत ही उन्नत तथा सुशासित कहा जा सकता है। कुछ समय तो बड़ोदा देशी रियासतों का ही नहीं किन्तु सम्पू्ण ब्रिटिश भारत का भी सामाजिक सुधारों में अगुया रहा है। शिक्षा अनिवार्य कर देना शिक्षा निःशुल्क कर देना तथा बाल विवाह निषेध उसके अनेक सुधारों में से है। बड़ोदा का सबसे नया सुधार या अपने राज्य भर के मन्त्रियों में अग्रुतों का प्रबेध अनिवार्य कर देना। इस सुधार से कुछ सामाजिक-कीटाणु तो बेहूष बुझी हैं। इसका प्रभाव सुदूरवर्ती और हितकर है। अब इस रियासत का राजा महान् कार्य है हिन्दी को राज्यभाषा स्वीकार कर लेना। ब्रिटिश प्राणियों में सबसे पहले यह सुधार मध्य प्राय म ही हुआ था कि हिन्दी को ही परामर्शी भाषा स्वीकार किया गया था। इसके बाद शायद बड़ोदा ही पहला इतना बड़ा स्थान है जहाँ हिन्दी का अब साम्राज्य होना। बड़ोदा एक मरठा राज्य है, जिसके अधिकांश निवासी मुजराली हैं। इसलिए इस राज्य के इस सुधार का और भी महत्व है। क्या हम आशा करें कि बसवर, बीकानेर, उदयपुर ऐसी और-मरठो रियासतों भी उर्खू के स्थान पर हिन्दी को सर्वोच्च भासन होंगी।

बड़ोदा सरकार ने इतर कई भूमें भी की है जिनमें सबसे बड़ी भूम बूडे अज्जास लठैयब जी की पैठन बन्द करना था। भारतीय सिविल सर्विस के रिटायरड पैठनबल्ले कर्मचारी भारत के शिक्षाक आम्बोलन में नियम होकर भाग ले सकते हैं, पर भारत की सेवा करनेवाला एक भारतीय रियासत से पैठन न पावे यह कहीं की बुद्धिमानी है।

२ दिसम्बर १९३२

## हिन्दू-विश्व विद्यालय में हिन्दी वाद-विवाद

नरु एविकार को काशी विश्व विद्यालय में हिन्दी वाद-विवाद हुआ। स्थानीय विद्यालयों के अतिरिक्त कई छात्र बरबसपुर, पटना बुबकुन काँपकी आदि से भी आये थे। विषय था—हिन्दी भाषा ही राष्ट्र निर्माण का एक मात्र साधन है। प्राण्टीय कौंसिल के समन्वयित सर सीताराम मुख्य विचारक थे। स्थानीय कामेजों की चार आचार्य

मो सम्मिलित हुई थीं। उपस्थिति मन्दी थी। लगभग पचीस छात्रों ने भाग लिया। प्रविकारा छात्रों के कथन से यही सिद्ध होता था कि वे केवल अपनी कोई रचना सुना रहे हैं। उत्तर धीरे प्रत्युत्तर में जिस व्यंग्य-विनोद धीरे आसोचना की आश्चर्यकथा है धीरे जिसके कारण ही आर-विचार में आकण्ठ होता है, अथर गिने-दिनाये छात्रों ही न ध्यात दिया। राष्ट्रीयता के उपादानों में आति धर्म धीरे राजनैतिक तथा भौतिक परिस्थिति संस्कृति धीरे भाषा इन पाँचों ही अर्थों का होना आवश्यक है, लेकिन हमारे विचार में एक भाषा का होना मुख्य है। राष्ट्र भाषा ने बिना राष्ट्र का बोध हो ही नहीं सकता। वही राष्ट्र है, वही राष्ट्र भाषा का होना साभिमी है। अगर सम्पूर्ण भारत को एक राष्ट्र बनाना है तो उस एक भाषा का आचार लेना पड़ेगा। अंग्रेजी भाषा का प्रचार अत्यन्त है। इसे हम राष्ट्रभाषा का पर नहीं दे सकते। भाषा ही राष्ट्र साहित्य धीरे संस्कृति का निर्माता करती है, छात्रों को बुद्धि करती है। नदियों धीरे पहाड़ों से राष्ट्रीयता के विक्रम में जो भाषा पढ़ती थी उसे रेश धीरे हवाई जहाजों ने मिटाना शुरू कर दिया है। अगर एक संस्कृति रहते हुए भी एक राष्ट्र भाषा का आचार न रहे तो ऐसा राष्ट्र स्वामी नहीं हो सकता। एक भाषा बोलनेवालों में कभी-कभी विरोध उत्पन्न हो जाते हैं धीरे उनका पुनर् राष्ट्र बन जाते हैं। संयुक्त अमेरिका इसका उदाहरण है। किन्तु इसकी केवल एक निदान है। इसके प्रतिफल एक नस्ल एक संस्कृति धीरे एक धर्म के अन्तगत मिस-मिस्र राष्ट्रों के अनेक उदाहरण हैं। इससे यही निम्न होता है कि राष्ट्र-निर्माण में भाषा का स्थान सबसे महत्त्व का है। अमन क्रिमासोकर क्रिमे ने भी भाषा ही को मुख्य स्थान दिया है। इस विचार में मुसकुल काँगड़ी के दोनों छात्रों के कथन सब से मन्दी रहे धीरे टाकी उन्हें प्रदान की गयी। हम उन भाषा धीरे छात्रों को जिन्हें परक क्रिमे उनको सकलता पर बधाई देते हैं।

२६ दिसम्बर १९३२

## हिन्दी द्वारा उच्च शिक्षा

महाभारत पंडित मदनमोहन मालवीय ने काशी विश्वविद्यालय में उपाधि विवरण के शुभ अवसर पर हिन्दी भाष्यम द्वारा शिक्षा का समर्थन किया धीरे कहा कि शीघ्र ही विद्यालय में इंटरमीडिएट कक्षा तक हिन्दी द्वारा शिक्षा दी जायगी। हिन्दू विश्वविद्यालय को इस विषय में अग्रसर होना चाहिए था धीरे हमें हब है कि उमये जो धारा की जाती थी वह पूरे हुई। अंग्रेजी द्वारा शिक्षा लेकर हमारे विद्यालयों में छात्रों का विरतना समय गप्ट होता है अपना छोड़ा बहुत अनुभव हम सभी को है। छात्रों को मरबूर होकर इतिहास धीरे भूगोल तक रटना पड़ता है धीरे उनको साथी शक्ति माना तक ही रह

जाती है बिपय की धोर ध्यान देने का उन्हें बचसर ही नहीं मिलता । हिन्दी माध्यम से यह दोष मिट जायगा । संभव है, इस सुभार से छात्रों का धंधेकी पर चतना अधिकार न रह सके वे इतनी धंधेकी धंधेकी लिख या बोल न सकें । हमारे रईसों में कितने ही तो धंधेकी के इतने बड़े मकत हैं कि वे अपने मकतों को धंधेकी के स्कूलों में पढ़ाते हैं । इन लोगों को शायद यह सुभार धंधेका न सगे लेकिन जब यह सिद्ध होता था रहा है कि धंधेका का धंधेका बहुत कम रह गया है, तो केवल भाषा के पीछे क्यों छात्रों की लिखनी बरबाद की जाय । फिर बरमनी फ्रांस जायान धंधेका देशों में राष्ट्र भाषा में ही लिखा ही जाती है । तो क्या वही धंधेकी बोलने धोर समझनेवाले सोय नहीं लिखते ?

२६ दिसम्बर १९१०

## पुरानी उर्दू

इंटा की 'कितनी कई कहानी' से तो हिन्दी-संसार परिचित ही है । इंटा मन्तराही रचनाकी में हुए । उर्दू की बुनियाद सबसे बहुत पहले पक चुकी थी । सबसे पहली बहू रचना बकिबक के मुसुबराह के समय में हुई, जो सत्रहवीं सदी के धादिकाल में गोलकुटा का बानराह था । यह लिखित बात है कि उर्दू का बन्ध बाहे उत्पटी भारत में हुआ हो लेकिन सबसे प्राचीन उर्दू रचना बकिबक में हुई । उस समय की उर्दू का एक बमूना देखिए—

शहंशह मजाजिस किन्ने एक रात  
 बबारी के फुरकत त सब संयात ।  
 हरेक कुलमूरत हरेक कुरा वा  
 सो हर एक तिसकत हरेक तिसरवा ।  
 सुराही पियाले से हातां (मने  
 नहीमां से मशगुल बातां मने ।  
 जो मुसरिक जो सहरा में इस बात गाय  
 तो फिर इनको इस शीक से हाज गाय ।  
 सगे मुजिबीं गाने यों चाक सों  
 कि बरतीं हिले मस्त धाबाज सों ।  
 जो गाबन बह साह की कमाते धने  
 सो रफी परगां बमाते धने ।  
 शरान हीर सुराही मुकन हीर चाप



हुए मस्त मजलिस के लोगी तमाम ।\*

कुतुबशाह के पहले मुहम्मद कुली कुतुबशाह ने ( १५२१-१९११ ) में जू में एक मसजिद भी थी । यह शायद पहला मस्जिद है, जिसने जू में पद्य-रचना की । उसका भी एक नमूना देखिए—

गन्ही साँवसी पर किया है भडर,  
खबर सब गेबाकर हुषा बेखबर ।  
बेरा हूय सरो निकस अब धरं छों  
निमन जोल मुंजफों निमन जनों क्रमर ।  
धरं-बगुराई मा-जे निमन-दिलारि देना ।  
सबक नाक हीं ज्यों धंये बल हुए,  
कनेज पहाड़ी के फुट बल हूय ।  
एक एक जान एक कौहु या बुर्ज ज्यों  
ने हाती में फिलने मरे बुर्ज ज्यों ।  
दिये इस्ल लड़ने को जो बीर से  
बमाना हुषा लल उपर नीर से ।  
हुषा गुम जिबर का खबर मार-मार,  
क्यामल जमी पर हुषा धाराकार ।

भावार्थ—जब मेनाएँ जोध में धावीं तो पहाड़ों के बनने का कर पानी हो पद्य । एक-एक पहाड़ान एक-एक पहाड़ के समान का जो (हाथों में बालक गया लिये हुए था । जब वे बीर लड़ने बसे तो संसार परों के नीचे आ गया बीर सिर ऊपर से ।

का दरिया मजू का उबलने लगा  
समन उम वी किरती हो बनने लगा ।

उम समय बचन जो जू में प्रयुक्त था ।

दिसम्बर १९१२

## दक्षिण में हिन्दी प्रचार

मद्रास और आन्ध्र प्रान्त में हिन्दी प्रचार का काम जिसने संवर्धित और सुचारु रूप से हो रहा है वह सबसे प्रशंसनीय है । वहाँ इस समय कठिन तीन तो हिन्दी प्रचारक मित्र-मित्र वेगों में स्थानीय रूप से काम कर रहे हैं । प्रचारक-संस्थान से 'हिन्दी प्रचारक' नाम का एक उपयोगी मासिक पत्र निकलता है प्रतिपद्य अपना 'प्रचारक'

\* तै—बे हाथी मने—हाथ में बाण मने—बाण में बाण—उरु, धड़े—वे हीर—धीर ।

सम्मेलन' होता है और सम्मेलन द्वारा 'प्राथमिक 'मध्यमा' और 'राष्ट्रभाषा' तीन परीक्षाएँ होती हैं जिनकी सफलता का अनुमान परीक्षार्थियों की संख्या से किया जा सकता है। इस वर्ष प्राथमिक में दो हजार पाँच सौ चार उम्मेदवार ने जिनमें दो हजार एक सौ सनसठ परीक्षा में बैठे और एक हजार आठ सौ सोलह पास हुए। मध्यमा में एक हजार एक सौ उन्नास बैठे और सात सौ इकठ्ठातीस पास हुए। राष्ट्रभाषा परीक्षा में पाँच सौ उन्नासी बैठे और तीन सौ बयालिस पास हुए। उम्मेदवारों की कुल संख्या चार हजार छे ऊपर थी। परीक्षा-केन्द्रों की संख्या दो सौ इक्कासी थी जिनमें एक सौ पचहत्तर केवल बाल्य प्रान्त में थे उन्नीस तामिलनाडु में बालन कैरल में चौतीस कर्नाटक में और एक बम्बई में। प्रचार की प्रगति का प्रत्याशा इसके किया जा सकता है कि यह एकदुबरे के उम्मेदवारों की संख्या उसके एक साल पहले की संख्या से दुगुनी थी। और इस उद्योग में प्रान्त के प्रमुखतामी गण्यमान्य सम्मेलन भी शक्ति है। उनमें सर सी पी रामस्वामी वीवान बहादुर की एस मुबहुरएस ऐयर, बस्तिन ए बैकटरजब प्राधि है। 'हिन्दी-प्रेमी-सङ्घ' के कार्यक्रम की जो व्यवस्था तैयार की गयी है, उसे देखने से साधुम होता है कि उसके उद्देश्य सिद्धने अने और क्षेत्र सिद्धना निस्तुत है—

१—समाएँ और बससों का आयोजन।

२—हिन्दी कक्षाओं की शिक्षा।

३—प्रचार समा की परीक्षाओं के लिए विद्यार्थियों तैयार करना।

४—स्वामीय स्कूलों और कालेजों में हिन्दी का प्रचार करना।

५—हिन्दी ज्ञाने खेमकर बनना में हिन्दी के प्रति प्रेम बढ़ाना।

हम मद्रास के हिन्दी-प्रेमियों को उनके उत्साह और जगन पर हृदय से बधाई देते हैं। मातृ की राष्ट्रीयता एक राष्ट्रभाषा पर निर्भर है और बच्चों के हिन्दी-प्रेमी राष्ट्रभाषा का प्रचार करके राष्ट्र का निरन्ध कर रहे हैं। राष्ट्रभाषा के बिना राष्ट्र का रोष हो ही नहीं सकता। वहाँ राष्ट्र है, वहाँ राष्ट्रभाषा का होना लाजिमी है। अथर उम्मुख मातृ को एक राष्ट्र बनाना है, तो उसे एक भाषा का आधार लेना पड़ेगा। हिन्दी भाषा का व्यवहार प्रापञ्च है इस हम राष्ट्रभाषा का पत्र नहीं दे सकते। भाषा ही राष्ट्र साहित्य और संस्कृति का निर्माथ करती है, आधारों की सृष्टि करती है। संस्कृति में एकरूपता होसे हुए भी एक राष्ट्रभाषा का आधार न रहे, तो राष्ट्र स्वाधी नहीं हो सकता।

दिसम्बर १९३२

## तृतीय दक्षिण भारत हिन्दी-प्रचारक सम्मेलन

राष्ट्रीय एकता के लिए एक राष्ट्रभाषा चाहे सबसे महत्वपूर्ण चीज न हो पर महत्वपूर्ण प्रकरण है, और यह भी निश्चित है कि हिन्दी के बिना और कोई प्रांतीय भाषा भारत की राष्ट्रभाषा बनने का दावा नहीं कर सकती। अतएव दक्षिण भारत में हिन्दी प्रचार का काम राष्ट्र-संघटन के लिहाज से बहुत बड़ा काम है। हिन्दी-प्रचार-समाज की अग्रणी विद्यालय है, अग्रणी पत्रिका है, वह हिन्दी की कई परीक्षाओं की आयोजन करती है और पास होनेवाले विद्यार्थियों को उपाधि देती है। उसका वार्षिक सम्मेलन भी होता है और अबकी उसका तृतीय सम्मेलन या विसुके सम्मेलन ये—श्री देवदास गांधी। अंगरे इस अवसर पर जो भाषण दिया वह बहुत ही विचारणीय उल्गाह-बड़क और सारवर्गित है। अंगरे समा के काम का सिंहावलोकन करते हुए कहा—

‘हम बीसहू बयों में आपको जो सफलता मिली है, उसके लिए मैं आपको बधाई दिये बिना नहीं रह सकता। इस प्रान्त में आप पत्रपत्र नाम्ना नामा के पाम पहुँच सके हैं जिनमें से बार सत्र भाषणियों ने हिन्दी का काम बलाऊ जाल प्राप्त कर लिया है और ठीस हज़ार भाषणी अंगरी परीक्षाओं में बैठे हैं। तुमरी बड़े मार्के की बाज यह देख रहा हूँ कि आपका काम शहरों तक ही सीमित नहीं है बल्कि देहातों में भी फैला हुआ है। गठ व्यवहार की परीक्षाओं के बा सौ पचासी केन्द्रों में दो नौ से अधिक काम हैं।

देवदास जी का यह प्रस्ताव सबसे समझनीय है कि दक्षिण भारत के हिन्दी-प्रणी स्त्री-मुरप उत्तर भारत का दीप दिया करें। हम प्रान्त में दो-तीन मान रह जान में बेबस आपन में प्रेम और अनिष्टता ही नहीं बनी बल्कि हिन्दी भाषा का वह अम्मान हो आयमा जो बरसों हिन्दी-मुरतकें पढ़ने में नहीं प्राप्त हो सकता। अंगरे प्रान्त के मरुर मास-म मरीन नतकक में रहकर अंग-अर बंगला बोलने जयते हैं। अंगरी बोलने का असा अम्मान इम्नेह में हा जाऊ है, बीसा भारत में नहीं हो सकता। हम जो चामने हैं कि दक्षिण की हिन्दी-प्रचार समा के इन काम में प्रयाग का साहित्य-मम्मान या भाषणी-प्रचारणी समा भी हाय बटाएँ और हर मान अंगरे तब से हम-बीन हिन्दी मेवियों को दक्षिण में।

हूमर से हिन्दी प्रचार के विषय में जिनकी प्रचार की ध्याना रचना उन पर अम्मान से अम्मान भरोमा करना है लेकिन मेरे हैं कि प्रांतीय विद्या और नेतामा में अब तक इस विषय में उपाधीनता से काम लिया है। हम यह दावा नहीं करते कि हिन्दी भाषा समुपन है। इसका प्राचीन साहित्य वा जिनगी भी प्राचीन प्रांतीय साहित्य म अंगरी का दावा कर सकता है, लेकिन नवीन साहित्य में अभी हिन्दी कई प्रांतीय भाषाओं से पीछे है। लेकिन हिन्दी का दावा उसके साहित्य के अंग पर नहीं उमरने

व्यापकता और सुबोधता के बल पर है। और इस बात में कोई भी प्रांतीय भाषा उसका सामना नहीं कर सकती। अथवा अन्य प्रांतों में भी उसे वही प्रोत्साहन मिला होता जो बहिष्कृत भाषा में मिला है, तो अब तक हिन्दी का बहुत ध्यान व्यवहार हो गया होता। यदि अन्य प्रांतों में हिन्दी का प्रचार स्कूलों में अनिवार्य रूप से होमे मने तो राष्ट्रभाषा की समस्या आसानी से हल हो जाय।

हिन्दी भाषा का भविष्य कितना उज्ज्वल है और उसके प्रचार से राष्ट्र-भाषा जितनी बसवान हो जायगी इसकी जर्नी आपने इन बहुमूल्य शब्दों में किया—

हिन्दी से भारतवर्ष के हर प्रकार के शत्रु को सच्चा भय है। जिसको सन्देश है जो बड़ बहिष्कृत भारत के हिन्दी काय का निरीक्षण करके अपना सन्देश मिटा सकता है। जहाँ-जहाँ हिन्दी की छाव छाया है वहाँ-वहाँ बाह्य अवाञ्छित शिष्ट पतिष्ठित नागरिक घामीय छोटे-बड़े के भेद टूट पड़े हैं। भाषा के प्रचार के साथ ही साथ एकदम सच्चा ऐक्य स्थापित होने लगा है। भारतवर्ष तो यह है कि एक भाषा का आबोधन इतनी तेर लगाकर क्यों शुरू किया गया। किन्तु अज्ञान भूतकाल पर अकठोर नहीं करता। उसका तो वर्तमान से ही सम्बन्ध है। आप बिस्वास रखें भविष्य उज्ज्वल है।

जनवरी १९३३

## हिन्दी ज्ञान यात्री मण्डल की हिन्दी भाषियों से अपील

हम इस अपील को बड़े हृष से प्रकाशित करते हैं और हिन्दी प्रमियों से अनुरोध करते हैं कि वे हिन्दी ज्ञान यात्री मंडल को प्रोत्साहन दें—

‘जगन्म पत्रह रूप हृष, बहिष्कृत भारत में हिन्दी-प्रचार-आन्दोलन का भी गच्छे हृषा का। इस समय कोई बार ही हिन्दी-केन्द्र है जिनमें अब तक छ बार से भी अधिक स्त्री-मुख्य हिन्दी का अध्ययन कर चुके हैं। इस आन्दोलन की सफलता का साथ भय पूज्य महात्मा जी को है। सम्भव है, यह काम प्रारम्भिक प्रचार की दृष्टि से सतोपजनक प्रतीत हो परन्तु राष्ट्र-भाषा को अन्तर्गत में राष्ट्र जीवन का प्राण समझनेवाले हिन्दी-प्रेमीयण साथ ही इससे तृप्त होने। कहा जाता है, कि हिन्दी-प्रचार-आन्दोलन के प्रधान बी पहलु हैं—राष्ट्रीय और साहित्यिक। बहिष्कृत में इस समय जो हिन्दी-प्रचार हो रहा है वह राष्ट्रीय दृष्टि से मखनीय है। साहित्यिक पहलु पर अब तक कोई ध्यान नहीं बिबा मया है। यही कारण है, इस पत्रह रूप की सम्बी अक्षय में बहिष्कृत-आरतीयों की हिन्दी धोर-मुख प्रवाहमय या मुहाबरेदार नहीं बन सकी। साहित्यिक पहलु पर ध्यान देने के लिए बड़ी उपयुक्त संस्था या व्यक्तियों का निताभत समाण है। इन समय बहिष्कृत भारत

ने हिन्दी की सेवा करनेवाले तीन ही प्रचारकों में उत्तर भारतीयों की संख्या इस-बाद से अधिक नहीं थी। प्रचारकों में हिन्दी की उच्च योग्यता रखनेवालों की संख्या भी अनुभवों पर मिलने योग्य है। सबसे बड़े खेती की बात यह है कि न उत्तर भारत के लिखित एवं उल्लाही नमूनों में इस घोर ध्यान दिया और न मानवबोध साहित्य सेवियों में ही रचिणियों पर क्या वृष्टि रखी। हिन्दी भाषियों को राज-भाषा के प्रचार की प्रतिभाया छ ही नहीं अपितु अपनी 'मातृ-भाषा की प्रीतिरता को प्रभुत्व बनाये रखने के विचार से भी रचिणियों का साथ देना आवश्यक है। अन्ति के इस युग में उन्हें उदत्त रहकर अपनी मातृ भाषा को सम्भाव्य बलिध्यान की गति-विधि पर क्रियात्मक विचार न करना देश के लिए बड़ा हानिकारक है।

'अन्वय' लेखक — इस धारणा के अनुसार न्यूनता को बचायक्ति दूर करने की वृत्ति से सन् १९११ ई० को 'हिन्दी-ज्ञान-धारी-मण्डल' नामक आचार्यों की एक संस्था स्थापित की गयी। हिन्दी प्रचारक विद्यालय मद्रास के प्रिन्सिपल एवं हुपीकेना समी की महोदय इस संस्था के अध्यक्ष चुने गये जो अद्यापि उन स्थान की सोना बड़ा रहे हैं। आप रचिण्य न हिन्दी साहित्य के बड़े पक्षपाती हैं और आपके द्वारा कुछ प्रोत्साहन से ही प्रति रूप कुछ हिन्दी-प्रमी हिन्दी साहित्य सम्मेलन की परीक्षाएँ दे रहे हैं। आपके द्वारा मण्डल को बहुत से हिन्दी-साहित्य-सेवियों की प्रशासनीय उपायों का परिचय मिला है। पूज्य धारणा द्विवेदी जी महाराज ने हमारी इस आयोजना को बड़ा ही रमापनीय एवं समर्थित करने की कृपा की है। हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन प्रयाग तथा एकादश अन्य हिन्दी संस्थाएँ भी हमें यथोचित सहायता देनेवाली हैं। काठौ की मातृ प्रचारिणी समिति ने अपने असीम कुछ रचिणीय विचारों की विशेष रूप न पढ़ाने का विचार किया है। इसके अतिरिक्त एक श्री बन्धु श्यामसुन्दरदास जी बाबू प्रमोद जी भीनासिंह जी परिशत हरिनाथ उपाध्याय जी परिशत रामचन्द्र त्रिपाठी जी प्रोफेसर रामदास जी बीड़ परिशत हरिचन्द्र जी समी प्रोफेसर इन्द्र जी श्री मोहनलाल 'महोती बियौली' एवं माधनलाल जी बतुर्वेदी आदि महानुभावों ने मंडल के उद्देश्यों की पूर्ति में महत्वपूर्ण करने का बचन दिया है। विशेष रूप की बात यह है कि बाबू संवय लाल जी प्रधान एम ए की कृपा से प्रयाग-महिमा-विद्यापीठ में रचिण्य मातृ संस्थायों के संकायकों को समझे समर्थित उपायों के लिए अपना हार्दिक ब्ययन प्रयत्न करते हैं। हम प्रतिशत रूप से कम से मद्रासी मुक्तों को निःशुल्क शिक्षण प्राप्त या शिक्षण के रूप में प्राप्त देनासे हिन्दी भाषा तथा हिन्दी संस्थाओं की अत्यधिक उपरपत्ता है। क्योंकि इन समय यहाँ शिक्षकों को महार किन्तु निम्न हिन्दी प्रेमी हैं जो न रितों से उत्तर भारत में ही रह कर हिन्दी की उच्च शिक्षा प्राप्त करना चाहते हैं। प्रचार-साधन का बलिध्यान है और उनकी उद्योग के लिए रितों

काम से काम करनेवालों की सख्या भी काफी है, परन्तु इन सबके राष्ट्र-सेवकों को ज्ञान प्राप्त देनेवालों की सख्या अभी सम्तोपजनक नहीं है। अतः शिक्षित हिन्दी-भाषियों से हमारा अनुरोध है कि आप लोग बखिख में हिन्दी-भाषा के 'साहित्यिक प्रचार' को प्रागे बढ़ानेवाले इस आन्दोलन की सहायता करें।

१ अप्रैल १९३३

## हिंदुस्तानी एकाडेमी

हमारी संस्थाओं में जहाँ रुपये-पैसे की बात आ जाती है, वहाँ कार्य-कर्त्तियों में माका-फूटोबल होने लगता है। एक बल चाहता है कि यह सारे रुपये हमारे मित्रों और सहयोगियों को मिल जायें। दूसरा बल अपनी तरफ खींचता है। जिस बल की हार हो जाती है वह गुन मपाड़ा मचाना शुरू करता है और उस संस्था में और उसके किम्मेदार कार्यकर्त्तियों में ताना प्रकार के मचाव और कल्पनिक बाप निकालने लगता है। अतः वह कुछ विषयी होता और परत भी काम-भूँछ न हिमाता। एक संस्था पूर्ववत् निर्वोच होती। मगर जबकि रकियाँ बाँटने का अधिकार उसके हाथ में नहीं है, इसलिए उसे उस संस्था में ऐक ही ऐक मचर आने लगते हैं। हिन्दुस्तानी एकाडेमी भी उसी तरह की संस्था है। जो काम प्रायः एक कोई न कर सका और वह हरेक को कुरत रखना है, वह एकाडेमी करना भी चाहे, तो नहीं कर सकती। हमम इस विषय का राय साहब श्यामसुन्दरदास का पत्र और श्रीमन्त ताराचन्द्र मंत्री द्वारा दिया गया अबाब दोनों ध्यान से पढ़े और हमें वही ज्ञान पड़ा कि राय साहब की आलोचना कुछ उसी तरह है वही हरेक संस्था के विषय में की जा सकती है। जिस संस्था के राय साहब कुछ कर्त्त-कर्त्ता है और जिसे वह प्रायतः संस्था समझते होंगे उसके विषय में इससे कहीं कहीं आलोचना की जा सकती है। हाँ यदि रायसाहब ने ऐसे उदाहरण दिये होते कि एकाडेमी की कार्यकारिणी कमेटी ने साहित्य-कमेटी की सम्मति के बिना अमुक सेवा को पुरस्कार दिया अमुक बाहिमत किताब छपवाने अमुक व्यय का व्याख्यान दिलवाना वी एक बात होती पर अपनी आलोचना में ऐसा कोई उदाहरण नहीं मिलता। रही यह बात कि एकाडेमी सर्वप्रिय नहीं है, उसकी पुस्तकों की और पत्रिकाओं की अथवा किसी नहीं होती यह अकर बेजा सिद्धायत है। मरुति एक सरकारी या अर्ध सरकारी संस्था होने के नाते एकाडेमी को यह सर्वप्रियता तो प्राप्त नहीं हो सकती जो दूसरी साहित्यिक संस्थाओं को प्राप्त है, किन्तु भी हमारा यह ज्ञान है कि एकाडेमी अतः उद्योग करे और अपने आर्थिक पानीरुत से काम से तो उसकी प्रकाशित वस्तुओं की खपत ज्यादा हो सकती है। अतः हमारी विषय की पुस्तकों कहीं मरुत असेवियों की तरह विक्रयी है और कौन-वी मनीर पत्रिका

नऊ पर बसती है ? अगर नऊ का ख्याल किया जाय तो प्राय ही में धस्ती पत्रिकाएँ बन कर देनी पड़ेगी । और एकादमी कोई बुराज नहीं है !

१० अप्रैल १९३३

## तिमाही या त्रैमासिक

एत रविवार को हिन्दुस्तानी एकेडेमी के जसस में त्रिमाही शब्द पर बड़ी मनो रंजक बहस हुई । बाबू ख्यामगुम्बरबास का पक्ष था 'त्रिमाही पत्रिका' यगा और मदान का खोड़ है । एक मुसलमान साहब 'त्रिमाही' शब्द की ही टक्काम बाहर बतला रह्ये और इसकी जगह 'सिद्दमाही' रखना चाहते थे । इन महानुमाबा को धमी ठक यह नहीं मान्य कि हिन्दुस्तानी एकेडेमी हिन्दी या उर्दू एकेडेमी नहीं है । उनका नाम ही बतला रहा है कि उसे संस्कृत या फारसी से बिलेप प्रेम नहीं है । उसका एक उद्देश्य एण्ड-भाषा का निर्माद्य है और यह ठभी हो सकता है, जब हम हिन्दी और फारसी का मोह छोड़कर कुल मन से हरन भाषा के प्रचलित शब्दा को धपनायें । हिन्दी के लिए भागते-प्रचारिणी समा और उर्दू के लिए धंनुमन-उरफिए उर्दू है । 'उचित मनाचार और 'बाप्यपाव' पत्रिका को मुबारक हो जनता को तो धपना 'तार और रतगानी ही पमन्द है ।

१३ नवम्बर १९३३

## एक हिन्दी-साहित्य विद्यालय की जरूरत

जब से मद्रास-ग्रान्ठ में हिन्दी का प्रचार बढने लगा है वहाँ से मैकनों दुबक हिन्दी साहित्य का ज्ञान बढाने के लिए इलाहाबाद और काशी में धाने मने है मरिन बड़ी तेजी कोई सस्था मही है, जो उन्हें धाधय हे सके । काशी में दीन-साहित्य-विद्यालय है पर बिची तरक से कोई महापठा न पाने के कारण उनकी बसा मुष्यबस्थित नहीं है उनके मंचानक दयाबज्जा धगना कुछ समय देते है और जो कुछ बगते है वह भी गमीमत है । हिन्दी प्रचार का टीका कुछ उन्हे तो लिया मही है कि धारा धामिन उन्ही पर रन दिया जान । इलाहाबाद का हिन्दी विद्यापीठ भी कुछ इसी धारा में है । दुनिबनियों के साहित्य-उद्योग का प्रबन्ध है पर उनम ऐसे विद्यार्थी क्या लाभ उठा सकते है । बर तो दुनिबनियों के छात्रों ही के लिए है । जरूरत एक विद्यालय की है, जिनम नियमित रूप से शिक्षा दी जाय हिन्दी के विज्ञान धप्यारक हों और छात्रों के रूठन का भी प्रग्य हो । धम-दीध छात्र बतियाँ भी हों ता और भी धग्धा । हमारे यहाँ धान दिन हाई स्कुल गमते रहते है, जिनकी धब न कोई जरूरत है न कोई उपयोगिता । क्या ही

सम्झा हो कि किसी विद्याशाली का ध्यान इतर छात्रों का हो जाय । अगर ऐसी-साहित्य सम्मेलन में यह प्रश्न उठाया जाय और ऐसे विद्यालयों की अकरत विद्यापी जाय तर्कसम्बद्ध है धनिकों को ध्यान हो । अगर इस तरह का कोई विद्यालय हिन्दू-बिस्व-विद्यालय में खोला जाय तो एक बहुत बड़ी कमी पूरी हो जाय । क्या यह सम्झा की बात नहीं है कि हिन्दू के प्रधान केन्द्र में एक भी ऐसा हिन्दू विद्यालय न हो जहाँ हिन्दू-साहित्य की ऊँची पढ़ाई हो सके ? और हिन्दू को हम राष्ट्र-भाषा बनाना चाहते हैं । प्रथम प्राप्ति में हिन्दू से जो बच पैदा हो गयी है, यदि हमारी अकर्मण्यता से वह ठीकी पड़ गयी तो फिर राष्ट्र भाषा का स्वप्न बहुत दिनों के लिए भंग हो जायगा ।

२५ दिसम्बर १९३३

## लेडी अब्दुल कादिर का राष्ट्र-भाषा प्रेम

जुदा मजा करे सेडी अब्दुल कादिर का जिन्होंने कमकता में महिला सम्मेलन का नियमन करते हुए इस बात पर जोर दिया कि भारत में राष्ट्र-भाषा का प्रचार होना चाहिए । हम आपके इस कथन से पूरी तरह सहमत हैं कि हरेक प्रांत में राष्ट्र-भाषा अर्थात् हिन्दुस्तानी की पाठ्य-क्रम में आवश्यक बना दी जाय । आपने अपना भाषण उच्च में लिखा था पर वहाँ उच्च सम्मन्नेवाली बहुत कम महिलाएँ थीं इसीलिए आपको उसका अनुवाद करना पडा । भारत के अधिकांश भागों में हिन्दुस्तानी बोली और समझी जाती है, उच्च में लिखी जाय या हिन्दी में । मद्रास में उसका प्रचार हो रहा है । मैसूर में भी शुरू हो गया है । अगल धनी तक पुस्तक पर हाथ नहीं फैरने देता हालांकि बंगाल के कई विद्यालय हिन्दी के प्रसिद्ध विद्यालय और लेखक हैं । 'भाषा' नाम की पत्रिका के सम्पादक बंगाली सम्जन हैं । कई बंगाली लेखिका भी हिन्दी की कुशल लेखिकाएँ हैं जिनमें श्रीमती अया मिश्र का नाम उल्लेखनीय है । उनके गल्प खेटी की पत्रिकाओं की शोभा बढ़ाते हैं । अब तक एक राष्ट्र-भाषा नहीं बन जाती तब तक एक राष्ट्र कैसे बने ।

१ जनवरी १९३४

## काश्मीर की एसेम्बली में उद्घोष

काश्मीर में नयी व्यवस्थापिका की जो योजना प्रकाशित हुई है उसमें अमीरों और महाजनों के लिए विशेष निर्वाचन नहीं रखा गया है और यहाँ अंग्रेजी सरकार अमीरों की रक्षा के लिए एक द्वितीय सभा आवश्यक समझ रही है । यह कौन नहीं जानता कि निर्वाचन में अधिकतर अमीर और जनमान ही कामयाब होते हैं, इसलिए



इन समुदायों के लिए विशेष निर्वाचन की व्यवस्था वास्तव में उन्हें दोहरा निर्वाचन देना है। इसके साथ ही काश्मीर-बखार में बहुमत का धारण करके वहाँ की व्यवस्थापिका तथा की सारी कार्यवाही उन्हीं में करने का निश्चय किया है। एसेम्बली के मेम्बरों के लिए उन्हीं का ज्ञान आवश्यक रखा गया है। उन्हीं काश्मीर के मुसलमानों की भाषा होना ही चाहिए। लेकिन उन्हीं उन्हीं से प्रेम है। भारत सरकार ने उनके भावों का धारण करके बड़ी किया है, जो उन्हें करना चाहिए था। हमारी व्यवस्थापिका समुदायों में क्यों बहुमत की भाषा का प्रचार नहीं किया जाता? यहाँ क्यों सारी कार्यवाही अंग्रेजी में की जाती है।

२६ जनवरी १९३४

## तेईसवें हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन पर एक दृष्टिपात

उत्कल-गठन की राजधानी बिस्नी नगर का बहुमापित सम्मेलन प्रतिबन्ध के समान मार्गक समान हो गया। एक साधु और वेनी दृष्टिवाला दसक सम्मेलन के चार दिनों की कार्यवाही को देखकर सच्चा यह कहना चाहता कि 'निराकार परमात्मा अब साक्षात् होते हैं' तक शायद संसार के ईश्वरवाकियों को एसी ही निरस्तता हुआ करती है। सम्मेलन पर शायद ही कुछ टिप्पणी में इतना लिख देना ठीक हीना। घाने की बौद्धिकता उसको अभावित कार्यवाही की अतिरिक्तता पर लिखी जायेगी क्योंकि सम्मेलन के लिए हिन्दी-संसार के हृदय में पहुँचे हैं वे बहुतेरी पारखार्ण भी जाँचें तो हस्तास्पर मानुस हस्ती की परन्तु प्रायः कम पाठोपी-हाउस प्रतिनिधियों की हाहू-हीरी से हृदय और भीरे भीरे रिक्त हो रहा है, तक बिबेटी जाती प्रदर्शनी की पुस्तकों से उनकी व भासंकार्य बोमठी-सी प्रतीत हो रही है। जो कुछ भी हो सम्मेलन हो गया बहुतेर प्रस्ताव स्वीकृत कर लिये गये परिपरे हो गयीं—मानी बिस्न कमर गये। इतना ता धरकर है कि इन सब सम्मेलन की आत्मा की भूख नाचक-नाचिकाओं के रूप की मूय व भी सबकी बुधा में मरकड़ा कर उठती हुए राष्ट्र को जाग्रत करती हुई आत्मा की। सम्मेलन का प्रत्येक प्रतिनिधि जो इस युग में रहता है, चाहता था कि जसो से जसो हिन्दी धारे भारत की भाषा बन जाय। सम्मेलन में चार दिन तक गैर जसादर, पून बरमाकर और अयकनाम या-यादर हमें यह सुझाने की श्रेष्ठ की कि शीघ्र से शीघ्र हिन्दी की उपरति कर ले प्रत्येक भारतवासी के हृदय मन-अरिठक की अतिरिक्तता का प्रभावशाली माध्यम बन जाय। अस्तु, सम्मेलन के प्रति रिक्त के विरुद्ध बर्षान समानाचार जनों में प्रकटित हो रहे हैं परन्तु 'जापरख के पाठकों को धारण देखा इतिवृत्त—धीन वर भी शान्ति से लिखा हुआ—अधिक जगया।

८ अप्रैल, १९३४

## प्रथम दिवस

यके हुए प्रतिनिधियों और अध्यक्षताय वर्यों के साथ सूचनानुसार बुजुस निकला । जेसा कि प्रबल मन्त्री भी पत्तुमास भी का कपन या बुजुस का सरेस्य नयर की मुस्य-मुस्य सङ्को पर बुम-बाप कर प्रवशिनी के सद्वात्म समारोह को समारोहपूख बनाता बा । कबिबर प्रयोध्यासिह भी सपाम्याय 'हरिप्रौष' ने प्रवशिनी का सद्वाटन किया । उद्घाटन के पूर्व उनके मापख ने वही मनोरंजन किया वही एक तरह से लोगों के मन में 'प्रथिक उपदेश' की भावमाएँ भी पसा कर दीं । प्रवशिनी न तो झूमर का बुक-स्टान ही थी न हिन्दी पुस्तक एजेन्सी की बुकान हो । वह एक छोटा-मोटा संप्रहामय-सा बा जितने सन्ने हिन्दी संसार की बाँकीं उतनी न कोमीं जितना उसने पुस्तक प्रकाशकों का जिज्ञापन और लेखकों के मन की नीरखपूख प्रतंसा का बालारख किया । प्रोबनोतर, विपय निर्वाचनी की बैठक हुई । इस बैठक में वह जोर दिखता बा जो प्रोबनोपउल किन्ही प्रस्ताव को बनाने में प्रकट होता है । प्रस्तावों के निर्माण और उनकी स्वीकृति के बाब मुख्य सम्मेलन का प्रबिबेशन प्रारम्भ हुआ । जैसे संभव है कि केसरिये रंग से रंगी हुई साक्षिनी पहले हुए बासिकाधों का संयन मान उन स्वयंसेवकों को न मोह सका हो जो पास देखने में उतना ही उस्ताह दिखत रहे वे जितना उस्ताह एक सार्बन्ट बारष्ट दिखाने में प्रकट करता है । पकान में लगी हुई विपय सभापतियों की लसवीरें पीने-पीटे सचर्य में लिके हुए भावस बाक्य और प्रतिनिधियों विशिष्ट ब्यक्तियों के झुठों-कोटों पर लने हुए बाल-बासमानी पूल सच कीई मानों मुस्य-सा हो उठे । एक निरुस्तावामी दयक की उपस्थित देखकर यह माने ही प्रतीत हो कि मुख्य प्रबिबेशन प्रांतीय प्रबिबेशनों से भी अया-बीठा होखता बा परन्तु सभापति स्वागताध्यक्ष प्रादि के सन्देशबाहक मापख यह बता रहे वे कि सम्मेलन भारत की एक सन्धी और सुगादीव इच्छा को प्रकट कर रहा है । भीमान् बड़ीया नयेस का एक सिपि के प्रयोग का निर्बैठ भीमान् बनरयामबाब जिङला का हिन्दी को ब्यापक बनाने का प्रबिठ परीचा-बिमान की भी बुद्धि के साक-साक सम्मेलन की कथा बुद्धि के समान्बार ब्याल बेने मोब्ब बे । शाम को भी बोपहर की प्रीति विपय निर्वाचनी की बैठक हुई । रात के ब्याह बने एक प्रस्तावों का निर्माण होता और उनकी स्वीकृति होती रही ।

२ अप्रैल १९३४

## दूसरा दिन

प्रातःकास डेढ़ बँटा बेरकर साक्षिय-परिपत् का प्रबिबेशन हुआ । सभापति भी माबनमान भी बतुर्वेदी के मापख ने साक्षिय और राष्ट्रीय भीजन के बाब्योम्य सत्तरबासित्



परम सम्मेलन में श्रीमती रत्नकुमारी देवी का 'संदेश' नामक काव्य के अतिरिक्त ऐसा मासूम होता था कि साहित्यिक पहलवानों को खासी घाबाड़ा मिल गया हो। मध्याह्न को सबदानुसार विषय-निर्वाचनों की बैठक हुई। शाम की मुख्य अतिथिगत में प्रस्तावों की स्वीकृति के साथ-साथ शुक्रेश बिहारी मिश्र अतुरसेन शास्त्री आदि के शास्त्रीय और समीक भाषण हुए। पाँच बाल के फंड की योजना का महत्वपूर्ण प्रस्ताव स्वीकृत हुआ और ईश्वर का धारमण्य भी स्वीकार किया गया। रात्रि की श्रीमहादेवी जी बर्मा एम ए के समा-नेतृत्व में कवि-सम्मेलन हुआ। कवि-सम्मेलन में अनेक कवि से और प्रायः तीन बार हजार अमता उपस्थित थी। श्रीमंत बचन साहसीप्रसाद सेठी (ईश्वर) रात्रिकुमारी चौहान आदि की कवितारें सुन्दर थी। बाकी जो कवि धाम बगला के द्वारा पद्यों तरह 'हुट' किये गये। रात्रि के अंश बने तक कवि-सम्मेलन होता रहा।

इस प्रकार सम्मेलन सफल समाप्त हुआ। स्वागत-कारिणी के प्रबंध कर्तव्यों का प्रबंध प्रतिसाधुत था। सम्मेलन की ठीकरियाँ भी ठीक थी। यह बात धुमरी है, कि पास ही के राबल सिनेमा में अधिक भीड़ रहती थी। हिन्दी-प्रेमी-भाषी इस की उपस्थिति से विन्नी सम्मेलन के आडिभ्यन्त की महत्ता बटती नहीं। परन्तु बहुत बड़ जाती है।

२ अप्रैल १९३४

## वे-राष्ट्र-भाषा का राष्ट्र

कोई समय का जब धम की एकता ही मनुष्यों के एकीकरण का मुख्य कारण थी और एक बर्मे के माननेवाले बहुधा सामाजिक और सांस्कृतिक बातों में भी एक ही बात थे। तमात्र और संस्कृति जीवन और दृष्टिकोण सभी का उद्गम बम था। सिक्किम नहीं जापुति में बम की उस अंशे स्वान से हटा दिया और उसकी बगल पर बिन ध्यवस्वाम्यों की बिठाया उनमें जाया धमर मुख्य नहीं है, तो फिन्नी से पाँच भी नहीं है। धाम हरेक कौम की अपनी एक भाषा है। अमेरिका की कौमी बवान रकने पर भी दो कौम हैं। बन्किन अमेरिका में कई कौम स्पेनी और पुर्तगाली जाया बोलती है फिर भी वे धमय-धमय राष्ट्र हैं। राष्ट्रों के निर्माण में भौगोलिक परिस्थितियाँ ही मुख्य हो गयी हैं धमर भाषा भी उन्हीं भौगोलिक परिस्थितियों से बनती है। एक साथ इनके के राष्ट्र बाने एक साथ बवान बना सेते हैं या यों नहीं कि कुछ प्राकृतिक शक्तियाँ साथ ही धाम उनकी एक साथ बवान बना देती हैं। इस लिहाज से कभी कभी बम-रस पाँच-पाँच कौम में बोलती बधस जाती है। बिकिन बोधा बहुत धमय होते हुए भी इन बोलियों में कुछ समानता रहती है और बड़ी समानता एक देगी जाया क बप से बनटिन हो जाती है। निजम साहित्य की रचना होने लगती है और बड़ी समय पाकर उन प्राप्त या देश की कौमी

कबान बन जाती है। धाम विहार मंगुल प्रदेश पचास सालोंका भी पी राजपूताना के  
 धारि प्रांतों की बोनियों में काफी धरत होते हुए भी हिन्दी अपनी मातृमीमिका के  
 धारण इन प्रांतों की साम्य बनी हुई है। हम अपने काम इसाके के बाहर  
 बालों व बासचौत या पत्र व्यवहार करन में हिन्दी का ही व्यवहार करते हैं। अगर उद्द  
 को भी हिन्दी में लिखा गया थाय—क्योंकि जहाँ तक बोनी का सम्बन्ध है इन दोनों  
 मापाओं में कोई धरत नहीं—तो हिन्दी बोसगबालों की संख्या पन्द्रह करोड से कम  
 नहीं है और समयमेबालों की संख्या तो इतने नहीं क्या है। धारण है कि धामी  
 तक वह क्यों बीभी खदान नहीं बन गयो। कुछ दिन पहले तक तो धम्य प्रांतीय मापाएँ  
 अपने जगत साहित्य के बल पर यह स्थान बने का दावा करती थी लेकिन धनुसब ने  
 धम यह निड कर दिया है कि हिन्दी ही में यह जगत है कि बहुकीमी खदान बन मक।  
 बात यह है कि धामी तक हमने इन विषय की धीर ध्यान नहीं किया। दृष्टिगत भाग में  
 हिन्दी-प्रचार का काम औरों से हो रहा है। धरत धीर प्रांता में भी प्रचार किया जा  
 सकता तो धम तक मंत्रिम हमारी धामों के धामने होती लेकिन धम तक हमारी  
 शोधित पठिचाओं तक ही बन्द रही। इस लेख में धा सक्ताएँ काम कर रही हैं उन्हाने  
 साहित्य-निर्माथ का काम हाय में लिया जिसमें उन्हे बिसधुन सफलता नहीं हुई  
 क्योंकि वे साहित्य-सुरधार नहीं बनाया करती या पुराने कवियों के धम्या व धोत्रने में  
 मधम धीर शक्ति का धुरपयोग किया थाकि जिस तरह का साहित्य वे करे। म तिकाय  
 मके वह धाबकम की जगहों को पुरा नहीं करता। हिन्दी उद्द का धरत का मगडा  
 धनबता धडा कर दिया गया। जकरत भी कि जिस तरह दृष्टि में हिन्दी प्रचार का  
 धाम ही रहा है, उनी तरह धम्य प्रांतों में भी होता। धीर सबसे बड़ी जकरत इन बात  
 को भी कि हमारा राष्ट्रमात्रा परिपद् होता जिसकी हरेक प्रांत में शात होती। उन  
 परिपद् में हम प्रथक प्रांत के साहित्यिक धरारबिया का निर्माथ कर मकते धीर  
 साहित्य का निर्माथ भी कर सकते धीर उनकी सलाह धीर सहयोग से राष्ट्रमात्रा का  
 प्रचार ही न बकते बकि राष्ट्र साहित्य का निर्माथ भी कर सकते। राष्ट्र के लिए राष्ट्र  
 भाषा तिकरी बकरी है, उठना ही बकरी राष्ट्र-साहित्य भी है। धीर साहित्य मंगुठि  
 का एक प्रवाल धंग है। पहले इन तरह के परिपद् की जकरत न समयमे जा रगे हो  
 है कि जब तक हम धम्य मापात्रा के सन्ध्याओं की हिन्दी में धामे का निर्वाण न  
 धीर हमारे धरों एने सम्मेजन न होंय त्रिममें सभी मापात्रा क मजक धीर बिडा  
 हों धीर धामे धनुसब धीर प्रतिभा में एक हमारे का प्रभावित करें, हम राष्ट्र क  
 न कर मकने। धामी तक हमारे धरों जो कुछ है वह प्रांतीय है, उन पर र  
 नहीं है। हम एच का धुर करने क लिए हमें सोध हो ऐसा धायोत्रन क  
 भारत की साहित्यिक प्रतिभा को एरविन कर सकें। हमें विरधान

साहित्यकार गृही से हमसे सहयोग करेंगे क्योंकि राष्ट्रभाषा में मिलकर वे अपने विचार क्षेत्र को कहीं व्यापक बना सकेंगे। जब हमारी राष्ट्र भाषा होनी हमारा राष्ट्र-साहित्य होगा तभी अन्तर्राष्ट्रीय भाषाओं की अन्तर्गत में हमें स्थान मिल सकेगा। मद्रास के हिमाचल पत्र विद्यार्थी म एक बंगाली विद्वान् ने इसी विषय पर अपने विचारों को प्रकट करते हुए कहा है—

प्रांतीय भाषाएँ अपनी-अपनी विशेष रचना सीसी पर बनती हैं। इसमें कोई हानि भी नहीं। लेकिन हम कभी अपनी राष्ट्र-संस्कृति में उत्पन्न कर सकेंगे जो प्रांतीय संस्कृति से प्राप्त हो जब तक हम देश के जुने हुए साहित्यिक रचयिताओं की सहाय, दायित्व और प्रकाशन न मिले। वही लोग कदा के ऊँचे आदर्श हमारे सामने रख सकते हैं।

महात्मा सहाय बड़ीरा ने अपने भाषण में धारि से अल्प एक इसी बात पर जोर दिया कि हिन्दी को क्यों और कैसे राष्ट्र भाषा बनना चाहिए। महात्मा सहाय ने हिन्दी को अपने राज्य की सरकारी भाषा का स्थान दिया है। इसलिए उनका कथन और भी महत्व रखता है। लेकिन हम धार क इस अर्थ से सहमत नहीं हैं कि हिन्दी केवल सामान्य भाषा के रूप में ही राष्ट्र भाषा हो सकती है। विद्वान् सेनाक अपनी प्रांतीय भाषा को प्रोत्साहन देना ही सिद्ध करना न पसन्द करते। लेकिन जिसमें लिखने की प्रवृत्ति है, उसके लिए कदा कोई कठोरता नहीं हो सकती। हिन्दी के ही सरल भाषा को अपना सेवा विद्वानों के लिए केवल दिनों की बात है। जब उन्हें हिन्दी द्वारा विस्तीर्ण क्षेत्र मिलेगा तो वे प्रांतीय भाषाओं में लिखने पर भी अपनी अपनी से अपनी रचनाएँ हिन्दी में भी करेंगे। जिस तरह योरोप में प्रवेश पान के लिए किसी रचना कर अंग्रेजी या फ्रेंच में करना आवश्यक है, वही तरह भारत की जनता के सामने आने के लिए एक हिन्दी में लिखना आवश्यक हो जायगा लेकिन अन्तर्गत बोधी देश के लिए मान भी है कि सर्वप्रथम बाएँ को अपनी भाषा का मोह हिन्दी में न लिखने देना तो भी उन विद्वानों के उत्सर्ग और परामर्श से काम तो उठाना ही जा सकता है। ऐसे सम्मेलनों से प्रत्यक्ष काम लिखना होता है, उसके कभी व्यापक अर्थवत्त काम होता है, जिससे विचारों में प्रवृत्ति आ जाती है, बुद्धिबोध बढत जाता है, और ऐसे संबंध पैदा हो जाते हैं, जिनके सामने प्रांतीय दुर्भावनाएँ धार ही धार मिट जाती हैं।

हालांकि संसार में भारत ही एक ऐसा देश है, जिसकी अपनी कीनी जवान नहीं है। धार एक अन्तर्गत केन्द्रिय शासन के सिवा हमें एकता में जीवनेवाली क्या चीज है? हम में शक्ति नहीं वह भी राष्ट्र भाषा ही हो सकती है।

६ अप्रैल १९३४

## हिन्दी का दावा

किसी राष्ट्र को बनाने के लिए संस्कृति की समागता जरूरी होती है। माया और साहित्य संस्कृति का मुख्य धर्म है। जब तक एक माया और एक साहित्य न हो एक राष्ट्र की कल्पना नहीं हो सकती। जब तक कौम में अपने विचारों के फैलाने की कोई एक माया न हो वह कौम नहीं कहला सकती। भारत में कई सम्प्रदाय प्रांतीय मायाया के होते हुए इन जो हिन्दी को राष्ट्र माया का स्थान देना चाहते हैं वह इन लिए कि वह भारत में अधिकतर समझी जाती है और किसी प्रान्त में उसको धारण के सिवाया जा सकता है। बंगला बहुत सम्पन्न प्राण है, लेकिन बंगाल के बाहर उसे कोई सम्पन्न नहीं करता। यही हाल मराठी मराठी और अन्य प्राणियों का है। हिन्दी ही एक ऐसी माया है, जो सारे भारत में फैली हुई है। दक्षिण में बेशक उसकी पहुँच नहीं थी लेकिन यह हिन्दी प्रचार धार्मिक ने बड़ी भी उसके समझने और बोझनाये भाषों की धारा में देना कर लिये है। इसमें संदेह नहीं कि राष्ट्र माया हिन्दी हमारी इस प्रांतीय हिन्दी के रूप से बहुत कुछ मिलेगी। उसमें सभी प्रांतीय प्राणियों के शब्द और मुहावरों मिले होंगे और वह हिन्दी व्याकरण के नियमों को भी कभी-कभी तोड़ दिया करती। उस देश में उसका रूप कुछ-कुछ मेटा और दिल्ली की प्रचलित माया से मिलता होगा। उसे हिन्दी कहो या उर्दू, धन्तर बोझने में बहुत कम भेद मिलने में होगा। इस विषय में सहयोगी बनना चाहता है—

उसके विषय में इतना कह देना काफी है कि उर्दू और हिन्दी प्राण के रूप में एक समाग है। लिपि का बदलना है, परन्तु लिपि का निखर तो सीखनेवाने की हृदय से ही होना। जो लिपि भारत में अधिकतर प्राणों में धारण की है सीखो या सीखनी बही राष्ट्र लिपि बन जायगी। कुछ समय के लिए दोनों ही लिपियाँ साथ-साथ ही रह सकती हैं। यही कारण है कि हिन्दी के हिमायती कभी यह माँग पेश नहीं करते कि किसी स्थान पर उर्दू को निर्वासित करके हिन्दी को स्थान दिया जाय। वह तो बही चाहते हैं कि जहाँ कभी हिन्दी को स्थान नहीं मिला वहाँ उसका माय खोल दिया जाय।

२३ अगस्त १९३४

## उपभाषाओं का उद्धार

एवं यह सोचकर धारण भी हुआ और तब भी लिपि नहीं वहीं प्राणों की उप भाषाओं में जान डालना का प्रयत्न किया जा रहा है। अपनी ब्रह्मभाषा बुद्धिमत्ता ही और अन्य भाषाओं को प्राण हिन्दी में शामिल समझी जाती है और इन भाषाओं के प्राण धारण तो साहित्य मौजूद है। अपनी ही ब्रह्मभाषाओं का तो क्या बहना। हिन्दी साहित्य

॥ उपभाषाओं का उद्धार ॥

में जो कुछ है वह वहीं दोनों उपभाषाओं में है। तो क्या यह भ्रंश है कि बोलियों की साहित्य का रूप दिया जाय ? बोलियों में जो कुछ साहित्य है, वह धाम नीतों में रचरचित है और धाम नीत एकत्र करने से धरम जन बोलियों की रक्षा हो सकती है तो हम इस धामनोत्थन के साथ हैं। लेकिन यह क्याल कमाना कि जोअपुरी तिहुती और प्राप्त की एक ही एक बोलियों में साहित्य की रचना की जाय और उसके पत्र निक्कलें शक्ति के धरमधरम के सिवा कुछ नहीं है। पण्डित करीब धारणी जिम धाया को बोसते समझते और लिखते हैं, वह तो धनी साहित्य नहीं बना सकी उपभाषाएँ वह धमत्कार जैसे कर लिखावैनी जिनके बोलने और समझनेवाले भाषाओं ही एक एक बने हैं।

२३ अप्रैल १९२४

## हिन्दी उर्दू और हिन्दोस्तानी

ऊपर लिखे हुए नाम से प्रयाग की हिन्दोस्तानी एकेडमी ने एक न पत्रलिहू की धर्मा का यह भाषण पुस्तक-रूप में प्रकाशित किया है, जो उन्होंने मार्च २२ न एकेडमी में दिया था। धर्मा जी हिन्दी और संसृष्ट के ही नहीं फारसी और उर्दू के भी प्रकांड पंडित से और उनका भाषण जितने जोर और परिधम से लिखा गया है उतना ही मनोरंजक भी है। धारणे पहले नाम से यह लिखाया है कि हमारी भाषा का पुराना नाम हिन्दी था और धमीरकुसरो के बक्त तक 'उर्दू' का प्रयोग ही न हुआ था। धमीरकुसरो ने 'खालक बापे में धार-धार 'हिन्दी' या 'हिन्दवी' शब्द का प्रयोग किया है। कवि 'मीर के बसाने में 'रेकता शब्द का व्यवहार शुरू हुआ। 'उर्दू' शब्द का व्यवहार धारकुसी धरी से पहले कहीं नहीं पाया जाता। धारम इसका कारण यह है कि उस बक्त हिन्दी में फारसी और धरबी के शब्द इतनी कसरत से न धामे थे। धर फारसी और धरबी शब्दों की बूब धरमार हो गयी थी हिन्दी के दो निम-निम रूप हो गये और धर एक बही नाम धसा धाठा है। हिन्दुस्तानी शब्द का व्यवहार धंधेजी रजकाम में शुरू हुआ है और धर यह उम निमी-नुमी भाषा का पर्याय है, जो जन भाषारण की भाषा है और जिसमें फारसी-धरबी के बहू समो शब्द बड़ल्ले से प्रकुष्ठ हाठ जाते हैं जो धाम ठीर पर बोले जाते हैं। उसका सबसे गवा भाष राष्ट्र-भाषा हो गया है।

फारसी लिपि का प्रचार तो उठी बक्त से हो गया जब धूमधमानों का भारत पर धरिफार हुआ। शही धर्मान पत्र-व्यवहार धाधि और धारा धधानती काम फारसी लिपि में होता था। पडे-मिसे हिन्दुधों को भी फारसी नीमनी पढ़ती थी और जिस तरह धात्र धी धंधेजी पडे लोग बहुधा धंधेजी में ही निजी पत्र-व्यवहार करते हैं क्योंकि धंधेजी लिखना उन्हें हिन्दी लिखने से धामान मानुम होता है, उनी तरह उन बक्त भी निज के कामों में फारसी लिपि का व्यवहार होने सया।



उड़ू धीर हिन्दी ब्याकरण में धीरे-धीरे भेद बढ़ाया जा रहा है। मौलवी लोग ब्याकरण का फारसी की तरफ झींचते हैं धीरे परिष्कृतकृत संस्कृत की धीरे। शर्मा जी ने राजा शिवप्रसाद धीरे मौलवी धर्मभुक्तक के लेखों से प्रमाण देकर यह सिद्धाया है कि उड़ू हिन्दी के ब्याकरण में जो भेद है वह उन दोनों को अलग-अलग रसों पर चलने के लिए मजबूर कर रहा है। मौलवी धर्मभुक्तक साहब फरमाते हैं—

‘हमारे यहाँ अब तक जो पुस्तकें ब्याकरण की प्रचलित हैं उनमें धरवा ब्याकरण का अनुसरण किया गया है। उड़ू बालिस हिन्दी अबान है धीरे हमका सम्बन्ध सीधा धरवा-भाषाओं से। इसके विरुद्ध धरवी भाषा का शास्त्रिक ऐतिहासिक प्रामाण्य के परिवार से है। इसलिए उड़ू का ब्याकरण विज्ञान में धरवी अबान का अनुसरण किसी तरह जायज नहीं। दोनों अबानों की बियोगताएँ पक्क-मुबद्द हैं जो विचारने से स्पष्ट प्रतीत हो जायगी।

इन उद्धरण में मान्य होता है कि सुसममान विद्वान् हिन्दी-उड़ू के ब्याकरण भेद को कितना दूषित समझते हैं धीरे किम तरह इन भेद को मिटाना चाहते हैं। एक दूसरे ससममान मौलाना बहीदुद्दीन मनीम का कथन भी विचार करने योग्य है—

‘हमार बाब शास्त्र उड़ू अबान के गैर धारियाई होने का सबूत धरवी तरह देते हैं। वह उड़ू अबान की किमी विज्ञान का उठाकर उमम से बोड़ी-मी इबारात नहीं से इंतफाज कर लेते हैं धीरे उन इबारात के अलफाज मिल कर बताते हैं कि देखो इसमें धरवी के अलफाज अनुकावला फारसी धीरे हिन्दी के प्यारा है।

मगर ‘फरफम आनफिया से पता चलता है कि हमारी अबान में हिन्दी के अलफाज उमम अबानों से प्यारा है। धीरे जो इबारात हमारी अबान को खीब तानकर धरवी की तरफ से आना चाहते हैं वह एक एनी उलतो करते हैं किमसे इन अबान की प्रकृति बिपद जायगी।

निधि-अर धात्रकम हमारी एक बड़ी जन्मि ममस्या है। इस हमने धार्मिक धीरे ऐतिहासिक महत्त्व से ज्ञाना है। यह ता बुद्ध-मुबद्द सम्बन्ध ज्ञान पढ़ता है, कि फारसी-धरवी के बीच असदृशिक शब्दों का व्यवहार कम हुआ जाय धीरे हिन्दुस्तानी भाषा धरवा धीरे पर व्यवहार में धाल मने। निधि निधिभेद के भिदने की सम्भावना दूर प्रविष्य में भी नजर नहीं धाना। फारसी निधि से धरवा प्रामकता धीरे धरवाता का बोध है। तो एक बड़ा दुल भी है धीरे वह उगधी बलि है। फारसी निधि एक तरह का शाहई है धीरे उसमें ममय धीरे धरवा की बलत होती है धीरे हमार ब्याम में उगधी यह लुपी ही उगधी रखा कर रही है। धरवा ममम में जहाँ बही ऐतिहासिक भाषाओं का व्यवहार है, वहाँ उमने सुधार की योजना की जा रही है। उड़ू में भी कई विद्वानों ने निधि का मरम ब्याम की धीरे ध्यान लिया है धीरे व मय-मये बिद्वान बनाकर उन स्वयं को निधना चाहते हैं किमसे निधि फारसी निधि में कोई बाध ही नहीं है। मगर यह उरवीर धाया

हो कारगर हो सके ; यद्यपि मैं मसजिद, मद्रास और मीसूर धार्मिक प्राणियों के मुसलमान नहीं की भाषा का व्यवहार करते हैं । सिंध मुजरात महाराष्ट्र तथा बंगाल के मुसलमान भी वहाँ की प्राचीन लिपि ही का व्यवहार करते हैं । बिहार में भी साधारण मुसलमान कीर्षी लिपि ही काम में आती है । फारसी लिपि का व्यवहार उत्तर भारत और पंजाब के मुसलमान ही करते हैं । अतः हमारे मद्रास में हरक खान के लिए अबू धीर हिन्दी लोगों ही भाषाओं का लिखना-पढ़ना सबसे पहले तक साजिमी कर दिया जाय तो हमारे काम में कुछ दिनों के बाद स्थिति समाप्त होगी ही लिपियों में सम्मिलित हो जायगा और ऐसे ही लिपि अधिक परिष्कृत और सुगम और सुबोध खान पड़ेगी उनका व्यवहार करेगा ।

इस प्रश्न पर जो मुसलमान विद्वानों के विचार दिये जा चुके हैं । अल्प कई विद्वानों ने भी कुछ इसी से मिली-जुली सम्मति प्राप्त की है । उनमें जो विचारशील हैं वे अबू ब्याकररुह शैली विगत धार्मिक प्रयोगों को मिटाने के पक्ष में हैं और प्रायः सभी चाहते हैं कि अबू में फारसी और अरबी के शब्द इतनी कम हो जायें कि न लाभ हों । एक उदाहरण का तो उदाहरण है कि—

‘उर्दू पर अधिकार हासिल करने के लिए लिख विस्ती या मसजिद की खजान का अनुकरण काफी नहीं है । यह भी उचित है कि अरबी और फारसी में अस्मिता बरतनी की नियाकत और हिन्दी भाषा की अस्मिता बरतनी प्राप्त की जाय । अबू ब्याकर की बुनियाद जैसा कि मान्य है, हिन्दी भाषा पर रखी गयी है । उसके लिखापन कारक-बिह्व और संज्ञापर हिन्दी से लिये गये हैं । यह उर्दू खजान का साधन जो हिन्दी भाषा को सुलभ नहीं मानता और महज अरबी-फारसी का भाषी बनता है वह मानो अपनी गाड़ी को वे पहियों के टिकाने तक पहुँचाना चाहता है ।

इसी से मिली-जुली राम मीलाना मसीम पाणीपती की है । उन्होंने अबू खजान को ठरकरी देने और सही मानों में हिन्दुस्तानी बनाने की ठरकरीय यह बयान की है—

‘कि हिन्दू मसजिद हिन्दू बेमाला हिन्दू इतिहास और हिन्दू-साहित्य के दृष्टान्त का इजाफा करें, तो इससे हमारे मसजिद और अल्प पर कोई फायदा नहीं पड़ सकता और न कोई बीज हमें मजबूर करती है कि इन बीजों के मजबूर पर हम मजिद करें बल्कि इस इजाफे से हमें निम्नलिखित लाभ होंगे—

( १ ) हम मिश्र-मिश्र प्रकार के विचारों को प्रकट करने में ज्यादा समर्थ हो जायेंगे ।

( २ ) यह इतना हम पर नै बुर हो जायगा कि हम नेत्रण नाबिक भूषा के कारण हिन्दू-साहित्य से बुर जायेंगे ।

( ३ ) हिन्दू हमारे साहित्य से ज्यादा परिचित हो जायेंगे ।

( ४ ) हमारी जमान सही मार्गों में हिन्दुस्तानी जमान कल्पाने के योग्य होगी ।

( ५ ) हिन्दू मतकामानों के ऐक्य की बुनियाद मजबूत होगी ।

घाये बसकर शर्मा भी मे हिन्दी क प्रति पुगने मुसलमानों के अनुगम का बतान  
दिवा है । धार कहते हैं—

'उर्दू के ही नहीं बल्कि पहले फार्मी ने बड़े-बड़े मुसलमान कवियों ने हिन्दी  
में कविता की है । हिन्दुस्तानी या छोटी बोली के धारिक कवि धर्मी सुसरो माने गले  
हैं । बा' के भी बनेक मुसलमान विद्वानों ने भिन्न-भिन्न मुहम्मद जामनी रहीम मुख्य  
हैं हिन्दी में कविता की है । मीर जुसामधमी धारा' हिन्दी कविता के अच्छे पारती वे ।  
मीर ख़ुमसुआह भी अच्छे काव्य-मर्मज्ञ थे । सम्यद जुसामधमी 'रसमीन ने नादिका-  
बख्त पर एक पुस्तक उर्दू स्वाइको में लिगी है । 'रसमीन के अतिरिक्त मधुनायक  
रसजल बोकी बनील मुबारक धारिक नामी कवि हुए हैं । उर्दू के मीरूना शम्बर  
हजरत 'हसरत' मुहानी म भी पूर्वी हिन्दी म पर बनये हैं जिनका एक नमूना यह है—

कहाँ गए मी।ह बावरी बनाइके ?

बावरी बनाइक फरकियाँ रिदाइके      कहीं गए :

मम माहुन इवाम स रील नाग

मिस बिन मुजल रही ठग घाप ।

बिरजू की रीम निपट बंधिपारी

रोबत बोबत बटल जाय जाग ।

अम का रोम लगाइ के हसरत

राय रंग मर बीन्ह त्याग ।

अन में शमा भी मे हिन्दू-मुसलमान बाना ही म बपील की है—

'हिन्दी उर्दू का मरझार दोनों जातिमों क परिधम का फल है । अरबी-अरबी  
अपह भाषा की इन दोनों सत्ताया का बिलप मजबूत है । दोनों ही म अपने अपने तीर  
पर बनेक उपरति की है । दोनों ही के मास्त्रिय-अकार म बहूमूय्य अल मीचिल ही गब है  
धीर हो रहे हैं । हिन्दीबाने उर्दू-मास्त्रिय मे बहुत कुछ सीम मकये हैं । इमी ठरठ ठग  
बाये हिन्दी के लज्जाम म फायदा उगा मकये हैं । यदि बाना एष एरू दूमरों क निपट पहुँच  
बायें धीर मेर-बद्धि को छोड़कर यदि भार-भारि की तरह फालम म मिल बायें तो यह  
इमल उपरियाँ घाने घाप ही दूर ही बायें जी एक को बमये मे बर रिय हू है । एमा  
होना बोर्द मरिबल बात मही है । सिर्फ मजबूत इरादे धीर हिम्मत की उमरठ है । बिना  
एकठा क भाग धीर जाति का कम्पाण मही ।

अप्रैल १९२४

## दक्षिण भारत में हमारी हिन्दी प्रचार यात्रा

दक्षिण भारत हिन्दी-प्रचार-सभा की कृपा से हमें प्रबन्धी बहूँ के हिन्दी के क्या सकों से मिलने और उनके प्रचार की सफलता को अपनी भाँखों से देखने का अवसर मिला। सभा न इस वय हमें पश्ची-दाल के प्रबन्ध पर दीक्षान्त मापस करने का मेवता दिया और हम २७ दिसम्बर की बम्बई से चमकर २५ की शाम को मद्रास जा पहुँचे। हमारे साम हिन्दी प्रबन्ध एलाकर कार्यालय के मालिक भी नापूराम जी प्रेमी और बम्बई-हिन्दी-प्रचार-सभा के प्रमुख क्यकर्ता भी धार संकरन् व। तीसरे दरजे का सडर वा मवर रास्ते में कोई जास तकनीक नहीं हुई। प्रमी भी अपने साथ मयसक क मद्दू और पुर्तगी रक जाने थे। बीपारी के बाद से जाने-बीने के विषय में वे बहुत सतक रहते हैं। रास्ते में हमने कूब मद्दू खाये। पुर्तगी इपर बहुत कम स्टेजनों पर मिलती है। एक-दो स्टेजला पर मिलती भी हैं तो बहुत खराब। एक स्टेजला पर हमने पहली बार इवमी खायी। यह खानन और उदव के बाल के बीरे से बनती है। दोनों बीरों की समल मात्रा से मिमाकर मूध लेते हैं और इस मूध हुए घाटे को रस-भा यो ही पका रहने देते हैं। इससे इसम कुछ सट्टापन भा जाता है। दूसरे दिन इसके मोटे-मोटे टिकन्ड बनाकर भाप पर पकाये हैं। इस प्रान्त में इवमी खाने का बहुत रिवाज है। होटलों में बेसिए तो हर एक खायमी इवमी और बाल और बटनी खाता हुआ मडर घायेगा। मिटाई से यहाँ मिटी को प्रेम नहीं है। हाँ अब उत्तर भारत के संसर्ग ल मिटाई का कुछ प्रचार हो चमा है।

मद्रास पहुँचकर हम रात्रमाच की योगनका के मेहमान हुए। बीबाम्ब से भी कका कालेसकर जो भी बहूँ उखरे हुए थे। उनके बटनों का बालन्व मिला। भाप केवा की मृति है। हिन्दी-प्रचार न भाप जो मिमांछात्मक काय कर रहे हैं वह बहुत ही भासाजनक है। अब तक किसी बात की उपयोगिता न विचार्य वे हमारा प्रम उठक प्रति स्वामी नहीं हो सकता। हिन्दी ज्ञान की बीसे उपयोगी बनाया जाय—वही प्ररम भापके सामन है। बडे-बडे व्यापार तो संघर्षों के हाथ में हैं। बहूँ हिन्दी की बाल नहीं बल सफटी। मगर छोटे-छोटे व्यापारों में जो भारतीयों के हाथों में है, हिन्दी का व्यव हार करने से कुछ सुबिधा हो सकती है। इसी हेतु से भाप परिस्थितियों का अध्ययन कर रहे हैं। हमारी शुभच्छाएँ भापके मान हैं। योगनका भी उन बख्सी पुवों में है जो बल कमला ही गहो भागते उसका सपुपबीब करना भी जानते हैं। भाप की बात से किरानी ही साधनिक संस्थाओं की सहायता मिलती रहती है, और हिन्दी-प्रचार के तो भाप एक स्तम्भ हैं। अमिमान तो भापको धू भी नहीं गया। भाप बडे ही हंसमुख निष्कपट उद्योगी मुखक हैं और सजा के कोपाच्छ है। भापके घर हम लोग पाँच दिन रहे, बिम कुन इस तरह, बीसे अपने ही घर में हों।

पदवी-दान का जलसा गोलस हास म था । मरा समाज था कि बहुत बड़ा जन-  
 भट होया लेकिन मालम हुआ कि छट्टियों के कारण बहुत मे हिन्दी प्रमी बाहर बन गय  
 है । यहाँ के रेलव विभाग मे मस्त टिकट जारी करके लोग भी जितने लोगो को मशाम  
 से बाहर पहुँचा दिया था मगर समाजद्वों को लाशर बाड़े कम हो बरी जितने  
 लोग मे प्रायः सभी हिन्दी-प्रचार से सम्बन्ध रखने से ही प्रिया प्रचारका से हम मिला  
 बरी हम को देखकर मन में आशा थीर एक की मुहमुदी हास लगती थी । कुछ समय ता  
 कई-कई से मीन उप करके प्राये से हीर उनमे देखियो की भी आनी लाशर थी । हम  
 अन्तमालम-की बुनियाद केवल सांस्कृतिक नहीं उससे बड़ी प्रविष्ट राजनीतिक है जो सम्पूर्ण  
 देश को एक राष्ट्र-भाषा के मुख म बीधा देखना चाहता है । इसलिए इसे प्राप्त के प्रति  
 चिन्त नेशाओं का महयोग भी प्राप्त है और त्याग-आत्मता मे बरे व्ययवर्थाता का भी ।  
 भी राजपौसाभाषा जिन समा के इन्टरक्टर और भी से नापेरबर एक जिनक बाहम  
 प्रसीक्षण हों और केवल नाम क लिए नहीं बल्कि उसके हरेक काम मे विनयन्वी  
 रहते हों उन समा का प्रभाव और प्रचार इतना तेजी से बढ़ रहा है तो का प्रारम्भ  
 है । १९३ म प्राथमिक अध्ययन और राष्ट्रभाषा टीना परीक्षाया मे बँटनबाना को  
 लाशर एक हजार सप्त ती थी १९३३ म भी हजार साठ ही गयी मगर १९३४ म यह  
 संख्या घट कर चार हजार छ ती इकठामिस हो गयो । इससे सफा होती है बरी हिन्दी  
 का लोक पट हो गयी रहा है । अथवा गमा है तो यह लंब की बात होनी । हमारा  
 कर्तव्य है कि इन अवनति के कारणों को जोड़ें और उन्हें दूर करने की षटा करें ।

मनम मे देखने के साथक केवल हो चीजें हैं । एक ती समय का एक आ माल  
 मीन तक बता गया है, कुमरु अथार की थियोमोडिकल सोमार्दो का केन है । इतना  
 रमचीक बन-भट प्रारम्भ मे हीर नहीं । मीनों तक समूह के विचार टल्लो-टल्लो  
 हवा का आलम्ब उठाते बने जाइये । अथार मशाम से आन मीन पर समर के विचार एक  
 कमोनी के रूप मे है । समका क्षेत्रफल की मीन स कम न होना । बहुत ही माट-मुपरी  
 फूल-पत्तों से मजी हुई जगह है । पुस्तकालय है प्रचाराल-विभाग है मन्दिर है मोंबन-  
 मय है कलकारियों और अन्य थियोमोडिकल मजबना के विचार-अवलन ? बीच मे एक  
 विचार बट-बट है, आ अपनी बुरी सोड मे लगभग दो हजार प्यका की शरण दे मरता  
 है । बरने है स्व० मिसेज एनीकेमस्ट बनी-कमी बृष्ट के मीने बँटनर रूप के पियामुमा  
 को अपना उपदेशमल विभाषा करती थी । यह तपोभूमि दरमोय है । इन दिना हम  
 मसा का बाधिकोम्यक हो रहा है । इन दिना म प्रतिनिधि प्राये हुए हैं ।

मुझे बा बँटकों में प्राप्त के प्रमुख प्रचारका मे आनधीन बरने का मुपयगर  
 मिया । तीन ठगबन ती उत्तर भारत के है जिन्होंने दक्षिण ही को अपना पर बना लिया  
 है । सभी मशामद्वों के दिनों मे हिन्दी-प्रचार की समय आयम होनी पी । सभी म  
 जल्दा हीर पहा । सभी इन काम को पेशा ममम्ब कर नहीं विनयन्वी के माय कर रहे

है। उन्हें साहित्य के भी प्रेम हैं और साहित्यिक-विषय की वर्षा सुनने के लिए बड़े उत्सुक पाव गये। महात्मा देवदूत जी विचारों में जो कैरल प्रांत के संभारक हैं और बिहार प्रांत के निवासी हैं, यद्य-काव्य के बा र्गब्रह्म भी प्रकाशित करण हैं और एक ग्रामा भी मिल रहे हैं। इन संघर्षों को पहले से विरिक्त होता है कि आपकी धनुभूतिमां किछनी कोमल और आपकी भावनाएँ किछनी मामिक हैं। उसक साथ ही भाषा पर भी आपका पूरा अधिकार है।

एक रात को हम प्रचारकों का अविनय-कीर्तन बेसन का बरकर मिला। दो साल हुए कुछ सालों में एक नाटक परिपक्व बना ही थी और प्रचार क लिए साम में दो एक नाटक लेन मिया करते थे। मठमेव के कारण इस वर्ष परिपक्व में कोई नाटक नहीं लेता। मठ उन सज्जनों से धनुरोप है कि व अपने महाम् चरित्र की ध्यान में रखकर वैयक्तिक मतनेहों को भुल जायें और प्रचार क इन चीज को विविध न होने दें। मैंने सुनिवास नाटक के जो दो-तीन दृश्य देखे उनसे इन मतानों पर पहुँचा कि बोड़े से संवस के साथ वहाँ के अभिनेता बहुत सफल हो सकते हैं। एक दिन म. बाखन्ना का पार्ट दिखाया गया था। मुझे यह बात बहुत पसन्द आया। बाखन्ना के मठों म घर का कोट भी और विद्रोह का—बहु विद्रोह जो ईश्वर की सत्ता से भी इनकार करता है, जिसे संसार इस कपट सन्ध्या और अत्याचार का संस्कार-या नजर आता है।

मद्रास में दो सभासभ्य हैं। एक पशु-पक्षियों का और दूसरा जस-जीवों का। वृत्ती बहुत साधारण है पर मछली नभन बड़ा ही सुन्दर है। मछलियों का ऐसा विभिन्न विभिन्न और अद्भुत संघर्ष भारतवर्ष में दूसरा नहीं है। लीसे के पानी से भरे केसों म रेश-बिरली मछलियों की क्रीडा बड़ा ही मनोहर दृश्य है।

समा में जो मकाम किराये पर ले रहे हैं। एक में तो उसका बपतर पुस्तकालय पढ़ी-विद्याम आदि है दूसरे म प्रस है। दोनों का किराया तीन सौ पचास रु देना पड़ता है। मन्त्री जी ऐसे मकाम की तलाश म हैं जहाँ दोनों ही काम हो सकें। ऐसा मकाम मिल काम तो सामय किराये में कुछ किरायात हो और काम ज्यादा व्यवस्थित रूप से चलने लगे। ऐसी उपयोधी संस्था के पास अपना नभन न हो और उस लड़े तीन हजार रुपये कालामा किराये के रूप में देना पड़े यह हिन्दी प्रमिया के लिए बर्न की बात नहीं। इनका कारण यही मामूम होता है कि सभी तक हमने हिन्दी-प्रचार का महत्व नहीं समझ पाया। इनकी जिम्मेदारी बखिख से कही ज्यादा उत्तर भारत पर है।

हिन्दी या हिन्दुस्तानी वचन भारत के लिए निवेशी भाषा के समान है। अध्यापक भी प्रायः वचन के नाम हैं। धाना की पुस्तकों पढ़ने के बिना हिन्दी को व्यवहार म लाने के शायद बहुत कम मौके मिलते होंगे। इसका परिहार यह ही सकता है कि इनका भाषा-ज्ञान केवल विद्यार्थी ज्ञान हो कर रहे जाय। इनके कुछ उपाहरण भी मिले। हम ऐसे किछने ही मज्जम मिले जो किराये तो समझ लेते हैं, लेकिन हिन्दी

बोल नहीं सकते और न हिन्दी भाषण धामानी से समझ पाते हैं। अगर ध्वन्यालय  
 कलाओं में धारों से हिन्दुस्थानी ही न बोलें और इसका खाम रबे कि धाव भी धापन  
 में कम से कम क्याय में हिन्दुस्थानी का व्यक्तहार करें तो उन्हे शय बोलन का धन्याय  
 हो पायगा और बहु हास्यजनक मूम में न गये जिनकी एक बिलोरी-प्रचारक महोदय न  
 हुए मिमालो देकर हमें कुछ हँसाया था। दूसरा निबन्ध बाँ में प्रचारक महोदय ने  
 कहा था यह यह है कि वे हिन्दी को पत्रों-पत्रिकाया का ध्वन्यजन वर्णन रह प्रिमम उतका  
 भाषा ज्ञान बढ़ाया जाय। जिन्हे साहित्य-रचना का कुछ शौक है उन्हे कमी-कमी पत्रों  
 में कुछ लिखते रहना चाहिए। दक्षिण के साहित्य में एसी कितनी ही शौक होती जिन्हे  
 हिन्दी में लिखने से उल्लेख और दक्षिण की सांस्कृतिक एकता का बड़ कारणे।

मन्त्रान ने हमने पाँचवें दिन मैयूर का प्रस्थान किया। यहाँ से छाटो साइन जाती  
 है। गाड़ी में बड़ी डेलन-डेलन की सफ़िन चिन्नी तरह बँट गय। मैयूर क मध्य प्रचारक  
 की त्रिपयमय भी हमारे प्रथ-प्रस्ताव से। बंगलोर न थी जम्बुनाथ जी भी उनी दृष्य न  
 से। मरे नामने केरल प्रान्त के एक मन्त्रान बँटे थे। उनमे साहित्य और हिन्दी-प्रचार  
 के विषय में बड़ी देर तक बातें होती रहीं। हिन्दी-प्रचार से उन्हे प्रम तो था पर उन्के  
 वह मन भी था कि कहीं यह ध्यान्नेलन धाये बन कर हवा न न उठ जाय। इन तरह  
 का सन्देश कभी-कभी मन न होना स्वाभाविक ही है। हमारे ध्यान्नेलन इतन जोश न  
 शुरू किये जाते हैं और धोड़े ही चिनो न लोय उनकी धार इतन उदासीन हो जत है  
 कि हम चिन्नी ध्यान्नेलन को लगीव देसकर भी धार-दाया न निकल गरी हो सक्ने।  
 मीन उन मन्त्रान को बिरबाध नियाया कि हिन्दी प्रचार धन केवल दो एक उन्पारी  
 ध्यस्तियों का लभ नहीं रहा बहु एक मस्या है जिनमे जनता के निमा न धपना स्वाय  
 प्राप्त कर लिया है और धारा है नि दिन दिन इनकी उन्नति होगी। हम मुक्त हो मैयूर  
 पहुँचे। हिन्दी-प्रस्थियों ने हमारा स्वायत्त किया और हम धृष्य-धवन न टहर। यहाँ हम  
 हर तरह का धारण का और हाटन न स्वायी थी शिष्यप्रदाय जी न जिन उधारता से  
 हमारा स्वायत्त किया उनको कहीं तक लाँक करें। इनकी उन्न धयी ध्यान्नेलन तीम मान  
 से उगारा नहीं है और इनका बाल-बोवन भी बडा ही सज्जमय था यहाँ तक कि केवल  
 बाह्य मान की उन्न न उन्हें धर न आगना पछा और बहु बवतार धारण एर होय न  
 लौकर हो गये। बहाँ उन्काले का धमधम प्राण निया उमय उन्काले का एक मिना के  
 गांधीय से यह होयन धामने का उन्पारा किया। और धन धार धान पुण्याय के पय  
 स्वयं स्वतन्त्र है। धारणों साहित्य और धम न विशय रचि है पर धारक विचार बर  
 उदार है धार्मिक मकोमता का बरी मान भी नहीं। धार्मिक और ध्यागारिक उन्नति  
 के माय धपने वैदिक उन्नति का भी ध्यान रखा है। धार नियमित रूप न मूप नमप्यार  
 और ध्यागाम करते हैं। धाम वीर्यों की शक्ति धार नकन धन मधु करके ही मन्पुष्ट  
 गरी हुए। धम मधु भी निया है। धार अनिष्ट और स्वयं स्वक है। और चिनो

॥ दक्षिण भारत में हमारा हिन्दी प्रचार धारा ॥

सुम्पसन की धारने पास नहीं फटकने देते ; बुड़ी से बुटो पशाओं म पुदगार्थी धारमी क्या कृप कर सफटा है । यह उपदेश हमारे मुक्क शिवप्रसाद जी के जीवन से से सक्त है । मुझे यह बेल कर बड़ा ह्य हुआ कि धारने धन की धारना स्वामी नहीं बनने दिया स्वर्न उसके स्वामी है । धारके जीवन का उहरव परीपकार है । धारका इराडा है कि धारने जन्म स्थान बुमन्दाहर में एक धन्वी ध्यावामशाला कायम करें और मुक्कों का धरनी देह और स्वाम्य का बसबान करने का धरघर हैं । कितना पवित्र उहरय है ।

बुम्बु-धरन से धिना हुआ ही एक पुसर होतक है—धाम्य-धरन । इसके स्वामी बडीप्रसाद जी है । मैसूर मे उत्तर भारतीयों का यह पहला ही होतक है । और बडे सुम्पवत्किठ रूप से बस रहा है । बडीप्रसाद जी बडे प्रसन्न-चित्त सेवा-उत्तर साहित्य रचितक ध्यक्ति है और हिन्दी-साहित्य की प्रगति से खूब परिचित है । धार नौ बुमन्दाहर के निवासी है और नपरिवार बडी रहते है । हमें मैसूर के मुक्क बतनीव स्वामी की तैर कराने का जिम्मा धारने लिया था और इसके लिए हम धारके धारारी है ।

मैसूर में यों तो बेलने की बहुत-सी बीजें है, अकिन्तु हमारे पास समय न था इसलिए हमें जन्ही स्वामी की बेलकर अनुप होना पडा जो मैसूर से मिल हुए है और जिन्हे हम कम से कम समय म बेल सकते है । मैसूर बड़ा ही साक-सुकरा सुन्दर उद्यानों मे मजा हुआ रमणीक स्थान है । बिबर बाह्ये उबर पाक यहाँ तक कि रैमब लाइन के किनारे भी फूलों की लाइन मडर जाती है । सड़कें चौड़ी है, नर-मुबार से पाक औरस्ते पर बेलो मींग पीरो से घने हुए स्वधार बने है । बिबकी शक्ति की तो यहाँ हतनी इकरत है कि देहातों में भी बिबनी की रोशनी है । और है भी बेहब सती । देहातों में तो केवल ही धाना मुक्ति है । दूसरे शहरों में केवल मुनिधिपैलिटी के धरर रोशनी होती है । उसके बाहर धेबेरा । यहाँ हरेक पक्की सड़क पर बिबनी की रोशनी है, और चामुंडा पहाड़ी से मगर की बेलिए, ती माधुम होवा है, बिबनी-धकार का बाम बेली हुआ है । यह पहाड़ी शहर से मिली हुई है और धररर साय-धबेरे शहर के मीय उरर र हुआ बाने जाते है । कोई एक हजार फीट ऊँची होगी । चर्चार् के लिए बोटर बाने नामक सड़क बनी हुई है । बिब पर बिबनी की रोशनी है । बोटरी पर चामुंडा देवी का शिरर है । उसे बरा और ऊँचार् पर महापुत्र के निवास के लिए एक सुन्दर बँवना बना हुआ है । चामुंडा देवी मैसूर राजा की कुम-बेवी है और महापुत्र धररर यहाँ पुजन ङ लिए जाती है ।

मैसूर मगर से बस-बाउह मील पर मैसूर की पुछनी राजबानी धेरिवापट्टम है । यहाँ तक बन्धी सड़क बनी मनी है । धेरिवापट्टम पहले बहुत मुम्बार बस्ती की धेरिब प्रब मीग इके छोड़-छोड़ कर बुसरी जमहा मे धारार होते जाते है । पुछना किना ती मिसमार हो गया । चार बीवारी जन्ही-जन्ही बाने है । यहाँ की खरब बतनीव बस्तु मुमताल हैरररती और टीपू की मडार है । एक रमणीक उद्यान के मध्य म मडार की



ज्ञानसार हमारा है जो काले पत्थर की है। धनुष बड़ी दृढमूर्त पत्थीकारो है और दरबारों पर हाथी बाँध का नाम है जो मैसूर को साम कसा है। किसे के बाहर मुसलान टोपू का महल है जिसका नाम दरिया वीलत बाग है। टीपू मुसलान मर्मियों म यहाँ धाकर विधाम किया करते थे। इसी को बाहरी दीवारों पर उस जमाने को प्राय सभी ऐतिहासिक और राजनीतिक घटनाओं के चित्र बने हुए हैं जो बहुत कुछ उन चित्रों में मिलते हैं जो प्राय भी शहर के चित्रकार दीवारों पर बनाया करते हैं लेकिन धन्य नक़्क़ारी बहुत ही बारीक है। जिस स्थान पर मुसलान अपनी प्रजा को इशान दिया करते थे वह दरबार किसी तरह भी दिल्ली के दरबार धाम से कम विशाल नहीं है।

मेरिमापट्टम से हम कृष्णराज सागर देखने पाये। यह एक बहुत बड़ा सागर है जो कावेरी नदी को एक बाँध से रोक कर बनाया गया है। बाँध कोई दो मील लम्बा और बमीन में कोई एक सौ पचास फीट ऊँचा होगा। बाँध इतना है कि उस पर मोटरों बड़ी आसानी से आ जा सकती है। इस बाँध को बनान में मैसूर सरकार का करोड़ों करोड़ स ठपर खर्च हो गया है। इस सागर से नहर निकाली गयी है, जो सबभग पंचाम मील तक की भूमि को सिंचाई करती है। इसका फल यह हुआ है, कि पंच यहाँ पान और ऊन की पैदावार बसरत से होने लगी है। ऊन की लपट के लिए सरकार ने एक शकड़ मिल भी बनवाया है। इसी पानी से बिजली भी निकाली जाती है। इन निर्माण में रियासत के सबभग पाँच करोड़ खर्च हो गये हैं। भारत में इससे बड़ा दूसरा बाँध नहीं है। बाँध के गोचे एक रमणीक स्थान है, जिसे कुन्दारन कहते हैं। यहाँ क्रीडांग की विभिन्न मीमा देखने में आती है। एक नाली से दरिया का पानी लाकर एक बान्सु नहर में बड़े बम में प्रवाहित किया गया है। दोनों तरफ कीबारों की छाया है जिनके पास रंग-बिरंग शीशों में बिजली का प्रकाश किया जाता है। उद्यमते हुए पानी पर जब इन रंगीन प्रकाश का प्रतिबिम्ब पड़ता है, तो ऐसा मान्य होता है कि कीबारों ने रंगीन पानी निकस रखा है। दूर से देखने पर इन्द्र बनुप का-सा दुर्य प्राणों को मुग्ध कर देता है।

मैसूर का राजमन्त भी देखने लायक है, मगर यह कोई उम्मेदगदीय बात नहीं। राजमन्त वा उन रियासतों में भी बाँधों को मग्ध कर देते हैं यहाँ प्रजा नरक के कष्ट भोग रही है। हमारे राजाओं में निष्पान्थे फोमरी ला बड़ी है जो अपनी रियासत की धामनी का बड़ा धाम अपने ही भोग-विभोग पर उड़ा देते हैं। उनकी प्रजा मानो है ही इसलिए कि जमा-जमाकर राजा साहब को उशान के लिए है और मुँह में बाप मी बना उनको उकान बाट भी जायेगी। मैसूर तो सम्पन्न राज्य है और उनके राजमन्त को रियासत की शास के धनुषार होना ही चाहिए। एक-एक हाथ की मजाबट बगन रणिए। दरबार-नाम तो इन टाक का है कि शायद ही किसी राज्य में हो। यहाँ दरबार के उम्मेद पर महाप्रजा साहब मिश्रामन पर बिराबडे है और दरबारी और

कमचौरी अपने दखले के अनुसार कुंवियों पर बैठे हैं। इन-पान से उनका स्वागत किया जाता है। मगर इन इन्द्रपुरी का इन्द्र अनुमति विमूक्ति का स्थायी होते हुए भी स्वाम का उपासक है। अन्य रियासतों की भाँति यहाँ का दरबार इन्द्र का बजाया नहीं किसी मंत्रासी का प्राथम है। महाराज का राज्य से बाँटस लाख रुपये सालाना मिलते हैं पर यह इनके भाग-विभास में न बाँच कर प्रजा-हित के कार्यों में ही खच किये जाते हैं। यही कारण है कि यहाँ की प्रजा अपने राजा को पुजती है और उत पर नम करती है। महाराज संपीठ और व्यायाम के प्रेमी हैं और साहित्य से भी ध्यान की रुचि है।

मैसूर का चिड़िया घर देखकर बम्बई और मद्रास के चिड़िया-घर बैठे ही लगते हैं जैसे महम के सामने भोजड़ा। बितने विचित्र पशु-पक्षी और जल-जीव यहाँ हैं। सायब कमकल के चिड़िया घर के सिवा और कहीं नहीं हैं। पशुओं के लिए नैसर्गिक बसाओं की व्यवस्था ऐसी सायब ही और कही हो। हमने बितने जीव देखे सभी हूट-गुट साफ-सुन्दर और प्रसन्न दिखायी दिखे थे।

मैसूर में सरकार को घोर से रेलम का कारखाना भी खुला हुआ है, बन्दन के तेल का भी। बन्दन पर इस रियासत की पनोपोजी का इबात है। उसका व्यापार सरकार के हाथों में है। कमा-कोरस का विभाग भी है यहाँ लकड़ी बँट हाथी बाँट धान कुन्हाये धादि की सिखा भी जाती है। यहाँ की बनी हुई चीजों का प्रदर्शन होता है और बिजने भी जाती है, पर चीजों की कीमत बहुत ज्यादा है। यहाँ सबसे धाँची बात जो हमें मामूम हुई वह यह है कि रियासत के कर्मचारियों का या पुलिस का यहाँ विस्तृत अर्थक नहीं है और रिबरत की चर्चा यहाँ बहुत ही कम है। राज्य की सुव्यवस्था का इतने बढ़कर हमारे विचार में बुरा प्रभाव नहीं हो सकता।

मैसूर में हिन्दी-प्रचार के कामकर्ताओं और सचालकों में मैंने कुछ एकात्मक मात्र देखा। सभी में हिन्दी के प्रति ईश्वरपरी उत्साह और अनुयाय है। ये हिन्दुत्वमय की बुधबाप काम करनेवाले व्यक्ति हैं जो सामर स्वप्न में भी प्रचार ही का स्वप्न देखते हैं। यही तो कृष्ण मूर्ति और श्री के शीतलम मूर्ति बानो ही संजम यहाँ की प्रचार-सभा के मन्त्री हैं और केवल पत्राधिकारी मन्त्री नहीं बल्कि सभा में बीचन का मन्त्र डालनेवाले मन्त्री। दोनों ही सिखा विभाग में धाँयापक हैं, लेकिन हिन्दी-प्रचार को अपना व्यसन बना चुके हैं। एक तीसरे उत्साही मुकम मि जे पी० बर्मा है। यह इन्टर मूनिबिटी बोर्ड में है और यहाँ सायब साम भर ही उनका पढ़ना होना लेकिन हिन्दी प्रचार में इस जोश से सहयोग दे रहे हैं, जो लक्ष्यक है। अपने उत्साह के सामने बाधाओं को कुछ समझते ही नहीं। इन्हें यहाँ उत्तर भारत के पढ़नेवालों को सचिठ्य करने के लिए एक 'हिन्दुस्तानी हितैषी मंडल' खोलने की मून है। कोई मुने या न मुने धाप धपना कबल किये जाते हैं। बाबिार भरे हाथों उत मंडल की स्थापित कर के ही छोड़ा मुनियार की रहम तो मैंने कर दी उत पर इमारत खड़ी करना मैसूर के उन संजमों का काम

है, जो व्यापार में जन कमाना ही नहीं चाहते अपने भाइया को सेवा में उसका एक घंटा प्रयत्न करना तो चाहते हैं। और जिम्मेदारी भी सबसे ज्यादा उन्हीं लोगों पर धाती है, जो संसार की प्रगति को बढ़ते और समझते हैं।

मैमूर में इन्दिरा बहन से मिलकर चिन्त बहुत प्रसन्न हुआ। इस देवी से मैं काफी प्रयाग और दिल्ली में मिल चुका था। प्रयाग-महिषा-विद्यापीठ में हो साम एक इन्हाण हिन्दी का मिश्रेय ज्ञान प्राप्त किया है और ध्यानकर्म यहाँ प्रचार कर रही है। प्राय प्रचार-सभा के मन्त्री भी इच्छामूर्ति की ही सहजमित्री हैं। हिन्दी-ग्राम इन्हीं प्रयाग कीच स बना। पति ने भी सहज अनुमति दी। अपनी छोटी-नी बच्ची को घर पर छोड़कर वह प्रयाग जती यमी। जिस धानोमन में ऐसे साबक हों वह क्या न सफल हो। एक दूसरी देवी श्रीमती लक्ष्मी धर्मा है। इस बुढ़ाबस्ता में इन्हीन विशाग्य पाम किया और सब तर्क पड़ रही है। उनका उत्साह धर्म्य है और मुक्तो की भी मन्त्रित करता है। जहाँ-जहाँ मैं गया वह मेरे स्वागत के लिए मौजूद थीं। हम उनकी कुटिया में उस श्रद्धा से मने जैसे मन्त्रि में जाते हैं और वही हमने दस-पौष मिलत तक इस तरह मुबार मलो मानी बहुत जिनों की बिद्युती हुई बहन से मिल रहे हैं और बहन अपने ही समय में अपने स्नेह और महामान्यारी के सारे धरमान पूरे कर सना जाती हो। प्रो मूसरी के बर्तनों का शोभाय भी हमें मिला। धाम मैमूर-बिरबाविद्यालय में धारमी के अध्यापक है और तर्क के अध्ये धानवार है। धामको हिन्दोस्तानी से प्रेम है और संस्कृत के तो प्राय पंडित है। धाम इन जिनों अगबत पीठा का धारती म अध्यापक कर रहे हैं। हिन्द मुसलिम समस्या पर धारने को मोन है स विचार प्रकट किये काय वह हमारे सीधो में भी होते तो भारत धाम स्वयं हो जाता। धाम साधुधर्म-वा-सा अचिन व्यतीत कर रहे हैं। साम्प्रदायिक मनोभूति से धाम को बणा है। धारक चरखों में बैठकर हमन को धारिक शांति साम की वह दिव्य दशन से होती है। हिन्दी में एक और उपानक प्रो गोनुन देवा के सस्तंग का भी मुद्यबसर हमें मिला। धार मैमूर-बिरबाविद्यालय में अध्यापी के अध्यापक है और इन जिनों अधस्थ है। धामने जिन जराएता से हमारा स्वागत किया वह हमारे जीवन की बड़ी मधुर अनुभूति है। धाम इन जिनों उरू का अध्यापन कर रहे हैं और हमारी कई धर्म रचनाएँ धामकी मजदूरों से गुजर चुकी हैं। धामका विशाद साहित्य-ग्राम धीग साहित्य के एक मुख्य निवर के प्रति धारका उपकृता हुआ सम्मान देकर हम इताप हा गये। धाम हम यही शिवायन है कि धामने जयी दीत की मन्त्रादी है सका हुआ एक मिगट बस भेंट करके हमें यह पा पद्या कि मिगट पीना भी कोई सद्भजन है और सब से मिगट क प्रति हमारा धनुष्यन बढ़ गया है, क्योंकि धाम को हक छात्री नहीं देव सवने—दावान में रमाती नहीं तो वह कुटिया है—और जब तिगटेयो से धार हुआ उच्चा सामन हो तो मोम का उठना उरु बार धार।

यों हम तो यहाँ वा असलों म हिन्दी के विषय में अपने विचार प्रकट करने का प्रयत्न मिला लेकिन विशेष आग्रह का प्रयत्न वह वा जब हम विश्वविद्यालय भवन में हिन्दी के कमरों से मिले । पचास मिनों से कम न थे और यह सभी पृथक है जो कुछ विरय-विद्यालय में पढ़ रहे हैं । पर हिन्दी से इतना प्रभ रचते हैं कि कुछ न कुछ समय निदान कर हिन्दी प्रचार की गेट करते हैं । यह शाब्द-भाषा के उत्साही सैनिक हैं और उसके प्रचार का सम्पूर्ण ध्य इतको है । कई मिनों न हिन्दी में अपनी रबी हुई थीं पढ़ी और हम लोगों में घंटे भर तक कड़ी के भाष माहिरियक सम्मन्धानों पर लुभ पपराय हुई ।

मैसूर की राजभाषा कनाड़ी है और बोलनेवालों की संख्या इत करीब के लगभग है मगर वह संख्या मात्रात क्यई हैरतवार रिपाठत और मैसूर में फैली हुई है और इससे इस भाषा के विकास म बाधा पड़ रही है । कनाड़ी का प्राचीन साहित्य उंचे बरजे का है और नये साहित्य में भी अच्छी उन्नति हो रही है । बयभार में कनाड़ी-साहित्य परिपक्व कर अपना मभन है, पुस्तकामय है और उसके द्वारा कनाड़ी-साहित्य के मध्ये मन्व प्रकाशित हो रहे हैं । मैसूर म मुझे कई कनाड़ी-साहित्य-मेमियों की सेवा में हाविर होने का प्रयत्न मिला । कई मन्व प्रांतीय भाषाभाषी की तरह कनाड़ी को भी यह लंका होने लगी है कि हिन्दी-प्रचार से कनाड़ी की प्रगति म कुछ बाधा न पहुँच । इसका कारण यही मान्य होता है कि हिन्दी प्रचार के उद्देश्य के विषय म कुछ धम धनी तक बाकी है । हिन्दोस्तानी प्रचार का उद्देश्य यह हमिज नहीं है कि वह प्रांतीय भाषाओं का स्थान धीत न । वह तो संशुद्धी भाषा का वह स्थान लेना चाहती है, जा उसने मारतक्य म प्राप्त कर लिया है । शाब्दभाषा की प्रांतीय भाषाओं म कुछ वही सम्बन्ध रहेगा जो प्रांतीय कौशिलों और भारतीय एसेम्बली में है । एसेम्बली प्रांतीय कौशिलों के किसी नाम म बाधा नहीं डालती ; हाँ कुछ ऐसे विषय हैं जिनका सम्बन्ध पूर्व मारत से है और एसेम्बली उन्हीं के विषय म व्यवस्था करती है । जो लेखक वा पत्रकार अपनी पुस्तक या पत्र का लारे मारतमय में प्रचार चाहेना उनके लिए संशुद्धी माध्यम की बगइ हिन्दी माध्यम का साधन उपस्थित कर देना ही हमारा ध्येय है । धान्जिर कोई ऐसा दिन तो आवेगा ही चाहे वह दूर भविष्य म ही क्यों न आवे कि भारत अपनी संस्कृति और अपने साहित्य के साथ मन्व रचनों के पहलू में बैठे ; मगर हम भारत को एक देश म मान कर महाश्रीप मान में जिसम बहुत से देश हैं तब भी तो हम एक प्रभाव भाषा की सकरत पड़ेगी जो जिनमे मन्वर्देशीय सम्बन्धन किया जा सके ; हाँ मगर इन देशों म कोई सम्बन्ध ही न रहे, तो बुरतरी बात है ; तब तो एक प्राप्त भी अपनी प्रकक सता न कायम रक सक्या । हमारा क्याम है कि हिन्दुस्तानी का प्रचार साहित्य-मेमियों के लिए परा और कीर्ति का एक महान् धाय शील देता है और प्रांतीय भाषाओं को उनमे बदगुमान होने की विपकुम अकरत नहीं है । सभी तक मन्व वाँ कुछ किया है, पड़

प्रांतीय बुद्धि से ही किया है। हम परिभाषिक शब्दों का बोध बनाते हैं। तो धनम धनम सामारण्य कोप बनाते हैं। तो भी धनम-धनम। धनम हमारे पास कोई धनम-प्राणीय या राज-भाषा-परिचय ऐसी होती नहीं प्रतिबन्ध प्रत्येक भाषा के महारथी एक होकर दो-चार दिन या दो-चार हफ्ते बैठ कर राष्ट्रभाषा-मन्त्रालयी नमस्याधों पर विचार किया करते तो शायद इस बीस नाम में हमारी एक सम्पन्न राष्ट्रभाषा बन जाती। पृथक-पृथक काम करने में समय और शक्ति का अपव्यय हो रहा है। वरुण विज्ञान शास्त्र के हथारों ही शब्द हैं जो सभी प्रांतीय भाषाधों में एक हो सकते थे। धनम-धनम भाषापन्थी करने की बहरत ही न पड़ती।

पौच दिन मँसूर की मेहमानी खाल्ज हुमान बंगसार का प्रस्वान किया।

मँसूर से बयसार कोई चार घंटे का सड़र है। बीच का प्राकृतिक दृश्य बड़ा ही रमणीक है। कहीं हर-भरे क्षेत्र हैं कहीं घास नारियल और सुपारी के बाग और कहीं हरियाली से ढकी हुई ऊँची-ऊँची पहाड़ियाँ। घाघाट में कुछ बागल से और उन मर प्रकृत में बहु पर्वत। शोभा स्वयंजित हो गयी थी। बीच-बीच बाटियों की पोर में विद्याम करते हुए ग्राम नहर आ जाते थे जिनकी ऊमई से पुते हुई बीबारें यमवाला की सझई और मुबचि का पता से रही थीं। यहाँ की मिट्टी लाल है, जिससे लेतो की घटा और भी सुहावनी हो जाती है। क्षेत्रों में जो किञ्चन काम करते नहर धाले थे उनका पश्चिमा कुला और बाँधिया था। छोटी के मकाबसे से बाँधिया किञ्चयत की बीज है। यहाँ बाग के क्षेत्र भी बहुत मिये जिनम नहर से सिचाई हो रही थी। धर यहाँ गन्ना भी पैदा होने लका है और राज्य की ओर से एक शक्कर की मिल भी है।

शाम को हम बंगमोर पहुँच गये। स्टेशन पर हिन्दी-प्रचार-सभा के अध्यक्ष भी मिट्टूर, भी निद्याम एक भी सम्पुनावन कीधारि सञ्जन मौजूद थे। हम सञ्ज जो के महमान हुए।

बंगमोर समुद्र की सतह से तीन हजार फीट की ऊँचाई पर है और मँसूर से कुछ टेंडा है। बंगमोर शहर के दा भाग है। शहर जो मँसूर राज्य के अधीन है और पावनी पर धंधकी सरकार का राज्य है। बाबासे तान लाल के ऊपर है। शहर में तो कोई ग्राम बाउ नहीं प्रयाग या लखनऊ जैसा हो है, लेकिन पावनी की मन्त्रों की मन्त्राई और बंगमों की मन्त्राउट देखकर बिल प्रमन्न हो गया। बंगसार में और प्राय-वर्षिण में से धीयन के घर हाते हैं। घर में हीसियत के अनुमार दम-दोन-बाग को-रियाँ होती हैं। मकान के सामने एक छोटा-सा बाग और चार वीचारी भा बनाये जाती हैं। हर एक घर बमने जैसा भासूम होता है।

पहले दिन प्रातःकाल हम मान बाय की मँर करन गय। उमका रूबा एक भी

एक है। राम की मनाचट और लफाई और सुन्दरता साठ-मुबरी रवितें फूलों की मबारिची शीत मंत्रप मम को मुख कर मेठी है। लाउ बाव यह है कि यह पाक-मूलतान हैबरप्रसी की मुबिच और मनस्पति-ग्रम की बाधवार है।-यहाँ पौधों और मोर्जों की बिजी होती है और विभिन्न प्रकार को मनस्पतिमा को बिबेहों से मंत्राकर उपजाया जाता है। बंगलोर की सब से बलनीय बस्तु यही पाक है।

बंगलोर से तीन मील पर बिज्ञान का बहु प्रसिद्ध बिद्यालय है, जिसे भी बंगलोर की मोतेरवा की टाटा ने स्थापित किया था। बंगलोर बाकर इस बिज्ञान-भरि के बलन न काना दुर्माय की बाव जाती है। उबिचार के दिन हम कीई तीन बने वहाँ पहुँचे। बिद्यालय बन्द था पर डॉ० सर सी बी० रमन ने बड़ी खुशी से हमारा स्वागत किया और हम बिद्यालय के रासायनिक बिभाग पुस्तकालय और लेबोरेटरी की घेर करायी। मैं दो-चार बैज्ञानिकों से पहले भी मिल चुका हूँ। वह बड़ा समन्वय बड़ा ही प्राकण्य नूक नूक और अपनी बुन में मस्त होता है। प्रकृति की बलम रहस्यमयी रचमाओं में सबिह बिबरते रहने के कारण कयाचित् समुप्य उसके लिए मामुली परु-मान रह जाता है, सेमिन बैज्ञानिकों के इस प्रिण को देखकर मैं अकित हो गया। ऐसा प्रसचचित् व्यक्ति जिसका पोर-पौर बामकों के सरल उद्याह से उबला पड़ता हो मैंने दूखत नहीं देखा। वह बिज्ञान के भातिक है। और यह इतक उनकी धाकों में उनके कपोतों पर एक-एक घंघ में रमा हुआ है। वह इस तरह से पीड़-नीककर एक-एक चीज हम बिखा रहे में मारों कोई बालक अपने जितनी सजा को अपने सिमाने और कनकीवे और नये कपड़े बिबाने के लिए मधीर हो रहा हो और बाछता हो कि एक ही सँघ में सारी जिभुतियाँ बिखा हूँ जिसम कुछ बाकी न रह जाय। मैं बापर कहीं कि इती इन्पटीदकूट में उनके प्राक बसते हैं, तो गमत न होमा। इसकी एक-एक उबिस एक-एक फूल एक एक पीवे यहाँ तक कि उसके मनोरम प्राकृतिक दुरय पर भी जम्ह नब है, मारो वह प्राकृतिक इत्य भी उनकी अपनी रचना हा। इस बिद्यालय से बैर को अब तक म्वा मान पहुँचा है, यह तो कोई बैज्ञानिक ही जानता होमा हम तो सर रमन के ब्यक्तिज्व की बाप हूय पर लेकर बावे। बिभुत-बिभाग और अन्ध बिभाग बन्द से यह हम न देख सके। सर रमन ने हमें एक मजे का उमाठा पिखाया जो हमारे लिए तो खेल का पर बुद्धिमार्गों के लिए साबिक धाम-बीन की चीज है। तबने के बमभाय पर चुटकी भर बामु बिबेर हो और तबने पर एक बाप मारो। बामु कनी सीधी रैबा का रूप बाउल कर मेठी है, कनी बूठ का। तबने की बलम-ब्यसय ब्यभि मिध-मिध बाकार में प्रकट होतो है। सर रमन जिस बिभाविनी और बीला से तबने पर बामु बिबेरते और बाप मवाते से यह देखकर कौन ऐसा मुर्दा बिब होमा जो यग्ग् न हा बठठा।

बार बने हम डॉक्टर छाहक से बिबा हुए और यह तोफते हुए निकले कि काउ

वही लोग धारने वक्ष्यन को धारनी कन न बनाकर व्योति बना सकते तो उससे लिखना प्रकृत संमता ।

उसी दिन हमने भीमी के बतनों का कारखाना देखा जो इन्सटीट्यूट से मिला हुआ है । क्रिया विमकुस कुम्हारों की-सी है । एक खास तरह की मिट्टी यहाँ निकलती है, जिसमें दो-एक बीजें मिला देने से लुगी तैयार हो जाती है । लुगी को मित्र-मित्र ताँतों में डाल कर बाहर निकालते हैं फिर सुखाते हैं, रंगते हैं और मट्टी में पकाते हैं । दो-रूम में यहाँ के बने हुए बिलीनों और मूर्तियों और फूलबालों धारि का धब्बा संघट्ट है जिससे मामूय होता है कि इस काम में यहाँ फिटनी उपस्थि हुई है । नल खपते, माबल छार की बिक्रिया सब कुछ यहाँ तैयार होती है । मीमुर-राम्य न बिजली का व्यवहार बड़ो कवच से होता है, उसके लिए भीमी का लिखना सामान दरकार होता है वह हसी कारखान में तैयार होता है ।

बपतोर में भी मीमुर को बसि हिन्दी का धब्बा प्रचार हो रहा है । यहाँ के ऐतनस हार्ड स्मूथ में तो हिन्दी भाषिणी कर दी गयी है । कुछ उद्योग बंधे भी सिखाये गये हैं । यहाँ एक जलसा हुआ जिसके समापति प्रो ए० धार भाषिया ये । प्रो भाषिया मीमुर हिन्दी-प्रचार-सना के प्रेरितृष्ट है । मीमुर में उनके दशन न हो सके थे । वह सीयाम्य यहाँ मिला । धारको हिन्दी धीर उद्ग से बियोप रचि है नपर बोसते हैं धरेंदो में धीर बहुत धब्बा बोसते हैं । स्मूथ हेव मास्टर धी सम्पतपव पिरि एम ए धी हिन्दी के जरासक है धीर धारने गुनवीह्य रामायण का कनाही पथ में धनुबा क्रिया है । इस स्मूथ के साथ एक व्यायामशाला भी है, जिसे पत बप महारना की ने घोषा ना ।

बपतोर में महिलाओं की कई संघालित संस्थाएँ हैं धीर प्राय उन सभी न हिन्दी पढ़ाने वाली हैं । सिताई बुनाई, कचाई बेट का काम संगीत कहीदे काङ्गा ग्रय सभी संस्थानों में धारि है । सम्नापन धीर सघामन-नाम देबियो ही के हाथा में है । वहीं-वहीं सङ्घियों के लिए व्यायामशालाएँ भी हैं । रिजनों की यह बाधति एण के धारातर प्रबिन्तु की सूचक है । यहाँ का कोमल जलबानु सपोष क लिए बटुन धनुबुन जल पढ़ाया है । सभी महिला-समाजों में संगीत का प्रचार है । बीया यहाँ का व्याप बाबा है । काय ये देबिया महीने में दो दिन प्रास-पास के बहातों की भेंट कर दिना करे, तो पाँचशाली रिजनों को भी उनको जापति कन कुछ प्रकाश मिये । यों तो सभी संस्थाएँ तरकरी कर रही हैं पर मसोरवरम् महिला-समाज को उपस्थि बिटोय एण से सर्व्ववर्नीय है । यहाँ १९१ में हिन्दी कनास शीला गया । परने साथ देबन धार देबिया परीक्षा में बंदी धीर पठपथ यह सक्ता बङ्गर पैठानिम तक पठन गयी । धी महत्वा की दो देबिया प्रजाय महिला विद्यापीठ में पढ़ रही हैं । धन तक हीन धी दोनों एव समाज से हिन्दी का काम बजाऊ जान प्राय कर चुकी हैं । यहाँ एक

॥ इक्षिय भारत में हमारी हिन्दी प्रचार धाया ॥

बाबाजिनी समा भी है, जिसमें बेजियाँ सामाजिक नियमों पर मुबाहसे करती हैं। इतना ही नहीं यहाँ से 'समाज भारती' नाम का एक हिन्दी वैसाखिक पत्र भी निकलता है जिसमें बेजियाँ मित्र-मित्र नियमों पर लेख लिखती हैं। समय-समय पर यहाँ विद्वानों और राष्ट्र नेताओं के भाषण भी होते हैं। एक बार महात्मा जी भी यहाँ अपना धर्म उपदेश कर चुके हैं। इस कृति पर कीमती संस्था गम न करेगी।

कनाड़ी भाषा और साहित्य-परिपक्व भी बंगलोर में ही है। हमने बड़ी यत्ना से इस साहित्य-संघ के परिचय की। अच्छा लाला परिपक्व का अपना भवम है जिसमें एक हाल है, एक पुस्तकालय बाबागालय और दफ्तर। कनाड़ी भाषा के कई महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ परिपक्व द्वारा प्रकाशित हो चुके हैं। बाबकम परिपक्व ने धर्मुर राज्य के प्रोत्साहन से एक बृहत् कनाड़ी-संश्लेषी कोष बन रहा है, जिसके एडिटर और कोष-संयोजक एक बहोमूर्त सज्जन प्रो. कैंकट नारायणप्पा हैं। आप जिस उत्साह और तन्मयता से यह कार्य-सम्पादन कर रहे हैं वह बच्चों को सम्मिलित करता है। ग्रन्थ पहले धर्मुर विश्व-विद्यालय में कैमिस्ट्री के अध्यापक थे। अब वेतन पाते हैं। कनाड़ी साहित्य बहुत पुराना है और इसका काम साहित्य तो बड़े ऊँचे दरजे का है। नया साहित्य भी बढ बन से बढ रहा है। परिपक्व के कुलतन उपसमापति की शब्दा भी के दशकों का सौभाग्य भी हमें हुआ। आप साहित्य के एक यस्तवी लेखक और कवि हैं और प्राचीन साहित्य के बहुर विद्वान। कनाड़ी साहित्य किताब बनी है, इसका अनुमान इसी से किया जा सकता है कि अभीसवी सदी के अन्त तक इसमें अणभन बाध ही कवि हो गये थे जिनमें पचीस सहिसार्ये थीं और पचीस राजे-रईस। एक विद्वान ने तीन बिल्कों में उनके जीवन चरित्र लिखकर कनाड़ी साहित्य के इतिहास की पच्चीस सामग्री बुना ही है। अन्तर कनाड़ी साहित्य की कुछ पीढ़ें हिन्दी-साहित्य में जा सकें तो धारम-मराम के बोनो ही धारमों को नाम ही। कुमार व्यास की अमर कृति 'भारत' सत्य कनाड़ी साहित्य का सबसे जलम ग्रन्थ है। कनाड़ी विद्वानों का कहुता है कि ऐसे कवि भारतीय में दो ही बार हुए

अब इस प्रसंग से हिन्दी का प्रचार हो रहा है तो शक्य नविष्यन् में कोई कनाड़ी ज्ञ अपने साहित्य-रत्नों को हिन्दी में मेट करे। 'हंस' में मुञ्जरावी मरठी उर्दू, बी पत्रों के संबद्धीय और विचारपूख सेखों पर टिप्पणियों की जाती है अन्तर कोई ही जाननेवाले कनाड़ी विद्वान कनाड़ी के सामयिक साहित्य पर टिप्पणियाँ लिख कर। में भेजने की हुवा करें, तो 'हंस' उपकार मान कर उसे सहाय स्वीकार करेगा क अपना गौरव समझेगा।

बंगलोर से मि. के. बी. ऐयर का व्यायाम मन्धिर भी देखने की चीज है। मानम नहीं ऐयर महोदय ने इफका नाम हक्यूमीस व्यायाम मन्धिर क्यों रखा है। हमारे अनुमान की तो हक्यूमीस से कुछ कम न थे। हक्यूमीस न अन्तर पहाड़ के दो टुकड़े कर दिये थे तो हनुमान की सूर्य को साक भिगम गये थे और धोनामिरि पर्वत को एक



हाथ पर उठाकर कोई बार्ड हवाग मौल दीवते जसे धाये थे । इस मन्दिर में मुबकों को हर एक तरह का ध्यायाम सिखाया जाता है । ऐपर स्वयं बड़े ही सुगठित शरीर के स्वामी हैं धीरे धारक कई शिष्य धखी-जाये पहलवान हैं । धापने नूर्य लम्म्कार के धाधार पर धपनी एक ब्याधाम-बिधि निजामी है धीरे इस विषय का बहुन-मा माहिश्य भी प्रकशित कर चुके हैं हम उनसे मिल तो न सके क्योंकि उन दिन बहु कहीं बाहर गय हुए थे । लेकिन उनके मधिम बुकलेट का हमने पडे उससे मायूम हुआ कि धापने नबीन धीरे प्राचीन विधियों का मिधण करके एक वैज्ञानिक धम्माग-अम निकाला है जिसने बोड़े समय में ही धारधयजनक फल प्राप्त हो गकता है । धीरे यह पहलवान धपन बन्धानस्था में बहल ही बुबला-मलला था । ऐसे मन्दिरों की प्रत्येक नमर में बकरत है धीरे हवाग स्वयाम है जि बनता उनका बडे ह्य से स्वागत करेमी ।

मैसूर राज्य न हिन्दी धमी तक धकलियाटी मजमुन है । हिन्दी प्रेमियों की धीरे से बहु धान्दोलन हो रहा है कि हिन्दी को धाजिमी बना दिया जाय । धपर यत्र उद्योग मकन हो जाय ता हिन्दी प्रचार दुगनी गति से बढ़ने लये । इसी विषय पर कुछ विचार विनिमय करने के लिए मैं मैसूर राज्य के दीवान नर निर्डा इम्पाइन की त्रिरमठ न हाकिम हुआ । दीवान माहब बडे ही विद्या प्रेमी धीरे उदार ब्यक्ति है । हमारी धानधीन हिन्दुस्थानी में हुई । उन्ने साहित्य का उन्ने धख्या परिचय है धीरे वेतजन्मूक उन्ने बोमठे है । हिन्दुस्थान में एक राष्ट्रभाषा की बकरत को बहु भी स्वीकार कल्ये है धीरे इस धान्दोलन में उन्ने महानुमूठि है लेकिन एक सांस्कृतिक विषय में बहु नरकारी तीरे पर कोई कारवाई करने के पल में नहीं है । जब तक यह भाय इसनी बनवान नहीं हो जाती कि धर्यकारिमी नमिति इत्ते बहुमठ से स्वीकार कर से तब तक राज्य इसमें धमन देना मुनाबिब नहीं समझना । सब कुछ राष्ट्र भाषा के प्रमियों धीरे प्रचारकों के धैय उमाह धीरे मबा पर मुनहसर है । जब तक हम हिन्दुस्थानी को सर्वमम्मति से राष्ट्र भाषा स्वीकार न करा में तब तक राज्य उमे जैसे स्वीकार करेगा । दीवान साधब हमारे माध बडे मेहरबानी से पेश धाये । गोरे धविचारियों से हमें यह विगाया है कि धविचार धीरे मजकना न येन नहीं होना । दीवान माहब हमके धरबाह है । धापने म्लिकर किर-निर मिचने की इच्छा होती है ।

इसने बोये नि बंमनोर न पुना की प्रस्था विद्या । धी निबामरान बो न हमारा बो मन्गार विद्या उनके लिए हम उनके एस्तानमन्ध है । धार है तो एक एड्डी के ब्यक्ति मगर धापक पागन्धोर में मजीबता भरी हूँ है । धार बधोय है धरभारक है लेकिन है धीरे हिन्दी प्रचार के मन्ध है । धापने जनाडी भाषा में *Book of Knowledge* के डंग की एह माना मासिक पबिषा के अर में प्रकाशित करना धारमन दिया है धीरे रापर उनके धार मन्धर निजल चुके हैं । इसमें धामेक बन्धक है धीरे माहिश्य विद्याम इतिहास मूयोन बना बीशान जीव शास्त्र बन्धननि धारि धामेक विद्यों पर धामनो

पयोपी निर्बंध है। धीरे-धीरे की गयी है कि उसकी माया मरज सजीव धीरे रोचक रहे। हिन्दी में अभी तक ऐसी कोई माता नहीं निकली है। श्रीनिवासराय इसका एक हिन्दी एडिशन निकालने का प्रयत्न कर रहे हैं। आंक उनके पास है ही बेधम निबंधों का उल्लेख हिन्दी में अनुवाद करना है। हमें ध्याता है कि हिन्दी में इस माता का धार होना। बच्चों के लिए हिन्दी में किस्से कहानियाँ तो बहुत निकली हैं, लेकिन ज्ञान बढ़ानेवाली पुस्तकों का अभाव है। इस संग्रह से यह कमी पूरी हो सकती है।

फरवरी-मार्च १९३५

## सरहदी सूबे में हिन्दी और गुरुमुखी का बहिष्कार

नये शासन विभाग में कुछ तरह का स्वराज्य और प्राथमिक एटनोमी मिलान बाकी है उसका मसूदा हमारी सरहदी सरकार ने बिल्कुल बिना। उसे इसकी विस्तृत परवाह नहीं कि समय संसार में अल्प-अल्पवालों के कुछ हक मान लिये गये हैं और उनमें ध्याता धर्म और संस्कृति की रक्षा का मुख्य स्वत्व है। अगर समय संसार से उसे क्या मतलब ? उस तो स्वराज्य मिला है और वह एक नयी नीति नये विभाग का प्राथमिक करेगी और बुनियाद को बिल्कुल बेबी कि बहुमत अपने अल्प-अल्पवालों के साथ किन्ती उदारता का बर्तान करता है और इसलिए उसे क्यों न डोमिनियन स्टेट्स मिले। हमारा खयाल है, अगर अल्पमत और बहुमत में इस तरह के व्यवहार का सरकार को बिराह बिल्कुल दिया जाय तो वह डोमिनियन स्टेट्स नहीं पूछ स्वराज्य भी बड़ी सुती से दे देगी।

सरहदी सूबे के शिक्षा मंत्री एक पुस्तकमान सम्बन्ध है जिसकी नीतिगत और बचता की हम बहुत प्रशंसा मूल चुके हैं, सरकार के सुपरिचरको में उनका ऊँचा स्वत्व है। मिनिस्त्री के लिए अभी तक तो बिना बिनाकत की सबसे ज्यादा बकरत समाप्ति यकी है, वह नहीं है। अगर शिक्षा-विभाग के डायरेक्टर कोई ओरोपियन साहज होते उन तो मिनिस्टर साहज के लिए से सारी जिम्मेदारी सठ जाती। कौन नहीं जानता कि बिना मिनिस्टर साहज का की पुस्तकी है और जबकी रसी बुरों के हाथ में होती है। अगर वह बरा भी अपनी सकीबता का परिचय से तो उसे मिनिस्ट्री की यही छोड़ना पड़े और ऐसे साहसी तो बिरने ही होते हैं, जो शिक्षा के लिए स्वाब का स्वाग कर लें। इस लिए अगर डायरेक्टर कोई अल्प-अल्पवालों होते तो हम मिनिस्टर साहज को बरा का पाव समझकर चुप हो जाते। लेकिन अब हम देखते हैं कि आजकल शिक्षा-विभाग के डायरेक्टर एक मूलमान सम्बन्ध है, और हिन्दी तथा गुरुमुखी के बहिष्कार का मरकुरत उनकी गुन कीर्ति है, तो नहीं नहीं कि मिनिस्टर इस जिम्मेदारी से नहीं बचते बल्कि सारी जिम्मे



मत् में कुछ धीर हो धीर बहुमत में विलकुल उसने पिछड़ । क्या सरहरी सूबे के मुस्लिम बहुमत ने इस पञ्चराश-पूछ नीति से यह साबित नहीं कर दिया कि हिन्दू-मता का यहाँ धार्मिक शासन की स्थापना से जो विरोध था वह सबका साधारण था । धीर जब इस दशा में कि अधिकार बहुत ही बाड़े मिले हैं बहुमत इतनी दस्तबाजी कर रहा है तो उन अल्प संख्यकों की क्या वृत्ति होगी जब अधिकारों का लक्ष बढ़ जायगा ? जो साल पहले हिन्दी क हिमायतियों ने पञ्जाब सरकार से यह विलकुल जायज मुतासला किया था कि पत्रों पर हिन्दी में पत्र लिखे जाने का जो निरोध है वह उठा लिया जाय और हिन्दी पत्र मत् न किसे जाया करें क्योंकि यहाँ हिन्दुओं की एक बड़ी संख्या हिन्दी में ही पत्र-व्यवहार करती है, तो इस पर चारों तरफ बाहेला मच गया था कि उन्हें जो मिताया का रहा है उसकी जड़ खोरी जा रही है । हालाँकि मुतासला एववा निरापेक्ष धीर निरीह था । कुछ हिन्दी सिरनामों से उद्दू के प्रचार या विकास में कोई बाधा न पड़ सकती थी । धाम धारे देल में उद्दू सिरनामों लिखे जाने लगे तो उससे उद्दू को कोई बड़ा फ़ैदा न पहुँच जायगा और न हिन्दी पत्र लिख जाने से हिन्दी ही मासामान हुई जाती है । केवल उन हिन्दी-प्रतियों के मनोमालों के धारण का प्रश्न था ; जो दुर्भाग्यवश उद्दू नहीं पढ़ सके । वह भाँग टूटता ही नहीं हालाँकि हिन्दी प्रेमियों की संख्या पञ्जाब में भी बीच फ़ी सदी से कम न होगी लेकिन बड़ी मोम जिन्होंने हिन्दी का यहाँ निरोध किया यह हृदिज न बर्नित करने कि इच्छित भारत में यहाँ मुसलमानों की साधारण साम्य इस की सदी से कमता न होगी उद्दू सिरनामोंवाले पत्र पढ़कर उँक दिखे जायँ और बर्नित करना भी नहीं चाहिए । उद्दू केवल प्रांतीय-भाषा नहीं है बरकर उसी तरह हिन्दी केवल प्रांतीय भाषा नहीं है-धीर उनमें से किसी एक को भी मिताया नहीं जा सकता । उनकी उत्पत्ति पृथक् पृथक् भी सहयोग में है । दोनों को अपने-अपने विकास और फैलाव और सम्भवा का समान अवसर मिलना चाहिए । क्या उद्दू प्रेमियों में कल्पना का इतना समान है कि वह कुछ जिस हक पर आस देते हैं वही दूसरों से छीन लेना चाहते हैं और उध कुछ धीर निराशा और मनस्ताप की कल्पना नहीं कर सकती जो ऐसी दशा में उन्हें कुछ होता ? वह तो विलकुल सन्नधी रीति है, कि जो बीच इन्वीवट के लिए सुधा समझी जाय वह हिन्दुस्तान के लिए लिए ।

पर उध उद्दू स्व पर विचार करना चाहिए, जिसे पूरा करने के लिए इस नीति का साधिका किना क्या है । सरहरी सूबा अपने बालकों और बालिकाओं की प्राप्ति की व्यापक भाषा में शिक्षा देना चाहता है, किसे के हिन्दुस्तान में अपना उचित स्थान प्राप्त कर सकें और इसके लिए विद्य-निष्ठ भाषाओं में शिक्षा देना इच्छितकर है । सरहरी सूबे में धाम कबल उद्दू है इसलिये उसको उर्दू में ही शिक्षा मिलनी चाहिए और अंग्रेजी का तो प्रमुख ही ही अगर हरेक प्राप्ति इनी नीति का अनुसरण करने लये तो देश में ह्याकार मच जाय । हिन्दुस्तान के अक्षर सूबा में उर्दू जाननेवालों की संख्या

नम्रप्य है, फिर भी उर्दू पञ्जान का समी जयहू काका इत्यन्वय है और हाना चाहिए । विहार में तो वहाँ कहीं या सड़के भी उर्दू पञ्जान के इच्छुक हों वहाँ उनके लिए शिक्षा का प्रबन्ध हो सकता है । हम यह मानते हैं कि बाज हाजरी में सम्पन्न को बहुमन म मिला देने के लिए और इस प्रकार घास के मेव-भाज भी ब्रह्म ब्राह्मण के विचार में जबरन ऐसी नीति का आशय लेना पड़ता है । नकिम यह उसी हालत में मुसलमान है जब सम्पन्न के पास अपनी कोई जाया कोई साहित्य या सम्पत्ति न हो । मरहूमि गान्त के हिन्दू इस धरती में नहीं जा सकते । उनके पास वह सब कुछ कानि मौजू है जिससे उनकी पुनर्जाति का सत्ता यानी जमी चाहिए । कई बातों में तो वे बहुमन से बने हुए हैं । शिक्षा ही को ले लीजिए । शूरे मर के इस्लाम विहित स्मृतियों में उन्नीम हिन्दुओं और सिक्कों के प्रबन्ध से है । हिन्दू सड़कियों की सत्ता मुसलमान शासकों से कही ग्याहा है । मिस्लिम की परीक्षा में छ मास सर्व सड़कियों के मुजाबले में हिन्दू और सिक्क बन्धियों की संख्या एक ही उम्पठ की । हिन्दू मरफार को इम्बर्तेषत भी अपनी मरवा के अनुपात से कहीं उरान्त बचा करते हैं । ऐसी हालत में उन्हें बहुमन म मिला देने की कोई कामिल बेकार है, उसी तरह छेस गिन्स बहुमन मुसलमानों को घनने म पचा लेना चाहे तो वह उनको हिमानत होयी । यद्यपि हम विरोधाधिकारों क पक्ष म नही है । नेफिन त्रिभ नीति पर आश्रय भारत बल रहा है उसके सिद्धांत से तो मरहूमि मूब के हिन्दुओं और सिक्कों को विरोधाधिकार मिलन चाहिए ।

इस मारी परिस्थिति पर विचार करके हम इसी कमी पर पहुँचते हैं कि इस नयी नीति की प्रस्ताव चाहे और जिन कारणों से हुई हो राष्ट्रहित की सम्भावना उनमें नही है । आर्थिक दृष्टि से बेसक इस नीति के लिए एक उर्र पैदा किया जा सकता है मगर जब कि मरहूम की हिन्दी जगत शूरे का विविष्ट धंग है तो उनका स्वत्वा का किसी आर्थिक नीति पर होम नहीं किया जाना चाहिए । यह कहना कि यह इरम बेक नीयत से उठाया गया है किनी को धोये में नही खान सकता ।

हमारी क्या कितने उर्राम जितनी सत्ता और जितनी दय के योग्य है । हम सोझा-सा अधिकार पाकर भी उसका सम्भाल नहीं कर सकते । वही हम या उनमें के गैरों के बीच पड़ मिलक रहे हैं अपनी अपनी और अपनी सम्पत्तिगत में उन नीयों को बुचनन म बाज नहीं धाते जिन पर हमारा बाहु है । जब तक हम इन मनाकत से अपने को मुक्त न कर लेंगे और हम में एक दूसरे के प्रति सम्भारना न जायेंगे हम चाहे स्वराज्य मिले चाहे स्वयं हमें गुलामी से निरगत न मिलेगी । हमारे भाव्य के विधाता हमारी इन मोच-जपोट पर जितने गुण हों और उर्रमें धीर शूरे और शक्ति वाले बराने वह कम है । जारा हम उनका ब्रह्म समापण कुन करते जा प्यामा के शेर के साथ कनक में हमारी इन कृतिमा बर हाने हैं । क्या हम धरना करें कि मरहूम का विधा-विधान धरानो धरनी उर्रनीम करेगा का महानता म नबने बड़ा अनाप्य है और

इस पाससी को बर्मीस के अन्दर दफन कर देया ? मुगलमि नेताओं से भी हमारी यही प्रार्थना है कि वे अपने प्रजाब धीर अपनी उदारता धीर राष्ट्र हित-कामना से काम लेकर कौम को इस घमच से बचायें ।

दिसम्बर १६३५

## हिन्दुस्तान की कौमो जबान

कानपुर के सहयोगी 'जबाना' में मि सलीम जाकर ने उक्त विषय पर एक साहसपूर्ण लेख लिखते हुए अन्त में कहा है—

'अगर एक जबान का पैसा करना जरूरी है तो धीर नहीं तो हिन्दू धीर मुसलमान इसी पर रजामन्व हो जायें कि दोनों अपने-अपने बच्चों को हिन्दी धीर उर्दू दोनों जबानें मदर्सों में पढ़वायें धीर जो महत्व प्राप्त बंधुओं को हासिल है उसकी बड़ काट देंगे हस्तों की जबान बदलवा देंगे मदर्सों में कैलने मुस्ली जबानों में लिखे जायें धीर बर्मीस मुस्ली जबानों में बहस करेंगे क्योंकि इन बातों के क्वीर बंधुओं का प्रभुत्व पर शीर नहीं आ सकती ।"

हिन्दू तो आज भी खालों की संख्या में उर्दू पढते हैं, लिखते हैं धीर उसको अपनी मातृभाषा समझते हैं । मुसलमानों ने शुरू में हिन्दी की अपनाया था अगर अब वे हिन्दी का अक्षर देखना भी मुमक़्त समझते हैं । क्या इपारे मुसलमान बोस्त इस बात पर राजी होते कि हिन्दी हाई स्कूल तक माजिमी छपार दे बी जाय । हमारा बक़ीन है हिन्दुओं की हाई स्कूल तक उर्दू के माजिमी बनाये जाने में एतराज न होवा । अगर दोनों जबानें हाई स्कूल तक माजिमी हो जायें तो दोनों जबानों का बिकस इस बंध से होवा कि वे दिन-दिन एक-दूसरे के समीप जाती जायेंगी धीर एक दिन दोनों मापाएँ एक हा जायेंगी । अगर मुसलमान इसे मंजूर कर लें तो मुस्ली जबान भी यही हो जायगी कैलने भी इसी जबान में लिखे जायेंगे धीर बर्मीस भी इसी जबान में बहस करेंगे । अब एक बानो भाषाओं को समीप न भावा जायना बंधुओं का प्रभुत्व बना रहेगा ।

दिसम्बर १६३५

## हिन्दुस्तानी एकाडेमी का सालाना अलसा

हिन्दुस्तानी एकाडेमी प्रजाब का सालाना अलसा जनवरी के पहले अषाह में होना लिखित हुआ है । इस अवसर पर प्राण के सुनीपः धीर जिडान एकत्र होकर साहित्य धीर संस्कृति के अनेक विषयों पर प्राण्य करेंगे धीर लेख पढ़ेंगे । एकाडेमी ने अक्की उर्दू विभाब की सभारत के लिए बलिख के बबोबूअ अगुजवी धीर कम्पावी भीमाला



मिए मावरी को हम ब्राह्मी लिपि के प्रथमा ही समीप से जानें उसनी ही भारतीय लिपियों में निष्कटता था जायगी। इस विषय में कुछ प्रचार और प्रोपेगैण्डा हो भी चुका है, और लिपि-सुधार-मिति की कोशिशों में उसमें जो कच्चाईयाँ थीं उनके दूर हो जाने की भी आशा है। ऐसी दशा में हम तो किसी नये आविष्कार का भजन नहीं कर सकते। हमें तो सम्पूर्ण राष्ट्र को अपने साथ ले चलना है। लिपि-सुधार-मिति में संयुक्ताचारों के लिए कुछ नयी व्यवस्था करके धाये की कठिनाईयाँ भी दूर करने की चेष्टा की है और श्री हरि भी नोबिस से हमें यह जानकर बड़ा हय हुआ कि वह जो नये दायप बनवा रहे हैं उसकी संख्या मौजूदा पाँच सौ की बगलू डेढ़ सौ से ज्यादा न होनी। इसके धाये में किसी सुविधा हो जायधी और प्रकाशन में लक्ष की कितनी दिक्कत हो जायधी उसके साथ ही इन नये परिवर्तनों के लिए किसी प्रिन्स की बकरत नहीं। बोडे से सम्बाध से हमारी धार्मिक उनके नये रूप से सम्बन्ध हो जायधी।

जनवरी १९३६

## हिन्दुस्तानी एकाडेमी का वार्षिक सम्मेलन

चार घण्टे के बाद धरणी बाहू, ठेकू, चौबह जनवरी को हिन्दुस्तानी एकाडेमी इमाहाबाद में फिर अपना सामाना बजला किया। इसके समापति बिहार के प्रतिष्ठ नेता साहित्यकार और 'हिन्दुस्तान रिब्यू' के बरम्भी सम्पादक श्री सच्चिदानन्द सिंह थे। साहित्यकारों का प्रख्या सम्मनन था। उन्हीं बहू और हिन्दी दो विभागों में का दिया गया था। उहू विभाग के उहू मौलाना अजुम हक शास्त्र के और हिन्दी विभाग के उहू डा मयानाव भय थे। दोनों विभागों में कई बरम्भी-बरम्भी बिशुता और मनेपठा और खोज से अरे हुए सैल पड़े लख बरम्भी दोनों सम्मेलनों के असब-असब होने के कारण बोटाओं की सारे निबन्धा को मुलने का प्रबलण न मिला। निर्मेधित सम्मेलनों के एक बगलू रहने का कोई हलकाम ही सकता तो आपस में बिचार-बिनिमब के असब-असब और इन सम्मेलन की उपमोमिता कहीं क्याथा बर जाती। नहीं संख्या हीते ही सोन अपने-अपने डेरों की राह लेते थे और बूतरे दिन फिर उसी बरस धाते थे जब बजला शुरू होनेवाला होता था। उर्दू और हिन्दी विभाग की असब प्रबलण कर देने से एक और हानि यह हुई कि उर्दू और हिन्दी के बीच में जो बीबार खड़ी होती जा रही है, वह और भी बढ़ी है। अगर दोनों समुदाय मिल नहीं सकते तो न मिलें। अपनी अपनी प्रबलण बजाना चाहते हैं, तो बजाते जाय लेकिन क्या इसमें भी कोई बुराई है कि दोनों एक-दूसरे की सुन भी नहीं सकते। अगर निबन्धों की चुनी हुई संख्या सम्मिधित रूप से पढ़ी जाती तो पुरकता का मतल तो कुछ न कुछ कम हो ही जाया। हमें तो इन सारे निबन्धों



में मौजाना यन्त्रुम हक सातम का सुतबा ही सभने ज्वाश विचारपूर्वक जान बडा । उनक भावत में धोर वा स्फूर्ति की धीर सकीन पैदा करनेबासी शक्ति थी । धापन बहुत ठोक कडा कि धमी तक साहित्य धीर भाषा की उपति के लिए कितने प्रयास किये सने धोर किये वा रहे हैं । उनमें कोई सामयस्य नहीं है । हरेक धपने-धपने ढंग से धपना धाना काम करता है । दूसरे की धनुगुतियों धीर यमतियों से साथ उठान की चेष्टा नहीं की जाती जो काम एक करता है, वही काम दूसरा करता है, धीर इस तरह बहुत-सा परिशय धीर बन ब्यब हा जाता है ।

समापति स्योचक ने एकाडेमी के किये हुए कामो पर एक सरसरी गजर शक्यन हुए यह इच्छा प्रकट की कि ऐसे सम्मेलन प्रतिबध होना चाहिए धीर उसमें भागठ क प्रस्य भाषाया के सिद्धांतों को भी विमन्थित करना चाहिए । धापने हिन्दी-उर्दू विबाध पर प्रकाठ भासा धीर दोनों बहनों को समीप धाने धीर सने विम धाने का धनुराध किया । धापके सन्द भइ है—

‘धालरेवम एव एजेस्वरबसी ने सर विविधम वैगिय (यवनर संयुक्त प्रान्त) को हिन्दुस्तानी एकाडेमी को कायम करने की राधठ देते हुए धरने भाषय में कडा वा कि ‘एकाडेमी एक ऐसी बबाल को तरबकी देने की कोठित करेवी जिस पदे-नितने भावा के धसावा सब समक लक्ये । मुझे इस दृष्टिकोख में पूरी सहानुमुति है । सर विविधम मैरिस ने तिष्ठा सनी को बबाध देते हुए कडा—हर हिन्दी तिष्ठाबाल का उदरय यह होना चाहिए कि प्रान्तों बह मुसलमानों के पढ़न के लिए लिख रहा है । धीर इमी तरह हर उर्दू तिष्ठाबाले को यह कायल रगना चाहिए, भासा बह हिन्दुधा के पढ़ने के लिए लिख रहा है ।

उत्तर भारत में यह विषय साहित्य धीर भाषा दोनों ही एतबार से बहुत महत्त्व पूख है धीर समापति ने धपने भाषय न इमी समस्या को हल करन की चेष्टा की नेकिन पार्थिववाधियों को उनका बह प्रयत्न दूध इधिकर न लजा धीर बसा समाठ हो जाने के बाद पर्थों में पुनकटा के समचल में बार-बार सेठ बिसे का रहे है धीर बह सिठ किन्ना जा रहा है कि उर्दू धीर हिन्दी सब समन-समय टस्ते पर बलकर एक दमरे से इतनी दर निकल गयी है कि उनका समीप धाना समन्वय है धीर यह कि उनको बिलाने की कोशिस दोनों ही भाषाधो को मटियामेट कर देवी । एतथाधियों का बाग बाट कुनौती बी जा रही है कि न कोई ऐसी रचना करके दिगा वें जिसमें एका का धाराठ निभाया गया हा धीर बह किये-बहाली की पुस्तक न हो । बकि बाई एतिरागिक वा वैज्ञानिक वा दार्शनिक वा धालीधनारक इति हो । हम धरने पुनरतापारी भाधयों में बड़े धरक के साथ पुछेंगे कि समर ऐसी कोई बबाल धीरुर होतो धो इस संस्था की उकण्ट ही क्यों पड़ती । धी सञ्चिभाग सिद्ध वे जिन भाधयों का इवासा रिधा है उही भाधयों में अब यह बाग ग्रीक निवारी ययी है कि एकाडेमी के सम्यारणों को

मेंता कोई मची भाषा निर्माता करता नहीं बल्कि उर्दू और हिन्दी की पुनः-पुनः तरफकी बसा वा और इस रूपा वा नाम 'हिन्दुस्तानी एकाडेमी' केबल इसमिए रक दिया गया था कि 'उर्दू-हिन्दी एकाडेमी' कुछ जुनने वा लिखने में भला न लयता वा । हमारे विनों ने तिस परिभम से यह खोज की है, उसके लिए वे बचाई के पाठ है लेकिन सर विनियम मीरिस वा प्रानरेकुल राय राजेश्वरवती के उन भावों में जो उनके मन में वे हिन्दुस्तानी एकाडेमी के विषय में किसी तरह की बुनिया नहीं मानूम होती । वे दोनों भाषाओं की इस प्रगति से असन्तुष्ट वे और उसका सुधार करने के लिए ही एकाडेमी की स्थापना हुई थी । उर्दू और हिन्दी को पुनः-पुनः अपने रास्ते पर लमाने के लिए किसी तरह के सरकारी सहारे की जरूरत न थी दोनों भाषाएँ उसकी मदद के बغير उन्नति कर रही हैं ।

अगर हम पूछते हैं अजर सर विनियम मीरिस और राय राजेश्वर वती ने उर्दू और हिन्दी को पुनः करने ही के लिए एकाडेमी की स्थापना की तो अब हमारा कर्तव्य क्या है ? पुनः को बचाना वा बढाना ? अजर बचाने का निश्चय कर लिवा नाम तो यह साहित्य और उम्द दोनों ही के लिए चाहिए । हमारा धारत पुनः नहीं एका होना चाहिए । इसे मानकर हमें चाहे अपने कर्तव्य का संज्ञा करना होगा । और मिलाने की सबसे पुरससर तदबीर यह है कि बर्तमान फाइनल और हार्ड स्कूल परीक्षा तक उर्दू और हिन्दी दोनों भाषिमी विषय बना दिये जायें । तभी मानेवासी पीछी तिस भाषा वा विचार को स्पष्ट करने के लिए जो सब उपयुक्त समझे उसका व्यवहार करेयी । और ऐसे तो हजारों उम्द हैं जिनका ध्यान भी हम व्यवहार न कर सकते हैं, पर भाषा-बानुपी विज्ञाने की हबस हम उन सबों का व्यवहार नहीं करने देती । वास्तव सापक्ष ने हिन्दुस्तानी में जो भाषा दिया वा उस पर यारों ने खुब कहकहें मारे वे लेकिन कम्ब उन्हें किसी ऐसे पम्बिक जगसे में बीसने का अवसर मिलता तिसमे अण्ड वा कम्पक हिन्दु-मुसलमान दोनों ही होते तो उन्हें मानूम होता कि वही बनता की भाषा है ।

फरवरी १९३९

## दिल्ली में हिन्दुस्तानी सभा

हिन्दुस्तान में तामर यह पहला मौका था कि आठ मार्च को देहली की जर्मिया मिलितरा में देहली के उर्दू और हिन्दी के शरीकों और छात्रियकारों ने मिलकर एक हिन्दुस्तानी सभा की बुनियाद वाली तिसका उद्देश्य यह होवा कि वह दोनों छात्रियों को एक दूसरे के समीप लावे उनके शरीकों में मुहम्मद हमदर्दी और एफता पैदा करे, उन्हें

एक-दूसरे के विचारों और भावों को जानन और समझन का मौका द और हिन्दुस्तानी भाषा के विकास का साधन करे। एक समय या जब इन्म और उन की इतनी उन्नति और राजनीति में इतनी जागृति न होने पर भी भारत में बहुत कुछ मुहूर्तत ही और साहित्य के क्षेत्र में तो कोई श्रेय ही नहीं था मगर जमाने ने कुछ ऐसा पलटा था कि हिन्दी हिन्दुओं को जवान हो गयो और उर्दू मुसलमानों की। हिन्दुओं ने उर्दू से मुंह मोड़ना शुरू किया मुसलमानों ने हिन्दी से। धन्य-अनन्य दो कर्म हुए और दोनों जवानों और साहित्य राजनीति के क्षेत्र में पड़ गये। भारत में मनभूटाब बान्न लगा। हिन्दी प्रकार की कोई कोटिया उर्दू बायरे में सन्देश की भाँसों से देखी जान सभी उर्दू प्रकार की हिन्दी बायरे में। हालाँकि भारत का राजनीति से कोई सम्बन्ध नहीं उनका विषय तो ईशान है और ईशान बाहू अपने भावे पर कोई लक्ष्य लगाये वह ईशान ही है मगर वह राजनीति का युग है और कोई उद्योग ऐसा नहीं जिन पर राजनीतिक सभी छटा का रंग न पड़ा जा सक। इसका नतीजा यह हुआ है कि हिन्दी के नए उर्दू के कारे है और उर्दू के नए हिन्दी से। उर्दू में जो कुछ लिखा जाता है वह उर्दू पाठकों को सामने रखकर हिन्दी में जो कुछ लिखा जाता है, हिन्दी पाठकों को सामने रखकर। हिन्दी लेखकों को यह समझें कि उनके पाठकों में उर्दू जाननेवाले भी हैं, जब वह जानता है कि ऐसा नहीं है। उर्दू लेखक इतना धाका नहीं हैं, क्योंकि जब भी विद्यार्थी पीढ़ी के कुछ लोग बाकी हैं जिन्हें उर्दू और हिन्दी दोनों से एक-सा प्रेम है, क्योंकि वह उन्हें एक ही जवान के दो रूप समझते हैं फिर भी ऐसी लोग साधारण में इतने कम हैं कि जब और जवान की प्रगति में उनका लिहाज नहीं किया जा सकता। इस तरह दोनों जवानों धन्य हुए जा रही है और जिनसे हम अपनी जवान में बेतकलुष बन्धनोत्तर न कर सकें उनसे दिस बर्कर मिलेगा। हिन्दी और उर्दू साहित्य बन्धनोत्तर से ऐसे जमाने से गुजरे, जब साहित्य ने धाम विन्दी से नाया तोड़-सा लिया था और उनकी सारी ताकत बिच्छू और बिलाल के कुछ रंग में बटती थी या बहुत हुआ तो रात की टाँक की और बुनिया की अनिरयता पर फिनामके बचायी लेकिन बुनिया में जो साहित्य बँद-आपते हैं उन्हाने बीम की सारी बलापी है उसकी संस्कृति बनाना है। धरौब ही बीम का पय-प्रवृत्त होता है। उनका निम्न प्रेम की व्यापति ने भर होता है। उसमें सतसुख और संतुष्टिवासी के लिए जयहू नहीं होती। धार्य मुझ्दार से लड़नेवाले लोग हैं यही धरौब। ऐसी बीम-सी बालि है जिनका बीमारोपण धरौबों ने न किया हो। इसके बिना हमकार हो सकता है कि बीम का एकीकरण उनको संस्कृति का एकीकरण है और यह उदरय आपन की दोन्नी विचार-विनिमय और सहानुभूता से ही परा हो सकता है। भाषा के एकीकरण का भी इनके बिना कुछ कार् साधन नहीं। बाप बाल की भाषा नितियाँ और बाजारों में बनती हैं मगर साहित्य और संस्कृति की भाषा तो विज्ञान के समाज में ही बनती। जब उर्दू का एक धरौब अपनी को रचना ऐसे

समाज के सामने पड़ेगा जिसमें हिन्दी के लेखक भी शरीक हैं तो बड़-ऐसी भाषा तिलम की कोशिश करेगा जो हिन्दी-पार्श्व की समझ में आए। इसी तरह हिन्दी का सेसक उर्दू के प्रवीणों की महजली में अपनी भाषा को सुबोध रखने पर मजबूर होगा। और अगर हमारी अन्य योजनाओं की तरह इस समाज का भी शीघ्र के हार्नो अन्त में ही गया तो कुछ दिनों में हम आशा कर सकते हैं कि जैसे दिल्ली में हिन्दी और उर्दू दोनों ही का अन्त हुआ उसी तरह हिन्दुस्तानी भाषा और सीधी का विकास भी विन्नी ही में होगा। अभी तक हिन्दुस्तानी के हिमायतियों के रास्ते में जो सबसे बड़ी मुश्किल है, वह यह है कि वह कुछ कोई इन्फो बीज उभर आया में नहीं मिल सकते। अगर हिन्दुस्तानी समाज कोई छोटी-मोटी पत्रिका भी हिन्दुस्तानी भाषा में निकालने का प्रयत्न कर सके तो वह काम की बहुत बड़ी निश्चय होगी और उन लोगों को जो हिन्दुस्तानी के समर्थक तो हैं पर हँसी के झोंक से उसका व्यवहार नहीं करते क्योंकि अभी उनकी ताकत बहुत ही बड़ी है, बड़ा प्रोत्साहन मिलेगा। हम समाज के अगुओं से बरखास्त करते हैं कि वह अपने मतलों की सुधगाएँ अन्तर्वारों में प्रकाश करें ताकि औरों को उनकी कारगुजारियों का ज्ञान मान्य होता रहे।

अप्रैल १९३६

---

नीर-क्षीर



## नीर-घोर

पुरान—सूर्य बरत—मनुवाक तथा संपादक रामचन्द्र वर्मा तथा श्री प्रमदारण धाम प्रणत ।

भीष्म एवं रामचन्द्र वर्मा पुरान के हाकिम और धरती के बिद्वान हैं । शायद उनके सहकारी श्री प्रमदारण जी भी धरती के धार्मिक-कामि होंगे । इन दोनों महानुभावों ने पुरान का हिन्दी अनुवाद करना शुरू किया है । यह पुस्तक बेमेल एक सूत्र है । इनमें धरती इबारत भी गयी है । उसके नीचे सचकी टीका भी कर दी गयी है । मानुस नहीं टोकाएँ किन्तु मुकस्तिर के धाबार पर की गयी हैं । उसका नाम नहीं नहीं दिया गया । किता किसी मुसलमान या मुस्लिम धार्मिक की सगर के यह टीका कैसे ही मान्य नहीं हो सकती जैसे बेजों की टीका किसी संस्वतम मुसलमान द्वारा संपादित की हुई । हाँ इनका एक गुण फल धरतय हो सकता है और यह है हिन्दू-मुसलमानों का वैयक्त्य । न बाल हमारे ये भाई कब समझेंगे कि इससाम बम का विज्ञान पुरान की यह टीका बेजोवा जो मुसलमानों द्वारा सम्पादित और प्रमादित हो । ऐसे अनुवादों से तो भगवाँ होने के विषय और कोई फल नहीं निकल सकता । किन्तु संसार में ऐसे भी प्राणी हैं, जिनकर भारतवर्ष में जो बूचड़ों के मतों का लंडन करना ही जातीय सेवा का मुख्य उपाय समझेंगे ।

हिन्दू मुसलिम-इसाहाद की कहानी—नेगर स्वामी भद्रामण्य जी ।

स्वामी जी ने हिन्दुओं और मुसलमानों के धारण के भगवें की मुकसूर तापीय लिगी है । भगवें हमसा होते रहे हैं । हिन्दुओं की बीजों और बीनियों से पूर मराधवाँ हुई । मुसलमानों की बीजों से बीजों की बीजों से हिन्दुओं की हिन्दुवा से । धरत पाठिगत और बनयत लड़ाइयाँ परमप से होती बनी या रही है । मगर कोठिय यह होनी चाहिए कि हम उन भगवों को भूल जायें न कि गड़े मुरके उपाइ उपाकर बिरोधी की धाग और मरवाते रहें । हिन्दू मुसलमान के मिर पर हमजाय रगजा है मुसलमान हिन्दू के मिर । दोनों पक्षों को धरने पक्ष का ममयन करने के लिए दलीमें धीर प्रमाद मिल जानें हैं और धरत कभी तय नहीं होता । जब तक हम बूचड़ों के धरगुणा पर परसा शासना और गुणों को देना न गीमये जब तक हम धरने हुय की उपाय न बनायें तब तक धरत की कोई धरता नहीं हो सकती ।

अंधा पतहाद और मुफिया सीहाद—नेगर श्री स्वामी भद्रामण्य जी ।

इन पुत्रक में मुसलमानों के एक गुण धार्मिक सम्प्रदाय का मुत्ताय उपायि ने

लेकर उसके बदलान स्वल्प तक खोज और प्रमाण के साथ लिया गया है। इस पुत्र सम्प्रदाय का नाम इसमाइलिया था। इसकी बाणी हुसैन बिन सबाह नाम का एक सिमा मुसलमान था। हुसैन ने अपने सम्प्रदाय को कैसे फैलाया उसके क्या-क्या सिद्धान्त थे और किस समयों से वह कई सदियों तक बढ़-बढ़े बायसालों को नीचा दिखाता रहा यह बृहत्तम किस्ती बयानाव से कम मनोरंजक नहीं। कम के नाम पर संसार में कैसे धत्याचार होते चले गये हैं, इसका यह एक प्रश्न उठाकर है। जब हुसैन की के जमाने में इस सम्प्रदाय की बढ़-उठान गयी तो उसके कुछ बड़े-बड़े धारणी सिन्धु धारि स्थानों में नाम धावे। सिन्धु के लोहे उठी इसमाइलिया फिरके धनुयायी हैं और उनके इमाम सर आधाडी हैं। हिन्दुस्तान में जाने पर इस फिरके के फिरके ही हिन्दु भी शामिल हो गये। एक इस फिरके के नेताओं को यह भासता है कि यदि हिन्दुस्तान में मुसलमानों का राज्य न रहा तो हिन्दु फिर हिन्दु-धर्म को मानने अवैध। इसलिए उन मुरादों को फँसाने के लिए नये-नये धर्म-ग्रन्थों की रचना की गयी जिसमें हिन्दुओं के पुराणों और प्रवृत्तियों का भी समावेश कर दिया गया। उन ग्रन्थों के नाम भी हिन्दु-धर्म-ग्रन्थों जैसे रख दिये गये। यही नहीं भासा ही भी हिन्दु कहलाते हैं।

इसी इसमाइलिया फिरके की बेचा-बेसी मोरोप में इसाइयों ने भी जेमुहट नाम का सम्प्रदाय जारी किया जिसने रोमन धर्म की पिरती हुई बीचार को बहुत दिनों तक सभामा और उसके प्रकारक मुसलमान के धारकर हिन्दुस्तान और बापल धारि एरिमाई देशों में ईसाई-धर्म का प्रचार करते रहे।

लेकिन हम लेखक के इस कथन से सहमत नहीं हैं कि इस प्रकार का धर्म विरहात मुसलमानों और ईसाइयों ही तक मरुत है। हिन्दुओं के भी कई ऐसे मत हैं जिनमें बड़ा का सबसे कम रूपयोग नहीं किया गया और ईसाइयों या मुसलमानों से बाह्य फिरकों ने किया और न गयी निमित्त है कि मुसलमानों के भारत में जाने के पक्षे हिन्दु-धर्म में हिंसा और अंधविश्वास का पता न था। पास्तारियों से बुनिया कमी काली नहीं रही। अगर मुसलमानों ने इसमाइलियों ने अपने भक्तों की धात्वा पर अधिकार जमाया और उन्हें धर्म्य धर्मवालों की हत्या करने पर धामारा किया तो भारतवर्ष में भी ऐसे कामांध मुरदों और महन्तों की कमी नहीं रही का धर्म की भाँ में नामा प्रकार के झट्टाचरक करते रहे। यह मानना पड़ेगा कि हर एक धर्म में एक की सरलता और धडा से फायदा उठानेवासे मुख रहे हैं, सब भी हैं और हिन्दुओं न लम्बे साधनान रहना चाहिए।

माधुरी : माघ १६८

भाषा—लेखक व० रामयोगाम विभ डिप्टी कमिश्नर।

यह एक रूपक है। एक महान् उद्देश्य नामा-बन्धन में परकर किस त्रिति निम्न



ही पाया है, यही शय मनोहर कहानी का विषय है। बीच में वास्तविक विचारों का समावेश मिलता है। माया बहुत सरल है। धारि में लेखक महोदय का चित्र है। उसके बार महाराजा बसठमपुर का फोटो भी है। लेखक का चित्र देखकर तो पाठक की उत्सुकता शांत होती है, पर महाराजा साहब यहाँ क्यों था बैठे यह समझ म नहीं पाया। संभव है, महाराजा साहब गुलियों के इन्टरव्यू में या लेखक महोदय पर उनकी विशेष कृपा हो। बहुराज उनके फोटो से पुस्तक का महत्व बढ़ता नहीं कम हो जाता है। क्योंकि यहाँ कृतामर की वृ धाती है।

शब्द भवन—लेखक पं रामगोपाल मिश्र ।

इसमें भी व ही लोगों चित्र चित्रण रहे हैं रायद दोनों के ब्याक बनना जिये पर ने समझीं ज्यारा जया भी बयो थी इसलिए उन्हें दीवका से लिना देने की प्रेरणा बही हुमा कि उनका कुछ उपयोग हुमा। उपन्यास म वास्तव-विवाह कुज-विवाह धीर केनेन विवाह के कुपरिचयान दिखाये गये हैं। दर्शन की कुप्रथा का भी उत्सव क्रिया गया है। कनक का जीवन इसलिए पुख्कय हो जाता है कि पिता के निधन होने के कारण उसका विवाह कप्य मुपारी से न हो सका। सोनह बय की वास्तव-विषया शांता इसलिए बिय भा लयी है कि उसकी नव-विवाहिता विमाता ने उसे मुमराम भेज दिया। शांता का छोटा भाई सतीश हेमलता के प्रम में नरारय के विवा धीर कुछ न देखकर घर से निकल जाता है धीर हेम का विवाह कप्य मुपारी से हो जाता है। किन्तु हेम के हृदय पर सतीश की मुहर थी। हेमलता मिज्ञान की शरण भेरी है धीर धन की उमे धी बिय घाना पडता है। पुस्तक करणारस-युख है। करिब-विषय में भी लेखक की कुठमता वा परिचय मिलता है। माया परम धीर मुबोध है। विवाह की समस्या बटिन है। बोरोर में प्रम के विवाह होये है पर बोड़े ही दिना में समाक की नीवत धाती है। धम ही एक एमा स्वप्न है जिनके धापार पर बैवाहिक धमन धामीवन घटन रहे सगता है।

पुष्प कुमारी—लेखक पं टीकाचम विषाठी ।

कमल स्त्रिओर ने एक धोर मंषट में पुष्प कुमारी की रखा की है। पुष्प कुमारी ने उमी खल प्रकिता की कि तुम्हारे विवा धीर किसी को न करुगी। कुछ निर्णों के उपरांत एक महामा धाड है धीर पुष्प कुमारी को रोधकर बहते हैं कि यह घट्टाछ् बय की धवस्था में विषया हा जापयी। पुष्प कुमारी बटिन तास्या से भाप्य जिनि को धप्यया कर टेनी है धीर कमल स्त्रिओर स उबका विवाह सामन्य हो जाता है। पुष्प कुमारी के माँ धापय-गाध को बहता स्त्री तनिता माम-नमुर से मग्गश बरसे धमग हो पाती है पर बहुत बच्छ बरकर धम को छिर धरने कुदुम्ब से धा मियती है। बलगा ने बहुत धधिध नाम लिया गया है। उन्पल बया है भापुम होता है, कोँ रीँचन भी कया बाँच रहे है। बही

॥ नीर-चार ॥

शैली है, वही भाषा। अमुदियाँ इतनी हैं, इतनी इतनी मही वाक्य इतने मही धीर धसपठ बिचकी कोई ह्य नहीं।

शीलमयि—यह भी पं टीकाराम की कृति है। धाम्यायिका बुटी नहीं है। पति एक बिचवा के प्रेम में प्येठ जाता है। पत्नी इस खोक में मर जाती है धीर मरने के बाद स्वप्न में पति को उपवेश देती है। पति की धानें खुम जाती है। यह उस बिचवा को किसी धनावासय में भेज देता है।

गौरी रांकर—लेखक भी मबारीभास गुप्त।

प्लाट में कोई नबोवता नहीं धीर न कोई बरिब ही उस्नेसनीय है। पहले ही धप्याय में नायक का गौरी से मिसना धनोबे डंप से हुपा है। गौरी हमबा जाने के लिए मबल रही है, या मबबुर है, वैसे कहीं से नावे। संकर उही समय बहाँ धनावास था जाता है धीर गौरी के लिए हकबे की सामग्री ला देता है। एक मुबती का हमबे के लिए बिब करना धीर एक धपरिचित मुबक के पैसों से हकबा जाने को तैयार हो जाना हस्त्यजनक है। छोटी-सी तो पुस्तिका ही है, पर वह भी धाबन्त ऐसी ही धसपठ घटनाधों से मरी पड़ी है।

माधुरी १० मार्च १९२४

धादराँ बहू—धी शिबनाब शास्त्री की 'लेखक' नामक बँमला पुस्तक का धनुबाद। धनुबादक भी शिबसहाम बतुबेसी।

मूल बँमला पुस्तक के उग्रीध संस्करण हो चुके हैं। इधसे बाहिर है कि पुस्तक कितने मार्लों की है। मजा यह है कि धनुबादक महोबय में केवल धनुबाद ही नहीं किया पु-बात कबा को सुखात भी कर दिया है। धब सिख हो गया कि किसी मनुष्य को केवल लेखक की पुस्तक का धनुबाद करने ही का धबिकार नहीं उसने मनमाना उसट-येर करने का धीर उस पर भी पुस्तक को मूल का धनुबाद करने का धबिकार है। हमारी समझ में यह धनुबादक महोबय की धनाबिकार बेष्टा है, उन्हें इसका कोई मबाब नहीं कि किसी लेखक की कीर्ति को धपनी इध्या से धप्ट कर दें। धीर सुनिए। यह पुस्तक हिन्दी में पहली ही बार धनुबादित होकर प्रकाशित गही हुई। इसका पहला एडीशन 'धारवा' के नाम से पहले छप चुका है। यह दूसरा एडीशन है पर नाम बरबन गया है। 'धारवा' शायद धध्या नाम था इधमिए फिर नामकरण किया गया है। इधे भी बोले-बड़ी धमभला जाहिए।

पुस्तक बाभिकाधों के लिए उपयोगी है धीर इधसे उगाक मभोरंजन भी होना किन्तु धनुबादक ने इधे सुखात करके इध पर बोर धापात किया है। मामूम नहीं इध

किताब में एसी कौन-सी सूची थी कि हमका बेगमा से धनुषान करना आवश्यक समझा गया। यदि हमारे यहाँ के हिन्दी लेखक एनी साधारण कथाओं की कल्पना भी नहीं कर सकते तो हमारे भाषा का ई-बद ही मानिक है। सम्भव है, मूल पुस्तक में कोई कथा बाध हो धनुषान में तो कोई एनी बाध नहीं पियायी देती। हाँ अगर कोई सूची है तो यह कि भाषा में यहाँ-यहाँ बमला का भयक पा गयो है, जो भाषा की सरलता में बाधक होती है।

मासुम नहीं प्रकाशक महोदय ने इस पुस्तक के लिए बिना किन बिनाकार से बनवाये हैं। हमने ऐसी धर्मी लखीरों कभी नहीं देखी थीं। कोमल भाति के साथ इतना भीषण धायाचार घात तक किसी ने न किया होगा। ऐसी लखीरों से तो लखीर का न रहना हवात पुना धम्मा था। भास्तर में इन बिनों न पुस्तक के साथ बाह्यगुणों को मिटा दिया है।

गृहिणी गौरव—अपों का संग्रह। धनुषानक धीकप्युसास बर्ना।

साठ बेगमा गलों का धनुषान है। कहानियाँ मनोर्षक और सिचात्र है। कई कहानियों में स्त्रियों के धारक चरित्र दिखाये गये हैं। पहली कहानी तो बहुत अच्छी नहीं किन्तु शेष कहानियाँ उच्च कानि की हैं। 'मेरा का धधिकार' हमें बहुत पसन्द आयी। धनुषानक ने भाषा मानित्य को कहीं हाथ से नहीं जाने दिया। पुस्तक में लखीरों को बर को समन्त की गयी है। शुरु में मेरा का बिना और उनका मंडित जीवन चरित्र पिया गया है। उनके गिये हुए दानों की एक तापिका को ही गयी है जो दाना के मडार को घटा देती है। पुस्तक मंचित है और बिना मायागत अच्छे है।

मासुरी माघ १६२१

भारतीय शासन—बीया मंडरल। मयक और गमसक धी मयकानाम बेना।

हम राशनीतिक युग में अब कि प्राणिमात्र के हृदय में स्वरान्त की धनितगार्दें उभरी हैं यह आवश्यक ही नहीं धनिताय है कि हम धरने दग की शासन-पद्धति से कभी भाति परिचित न। अब तक हमें यह न मानुम है कि इन पद्धति में क्या-क्या बुराईयाँ हैं उनके मुबार की क्या-क्या योजनार्दें हैं और शासन के चित्त-चित्त धनों के परिबन्धन में हमारा कपेट क्या-क्या होगा। हम स्वरान्त के धाने-धन में पूरे उम्मात् में मम्मिमित नहीं हो सकते। इन पुस्तक में हम इन बिन्दु की चित्तनी ही बाने मानुम हो

घबरी है—ब्रिटिश साम्राज्य का शासन पार्लियामेंट प्रिवी कांसिल भारत सरकार, भारतीय व्यवस्थापक मंडल प्रांतीय सरकार बेसी रिपोर्टों भारतीय शासन के विभाग—इन सभी विषयों की विवेचना की गयी है। लेखक ने केवल इन संस्थाओं की बर्षा ही नहीं की उनके विषय में अपनी राय भी देयी है। 'इंडिया कांसिल' से साधारणतः लोग घबराते हैं। लेखक ने उसका विस्तार से वर्णन किया है। आपकी यह राय है कि इंडिया कांसिल की कोई जरूरत नहीं। जब उपनिवेशों के सेक्रेटरी को इंडिया कांसिल की जरूरत नहीं तो भारत के सेक्रेटरी का चाहीस भास वाणिज्य बर्ष करके एक कोसिल रखने की क्या जरूरत। पुस्तक उन भागों के लिए बहुत उपयोगी है, जो राजनीति में प्रारम्भिक ज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं। पीछे बघातेकर हुने की मे इसकी भूमिका लिखी है।

### स्वाधीनता के पुजारी—लेखक की मूर्ख विचारलकार।

इस पुस्तक में उस के इस प्रबल देश-भक्तों को बीर-क्या का संघर्ष किया गया है। उनमें कई सिद्धांत हैं कई राजकुमार हैं कई ऊंचे राज्य कमचारी हैं। इन बीरों ने कितनी विलेटी से कड़ी से कड़ी यातनाएँ देनी देश प्रति की बेबी पर कितने प्रमुख विरवास और सदस्य उत्साह से अपने को बलिदान किया यह पढ़कर उन बीरान्ताओं के प्रति हृदय में धडा की महुरें-सी उठने लगती है। स्वाधीनता की देवी से बरवान पाना कितना कठिन है, इसका अनुमान इन चरित्रों के देखने से ही सकता है। पुस्तक सचित्र है, ठेरू हास्टोन चित्र विषे मने है। चलन सीधी चित्तकल्पक है और बाड-बाड चरित्रों में तो उफ्याओं से कहीं अधिक आनन्द आता है।

### इशुल चरित्र—लेखक की नल्पनसाम पुत्र।

यह नृगोल की उल्लू-पुस्तक है। ये लेखक पहले साहौर की वैज्ञानिक उल्लू पत्रिका 'रोसनी' में निकले थे। अब कुछ काट-काटकर उन्हें पुस्तक का रूप दे दिया गया है। इसमें नृगोल के उस नाम का बहाना दिया गया है, जो विलित से सर्वत्र रखा है। पृथ्वी की वायुिक पति वामु मंडल पृथ्वी का वायुकार, सूर्य-रेखा धारि विषय रोचक और सरल भाषा में लोग के साथ लिखे गये हैं। हमारे जमान में यदि कोई स्कूल इस विषय को उल्लू भाषा में पढ़ाने का निश्चय करे, तो उसे अपर्युक्त पुस्तक के अभाव की सिन्धायत न करनी पड़ेगी। इस पुस्तक में नृगोल के इन भाग की मे मशी बार्ने लिख दी गयी है, जो कोस की साधारण पृथ्वी पुस्तकों में नहीं मिल सकती। जहाँ कहीं जरूरत पडी है लेखक ने चित्रों और लफ्तों से भी काम लिया है। आपकी इससे बहुत अच्छी हो सकती थी। इस पुस्तक में यह विस्तारता है कि लेखक ने अपने विषय को मूब स्पष्ट करके



सम्य दयामु, नीतिपरामर्श बटाया गया है। इनी भाँति तुर्कों को भी धापने मनुष्यता से रहित जिनाफ्त वा झूठझूठ इका बजानेवाले स्वार्थी भूटे घोर निर्दयी बतलाया है। मामा भी का राजा है कि उन्होंने जो कुछ लिखा है अपने अनुभव से लिखा है इसलिए हम उनकी धामोचनार्थों को मिथ्या तो नहीं कह सकते हैं कि जितने दुर्गुण बर्मनों में हैं वे सभी योरोप की धम्य जातियों में भी उसी मात्रा में भीभूर है। संभव है मामा भी ने इंग्लैण्ड को अपनी बेकनीयती का परिचय देने के लिए वे लेख लिखे हों। यदि ऐसा हो तो बड़े हर्ष की बात है। हम मामा भी का स्वागत करने को तैयार हैं। इन दिनों के सम्बन्ध में मामा भी के लिखार जानने योग्य है बकर। तुक घोर जमन जातियों के स्वभाव का सच्चा ज्ञान प्राप्त होता है।

मासुरी वैराग्य १६८०

कर्तव्यापास—लेखक की बेचनारामण त्रिवेदी।

यह मौलिक उपन्यास है। हिन्दी में इतना बख्खा मौलिक उपन्यास हमारी मजूर से नहीं गुजर। पर माया में बंगला की फनक मिसती है। कहानी इतनी सुन्दर है लेखक की शैली इतनी प्यारी है चरित्रों का प्रवृत्तन इतना मनोहर है कि जैसे पाठक मनोमात्रों के उद्योग में गुजर रहा हो। कहीं मानमय पितृसक्ति है तो कहीं बीपशिखा की भाँति हृदय में आसनेवाला पुत्र प्रेम। बन्धकता का बिच तो हिन्दी उद्योग में एक धनूटी बस्तु है। उसके पति ने अपने पिता की आज्ञा से अपनी पहली स्त्री को त्याग दिया है। बेचारी की त्यक्ता मनोरमा अपने पुत्र सुशील के साथ मायके में विपत्ति के दिन काट रही है। यह बड़ेज के पूरे रूपमें न मिलने का लण्ड है। बन्धकता अपनी छीत न बनती है। एक बार वह अपने सीतेसे बेटे को देख लेटी है। इससे उसका हृदय घोर भी व्याकुल हो जाता है। वह जानती है कि पति के देह पर मेरा अधिकार होने पर भी उसका हृदय पर मनोरमा ही राग्य कर रही है। क्यों न करे? उसके पुत्र है वह अनुपम सुन्दरी है। मैं धनागिन हूँ। पुत्रबिहीना पत्नी को पति क्यों प्यार करेगा। उसके भाग्य में उन्तान-सुख भोगना लिखा ही नहीं। अपनी मजूर के एक बालक को वह अपना पुत्र बनाकर पासतो है, लेकिन वह भी उसे दया से जाता है। सुशील की लेखस्वी मूर्ति उसकी धीखा में नाचती रहती है। वह पति की मनोरमा की हवा भी नहीं लगने देना चाहती उसे भीपख शपथ निम्ता कर पुत्र-बशाग से भी बंभित रहती है यहाँ तक कि बुद्धिया मनोरमा अंत को संसार से बिदा हो जाती है। बन्धकता इन अवसर पर अपनी सीत के पास पहुँच जाती है। मनोरमा उसे देखकर कहती है—

‘बहुत बन्धकता! धा माई इस अंतिम ममय में एक बार तुझे गले से तो मगा नूँ। तेरा कोई अपराध नहीं है खंवार! नहीं-नहीं इस तरह रोकर मझे दुखी न कर बहुत—आज मैं धम्य हो गयी। तेरे ऊपर ईश्वर जानते होंने—किसी दिन मैंने बिट्ट प

नहीं किया। धाम भी यही धारतीर्थाव धरने हृदय से देकर जाती हूँ 'तेरा जीवन साक्षिणी के समान पवित्र रहे।

बन्धन शब्द का प्रयोग सुनकर मनोरमा धीर हो जाती है। सौत भी ब्यथा पहले ही शांत हो चुकी थी। धाम सपली-मस्ति का उन्मत्त होता है। मनोरमा अपने पुत्र को उसकी गोद में सौंप बैठी है। इसी बीच म पति महोदय भी धा पहुँचते हैं। मनोरमा उन्हें देखने ही बिगना

उठती है—'स्वामी! प्राणनाथ! यह कहते ही उसमें अचानक बस का संचार हो जाता है और वह पति के पैरों पर गिर पड़ती है। पन्द्रह वर्षों की अश्रुनाथा धाम मरण संन्या पर पूरी होती है। सज्जित पिता स्वी और पुत्र से जमा माँपता है और इन कस्तुर बया का धोत हो जाता है।

इस उपन्यास में मुख्य पात्र चार हैं—मनोरमा सुतोम राजेश्वर और बन्धनका। मनोरमा का चरित्र भारतीय पत्नी का धादक है। उसका प्रति-ग्रम धरम है। पति ने उसे त्याग दिया है उसकी लखर नहीं लेता। उनके पास एक पत्र भी नहीं लेखता। पर उसे विरबाव है कि पति को उससे प्रेम है वह पिता की धाक्षा से बिचरा होकर मनी धरहेलना कर रहा है। वह जानती है कि स्वामी को मरे बियोप म और पीडा हो रही है पुत्र बियोप ने उनका हृदय धटा जा रहा है वह पिता की धाक्षा मानने के निर मी पति के प्रति इ प या धाक्षा का मान नहीं धाले पावा। एक बार बन्ध सुतोमा धरम पिता के ब्यवहार से दुली होकर उनको उपेक्षा करता है तो मनोरमा उसकी मग्मता करती है। इन समय उसके मुझ से जो शब्द निकले हैं उनसे पति-धटा की पवित्र धारा-नी बहने लगी है। अत्रकमा के प्रति भी उसके मन में इ प वा भाव नहीं है। बट-नी बलन नहीं। वह अपनी बसा पर दुली पर संतुष्ट है। भारतीय माती का इनसे बड़कर और क्या धाचरख हो सक्ता है?

राजेश्वर महाम्ताव है जो धंघड़ी पड़े-सिधे सेरिग लाव बड है। पिता की धाक्षा धा पामक करना वह अपना परम कठव्य समझने है। उचित और अनुचित का बिचार अपने हुए भी वह पिता की एक धरमन्त अनुचित धाक्षा के सामन गिर मूडा देते है। उन्हें धरनी प्रिय पत्नी को त्याग कर बूसरा बिबाह करते हुए लजाव नहीं होता। बन्धना में उन्हें प्रेम नहीं है। उनका हृदय मनोरमा और सुतोम के बियोप में लडपना रहा है मन्धन वह सुतोम का पत्र पाकर भी जग्ग धबाव नहीं लेता किनी प्रचार की महापता नहीं करते। वह जानते थे कि इन दसा में धरि मनु मुप महापता करना भी चाहें तो मानिनी मनोरमा उसे स्वीकार न करेगी। र्जगा हम ऊर निग धाये है मनोरमा से उससे धंघिय समय में उनही भेंट होती है।

सैगक ने सबम धरिग रचना-नीयल अग्रकता से चरिग म गिगाया है। बन्धनी माठा-रिगा की सङ्गी है, राजेश्वर का बराग भी सुन चुकी है सकिग सीगियासाठ

की धाग में जतने की धपेछा बह मर जाना ही ब्रह्मा समझती है। वह अपने माता-पिता के बानों में यह बात टाम देती है। लेकिन उसके पिता की राजेन्द्र-मा बुरा बर मिलता कठिन मामूम होता है। विवाह हो जाता है। समुराज में धाकर बन्धुत्वा को बात हाता है कि यद्यपि कोई मेरा धनादर नहीं करता पर पर धर का प्रम मेरे सीठ ही पर है। यहाँ तक कि उसे मामूम हाता है राजेन्द्र भी उसे प्यार नहीं करते। वह ईर्ष्या की धम्लि म जतने मगती है। वह धाकर अपने पुर्गाम्य पर धकेसे बैठकर रोना करतो है। पति उसकी बड़ी खातिर करता है, मबर धाये विल धर में ऐसी बातें होती रहती है जिनसे उसे पता चलता है कि यहाँ कोई मेरा नहीं यहाँ तक कि पति भी पट्टल सीठ क पति है उसके बाब मेरे। कभी-कभी वह यह धीचतो है कि जो अपनी पड़नी प्रखय-गामी को इतनी निवयता से त्याग सकता है वह मेरा क्या हो सकेगा ? इसी मय बेरता की वता म एक बार वह अपनी ममर के धर के नेबते में जाती है। वहाँ मुसीब भी मया हुआ है। मुसीब कहीं से तमस्ता देकर धाया है धीर बन्धुत्वा को अपनी बुधा समझकर उस तमस्तो का जिह्न करने मगता है। उसकी प्यारी-प्यारी बातें सुनकर बन्धुत्वा क 'हुक्क बंध्या जीवन म धनायास ही मातृत्व का लवय हुआ। वह तुल्य बहाँ से अपने धर चली धायी। उसे समेह हुआ कि ममर ने सीठ की भी धवरय बुसाया होगा। मरे स्वामी भी धवरय वहाँ मये होये। अपनी सीठ के विहार की कल्पना करके वह ब्याधुन हा मयी उसकी धाँसों के सापने उसी लदके की सुरत नाच रही थी मामूम होता बा राजपुत्र की तरह मुकुमार बेबकुमार की मति सुन्दर लड़का पाठ बैठा है। अब लड़का इतना सुन्दर है, तो उसकी मति जाने किन्तनी सुन्दर होगी ? इसी वकत राजेन्द्र अपनी बहन के यहाँ जाने को लंघार होतो है। बन्धुत्वा की निरवय हो जाता है कि यह सीठ मे मिलत पा रहे है। वह समेह यह भीपख लपक रिजाती है—'धात्र धरि वहाँ बाभो तो धपन लड़के का लून पियो।

राजेन्द्र मर्माहत-से हीनर बाहर जाने जाये है। लेकिन जब बोधी बेर के धार बन्धुत्वा को बात होता है कि राजेन्द्र रात भर धर ही पर रहे एत को भीजन भी नहीं किया तो उसका संविह बुर हो जाता है। लेकिन ने एत धवरर पर बन्धुत्वा के मर्नाभाव को जिठनी सुन्दरता से प्रकट किया है, उससे उनके स्वी-हृदय के ज्ञान का धक्का परिचय मिलता है। उस दिन से तनै तनै बन्धुत्वा की ईर्ष्या की धाग ठडी होने मगती है। जो माल के बाब फिर धाविनी के धर जाने का मोका मिलता है। मुसीब के वहाँ धाने की धारा है। बन्धुत्वा धब की धपन पति से वहाँ जाने का धनु-राध नरती है। पर वह नहीं जाते। वह भीपख लपक उन्हें धूधी गड़ी है। बन्धुत्वा धाती है धीर उसकी धाँसों मुसीब का धारों धोर हुँकने मगती है पर मुसीब पड़ी नहीं धाया है।

कुछ दिनों के बाध मुसीब अपने पिता को एक पत्र लिखकर अपनी किसी पटीया



में पाव होने की सूचना देता है। पंडित जी इन सब को खोलते भी नहीं। चन्द्रकान्त इन सब को पढ़ती थीं पर पति से उसका जवाब देने का धाग्रह करती है। चित्तमा स्वामाधिक परिवर्तन है। पति धरम पुत्र और परित्यक्ता स्त्री से प्रेम करता तो चन्द्रकान्त का बोध बरता हय को धाय वहकती। तकिम पति का प्रेम होने का प्रति यह प्रणाय बनकर चन्द्रकान्त की सहृदयता जागृत हो जाती है। अन्त को बहु पुर मुठान के पत्र का जवाब देती और उसे इलाहाबाद धाकर पढ़ने का अनुरोध करती है। वह यही रहती थी। मुसीम इलाहाबाद धाकर पढ़ता है पर अपने पिता के घर नहीं जाता। चन्द्रकान्त को उसके प्रणाय धामे की भाव मागुम हो जाती है। वह उसे घर पर बुलाती है खुद मागि में बैठकर उसकी तलाश करने भयती है, पर वह न जाता है न गिनायो देता है। इसी वनको बरता धाकती नहीं है। यह बहु चन्द्रकान्त नहीं है जिने हम पहले देव चुके हैं। इय मे धय सहृदयता और प्रेम को स्वान दे रिया है।

मुसीम के स्वभाव म मान को मात्रा धाधिक है। वह यों तो धनन पिता को देखने नहीं धाठा लेकिन उय को और मेवाञ्चल धीपकार में बोरा की धाधि धनन पिता के कमरे में जाता और उनके चरखों पर गिर लककर रोता है। उनके धाँसुधो मे चारर नीग जाती है। धाइट पाठे ही वह डिर नीचे कूडकर जाता जाग है। मयर उनकी बोरो धिनी नहीं रह्यो। चन्द्रकान्त और उनके पति दोनों ही मीर मरने हैं कि धागनुव नीन या। राजेन्द्र महुप्रय पिता की धात्रा का धाकरता पानम करने पर गुने हए है चाहे इसके गिए धपने प्राण ही क्या न देने पडे। पुस्तक के धधिम दो-तीन परिच्छेद जिनमें चन्द्रकान्त मुसीम और राजेन्द्र के चरिचों का पूणचय व विधान हुआ कटून हो गुरर है। राजेन्द्र का परधाताप चन्द्रकान्त की ग्यानि और मुसीम को गिनमलि का गिरान धान्यन्त मनोहर है। हम पाठका मे अनुरोध कर्ये हैं कि इस चण्ड कमा का प्रवरय पड़े। एये उपन्यास उन्हीने कटून वम पड़ हागे।

माधुरी १६ फरवरी १९२६

द्विस्तम्भ कथानियाँ—सगक थं रामस्वयं नीयन।

बानकों के लिए धाँटी-धाँटी कथानियों का सग्रह है। हर एठ बरानी के अन्त में उनके मिलनबानी सिधा भी बी बयी है। भाग सरल और रोचक है। पर हमारे समय में सिधा का प्रशट करन को उन्नत न थी। मइके स्वयं कहानिया से सिधा दहृय कर लवते हैं। वम से वम कुछ सीबना तो पढ़ता ही।

बसता पुरजा—नरक की बयना गार नीयती।

यह नीयती महोय की जन नीट कहानियाँ का सग्रह है जो उन्हीने सय-  
 ॥ नीर-नीर ॥

समय पर लिखी धीरे प्रकाशित करायी है। कहानियाँ प्रायः सब मजेदार हैं। बसंत-पुरजा भायाबिनी मोहिनी याचि बहुत ही सुन्दर हुई हैं। हास्यरस की गहरी चारणी का मजा सब कहानियों में विद्यमान है। भाया मुहाबरेदार खोल बाल की है। पंडिताऊ भाया कहानियों के लिए अनुकूल नहीं होती थी। महाशय ने इस गुरु को खूब समझा है। कहानियों में लेखक की प्रतिभा झलक रही है। हमें याशा है, भाप धीरे भी प्रशंसा मिलेंगे। कहीं-कहीं एकाद शब्द बेगुहाबरा घा पये हैं। 'सुसापगी' शब्द टकसास बाहर है। यह मारबाड़ी मकल-ती मानुम होती है। याशा है, लेखक महाशय इसका ध्यान रखेंगे। कहीं-कहीं तो घापका बर्छन बहुत ही रोचक धीरे सजीब है। बहुत प्रशंसी थीब है। मुबारकबाडी के भायक।

माधुरी फरवरी १९२७

**कर्मदेवी—लेखक श्री प्रवासीसाम बर्मा।**

यह एक छोटा-सा मनोरंजक ऐतिहासिक उपन्यास है, जिसमें सत्य की प्रपेक्षा कल्पना से अधिक काम लिया गया है। कर्मदेवी जालोर के राजा दुजय सिंह की पुत्री थी। मेवाड़ के मुबराज मस्तसिंह से उसका प्रेम हो गया था। पर इधर अकबर की निगाह भी कर्मदेवी पर पड़ चुकी थी। उसने खल कपट बिनय बसात्कार याचि साबनों से उसे अपने बरा में करना चाहा पर सफल न हुआ। आखिर उसने बहुर से मस्तसिंह का काम तमाम किया धीरे कर्मदेवी उसके साथ सती हुई। अकबर के चरित्र को बड़ी शूरता से बिगाड़ा गया है पर कथा मनोरंजक है, भाया बहुत सुन्दर। संस्कृत शब्दों का प्रयोग कुछ कम होना तो पुस्तक अधिक उपयोगी हो जाती।

**शाह्यालालि—लेखक पांडेय बेचन शर्मा 'अग्र।**

यह अग्र की छन कहानियों का संग्रह है जो पाँच-छ साल पहले 'माज' में निकली थी।

एक-एक कहानी समाज के एक-एक श्रेण का चित्र है। अधिकतर कहानियों में हिन्दू समाज की बुराईयों का कसूर विज्ञाप है। 'पटीचा' हास्य-कथा है, बहुत सुन्दर है, भाया सजीब धीरे भाव मर्म-स्पर्शी है।

**जीवित हिन्दी—(प्रथम भाग) संप्रहर्षा श्री लक्ष्मीचन्द्र शूराना।**

इस संग्रह में यह मनीनता है कि केवल समकालीन रचनाओं के ही धंश लिये गये हैं। अकसर स्कूनी संग्रहों में खोल लक्ष्मणाल धीरे राजा शिवप्रसाद से धारम्भ करके बाबू राधाकृष्ण दास तक समाप्त कर बेते हैं। समकालीन सच्चकों को झूठे तक नहीं। ऐसे संग्रह कामज-कसाओं के लिए उपयुक्त हो सकते हैं। उसका उद्देश्य भाया का कम-विकास रिखाना है। हिन्दु भासकों को प्रचलित भाया से अपरिचित रखने का फस मह होता है



भेदक की कवितामयी शैली में यद्यपि उतनी सजीवता और मरदानापन नहीं पर उसकी कमर सौंदर्य और कोमलता न पूरी कर ही है। बुराई के विमल में मनीषता है, बेचिभ्य है और हृदय है। चरित्र में गहराई है जान है और सत्य है। संभावनों में विचार है, तन्म है और पुननवाने भाव्य है। मंगल का हिनू-आदरुवार विजय का दामनिक-बड बाव स्वामी जी का बगुलाममत्पन किशोरी की पाकंडमयी धामिकता और निमन्म्य बिलासिता सभी पाठक को मुग्ध कर देते हैं। घंटी का चरित्र बहुत ही सुन्दर हुआ है। उसने एक शीपक की भाँति अपने प्रकाश में इस रचना को उज्ज्वल कर दिया है। प्रसङ्गपन के साथ जीवन पर ऐसी सारिक बृष्टि, यद्यपि पढ़ने में कुछ अस्वामिक मानुम होती है, पर यथाय म सत्य है। विरोधों का भेद जीवन का गूढ रहस्य है। वह भी सही है यमुना भी सही है, पर दोनों म कितना मूल्य अन्तर है। एक कठोर है, दूसरी कोमल। एक धातु को मय दूध समझवाली बूझती बिप भी प्रहृष्ट करने को तैयार।

मुझे विरबाव है कि 'प्रसाद' भी ऐसे और भी रत्न उत्पन्न करेंगे और हिन्दी भाषा उनका यथोचित सम्माल करेगी।

नवम्बर १९३०

परदा—नेहरू की जेनेन्द्र कुमार शैन।

जेनेन्द्र कुमार की रचनाएँ जोड़े हैं जिनमें से प्रकाशित होने लगी हैं। कुछ कथा निम्न 'त्याग भूमि' म निकलीं कुछ भाषुटी में। ली-वार और श्वर उपर निकनी होनी और परख' तो उनका पहला उपन्यास है, पर जो कुछ उगहोने लिखा है, बहुत ही सुन्दर लिखा है। भाषा चरित्र कुटुंबियाँ सभी अपने ढंग की निपटा है। उनमें साधारण-सी बात को भी कुछ इस ढंग से कहने की शक्ति है, जो दुर्लभ आकषित करती है। उनकी भाषा में एक टास लोच एक साथ अग्राह है। इसके साथ ही वह उन दिवनिस्टो म नहीं है जिन्हें मल विषों म ही आनन्द आता है। सुन्दर को वह कमो ह्रास से नहीं जाने देते। 'परख' है ता छोटी कितान पर हिन्दी में एक जीव है। भाषा इतनी सजीव शैली इतनी आकषक चरित्र इतना मार्मिक कि जित मुग्ध हो पाता है, मगर यह मनी विवाह प्रथा हमारी समक में नहीं आयी। यदि कट्टी और विहाटी को सेबाकृत हो धारण करना था—और ऐसा प्रतीत होता है कि जीवन में वह फिर म भिसे होंगे—तो विवाह कर्मण को क्या अकररत थी? विवाह आसना की जीव न हो सम्मान पैदा करने की जीव न हो पर संघति की जीव तो है ही ऐसी गाड़ी तो है ही जिसके दो पहिमे होते हैं। यदि स्त्री और पुरुष को एक दूसरे के प्रेम सहारे और सहा मुमुक्ति से अकररत न हो तो विवाह का नाम ही कौन से। कट्टो का चरित्र एक सरल बुझती विषया का चरित्र है, जिसमें विराय भी है और तुण्ड्या भी अनिजाया भी है

धीर निरुसा भी । विराय क्रिडाया म्भित गुप्या क्रिती दबी हुई । बिहाये म बबानी भी उमय है । बहु उमय का समीप पुत्रा है । विन्ता पनीरश धीर परिछाम बहु कनी सोचता ही नही । बाता है ता उमय स बोसता है ता उमय मे प्रम करता है तो उमय से धीर मन्थाम सता है, तो बहु भी उमय मे । सत्यप्रवाश का पतन—हम उने पतन ही कह्ये—एक मनस्वी मुवरु का पतन है, आ निव्यातबं के फर म पड जाता है । हम विरवाम है इय रचना का घरर हाया । हम बीनेय जो को इय पर बपार्ई देते है धीर कषा प्रमियों से घाघह करते है कि बहु इते धरवय पड ।

जीनय जो से हमारो बोरी देर को मुमाकात है । सीय सादे लहृषापी धाम्मी है, हृषय में देय-भक्ति बू-बूट कर मय हुमा लम्बे-लम्बे संघार हुए बरा है न धाँचों पर मुनहरी एक न काई टोय-टाय । पुनचार काम करनेबन धाम्मियों म है पूरे सग्यापही । धाम्बन गुनराय संशय जेन म जेन जोवन पर काई उन्म्याम निवने की सामगो जमा कर रहे है ।

छरयपी १६११

शराबी—मपक भी पत्यइय बेचन शर्मा उय' ।

उय जो की भाषा म प्रवाह है उंर है धीर स्तुति है । ही कही-कही रिमी बाय को मबीन इय स करने के लिए बहु म्नाखरे का खपाय नही करने । मानिक न कषा का मानक है धीर जसाहर नायिका । दोनों ही शराबिया क बन्धे है । बपारु का बाय उने मारलीय कर कर से निकाम देता है । बहु मुनन बरया के म्भे म धाकर रिया हो जाती है । मानिक उमने बिबाह करके उमका उदार करता है । कषातक का कम कुप एवा एवा पया गया है कि समकन में बडिनाई पडना है । हमका भी विचार कम किया गया कि उन्म्याम म किन बातों के विस्तार को उन्मर है धीर कीन-नी बाय की चार बाख्या में ही ममात कर देनी बाहिए । शराबियों के चरित म क्षमिधायकि का प्रम हा मकटा है, मगर बहु मही कहा जा सरता कि एम साग 'जोते जगने' दिन मही मकने । उय जो पकटे मयापवासी है धीर इम रचना म 'नी उमपी पचाप-धाम्ना रुचि मा कुम्बि की परबाह म करते हुए धरने धमपी रूप म गिरापी देती है । चरमनाक का चरित एक शरायो की गषका ठरसीर है । बहु स्वभाव का 'प या मीच म होने पर भी मते म रिठका बड़ा पयु बन पाजा है धीर डिर मया उन्मर पर उने धिना पघाता धीर म्नानि होतो है धीर मते में किमी बाय को मे भायम की रिठनी प्रनृति होता है म एक कुटय बिनहार को बना के साव रिम्याय न्ये है । मानिक का चरित भी एक बिठानी मुवरु का चरित है, आ जशानी को उडतो हुँ उमय म हीय से प्रम करता है धीर जब हीय का दुमरे पुनर मे बिबाह हा जाता है तो पडना निगता धीरकर भागय हो जाता है धीर जब उमका शराबी बाय मर जाता है तो

बह बुर इस दुष्पसन म पढ़कर अपनी मनोभ्यसा भूल जाता है और घन्ट में बजाहर से बिबाह करके मुक्ती होता है। उसी बजाहर के घर में हीरा के पति की हत्या हो जाती है और वह नदी में डूब कर धारमबाध कर लेती है।

फरवरी १९३१

सपना—सपक स्वामी धान्य मित्र धारमती।

स्वामी जी इसके पहले 'भावना' मित्रकर साहित्य में परिचित हो चुके हैं और बिबोने भावना पढ़ी है, वह जानते हैं स्वामी जी जैसे साहित्य की मूट्ट कर रहे हैं। 'सपना' म उन्होंने अपनी बिबुधी बय संविनी की स्मृति देवी पर अपने हृदय के पुरनों की बर्पा की है। आपने मुमिका मे जिन्हा—

मैं सोचता हूँ जो सपने की तरह बट गया और सपने की तरह ही फिर उबड़ गया उसी की बात मे लोगों को क्या सुनाता फिर ? खुद भी क्यों उसकी स्मृति पोस पोस कर कटित बनाई ? यह भी मैं जानता हूँ कि स्वप्न मिठने के लिए होता है और जो महसूसता है वह कभी उबड़े नहीं वो उसकी सुन्दरता भी लपट हो बाम। बीबन इतना प्रिय और सरस मानूम होता है। यही कारण है कि उनमें इतना प्रबल धारमबाध है। मैं स्पष्ट अनुभव करता हूँ कि बिब मित्र जी मैं भी बठा हूँ परि उसे खोने न पाता वो उसकी समुद्रता को पहचान भी न सकता। मैं उसे ओकर ही तो पा सका हूँ। सब रहा यह, कि मैं उसे खोने—सूट जाने—की पीर को गा गाकर क्यों तहनाता हूँ इसना मन्ना न पूछिए। इसे हृदयबान ही जान सकते हैं।

स्वामी जी की भाषा म बम को स्पश करने की प्रबल शक्ति है, उसमें सगीत है कोमलता और धारमबाध है। स्मृतिर्या इतनी पबिब इतनी मनोहर है कि बिब पर हुमेता के लिए अरर छोड़ जाती है। जी जानता है, कि उसके उदरधों से पाठकों का मनोरंजन करे। एक-एक पंक्ति म धारकी प्रसन्न-सी भरी हुई, सज्जी भक्ति म डूबी हुई, कविता का धारमबाध धारमेया। शायद यही यक्ति जी बिबने और बिस्तृत होकर पीर की बानी को धरमहृय जिन्हा बा। धारि मे डाक्टर बीमती कुन्दन कुमारी देवी का एक संवेजी कवन है, जो पढ़ने और मनन करने योग्य है। हम इस पुस्तक को हिन्दी का उज्ज्वल रत्न समझते हैं और धारा करते हैं कि उषस किशन ही बिबोनी धारनामों का कथाय होगा।

फरवरी १९३१

कुमुदिनी—लैधक श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर धनुवारक श्री भग्यकुमार जीन।

बिबकवि श्री रवीन्द्रनाथ जी का यह एक नया उपम्यास है। पहले 'बिबाल धार्य' में कथर जिबसता रहा। अब पुस्तककार प्रकाशित हुमा है। मधुसूदन जो



है, कि कुमुद लक्ष्मी के ग्रह सेकर धायी है। उसका मन रूप से बँधन होता है बरकर मगर उसमें बायोहीन के सिवा और कुछ नहीं है। जिसकी बार मधुमुदन उससे प्रेम बिछाता है, कुमुद के हृदय में जीव-दान मचती है। पति का क्रोध तो उसकी समझ में आता है, उसका प्रेम समझ में नहीं आता। उस प्रेम में कपट है, स्वाभ है, बमरद है, धात्मसमाग्य नहीं।

कुमुदिनी के मनोभावों का अत्यन्त सजीव चित्रण स्वयं उसी के शब्दों में हुआ है।

मोती की माँ कुमुद से पूछती है—तुम क्या समझती हो कि जेठ जी से प्रेम कर ही नहीं सकती ?

‘कर सकती थी। हृदय में एक ऐसी चीज भर जायी थी कि जिससे सब बातें अपने पसन्द कर लेना मेरे लिए बहुत आसान था। शुक ही में तुम्हारे जेठ जी ने इसे टोड़कर बकनाभूर कर डाला है। धाब सब चीजें कठोर होकर मुझे सता रही हैं— मैं जानती हूँ मैं जो पति को थड़ा के साथ धारम समपण्य नहीं कर सकी हूँ वह मेरे लिए महापाप है, लेकिन उध पाप से भी मुझे उतना डर नहीं जिसना मझाहीन धारम-समपण्य की प्पानि की माय करके हो धायी है।

जरा बेर रूप रहकर कुमुद ने फिर कहा—तुम भाव्यवान हो बहुत न जाने तुमने कितना पुख्य किया होगा अभी तो तुम बेबर भी को सम्पूर्ण हृदय से प्रेम कर सकती हो। पहले मैं समझती थी कि प्रेम करना गहन है—सभी स्त्रियाँ सभी पतिवों से अपने आप ही प्रेम करती होंगी। धाब देख रही हूँ कि प्रेम कर सकना ही सबसे बुलम है, वह तो जन्म-जन्मान्तर की तपस्या से ही हो सकता है। धाब्या बहन सच-सच कहना सभी स्त्रियाँ क्या पति को प्रेम करती है ?

मोती की माँ जरा हँसकर बोली—जिना प्रेम के भी धाब्यी स्त्री बना जा सकता है, नहीं तो सघार जलेबा कैसे ?

‘बही विजाठा देती रहो मुझे। और कुछ धन सक्त जाहे नहीं कम से कम धाब्यी स्त्री तो बन सक्त। मुबन इसी में ज्यारा है, कठिन तपस्या तो बही है।

बाहर से उसमें बाभाएँ पड़ती है।

‘भान्तर से उन बाभाधों को दूर किया जा सकता है। मैं कर सक्तूंगी हार न मानूँगी।

यह है एक सही गारो का शुद्ध बुद्ध संकल्प। पति की सारी बुदाइयों को भूसकर भी वह धाब्यी स्त्री बनन ही से अपने जीवन की सार्थकता समझती है।

पुस्तक में कितने ही स्वतन्त्र इतने गर्मस्पर्शी हैं कि चित्त मुग्न हो जाता है। और



भाव-व्यञ्जना का तो पृथक् ही बना । हमार विचार में यदि कवि ने मधुसूदन का चरित्र इतना दुःख म लिखाकर इतने दुःख और सुखर पित्राग होगा तो जीवन की ७ बड़ी और भी मायिक हो जाती । मधुसूदन को तो हम एक धमाधारण लोभी व्यक्ति समझकर उनमें कुछा करम गयते हैं और कुमुदिनी की विदम्बनाओं का महत्त्व उनमें बहुत कम हो जाता है । पर इतम तो कोई दो राजों ही ही नहीं सजनी कि यह उपजात बड़े उंचे बरने का है और बन्धु कुमार जी ने अपनी प्रांभम माया से इनका अनुकार करके हिन्दी भाषा का उपकार किया है ।

माघ १६३१

मेरी इरान यात्रा—नरक महेश प्रमाय मौलवी धालिम प्राश्रिय ।  
 जो माय धंधवों के बिजल है व इन्मीलन की मर करम जाते हैं । महेशप्रसाद

जा परकी-अरली क धाषाय है उनके लिए इरान से ज्यादा प्रम और किम दश से हो जाता था । बाटोन् की यात्रा बहुत सुगम्य है । इरान समीप होते हुए भी दूर है क्योंकि वहाँ यात्रियों के लिए कोई सुविधा नहीं । रायण यह पहला ही यात्रा-बतावत है जो हिन्दी में लिखता है । यह उन विमलस्वी और यात्रा-ग्रम का प्रमाण है, जो भारतबाधिया में प्रक जागरित होन गया है । पुस्तक व्यापक संशों में विभाजित है । पहले संड म इरान का संक्षिप्त वृत्तान्त है और हमारे विचार से उकरत से ज्यादा संक्षिप्त है । इतम ज्यादा विस्तार तो माधारण भूगोल की पुस्तकों म मिलता है । दूसर खण्डों म पामपोट बने मिनता है और उनकी क्या आश्चर्यकटा है यह बतलाना गया है । मरे विचार म इने पहला संड होना चाहिए था । बाकी खंडों म बभारम मे कटापी घाले कटापी से जहाज र ईरान और मिन-मिन ईरानी स्थानों का बखल है । यात्रा बड़ी मनोरंजक है और तैवाने यात्रियों के लिए बड़े काम की चीज है । हाँ हम इतना बह्ये कि यात्रा की यात्रा कसी है और नहीं बह सजीवना नहीं है जो यात्रा-वृत्तान्त का मरुत मुछ है । पुस्तक म कई ईरानी स्थानों और नगरों के विष है । इरान का माधारण परिचय जो हमें यहाँ मिलता है वह यह है कि यहाँ के लोग बड़े धार्मिक-मैत्री उदार और मज्जन हैं । जीवन समी मंहमा नहीं होन पाता है । मनुकों ताराब है रेलें कम । मोटर सारिया का कियता बहम गता है । ग्रमयानु स्वाभ्यवृत्त क मीमम मुशानता और दूरप मनोहर है ।

वातायन—नगर भी जैनेन्द्र कुमार ।

माघ १६ १

यह बीकनर कुमार जी की लेख बहानियों का उपह है । जिनमें कई तो परिचयों में लिख्य बरी है । कई इस मण्ड में पानी बाग लिखने हैं । जैनेन्द्र जी की रचनायें

ने हिन्दी उपन्यास और गल्प-साहित्य को पीरब प्रदान कर दिया है। इस संग्रह की 'फोटोग्राफी' 'बलिष्ठ चित्त' 'शामी' आदि कई कहानियाँ संसार के किसी साहित्य के लिए गव की वस्तु हो सकती हैं। ऐसा बुलबुलापन ऐसी शरीरता ऐसी सुकृतिता और नहीं कम देखने में आती है। बीच-बीच में ऐंठे वाक्य रत्न बिसरे मिलते हैं जो चित्त को मुग्ध कर देते हैं। दो-एक उदाहरण नीजिए—

'बहु बर, जिसमें मक्खू के पुराने धिन सुख के बिभास के उन्लास के दिन शब भी जिम्बा था जो मक्खू के समीप उसके बाप का उसके माँ के समीप उसके पति का एक मात्र प्रयत्न वस्त्र-विह्वल था जो उनक जीवन में धूल-मिल गया था जिसके कोनों में भीतर बाहर चारों तरफ मारों अपनी शाखा-पशाखाएँ फैलाकर उनका जीवन-वृक्ष बना-पुसा था।

'सोचा बहु तो दिखी नहीं है, दिखी का बाजार है, बहाँ अपनीरी ठन कर अपना प्रयत्न करती है और बहाँ गरीबी अपने को अपनीरी जाने से छिपाने समझती बनती है। बहु जगह तो देखी नहीं बहाँ अपनीरी सकती है और गरीबी मुकुड़ी पड़ी रहती है— बहु नजियाँ जो सपाट चिक्की नहीं हैं जो संकरी और टेढ़ी-मड़ी हैं बस शरीर को रक्त बाहिनी नसें।

'और देबर स्त्री के जीवन में धारवक वस्तु है। एक देबर चाहिए, जिसको धारकर बनाकर, हँसी खेल-खूब और निमोद-प्रमोद की स्त्री की अपस मुलम मानोवातक कृतितां कुल कर तृप्ति लाभ करें। पति के साथ स्त्री एक उत्तरवापिनी भारवाहिनी कर्तव्य और धार्मिक की अंशुओं क बीच प्रतिष्ठित और पम्पीर, गृहस्थिग है।

जैनेन्द्र की की कृतितां मजेदार होती है। वह निदाने पर सीधे जा बैठती है पर धारक नहीं पहुँचाती। बन्धुक हवाई है या सुगन्ध की निचकाटी समझिए। उसकी कल्पना बहुधा ऐसी प्रत्यक्ष हो जाती है कि भावों का चित्र-सा सामने निच जाता है। जिन्ह कहानी के साथ-साथ साहित्यिक रस का आस्वादन करना हो उनके लिए इन मन्त्रों में बहुत मिलेगा पर नमक कहीं ज्यादा नहीं कड़वापन कहीं इतना नहीं कि अज्ञात से पानी बहे, मिठास कहीं इतनी धारमिक नहीं कि भी ऊब जाय। धार-धरिण बरुन करने में जैनेन्द्र की अपना शानी नहीं रखते। हम विरबाम है अनवा इन रत्नों का धार करनेगी।

दिसम्बर १९५१

मणिगोस्वामी—नेत्रक भी हृषानाय निय एम ।

यह पत्रिकाओं के धाकार का एक माटक है जो हरेक प्रभार से अपनी उत्तमता को प्रकट करता है। इसका धाकार पुस्तक का नहीं पत्रिकाया का-ना है। हम यह नहीं करते कि इस धाकार की पुस्तकें नहीं जातीं। बहुधा बहुत धन्य के मोटेपन को कम करने के लिए इस धाकार में पुस्तकें छापी जाती हैं। पर यह केवल सत्तर पुस्तों का प्रत्येक पुस्तरी नवीनता है। उनका समग्र। नेत्रक में यह रचना अपनी कमपत्नी जो को समर्पित की है। है भी धन्य। निया पहले बार में प्रकाशक तब मन्दिर में जाता है। टीसरी नवीनता है। साधारणतः पुस्तकों में एक भूमिका होती है। यहाँ तीन भूमिकाएँ हैं। भूमिकाओं में भी नवीनता टसाटस भरी हुई है। धारने बहुत सब कथा है कि हम नोटकों को केवल समारा समझने है ज्ञानवर्द्धि या भावोत्कर्ष का उपकरण नहीं। मेरिन यह दूसरी भूमिका में प्राप्त करते हैं—

हमारे प्राचीन नाटककार समस्या पूर्ति करनबाम प्रयत्नीय धमवीवी थे। उनोंने कला में किसी भी धात्मजनित ब्रह्मण्य भी सृष्टि नहीं की। उन्होंने बिरव को धोर धाया में स्थापन नहीं किया। उनके हाथ अनुर शिल्पी कुम्भार क हाथ थे कमाबिद् या अष्टा ग प्रयत्न के हाथ नहीं।—तो हम उदा चीन्हे पठते हैं धीर बड़ी साधकाली से भूमिका देने मतते हैं। गिस्तबेह तीनों भूमिकाया में भागिणियक तत्व भरे पडे हैं जिन पर लन करन की उकलत है—

‘नासिच्छता की बेनी पर ही बसा का जन्म होता है।

‘हमारे प्राचीन नाटककार कुछ पंडित थे कुछ विद्वत् पर वे सभी स्कून। इनको पापों में कोई भी बाक्य चीय नहीं मुन परता ध्यबध-धमिमय हृदय का परिधम नहीं मिलता।

‘प्रत्येक मनुष्य का जीवन धात्म-प्ररात वा एक हीन प्रवान है। पिता पुत्र को बन्ध देता है, पुत्र में अपने धापची प्रकट करन के लिए।

क्या अनुभूतना में दुष्यन्त के दरबार में शकुन्ता का रत्न धोर विचार ‘दाएण चीय’ नहीं है? यशभारत क्या एक महान दुःखी नहीं है? <sup>अनार</sup> <sub>एम</sub> के बा- जीवन के इस धन्त से भी बढकर कोई ‘दाएण चीय’ हा मकती है—

इसमें सश्रेष्ठ नहीं प्राधान्य विद्वाना में भागिणिय के शिष्यों में कमकर मीसिच्छता को शानि पहुँचानी पर यह शिष्यने साधारण धली के कमाबिर्षों के सिण है। मयटा के लिए प्राचीन समय में भी कोई शिष्यता न था। शिष्यने मतते हैं मयटापो ही की शीसियों में।

धीर धम मूल नाटक पर धारण। यह भी एक नवीन बन्धु है। हमको हरेक नवीन बन्धु से बिद नहीं। सभी तरह हरेक नवीन बन्धु पर हम सट्ट भी नहीं होना

जाते। माटक एकांकी है, जिसमें छः दृश्य हैं। मण्डिगोस्वामी एक जमींदार है। उनके दो बड़े धीर एक लड़की है। तीनों जवान हैं। मण्डि की स्त्री का वैवाहिक हो चुका है। पहले दृश्य में मण्डि धीर बटुक की बातचीत है। बटुक दूसरे विवाह का अनुरोध करता है। गोस्वामी की अनिच्छा रहते हुए भी धन्य को राजी हो जाते हैं। मण्डि के भावों का परिवर्तन अचुर है। वह नहीं-नहीं करके भी हाँ करता है। मण्डि का बड़ा पुत्र बीरेन बड़ा उत्साही जोशीला बेराभक्त है जिसके विधायक जाने की तैयारी है। पर माप के विवाह की खबर सुनते ही वह पागल हो जाता है धीर धन्य को अपनी हुर्या कर लेता है। मण्डि की पत्नी बोके ही दिनों में उसका उपमे-यैसे छटाकर उसे फटना बतकर बसी जाती है। इस मानसिक चोम से वह भी अंत में पागल हो जाता है। मिश्र की ने वास्तव में पारमभक्ति ब्रह्माण्ड की सृष्टि की है। बीरेन का चरित्र हेमलेट की छाया-सा मान्य होता है। मगर इस मण्डि में वास्तविकता नहीं जाने पत्नी धीर माटक का जो उद्देश्य है, वह मनीषांत पुरु होता है। उसमें गहराई है, प्रभाव है, व्यथा है।

धन्य में हम यही कहेंगे कि 'कला की सृष्टि' के लिए नास्तिक होना आवश्यक नहीं। इसके लिए भावों की गहराई और तीव्रता की ही आवश्यक है। संसार के व्यापारों से नास्तिक धीर नास्तिक दोनों ही प्रभावित हो सकते हैं।

सितम्बर १९३१

आई.पी.—लेखक श्रीमत्त जयराकर प्रसाद।

यह प्रसाद भी जो म्यारह कहानियों का सुन्दर संग्रह है। प्रायः सभी कहानियाँ निम्न-निम्न पत्रों में छप चुकीं। आई.पी. नारी-हृदय की एक सुन्दर कथा है ऐसे हृदय को जिसमें प्रेम धन्य मौलिक धीर तेजस्वी रूप में प्रकट हुआ है। चारियाँ बेचनेवाली बन्धुविन दुबली की बरुण बेचना हृदय को हिमा देती है। पयुषा एक शराबी के हृदय का चित्रण है। प्रसाद भी जो गहराई शराबी में भी मनुष्य का ब्याप्त हृदय देखती है, उसकी अक्षय्यता नहीं करती। यहाँ प्रत्येक कहानी पर कुछ लिखने की विरोध करत नहीं। प्रसाद के अभाव में प्रभाव नहीं वह शीघ्र ही हुई नहीं चलती इसलिए हाँफ कर शिबिस पर लक्ष्य वह शान्त यन्त्रीर धीर रसमयी है। कहीं-कहीं तो उसकी सजीवता जैसे स्पष्ट हो जाती है। बेशिप, 'बासी' में तुलजाभा का बर्णन किठना मार्मिक—'मल्लिकार्जुन अक्षयता धीर होती से बनी हुई वह तुलजा-बासा सब हृदयों के स्नेह के समीप थी।

एक रात्रि का बर्णन बेशिप—

'अमृत-मी चौरनी रात अपनी मतवाली उम्भरता में महल के मीमारों धीर गुम्बजों तथा बुजों की छाया में लड़कड़ा रही है, जैसे मोना जाहती हो।

इस तरह की सबसे बड़ी कहानी यानी है जिसकी कल्पना गद्य पर गहरा धरती की है ।

पेरिस का कुबड़ा—युवा की दुर्गति यह । मूल मंगल विचार का गो ।

बिकर हूँ यो घास का सबसे बड़ा साहित्य महारथी समझा जाता है । यह पुस्तक यानी की एक फासोखी पुस्तक का अनुवाद है । इस मंगल की एक पुस्तक का अनुवाद स्व श्री गणेश शंकर विद्याधी की ने किया था । उसके लक्ष्य बड़े उपस्थास 'मा मित्रेवम का अनुवाद यह पूरा कर गये हैं । 'पेरिस का कुबड़ा' नामक मंगल केम का अनुवाद होना चाहिए था । थायद अनुवादक महोदय ने 'नाजीबम को धर्मियत मनकर पेरिस कर दिया । हर्षे यह बेककर ह्य हुआ कि यहाँ नामा धीर म्याको को जो का र्यों र्धने दिया गया है । भारतीय बनाने का प्रयास नहीं किया गया है । इस नए का प्रयास का कभी किया गया है, समझल हुआ है । स्वयं नाम बरन देने म बेतोपता या जातीयता नहीं बचल जाती । उरकी जडे हमने गारा गहरी होना है । टिर हरेक बस्तु को भारतीय बनाने का प्रयास ही क्यों किया जाय । इसका एक तो यही होता है, कि भारतीय पाठकों को मरार की धीर जिन्नी जालि की कथाओं म कीई पालन ही नहीं थाता । हम इतने मकील बुद्धि हैं कि हमारा लना अनुमान नहीं । हम विदेशी किन्नी को टिरने काय से देखते हैं । यहाँ तक कि सिद्धित मयात्र तो देशी किन्नी के नाम से ही चिहता है । अपने निकट की बस्तुया म गारा प्रभावित होना स्तानाविक है, लेकिन अपने पुत्र को प्यार करके दूरे बानका म प्रम किया जा मरना है । हम लम अनुवाद-धीनी को रोकना चाहत हैं जो हरक मान्दरपीय को मारपीय बनाने के प्रयास में सार हीन बना देगी है । नाजीबम जगत-प्रियत उनम्याम है । उसके विरय म बुध लियता ब्यक है । वह टिप्प म धी धा बुरा है । अनुवाद बैना मय धीर मुबाय हाता चाहिए का बैना नहीं जान पचना जामाकि यह लिपय ह्य हम उन कठिनाइयों की धोर से धाँवें नहीं बन्द कर सकत जो जिन्नी म बार-बार नामने धानी रहती है । फिर कोई अनुवाद जितना ही मुशर नहीं म ही लक्ष्य मरन ही रहती है । फिर हम तो दुर्भाग्यवश सभी योरोपीय भाषाओं का अनुवाद धधधी अनुवाद मे करते हैं । तो जो लक्ष्य मरन ही उमम धमल के लय का बरा धरनाका बनारा का सकता है । फिर भी 'पेरिस का कुबड़ा' मनोरंजक धीर साहित्यिक मान्यर नद है ।

नवम्बर, १९३१

पहल्यत्रकारी—ने धनकडेंडर सुभा ।

रुमा धांन का प्रियत उनम्यामकार है । यह क्तर यानी ने एक उम्याम का

॥ धीर-धीर ॥

घनुवार है। इस उरम्यास में फॉब इन्डि के समय कम बढ़ा मन्वीब विचल किया गया है। पुस्तक बहुत ही रोचक है और घनुवार भी सुन्दर हुआ है। साहित्य मंडल न सर्वे के केन्द्र रिस्ती में हिन्दी प्रकाशन का नार उठाया है, यह उद्योग प्रशंसनीय है।

**कनीजिया समाज में मयानक अत्याचार—**ने श्री कान्तिरूप्य शुक्ल ।

इस पुस्तक में हम कहानियाँ भी मयी हैं जिनमें कनीजिया समाज में होमेबामे सामाजिक अत्याचारों का बखान किया गया है। समाज में सभकिया की कितनी दुबसा होती है, विषयों का कितना अयमान किया जाता है और स्वार्थी समुह कैसी-कैसी नीतियाँ रखते हैं, इसका सादा संशोद्ध किया गया है। कहानियाँ अच्छी जाल पढ़ती हैं जिनमें बचावता है पर है, मन को स्पष्ट करने की शक्ति है। हमें विरवात है, लेखक को अपने प्रमत्त में विशेष सफलता होगी। मुश्किल यही है कि यह पुस्तक उन हाथों में पहुँचे कैसे? पहुँचे या न पहुँचे पर इसमें तो कोई संशेद नहीं कि एक-एक कहानी से लेखक की सद्मत्तना टपक रही है। इस बात के नबवृत्तों का अर्थ है कि वह इस पुस्तक का प्रचार अधिक से अधिक कर। एसी रचना के लिए हम शुक्ल जी को हृदय से बधाई देते हैं।

**महापाप—**लेखक काउंट टास्टराय ।

काउंट टास्टराय के दो छोटे उपन्यासों को एक साथ प्रकाशित किया गया है— कर्माक और क्लुजर सानाटा। टास्टराय की रचनाओं के विषय में कहना ही क्या हालांकि वह कभी-कभी भावों और विचारों की आलोचना करने में इतने मत्त हो जाते हैं कि पाठक का भी उम जाता है। यह दोनों कहानियाँ टास्टराय की प्रसिद्ध वस्तुओं में हैं। और घनुवार सुलभ हुई सरल भाषा में किया गया है।

**मुन्वखबीर हिन्दी कलाम—**ने डाक्टर जाकर हुमेन पी एच टी ।

हिन्दी-साहित्य के निर्माता में मुसलमानों न नत काम में जो कुछ किया सबक अर्थ से हिन्दी भाषा कभी मुक्त नहीं हो सकती। लेकिन नबे पुनः न मुसलमानों न हिन्दी-साहित्य से केवल उखालीमता ही नहीं कभी-कभी इय का ब्यवहार किया है, जो उर्दू-हिन्दी के अन्तरे के कारण और भी बढ़ गया है। धाज बहुत कम मसलमान हैं जो हिन्दी-साहित्य से परिचित हों और उसमें लिखनेबामों की संख्या तो जेमती पर निनी जा सकती है। इसलिए हम का जाकर हुमेन माहब के कृतक है कि उन्होंने ऐसी भावदरी के बामों में यह पुस्तक प्रकाशित करके मुस्लिम संसार को हिन्दी-साहित्य से परिचित कराने का कर्बिले-मुबारकबाद काम किया है। आपने एक अध्याय में हिन्दी साहित्य में मुसलमानों का स्थान पर कुछ प्रकाश जमा है एक दूसरे अध्याय में हिन्दी

साहित्य की विशेषताएँ बयान की गयी हैं। दोनों ही धारणाओं को पश्चर हम वास्तव  
 माह्व की विरुद्धा के तो उतने कायम नहीं हुए, पर वह सहज्य धररर है और उन्  
 मुसलमाना की हम साहित्य उपेक्षा का बडा दोर है। धारने बहूत ही धरुधा प्रत्या  
 दिया है कि हमारे स्कूमा में धगर हिन्दी और उन् दोनों ही माह्वो कर ही मायें तो  
 मनी सिञ्चित बनता दोनों भाषाधो को समान रूप से मिलेगी और बोमेगी। मतोञ्ज  
 यह हाता कि कामान्तर म एक हिन्दुस्तानी भाषा का विरुध हा जायगा और बोमी  
 तान का प्ररन हमेशा के लिए तप हो जायगा। इमी धाठम का प्रत्याह हमार मित्र  
 मनी हमीबुम्माह ने 'बीडर' में किया था। हम पत्र की जिननी कर्बा हुँ उनम  
 पित होया था कि बनता जमे सहय स्वीकार करने के लिए तैयार है पर हमारे सिद्धा  
 ण के कथपाठों ने उम पर कुछ विरोध प्यान न दिया।

हम धारणाधो के बाध मून पुस्तक शुरू होती है। उमे मबक न ध भाषा म  
 रना है। पहले माय म भीति है, हुपरे म मलि और जान तीसरे म म्युंगर बीय म  
 कुकन धर है और पाँचवाँ जमीमा है। धरुो की ध्याख्या विस्तार से की गयी है  
 और धरुध मी दिये गये हैं। हुपारे विचार म म्युंगर रम का बनाध इमने बहूत धरुधा  
 हो सकना था और जाने बोधा का धध भी धोममात कर दिया गया है। फिर भी मायक  
 न सराहनीय प्रयत्न किया है।

दिसम्बर १९३१

रुपाइयात समर सैयाम—धनु की विविधोत्तरल जो गुण।

प्रारमी-साहित्य में शायद इनसे ज्यादा प्रसिद्ध कोई पुस्तक नहीं है विशेषर  
 बोरल में। इन रुपाइयो म कुछ एना रम है कि हम संघह को समार-साहित्य म बहूत  
 केका स्थान प्राप्त है। बंयला में हमने गुन्दर सञ्चित धनुवार पत्रने ही निरुध कुटे है।  
 द्विती म प्रमा' म गुण जो ने इन रुपाइयो का धनुवार शक किया था। उन ममप बर  
 धनुए एह गया था। प्रयास-पुस्तकायप ने धध इन धनुवा' को पुनक क धाधर ने  
 गुन्दर चिचों महिठ बड़ी मजाकट क माय प्रकाशित किया है। शक म गुण जो का  
 कथन है जिनमें उहोंने मून कारमी और उनके धंधजी धरुवार धोनों म ए एक मे भी  
 परिचिठ न होने पर भी धनुवार कर धानन के साहस का जिऊ किया है और हम ज  
 कहने पर मजबूर है कि गुण जो का वाक्य-कीशान भी हम धनुवार में बोर्ड हम न पया  
 कर सधा। हम कथन के बाध भी उय हृष्यहास न उमर तैयाम और उमकी बरिधा  
 पर धरुधा निरुध किया है। हमके बाध मून धनुवार है। गजाम की रुपाइयों म आ  
 विराम-मय धनुवाय है जो मस्ती है बहु धनवार में न धा मनी और न धा मरनी की।  
 कनि की धारणा का मून में ही धारागत हा मरुठा था। सिद्ध जरण्ड का धनुवा' भी  
 शक नहीं। उमने जगह जगह मलमाना धनुवार कर जाना है। चिधा म कर् धरुधे है

॥ और और ॥

घोर कई बीमरों में भागों का विच्छेद हो ही नहीं सकता। उसमें सिर्फ तो कटिना ही है। राय-राबिनियों के बिना प्राचीन लिपियों में नहीं है पर मतीया कुछ नहीं। घट्टर को घट्टर घोर भागों को कामिक बनाने का प्रयत्न कभी तटन नहीं होता। सर, उस दृष्टि से न देखकर भी इन बिनों में जीवामय केवल तीन बिनों में था सका है—पृष्ठ ५ पृष्ठ २१ और पृष्ठ ४। ३६ और ४० पृष्ठ के दोनों बिन तो मन में स्मृति उत्पन्न करते हैं।

दिसम्बर १९३१

आरोग्य शास्त्र—सेकक थी अनुष्ठान शास्त्री।

हिन्दी में आरोग्य आरोग्य-शास्त्र सम्बन्धी पुस्तकों की कमी है। घोर होना ही चाहिए। मनुष्य के लिए आरोग्य से बहकर कोई वस्तु नहीं। धर्म पुस्तकों की धनदा इत रचना में यह विरोध है कि इसमें पुरानी बातों के साथ नवी बातों का समावेश कर दिया गया है और स्वास्थ्य के विषय में नवी से नवी तकनीकों की व्याख्या भी कर दी गयी है। यह मूल रूप से चिकित्सा की पुस्तक नहीं बल्कि इसमें उन विषयों का प्रतिपादन किया गया है, जिनसे चिकित्सा की प्रकृति ही न पड़े। चिकित्सा भी है मगर केवल इतनी नहीं कि वह भी आरोग्य-शास्त्र का एक शाखन है। ईसा ज्ञेय उपेदिक मरीचिका धारि संकामक बीमारियों का विच्छेद रूप से सम्बोध किया गया है। स्नान पर एक पूरा अध्याय है। पहले अध्याय में स्वास्थ्य विज्ञान है। दूसरे अध्याय में शरीर विज्ञान दिया गया है। तीसरा अध्याय भी इसी विषय पर है। चौथे अध्याय में यमिधान और प्रसव और पौषण अध्याय में तिसु-वागल। धाने के बार अध्याय स्नान और भोजन से सम्बन्ध रखते हैं। पचने अध्याय में रोय-कीटाणु का विकार है। रोपी की सेवा धारु-स्मिक उपचार स्वाभाविक चिकित्सा पर भी एक-एक अध्याय है। बीबीसवें अध्याय में धर्मिचार से पैदा होनेवाली बीमारियों की चर्चा की गयी है। एक अध्याय में ज्ञान गुस्से दिये गये हैं। सौन्दर्य-विज्ञान पर भी एक अध्याय है। गृह-निर्माण कला हस्तरेखा विज्ञान भी आरोग्य के शाखन है और इन प्रयोगों को भी स्वागत दिया गया है। पुस्तक सज्ज है। अध्याय सौन्दर्य शरीर-रोग धारु-स्मिक उपचार सम्बन्धी तीकड़ों बिन है। तीसरे अध्याय में अध्याय- उत्प भी दिया गया है क्योंकि शरीर और धारु का सम्बन्ध समझे बिना आरोग्य प्राप्ति नहीं हो सकती। अंशह बहुत सोच-समझकर किया गया है और एसी कोई बात नहीं उलने पायी जिसका आरोग्य से हूर का सम्बन्ध भी है। धारु-धरु अध्याय और अध्यायी सुन्दर। जिसका धारु हरजे की। मुख्य धरुिक है, लेकिन वह पुस्तक नहीं आरोग्य का पुस्तकालय है। धरु रोपी के निदान और चिकित्सा का सर्वान और विस्तार से होना तो पुस्तक सर्वाथपूख हो जाती। फिर भी बड़े काम की चीज है। प्राय रोषक और धरु है।

मार्च १९३१



## यूरोप की कहानियाँ—सघहनर्ता की खीगापाम मेवटिया ।

इस सघह में इस धांस जर्मनी इग्लैंड इटली आदि देशों के कहानी लेखकों की पैरीस सुन्दर कहानियाँ बी गयी हैं । यह कसा भारत म यारोप स भासी है । इसलिये इन यारोप की प्रकृति को बेसते रूग्ण की उकरत है । यूरोप के प्राय सभी विहागल लकडा को रचनाएँ कुनी मयी हैं । टास्सटाय बेलाफ तुग्नेब गैविमम वाकी अनातास परस मोपांसा बसठ हाईको कई आदि-आदि संकको बी कीसिमा कमी-कमी परिवारा म निकमती रहती है । यहाँ सभी एक मडकी म जमा है और अपनी-अपनी कीसि मुना रहे है । प्राय सभी कहानियाँ एसी हैं कि पढ़कर मन मुग्ध हो जाता है । कसी मलका म कलक की 'हाइ नामक कशनी मानबाव है । 'अन्धहार और 'कीटाणु भी प्रखी है । बाब कहानियों के इस सघह म रचने का मम इसके सिबाय और कुछ नहीं हो सकता कि यह बिबेरा की है । भूमिका म कहानी के विकास और गुण-दोष का बिबेचन मिया बया है और कहानी की रचना पर मूख्यान बिचार प्रबट जिये गय है । उनका एक धंरा हम सेते है—

'पहले यह देख लेना चाहिए कि कयानक की रचना का आमार क्या हो कहानी लिखने के लिए एक उद्देश्य का होना आवश्यक है ! जिरी एक पुण अथवा मम पुण की धनिम्पक को ध्यान म रलकर कहानक को सृष्टि करनी चाहिए ।

माच १९३२

## बीस कहानियाँ—सघहनर्ता की यमपत्र टाउन ।

इस सघह में हिन्दी की बीस अखी-अखी कहानियाँ जमा की गयी हैं । एक मयक की बचन एक कहानी सी गयी है । कुनाथ सुन्दर है, सेविन मूस्य प्रधिक ।

## गल्प मल्लरी—सघहनर्ता की मुन्नाम ।

यह भी हिन्दी के सुप्रसिद्ध गल्प लेखकों की रचनाओं का संग्रह है । कुन सगह कहानियाँ हैं । सेगकों का परिचय भी मिया गया ह ।

कहानी कैसे लिखनी चाहिए—सेखर मु कश्यापाम पी एम ए ।

यह बीमठ पुठों की छोटी-सी पुस्तक है और इस विषय की कानिन् पत्रको पुठक है । 'कशनी जमा' के विषय में एक पुठक की उकरत है और बहो कुण मरी है वहाँ यह पुठक कये सेवका का बहुत कुण साम पहुँचा सकती है । भूमिका में मुन्ना की कसमते है—

'इस पुस्तिका में बहुत-सी बातें ऐसी हैं जो बढ़ायी जा सकती थीं और बहुत-सी ऐसी भी हैं जो छोड़ दी जा सकती थीं' किन्तु पुस्तिका जिस रूप में है उसी रूप में इसलिए उपस्थित की जा रही है कि जिसमें विशाल और अनुभवी लोग इसकी वृत्तियों को देखकर एभी पुस्तक लिखें जिससे कहानी-लेखकों को ठीक-ठीक शिक्षा प्राप्त हो।

तो यह पुस्तिका केवल इसीलिए लिखी गयी है कि इसकी वृत्तियों को दूर करने के लिये कोई दूसरी पुस्तक लिखे। हमारे विचार में लेखक अब कोई जिज्ञासु लिखने बैठे जो अपना यह काम होना चाहिये कि यथासक्ति वह अपनी रचना को निर्दोष बनाये ज्ञान-बृद्धकर कोई कसर न छोड़े।

अब पुस्तक में धातु परिचय है—कहानी प्नाट चरित्र-चित्रण कथोपकथन कहानी की रचना क्लासिकल शैली और कहानी के विषय में साम्य विद्येय बातें।

पठक सत्य पर लेखक महोदय कहते हैं—कहानी लिखने से धम्मी धामरणी हो सकती है। इसके अर्थ होता है कि धामको हिन्दी-पत्रों का अनुभव नहीं है। हिन्दी में बहुत कम ऐसे पत्र हैं, जो पुरस्कार देते हैं। दो-चार इने-वने लेखकों को सम्भव है कुछ पुरस्कार मिल जाय पर साधारणतः यहाँ कहानी लिखना अभी अल्पसंख्यक के पत्रों तक नहीं पहुँचा है। ऐसी विरामी ही कोई पत्रिका होगी जो मई पर जब रही हो। ती फिर बाटे का पत्र निकालकर कोई पुरस्कार देते दे सकता है।

ऐसा बाल पढ़ता है कि यह पुस्तक कई धम्मी पुस्तकों के आधार पर लिखी गयी है क्योंकि इसमें जगह-जगह असम्बन्धिता पायी है। फिर भी इसमें काम की बहुत-सी बातें हैं जो कहानी लिखने में सहायक होंगी।

दो एक छोटे-छोटे उद्धरणों से यह बात प्रकट हो जायगी—

'प्लाट के लिए सामग्री प्रकट करके प्राप्त की जाती है, जैसे कभी समाचारपत्र पढ़ने से कभी साधारण बातचीत से कभी अचानक घटनाओं के देखने से और कभी साधारण अनुभव से। सम्भव है कि नये लेखक को यह प्लाट की सामग्री साधारण बातों में न मिलानी हो किन्तु प्लाट बुझने का सम्भाव उसको निपुण बना जाता है—

चरित्र-चित्रण के प्रकरण में साप मिलता है—

'पहली किस्म की कहानी घटनात्मक होती है, जिसकी सफलता के लिए धाम-व्यक्त है कि घटना बराबर होता जाय। इसी प्रकार की कहानियाँ या चरित्र-चित्रण के लिए बहुत कम स्थान मिलता है। दूसरी तरह की कहानी यह है, जिसमें साधारण का चित्रण लीजा जाता है—इसमें चरित्र-चित्रण का स्थान प्लाट और घटनाओं से अधिक आधारभूत समझा जाता है। इसका अर्थ यह नहीं है कि घटनात्मक कहानियों में चरित्र-चित्रण का बिलकुल अभाव हो या साधारण-गम्भीर कहानियों में घटनाएँ या प्लाट न हों क्योंकि गम्भीर कहानियों में दोनों बातों का होना आवश्यक है।

मार्च १९३२

## बेलि क्रिस्तन रुक्मणी री राठौड़राम, पृथ्वीराज री कही

धनुषारक—स्वर्गीय महाराज श्री जगमान सिंह जी माह्व ।

राठी-मरेय पपीराज बहो बीर घण्ट है जिनन महाराजा प्रताप को उम समय ला से मरा हुषा पत्र सिखा बा जब महाराजा कटा स तम धाकर मकब्र को परायोनता स्वीकार करल का विचार कर रहू थे । इस पत्र को पढ़ते ही महाराजा नमन पवे धीर धम्य तक स्वाधीनता का भंडा फहराव रह । यह पत्र भाब धीर भाया धीर धीर धारि मुशों के लिए एतिहासिक साहित्य म एक प्रमुख बस्तु है । पपीराज मार बाड़ी भाया के सबभण्ट कवि ये धीर हुण्ड के परम भक्त । 'बेलि उन्ही की रचना है । सम्भारकों ने धपने प्राक्कवन मे कहा है कि मारबाडो भाया म यह कविता का सबभण्ट रच्य है । मारबाडो भाया को डिगल कहते है । महाराजा पपीराज ने हिन्दी म भी कविता की है, पर उनकी बखना डूमरी बखी के कविता में है, पर सम्भारक-डय का दावा है कि पपीराज 'अंधकार' से जिनो तरह कम मरी है । बलि म हुण्ड-भरित पाया गया है । मुसिका में राजस्थानी भाया की उत्पत्ति बिद्वान धीर बिस्तार का बिस्तार बलन है । फिर महाराजा पपीराज का करिब सिखा गया है धीर उनकी रचनाया के दुप बरामि पवे है । 'बलि म कुल तीन छी बार पद्य है । बरेठ पद्य का भावाय दिया गया है । माभारत हिन्दी जाननवाला धारमी इन पद्या को नही समझ सकता । इनलिए डिगल का शरकोय भी दिया गया ह । एक सप्याय म बलि क मित्र-मित्र पाटालरा को मानने रस लिया गया है । सम्भारका ने जितने परिषय धीर बिद्वता मे इन पद्य का ज्ञान दिया है, बहु प्रशंसनीय है । पुस्तक को बोधयम्य बनाने के लिए उन्तोत कोई भाष नही घोड़ी । डिगल भी हिन्दी भाया ही का एक रूप है धीर उमक शरकाय तथा टिपणियाँ भाया-बिज्ञान के लिए बडे मह्य की चीज है । जिनुस्तानी लम्हमी ने इस पुस्तक को प्रकाशित करके अपने साहित्य-धर्म का परिषय दिया है । डिगल भाया म अनभिन्न होत के कारण हम 'बलि' के पद्या का पूरा-पूरा समभारन ता नही कर सक पर माभाय को पढ़कर यह कह सकते है कि पपीराज म समाधारण प्रक्रिया थी । हम का-एक पदों से इसका जवाहरण देंगे—

धीन शत्रु का बखन या किया गया है—उम मूय मे जगत न मिर पर म फरक बाग बनाया धीर सपन बर्छा न धपनी धाया जगत न मिर पर की । नयी धीर दिन बनन मने । सरोवरों का जल धीर रावि घटन मयी । पपी म नगोरता धीर शिमानय मे उम भाव या गया ।

बाँदा शत्रु बलाज का बखल एक पद देगिला—पपी री रचियानो को बलि धीर बालन पनरपाम भीहुण्ड की भाति लपबहि टाउवर एक हो ए है । नि धीर राज

का भेद नहीं जाना जा सकता। अर्थात्-मुनिमख प्रम म पङ्कज सख्या-वर्गम करता  
मूल मये ।

अप्रैल १९३०

डी बेसरा—लेखक श्री उमाचत शर्मा ।

सामयिक पुस्तक है और अन्धे समय पर निकली है। लेखन में लक्ष का उद्धार किया। उस मकल पार की शक्ति खील हो गयी थी। मुस्तक कमाल ने तुर्की का उद्धार किया। सुलतान योरोप का पुराना रोमी मसहूर था। लेकिन धार्लैंड का उद्धार करन के लिए डी बेसरा को संसार के सबसे शक्तिशाली साम्राज्य का मुकाबला करना पड़ा। इसलिए हम डी बेसरा को लेनिन या मुस्तक कमाल पाता से कम नहीं समझत। अंग्रेज सरकार ने धार्लैंड का कूब बमन किया लेकिन टिनड्रिस का नहीं बानी मता धान अपने र्थाग तेजस्विता और दुइता से धार्लैंड का बेतान का बादशाह है। नहीं की दता बहुत कुछ भाएत से मिलता है और साम्राज्यवादिबो की कूटनीति की चारों ओ महीं उची डम पर चल रही थी लेकिन डिमन कालिच पार्लेस न को स्वन्त बेसा वा उसे डी बेसरा ने पूरा कर दिखाया। पुस्तक एक महान पुस्य का चरित्र है और उस पढ़कर हम बहुत कुछ सीख सकते हैं। पुस्तक सड़ी ही रांचक है, उपन्यास की तरह, ही मापा इससे सरल होती तो अच्छा होता। डी बेसरा के अतिरिक्त अन्ध आहरित नेयामों के चिन भी है। धार्लैंड का एक मवशा वे दिया जाता तो इसकी उपयोमिता बढ़ जाती। जिन्हें बेस प्रम की समन है उन्हें इस पुस्तक से बहुत कुछ ज्ञान होगा।

विप्लव—लेखक श्री राजामोहन गोकुल भी ।

डी राजामोहन गोकुल भी हिन्दी के उन गिनेहुए लेखकों में हैं जिन्होंने धार्मिक सामाजिक और नैतिक विषयों पर स्वतन्त्र विचार किया है और उन विचारों का निरर होकर पापन किया है। धार्लैंड के विचारों में मीलिकता है गहरा अन्वपक है और भारतीय को कायस करनेवाली सञ्चार है। धार्लैंड मापा में लज्जत और लोच की बगह स्वामी बदलन की-सी दुइता और तेज है। धार्लैंड इस सत्तर वर्ष की अवस्था में भी मये से मये विचारों का प्रतिपादन बर्ता है और ट्राटस्की की-मी निरीकता से करते हैं। धार आत-मात छुट-आत धम-सम्प्रवाय इन मनी को समाज के लिए बलक और जनकी स्वाभाविक प्रवृत्ति में बाधक समझते हैं और धार्लैंड यमीतो के धामने छिर न भुका देवा कटिन है। अट्टासय बप की मुधास्था न भी धार्लैंड स्त्री के मर जाने पर इसलिए विभुर जीवन स्वटीठ करे कि वह मर जाता तो उसकी स्त्री धार्लैंड धार्लैंड है कि जिसकी मिसाम मुरिफ्त से र्थापमय बीबन का ऐरा पवित्र और उँवा धार्लैंड है कि जिसकी मिसाम मुरिफ्त से

॥ विविध प्रसंग ॥

मिनेगी थीर इस दृष्टि में भी आपकी जिज्ञासी नीजानो को लखित करती है ।  
 विचार वस्तुतः ॥ धरने नाम को चरितार्थ करता है । इसमें मरणात्मा मोक्ष भी के बुने  
 हुए माना जा सप्रह किया गया है और धरोड़ा भी ने इसे प्रकाशित करके हिन्दी के  
 विचार-साहित्य में एक स्तम्भ-मा गढ़ा कर दिया है । पहला संग्रह है 'ईश्वर का  
 बहिष्कार' । माथुरे में यह लक्ष्य-नामा बाठ नाम श्रेष्ठ क्रमशः निरुद्धी थी और हिन्दी  
 संसार में इनके हस्तगत मन्त्रा भी थी । इन दसनामा का अन्वय गती है और मन्त्र की शोभा  
 इतनी जनबुद्धी और विनामय है कि का कहना । अंतर्विधान 'ईश्वर का  
 बहिष्कार' का सिद्ध पद और विचार करने योग्य है । लेखक मन्त्र परने बुद्धिमान  
 है वह क्यों मानने लगे कि इनके नाम ही कहे कि इनके रूप में मरणात्मा का बहिष्कार  
 न धरना दिया है ।

**मुसलमन विपरीताक्ष—**नका भी मुख मन्त्रिण राज संघारी एव धार० ए ए

ऐसी एक पुस्तक की बड़ी ही उन्नत की और संघारी जी ने यह पुस्तक लिख-  
 कर देना का उपहार दिया है । भारत किसानों का देश है । उनका सब कुछ गती पर  
 मुनहसर है । सरकार भी माना अपने-नये-नये रिष (गाय) पर लक्ष करती है किन्तु  
 खेती पर उधका कोई प्रत्यक्ष धर नहीं होता । गौर होती है किन्तु उनका कोई प्रचार  
 नहीं होना और वह सारी मेटुन सरकार की दफ्तों की धारणाओं की शोभा बढ़ाने की  
 में हा जाती है । मन्त्र ने उन लोगों को एक जगह संग्रह करके उने जनसाधारण के लिए  
 मुसलमन कर दिया है । अमीन की किन्तु जुता गाय वेहें उन धानु संग्रही धरने  
 उन्धानु मन्त्रा का नाम आत्म धारि फलनों के धरा करन की विधि विचार में लिखी  
 गयी है और नये से नयी खोजों का उपयोग किया गया है । मन्त्रा के रिषों में खेती  
 के विधा शोत्रानों के लिए धूमरा धारण नहीं है । उनके लिए और एक किमान के  
 लिए यह पुस्तक बड़े काम की है । ही इनकी नीमन बहुत उगाय है । अर्थात् वे अर्थात्  
 को रचना होना चाहिए या इतना कि यह साहित्यिक विचार की बन्धु मदी रोटी के  
 समय का एक करनानो उन्धे बीज है और अन्वय न विज्ञाना के धुनार उन्धे  
 बीजों पर कर न मन्त्रा चाहिए या बहुत कम ।

**अंतर्विधान—**विधा श्रीमती पुष्पाधारी देवी ।

हिन्दी साहित्य के निर्माण में देवियाँ जो स्वयं लक्ष्य आ रही हैं पर उनके  
 लिए योग्य की जान हैं । पत्र-रचना में ता उनका स्थान मन्त्रों में जो धर भी कम नहीं ।  
 धर भाषा की शोभना ही प्रमाण बन्धु है । जो मन्त्र-रचना ही का मान्य है । धर तो  
 बन्धु ही बना । धर-मा मन्त्रिण व मन्त्र हिन्दी-मन्त्र, देवी पुष्पाधारी के नाम से  
 अंतर्विधान-मा धर । पर इन अंतर्विधान का उन्धे हम कह सकते हैं कि उनमें धर

धारण रचना-रक्ति भी और अपने कुमारी जीवन में ही उन्होंने ऐसी धारणासुप्ति प्राप्त की जो प्रौढ़ कवियों को भी गौरव प्रदान कर सकती है। पर खेद है कि वह 'कसी को लिखनी शुरू हुई थी कि तोड़ भी गयी। केवल उन्नीस वर्ष की अवस्था में उनका धर्म धान हो गया। यह सारी कर्मिणाएँ सोमह और उन्नीस छान की अवस्था में ही लिखी गयी हैं। इतनी उम्र में ऐसी भावपूर्ण कविता करना साधारण प्रतिभा का काम नहीं है। उनका विवाह भी अत्रगुप्त की निधामकार से हुआ था पर वह निमित्त नहीं है। उमर उमर ही गयी और उनके दुखी हृदय को सांत्वना देने के लिए जो कुछ खेद उन्हें मिला वह यही कविता का संग्रह है। पुस्तक को हाथ में लेते ही एक चख के लिए हाथ और हृदय दोनों में विहरण-सी हो उठती है और इन कविताओं में जो वेदना है वह सतबुद्ध हो जाती है। क्या वह आत्मा जीवन के बंधनों से मुक्त होने के लिए ही तड़प रही थी ?

दुःख पत्र पर जम धाबी हूँ होने को चरखा में जीम ।

और निरस्ता-वय में अब तक भी आस्ता की धाबा खींच ॥

त्रिभू आत्मा में वह तड़प और कसक ही वह इस आत्मामय संसार में क्या धारण पाती। हमें आशा है, साहित्य-संसार इस संग्रह का आदर करेगा।

जनवरी १९३३

भर्तृहरि चरित शृङ्गार, नीति और वैराग्य-रावक—धनु की हरिदास की वेष

धनुहरि के तीनों ललक उत्कृष्ट साहित्य के ही नहीं सू-साहित्य की संपूर्ण रचनाएँ हैं। जीवन की इन तीनों अवस्थाओं का साधक ही किन्ती कवि ने इतना मार्मिक दृश्यपूर्ण और यों-ही-बोझनेवाला चित्रण किया है। हिन्दी में इन कृतियों के अनुवाद को पहले ही धन चुके हैं लेकिन हरिदास जी ने प्रत्येक श्लोक की व्याख्या रत्नोत्तम का धधकी क्पात्तर, सबसे मिसती-जुमती हिन्दी उगु, फारसी कवियों के छंद देकर इसे सवनाधारण के लिए सुबोध बना दिया है। व्याख्या बड़ी उत्कृष्टी हुई सजीव भाषा में की गयी है जिससे उसके पढ़ने में आनन्द आता है। वे तीना पुस्तकें अब तीसरी बार प्रकाशित हो रही हैं इसी से ज्ञात होता है कि हिन्दी पाठकों में इनका चित्रण आधार किया है। भर्तृहरि का जीवन चरित भी दिया है, अगर उसमें कितना इतिहास है, कितनी कल्पना इतना केवल मुश्किल है।

हिन्दी मुसिस्तों—धनु की हरिदास की वेष ।

मुसिस्तों फारसी साहित्य का प्रसिद्ध संग्रह है। इतना सवप्रिय नीति-बंध संसार साहित्य में मुश्किल से मिलेगा। संसार को ऐसी कोई भाषा नहीं है जिसमें इतना धनु-

बाद न हो गया हो। इसकी भांति इसकी सरल मरम धीरे मज्जीब है धीरे कर्माएँ इसकी शिक्षाप्रद धीरे मनोरेजक कि चिरकाम छ पाठ्यपुस्तका म इसका प्रथम स्थान रहा है। जिसे फारसी साहित्य से नाममात्र का भी परिचय है उसम मुनिस्ताई मबरय पकी है। शेष सबो कवि भी या धीरे इन कथाषो को जग्दोने धपने छंने से असंतुष्ट कर छनम जान ज्ञान दी है। मुनिस्ताई के संकड़ा बापय धीरे शेर मोकास्तिया का पं पा चके है। हरिदाग जी के अनुबाव म मूम का धान्य खाता है। हर कथा के धन्य म उससे मिलनेवाली शिक्षा भी दे बी गयी ह। इस पुस्तक की यह चौथी धानुति है। इससे धामुम होता है कि हिन्दी म इसका रिठना धारर है। बापको के लिए तो इनका बचना साबिबी है ही बुद्धों को भी इसम बहुत कुछ शिक्षा मिलती है।

चिकिरसा-चंद्रोदय—जेनक दो हरिदाग जी बीच।

इस अनुपम ग्रन्थ के दो खण्डों की धालोचना पहने किसी धंक म की जा चुको है। पाँचवें भाग म तीन धरख है। पहल दो खंडो म बिप का वखन किया गया है। तीसरे खण्ड में स्त्री-टोनों की चिकिरसा बी गयी है। छठे भाग म खालो धीरे शबाव-टोप का निशान धीरे चिकिरसा बी गयी है। इन भाग के धन्य म दवाएँ बनाने धीरे सेवन करन में जिन बालों के जानने की जरूरत होती है बर मय बिस्तार म लिगी गयी है। बीसा हमने पहल कहा बा हरिबास जी म धामुर्वेद के धनेक ग्रन्था को मयकर उनका गार इन पुस्तका में भर दिया है। बिषय का इतना बिस्तार बखन कथापित किया एक गानुर्वेद धन्य में म मिलगा। तीन ती ज्ञानीम पुष्ट इन बिषय पर रिय गय है। हर धार के बहर की पहुषान उससे पंग होनेवाले धीप उसकी चिकिरसा सभी कुछ ती । वहाँ तक कि बासने कुछ मकड़ी धिपकती तक क खट्टर-बी चिकिरसा बतायी गयी तीर मुस्त भी धधिर्वात पटोस्थित है जो बर मरुतक की बात है। इन पुस्तका को बड़कर धानी धपना धीरे धपने परबाणों ही का नहीं मकि धीरे मुस्तमबाणा का भी बहुत कुछ बन्धाय कर लखा है।

धैर्यम प्रथ निमित्तेक प्रयास की बाधोपयोगी पुस्तकें—वालर्का का विद्यासागर,

विद्यानामर क धरिप म बासका की गंध की जितनी बातें हैं बह मय यहाँ बडी सरल भाषा में लिखी धयी है। मरुका का इस धरिप म ज्ञान हागा कि विद्यानामर पढ़ने-लिखन म ही सब मरुकों से तेज म थ लय-रू म भी बौर् मरुका उनको बरबरी म कर लखा बा। बह भावा-गिता क जितन भक्त धे। एक धध्याय म उनक कोवन की गध शिक्षाप्रद घटनाएँ जमा कर बी मये ८। मुस्त धान-गोपी है। बर् बिा भी है।

## बेरया का हृदय—सेखक डा० धनीराम प्रम ।

एक बेरया ने अपनी जीवन कथा लिखी है और उस पर सच्चाई का रंग भरने में पूरा रूप से सफल हुई है । एक अच्छे सुसलमान परिवार की लड़की माता-पिता के मर जाने के बाद रिस्ते के एक बच्चा कमलू मियाँ के घर में बसाया जाती है । कमलू मियाँ का बेटा पहला बच्चा जो बम्बई में सामान्य है बर जाता है और इस लड़की को अपनी और बालपित्त करके उससे निकट कर लेता है और उसे बम्बई ले जाता है । बम्बई में वह घरपर परवा खोम लेता है और नर-पिताय बंख्या के बसान के रूप में प्रकट होता है । धामलू रोटी है बिचड़ती है, पर बम्बई में उसका कौन सहायक है ? वह इस बच्चा में फँस जाती है । पहला पुनित्त की गोली का शिकार होता है धामलू को कौन की सजा होती है और बाहर निकलने पर पठन उसका स्वागत करता है । तब से धमलू तक वह दुखिया प्रम का अत्यन्त बूझती रहती है और जब सफल होने का अवसर आता है तो संसार से विदा हो जाती है । कहानी अत्यन्त कदख और उसके साथ ही बर्बादमूलक है । एक निराश्रिता किस तरह अपनी रक्षा करने को बेव्य करती है और प्रम में असफल होती है इसका बखान बहुत ही रोमांचकारी है । उसी के मुख से सुनिए—

‘कौन ऐसा स्वाम है जहाँ प्रसिद्ध के साथ जीवन बट सकेवा ? कौन ऐसा है, जिस पर विश्वास कर सकेंगी ? फिर वह जीवन किम लिए ? किस आशा पर यह छापी धामलू अशोत होपी ? प्रम तो हो ही माय है—या तो जन्म को विदा कर दो हीस को जो दो और छोरो की प्रति संसार के मजे लुटो और या फिर उस स्वाम पर बसो जहाँ तुम्हो की दृष्टि से बच सको ।

जब बिसन की पत्नी बेरया धामलू के पास आकर कहती है—मुझे इसमें क्या ? माय नहीं जानती । आपने कभी पत्नी होने का सुख नहीं उठाया । आपने एक पुरुष ही प्रेम का केन्द्र बनाकर जलकी पूजा नहीं की । आपने स्वीत्व के उस पुरुष प्रभाव में गिरा नहीं जगना जिसमें बहना एक अपूज्य बात है । फिर आप एक स्त्री के हृदय के गर्मों को कैसे समझ सकती हैं ?

इस स्त्री की बातों ने धामलू के जीवन की धारा ही पलट दी । यही बेरया जो बिसन की बीवी हाथों से मृत रही थी अब कहती है—

‘तुम अपनी स्त्री से प्यार नहीं करते ? यह तुम्हारा बड़ा अश्याय है । वह तुम्हारी है, तुम उसके हो । मैं अब तक तुम्हें धोखे ने बाल रही थी । मैं न तुम्हें प्यार करती हूँ न कर सकती हूँ । मेरे इस शक्तिरूप के पीछे अपना सबनाश न करो न किसी और के रूप से पीछे पडना । तुम्हारे घर मैं दिखी हूँ । उसकी पूजा करो ।

पुस्तक अत्यन्त रोचक है और समाज के एक ऐसे वर्ग की और हमारा ध्यान आकर्षित है जो अपनी जिम्मेदारी से जाहें जो कुछ हो हमारी जिम्मेदारी से दुखी है क्योंकि



वैवाहिक जीवन ही समाज का तथ्य है और शायद यही हम-जीम मान रहे। कई  
 स्थल तो बड़े ही मार्मिक हैं। माया में प्रकाश और रम्य है और आशु के बिना बड़े  
 सुन्दर है।

सन्देह यही होता है कि यह बंधन क्या है या नहीं। हाथ धमकी  
 बरपाएँ एसी होतीं इतनी धारणी से प्रेम के अर्थन में पड़ जानेवाली ता समाज  
 क्यों उन्हें इतना हीन समझता। धारणी धार धारणा नहीं है ना उमर लयला  
 धरय है।

इसाइ वाला—मरक भी धमक लोपान रोषर ।

प्रकाश दिनु है। इयाकला जय र्पा। रीला माय कायज म पण है। लोको म  
 प्रम होता है और गुण म म विचार हो जाता है। प्रकाश की माया शाय म प्राण होती  
 है, "कारा का पिता भी बहुत नागज होता है लेकिन जब इयालि समाज और गण-मया  
 में उन-मन से लग जात है और बाद की मयालय धारणीवन म प्राण मन है तो पिता  
 का श्रेय शाय हो जाता है और वह धमक पुत्र और पुत्र-मया का स्वभाव कला है।  
 पुस्तक का उद्देश्य तो सामाजिक इच्छा है लेकिन येही पुस्तक व निरा जिन मोक्षता  
 की प्राथम्यता है वह यही कम है और लया जान पड़ता है कि बहुत जमी म निरा  
 कर समाप्त कर भी मयी है।

मधुकरि—सम्पाव भी विमोह शंकर लाम ।

इस संघर्ष का पहला आय दो-तीन माय हुए निजना था। "7 इसका दूसरा  
 माय है। हमम कुछ बहानियों तो उन मेगता की है आ पहल मया म लकी का मके  
 व और कुछ मय मेमकों को है। हुए लमि बहानियों है और लमि हा मया। बहानियों  
 साहित्य विमोह लका मे इच्छा म बह रण म मके लमोय हीना 7। बहानियों  
 म इच्छालय को की "जपकारा जनम बुमार को की "रपडा धनीगम की प्रम की  
 "बहन भी पुत्रमाल पुत्रापान बहरो को जमी प्रतामाराजग आ का धारणीयों  
 गुण बहानियों है। मरधार मोहन मिह के बरे मन्तर मया म सामाजिक गुण को  
 बरना प्रण है। शायद मरधार माय को लो इच्छा देता क उदाह क निरा  
 धारणक मय "रती हो। हमें तो हमसे मरधार हो क मछण निगने है। वैवाहिक  
 जीवन केवल मन की इच्छा नहीं है और न मन की कल्पना और निरा को प्रम बहने  
 है। धार हम मया प्रयव धनी-गुरम बुमरे पुण-की को लमकर मरधार कान मय तो  
 बहानि मोहन का धन ही ही जाय। एसी धमक बहानी निगमर मरधार माय मे  
 विमो को मेवा नहीं की। मरधार प्रमा निरा आ का मरधार भी यदायका का  
 विमोह हुआ बिना है। हुन्छाराजग का व्यवाय की मया मरी विमोह का विमोह

॥ ओर और ॥



प्रकार की किरायें—सेवा थी भोलादास जी ।

स्वामी जी के उपदेश हमम सुन ही । उनमें एक मकड़-हृदय क पुपकित करन  
 वाने उद्गार है प्रम म दूब हुए धीर धाम्पारिमक धान्य म सने हुए । यह धौटी-सी  
 पुस्तक धापक कुछ सेना का मसह है । इसम भी धाम्पारिमक तारो पर प्रकटा रामा  
 मना है । धाम्पारिमक एक एसा विषय है जिनसे सामारण से नाधारण धानी भी कुछ  
 म कुछ परिचित है । हम धक्कर सीगो को कहते-मुनते हैं—जो कुछ करना है ईश्वर  
 करता है, धामर माया है, पट-बट म राम ब्याप्त है मग बगा तो कटौती म मगा जह !  
 धजा होगी बही भगवान के ध्यान होंगे धारि पर यह धान परधरारागठ है धनुमूठ नहीं  
 हमबिए हम मुन से ऐसे महान मर्या का ब्यबहार करके भी उनके धनुमूठ धावरण नहीं  
 र मकठ । जिनम इन तन्त्रों को धरना बिया है बही ज्ञानो है बही मत्राय्या ह । स्वामी  
 भोलादास जो 'श्री धनुमकी पुस्तो म है धीर इन विषय पर लिखने हुए धा बन्ते हैं—  
 'हैं धारिधार है । मठमठा का रहस्य' इन विषय पर लिखने हुए धा बन्ते हैं—  
 ईश्वर-प्राप्ति का तकमे मरस माग उनसी संतान मनुष्य मात्र ही सेवा धीर उन्हीं से प्रम  
 है । धीर हमार सपान म यह धाम्पारिम का मार है । सुरिकम यही है कि ज हमसे  
 कहा जाता है कि—

रिम मर म जा मुक-दुय मित सम मर म ईश्वर की इच्छा का मचाग ममन्धे धीर  
 सग के लिए उते धरन हृदय-मन्धिर म प्रतिष्ठित करो ।

तो गुरुध मन म मन्धेह होता है कि ईश्वर हम बुनिया के धीनू धोघन क लिए  
 केमन एठ मानकी कल्पना तो नहीं है । जब हमारे बुनो म भी ईश्वर की इच्छा ही का  
 मंभार है तो संक हावो है कि हम धगनो दरा को मुधारने का प्रयत्न ही बना करें ?  
 धीर बही संका हम नहीं म पर पर्वबतो है कि जिनका मंभार के पयावों पर धारिधार है,  
 उन्हीं विपत्रता को शास्य करने के लिए हम कल्पना की गृष्टि करक उमे मम्मोक्ति कर  
 िया है ।

मितम्बर १६३३

धारम-विम्भूति—रचयिता थी पद्मकान्त मापधीय ।

पद्मकान्त जो मे लिगी में द्वा-नी निगारर बनिता प्रमियों का तरु नहीं बीर  
 देने की बन्ना की है । मगर उद्वन का मुमहय का ग्वा-नों के लिए उद्ग की उमेय  
 जिननी धनमूम मिड हूँ है शास्य लिगी उरती धनमूम म हा । हाँ धा बाग उरर  
 है कि उद्ग को गीरों उरताया मे माने जाने का गीरर गान्त हूया है तब जारर उगमें  
 बहु मत्राँ धायो है । पद्मकान्त जो भी क्वा-नों ता मरस-मगा का दराक धीर संका  
 मर का मियर-नी मानक होता है । लिगी बनिता म प्वाग धीर मगुराना धीर

॥ बर धीर ॥

परिचित जो धमी उपरिचित से लगते हैं। सम्भव है धाये बचकर भाषा के मंत्र बाने पर हिन्दी कबान्तों में भी धमीत मा रवाँ की कबान्तों का-सा मन्त्र धाये। धमी तो बहु वात नहीं धामी।

नवाक का हाथी—मनु मुठी कन्हूयालाम।

मुंशो कन्हूयामाम ने हिन्दी को उर्दू-साहित्य के हास्य रस से कुछ परिचित कर दिया है। इस सग्रह में उन्होंने दस प्रच्छी-प्रच्छी कहानियों का संग्रह कर दिया है। 'बार्थिकिम' और 'धंगुली की मुठीबत' विशेष रोचक हैं। मगर ऐसी कोई कहानी नहीं, जिसे पढ़कर हास्यमय मनोरंजन न हो।

साहित्य-समीक्षा—मंसक भी कामिवास कपूर।

भी कामिवास भी कपूर हिन्दी क सुपरिचित धालोचका में है। इस पुस्तक में उनके धालोचना-संबंधी लेख को उन्होंने समय-समय पर पत्रों में प्रकाशित कराने से सग्रह कर दिये गये हैं। लेखा-सवन प्रमाधम और रंयमूमि को विस्तृत धालोचनार्णें भी दी गयी है। कामिवास भी की धालोचनार्णें पञ्चात उर्दूत होती हैं यही उनकी खूबी है। हिन्दी में नाटक और धमिनय' और 'हिन्दी में उपन्यास साहित्य' विचारपूख लेख हैं।

मानुपी—लेखक भी सिमारामशरण गुप्त।

भी सिवारामशरण भी की कविताओं में जो शक्ति और माधुर्य ही की प्रबलता उरूती है नहीं जितेपठा उनकी कहानियों में है कही-कही निरीह चुटकियाँ भी लेते हैं। बानों में महउई है धकश्य पर पाठक को नहीं पढ़ूषने में कोई म्पका कोई हचकोमा नहीं लयता जैसे किटी लिपट में बैठकर नीचे उतर गये। 'कपये की समाधि 'पय में से' और 'कष्ट का प्रतिदान' बड़ी सुन्दर और ममत्परायी कहानियाँ हैं।

शॉव्—नब बर्पा क

हिन्दी मासिक पत्रों में 'शॉव' ही एक ऐसा पत्र है जिसने एक धारय सामने रखकर सर्वत्र उसको पूरा करने का बल दिया है। उसके धारय से बहुताँ को मठमें ही सञ्चता है पर उसने जो कुछ सत्य समझा है उसका प्रतिपादन करता है और प्रशंसनीय निर्माँकता से। मन्मन्वर से उसका नया रूप धारय्य होता है और इस साल उसका नब-बर्पाक बड़ी सञ्चक के साथ निकला है। कविताओं कहानियों और इसके विशेष स्तम्भों के धतिरिक्त इस पत्र में कई विचारपूख लेख हैं जिनमें प्रो रामराम पौड का 'भारतीय परमोन्मवार पंडित लक्ष्मीवर बाजपेयी का 'हमाटी पठिता बहुने' भी बामहृण्य गुप्त का 'सोनिवेट क्त' भी मत्पनीबन तर्माँ का 'प्राचीन धारय में

यजुषा' तथा हिन्दू विवाह की रस्मों व 'परिव्रतम' धारि सेल विचारणीय है। बाब  
 देवी की मे जिग संगठन की चर्चा की है उससे बरयाद्यो का चाहे धार्मिक नाम हो मने  
 मगर समाज में सम्मान तो सभी मिल सकता है जब उनके चरित्र म मंयम धा जाय  
 यदि फिर व मूल्य धीर गाण को पेशा बनाकर भी गृहिणी बनकर रह। बर्मा जी न  
 बहुत से प्रमाण देकर यह निश्चि कि पुराने जमान म गलिक्राया का मभात्र मे  
 धन्धा धारर वा धारर मरैव चरित्र से मिलता है। धात्र भी सभी बरमाएँ मीजून है  
 जिन्होंने मंवीय की उपासना को ही अपने जीवन का आधार बनाम गया है। धमादर  
 धीर धयमान ता रूप के बेचने से होता है। धयम धात्र भी प्राचीन गलिक्राया की मूर्ति  
 बरमाएँ नाचने-गाने को अपना मदन काय वा म धीर बबल धम ज्ञान पर जिगा ताप  
 रिक्त स मर्बध कर ल धीर लकाधारिणी बनकर गह मो काई बजत नही कि धात्र या  
 उनका धमादर है। धी मोहननाम जो म ध म मय्य म जिगाय है कि पुरान नमर म  
 हिन्दुओं की विवाह-प्रथा म बना-बना पारबनन हुए पर विवाह को बनमान ममय्य वा  
 हल करन की चेष्टा नहीं की। समाज की यह बड़ी कठिन मय्यया है। हम धन म  
 टोम रहे हैं पर कोई माग नही पाते। एक धीर पुगनी बहुधा रम्य है मूनी धार  
 रिचम को धन्धाकम्य मरुम है धीर उसमे पत्रा ज्ञानवाये "गन्ध"।

### तूकान

टाण्कारी माहिलियक पत्र है। कनकला म गवायोहन लामुम जी क मभात्रकम्य  
 मे निकसा है। ताकामोहन मोनुम जी इन बुडाबस्था म भी नोत्रबाना वा मारा मरुम  
 है। तूकान में हास्य काल-बिलोद कगनी धारि मनामजम की काडी नामधा गती है।  
 कमीर धीर विचारपूख सेल भी मिय जाते हैं। सम्पादक म अपन कौरस्य क रिपय म  
 लिया है 'तूकान देउने में कमी-कमी गमार के मिय बहुत धरिठकर बहून भयारना  
 धीर कबांदानीय प्रवीठ होता है किन्तु बाम्पध म एमा होता नही। उनको गर्मी लमी  
 धरमता मरमता बटोर्या धारि म से प्रत्येक गुण प्रकृति देवी के तिगी न किमी इदरय  
 कायन के निमित्त ही होता है। मी म पत्र क नाम की वषाण्णा मिड होती है।

### मदारी

हास्य-रम का पारिचय पत्र है। प्रयाग से भी बनभर प्रमार गण्ट 'रमिर की  
 एकीटरी म प्रकाशित होता है। बाब धरु निरम गुरु है। बरिमाणे धीर गण्टे भी देना  
 है। हम धाता है मारी माहिलियक गदबानियों मे धनम एकर धामे बंगों को मबत्रा  
 एंगे। एमे लक पत्र की जन्मर थी। हाँ मारी का काय बनना धागान नही होता।  
 कमी-कमी बंदर उन बाट भी लिया करते हैं। इमनिण बंडरों का मभात्र मयय कपारा  
 धात्राकर काय मेना धरिचि निरार होगा।

टर्की का मुस्तफा कमास पारा—लेखक श्री शिवनाथराय टंडन ।

जिस बीरामा ने टर्की को गुलामी बर्ष पार्लंड धीर स्नेहधारिता से मुक्त किया उसी मुस्तफा कमास पारा का यह जीवन चरित्र है, जो कई अंग्रेजी पुस्तकों के आधार पर लिखा गया है । मुस्तफा कमास ने जिस वक्त होसा संघाना टर्की साम्राज्य का अंत हो चुका था । एक और गृह-युद्ध का आजार गम था दूधरी धीर योरोपियन लिपियों का भारतक । देश के द्वितीय उद्धार की कामना कर रहे थे । जीवनान तुर्की की स्थापना हो चुकी थी धीर यह प्रत्येक मुख्य स्वान में गुप्त रूप से देश में नबीन नःसुति पैदा करने का ज्योम कर रही थी । लिपिने ही उच्च राज-कर्मचारी इस जीवनान नःसुति में थे । मुस्तफा कमास को जमीन एक तरह से तैयार मिली । उसके ऊपर कई बार सन्देश हुआ पर हर बार वह कमचारियों के महयोग से बच गया । योरोपीय महा युद्ध में उसे अपनी सैनिक योग्यता दिखाने का अवसर मिला धीर उसने बर्से-शानियाम में बिपची सेमाघों को परस्त करके अपना सिक्का बिटा दिया । फिर उसने किस तरह अपने वाचाघों धीर कठिनाइयों में अपने प्रतिमातृष्व व्यक्तिष्व का परिषय देते हुए, सुमतान को मानून किया किस तरह देश को बेश होदियों से मुक्त किया किस तरह राज्य को शक्तिशाली बनाया किस तरह सामाजिक सुधार किये यह सात नुत्तान्त इस पुस्तक में अपने मनोरंजक रूप से किया गया है कि उपन्यास का महा धाता है । माया चुमबुनी धीर मंत्री हुई है । जीवनिकार को अपने नामक में जो पडा होगी साजनी है, वह एक-एक शब्द से टपकती है । यदि धाम्याओं का स्पष्टरूप से बर्णिकरख कर दिया जाता तो पुस्तक धीर भी उपयोधी हो जाती । प्रारम्भिक-जीवन 'योरोपीय युद्ध' 'तुर्की इन्विट धादि परिष्वेधों से हमें बिषय के समझने में ज्यादा सुगमता होती । तुर्की का नवशा नी होना बन्दरी था । ऐसे महान व्यक्ति की जीवनी ऐसी होनी चाहिय कि इसकी जीवन-कथा के साध-साध देश की ऐतिहासिक धीर राजनैतिक प्रगति पर भी कला पडता जाय । यह शोष लटकता है । हम धाता है कुचरे एविसन में वह कमी दूर र ही बायगी ।

गांधी-विचार शोहन—लेखक श्री किशोर भास व महाध्याता ।

श्री महाध्याता को महात्मा गांधी के संपर्क में रहने का बहुत अवसर मिला है, महात्मा जी की पुस्तकों धीर लेखों का धापने दून स्वाध्याय किया है । इस पुस्तक में धापने मम ममाय सत्याग्रह स्वराज्य बाखिग्य उद्योग शोपामन स्वच्छता धीर धारोम्य लिखा साहित्य धीर कथा धादि बिषयों पर महात्मा जी के विचारों का जन करके नवनीत निकामकर रख दिया है । महात्मा जी का जीवन एक किमासधी है, धापने हरेक शब्द हरक बाबय हरेक काय की तरह में धाध्यायिक तरह धिरे होते हैं । उन तारों का यहाँ दून रूप में नंबह कर दिया गया है । हमने ऊपर जो बिषय दिये हैं

॥ बिबिध प्रसंग ॥



सहस्री—सगक डॉ बनीराम प्रेम भूतपूर्व सम्पादक 'बाप' ।

डॉक्टर बनीराम की कहानियों का हिन्दी में आद्य स्थान है । यह पुस्तक उनकी व्याख्या कहानियों का प्रथम है । आपकी कहानियों में वह नवान्त यह बोधने में हों जो धारकत धरकर मनचले गल्प-लेखकों की कहानियों में नजर आते हैं पर स्थानिकता है, जो कहानियों में बतपटे कथामु का स्वाद नहीं—भीठे हमने का स्वाद भर देती है । बेजिये विद्यवा के यमोमाओं का यह चिन्ता सुन्दर विषय है—

'क्या मेरे हृदय में पुनरुत्थान की मानना न हो ? सारे जीवन में जिन एक पुरुष की बाली में मान्य पाया हो हृदय में भावुकता पायो हो जिन्होंने दो घंटे वार्तालाप करके जीवन की सुष्ठु वास्तविकताओं को जवा दिया हा उनको फिर देखने की इच्छा किसे न होती ।

बीच-बीच में आपकी कहानियों में हास्य-परिहास की बख्शी आरानी रहती है । कसा मसा नाम की कहानी पढ़कर हँसते-हँसते पेट में बम पड़ गये । कुमुद मधुसूक्त जालिम की धीर तनीत की उमने ऐसी लखर भी वि उन्न भर न मूल्य ।

जयन्त—लेखक की रामनरेश त्रिपाठी ।

यह त्रिपाठी जी का नाटक है धीरे मिलना गया है केवल पाँच दिन में इस रफ्तार से तो शायद आप साल भर में पन्द्रह-बीस नाटक लिख डालने की इच्छा में लिखने करके घाने की कसर पूरी कर लेने ।

नाटक बख्शा न पढ़ने सायक बख्शा है बपोदि वास्तविक जीवन में चाहें इतनी प्राधानी से निखारी राजा हो जाय लेकिन नाटकीय जीवन में वा हम मज्जता के पहले हीरो को इससे कहीं मीपख कठिनाइयों में डेखना चाहते हैं । यहाँ तो सठ के निवा धीरे न डेखता धीरे बखियाँ हैं । इतनी सखी सख्यता ने उनका महत्व को दिया । दो-चार रात धीरे दो-चार भापड धगर एक राजा का कामना बना वे तो धात्र निम्नानवे सभी सबक उसे केमन को तैयार हा जायने धीरे मकने बड़ी मूल वा यह हुई कि आपने यह स्पष्ट लिख दिया कि आपन इन पाँच दिन में लिख डाला । आप चाहें एक ही दिन में लिख डालते मगर धांपकी वा वो नम विषय में यामोस रहना जात्रिए वा या कम से कम तो पाँच महीने लिखते ।

फरवरी १९२४

बलभद्र और इतिहास की कहानियाँ—सगक श्री धानन्द कुमार ।

यह दोनो पुस्तिकाएँ बच्चों के लिए लिखी गयी हैं धीरे मनोरंजक हैं । दोनों के नाम बार-बार घाने हैं । इनके लेखक श्री धानन्द कुमार जी ज्ञान-भाद्रिय की बख्शी

॥ विविध प्रसंग ॥



रचना कर रहे हैं। घापकी रजतार त्रिपाठी भी न भी लेम हैं। बलभद्र घापने पाँच पेटि में लिख डाली। घाप लोगों के मस्तिष्क न महसूस की गति है। मेरिण प्रतिभा को इस तरह मरपट छोड़ देना ठीक नहीं। राक कर चलना चाहिए।

फरवरी १९३४

### नरम्पू पब्लिशिंग हाउस देहरादून की पुस्तकें

श्री धार सहगम न श्री प्रथम विमिन्ड क मेनेजिग डायरेक्टर का पद त्याग करने क बाद देहरादून से पुस्तक की एक नयी माना निकालनी शुरू की है और इस बोड़े ही समय न उन्होंने ब्रिटीश पुस्तकें निकाल टाली हैं और निजामन का प्राधान बना डाला है, उधसे प्रकट होता है कि धारक उन उत्साह और धुन में धारका नाथ गती धाका है। हम घापकी इस नयी साहित्यिक योजना का स्वागत करते हैं।

इस माना की छः पुस्तकें उन समय हमारे सामने हैं जिनमें धार ता क्वाजा हसन निजामी के 'गदर की कृतानिया नामक माना की कई किताबों के मरन अनुबाध है नाथकी पुस्तक का नाम है—'भारतीय विद्रोह और छठी पुस्तक है—'देवी बीर का पुतरा एकीकृत।

### अफसरों की विद्रियो—धनु श्री बयनारायण तनू ।

इसमें उन पत्रों का संग्रह है जो अंग्रेजा अफसरों के बोध न धा गयी थी और जिनक द्वारा उन समय के हाकिमा नो कमखोरियो का पना चलना है।

### बहादुरशाह का मुकद्मा—धनु श्री गोतानाथ मिह श्री ए ।

इस पुस्तक में उस मुकद्म का हान लिना गया है जो बहादुरशाह पर अंगरेज के धम न चलाया गया था। प्रत्यक दिन की अरबार्ड का जिकरक दिया गया है। उनको बेतानिधाने को जो नडा बी गयी था उनका हान बडा चमका तनक है।

### बखार अंमजों की विन्या—धनु श्री बयनारीन सठ ।

अंगरेज के दिनों में बागियों न अंग्रेजी अरुमरा पर क्य-क्या अण्वाचार किये उनका बयान है।

### बगमों के आँसू—धनु मणा नयजानिकान श्री श्रीरास्तर ।

धनु इस माना की मरने मभारंजत और नवाननाका पुस्तक है। बहादुरशाह के देश-निधन क बाद मजबूत को जो दुगति हुई उमी की कानु मंग है। धारणत की बेजियों तथा बटुमा को किस नगर गनी-गनी टकरें गानी ली न मक हार गरी

दिया गया है। बहादुरशाह सफ़्फ़न मनुष्य के बड़े प्यासु और हरियाबिस। मगर बाब्रह्म होन के लिए बेबल इन सवपुणों की जरूरत नहीं होती। उनमें उग पुणों म से एक भी न था जिनसे मुमनों ने सबियों तक बिस्मी पर राज किया। वह इसी मायक के कि कोने में बड़े पैशन लिया करते और फकीरों की कब्रों पर मजकुर लगावा करते। ऐसत आसमी बग़ावत म क्या सफ़्फ़न हो सकता था। इसका रंड ऊन्हे भोगना पड़ा। जिन्यी के उलट-फेर का धालें खोसनेवाला बुरान्त है। अनुबाबक सभी बिठावों के धन्दे है। स्वावा सफ़्फ़न की भाषा इसनी सरस होती है कि उन्हे भाषा भी होती तो बाघानी से समझ में आ जाती।

**भारतीय विद्रोह—अर्वात् राउलेट कमेटी की रिपोर्ट (प्रथम भाग)—**  
 अनुबाबक की अकुर मजबीत सिंह की राठौर।

राउलेट कमेटी की रिपोर्ट भारतीय इतिहास के विचारियों के लिए महत्व की वस्तु है। इसमें १८९७ से अब तक के भारतीय क्रान्तिकारियों के कृत्यों का बखान है। राउलेट की रिपोर्ट के परिष्कार स्वरूप को राउलेट ऐक्ट पास हुआ जिसका फल सत्वाग्रह आन्दोलन के रूप में प्रकट हुआ वह समकालीन इतिहास की एक मुख्य घटना है। यह पुस्तक उसी रिपोर्ट का हिन्दी अनुबाब है। पहला भाग सभी निकला है। दूसरा भाग भी निकलने का रहा है। पुस्तक इसनी मनोरंजक है कि इनमें उपन्यास का सा मन लगता है।

**देवी वीरा—अनुबाबक की सुन्दर रत्ना।**

वीरा क्रियतर बस के क्रान्तिकारियों में बहुत प्रसिद्ध है। यह पुस्तक उसी की आत्मकथा है। इससे पता चलता है कि वीरा के विचारों में कैसे क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए और क्योंकि उसने अपने बलिदान और त्याग से क्रान्ति के पीछे को चीना। पुस्तक बड़ी मनोरंजक है।

**धर्म-ब्योधि—नेलक की जगतनारायण।**

इस पुस्तक में बियोसोफिज्म दृष्टिकोण से हिन्दू धर्म का निबपण किया गया है। बियोसोफिजी या ब्रह्म-बिद्या उन आत्मानों म से एक है, जिन्होंने सत्त्व और बिभान की सहायता से हिन्दू धर्म और धर्म धर्मों में गुप्त रहस्यों को समझने और समझने का प्रयत्न किया है और इसमें कोई सन्देह नहीं कि उसके धरर से कम से कम उसके अनुयायियों म वह बार्मिक कट्टरता नहीं पायी जाती है। बियोसोफिजी सभी धर्मों और सम्प्रदायों का समान रूप से बाबर करती है और उनकी बृत्तियों पर प्रकम्प बसती है। हिन्दुओं में अपने धर्म और उसके बिद्यार्थों से जो प्रबिरबास आ गया था उसके बियो

श्रीजी ने बहुत कुछ मिटा दिया है। लेकिन उसका साथ ही बुद्धि को गीण और विरबास को मुख्य स्थान देकर उसने सब ग्रन्थ भ्रष्टा को भी जगा दिया है और उस मस्तराज को पुनर्जीवित कर दिया है, जिनके कारण हिन्दू-धर्म निरस्त हो गया। महत्तम् यह बर्खास्त करने का समयन करता है परलोक के विषय में किन्तनी ही ऐसी बातें कहता है, जिनका कोई प्रमाण नहीं दिया जा सकता। फिर भी यह पुस्तक पढ़ने योग्य है क्योंकि उसका क बड़े-बड़े विद्वान् और साधक हिन्दू धर्म के विषय में क्या कहते हैं यह जानने की इच्छा सभी को होत्यो है। इसके साथ ही उसमें धार्मिकता के धनात्मभावों को विचार करने और अपने मर्तों को बदलने की कांछी सामथी है। पुस्तक की भाषा सुबोध है।

सचित्र श्रुत-बोध—सम्पादक श्री नरदेव शास्त्री बंठीय।

इसमें परमहंस परित्याजकाशाय को एक ही घाट स्वामी शब्दकाय तीव्र प्रथम आशान पुरुकुत कायिको तथा कुसपति महाविद्यालय ज्वालापुर का सचिप्य जीवन-वर्ति और उनके मर्तों के संस्मरण है। स्वामी श्रुतबोध की क प्रकृता और विषयों को संख्या हजारों तक पहुँचती है। श्री नरदेव भी म इन मस्तराजों को उकल करके एक प्रसर से मुक्त बचिखा में की है। आता है धाय बलकर स्वामी के अनेक शिष्यों में से कोई विद्वान् इसी सामथी के आधार पर स्वामी की का एक मुन्तर जीवन-वर्ति निरुत्तर अपनी सपनी को इच्छा करे।

### भगवान की शिक्षा

यह पुस्तक श्री अरविन्द काय की पुस्तक का मर्तनुवा है। परमा मस्तराज समाप्त हो जाने पर यह दूमरी घाटनि निरामी गयी है। बोध और उसके निराम्य के विषय में भी अरविन्द बोध जैसे महात्मा क विचार धर्मस्य है। धारणा कथन है—

'यद्यपि माच्छरप के पाग इन समय कुछ मशी है फिर भी धर्मन तगोवन क सहारे यह सब कुछ कर लेना।

पुस्तक बड़े महत्व की है इसने हिन्दी मन्तर को भी अरविन्द काय क जैसे विचारों से साध जगने का प्रथम से लिया है।

अप्रैल-मई १९३४

रघुनाथ महात्मा गार्गी (दो भाग)—मन्तर श्री मा एन एंज।

यह धर्मकी पुस्तक का उद्ग घनुवा है जो कि भी एन एंज ने महात्मा गार्गी के विषय में हुए में लिखी है और जिनके योरीन और धर्मिका म धूम मबा की को। वि एंज महात्मा जी के परिच्छ विषयों में है और उन्में धर्मन निराम्य म देन बुके है। महात्मा जी के धारणों और विचारों से उन्हें किन्तनी महानुभूति है म हम सब

दिखा गया है। बहादुरशाह सज्जन समुदाय ने बड़े दयालु धीरे दरिमाविस। मगर बल्लशाह होने के लिए केवल इन सद्गुणों की जरूरत नहीं होती। उनमें उन मुसों में से एक भी न था जिन्होंने मुसों ने सभियों तक रिस्वी पर राज किया। वह इसी साम्राज्य के कि कोने में बैठे देशमित्रा करते धीरे फकीरों की कर्जों पर भड़क लबावा करते। ऐसा धार्मिक बहादुर ने क्या सफल हो सकता था। इसका सब ऊर्ध्व मीयता पत्र। जिन्हीं के उलट-पेरे का धर्म कोसनेवाला बलात्कृत है। अनुबाब सभी किशोरों के धर्म है। कबाला सद्गुण की माया इतनी सरल होती है कि उतू भाया भी होती तो बाबाली से समझ में आ जाती।

**भारतीय विद्रोह—अबालू राउलेट कमेटी की रिपोर्ट (प्रथम भाग)—**  
 अनुबाब की उत्कृष्ट मनजीव सिंह भी राठीर।

राउलेट कमेटी की रिपोर्ट भारतीय इतिहास के विद्यार्थियों के लिए महत्व की वस्तु है। इसमें १८६७ से धन तक के भारतीय व्यक्तियों के कृत्यों का बखान है। राउलेट की रिपोर्ट के परिष्कार स्वरूप को राउलेट ऐक्ट पास हुआ जिसका फल सत्याग्रह आन्दोलन के रूप में प्रकट हुआ वह समाकालीन इतिहास की एक मुख्य घटना है। यह पुस्तक उसी रिपोर्ट का हिन्दी अनुबाब है। पढ़ना माय धनी निकला है। दूसरा भाग भी निकलना का रहा है। पुस्तक इतनी मनोरंजक है कि इनमें उपन्यास का-ला मन लकता है।

**देवी बीर—**अनुबाब की सुरेन्द्र शर्मा।

बीर छिपनर क्व के व्यक्तिकारियों ने बहुत प्रसिद्ध है। यह पुस्तक उसी की आत्मकथा है। इससे पता चलता है कि बीर क विचारों में कैसे व्यक्तिकारी परिवर्तन हुए धीरे बनीकर उसके अपने बलिदान धीरे स्वाम से ब्रह्मि क पीचे को सीखा। पुस्तक बड़ी मनोरंजक है।

**धर्म-व्योधि—**नेपक की जयतबापपत्र।

इस पुस्तक में विद्योतोपिकस दुष्टिकोण से हिन्दू धर्म का निरूपण किया गया है। विद्योतोधी या ब्रह्म-विद्या इन आन्दोलनों में से एक है, जिन्हींमें शास्त्र धीरे विज्ञान की सहायता से हिन्दू धर्म धीरे धर्म धर्मों के गुण रहस्यों को समझने धीरे समझने का प्रयत्न किया है धीरे इसमें कोई संदेह नहीं कि उसके धर्म से कम से कम उसके अनुयायियों में वह भाविक कट्टरता नहीं पायी जाती है। विद्योतोधी सभी धर्मों धीरे सम्प्रदायों का समान रूप से आदर करती है धीरे जनकी गृहियों पर प्रकाश बांती है। हिन्दुओं में अपने धर्म धीरे उसके सिद्धान्तों से जो धर्मस्थापन था गया था उसके विद्यो-

तोड़ी ने बहुत कुछ मिया दिया है। लेकिन उसने साथ ही बुद्धि को गीछ घौर विरवास  
 ने मुख्य स्थान देकर उसमें उस समय थड़ा को भी जगा दिया है घौर उन सस्कारों को  
 जन्मीकित कर दिया है, जिनके कारण हिन्दू-धर्म निवस हो गया। मसमन् बहु बसुभिम्  
 न समपन करता है, परसोक के विषय म कितनी ही ऐसी कर्त कहता है, जिनका कोई  
 ग्माछ नहीं दिया जा सकता। फिर भी यह पुस्तक पढ़ने योग्य है क्योंकि सघार के  
 बड़-बड़े विद्वान् घौर साभक हिन्दू धर्म के विषय में क्या कहते हैं यह जानने की इच्छा  
 सभी को होती है। इसके साथ ही उसमें धात्रकल के प्रगारमबाणियों को विचार करने  
 घौर अपने मतों को बदलने की काफी सामथी है। पुस्तक की भाषा सुबोध है।

सधित्र शुद्ध-बोध—सम्पादक श्री नरदेव शास्त्री बेवरीच।

इसमें परमहंस परिब्राह्मकाबाब भी एक ही घाठ स्वामी शुद्धबोध तीब प्रबम  
 भाषान गुककुल कौपड़ी तथा कुनपति महाविद्यालय ज्वालापुर का संक्षिप्त बीबन-वरित  
 घौर उनके मक्तों के संस्मरण है। स्वामी शुद्धबोध भी के मक्तों घौर जियमों को सख्या  
 ह्वायों तक पढ़ौबती है। श्री नरदेव भी ने इन संस्मरणों को एकत्र करके एक प्रकार  
 से कुछ बसिष्ठा मेट की है। यग्या है भाये बतकर स्वामी के धनेक शिष्यों ने से कोई  
 विद्वान् इसी सामथी के आधार पर स्वामी भी का एक सुन्दर बीबन-वरिप सिलकर  
 अपनी ससगी को इत्याप करने।

### भगवान की कीला

यह पुस्तक श्री अरविन्ध घोष की पुस्तक का मर्मानुबा है। पहला संस्करण  
 समाप्त ही जाने पर यह दूसरी धाकृति निकाली गयी है। घोष घौर उसके सिद्धान्त के  
 विषय में भी अरविन्ध घोष जैसे महारमा के विचार समुस्य हैं। धापका कम्पन है—

‘यद्यपि भारतवर्ष के पास इन समय कुछ नहीं है, फिर भी अपने लपोबस के  
 सधारे बहु सब कुछ कर सेवा।

पुस्तक बड़े महत्व की है, इसने द्विती सघार को भा अरविन्ध घोष के जैसे  
 विचारों से भाभ बढाने का धाधर दे दिया है।

अप्रैल-मई १९३४

लयाक्षात महारमा गार्धी (दो भाग)—मेरक भी सी एक एज।

यह मप्रती पुस्तक का उदू धनुबा है, जो मि भी एक एज न महात्मा  
 गोपी के विषय में हान में गिरी है घौर जिसने गारोप घौर अरविन्ध में धूम मभर की  
 पी। मि एज महारमा भी के धनिष्ठ मित्रों में है घौर उन्हें बहुत निबट स देल बुके  
 है। महारमा जो के धाधरों घौर विचारों से उन्हें कितनी सहानुभूति है म् हन सब

जानते हैं। इस पुस्तक में उन्होंने महात्मा जी के विचारों और उनके धार्मिकता की  
 मार्मिक विवेचना की है। इसमें सबकुछ नहीं कि मैं एंड्रयू ने धार्मिकतात्मक दृष्टि से यह  
 पुस्तक नहीं लिखी है बल्कि उनका उद्देश्य यह था कि महात्मा जी के सिद्धांतों और  
 धारणाओं को उनके यथाथ रूप में पश्चिमाचार्यों के सामने लाने और उन उभयतन्त्रियों को  
 मिटाते जो विरोधियों ने महात्मा जी के विषय में फैला दी है। इस पुस्तक को पढ़कर  
 महात्मा जी का चरित्र उनकी गहरी ईश्वर भक्ति उनका धनुष त्याग उनका निर्भीक  
 सरल-सम उनका अटल विश्वास अपने उज्ज्वल रूप में हमारे सामने आ जाता है।  
 महात्मा जी बिल्कुल बड़े राजनैतिक नेता हैं उससे कहीं बड़े व्यक्ति हैं और उससे भी  
 कहीं बड़े धारणी हैं और उनके बड़े से बड़े विरोधी को भी यह मानना पड़ेगा कि उनके  
 चरित्र में सत्यता अपनी शरम सीमा को पहुँचकर इतना के समीप आ गयी है बल्कि  
 अगर हमारे पुराणों के पुरुष देवता माने जायें तो उनमें एक भी महात्मा जी के समीप  
 नहीं आ सकता। कुच्छ भी नहीं उनसे ऊँच सिद्ध हो सकती है। जब वह केवल मानव  
 हृदय-कमी धर्म के एक नाटक मसके जायें। एंड्रयू साहब के एक-एक शब्द से महात्मा  
 जी के प्रति अद्भुत आनंद होती है और अनुभावक महोदय ने—जो स्वयं एंड्रयू साहब के उस  
 जमाने के सिद्ध हैं जब वह दिल्ली में प्रोफेसर थे—इतना सुन्दर अनुवाद किया है कि  
 कहीं भी पता नहीं चलता यह अनुवाद है। धन्य टाइमिंग पर अनुवाद में लिखा होता  
 तो यही पता होता कि यह उर्दू का मौलिक ग्रन्थ है। अनुवादक इस काम में सिद्धहस्त  
 है और अपने ही तरीके मुसलमानों की भाँति उन्हें भी महात्मा जी से मन्ना प्रेम है।  
 उर्दूवासी लोगों के लिए यह पुस्तक अमूल्य है।

उपदेशामृत (पौष भाग)—लेखक श्री प्रो० सुधाकर, एम ए ।

सुधाकर जी के ही शब्दों में 'उपदेशामृत' के पौष भागों में इस प्रकार लिखा  
 देने की कोशिश की गयी है जिससे बच्चों में सदाचार सच्चरित्रता की नींव पड़े हो।  
 हम निमित्त बंद मंत्र धारणा उनका भाग लेकर बच्चों का ध्यान उन धारणाओं की ओर खींचा  
 गया है, जो उभारनेवाले तथा उन्नत करनेवाले हैं।

धारणा यह कथन बिलकुल सत्य है कि धार्मिक शिक्षा सभी उपयोगी हो सकती  
 है, जब उसका ध्येय बच्चों को उत्तम नागरिक धारणा अनुप्य-समाज का उपयोगी सदस्य  
 बनाना हो। मुश्किल यह है कि ऐसे उपदेश कामकों को प्रिय नहीं लगते। जिस उम्र के  
 बच्चों के लिए यह पुस्तकें रची गयी हैं वे इन विषयों की व्याख्या क रूप में नहीं  
 पसन्द करते। हाँ यह पुस्तकें पाठ्यक्रम में दायिम की जा सकती हैं और इनके पाठों  
 को धार्मिक नये-नये विद्यार्थियों द्वारा रोचक बना सकता है।

## देवी जोन—लेखक डा धनीराम भी 'प्रेम' ।

पन्द्रहवीं सदी के प्रारम्भ में फ्रांस के कुछ भागों पर इंग्लैण्ड का अधिकार था और फ्रांस की राजनैतिक बला कुछ ऐसी पड़बड़ हो रही थी कि इंग्लैण्ड का प्रमुख उस पर बढ़ता जा रहा था । जिस समय फ्रांस की बला बहुत हीम हो गयी थी और वह बरबर कई मशायदों में हार गया उसमें एक प्राचीन युवती जोन घाउ मार्क ने फ्रांस की सहायता करके उसे इंग्लैण्ड के पंजे से मुक्त कर दिया । जोन घाउ मार्क अझाई की विद्या में जानती थी सिद्धिजत मा न थी पर उसके हृदय में अपने व्यक्ति देश के लिए इतना प्रबल अनुराग उठा कि उसे मानों ईश्वर की ओर से प्रेरणा हुई कि नू बाकर फ्रांस का उद्धार कर । धर्मोन्माद की बला में उसे मानो ईश्वरी प्रेरणा हुई और वह बन सं निकल पड़ी । फ्रांस की अनगता ने खुले दिल से उसका स्वागत किया । वह मानों उतका उद्धार करने के लिए ईश्वर को ओर से भेजी गयी थी । बाकी पसट गयी । फ्रांस जीत गया । इंग्लैण्ड को वहीं से भागना पड़ा ।

मगर वहीं युवती जिसने अपने देश के साथ इतना बड़ा उपकार किया था धर्मन्य पावतियों की कट्टरता का शिकार हुई । पावतियों ने उस पर जादुपत्नी होने का इनबाम मनाकर उसे जिन्या जमा दिया । उसी देवी का यह चरित्र है और लेखक ने उसे सरल और प्राकृतिक भाषा में लिखा है । पढ़ने में उपन्यास का-सा धान्य आता है ।

अक्टूबर १९३४

## अन्धिम आकांक्षा—लेखक श्री विद्यालमशरण गुप्त ।

यह सिमारामशरण जी का दूसरा उपन्यास है । देहाती जीवन की एक कच्छा-जनक कथा है, जिसमें कर्मियों के हाथ बिके हुए संसार ने एक नर-रत्न को प्रायास पर प्रायास देकर मृत्यु की घाट में मुसा दिया है । रामलाल है तो टहलुभा मछिन सेवा विनय और माइस का पुतला । स्वामी के घर का काम इस तरह करता है—बैठे अपना काम हो । मगर, जब माँ में एक बार डाँटा पड़ता है तो बन्धक से एक डाकू को मार आता है । बस उस पर नर-हत्या का अपराध लग जाता है । उसकी शानी होती है, एक बुस्टा से जिसका गुलाब सिंह नाम के एक मुश्ते से धनुचित सम्बन्ध है । यह है तो मुश्ता पर देहात में उतका रोब भी है और सम्मान भी जो धानकस के निर्जीव देहाती समाज की साधारण बला है । रामलाल उस इत्ल तो नहीं करता सेडिन प्रो-योग उसके प्रायासार्गे से पीड़ित होकर उसे इत्ल करना चाहते हैं । उनसे मिल जाता है । पढ़ा जाता है सजा होती है और जेप में मर जाता है । उपन्यास की रचना प्राण-रूपा की शैली में की गयी है । इस शैली में कथाकार से हृष्यरी मीने हो जाती है और उसकी हरेक बात में हमें निजत्व का अनुभव होता है । मुग्धी का विवाह, स्नेहमयी माता

का देहान्त को किसी का बुद्ध नहीं देख सकती और जिनके जीवन का सबसे बड़ा ध्यानम् दूसरों को भोजन कराना है, रामसाम का मुख्यमा यह सभी वृत्त धापके सामने ध्यानम् के देहाती समाज को बड़ा करते हैं। ही चित्रण तैम के चटकीसे रंगों में नहीं पानी के हाव के रंगों में किया गया है। बीच-बीच में बार्तालाप में सामयिक परिस्थितियों पर सुमझे हुए विचार प्रकट किये गये हैं, जिससे ब्यहिर होता है कि जेदक महोरम कितने आगहक है। अध्यापक भी ने रामसाम को नीच कहनबासा को कितन जोरा से छटकारा है—

‘बिन्दार है हमारी इस समाज व्यवस्था को जो रामसाम जैसे धारमी को भी नीच कह सकती है। मन अपनी छाँड़ों देखा तिसक छापभापि ऊँची बाँधि के भोग उस कुएँ में झँककर देखने में भी डर रहे थे। ऐसे स्वार्थी भोग ही हमारे समाज में सब कुछ है बिगम न शरीर का बस है न धास्मा का ‘हम भोग विवेकियों की बेड़ी में बकने हुए हैं, इस बात का अनुभव हमारे त्रिचित्त समुदाय को कुछ-कुछ होन लगा है। परन्तु हमारे शरीर में इससे भी बहुत बड़ी एक बड़ी पड़ी हुई है और वह है जम्ममठ या बसमठ उन्मत्ता के सम्बन्ध में हमारा अन्वविरबास। बह की खेप्टता हमारे लिए सब कुछ है, उसके सामने सच्ची मनुष्यता का मुख्य हमारी वृष्टि में कुछ नहीं।

राजनैतिक स्वतन्त्रता के लिए सामाजिक स्वतन्त्रता पहले जरूरी है। इसे धारने इन विकल शब्दों में घोषित किया है—

‘समाज में सब के ऊपर मनुष्यता की प्रतिष्ठा कर लेने पर ही ही स्वतन्त्रता प्राप्त कर सकते हैं ‘हम कहने लगे हैं समाज-सत्कार बुद्धियों का काम है हम सैनिक हैं हमारे लिए तो लड़ाई चाहिए, लड़ाई। यह भी-बाखी सुनकर हम ध्यान से धुमकित हो उठते हैं और समझने लगते हैं सब हमारे उच्चार में डेर नहीं परन्तु यह सोचने का भी कमी हमने कष्ट उठाया है कि हम में सैनिक का अभाव क्या है? प्रतापसिंह त्रिवाणी अजसाम योविलासिंह बन्दा बैराकी रखबीतसिंह और लक्ष्मी बाई क्या ये सब साधारण सैनिक थे? परन्तु बार-बार स्वतन्त्रता का घोर फरककर भी हम उसे रख नहीं सके। ‘राष्ट्रपति के निर्वाचन का प्रश्न यदि आज हमारे सामने आ जाय तो मनुष्य को न देखकर हम अपने-अपने जात्युख जातिय और बैरय को ही देखन लगेय।

सुरक्ष यह है कि यदि कोई इस अन्व-विरबास के खिलाफ कुछ कहे, तो और तो और साहित्य-जगत में उस जात्याख-जोही की फन्धी मिलती है।

अस्मिन् अक्काँछा में तीव्रता नहीं है, जेकिन् इत कुछ पर गुप्त को की मेकनी तोय हो गयी है और बतसा रही है कि वह ऊँच-नीच की मानना उन्ह कितना बुलित कर रही है। पुस्तक का मुख्य डेक लयने ज्यारा है।

मार्च १९३५



जिन दिनों हरिचन्द्र या 'भारती' ने सम्पादक के तन्हीं निनों ध्याने यह क्रामा लिखा था और यद्यपि यह ध्यापन पहला ही क्रामा है लेकिन ध्याप इतने सफल हुए हैं । और पत्र के शिक्षा-विभाग में इन मैत्रिकुमेशान की पाठ्यपुस्तका में भी लिखा है । राजस्वान की प्रसिद्ध पटना है, जब गुजरात के बहानुरशाह ने मेवाड़ पर चढ़ाई की और राणा सांगा की रानी कमवती ने हुमायूँ के पास राणा भेजकर उससे मदद माँगी थी और हुमायूँ ने उसे स्वीकार किया था—

यह इस्तज़ा नहीं हृषम है यह ध्याप में कूद पड़ने का स्याता है । हिन्दुस्तान की तबारीख कह रही है कि राणा के बावें में हज़ारों मुर्दानियाँ कगरा है ।

हुमायूँ अपने भ्रात्रे में इतना व्यस्त रहा कि बल पर मेवाड़ का मदद को न पहुँच सका और जिस बल पहुँचा बेबी कमवती की बिठा जल रहा थी और मेवाड़ बहानुरशाह के हाथों विषयस्थ हो चुका था लेकिन और स्त्री-मुग्धों के । दम कितन साऊ और कितन उदार और मजहबी कुटिलता से किये निर्मित । कमवती उभी राणा नामा की स्त्री है जो बाबर से लड़ा था और जिसने प्रतिज्ञा की थी कि मुघला को भारत के बाहर सदेकर दम सँगा । वही कमवती धवमर पड़ने पर बाबर के बेटे को रानी भेजती है, और बिजयी शत्रु का पुत्र उन राजी का बाँरों की भाँति सम्मान करता है । वास्तव में इन सहायियों को मजहब से कोई सम्बन्ध न था । वह तो केवल बीरों की बिजय मानसा की ब्रिदार्थ होती थी । बहानुरशाह ने मेवाड़ पर चढ़ाई का भी इसीलिए कि मेवाड़ के राजा ने उसके बायी भाई को धपन यहाँ पनाह दी थी । बहानुरशाह को श्रेष्ठ में भी हिन्दू सिपाहियों की कमी न थी न मर्या की फौज में मुसलमान सेनाओं की । धावनस जो मजहब का यह धार्तक है वह गुलाबी से पडा होनेवाली बशाओं का फन है । क्रामा बीर-रक्षुण्ड है और मलक न धन पाशों के मय से धम और प्रम और पावीयता पर जो उद्धार प्रकट कराय है वह मन की हिसा देत है और मस्तर को उँचा कर देते हैं ।

माच १६३५

रूसी कहानियाँ—धनुवाक श्री रामचन्द्र टण्डन ।

उग्याम श्री बना में तो मन का जोड़ ध्यंस में किया जा सक्ता है । धग्य हग के पाम डास्टावेस्की तुगमिब टाप्पटाय और मक्मिम गोरी हैं । तो ध्यंस का पाम बाव कर धनाटोस पाम एमिम जोला और रामा रामा है लेकिन बहानी-कजा में मन शायन समार के माहित्य में बेजोड़ है । इगम मतमर हो मक्ता है लेकिन इसमें निम्नो को इनकर नहीं हो मक्ता कि इग बना में कजा माहित्य का दर्जा निम्नो में भी घटकर नहीं

है। और इसका कारण है—स्त्री शक्ति की वह पीढ़ बनाओ जो शक्ति के पहले की। इस संघर्ष में बायल कहानियाँ हैं जो या तो बरिष्ठ जीवन की हैं या धर्म और दया का अपव्यक्त होनेवाले उपस्थान हैं, जिन्हें बुद्धिवादी के शायद पॉन्डे घरे हैं। ईंग्लैण्ड या फ्रांस की कहानियों में धर्मिकता मध्य कक्षा के जीवन का चित्रण होता है। शारी-म्याह की सम स्याएँ और और-समारो क्लब जुधा मार-पीट शक्ति विषय ही उनमें दुर्लभ्ये जाते हैं। इन देशों का पिछला नग सम्पन्न है और उसकी सामाजिक समस्याएँ उतनी रोमांचकारी उतनी प्रसन्नकारी और उतनी गहरी नहीं हो सकती। इसी संघर्ष में बायलकेस्की का 'इमानदार और केवल इसलिए नहीं महत्व रखता कि वह एक शरणी की सन्धी लस्वीर है, बल्कि इसलिए कि वह परित्र जीवन में जो कोमलता जो आलीशानता होती है, उसको मानव-हृदय से निकालकर बायले रख देता है। टास्टराय का 'वहाँ सत्य है वहाँ परमेस्वर' शक्ति के शक्ति विषय का मरुतम है। पीछे चलकर टास्टराय का मठ हो गया था कि कला को सबसौम्पुची होना चाहिए जिसका ध्यान नके वे पके समी से करें। जिस कला का समझने के लिए विशेष ज्ञान और शिक्षा की जरूरत हो उससे जन-भाषारण का क्या उपकार हो सकता है। इसलिए उन्होंने बहुत-सी कहानियाँ बुझानों और कर्कों के ढंग पर बिची और किसी हब एक सफल भी हुई। 'धनोक्ता डोल इसी तरह की एक कहानी है, जिसमें वे पड़ों को भी कुतूहल का धारण्य मिल सकता है। हालांकि जो लोग कहानियों में कुछ रस चाहते हैं, उन्हें वह मनोका डोल जिसकुल पील ही मवेगा। 'माल मयडी' इस संघर्ष में खामख सबसे शक्ति और सबसे रसपूज कहानी है। बेनब की 'घाउ' कल्पना की उद्धान के निहाल से तो बड़ी सुन्दर है, लेकिन वही धर्मोपवैत का एक निरुत्कल ढंग। पन्नाह बप बेन में बन् 'उने के बाद ठल मगामेवाला कबी बन की और से कितना विरक्त हो जाता है और उससे से उते विद्वानी बूवा हो जाती है—इसे पककर एक बार हमें रोमांच हो जाता है। मगर बेनब ने इससे बहुत धरणी कहानियाँ लिखी हैं। चिरिकोव का 'माल' बाल जीवन का तारिखक धम्मयन है और मोर्की का 'अधुमुत मिलन' तो एक मुबठी के हृषय-बाह और कोमलता की धपुर्ब प्रकल है, जो मालो हमारे जीवन की संकुचित सीमार्ग को फैलाकर चिरिज के धन्त तक पहुँचा देती है। मुसल की 'सममर की पृति में प्रम के उस बमरकार की कथा है जो कठोर से कठोर आस्था में भी धारता और धीमन का संघार कर देती है। 'भुसु और सिपाही और 'मूठ' इस संघर्ष में केवल सेंती और विषय की विचित्रता के लिए रचो यकी जान पड़ती है। इनमें रस नहीं है और न जीवन का स्पन्ग ही है। धर्मिकता में ऐसी कहानियाँ बहुत मिलेंगी।

इन इन कहानियों में से कई एक संवेदी अनुबाध में पड़ चुके हैं और जगह-जगह इन्हें मानुम हुआ कि अनुबाधक महोरय को किसी तरह अपना गला पुझाएर निष्कल जाता पड़ा है। यह उनका दोष नहीं माया का दोष है, जो धर्मो तक नेंक नहीं नकी

धीरे संस्कृत के शब्दों का व्यवहार करते हुए बर लगता है कि वही भाषा स्थिर न हो  
 धाम । शुरु में बाठ पठों का परिचय किया गया है जिममें इस सभह के रचयिताओं  
 का मंजित परिचय दे दिया गया है धीरे स्वी साहित्य के महारथियों—तुमनव शास्त्र-  
 बस्की टास्मटाय बेबन धीरे गोर्षी के छोटे प्रिंट भो है ।

पुस्तक का मूल्य तीन रुपया है, जो हमारे प्रयास न बहुत व्यास है ।

माघ १६३५

आहार, सयम धीरे स्वास्थ्य—लेखक श्री मयवती प्रमाइ ।

बच्चों धीरे डाक्टरों ने तो इस विषय की बनेक पुस्तकें लिखी है पर इस पुस्तक  
 की खास बात है कि यह एक ऐसे मरीज की लिखी हुई है जिमने मर वम बर्गों ने केवल  
 आहार धीरे समय के बात पर एक बातक बीमारी से बच किया है धीरे घन्त न बिबवी  
 हुए है धीरे इन दृष्टि से इस रचना का महत्व बहुत बढ़ गया है क्योंकि इनम लेखक ने  
 जो कुछ लिखा है, उसका मुर उजरबा किया है । अतएव हमने इस पुस्तक को धारि से  
 घन्त तक बड़े धीरे से पढा । किंकि हम मुर इसी रोय में बहुत दिना व्यस्त रहे है धीरे  
 मरते-मरते बने है इसलिए हमें इस विषय से घाम दिलचस्पी भी है । एक बीमार सी  
 हकीम के बटावर होता है । हमने बहुत दिना सारे बीछा हकीमो धीरे डाक्टरों के द्वार  
 की लाक घनकर घन्त न केवल संयम धीरे आहार से अपनी जान बचायी । इस पुस्तक  
 के लेखक न भी मरी अनुभव है । जो योग मानसिक परिघम से अपना स्वास्थ्य लो  
 बैठे हों या जो मेहनत करके भी अपने स्वास्थ्य की रक्षा करना चाहते हों उनक लिए  
 इन पुस्तक में बनेक काम की बातें मिलेंगी धीरे यदि वे इसके धारशा पर चलें तो  
 घासली में बीमारी न शिकार न होंगे । लेखक न धारि न अपना घात्मकबान्धक परिचय  
 देकर बटा किया है कि वह क्यों बीमार हुए, क्या-क्या बूट रहे धीरे घन्त में कैसे  
 स्वास्थ्य-नाम किया धीरे अब उनकी क्या हालत है । धारने बड़े पते की बात कही है—

‘वही अनुप्य ने रोग का कारण अपने को छोड़कर ईश्वर को ममन्य धीरे उनके  
 निवारण का उपाय डाक्टर क हाथ में दिया वही उनम पुबपाव की गंवाया धीरे अकच  
 भीय दुरथा अपने निर पर भारी ।

कसक न विषय का सलीम घण्णायों न बीटा धीरे अपने जीवन भर के घन्तमर्गों  
 को उनम भर दिया है । पहले बारह घण्णायों न आहार क महत्व प्रयाजन धीरे उनके  
 आवरणक घंथा का बखल है धीरे मिन्न-मिन्न बिटामिनो की बर्षा न गयी है । बस्ते  
 देकर धारन स्पष्ट कर दिया है कि किस पधाथ न कीन-ना बिटामिन चितना है धीरे  
 उनका स्वास्थ्य पर क्या धमर पड़ा है । बार के तीन घण्णायों में जन वायु धीरे मूय-

प्रकृत का मूल्य विज्ञानाया गया है। मोषहर्षे धर्म्याय मे विचार-शक्ति धीर स्वास्थ्य की भीमासा करते हुए धाय लिखते हैं—

मनुष्य को पूर्य स्वास्थ्य प्राप्त करने के लिए चाहिए कि वह सबसे प्रम सद्धानुभूति धीर उचरता के साथ रहे। ईर्ष्या द्वेष द्वेष अहकार क रता अयसा लेना मय भूठ धारि धवयुषों को त्याग वे दूसरों के धरराय को चमा कर दे अपने धररायों की मीठी मीठ से धीर शारीरिक क्लेश को हेंगी-कुशी भेमतें हुए यथाशक्ति अपने कर्तव्य का पापन करता रहे।

ऐसा मनुष्य तो बेवता ही हो जायगा फिर बीमारी उसके पास क्या फटकने लगी। उसके तो धरतीबादि से रोगी बगे हो जायेंगे। धारों के तीन धर्म्यायो म ब्रह्मधर समय की पाकन्वी धारि का उल्लेख है। एक धर्म्याय मे व्यायाम धीर निद्रा का त्रिक सात धर्म्यायों मे मित्र-मित्र बाध पद्यार्यों मे—दूध मांस धनाद शक-भावी फल धारि—का तुमनारमक विवेचन किया गया है। वार्यों को रक्षा पर एक धर्म्याय धरगत है। सर्वोत्तम प्रकार का भोजन क्या है इस पर धारकी सम्मति का सारांश यह है—

१—दूध की मात्रा बडा ही अय।

२—हरी पत्तिया की मात्रा अधिक जायी जाय।

३—प्रति दिन कुछ न कुछ कन्वी शक-भावी धरश्य हो।

बतीसमें धर्म्याय मे 'भाक पन्धों का संगठन' शीपक वेकर धारन एक ठासिका हाप सनी बाध पद्यार्यों मे पाये जानेवाले पोषक तत्त्वों की स्पष्ट कर दिया है। इससे हमें स्वय धरने भोजन का कैसला करना सरल हो गया है।

पुस्तक रोगियों धीर दुर्बल स्वास्थ्यधारों क लिए बाध धीर पर उपयोगी है। सेबक ने विषय को इतनी याम्पता सद्धानुभूति स्पष्टता से निमाया है कि ऐसा शुष्क धीर धरधिकर विषय भी रोचक हो गया है। विषय को स्पष्ट करने के लिए धरनेक विषय दिये गये है। धरपार्य धरन्वी कामक बधिया। धरहार धीर संयम के मन्वन्ध की शायक ही कोई बाध हो त्रिध पर यहाँ प्रकृत न डाला गया हो।

मइ १६३६

कारवाँ—नेकक की मुबनेरवर प्रसाध।

कारवाँ हिन्दी साहित्य के इतिहासमें एक नयी प्रगति का प्रवतक है, जिसमें शा धीर धास्कर बाइरड का मुबनर सगन्धय हुआ है। धरभी तक हमारत हिन्दी ड्रामा बटनाधों धीर धरिधों धीर कथाधों क धारार पर ही रक्षा गया है। कुछ समयसा नाटक की त्रिसे गय है। त्रिधमे धरिधों का वा गये या पुराने विचारों का बाका लीचा गया है पर सब कुछ धरनूल बटनारमक दृष्टि से ही हुआ है, धीवन धीर उगकी मित्र-मित्र

समस्याओं पर मूरम वनी तात्विक बौद्धिक दृष्टि बाधने की चेष्टा नहीं की गयी जो नये ज्ञान का आधार है। जैसा सेलक ने अपने 'प्रवेश' में खुल कहा है—

हिन्दी में समस्या नाटककारों का सबसे एक सहज धारणा है। उनके कपोल-कल्पन में 'समस्या शब्द' का आ जाना।

सेलक ने यहाँ कुछ मुबालास से काम लिया है, लेकिन हममें तो यों नहीं हो सकती कि समस्या नाटक की स्पिरिट का उगहाने खुब पकड़ पाया है और हमारे जीवन के पुष्ट रूखों प्रम और नाबुकता की धाड़ में छिपे हुए भ्रोधिकारा पर ऐसा विशय प्रकाश डालना है कि उनको धार छात्रों डर भगता है। सम्मानण में अगह अमह मनी नावों की एनी मार्मिक विचचना की मयी है कि सेलक की मूळ की प्रकरता और बद्धि की तीव्रता का कायम होना पड़ता है। राजन जब स्त्री से कहता है—'स्त्री की पृथा पुरप पर बमात्वार है या जब प्रतिमा महेत्र से कहती है—'हृयम तो दूटने ही के लिए बन है। मानव जीवन की मरम बनी टुजेही तो यही है कि हमारे हृयव नहीं दूटते या जब मिस्टा मिह कहते हैं—'अनुभव तो मनुज जीवन की हार है। मंनार का कोई अद्रिय मय जब हम पूछतया परप्रत कर देता है तो हम उसे अनुभव कहते हैं। या जब वह धामे बमकर डिर कहते हैं—'बिनाशित जीवन में मुक केयम उन अडुकार का नाम है, जो स्त्री का पुत्र पर या पुठय का स्था पर बिजय पाने में गता है। या जब पित्रोर माया में कहता है—'कोई भा मनुज्य अपने प्रम पाव क माय मुन्दी नहीं रह सकता तुम्हें उम बाबक के लिए पग ना परत्याव और बनिवत करना पड़ेगा। और मुल मुल नाम है विजय का। या जब माया कहती है—'स्त्री का वास्तविक जीवन जनी प्रारम्भ होता है जब एक पुत्र्य अपने धारकी उनक लिए मिटा चुकता है। तो माना हमारी बुद्धि पर एनी कहीं बाट पड़ती है कि हम अण भर के लिए बाँचना बाने है और जो बाहता है सेलक का जोरा के माव संडन कर, जो छात्र इत बात का प्रमाण है कि उनका निगाता ठीक बैठा है।

पस्तक में प्रवेश और उनमहार को छोड़कर घा एकाकी नाटक है जिसमें ठाग 'हम में गत रूप घा चुक है शेर छात्र या तो अयकशित है या अन्य दिनवालों में निरत चुक है। 'रमामा एक बशाहिन बिडम्बता में मिमज वरी धरत पति में कर्माती है— 'ममात्र क मन्मुग में तुम्हें प्यार करके के लिए उतकशयिनी हूँ और बिनाह करके यदि मीन बीचिका के लिए धरत अाप का नहीं बचा है—यदि हम कश्मि मय का समयत मुम नहीं करना चाहत—तो मुळ प्रम तो बाहिन। अगर बेशहिक जोरत में प्रम नहीं है—और निस्मग्ह नहीं है—तो धीग क्या है? मुकशारण क जाबत में? ध्यदिचार में प्रम बेकम रनिकों की मुकृत का अण उधानेबाका की बगना है। मरने मय कर में वह बेकत मखान की निर्मायक प्ररणा है। भाग की इच्छा का मान प्रम मयत रना गया है। जब एक जाड़ा हम जिम्मेदारों में मर जाता है तो एक हमारे के प्रति प्याव

धीर सहानुभूति की मानवीय भावनाएँ जाग उठती हैं। यही वैवाहिक जीवन है, यही प्रेम है। धर प्रेम से कवियों और रसिकों के प्रेम का धाराप है, तो वह वास्तविक में होगा मत्स्यरोग म नहीं। यह प्रकृत है, कुप्र है कि स्त्री जीविका के लिए अपने धांपको बेचती है। धरसी श्री सवी दुनिया के बसनेवासे मकहूर है। उनके स्त्री-पुंस्य दोनों ही परिधम करते हैं। प्रायः स्त्री क्यत्वा करती है। जीविका का बड़ा प्ररन ही नहीं है। फिर भी धरिधर पुंस्य ही प्रधान है। बहाँ मरुकिर्या पिता की सम्पत्ति की धरिध होती है बहाँ भी पुंस्य का धारर कम नहीं है बल्कि धीर क्यत्वा है। धिसमें बुद्धि बल क्यत्वा है, यही धिरयी है। कभी-कभी मेहरे मरु नरर धा जाते हैं। ऐसे धरों में स्त्रियों की प्रधानता होती है। वैवाहिक जीवन से धरकनेवासे बह पुंस्य है जो धरनी धरुमक्यता के धारर कोई धिरुमेशरी नहीं लेना चाहते जो धरसे धिरे के धुधररर है जो धिरास के पुंस्य है धरुं से कवि हों या किरामकर। धिराह धररर एक बन्धन है, लेकिन इध नरर से धेरिए तो जीवन ही क्या है ? किनी भी ऐसे धमाज की कल्पना की धा सकती है, बहाँ धिरुधुधता का ररर ही ? ऐसी धुठोरिया तो धाज तक किनी ले नहीं बनामो। कुध न कुध बन्धन तो जीवन से ररुंया ही। इधी का नाम संयम है धीर धिरर ठररु जीवन क धीर धिरागां म उधी ठररु वैवाहिक जीवन में भी उधका धास धररर है। वैवाहिक जीवन म धीर रररते ही स्त्री-पुंस्य दोनों बधुधारी का धरर कर लेते हैं धीर इध धर का धिरना ही बुधुता से धालन हाता है उधना ही जीवन सुधी होता है। धुन उध धिरय का नाम है जो स्त्री की पुंस्य धर या पुंस्य की स्त्री धर धाने में होता है, बड़ी सुधर धुधिर ही मरुती है, लेकिन धिररर। उध धिरय का नाम सुध नहीं बल्कि धरिधधर है।

धेर यह तो धुरे धिररर की धास धर पुधी धरुधति के मनोरुधुधो का बड़ा ही धारिक धिररर है। वैवाध धिररर पुधी एक बड़ा धुधिक धरिध है धर धिररुध धरुध धीर उधके धाध ही कुध कधरर जो नहीं चाहता कि उधकी स्त्री उधका धरनी धर रहे। बलधान पुंस्य मनोरुध महाधय की धरररर न करता। धिरर धिरररर के धाध धाध कहते हैं—'धरामा मेरी है' 'धमाज की एक धुरधहीन लीह धिरि मे ही उधे धुधुधारी बनाया है धुधुधरर उध धर क्या स्वत्व है ? स्वत्व तो मनोरुध महाधय का है, क्योकि धाध धरामा से प्रेम करते हैं। धिररर पुधी मधुध है कधी कधक हा। नी बने से धेररर ध' बने धाम तक किनी धररर में नाक रररते हा। धरने जीवन रररर का धरर-धरर धरर धरामा के लिए धररते हा लेकिन उधका धरामा धर कोई स्वत्व नहीं है स्वत्व है मनोरुध का क्योकि बह धरामा से धरर करता है।

एक धाम्यहीन धाम्यधारी' म धाजकन धीरे धाम्यधारी धरने म धाते है उधकी जीठी-धारठी ठरुधीर। 'धिररर धिरा का तीसःधय के धरिधनी धीर धररुधिक धिररर धरिधुधता के धरर धीर' 'धरने से बहाँ तक उधके कमाने का धररन है धिरिध। नाम

धीर काम दोनों को मोभुप । कितना समीप छाया है ।

‘सैलान’ एक उर्दू रोलीबाज मगधसे मोफर का चरित्र है जिसकी प्राकृतिक उदारता उस स्त्री को मुग्ध कर बेठी है, जो उससे पृथा करती थी । ‘प्रतिमा का विवाह एक धन-मोभुप रमणी का चित्र है मगर धनी शायद भारत में प्रतिमाओं का जन्म नहीं हुआ है । वह भारतीय नाम की एक धंधल छोकरे हो सकते हैं जो बड़े पति के धन से जवान प्रेमी के साथ बिहार करके बुढ़ को उसकी बुढ़मस की सजा बेती है । सम्भव है, मयी रोसनी कुछ बिनो में यहाँ की रमणियों की मनोकृति में यह लक्ष्मी पदा कर के मेकनिय यद्यपि हरु दोष में हमारा अनुभव बहुत ही कम है फिर भी हम इसी धम में पड़े रहना चाहते हैं कि यह सम्बुद्धतया सम्पन्निक मृष्टि है जीवन में इसका कोई धान्नुक नहीं ।

‘माटी’ का प्रमय यह है कि एक पुरुष बिदेस में धर्मचिन्ता में रग-बिरये स्वप्न देखता है और जब धन बड़कता हृदय लेकर बर छाजा है, तो देखता है उसकी स्त्री किसी दूसरे पुरुष के प्रेम में पापल है । स्त्री धपन धासिक से कहती है—‘तुमने मुझ क्यों जानने दिया कि तुम मुझसे प्रेम करते हो मेरी धारवा में पैठ कर तुमने उम हिसक बाबिनी को क्यों जया दिया मेरे जीवन में चिनयारियाँ क्यों भर दी ?

धासिक साहब उसके प्रेम का बल लिये बल जाने को लैया है । कर्मते है—‘मैं तुम्हारे स्वप्न लेकर ससार के किसी कोन में बसा जाऊँगा और तुम्हारे जीवन में एक धरम पर धप्रिय स्वप्न केवल एक स्वप्न छोड़ जाऊँगा ।

स्त्री जबाब देती है—‘धीर मैं एक पुरुष के क्मे में निर्बीब सता क समान लिपटी रहूँ जिसे मैं प्रेम नहीं करती ? उसके लिए बच्च उत्पन्न कर ? उसे प्रेम न कर समझूँ नहीं पर उसक जीवन में ईर्ष्या की धाय मया है और तईब धपने हृदय में एक दूसरे पुरुष का साहक प्रेम लिये रहूँ ।

स्त्री का पति छाठा है और यह कीगुक देखकर फिर धपनी मौकरी पर जमा जया चाहता है । पत्नी परप में कुछ लरी-लरी बर्ने होती है । धासिक माहब पर इन बातों का कुछ ऐसा धसर होता है कि वह धपने प्रेम से हस्तीया दे देते हैं और जिन पं पर पति जाना चाहता था उस पर बुर बल बलते है ।

‘रोमांस रोमांस’ का प्रमय भी बहुत कुछ माटी से मिलता-जुलता है । हाँ मिस्टर मिहू ने धपने शिम जाने मग में स्त्री के विषय में जो धमय धीर धमयय लहर कहे है उनका *Cynicism* मग में ग्लानि वेरा करता है और यह क्या इन रचना की एक नाटिका एक ‘माग्यहीन साम्यवादी के मिबा धीर प्रायः समी में एक ही विचार, कुछ बदये हुए रूपों में काम कर रहा है धर्वाणु—बैबाहिक जीवन का कला म्त्र । जितनी सिन्याँ धायी है मगी धपने शोहरों में बगावत किये बीठी है समी किमी दूमर धाम्मी से मौठ-मौठ करती है धीर लुब्धम-मुब्धता करनी है धीर लमा पुर्य ईर्ष्या से

जमाने हैं और कुदृते हैं। वैवाहिक जीवन की यह निस्सारता शायद सेबक में भास्कर बाइरुड से उधार ली है। अगर ऐसा है तो अभीमत है लेकिन अगर यह उनके मन की भावनाएँ हैं, तो हम यही कहेंगे कि उन्होंने उसका केवल सियाह रंग ही देखा है अगर वैवाहिक जीवन इतना दुःखमय होता तो धात्र संसार में एक जोड़ा भी अगर न पाता। जीवन में सबका बिद्रोह ही बिद्रोह नहीं है कविता भी है मातृकता भी है, धाम्नी भी है त्याग भी है। वही कवि-प्रतिभा जिये जीवन में निराशा के सिवा और कुछ अगर नहीं पाता शायद यहाँ भी प्रस्तुत हो रही है और यह उसी के उच्चार है। या शायद ऐसे प्रयोग इसलिए किये गये हैं, कि साम्य के विषय में जो भावनाएँ सफ़क ने अपने अन्दर भर ली हैं उनके इजाजत के लिए दूसरे प्रसंगों में बुझाया न भी। पुण्डने जमाने में 'शुक बहसरी के हव को पुस्तकें बहुत मिली जाती थीं जिनमें स्त्री-मुद्रन के बेवछाई पर आघेप करती थी और पुरुष स्त्री की दख्खाड़ी पर। दोनों अपने पक्ष के समझन में नज़ीरें पेश करते थे और पुस्तकें तैयार हो जाती थीं। उन किस्तों के लेखकों का मशा क़वम मनोरंजन होता था। गया ड्रामा अब उससे बहुत ऊँचा उठ गया है। वह अब जीवन की जिम्सावड़ी और चिन्मगी के मसले हल करता है और मसले भी बह सेता है, जो सामाजिक होते हैं वह नहीं जिनका केवल मुट्टी भर विष अपने प्रायमियों से तास्तुक है।

मुचनेश्वर प्रसाद जी में प्रतिभा है यहराई है, खद है, पते की बातें कहने की शक्ति है मन को हिंसा देने की बाक्कालुपी है। कारा वह इसका उपजोम 'एक साम्यहीन साम्यबारी' बंसी रचनाओं में करते। भास्कर बाइरुड के गुणों को लेकन क्या वह उसके कुपुणों का नहीं छोड़ सकते।

जून १९३५

वित्तमी—लेखक अवगतकर प्रसार।

'वित्तमी' प्रभाव ली का दूसरा उपन्यास है और यद्यपि इसमें कफ़ाम की हिंमिक छटा नहीं है पर वृत्तिकोण की स्पष्टता और बिचारों की प्रौढ़ता में उससे का हुमा है। 'वित्तमी' नाम पढ़ कर ऐसा अनुमान होता है कि इसमें किसी बचन मिनी का चित्रण होगा अगर यह अनुमान गमत निकलता है और वित्तमी का विकास त्सा गुद्विणी और मर्यादाओं पर उत्सव करनेवाली बेनो के रूप में होता है। वह इतनी स्त्री है पर उसे अच्छी शिक्षा मिली है और कठिन परिस्थितियों में पढ़कर इसक्य करिष कुन्दन की भाँति और भी गिगर जाता है

पुत्रपोषित साहस से उसका इन चीखू कपों में संसार का सामना किया जा। किसी से म मरुने की टेक अविचल कजव्यनिदर और अपने बस पर लड़ हीकर इतनी सारी गृहस्त्री उमने बना ली।



उसके मन में यही धाँकीया है कि उगका दंष्ट्र पति पीट कर घाबे और उसकी साबना का पुरस्कार दे। लेकिन जब यह कामना पूरी नहीं होती और तितली नाँव में संरेह का विषय बन जाती है, तब वह चिन्ता उठती है—

‘मैंने इतने धैर्य से इतलिन ससार का सब धार्याधार सहा कि एक दिन वह धाँगे और मैं उनकी भाती उन्हें सौंप कर धपने बुलपुण्य बीबन से विभाम लूँगी।’  
 क्या एक दिन एक बड़ी एक चख मो मेरा मेरे मन का नहीं धाँवेगा—जब मैं धपने बीबन-मारण के मुक-मुस में साथ रहनबाज की प्रसिजा करनेधामे के मुँह से धपनी सझाई मुन नूँ।

उत्तर शला संघर महिला है जो इन्नीड में कँबर इन्द्रदेव सिंह की सगमनता से प्रमाकित होकर उनके साथ भारत जाती है और यहाँ रिषाणों की दुर्दशा देखकर उनको सगठित करने और उनको धारिक ममम्याधों को हल करने का धानोवन करने समती है। फिर विज्ञान रामनारायण के मुख से हिन्दू धम का उपदेश सुनकर वह हिन्दू धम की दीक्षा में लेती है और कँबर साहब से उम्का विवाह हो जाता है पर उसका वैवाहिक जीवन सुयो नहीं है। स्मिध नाम का एक संघर उसके मन को बुरी तरह धार्यामित कर देता है। उसी समय शैला और तितली में जो बार्ने होतो है उमसे उनके धाररा स्पष्ट हो जाते हैं। तितली कझतो है—

‘तुम धम के बाढनी धाररण से धपने को रँक कर हिन्दू स्त्री बन गयी हो मही किन्तु उसकी ममकृति की मुस शिधा मूल रही हो। हिन्दू स्त्री का धडादुख ममरस उसकी साबना का प्राण है। इम मानसिक परिबतन को स्वीकार करो। देखो इन्द्रदेव बाबू कँसे देख प्रकृति के मनुष्य है। उन त्याम को तुम धपने प्रम से और भी उम्मल बना मकती हो।

जिस तरह शैला और तितली के मनीमार्गी में धन्तर है उमो तरह कँबर इन्द्रदेव और पठित रामनाथ के जीवन-धारशो में भी गहरा धन्तर है। नौनों ही दश और ममात्र के तुम चिन्तक है मरिड इन्द्रदेव गमात्र को पच्छिमी डंग पर ले जाना चाहता है इसके जिभाऊ रामनाथ हिन्दू धारशों पर लडा रगता है और उम्ही के परिल्कार में जाति का धडा देवने का इच्छुक है। इन्द्रदेव जाति की दुरशा को बर्ना करते हुए कहने हैं—

‘इसमें तो धञ्जी है परिधम की धारिक भीतिक समता जिनमें ईश्वर न रहन पर भी मनुष्य को मध तरह के मुबिनाधों की योजना है।

इन्द्रदेव परिधम की भीतिक ममशा क पुजारी है। रामनाथ भी ममता के मक्त है पर यह काम भारतीय धार्यधार द्वारा पूरा करने के इच्छुक है। वह इन्द्रदेव के पबाव में बढने है—

'बनता को धर्म प्रेम की शिपा देकर उस पशु बनाने की चेष्टा धन्य करेगी । उसमें ईश्वर भाव का आत्मा का निर्वासन होया तो सब धर्म उस दया सहायुभूति धीर प्रेम के उद्गम से अपरिचित हो जायेंगे जिससे आपका व्यवहार टिकाऊ होगा । प्रकृति में निष्पमता तो स्पष्ट है । नियन्त्रक के द्वारा उसमें व्यावहारिक समता का विकास न होगा । भारतीय धर्मशास्त्र की माणसिक समता ही उसे स्वामी बना सकेगी ।

इन्द्रदेव का पारिवारिक जीवन आधापूरा है । जो घर के स्वामी बही है पर उस घर राज है उनकी बहम माधुरी का आ पति प्रेम से संबंध होकर मरु में ही रहती है धीर इस घर के संभालन में अपने जीवन को समर्पण कर रही है । उनकी माता श्याम-कुमारी देवी का समय बीमारी धीर पुत्र-प्राप्त धीर धर्मोत्तमों में कटता है । इन्द्रदेव एक इंग्लैंड से एक अंग्रेजी युवती के साथ मिलता है धीर दोनों धर्मपुत्रत्व में रहने लगते हैं तो माधुरी धीर श्यामकुमारी दोनों ही निश्चित हाथी है धीर-सौभाग्य को किसी तरह धूम को मक्खी की तरह निकाल बाहर करना चाहती है । रियासती हथकंडे शुरू हो जाते हैं, यहाँ तक कि इन्द्रदेव घर से बिरक्त होकर शहर में चले जाते हैं धीर वहाँ बैरिस्ट्री करके अपना निर्वाह करने लगते हैं । अपनी सारी सम्पत्ति अपनी माँ के नाम हिया करके वह उस हियानामे की रजिस्ट्री कर देते हैं । लेकिन बेहातों के सुधार का विचार उनके हृदय में अभी तक मौजूद है । वह सौभाग्य से कहते हैं—

'कुछ पढ़े-लिखे सम्पन्न धीर स्वल्प लोगों को नागरिकता की प्रसोभनों को छोड़कर देश के गाँवों में विचार जाना चाहिए । उनमें सरल जीवन में—जो नागरिकता के समय से निपात हो रहा है—विरासत प्रकाश धीर धान्य का प्रचार करना चाहिए ।

मगर धार्मिक हिन्दू माता अपने पुत्र से सम्पत्ति दान लेकर क्या धर्मिकार का कुछ भागने में सतुष्ट हो सकती है ? वह अन्त में सब कुछ अपनी बहु शैला को सेंट करके सुखी होती है । इन्द्रदेव की बहम माधुरी भी अन्त में पति के व्यवहार से दुखी होकर शैला से स्नेह करने लगती है । इस समय मनोमार्थों का धर्म निष्ठा कोमल है—

'प्रेम मित्रता की मूखी मान्यता ! बार-बार अपने को ठग कर भी वह उठी के लिए भ्रष्ट होती है ।

दिल्ली का पति मजबूत बड़ा मनबला युवक है जो अत्याय देख कर शान्त नहीं बैठ सकता । उसकी विधवा बहम राजराणी पर अब एक सुखदोर महन्त बलात्कार करने की चेष्टा करता है, ता मजबूत अर्थ का काबू में नहीं रख सकता । वह महन्त को मना बलात्कार मार डालता है धीर उसके मजबूत में अपनी की बेसी सेकर भागता है धीर अन्तकता पहुँचता है । वहाँ कई बरना बर्रों में पड़ने के बाद उसे दग साज की सजा दी

घाती है। जस म पक्ष-पक्षे उसके अर्धस मन में तरह-तरह के मन्हे उठते हैं और घाने ऊपर मानि होन ममती है। बह सोचता है—

‘क्या तितली मुझसे स्नेह करेगी? मुझ अपराधी से उसका बही सम्बन्ध फिर स्थापित हो सकेगा? मैंने उसका ही यदि स्मरण किया होता—जीवन के शम्प प्रश्न को उसी के प्रेम से केवल उसी के पवित्रता से भर लिया होता तो घाब मह दिन मुझे न देखना पड़ता। किन्तु, क्या बही तितली होगी? घाब भी बीसी ही पवित्र? इस मोक्ष मसार में जहाँ पग-पग पर प्रमोमन है, साईं है, मानन्द को मुख को सासता है?

जस म छुटने के बाद बह ठाकरें खाता हरिहर खेच पहुँचता है और यहाँ अपने पुराने दुरमन बीबे बी और लहसीमदार की बासपीठ से उसे तितली के विषय म संबेह होता है—उसका सडका कब हुआ? प्रतिशोध लेने के लिए उनका पग मॉकन लुका रहा या और बह बार बार उस शोध करना चाहता था।

बह भर घाता है। उसी समय तितली जीवन से निराश होकर क्या की गोच में मून पड़ती है। अंतिम समय उसे मधुवन म बसल होते हैं—

उसम देखा सामने एक विर-परिचित मूर्ति है। जीवन-पुत्र का थका हुआ सैनिक मधुवन विधाम-सिबिर के द्वार पर जडा था।

प्रसन्न बी कर्मि है और इस कथा म घनक स्वम ऐसे घाये हैं जहाँ उनकी मोमनी कवित्व म मूब गयी है। दो-एक उदाहरण लीजिए—

रसीमी जाँदनी की घात्र ता से मन्बर पवन अपनी महर्तों से राजकुमारी के शीर म रोमांच उत्पन्न करने लगा था।

अपनी मलमल गरिमा की छोटे हुए बह स्त्रियों की रानी-सी दिखलायी पड़ती थी।

‘वो बूझों की ऊँची जाटियाँ परिचम के बुँपमे और पाने घाराश की भूमिका पर एक उराम चित्र का वेश बना रही थी।

इम पुस्तक म दिग्गी के अन्धे उपम्यासों में एक की संख्या और बडा थी है। कमी जो एटन्टी है बह है इमम बिनोब और मजीबता की। बीबे बी शुक म ठी कुछ घास्तामनक से पर घाने चलकर बदमाश निकल गये। उपन्यास पडते हुए मन इस प्रवचन में नहीं पड़ने पाता कि यह कोई म्बाय जीवन वा अरिच है। उनकी धीपन्या गिबता मन म दूर नहीं होती। अरिच मजोब न होकर घाया म मानूम होते हैं। सूर्य पा तीव्र प्रकाश बही नहीं है, मडिम जाँदनी में सारे दुरय दिलायी देते हुए जान पड़ते हैं। घाल गुर एक पड़ेमो है। इम अरिचों की अन्ध-नी देगते हैं। उनका सम्पूख

कम हमारे सामने नहीं आता अगर शाब्द यह उनका धबलुभाषन ही है जो उन्हें हृदय के समीप पहुँचा देता है। क्या जितनी क्षिपाव में है, उतनी दिशाव में नहीं।

जुलाई १९३५

### मुसहस हाजी (सर्दी एबीरान)

स्व मौसाना हाजी उर्दू साहित्य के प्रवक्तको में हैं। आपने ही उर्दू पद्य की मम्म रूंगार के शेष से मुक्त किया और नबीन सैमी की सुनियार बासी। गद्य-साहित्य में भी आपने आलोचना और आलोचनात्मक चरित्र को जन्म दिया। बिगड़ी उर्दू साहित्य-इति को जितना हाजी ने सुचारु और निराले लेखक ने नहीं। आप सर समय के साथ मुस्लिम जागृति के अन्वयात्ता हैं। गद्य पाठ में आपकी सदासी अग्रणी बड़ी धूम-धाम से मनायी गयी थी। मौसाना हाजी के सबसे प्रसिद्ध और युगान्तरकारी काव्य मुसहस का यह एबीरान उसी अग्रणी की अन्वयात्ता में निकाला गया है। शुरू में डाक्टर आबिदुल्लाह अहमद की सिखी हुई बिगड़पूल सुनिवा है, फिर मौसाना अन्वुन आबिदुल्लाह अहमद की रीमाना अन्वुन हक समय सुनेमान मंत्री और अन्वयात्ता युगान्तरकारी के अन्वयात्ता-प्रसंग-प्रसंग-प्रसंग हुए परिचय है। मुस काव्य के अन्वयात्ता में अन्वयात्ता भी बिये गये हैं। इस काव्य में मौसाना हाजी ने मुस्लिम जागृति के अन्वयात्ता और फलन का बड़ा ही विशय और स्फूर्तिमय खल किया है। मौसाना का चित्र और उनकी सिपि के मयूने भी बिये गये हैं। गिबानी पायी और बिन्दु आक्यव। नीमो में इतनी मुन्दर पुस्तक देखकर आश्चर्य होता है। अन्वयात्ता ने यह पुस्तक छावकर उर्दू साहित्य का उपकार किया है।

नवम्बर १९३५

### कॉमेस का इतिहास—लेखक का भी पश्चिमिचारमय्या।

जिस पुस्तक की महीनो से धूम भी बह प्रकाशित हो गयी और उसका पहला अंशन निक भी गया। अब दूसरा अंशन छप रहा है। हमें यह जानकर आश्चर्य हुआ है वह हिन्दी अनुवाद केवल दो महीनों में छप-छपाकर तैयार हो गया। श्री हरिभाऊ पाण्ड्याय के सिवा कोई दूसरा आत्मी इतनी अल्प और इतने अल्पे डग से यह काम कर कता इसमें संदेह है। साठ ही सुपर अल्प अल्पों का अनुवाद करना ही बरसों का काम था वह भी अब बरसों बरसों लटक एही चाटी का जोर मयले। और यही पाण्ड्याय भी ने केवल दो महीनों में साठ काम समाप्त कर टाला। जैसे किया यह तो ही बाले। शायद बीच में कुछ काम बरते रहे हों। अनुवाद सरल चलती हुई बोध भाषा में किया गया है और उसकी सफरता पर हम उपाध्याय जी और उनके ते-विने सहकारियों को बधाई देते हैं। इतनी बड़ी और महत्वपूर्ण पुस्तक की बिन्दु आलोचना तो फिर कभी की जायगी आज तो हम उसकी रूप रखा और विषय-विषय

का सरसरी विक्र करके ही अपने को संतुष्ट कर लेंगे। पुस्तक छ भागों में विभक्त की गयी है। पहले भाग में १८८२ से १९१५ तक सरसरी निमाह वाली गयी है। काँग्रेस के जन्म के पहले देश की क्या अवस्था थी इस इम ने कुछ तरह जनमत को संगठित किया इसका सचिव बखन दिया गया है। काँग्रेस के प्रमुख और हिन्दुस्तानी इतिहास को सजावलि देकर यह भाग समाप्त कर दिया गया है। दूसरे भाग में १९१५ से १९१९ तक का इतिहास है। लोकमान्य तिलक के होम कम मीग धीमती एनीबेसेंट के घास इण्डिया होमकम मीग उनकी गजबखानी और मटियू-बेन्सफोर्ड के मुबारों का विक्र मा गया है। रोसट कमेटी को रिपोर्ट हिन्दू-मुसलिम एकता का शुभ नतन और बसियानबाना बाग के हत्याकाण्ड का समावेश भी हो गया है।

तीसरे भाग में १९२० से १९२८ तक का बृत्तान्त है। असहयोग का जन्म गांधी जी का जेल-दंड हिन्दू-मुसलिम रंगे नेहरू रिपोर्ट और उनके बाद के सत्याग्रह संघाम बारडोसी खाति सगी प्रसंग मा गये हैं जिनकी धार अभी लोग के दिनों में छाया है। चौथे पाँचवें और छठे भाग में १९२९ से १९३५ तक की सारी बटनाएँ मा गयी हैं जिनके दोहराने की जरूरत नहीं। अन्त में एक परिशिष्ट है, जिसमें पाँची इबिन समझौते साम्प्रदायिक समझौते और महात्मा जी के महाग्रह के समय के पत्र व्यवहार की नकलें हो गयी हैं। पुस्तक बेहद सस्ती है, सस्ता साहित्य-मंडल के लिए भी।

तीन नाटक—लेखक श्री छेठ योकिन्द्रराज जी।

इस पुस्तक में छेठ जी के तीन नाटक हैं—कुरुक्षेत्र हय और प्रकाश। कुरुक्षेत्र में भी भाग है—पूर्वाञ्च और उत्तराञ्च। पूर्वाञ्च में श्री रामचन्द्र जी की जीवन-कथा है, उत्तराञ्च में श्रीकृष्ण के मयुरा से प्रत्याग करन और अरुण के घात का बृत्तान्त लिखा गया है। यह दोनों कथाएँ इतनी बार लिखी जा चुकी है और इतने निम्न-निम्न दृष्टिकोणों से कि ज्यों की त्यों नाटक के रूप में आकर भी बिरोध आरूप्य नहीं रखतीं। श्री मैजिस्ट्रेटराज जी मुन्द न उसी कथा का प्रसंग लेकर अपुन काव्य रच डाला। उनकी सरसता का कारण कुछ तो उनकी धीरतिवनी बखन-वीची और कबिल टनित है और कुछ उमायल से बिसकुल भसग एक गयी कथा। छेठ जी कथानक में कोरु धनुडारन न का सके।

हय ऐतिहासिक नाटक है। इसमें राजा हयवज्रन का चरित्र दर्शाया गया है। सम्राट हय भारत के उन सम्राटों में है जिसका भीरता और सम्भरितता दोनों ही दृष्टियाँ से इतिहास में सर्वोच्च स्थान है। सत्तर न उस धारस प्रजा-मानव महिषा वतपारी पत्नी भम-नरायण सिगाबा है, जो तबका इतिहास के अनुबुन है। हय का

वरिष्ठ एक महान दुजेबी है, जो कियन महान सांस्कृतिक और राजनीतिक उद्देश्य का स्वप्न देखता हुआ राजनीति को सभ्यता बनाता है स्वयं उसका सांस्कृतिक बनता है, पर भारत को एक राष्ट्र एक अक्षय्यी राज्य के धर्ममत्त देखन की उसकी धर्मसाधना निष्कल होती है और उसका सारा जीवन राजाओं के विरोध के समन करने में बीत जाता है। अन्तिम दूरय जिसम भाव्य युद्ध में अपने पुत्र धारिपसेन के प्रास-वचन की अनुमति मानी है और धारिपसेन को माता व पुत्र के प्रासों की मित्रा बना ही सम्मन्वयी है।

प्रकटा सामाजिक नाटक है और वरमान राजनीतिक और सामाजिक जीवन का यथावत जाला। वही स्वामी मिनिस्टर है रये सिवार कावर्गिन के मेम्बर है जो देश वलित और बन-सेवा का स्वान धरकर अपना उम्मु सीबा करते है वितन्नी दुष्टि य स्वाध और अरोनिष्ठा क सिवा और किवी बीज का महक नहीं जो प्राओं पहर अपना मतमम माटने के लिए हकके सोचा करते है। अकेला एक ज्ञापील मुकक प्रकटा हलके बीज में धाकर अपनी स्पष्टवायिता से इन परकला को मकड़ी के जाने की धांति धिर-मिध कर शानता है। उद्यम उद्य का इतना बन है कि सारे मत्तमबी मोमी पक्ति समान में हलचम पड़ जाती है, मिनिस्टर और वीटर और मेम्बर सब के सब बहल उठते है और प्रकटा के विरुद्ध परकला रने करते है पर ठीक उस वक्त जब प्रकटा की गिरफ्तारी के समान हो गये है मानूम होता है कि बड़ उठी राजा अजबसिंह का पुत्र है, जिन्होंने अइवक में पढ़कर उसके विरुद्ध अपनी रिमासत में विरोध फैलाने की रिपोर्ट पर हस्ताक्षर कर दिया था। इमे तीनों नाटकों में यह सबसे ज्यादा पसन्द आया। ऊँचे मिथिस कपास का इतना सफल निबन्ध देखकर मन मुन्ब हो जाता है। प्रसंग में अनेक सामाजिक समस्यारों पर बड़े ही मुनके हुए डंग से विचार किया गया है और उन समस्यारों का बड़ी हवाज बताया गया है, जो भारत की परिस्थिति और राष्ट्र के हितों के अनुकूल है। 'स्पर्डी' सठ बी की पहली रचना है जो हमारी नजर से गुजरी। उसके बाद इस सामाजिक नाटक ने ह्यारी यह बाण्डा मजबूत कर दी कि सामाजिक नाटक ही आपका लक्ष है।

### अर्द्धी हुमिया

माहूर की इस विख्यात बहू पत्रिका का यह गद्य-व्याक बड़ी शान से निकला है। इसमें प्रताप के आकार के बीजीबीत पुत्र मेल और बजनों साये और रंजीन मित्र है। इसे देखकर यह अनुमान किया जा सकता है कि अर्द्ध माहिर्य कियने बेव से उत्पत्ति कर रहा है। इसम अम्बीत गद्य-लेख और बीबीम कविताएँ है। यद्य-सैलां यि घाट कस्तानिबी है बीज कुामे यम धालोबनात्मक मिमत्त है और तीन माहिरियक लेख हैं। कहानियों में दो 'हुँठ' से अनुवादित हैं यद्यपि नाम नहीं दिया गया है। हज़रत बकार अम्बालबी का

साहित्य मोठे सामोखे जीवन की सुन्दर प्रम-रूपा है, यद्यपि कथानक में कोई मनीनता नहीं। इमों में दो इम्प्रसासनास 'कमर' का 'सोसाइटी के इन्वारेणर इन्सेन के Pillars of Society' की ऐन्नी का मनोरञ्जक सामाजिक चित्रण है, जिससे हमारी वर्तमान सोसायटी की नैतिक और आर्थिक वसा पर बहुत अच्छा प्रकाश पड़ता है। धानो जगतमक निबन्धों में हज़रत केंडी का 'तारीस उर्दू का मुतामा और हज़रत रातिव का 'उर्दू साहित्य पर सामिक का घसर बड़े विचारपूख हैं। रातिव साहब ने अिठमी बोम्पता से अपने विषय का प्रतिपादन किया है उससे चिहित होता है कि उर्दू में धानोचना का आचर फिदना ठेका सठ गया है। मिर्जा असीमबेग अरतार्ई का 'बीबी का लठ मियाँ के नाम' हास्यरसपूख लेखों में सबसे अच्छा है। कबिताओं में हज़रत ह्यूरीज आर्तबरी का 'रतन पीठ इन्जीठ र्मा का 'मूस धायी री नयी सवप्रिय रैमी की रचनाए है। बागी ससार' और 'शिकवा भी सुन्दर है। और भी कई कबिताए बहुत मखी है। इस अंक का मूस्य सवा लपया है।

### THE NEW OUTLOOK

यह अंशबी का मासिक-पत्र अहमदाबाद से श्री गोविन्दलाल डी शाह की एडीटरी में निकलता है। सम्पादक-मंडल में मिस श्यामकुमारी मेहक मिर्जा अहमद मोह्यब और कई अन्य प्रतिष्ठित नाम हैं। जनवरी का यह अंक विद्योपांक के रूप में निकला है, जिसमें कई अच्छे-अच्छे विचारपूख लेखों का संकसन है। इस पत्र की विशेषता यह है कि इसमें अन्य प्रवेशों के लेख भी दिये जाते हैं और उमे सवप्रिय बनाने की चेष्टा की जाती है। अधिकतर उन्हीं समस्याओं पर लेख लिखे जाते हैं जिन पर आरकस मनाज में बहुत मिला-पड़ा जा रहा है।

फरवरी १९३६

हुलसी के चार दूख—नेटक भी सधगुफ्तरख भवस्पी।

सकत पुन्ठक के निखने का सहरय उसके लेखक के शर्तों में ही इस प्रकार है —

'यह बात हिन्दी के सभी प्रमियों को लच्छती है कि हिन्दी के मबप्रच्छ कवि गोस्वामी तुमसीशान जी की कृतिया की पूख और उचित समीक्षा सवा उनके पत्र पात्र को उचित व्यवस्था अमा नहीं हुई है। कबिता प्रमियों का ध्यान अभी तक 'रामचरित-मानस' तक ही सीमित रहा है। 'मानस' को सैकड़ों टीकारें निकली हैं और निकल रही हैं। उनकी समीक्षाएँ भी विज्ञाओं ने की हैं। अम्याम्य भाषाओं में जो रामायण को समीक्षाएँ देवने में आती हैं, परन्तु यह सीमाव्य गोस्वामी जी के अन्य अर्थों को प्राप्त नहीं हो सवा। 'विमयपत्रिका' की और कुछ भाव सोगों का ध्यान

गया है। उसकी एक-दो धामोचनाएँ और टीकाएँ ब्रह्मी लिखी हैं। 'कवित्तवसी' को भी एक-दो टीकाएँ ब्रह्मी लिखी हैं परन्तु उस पर कोई धामोचना-ग्रन्थ रचने में नहीं गया। कुछकर लेखों में तो कभी-कभी गोस्वामी सबधी समीक्षाएँ लिखी भी देती हैं परन्तु पुस्तक रूप में इस विधा में कोई प्रयास नहीं किया गया। मुझे इस प्रकार का अनुभव है कि हिन्दी की ब्रह्मी मासिक पत्रिकाओं के कुछ नये सम्पादक भी गोस्वामी तुमसीदास की तथा कवि-सम्राट् मूराराम जी की धामोचनाओं की स्तुति-पिण्डदान समझते हैं।

'गोस्वामी तुमसीदास के सम्बन्ध में सबसे ब्रह्मा और सबसे मौखिक ग्रन्थ पंडित रामचन्द्र शुक्ल का ही है। उनकी ममीसा लिखी एक ग्रन्थ पर धारित न होकर सभी ग्रन्थों पर धारित है। फिर भी 'मासिक' पर ही उस धामोचना का बराबर अधिक है। विरचनिकाव्यों में और कालेजा में हिन्दी की उच्च शिक्षा की व्यवस्था हो जाने के कारण गोस्वामी तुमसीदास के समस्त ग्रन्थों की पुख्ती और विश्व-समाप्तिनाएँ लिखानी पड़नी बाहिए भी परन्तु कारी क प्रोफेसरों को छोड़कर अन्य स्वामी के प्रोफेसरों का ध्यान भी इस धोर नहीं गया। कुछ लोगों में तो अपनी लेखनी का प्रयोग करने में निकट संकोच है।

'गोस्वामी तुमसीदास के सम्बन्ध में बापों की जानकारी अधिक बढ़े और उनकी कृतियों के पठन-पाठन में सहायता मिले इसी लाभ को ध्यान में रखकर प्रस्तुत पुस्तको को लिखा गया है। पशुमी पुस्तक में गोस्वामी तुमसीदास का एक उचित जीवन-वृत्त दिया गया है। साथ ही साथ कल्प-कला और गोस्वामी तुमसीदास को की निजी प्रणया पर एक सच्चा प्रबन्ध भी दिया गया है। इसके अन्तर्गत गोस्वामी तुमसीदास की चार छोटी कृतियों पर समीक्षाएँ हैं। उन कृतियों के नाम हैं—'राममना गहलू' 'वर्ग रामायण' 'पारवी मंगल' तथा 'जानकी मंगल'। इन धामोचनाओं के प्रबंध में बहुत ही और जानन शोभ्य बालें सम्मिलित कर ली गयी हैं। दूसरी पुस्तक में उन्हीं बापों पुस्तको के उचित सम्बन्ध के लिए मूल पाठ के साथ-साथ सन्वाच तथा टिप्पणियाँ देकर पाठ समझाया गया है। स्नान-स्नान पर तुमना करने के लिए बाह्य के पर्वों को उद्धृत किया गया है। धर्मकारों का भी कहीं-कहीं पर विरोध कर दिया गया है।

प्रसन्नता की बात है कि लैटिन्ग महोदय प्रस्तुत पुस्तक के सभी उद्देश्यों की पूर्ति संकल्पना के साथ कर सके हैं। लासकर हिन्दी के उच्च साहित्य का मर्म करनेवाले विचारविमों से तो हमारा विशेष अनुरोध है कि वे इस पुस्तक का लुभ सम्पदन करें। जो या सबसाधारण के काम की बहू है ही। इसी प्रकार यदि अन्य विद्वान प्राचीन साहित्यों पर प्रकाश डालने का प्रयत्न करें तो हमारा पूरा विश्वास है कि लक्ष्यपूर्वक साहित्यिकों में प्राचीन साहित्यों के प्रति अनिश्चि बढ़े और उनकी बहुत कुछ अतिमता दूर हो पाय।

मार्च १९३६



## द्वयाह कहानियों—सेलक की चतुरवस्त ।

मुंठी चतुरवस्त बच्चों की कहानियाँ लिखने में कुशल है । इस संग्रह में प्रायः प्यारह कहानियाँ हैं, बड़ी ही मनोरंजक हैं । बच्चों में 'धर्म' भावना बड़ी प्रबल होती है और साहित्यिकता से विशेष रुचि । इन सभी कहानियों में ये दोनों गुण मौजूद हैं । बीच-बीच में बच्चों का चरित्र-निर्माण करनेवासी बार्ते भी घाटी गयी है मगर वह इस तरह प्राप्ती है कि कहानी का रंग बन गयी है । बालकों के लिए ये कहानियाँ मनोरंजक भी हैं और पाठ्यप्रद भी । भाषा बहुत ही साफ़ और मँची हुई ।

## समाज की बात—सेलक की धार्मिककुमार ।

धार्मिककुमार जी ने समाज का जो चित्र खींचने की चेष्टा की है, उसमें वह सफल नहीं हुए । न कोई उबीच चरित्र है, न रोचक कथा और न हृदय को स्पष्ट करने वाले भाव । कथा तो इतनी उमरग ययी है कि किसी को समझने के लिए प्रयास करना पड़ता है । इतने चरित्रों के जाने की कोई जरूरत न थी । ऐसा बात पड़ता है, सेलक ने बौद्ध-पतिवार्तों का कृतम एक उपन्यास के रूप में संग्रह कर दिया है । उपन्यास में हर एक चरित्र अपना एक व्यक्तित्व रखता है और उसी के विकास पर कथा चलती है । पाठक को उसके विकास में उत्कंठा होती है । वह देखता है, सेलक में धर्ममूर्तियों को किसी पहचान है, वह किन स्थलों पर अपने रचना-कौशल या भासिक धारोचनाओं या मनोवैज्ञानिक रहस्यों से उसे मुग्ध करता है । उपन्यास में अगर कोई घटना ही हो तो उसे भी इस तरह रचना चाहिए कि उसका वैचित्र्य पाठक को खींचे । यह उपन्यास तो केवल वह धामनी देता है, जिस पर किसी उपन्यास की कल्पना की जा सकती है ।

## सोहाग बिन्धी—सेलक की मनोरंजक विवेदी ।

इस कुछ दिनों से एककी माटकों की घोर रुचि बड़ रही है । विवेदी का इस रंग की पूर्ति करनेवालों में प्रमुख स्थान है । हमने इन खर्हों पाठकों को बड़े हीच से पढ़ा और हमें जो सबसे अधिक रुचा वह सर्वम्य मनोरंज है, जो आपने 'ग' रवीन्द्रनाथ ठाकुर की किसी रचना के आभार पर लिखा है । खेप पाँचों माटकों में बार दो एम है जिसमें कौरी आनुरता है और एक शर्मा जी कुछ व्यंग्यात्मक है । जिसमें एक शिथिल मुबती के मनोभावों की धारोचना की गयी है । 'सोहाग की बिन्धी में काली बाबू की स्त्री धर्मसेपण से दुगी रहती है और अगल मौसेरे देवर को देखकर उसी की मार में पुत-बुमकर मर जाती है । धर्मसेपण को हीधा बनाकर जो स्त्री एक मुबक को बहनी बार देखकर और उसकी मजेनार बार्ने मुलकर मरने लगती है, उतना मर जाना ही घण्टा । कुछ माटक भी ह्या तरह की एक मुबती का चित्र है जो एक दुबक के प्रेम में चलती है और धार्मिक व्याकुल होकर एक बार देखने का जाती है । तीसरे

माटक में उर्मिला अपने एक पुराने प्रेमी को टुकड़ाकर एक खमीरार से ब्याह कर लेती है। प्रेमी साहब उसे विज्ञ में प्यार भी करते रहते हैं और उससे बसते भी रहते हैं। उसकी बीमारी की खबर पाकर भी वह अपने लिस को रोकते हैं और जब उसके घर पहुँचत है तो वह मर चुकती है। शर्मा जी' मज की बीज है, जिसमें एक युवती के मनोस्वभ की पहचान में पहुँचन का सफल प्रयास है। पाँचवाँ 'दूसरा उपाम ही क्या था' एक मुधम्मा-सा है, न यही पता चलता है कि स्त्री क्या चाहती है, न यही कि पुरुष क्या चाहता है। चरित्रों में पहले माटकबाला महाराज बड़ा मौलिक और सतुपय बन गया है। काठ हिन्दी भी ऐसे चरित्र के सूजन में ज्यादा उबर होते। माटकों में बा किसी भी रचना में लेखक का साहचर्या स्पष्ट होता चाहिए। पाठक को धँसी गली में से जाकर छोड़ देना पाठकों को ज्ञम में डाल देना है।

### मधुबाला—रचयिता की रचन।

मह कवि रचन के गीतों और कविताओं का दुखद संकट है जो छोटे धाकार में बड़ी सज-सज से छपा है। रचन में अपना व्यक्तित्व है, अपनी संसी है, अपने भाव है और अपनी जिज्ञासकी है। मधु, मधुबाला सखी धारि भावनाएँ हिन्दी में प्रतीती है। यहाँ तो सोमरस और मय का प्राधान्य वा मयर सोमरस का वैदिक काल में जाहे जो महत्व रहा हो और मंग गौना चरस धारि का सानु और रसिक-मरबली में जाहे भाव भी कितना ही रिवाज हो मयर मरो की कल्पना हमारी कविता के क्षेत्र में नहीं बुलने पायी। हमारी मध्यकाल की कविता में बंसी और कुलावन की पुकार है और नयी कविता में बीछा और मासा और बुन-वीप की कल्पना का प्राधान्य। वह सकार की भक्ति की धड़ निराकार की उपासना है और इसलिये आत्मानुमतिपूख और अन्तर्मुखी है। रचन की की कविता में भी यही भावनाएँ है मयर कल्पना हिन्दी के लिए सबधा धधूती है और यह जय उनको है कि उन्होंने अरसी का यह ठकैमस यहाँ ऐसा छपाया है कि उनमें बेपानापन बिलकुल नहीं रहा। और चौक हिन्दी में भी बुलबुल और अरस और सखी और सावर के रसिक मीखर है और कवरत से मीखर है हिन्दी में यह बीज धाकर उगाने उसका स्वागत किया। अरसी और उरू के कविओं ने ही सखी और सुराही को आध्यात्म की बीज बना डाला है। उनके लिए शराव बीजी धावेस है, या भक्ति या ज्ञान। उनका मसा वह बिज्जलता है, जो भक्ति की पूर्णता है। पिजरे में उँसी हुई बुलबुल का बार में बमाने हुए बोंसमे की बार में सड़पना मनुष्य के जीवन से इतना मिनता है कि हम उसके बुल म शरीक होने के लिए मजबूर है। शराव की कल्पना भी यहाँ इस दुख भरे संसार से विरक्ति की बूचक है, यहाँ आत्मिक कट्टरता और संकीलता से निग्रोह का भी इशारा करती है। वैखण मधु भी क्या कहता है—

हमने छोड़ी कर की माता  
 पोथी-पत्रा मू पर झासा  
 भँवर-मसजि के बग्गी-गूह  
 को तोड़ लिया कर में प्यासा ।  
 धी बुनिया को धाबादी का  
 संदेश सुनाने हम धाये ।

हमें धारा है बचन भी की मधुबाला कहीं निरुशाबाध की राख न  
 पिसाये ?

अप्रैल १९३६

कस्तक—रचयिता की हृदयनादमय पाठ्य 'हृदय' ।

यह हृदयेश जी की पुनी हुई कविताओं का सचित्र संग्रह है । उनमें माधुर्य है  
 प्रसाद है, कससा है, तन्प है और कहीं-कहीं ज्ञान्ति भी है । जैसा हृदयेश जी ने अपनी  
 भूमिका में लिखा है कविता पर या साहित्य के किसी दूसरे ढंग पर भी अपने समय  
 की धारा पडे बिना नहीं रह सकती । हम बिन सामाजिक और राजनीतिक दशाओं में  
 पडे हुए हैं उनमें कससा और कस्तक के मन्त्रों की प्रधानता ही हो सकती है, मगर हम  
 सुकवि कर्तां स यह धारा भी रकते हैं कि वह केवल मसिया न गायें हालांकि जीवन में  
 पर्सिमे का स्वाग भी है, बल्कि जीवन में स्फूर्ति का संचार भी करें । अगर कवि की  
 रचना सुनकर 'बेचनता बल दे या 'भाशाई' बाहल हो जाये तो फिर इन पाठकों से  
 लड़ा किस बल से जाय । इस 'कस्तक' के प्रवाह में 'शिशु' की आमाशय ऋजक देकर  
 दिल को धारस मिलता है—

मधुर यौवन की लघु तस्वीर,  
 गवस धाराओं के मधुपास ।  
 भावनाओं के मृदु संचार,  
 प्रम क कल्पित नव उच्छ्वास ।

पुरतक में पाँच मनाहर रंजीत कवित्वपूख चित्र है, कई हाइड्रोन चित्र । पुस्तक  
 की सट कैलाशपति जी सिद्धानिया को समर्पित की गयी है ।

पञ्चदशियाँ—लेखक की पुष्पीनाथ शर्मा ।

यह शर्मा जी की बारह छोटी कहानियों का संग्रह है । सीधी-सादी मनारंजक  
 कहानियाँ हैं, जिनमें प्रतिभा तो कम है पर कसम में बा हुआ है । लेखक ने बिबिध  
 रसां की चीजें लिखी हैं, पर जनता प्रयास रख करखा है । 'भिन्नाटी का प्रम 'दुग  
 की बन्दर 'रज्जो का सौदा 'र्याग और ममता' धारि गन्तों में करखा के मित्र-

मित्र कर्णों की भ्रमक मिलती है। 'गुपीरा का भ्रम' रहस्यपूर्ण है। हस्त-रत्न की कोई कहानी नहीं। माधुम नहीं शर्मा जी ने इस शरीर की कर्णों व्यवहारा की।

मगधवृगीता मञ्जुम या नसीमे इरफो—रविता भी विशेष प्रभाव मुनीवर।

मुनीवर साहब उग्र के सिद्धहस्त कवि हैं। आपने धार्मिकीय उपायण और विमय-भिका का भी पयवद धनुवार किया है। आसोभ्य पन्थ मगधवृगीता का उग्र पयवद धनुवार है। मगधवृगीता के कई मञ्जुम तर्जुमे निकल चुके हैं। धमी नवर साहब सीहामवी का धनुवार हाल में प्रकाशित हो चुका है, पर नीता हाल और अम्माल का धपार सावर है और उसे जितना ही मधो उतने ही रत्न निकलते हैं। इस धनुवार की कुबी यह है कि मुस भाषों की पूरी तरह रचा की पयी है। डा नगबालदास की के शब्दों में आपने रसोंको का मतलब कुबी से धरा किया है और उसके साथ ही शान्ती का धनुष भी उतम भर दिया है। धर्मन के मनोभावों का कितना ममस्पर्शी विनय है—

मैदान न हाल है मेरा वीर  
उलझे जाते हैं कुच वसुध वीर।  
फोड़ा सा विगर में पक रखा है,  
दिल बार लच्छ बटक रखा है।  
यह इन्ही धमीको धरुजा क्या  
धपने जो हाँ उमका मारना क्या।  
जँबता नहीं धन मिगाह न कुछ  
सम्मत नहीं इस मुगाह में कुछ।  
मतलब तीरो लकड़ न क्या  
मिल जायगा उतहे जब से क्या ?  
राहत की नहीं मुझे लमदा  
हूँ जाने शाही का मैं न बीमा।

### 'विशाल भारत' का राष्ट्रीय धर्म

सहस्रों 'विशाल भारत' के बीशाह का धर्म राष्ट्रीय धर्म के रूप में विकसित है। कई साल द्वितीय पत्रिकाओं के विशेषांक बूत-बाम से निकले थे। इतर कुछ दिनों से सिधिमता धा कयी है। जो विशेषांक निकलते भी हैं वह भी कम से कम धर्म करके विशेषांक निकलने का धीरव भाग लेने के लिए। 'विशाल भारत' का यह धर्म भी धाकार-अकार और सामग्री के एतवार से साधारण धर्मों से कुछ ही बढ़कर है। फिर भी राष्ट्रीय धर्म निकलकर उमने माणिक पत्रिकाओं की साथ तो रख भी। सम्मान का

पय बाबू राजेन्द्रप्रसाद के 'कॉलेज के नियमों का परिवर्तन' को चिन्ता गया है जो बहुत मुनासिब है। इस विषय पर राजेन्द्र बाबू से ज्यादा प्रभावितों लेखक और कौन हो सकता था। दूसरा छोटा-सा लेख बाबू रामानन्द चट्टोपाध्याय के फिरी लेख का अनुवाद है। तीसरा लेख डा. रबीन्द्रनाथ के एक बड़ ही विचार और पाण्डित्य से भर हुए लेख का उल्था है जो बहुत विन हुए माइन रिश्त में निकला था। 'हमारा सेनापति' में बाबू इबमोहन बर्मा का छोटा-सा मगर प्रभावपूख विन लींचा है। 'राष्ट्रीय चेतना' और 'बम प्रचारक' भी अच्छा लेख है। 'कॉलेज के जन्मदाता ह्युम' 'हमारे राष्ट्रीय सिद्धक' और 'हमारे राष्ट्रीय कर्म' आदि लेख भी पढ़ने योग्य हैं। एक लेख में बाबू सम्पूर्णानन्द ने पाँचीबाद और सोशलिज्म की तुलना की है। प्रायः सभी लेखों का बयन सुनि और उपयोगिता की दृष्टि से किया गया है।

### 'प्रताप' का कॉलेज अंक

सहबोबी 'प्रताप' ने यह कॉलेज अंक निकाल कर अपनी सजगता और समीक्षता का परिचय दिया है। ऐसे अवसरों पर भी हमारे दैनिक और साप्ताहिक पत्र उगासीन एते हैं यह हमारी मुबारिकी के सिवाय और क्या है। प्रताप के इस अंक का पहला लेख 'राष्ट्रपति जवाहरलाल' है जिसमें पं. बालकृष्ण शर्मा ने पंडित जवाहरलाल नेहरू का चरित्र विस्तार के साथ और प्रेम और मज्जा से भर हुए रंग में लिखा है। और प. जवाहरलाल का चरित्र निम्नले पन्नेह बपों का सिंहासभोक्त है मगर यह सिंहासभोक्त ही नहीं अडांभलि है जिसमें बहुत कुछ आत्मकथात्मक और इसलिए बड़ा ही रोचक और प्रभावपूख है। 'हामी की फाँसी' स्व. गणेशशंकर विद्यार्थी की रची हुई एक हस्तरस की मजदार कहानी है जिससे पता चलता है कि विद्यार्थी भी हम रंग में झुलत थे। बाबू सम्पूर्णानन्द का 'कॉलेज और साम्राज्यशाही' भी हृष्यरस पासीबाव की का 'संयुक्त प्रान्त की किमान समस्या' आदि लेख भी पढ़ने योग्य हैं लेकिन इन अंक में श्री लबीन जी का 'बन-गमन' बिलकुल बनीका मामूम होता है। इमे तो किनी साहित्यिक साविक पत्रिका में छपना चाहिए था।

मुकपूष्ठ पर प. जवाहरलाल जी का रंभीन चित्र है। और राष्ट्र-नेताओं के चित्र भी हैं लेकिन दम-दाँध अच्छे काटून हो जाते तो रंग और बोधा हो जात।

### 'प्रभात' का बेकारी अंक

हमने कहीं पढ़ा था कि जब मे मरी का जोर हुआ है इमनेदर में पुस्तकों को बिचरी बड़ मयी है। इसका कारण शायद यही ही मज्जा है कि व्यापारिया को हाप पर हाप धरे बैठने की प्रपेक्षा मनोरञ्जक पुस्तकों पढने का महगमा ज्यादा पमन्द है। वहाँ की मरी का धय यह है कि धय पहने का-सा धन्वाधुन मज्जा नहीं होता। उनके

विनायक हिन्दुस्तान की संघी का घब यह है कि यहाँ रोटियों का ठिकाना भी नहीं है। फिर किताबें कौन पढ़ें। लामी पेट तो भगवत् भजन भी नहीं होता साहित्योपासना या दूर की बात है। फिर भी बनिया के सहयोगी प्रभाव ने बेकारी घंके' निकाल कर साहस का नाम दिया है। पहला भव है 'बेकारी की विप्लव समस्या जिसमें बेकारी के कारखानों की मीमांसा की गयी है और अपना इसान्न बताया गया है। दूसरा भव भी शीतलासहस्र की का 'भारत में बेकारी है। आपका यह खयाल ठीक है कि 'जब तक धार्मिक शासन की धार्मिक नीति में कुछ स्थिरता न हो किसी धोर की किसी प्रकार की धार्मिक उत्पत्ति की सम्भावना नहीं है। श्री परशुराम का 'बकार साहित्यिक' की बाबा राववहाल का बेकारी की भगवतीचरण बर्मा का बेकारी घबका प्रक्रमणयता की इयत्तकर दुबे का शिष्टियों की बेकारी पर एक दृष्टि' धारि सेठ भी विचार से लिखे गये हैं। श्री इन्दुप्रमोहन का शिष्टियों की बेकारी और उसे दूर करने के उपाय' सारभाषित सेठ है जिसमें इस विषय पर हर एक पहलू से विचार किया गया है। इनके प्रतिरिक्त और भी अनेक लक्ष कविताएँ और कहानियाँ हैं जिनसे यह घंके संग्रहणीय बन गया है।

मई १९३६

बाबिदखली शाह—नेरक भी शीतलासहस्र और भी शीतलसहाय।

लखनऊ के रोगीम नवान बाबिदखली शाह जैसा विनासी राजा बहुत कम हुआ होता। वे तो अन्नम राज्य के स्वामी लकिन धाने-बनाने और नाचने और विषय-भोग के सिवा उन्हें रियासत से कोई महत्त्व न था। उनके विनासमय जीवन की संकष्टों कबाएँ धान भी बच्चे-बच्चे की उबाण पर है। नृत्य और संगीत और अभिनय में उनका सानी न था कवि भी अन्धे से मयर हम कलाघाँ को सारलोभति का साधन न बनाकर उन्होंने इन्हें काम-क्रीड़ा का साधन बनाया और उसमें ऐसे मित्त हुए कि राज्य की राया और धंधेबी सरकार क लैबी होकर कमरुता में मरे। इस पुस्तक में लखी रगौले बाबिदखली शाह के जीवन की कुछ मनोरंजक कबाएँ ली गयी हैं। उनसे मातुम हीठा है कि बाबरशाह के महल में एक ली पञ्चीस बगमें ली जिनमें साठ के ली नाम दिये गये हैं। इनमें तुर्की धर्मोनिमा प्रेम इन्की तक की युवतियाँ ली थी। ली लीनी-महुरी लपवटी हुई और बाबरशाह की उस पर निगाह पड़ी कि वह महल में बाबिद कर ली गयी। बाबरशाह के मुसाहब अफिक्तर यलैये लखलिय और मीरासी ये ली प्रवा ली लोनों हाथों से मूठे ये। और बाबरशाह का अणन एंस से नाम था। सारे राज्य का लन निब-निबकर लखनऊ भाटा था और एधासी में लहता था। उसक साथ ही बाबरशाह माहव मिय्याबासी भी परमे धिरे के ल। 'परियों के सप्राट में मोंट' से उनके प्रेतमय का अन्धा परिचय

मिलता है। पुस्तक बड़ी रोचक है और सजीव भाषा में लिखी गयी है। ऊपर बाब्रिनमयी शब्द का एक बिन्दु भी है।

**भारत का कहानी-साहित्य—संग्रहकर्ता व सम्पादक डा० यनीराम जी।**

भारतीय साहित्यों के संगठन और प्रचार का जो काम भारतीय साहित्य परिषद् ने उठाया है, उसका यह शुभ फल है कि भारत के प्रांतीय साहित्यों में लोगो की रुचि हो गयी है और परस्पर आदान-प्रदान की गति तेज हो गयी है। जो रचनाएँ अपने प्रांतीय भाषा में केवल प्रांत की चारदीवारी में बन्द रहतीं वह हिन्दी में आकर राष्ट्र की सम्पत्ति होतीं आ रही हैं। दक्षिण भाषाओं की कई कहानियाँ जो इस में निकलीं गुजरतीं उड़ू मराठी आदि में अनुबाधित हुईं। यह पुस्तक भी उसी साहित्यिक प्रेरणा का फल है। इसमें हिन्दी बंधना मराठी गुजरतीं उड़ू कनाडी तेलगु तामिल की इस कहानियाँ संगृहीत हैं। गल्प-लेखको को सुखी कइ रही है कि इसमें बहुत स नाम छूट गये हैं। इसका कारण यही हाया कि पुस्तक को इससे बड़ा करना संग्रहकर्ता को मंजूर न था। इन को ही पत्रों में इससे धब्दा मंजूर होना मुश्किल था। हाँ उड़ू कहानियों के विषय में हम कइ सकते हैं कि चुनाव उतना सुन्दर नहीं हुआ। फिर भी पुस्तक संग्रह करने योग्य है।

**मठयाली मीरा—लेखक श्री तुलसीराम शर्मा 'विमल'।**

इस पुस्तक में मीरा का जीवन चरित्र संभाषण के रूप में यानाँ क साथ मिला गया है। मातृक प्राणियों के लिए धम्बी थीर है। श्री शान्तिबाई रानीबाना ने इनको एक हजार प्रतिभाँ साहित्यागुराविमा को मुफ्त देने की प्रसंसीय उरागता की है। मीरा का जो चरित्र किशोरियों के रूप में मौजूद है, उसी का आक्षेप लिया गया है। काय विमल जी ने प्रकृति का आवरण हटा कर यथासं पर कुछ प्रकाश डाला जाता। यह सब है कि मीरा का चरित्र रोमांस है इतना सुन्दर कि सभी उससे मुग्ध हो जाते हैं। किन्ती न मीरा को यथासं रूप में जान की चेष्टा नहीं की लेकिन कभी न कभी तो यह पान विषी का करना ही पड़ेगा।

**सदाचार, शिष्टाचार और स्वास्थ्य—रचयिता श्री भास्कराज जीन।**

कौन नहीं चाहता कि उसके लड़कों का चरित्र और स्वास्थ्य बलवान हो। इन दादी-नी पुस्तक में चरित्र-शास्त्रमी विषयों पर छोड़-छोड़े प्रथम मरत भाषा में लिखे गये हैं मगर पुस्तक जिस रीती में लिखी गयी है उसमें वह भाषाओं के स्वाध्याय की बीज नहीं रही। ऐसे बूढ़ विषय उम्हें रुचकर नहीं हो गये। हाँ मुक्तों के लिए पुस्तक बड़ी उपयोगी है।

मीरा पदावली—सम्पादिना भीमती विष्णुकुमारी श्रीबास्वत 'मंजु' ।

हिन्दी के भक्त कवियों में पदों के लालित्य और तस्मीनता में मीरा का स्थान बहुत ऊँचा है । उनके रहस्यमय और रोमानी जीवन ने भी उनके पदों को और धाकपक बना दिया है । उन पदों का यह सटीक और प्रामाणिक सम्करण साहित्य-प्रेमियों के लिए घाबर की चीज है । मीरा के नियम में धब तक जो लोज हो चुकी है, सम्पादिका ने उनको पढ़ा है और बिबेक-बुद्धि से काप लेकर इतिहास का विवरणियों से पुस्क करने की चेष्टा की है । हम यह नहीं मान सकते कि मीरा जसी विचारशील स्त्री भक्ति में अपने को इतना भूम गयी होगी कि पति से उसे विरक्ति ही गयी होगी और बैमनस्य इतना बढ़ा होगा कि पति ने उसे बहर का प्यासा पीने को भेजा होगा और वह पी गयी होगी । जीवन का सामनस्य तो यह है कि मन की सभी कृतियाँ अपने-अपने स्थान पर रहें । किसी ईर्षी-बेवता की भक्ति हो जाने का यह भासव नहीं कि हम अपने पारि वारिक कठम्य भूम जायें । यह भक्ति नहीं पायनपन है सम्पादिका जी न सिखा है—

'जान पढ़ता है कि यह वंशकला साम्प्रदायिकता के रंग की बिरिये प्रधानता देने के लिए गढ़ी गयी है । धबका ये सब बटनाएँ लँबर मोबरज (मीरा के पति) की मृत्यु के बाद मटित हुई हों सम्भव है मीरा के साथ भी पति के घनाव में उनके कुटुम्बियों ने मनमाना भत्याचार किया हो ।

पुस्तक में मीराबाई की जीवनी उनकी कविता और मापा और मीरा की कविता में व्यवहृत शर्गों की बिबेचना की गयी है । इस सपह म कुल वा मी एक पद है । फुनोट में शब्दाव दिये गये हैं । इस तरह यह पुस्तक साहित्य के विद्याधियों के लिए बहुत उपयोमी हो गयी है ।

प्रेम वीथिका—सम्पादक रायबहादुर लाला नीलाराम ।

यह बुन्देलखंडी भाषा का एक ठीन वी सात का पुराना ग्रन्थ है । रचयिता है 'महर धनन्य । नियम है इच्छनीमा । लाला नीलाराम जी ने इन पुरान ग्रन्थ का पाठ शूद करके प्रकाशित कराया है । इस उद्य में घापका यह साहित्यानुदाग बेनकर हम बचित रह जाते हैं । ग्रन्थ म बिबिय लन्दा का प्रयोग हुआ है और कविता म रम भी है और लोच भी ।

### साम्प्रदाय का धिरुल

इस पुस्तक में श्री सम्पूर्णलिन्य भाषाव्य भरेदरेब जी वा श्रीप्रकाश बन्धु जय प्रकाशनारामध भाषि के साम्प्रदायी विचारों का संग्रह किया गया है । कुछ नियम यह है—'साम्प्रदायी समाज की कुछ बिरियेठार्द' 'स्वाधीनता संग्राम और समाजवादी क्रियम का वास्तविक स्वरूप' 'क्या बड़ी-बड़ी मशीना की जरूरत नहीं है' आदि । साम्प्रदा



भाष्यकार का मुख्य विषय है और हमें यह मालूम होने लगा है कि देश का उद्धार किसी न किसी रूप में समाजवाद के हाथों होगा। हाँ इतना कहना आवश्यक है, जैसा पंडित स्वामीजी ने बार-बार कहा है, कि हमारे सामने वर्तमान समस्या देश की स्वाधीनता है। जब तक साम्राज्यवाद का विषमता न होगा साम्यवाद की गाड़ी घाने न चलेगी। पुस्तक सामयिक है।

सहिरा —नेसाक की तेजनायक काक।

श्री तेजनायक की हिन्दी के कुशल गद्य-काव्य लेखक है। गद्य-काव्य की विशेषता है उसकी कोमलता उसके भावों की गहराई और मनोरहस्यों के ध्वनि देने की शक्ति। उसके गद्य-काव्यों में ये सभी गुण मौजूद हैं। इस संघर्ष की भूमिका का राम प्रसार त्रिपाठी ने लिखा है और 'हिन्दी-साहित्य में गद्य-काव्य' के नाम से तेजनायक की हिन्दी गद्य-काव्यों का आलोचनात्मक इतिहास लिखा है, जिससे मालूम होता है कि हिन्दी में साहित्य का यह अंग कितना सम्पन्न है। हमें उससे यह भी पता चला कि श्री रामप्रसाद की ने और स्वयं तेजनायक की ने अपने भावों को गद्य में लिखने के लिए और मारा मगर असफल रहे। इससे तो यही मालूम होता है कि जिनमें कविता शक्ति का अभाव है, वे लिखस होकर गद्य-गीत लिखकर चित्त हान्त कर बैठे हैं। हमारा क्या है, यद्यपि हमें इस विषय में कुछ कहने का अधिकार नहीं कि गद्य-गीत स्वतन्त्र वस्तु है और कवि जो कुछ पद्यों में नहीं कह पाता वह गद्य-गीतों में कहता है, नहीं की रवीन्द्रनाथ ठाकुर जैसे महान कवि ने गद्य-गीत क्यों लिखे होते। दोनों में अंतर है। कविता भावना प्रधान रचना है, गद्य-गीत अनुभूति-अवलम्ब। हम गद्य-गीत में केवल भावुकता पाकर अनुप्लव नहीं होते। स्वयं तेजनायक की की रचनाओं में अनुभूतियों की कमी नहीं है, हालाँकि अगर भावुकता की मात्रा कुछ कम और अनुभूतियों की मात्रा कुछ ज्यादा होती तो इनका मूल्य और बढ़ जाता।

जून १९३६



श्रद्धाजलिया



## मुन्शी गोरखप्रसाद 'इबरत'

स्वर्गीय मुंशी गोरखप्रसाद 'इबरत' छिद्रहस्त कवि थे। यद्यपि उनका पेशा बकामत था और वह मोरलपुर नगर के आस नकीनों में थे लेकिन कानूनी व्यस्तताओं के बीच भी अपनी कविता के अभ्यास के लिए कुछ न कुछ समय निकाल लिया करते थे। क्वालि की सामग्री न थी इसलिए बराबर अपनी कविता के प्रकाशन से बचते रहे। उनकी कविता का रंग मोलाता भावार्थ और हास्य से मिलता हुआ है। शैली सहज और सुमधुर हुई भाव सरल और बनाबट से जाती। शुरू में उनकी कुछ कविताएँ 'तूति ए द्वि' और 'अब पक्ष' में प्रकाशित हुई थीं और बहुत पसन्द की गयी थीं लेकिन जबानों के साथ धारम-प्रदशन की कामना भी जाती रही। जो कुछ मिलते थे वह सिद्ध अपने रिक्तबहाव और मानसिक सुप्ति के लिए मिलते थे। किसी उस्ताद के हाथिर् न ब इसी बजह से कविता में कहीं-कहीं त्रुटियाँ दिखायी पड़ती हैं। उनके दीवान में कुछ मुसद्द एक मसनवी कुछ फुटकर नग्मे और गजलों हैं। उनके साहबबादे बानू रबुपति छद्माप भी ए जिनका एक लेख जानना में छप चुका है, एक बिम्बा रिक्त और रवि सम्पन्न नवयुवक है। वह अपने स्वर्गीय पिता की रचनाओं का सम्मान कर रहे हैं और जन्मी ही दीवान प्रकाशित होया। नीचे हम उनके दीवान से कुछ शेर नक़्त कर रहे हैं। उनसे विरबद के अभ्यास की प्रीकृता और काव्य-प्रतिभा का सुन्दर परिचय मिल जायेगा—

कहीं है जो बेहतर नमूने सूर से जो धालम यहाँ पायकारा नहीं है

\* \* \*

कहती है रहे पाक लुबा से मैं कम नहीं मजदूर हूँ मगर कि उसे इतिवार है

\* \* \*

मैं बच हूँ न बार हूँ गुल हूँ न खार हूँ सूटे खिन्नी जिसे न कमी वह बहार हूँ

\* \* \*

मैं बोरे पुनूँ मैं न हुया धरम से बाहर

घाप अपने मरेवाँ को फाड़ा भी छिया भी

\* \* \*

क्या तुमको उबर तुमने तो बरबट भी न बदली

मैं रई से ती मर्तबा बैठा भी सठा भी

## हैंगामए हसरत

हैं दूर बहुत घर से साथी हैं न हमरम है  
 मातबर्बाकारी है कुछ खीफ है कुछ राम ह  
 कुछ घर की मुहब्बत है कुछ याद है यारों की  
 जाती हो गही रिम से नु पिछनी बहारों की  
 कुछ यारों की सोहबत का मुल्क घाँसों म छाया ह  
 कुछ जोरो मुहब्बत से बिल घपना भर घाया है  
 वह बल्ल भी क्या सुग है सब बोस्त जब घायस में  
 बासिदूको सजा बडे इक दूसर क बस म  
 प्रखसाऊ बरतते हा घायस म वह मिल जुमकर  
 और मुल्क उठाता हो हर एक का लिल जुमकर

\* \* \*

लेकिन नहीं कैफीयत यह घपने मुकद्दर मे  
 सीधा तो समाया है कुछ और भी इस घर म  
 कुछ और ही मकसद है इस उम्र तबीई का  
 हमबव जो हाथ घाये कुछ हाल कहीं जी का  
 उम्मीद भ्रमक घपनी है दूर से बिल्लाती  
 जब उसपे लपकता हूँ वह हाथ नहीं घाती  
 गो पेसे नजर मरे दुनिया का भ्रमेसा है  
 पर बल्ल मेरा मुकद्दो लिये जाता बरकेना है

\* \* \*

हाँ बल्ल तघम्मूम से क्या जाए जमी पर है  
 जयम है जजीरा है सहरा है समवर है  
 पस्ती है बसंधी है है बस्ती थी बीरला  
 दिलबन्ध मुमादत है है शौफते शाहना  
 यह शहर बहाँ हरवम हैंगामए हस्ती है  
 टकमालों में हलचल है पैलानों म मस्ती है  
 बाजारों म रोमक है वीतर्फा दुकानों से  
 इक मुल्क टपकता है सब ऊँचे मकानों से  
 यह सबब जमी उगता जिसमें मुनो जाला है  
 और जिसका हरम से भी कुछ हुस्र बोबाला है  
 इटलाती हुई जिस पर है बारे सबा जाती है

रासद है जहाँ धाकर भुल गय उदा आतो  
 ऊपर से धरसता है रक्षता वा जहाँ पा गी  
 शबनम सारे सभ्यता पर करती है दुस्वफसा गी  
 ये गहर कि जितसे है उग रोवों को शान्ती  
 ये भीम कि है जित पर पर गारते मुर्दाबी  
 ने बहुर गी मिलता बुल जितरा जितारा है  
 पानी ये रवी करती गोओं का शहारा है  
 भनरिरता समी जितरा मचरों म समया है  
 हर एक इशारा है यह मुझकी बतारा है  
 ही छूने उतकता म सब मेमते गेरी है  
 बाहोसों फिर म हूँ कभीयते मेरी है  
 जो पावराए सातक्य सब छत मुझम्यम है  
 अंत है शिकारों को भीर रीर जो गुलारा है  
 पर भेरा कि हर मुगधिन वितारा उखाते का  
 है वेगवा सुत होकर नंब भगो शिखारे का  
 सब बीरए कर भगवा यह सोतके रूवा है  
 ते तेकर नरा सोग उगम से परगवा है  
 रतता है भगभो जो हर मज गरंगवा  
 दित पर गही पढ़वा है बुत उतके भगर रावा  
 बेराबिद सातिर से बहवा गिरणु है  
 हर मूद से कमतर है पर रागमे खेहू है  
 हराए भरि दित म है कन् कहके मही रोता  
 ही बुत छो है पात भगने पर भीर भी कुत होवा  
 मैता ही गेता दित भी पाबगर हवत का है  
 दुनिया के कशाज्ज म दामम गेरा मतारा है  
 दित भगवा उरुगवा है हर ऐभी मगरत को  
 दुनिया के करोड़ों से आहत ओ ग होती हो  
 ओ सुते छरणी हो भगो दितो बीर की  
 कभीमते सातिर हो ओ रोरी रबीरा की  
 बुत सुल भिवा जितते ही दित के तरानों म  
 हर मीनी राग बाती हर मज हो जाना मे  
 दित मभमए दितकत मे मगरर रहे हरम  
 दनिया की मगधीं से वि त दूर रहे हरम

\*

\*

\*

पर हूँ कुरी ऐसी नदर रूप जमीं पर है  
प्रबोध में हसरत के जिसका नहीं निस्तर है  
जो भोग कि रहते हैं जो सब मकामों में  
कहते हैं कुरी जनकी है मे भरे जामों में  
बहु क्रोध का हृदयम जो हृदयदिया करता है  
कहता है इसी पर कुछ भासम यह गुब्बटा है  
धीर बसे ही मरता जो हृदयभक्तगी पर है  
कहता है निगाहों में उसकी बही संवर है  
लेकिन जो हृदयिष्ठ में बिम उनका टटोर्न में  
इक धीस भ्रमरने में कनई धमी लोर्न में  
महमों म बसायें ये हरचन्द किया बी का  
पर बहते सहर अब हा बहवान सुने बी का  
सब भावरे मेठी के धारोक्त म पसते हैं  
इक बहते मुयेमन तक बुनिया में मचसते हैं  
इक तीर पे नजर का है बस्त करम सब पर  
मनु में धुपा सबकी किन्मत का नबिरता है  
हाको म शुकुल बाकी तबबीर का रिता है  
जो भोग नहाते हैं महमस म पसीना म  
पाते हैं जरा टंक कुरकुरतबदा चीनों में  
जिस तर्ह मुसाफिर इक विम खस्ता बका-भाषा  
हसरतबदा भफसुर्वा धीर साफ बसर रीबा  
उम्मीदें लिये विम में उनहा बसा भाता हो  
गविस के फमामे की जो खाक उड़ता हो  
धीर पुस्ताने मज्जिम हो उसका बड़ी दूरी पर  
इक भीस पड़ी हो जिससे लुबुरी पर  
मैज्जान इसी हालत म हृदयमे बीरीना  
खाटी से जगा जिसकी ठंडा जो भरे सीना  
पर पाड़े ही धरें में बहु बोना बुता होकर  
बाक्रम गले विम विमकर हसरतबदा रो रोकर  
जाते रहे धाखिर जो धगमी रहे मज्जिम को  
सुहा एक बडी करके धरमान भरे विम को  
बीमी ही कुरी मबकी इक बम म धलता है  
उम्मीद की जामा म बरुलता का बाबा है



रह जाती प्रकृत हसरत है विस के बुझाने को  
उम्मीद धामी धामी धीर है धामी जाने को

\*

\*

\*

इक दम के लिए तनहा होने को धरा मुझको  
इन्सान की हामल पर रोने को जग मुझको  
ऐ बामे जमाना मे जो सबसे निरामा है  
बहु कष्टमन्त्रो हसरत से रूँ तहोबाला है  
इस उल्ल ठबीई की कमवस्त बड़ी थी वो  
प्रीकृत बनी धारम की सकल बड़ी थी वो  
हसरत मे जमाया जब इन्सान पे रंय धपना  
- शतान मे फाड़ा जब यह सीनए सग धपना

\*

\*

\*

नैरंगे जमाना की सब बुकसपुनी है  
तसकीन न हो विस को जिस्मत की जुबुनी है  
बुधमत है कहीं इतनी नेचर के लकीने म  
धासुदमी जो भर दे हसरत भरे सीने म  
एन तक कि यह बुनिया है अब तक कि यह इसरत है  
इक लसबसी लिन मे है हौनामए हसरत ह ।

जमाना नवम्बर १६१६

## स्वर्गीय पंडित मन्नन द्विवेदी

उर्दू को हसरत प्रकबर मरकूम की मीठ मे जो मुकसान पहुँचा है करिब-करीब  
जना ही अबदस्त मुकसान हिन्दी साहित्य को पंडित मन्नन त्रिबेदी मजपुरी की प्रसा-  
यक मरगु से पहुँचा है । प्रकबर की तरह मजपुरी भी भी जिन्ना रिज हास्यप्रमी कवि  
। धारके हास्य म एक छान साहित्यिक बपलता होती थी जो हिन्दी पाठका क रिमों  
पर्यं तक विबंगत की स्मृति को छात्रा रकत्रगी । इन पंक्तिमों के सतक को धारका  
रेख्य प्राप्त था । दो-एक बार उस धारकी रिस्मयी का निराना भी बनना पडा मगर  
गकी चुटकियों में इय की गध भी न हाती थी । मुमाकान हाते ही बाउ हँसो में उड़  
ती थी । धारकी उल्ल धभी दितीम-खलीम छान से क्या न थी । बहुत चुन्त धीर  
मे बग्न क इल-कट्ट मंवे-उड ने धारमी थ । मरत एमी धण्डी कि पड़े-मिगे मागों  
बहत कम को नमीब होती है मगर मीठ की धीनों म इमकी पहचान वहाँ ।

पञ्चपुरी की गोरखपुर जिले के रहनेवाले थे। इलाहाबाद यूनिवर्सिटी के प्रेमुएट होकर तड़सीनदारी के प्रोहरे पर नियुक्त थे। मगर इस प्रोहरे के ऊब पूरे कपड़े हुए थाप राष्ट्रीय धारोभनों में उल्लाह से योग बैठे थे। कुछ पर्थों को स्वाबो रूप से धापका सहयोग प्राप्त था। धापक 'गोभमानकारी समा' नाम की एक परिपद् बनायी थी। गोभमानार्थर उसके समापति थे। बहु बतमान परिस्थितियों धीर पटनाओं को ऐसे धापक धीर हास्यपुख बंग से निकलते थे कि पढ़ने से कमी थी न भरता था। धापकी एक-एक बल में नयापन होता था। कुछ धीरे-साहे सरीखदारों को पूरा बिरबास था कि गोभमानार्थर की जो बास्तब में कोई बोले-जागते व्यक्ति हैं। मरुसोस कि पञ्चपुरी की की शिब्यी का बड़ा हिस्सा सरकारी काबजों की खाना-पूरी में लथ हुआ। बीबिका की बिता ने धापको मौकरी के घेरे से बाहर न निकलने दिया।

धाप केवल कवि न थे बल्कि धार्मिकीय पद्यकार भी थे। भारती लैबन-थैसी बहुत सरल सुबरी मुझारेवार सोखी से मरी हुई, प्रवाह-पुख होती थी। कसम न रहता था। बनावट से धापको लफरत थी। तड़सीनदार होने के बाबनूर धाप बसह्योग में काम करते थे। बुर बहर इस्तेमान करते धीर धपने इलाके में भी लोगों से बहर इस्तेमान करने के लिए कहते थे। धार्मिक-सत्कार धापका विशेष पुख था इतना कि उल्लाह कमी धाप के लिए काकी न होती थी। बहुधा सांस्कृतिक धीर राष्ट्रीय धारो लनों की सेवा करते रहते थे धीर इमेता मुमनाम। धापका हरथ धप मौकरी बौड़ने का था लेकिन इसके पहले ही धाप दुनिया से बिचार गये। कुछ दब-बाहू दिन बुजार में पड़े रहे। धार्मिकीय बन तक धाप बोस्तों से धार्मिक्य नहीं करते रहे। मयद मौठ ने उम्को मुन लिया था कोई बधा कारण न हुई। परमात्मा से हमारी प्राचना है कि धापको शक्ति दे।

धमाना विसम्बर १६२१

## देशबन्धु चितरंजन दास

देशबन्धु दास उन महान् पुरुषों में थे जो राष्ट्रीय इतिहास में अपनी वागदार छोड़ जाते हैं, जो धार्मिकों के भाग्य-बिबाता होते हैं। जिनके दिन पूर्ण हो चुके होते हैं, जिनमें धर धीर राम की भङक तक नहीं रह पयो होती ऐगों ही की बीन दया से उठकर वे ऐंठ शक्तिमान राष्ट्रीय की बुनियाद डालते हैं कि देनेवाले बाँटें तने उँदनी बबलते हैं। किसे उम्भोर थी कि कमी पजाब में धार्मिक धीर धध्यामी से टकर सेनेवाली कोई संस्था बनेयी? कौन कह सकता था कि युगलों का धर्लब राज्य एक पड़ाही मरठे के हाथों नष्ट से (११) धापया? ऐगे कीरों के तिर पर भुष्ट नहीं होता सिद्धि धार्मिक के

उसको राजा ने ही होते हैं। उन्हें यही पर बैठने की हक नहीं होती पर जगता ने  
 हृदयों में उन्हें वह स्थान मिला जाता है जो राजा को भी ममस्तर नहीं हो सकता।  
 देशबन्धु दास इसी छोटी के मनुष्यों में थे। वह बड़े विद्वान बड़े बस्ता बड़े राजनीतिज्ञ  
 न रहे हों लेकिन उनमें वह प्रतिभा थी जिसने उन्हें विद्वानों में विद्वान बस्ताओं में  
 बस्ता और राजनीतिज्ञों में राजनीतिज्ञ बना दिया। उनके मन में केवल एक धर्मिताया थी और वह  
 पर अपना सबसब धन्य कर दिया। पर वह स्वतन्त्रता के मन्त्र थे और उन्हीं  
 को स्वदेश को स्वतन्त्र बनाने की। पर वह स्वतन्त्रता देनी के उन मन्त्रों में न थे जो  
 मन्दिर में गया फाड़-फाड़कर पाते हैं, अपने सिद्धों से मन्दिर की चौकट को रमक  
 शकते हैं और उन्हीं अन्तिम और उपासना को धक्कर पत्थर पर मान और पद का जीना  
 बना लेते हैं। उन्होंने अपनी सारी सम्पत्ति यहाँ तक कि अपने प्राण भी उन देवों के  
 बरखों पर चढ़ा दिये। यही कारण था कि भारतवर्ष का बच्चा-बच्चा उन पर प्राण  
 देता था। वह पाति के सन्ने सेवक थे और जानि भी उन पर सन्ने दिल से नम करती  
 थी। उन्होंने बहुत बड़े बिलों से राजनीतिक शासक में पग रखा था लेकिन अपने मनबल  
 अपने धर्म्य उत्साह, असीम उदारता और अनुपम त्याग के कारण इस बड़े मम्य में  
 उन्होंने भारतवर्ष में एक युगान्तर-सा उपस्थित कर दिया। भारत में प्रजा पक्ष को  
 रायव ही कर्मो सकलता मिलती है। प्रजा को इच्छाएँ और आशाएँ सौ कुछनी जाने ही  
 के लिए होती हैं। किन्तु वह गौरव देशबन्धु ही को प्राप्त हुआ कि उन्होंने स्वराज्य दल  
 को जिस उद्देश्य से स्थापित किया था वह पटा हो गया। उन्होंने ही शासन का धन्त  
 करने को ठानी थी। उनकी विजय से भारत को अपना अन्तिम लक्ष्य प्राप्त करने में  
 कोई सहायता मिलेगी या नहीं इसके विषय में कुछ नहीं कहा जा सकता। किन्तु  
 देशबन्धु ने यह सिद्ध कर दिया कि भारत का पश्चिमी राजनीति मनमन्ने बना है और  
 उसे बढ़ा देने के लिए ही पलायन जा सकता।

ब्रिटेन के पिता बन्धु मुबनमोहन दास कलकत्ता हार्डकोट में बसायत करते  
 थे। वह बहुत ही उदार हृदय पुरुष थे। जो कमाते थे उसने ज्यादा खर्च करते थे।  
 गरीबों को वह दान देते थे। जो कमाते थे उसने ज्यादा खर्च करते थे।  
 ब्रिटेन उन दिनों विभाजित में थे। वहाँ से वापस आकर उन्होंने स्थिति बहुत तराब  
 देती। पिता की बचतों के कारण पहले उनमें सोगों में स्थायी की कोई सहाय देने  
 की ईयाद न हुआ। पर गौरीधाम बैरिस्टर की इसकी बहुत जरूरत होती है। धात्रि  
 बनकर से निरास होकर ब्रिटेन को मुकदमा में बचायत करती पड़ी और यहाँ  
 बोड़े ही दिनों में उन्होंने श्रीमती के बीच में अन्ध्या नाम पदा कर लिया। तब वह  
 कलकत्ते फिर लौट आये और हार्डकोट में बसायत करने लगे। यद्यपि धामदनी धानी  
 लक्ष के लिए काय्य न होती थी पर धामको कर्जा धान करनी की किन्तु हमेशा धानी  
 प्यती थी। बस्तायतों की मियाद मुजर चुकी थी। बानुम महात्मनी भी उनका पुत्र न

॥ देशबन्धु ब्रिटेन दास ॥

कर सकता था। पर चित्तरंजन धनीति की धाड़ में छिपनवासे धाड़मी न थे। मियाद मुजर जाने से कज नहीं मिट सकता। कज तो घटा करन ही से मिट सकता है। ज्यों ही हाथ फैला चित्तरंजन ने अपने पिता का देना पाई-पाई चुका दिया। महाजन मिराठ हो चुका था। उसका कथन है कि जब मेरे पास एक पहुँचा तो मैं चकित हो गया। मीका पाकर भी जो सोच भय या कर्तव्य से विभ्रमित नहीं होये वे ही सच्चे धर्मात्मा हैं। इसी एक काम से चित्तरंजन की बिबेकसोमता का पता लग जाता है।

मि दास को जब अपने परो में ख्याति प्राप्त होने लगी। उनकी जिद्द सीसी और बहस को देखकर उस विद्या के विशारदों को अनुमान होने लगा कि किसी दिन यह युवक ख्याति के तिलक पर पहुँचवा। सन् ११८८ क पूब एक मि दास को कोई ऐसा मार्के का मुकदमा न मिला था जिससे उनकी बुद्धि की कुसलता का परिचय मिलता। इतने में धमीपुर के बम का अभियोप्य जमा। बाबू धरविन्द घोष और उनके कई सहकारियों पर मुकदमा जमा। इस मुकदमे में सारे भारतवर्ष से हलचल पैदा कर दी। सारे देश की धाँसे उसकी धोर मयी हुई थी। सरकार की धोर से प्रसिद्ध बैरिस्टर मि नाटन पैरवी कर रहे थे। मि दास ने जी लोडकर इन मुकदम की पैरवी की। इन दिनों उन्हें कभी दा बजे सं पहले राठ को सोना नसीब न होता था। मि दास केवल धरविन्द बाबू के बकास ही न थे उनके भक्त भी थे। धाक्षिण धापकी मेरुमल ठिकाने लयी और धरविन्द बाबू को प्रधान अभियुक्त वे बरी कर दिये गये।

इस सफलता ने मि दास को बकीलो की प्रथम जेसी में जा बिठवा उनकी मज्जा प्रबल बकीलों में म हाम लगी। लने लने धापकी इतनी ख्याति हुई कि धापकी सामाना धामदनी तीन लाख तक पहुँच गयी। ब्यास में लाख सिगहा के सिवा धापके जोड़ का दूसरा कानूनवा न था। लार्ड सिगहा धमर बहस में ख्यावा कुशल थे तो जिद्द में मि दास का कोई सानी न था। बिलेपता यह भी कि मुकदमा जितना ही कमजोर और साछीन होता था उतनी ही उनकी बुद्धि उत्तम लडती थी। बेजान मुकदमे उनके हाथ में धाकर पनप जाठ थे। राजनीतिक अभियोप्यो पर तो माना उनका इबारा ही था।

जिन दिनों बाबू धरविन्द घोष पर मुकदमा चल रहा था बन्धु बिपिन बन्धुपाल भी उस मुकदमे में गवाही देने के लिए तलब किये गये। बाबू साहब ने गवाही देने में इनकार किया। सबको बिरबाम हो गया कि धर इबरात पर धाछठ धायी। कानून की धारा इस विषय में गाफ थी। धरा भी गन्हेह जा भ्रम न था। धचने का कोई उपाय न था। मि दास ने धाक्षिण यह व्यक्ति निकाली कि यह धारा धंघडी मीठि-बिधान पर धबमविठ है भारतवर्ष की नैतिक धोर सामाजिक धरल्ला इन धाठ के बिरुद्ध है। इन्मीठ की मीठि में जो बाठ उचित हो वह भारत में अनुचित हो लकटी है और उस धारा का यही प्रयोग करमा सबबा म्याप-बिरुद्ध होवा। धागल इस युक्ति को एग प्रबल

प्रमाओं से सिद्ध किया कि बिपिन बाबू को केवल छह मास की मारी कैद की सजा मिली ।

यद्यपि अब तक मि दास राजनीति के क्षेत्र में अपने वे लेकिन राजनीतिक संशाम में उनका काम किसी बड़े से बड़े नेता से कम न था । धापकी घमिलखि का परिचय उसी समय मिलने लगा था । धापकी बार-बार इच्छा होती थी कि बकानठ को ठिसोबसि देकर रख-बाज में भूषण पड़े किन्तु उन दिनों धरविष्ण घोष और बिपिन बाबू पास दोनों ही राष्ट्रीय गणना संभाषे हुए थे । इत्यसिध मि दास ने धपने की रोक ।

मि दास का सावजनिक जीवन १९१७ में शुरू हुआ जब इम्लीड की सिबरस सदनसस ने बहुत दिनों क बाद धपनी हस्ती का सबूत दिया और घोषणा करके यह स्वीकार किया कि भारतवर्ष का राजनीतिक लक्ष्य स्वराज्य है । वो ससस तक मि दास बंगाल के राजनीतिक जीवन में नये बिषाओं का संचार करते रहे । धमोपुर के धमियोग के बाद बवाल में नरस बिचारवासों की विजय-सी हो गयी थी । राजनीतिज्ञों को इस घोषणा में मुण हो गुला नबर धाते थे । वे बुझी से पूने न समाले थे । उन दिनों नरस और गरस दसों में नय मुधारा पर जो बार-विवाद हुए, और धान्दोलन ने धस में जो रूप बाल्ल किया वह धमी कम की बात है । उसका उल्लेख करने की यहाँ जरूरत नहीं । केवल इतना कहना काफी है कि मि दास पर भी पंजाब के धरवाचारा का बही धसर हुआ जो धय्य कितने हा सहून्य प्रक्रियों पर । धाप भी धसहयोग दस में शामिल हो गये । कौधस की धार से उन धरवाचारों को तहकीकस करने के लिए जो कनेय कानस को पश उनमें मि दास भी शामिल थे ।

इसमें सन्देह नहीं कि धसहयोग का माय कौनों से भरा हुआ था धार महात्मा गांधी के जेस बाने के बाद कोई एना न रह गया था जो उन धार को संभालता । धरमस्यता की कुछ एनी प्रतिक्रिया शुरू हुई कि धान्दोलन बिमकुल बजान-ना हो गया । देहसों में जाते हुए लोगों क रोपे लख जाने लगे । उस धरमस्यता का दूर करने और जतीय उत्साह की किली हों पर लमाने क लिए मि दास का धरडमिन में जाकर बबनमेन्ट का विरोध करने की सूझ गयी । यही ऐसा माग था जिमका इमार नेताओं का कुछ अनुभव था । धय्य कोई माय उन्हें सूझ ही न सकता था । धागिर स्वराज पार्टी का धय्य हुआ और महात्मा गांधी क धूट कर धाते-धाते इम पार्टी न दस की बहुत कुछ सहानुभूति प्राप्त कर सी । मि दास यद्यपि पहली बार यह प्रस्ताव स्वीकार न कर सके पर उन्होंने हिम्मत न हारो और कौधस को उनका प्रस्ताव मानना ही पड़ा । यह सब से बड़ी विजय थी जो मि दास को धसन जीवन में प्राप्त हुई और इममें सन्देह नहीं कि जिम बशा में भारत देश उम्माह सय्य हा रहा था उनी में धापने

उत्साही पुरुषों को काम करन का एक रास्ता दिखा दिया । पर असहयोग आन्दोलन की उठी दिन पूर्वाहृति भी हो गयी । भारी पत्थर का सब ने चूम कर छोड़ दिया । कांग्रेस की मेम्बरी धीरे असहयोग दोनों में नैसर्गिक विरोध था । कांग्रेस में जाना सहयोग के मुँह में जाना का धीरे धाव ब रंकाए पूरी हो रही हैं जो उन दिनों कुछ भोषों के मन में उठी थीं । मि दास ने अपनी अग्रिम बकलुता में सहयोग का संकेत भी किया था धीरे पं मोतीलाल नेहरू ने रीएडहस्ट कमेटी में सम्मिलित होकर बतला दिया कि अब उन्हें बजारत स्वीकार करने में कोई आपत्ति न होगी । यह हमारी राजनीतिक पराधीनता धीरे असमयता का कदणामनक वुरय है ।

मगर कुछ भी हो मि दास ने हमारे राजनीतिक जीवन का आर्य्य बहुत ऊँचा कर दिया है । अब राजनीति केवल कांग्रेस या काँग्रेस के प्लेटफारम पर नहीं रही । यह अब धारम बलिदान का बुररा नाम है । अब वही प्राणी हुमाए नेता बनने का दावा कर सकता है जो जाति के लिए त्याग कर चुका हो जिसने अपने को जाति के ह्राप में समर्पित कर लिया हो जिसका चरित्र उज्ज्वल हो जिसने अपने मन को जीत लिया हो धीरे जो कड़ी से कड़ी धाँच सह कर कर निकल धाँचे । मि दास के स्वराज्य का आराय भी वह न था जिसकी साधारणतः कल्पना की जाती है वह परिषदी मनुने का स्वराज न चाहते थे । वह तो यथाथ न बनियो का राग्य है, भारत के लिए वह ऐसा स्वराज्य चाहते थे जिसमें अरीबो के अधिकार प्रदान हो । देहता की उन्नति धीरे स्वास्य उनके स्वराज्य का सबसे उज्ज्वल भाग था । वह बड़े-बड़े शहरों की समृद्धि बुद्धि के पक्ष में न थे । इसे वह नवीन सम्पत्ता का कलक समझते थे । वह देहता में ऐसे केन्द्र स्वाल बनाता चाहते थे जो स्वावलम्बी हों जिसकी सारी जरूरतें वहीं पूरी हो पायें । इन्हीं केन्द्रों को वह अपने स्वराज्य का प्रवेश-द्वार समझते थे । सारंगत यह कि वह भारतीय जनता को मरमले शिक्षित समाज के पंवे से चुकना चाहते थे । वह इस देश को योरोप की नकल से बाह रल कर राष्ट्रीयता की धीरे जीचना चाहते थे । उनका कथन था कि यदि देहता में सड़कें बन जाय सड़कें धीरे रोसनी का प्रबल हो जाय तो कोई कारण नहीं कि बहुत से वे व्यवसाय देहता में न किये जा सकें जो अब शहरों ही में किये जाते हैं । उन्हें भारतवप से असीम प्रेम था । उनकी यह धमिताया थी कि मैं इसी देश में फिर जगम नूँ धीरे फिर इसकी सेवा में जीवन बिताऊँ । उनकी देश प्रक्ति में अधिकार-ग्रम नहीं छिपा था । बैशमक्ति ने उनकी धन्तरात्मा में धर कर लिया था । धीरे उनकी प्रक्ति भारत ही तक मर्यादित न थी । वह अतिवार्ह संगठन के भी अनुमोदक थे । यदि अकाल मूरयु न उन्हें कुछ दिनों का अवकाश दिया होता तो वह उस बहुद् राष में भी अपनी कीर्ति का चिह्न अवरय छोड़ जाते ।

राजनीति हमेशा से एक बरनाम चीज है । यहाँ यह सब कुछ उचित धीरे अम्य है, जिससे हमारा काम निकले । यहाँ धीरिय की परल परिस्थाम से होती है । यदि

कुटिलता सफल हो तो खेप्ट है, उबारता असफल हो तो स्वाय्य है । भारतवर्ष में भी पहले इसी ढंग की राजनीति चलती थी । यहाँ सफ़ाई और ईमानदारी को अस्मृत न थी । महात्मा गांधी पहले देश भक्त हैं जिन्होंने राजनीति के मामले से यह बलक का दाग मिटाने की चेष्टा की और राजनीति को 'सत्यवादिता' का समानार्थक बना लिया । मि दास की राजनीति भी निष्कर्षक थी । उन्होंने कभी कुटिल चालों से अपना काम नहीं मैला किया कभी धाँधली नहीं की । जब बार किया तो मसकार कर कभी बाँध के नीचे लीर न मारा । उनकी बाढ़ी और व्यवहार में कोई भेद न होता था । उनके हृदय में युष्त बलों के लिए कोई प्रेरणा म्यान न था । वह उन राजनीतिज्ञों में न थे जो लक्ष्य प्राप्त ही को राजनीति का प्राण समझते हैं । जिनका मार्ग जीवन मरण पराई धानने और चिक्की-बुपड़ा बाँटने बनाने में कट जाता है जो मन में छोटे धिपलर की मूँह से मिस्री के दाने बोल सकते हैं । यहाँ तो हृदय धाड़ने की भाँति निमल था । जो मन में था वही मूँह पर, बाँहे चिक्की को बुरा मने या भसा । इसी स्वच्छता के कारण कई बार पब्लिसिटी को उन पर अनुचित मन्वह हुआ । यहाँ तक कि धात्रि वही सन्देश स्वराज्य-मन पर काम कानून के रूप में बल बन कर गिरा । धमी लक्ष सन्देश के बाँध कट नहीं हैं । मि दास शान्ति की मूर्ति थे । यह संदेश सबसे कठोर धाधान था जो उन पर क्रिया जा सकता था । यह धाधात उनकी धात्मा पर था । इन सन्देशों को मिदास के लिए मि दास को बार-बार अपनी सफ़ाई लेनी पड़ी और धाधिर उनकी कपीरपुत्वासी बकलता ने किसी धंश तक सन्देश को हटाया हासति उन धवमर पर भी उन्होंने साफ-साफ कह दिया कि पशु बल का प्रयोग परि प्रजा की धोर से निष है तो सरकार की धोर से वह धीर भी धाधितमलक है । कानून बही है जिस समाज धपने मुक्त और कस्याख के लिए धावरयक समग्रता हो । जो कानून समाज में धशान्ति और लक्ष्य पैदा करे, वह कानून नहीं । धारधय तो पही है कि एने धामनवारी पुष्प के धिपय में एसा सन्देश क्यों कर हुआ । धमल में यह केवल एक बहाना का स्वराज्य का परास्त करण का उसकी शक्ति को हुरने का । मि दास जडवारी न थे । वह निष्कल और हृदा की कल्पना भी न कर सकते थे । सेवा और शक्ति में ही उनकी धात्मा को शान्ति मिलती थी । जहाँ स्वाय्य और समपक्ष के भाव राज्य बर्ये हों वहाँ हृदा और पश्यन के लिए स्वाय्य बही ? उन्हें तो प्रत्यक एतिहासिक घटना में ईरबरीय प्ररणा धिपी हुई मानूम होती थी । भारत ने इतिहास में भी वह ईरबरीय प्ररणा का स्वल्प देखते थे । धाधों का धागमन धोर धनाय धाधियों में उनका मनमोल बीट धम का प्रचार, वैरिध धम का पुनरुद्धार धमनमानों का धाधमना धंधरा का प्रचार में सारी घटनाएँ एक उसी प्रेरणा की मृषणा की कथियाँ थीं और वह सधर क था ? वह या भारतवर्ष को संयकत और संगठित करके राज्यों के बरबार में उचित रूप बिठाना भारत के धाध्यायिध प्रकाश से संसार का धाधोचित करना उन





आपका दिखावा । आपने लपक कर कहा उनके हाथ से छीन लिया और इतना उधने  
 कूरे मानों कोई पड़ी हुई लिपि हाथ था गयी ।

सन् १९२२ में जब महात्मा गांधी पच्छिम बंगाल के सत्याग्रहियों के लिए बंदा  
 मीथन कसकत गये थे तब मिस्टर राम के पास बैंक में कुमसोमह ली गये थे । धारकी  
 बकालत उस वकन बहुत बर्बादी न थी और आधिर दशा भी चिन्तामय हो गयी थी ।  
 पर धारन बहु मय स्या महात्मा जी को रेंट कर दिया । आपकी बायिक धामरनी लोन  
 साय के समयग भी भेकिन आपन उसकी बर्णमात्र परबाह न को । यह परिवाग्नी  
 थी जिनने आपको इतना प्रभावशाली बना दिया था । एक बार एक महाराज को जिनने  
 उनकी बिरोप मित्रता न थी बिना मित्रा-पत्री क्रिये अन्टाइम द्वार गये दे दिव । उन  
 महाराज न बर्चित हाकर पुछा—आपको मुझ पर इतना विरहाम क्यों कर हुआ ? आपने  
 कहा—विरहाम को बात ता अब होता है जब मैं किसी वूमरे को देता । मने ना गसा  
 मामूम हो रहा है कि मैं अपने ही को दे रहा हूँ । अंग्रेजी के ठीक विज्ञान हात पर भी  
 आपका जीवन नारतोय था । धार अपन कुटुम्ब के साथ मिलकर प्रेम में रहते थे । आप  
 जो कुछ पना करते थे उसमें धर मय का द्विम्बा था । यह नहीं कि अपन बाय-बर्बों  
 के भरल-योपल की धन में धार अपन सम्बन्धिया को मूस बायें । धारको मगीत और  
 कविता में प्रेम था । स्वयं ना बना मनाहुर भाषण्य कविता करते थे । धारकी गचनाओं  
 में 'मागर-मपीत बहुत सुन्दर है । समय बरान गरी उपदेश नहा कजस मफिन है एक  
 भक्ति-बिह्वम आत्मा के उद्गार है और एक माधुर्योसमक व पवित्र मनामात्र है । क्या  
 उनसे ये शब्द हम मूस जानगे—मने धरन प्यारे देश को बचाने में बहानी में  
 बहाने में सम्पत्ति में विपत्ति में मरैब और मभी बराधों में प्यार किया है । नन अपने  
 हृदय और अपनी आत्मा में उमका मूर्ति को अहित कर दिया है और अब अन्त समय  
 निकट धार पर बहु चिह्न और भी उज्ज्वल और प्रकाशमय हा गया है ।

माधुरी जुलाई १९२५

## मौलाना हसरत मोहानी

धार मुझे ज्ञानि की सम्पौर दयना हा जीनी जागनी बालना-बान्ठी मन्वीर,  
 अपना माटी विभूति मारा क्या के साथ ता मौलाना हसरत मोहानी को दया । मुझे  
 शक होगा कि ज्ञानि के रूप और लम्ब में कई मादुरय मरी हाता । मेरिन क्या पा ?  
 बिमकुम नापारण मजदूर जेना मय व किसी मीब में देय मजने हा । अहर पर तम  
 और प्रनिता और मद्यम का नाम मरी । गाथा को दया । हमने रसद गरीब मरल  
 देहानी मृग और निमयी होयी ? बन एमा मानूम होता है कि कई मजदूर धनी

अप करके लीटा है। हुसरत के चेहर पर भी वही नम्रता है, वही पीनता है, पर उसके  
 स्वर शक्ति का समग्र समग्र सहारे मार रहा है। ठिंगना कद स्मृतता की धोर मुकी  
 है मुमठित देह, सजिना रंग चेहर पर चेकक के वाण छसछठी बाड़ी फलन धीर  
 माइता से जोसों बुर स्वयं धीर निपह की मुति जिसे रईवार यशने धीर छहर से  
 सामाजिक प्रेम है। धनोमक के टाण-बाह रंज-डग का बाणु कभी सम पर नहीं बना।  
 न निरुचय नहीं कर सकते पर हमने तो उन्हें हमेशा ध्यान के विचारक कमर फसे  
 सवार पींचे पाया। मुसममानों म सापर हुसरत ही बह बुजुप है जिन्होंने धाय से  
 कह बप पहले भाउत की पूरी साजारी की कल्पना की धीर धाम तक उसी पर कायय  
 । पहले-पहल बह स्वर्गीय महारमा तिलक है धनुषायी हुए। नरम राजनीति म उनकी  
 न लुचियल के लिए कोई विचार कोई वचि न थी। चोड़े ही दिना पं बह अपने मुक  
 की चार कुचम धीर धाले बह गये धीर उस समय पूछ स्वराज का इच्छ बजाया बह  
 प्रिस का सम से नर्म नेता भी पूछ स्वराज का नाम लेते कर्पिता था। उस बमाने मे  
 उरत का कोई सापी न था लोग उन्हें कलकी समझते थे पर बह जो प्रपनी धुन का  
 का वा। अपने मध्य से उसने कभो मुँह नहीं मोड़ा। नेहक रिपोट ने बहुत से मुसल-  
 नों को काँग्रेस से प्रलग कर दिया। पूरी साजारी का धीबाना हुसरत भी उस रिपोट  
 (धुरमन हो गया। मौलाना के विचारों म उस बन्ध हिन्दुधों से विरोध की भ्रमक  
 ले लवी थी। उनके हिन्दू विरो की समझ म उनकी बह नीति न घाटी थी। मे सम  
 में लवे इन पर भी नोकरछाही का बाणु बल गया पर सब निश्चित हुआ कि मौलाना  
 ने माप से बरा भी विचलित नहीं हुए थे। नेहक-रिपोट का भारत का बोपेन्मिन  
 टिस। मौलाना खूब जानते हैं कि जब तक भारत की नयाम वंशको के हाथ म रहेगी  
 धीर शासन व्यवस्था चिठनी ही निर्वाण क्या न हो उसका संघासन इस प्रकार किया  
 सकता है, मिस-मिस जासियो धीर मजहनों को इन नीति सहाय्य वा सकता है कि  
 करछाही का हमेशा बोलबाला रहे। इसलिए क्या ही काँग्रेस ने पूछ स्वराज का  
 पाल स्वीकार किया मौलाना हुसरत संघास म कूब पड़े। उन्होंने हिन्दू-मुस्लिम सम  
 ति की बरीबा नहीं की क्योंकि बह जानते हैं कि वर्तमान बचाधो म कोई समझौता  
 ना प्रसन्नब है। यह सभाम का समय है, समझौते का समय बल को धायेगा बब कि  
 बय प्राप्त हो जायगी। बिचन ही बने हुए लोग जो काँग्रेस का विरोध इसलिए करते  
 कि बह तो ओमीनियल स्टेट्स को अपना इह बनाई हुए है धीर हम स्वाधीनता के  
 शासक हैं काँग्रेस का कर्षो साध हैं बह लोग धाम समझौते का बहाना निकलकर बाति  
 धीरों म बुल भोक्ता धीर अपनी शान बनाये रखना चाहते हैं पर कौम उन्हें पूब  
 मरम रही है धीर अब उनक पत्र में धालेबानी नहीं।

मौलाना हुसरत का समस्त जीवन ही यत है। धीरों की तरह उन्होंने कानून  
 बना बमाने की इच्छा नहीं की सरकारी नोकरी के लिए कभी परदार की बीजट

पर नाक नहीं रगड़ो। बिघी लेने के बाद ही उन्होंने 'उडू-मुधस्ता' नामक साहित्यिक पत्रिका प्रतीयुद्ध में निकाली थीर एक महत् तक उसे चलाते रहे। जब वह बेम चले गये तो पत्रिका बन्द हो गयी। कुछ दिनों से आपने मुस्तकिम नाम का दैनिक पत्र निकाला है और उसी को चला रहे हैं। 'उडू-मुधस्ता' के दो धाध्य वे—साहित्य और राज नीति। उनके साहित्यिक भाग में जितनी सुबुधि और मौलिकता होती थी उसके राज-नीतिक भाग में उतनी ही निर्माकता और उदारता। उडू-साहित्य के उत्थान में मौनाना ने बी काम किया है वह चिरस्थायी रहेगा।

मौनाना हुसरत उडू के चास कवि है और उडू कवियों में उनका स्थान सबसे ऊचा नहीं तो किसी से कम भी नहीं। बानुति के माव तो आपके कनाम में मिलने मिलने उडू के किसी कवि क कलाय में नहीं मिल सकते। उडू कविता के पुराने रग को निमाते हुए उन्होंने नयी उममें और उद्गारों को उममें एसा मरा है कि उनका कलाय अपने रग में निराला है। प्रम क रूस्थ जितनी सुबी से आपने दिखाये हैं जितनी मार्मिकता से उसका चित्रण किया है, हम बाव से कह सकते हैं कि उडू के किसी कवि में भी नहीं किया और शब्द योजना तो आपका हिस्सा है। उसमें कोई आपका सानी नहीं। आपक शरों में फिटने एसे शेर हैं, जिनमें दोहरे शब्द निकसते हैं। साधारण तीर पर बखिय तो वह मामूली शृंगार का शेर है, लेकिन बरा और से पड़िय तो आपको उसमें एक बसरा ही समी विलासो बगा—उसमें धाजारी के बीबान की तड़प है, नामा है, प्ररिपाद है। उडू क प्राचीन साहित्य की इतनी खोज भी किसी ने कम ही की होगी। बाव उडू के पुराने कवियों में जो उडू को जनता को इतनी ग्लिचस्ती है इसका सेहरा हुसरत ही के सिर है।

१९२१ क असहयोग आन्दोलन में कानपुर में स्वदेशी कपड़ों की एक दुकान 'सितायुठ स्टोर' के नाम से खुली थी। हुसरत उसके मन्जर वे। उसी दुकान से मिता हुमा स्वदेशी बरनों का भण्डार था। भण्डार में बिजली की रोशनी और एक से मपर सितायुठ स्टोर में इन उडू-मुधस्ता का गुडर म था। राज का यह सेबक ताड़ की एक पंक्तिपान लिये बैठ रहता और जब ममी बहुत सछलती तो उस भ्रम लेता था। यह उनकी सारमी पमन्ध का मुदिकत पमन्ध प्रकृति की एक छोटी-सी मिताय है। ममीरी के चोचलों से उन्हें पूछा है। जिस जिन में धाजारी की जपन समायी हुई हो जमे टोमटम से क्या मतमब। धाजारी पहल दिन से शुरू होती है और दिन को धाजारी यही ग्याव मही निपध है। जो धपमी उबकरलों का मुलाय नहीं वह हमेशा धाजार है। जो सोप दिवावे और टट के गमाम होकर धाजारी की रट भपाते हैं वे धाजारी की बचनय करते हैं।

एक बार कानपुर के डी ए बी कासेज में हम प्रस्ताव पर बरम हुई—स्वराज छोटी-छोटी किन्तों में मिदा जाला बाझिए। बिबट धीरे-धीरे म थी। रा नीचानचण प्रवान वे। हमरत भी मीमू वे। सारर धाजारी धंधवी धोमने का धम्याय नहीं है। बापन के

कितने ही धर्म्य लोडरों की भाँति अंग्रेजी में बात करना थाप अपने लिए शान की बात नहीं समझते । थाप मच पर गये और दो बार बाक्य बोसकर अपने धामे पर उन थोड़े से लडरों में थाप एक पूरा ब्याख्यान दे धामे ।

किसी धरसे अंक में हम भीमाना हसरत की काब्य-कला की बर्चा करेंगे ।

मई १९३०

## मुंशा बिशुननारायण भार्गव

मुंशी लखन किरोर के प्रतिष्ठित बरने का यह सुरब ठीक मध्याह्न के समय हुआ । स्वर्गीय मुंशी बिशुननारायण के बीबन का एक-एक कब रईस था । बुबियाँ सब थीं ऐब एक भी नहीं । मुरीबत में पुठने थे । किसी याचक को निरस्त करना उनहुनि सीबा ही न था । किसी दोस्त का विल ठोड़ना उनकी शक्ति से बाहर था । कमचारियों की सख्या ह्जारों तक पहुँचती थी मगर कमी किसी को तेज निपाह से न देखा । मदन के मामले सामने धामे अयोम्यता और काम के बीमेपन की शिकायतें रोब ही घाटी रूठी थीं स्पष्ट बरनीयती की बटनाएँ भी बार-बार सामने धायी पर हमेशा दरमुबर कर आते थे । यह लूनी उनमे कमबोरी की हृष तक थी । हससे बहुत बार काठेबार को मुफ्तान पहुँचता था और जिन लोयो के घर पर बिम्बेशारी थी उन्हें नीचा देखना पड़ता था ।

द्विबनत की अवस्था धामी कुछ न थी । लखनऊ का यह बिबा-अमी बरना धामानु हुआ है । स्वर्गीय मुंशी प्रमाणनारायण साहब ने बयानिस साल की उम्र में इस संसार में प्रस्नान किया उनके पुपुत्र ने कुछ धीर बनी कर दी धमी बीतीसवीं ही साल था ।

मझोला छब बबनी ह्दही धीर बीहरे बरन के मुबर धाबनी थे । पन्दुनी रंय रीबशर मुल्ले बड़ी-बड़ी धाँकों में सज्जनता धीर जमा की रूपक । उहन-सहन बिलकुल साधा था । बाहर निकलते तो धाचकम धीर बुन्ध पाबापा बरन पर होता घर पर छस्ट रैप । बर पर कुर्ता धीर धोती पहनते थे । हुक्के धीर पान का शौक था ।

उनका दरबार हर धाम्नी के लिए मुसा रहता था । न काइ मेबने की बकरत में इतना करान की पाबन्दी । बीबानकामे के सामने बरामधे में बैठ हुक्का पी रहे हैं । बीरत धीर क-बारी याचक धीर मरजमन्ध सभी धाते हैं धीर धाम्नी धरगत बटनाकर बने आते हैं । सबम मकर्स प्रम धीर सज्जनता से पहा धाते हैं । स्वभाव में धमएड का नाम

नहीं दमन की मन्त्र नहीं मूठे शिष्टाचार की छाया नहीं। प्रथमोप वह जगह हमारा के लिए जाती हो गयी।

स्वभाव में दानशीलता मरी हुई थी। साधनों से नहीं ज्यादा दिल के धनी थे। शीघ्र को लटाने की चीज समझते थे। उनके लिए हमने बहुत बड़ी रियासत की जम्मत की। हम संघों में उनका दया का हाथ अपने चौहर न दिखा सकता था जैसे नपोविमल को बरतमानों की एक टोली का प्रथम बना दिया गया तो जैसे घरकी पोटे को घाते में बन कर दिया गया हो।

कर्मचारियों के साथ क हाथा को सम्बा होते देखते थे मगर शिष्टाचार का हक उबाल पर न मारते थे। स्वभाव बैरान्य की धार मचा हुआ था। साधु-सन्तों के कमलाकों पर उन्हें पुरु विरवास था। सुत्र साधु-मन्त्र न थे लेकिन स्वभाव में यह गुण प्रवरय था। जहाँ तक बलीस रूमे धीर नफे-नरमान से बधमर रूमे का सम्बन्ध है वह साधु-मन्त्रों न नहीं ज्यादा साधु-मन्त्र थे। दुनिया से दिल कभी नहीं लगाया। जब तक जिये बेलायत जिये। नुकसान हुआ तो परवाह नहीं प्राप्ता हुआ तो परबाह नहीं। प्राप्ता हुआ तो बरा मुस्कराये नुकसान हुआ तो बहकहा मार कर हंस। योग धीर जिसे करते हैं? याम योग्य बान धीर जटा न नहीं स्वभाव न हठा है।

साधु-मन्त्रों के कमलाकों का कहानियाँ बड़ बाब से मुनते थे। मुं भी बड़े विरवास से बयान करते थे। कई योगिया स उन्हें बड़ी भठा थी। यहाँ तक कि कभी-कभी उनका इस बरम विरवास पर भारभय होता था। उनकी दृष्टि न धनी-धनिक शक्ति की कोई सीमा न थी। एक सिद्ध पुरुष एक ही समय दुनिया के धन-धन्य हिम्मा में मौजूद हो सकते हैं—इस तरह की दन्त कथाएँ वह घटन मन्त्राई को तरह मानते धीर बयान करते थे। हमको मानन में किमी को शक हा सकता है यह कदान शान्त उन्हें प्राप्ता ही न था। यह बैरान्य इमी साधु प्रवृत्ति का परिष्कार न था। शायद यही उनकी विन्धी का सबसे महत्त पहलु था। मर भी योग करते थे धीर इनम उन्हें धन्या धन्याम हो गया था।

शान्ति कन उम्र में ही हा गयी थी। उनकी मृत्यु क दो-छाई मान पश्य ही पत्नी का स्वगवान हो गया। जिन लजन धीर प्रम में उनकी चिरिन्मा न धन्त रहे वह एक करण बरम था। देवी जी स्वामिनी समझार धीर मानन को तत्र तत्र पत्रिकबानी स्त्री थी। मन्त्री जी की स्वच्छन्दता उनके जीवनकाल में सीमाया की पात्र रहीं। उनकी मृत्यु हम बन्ध के पुनमे क विण बूच का विधान थी। मन्त्रिम से मान भर पुत्र्य होना कि बीमारियों ने धा धरा। भीतर का दर बाहर निबन पड़ा। शान्तों धीर बटों पर विरवास न था होमियोरैदिक इलाज के कायत थे। सगनऊ में मुशी महारेव प्रसा माहक एक गरीब-दोस्त रईम है। जलता की सवा क लिए ही जटान

होमियोपैथिक चिकित्सा का अध्ययन किया है और शहर के परीशों की बहुत रिशों से निस्वार्थ सेवा कर रहे हैं। मुंशी जी उनके गुणों के कल्पन थे। उनका इलाज मुक किया। रोज न रोज सेहत खराब होती जाती थी। चेहरा पीला पड़ गया था। कई महीने के बाद सेहत हुई मगर शोक सौपायिक था। कुछ महीनों के बाद फिर बीमार हुए और अबकी बुनिया ही से जिंदा हो गये। तेईस दिसम्बर को मर्रास गये। इतने लम्बे सफर के काबिल हरगिज न थे मगर मिट्टी तो मर्रास में लिखी थी बीरे बीरे बीच में पसी।

गुस्सा बहुत कम आता था। या यों कहिए कि जस बहुत कर सकते थे। गुस्से की इतहाई सुरत भी नीची घाँवें और होंठों पर चाबोशी की मुहर।

प्रारंभ से उन्हें पुरा बी जो इस प्रारंभ के युग में असाधारण बात है। नेकी कर और हरिया य जाल के पाबन्ध थे। कोई सोसाइटी कोई संजुमन या समा ऐसी न थी जिसे उनके हाथों नाम न पहुँचता हो। जो कुछ देते थे चुपचाप बैठ थे। मरने के बाद अब मामूम हो रहा है कि उनके बाल की परिधि कितनी विचाल थी। पत्रिका साहब से उन्हें दिलचस्पी न थी मगर राष्ट्रीय धाम्बोलनों के ब्रह्मचर्य थे। मित्र-मंडली में अपने राजनीतिक विचारों को निर्भीकता से व्यक्त करते थे और राजनीति धाम्बोलनों की सहायता करने में अला-भीषा न करते थे। तकबीर ने उन्हें रियासत ही जो हुनदरिया अन्ता के साथ थी।

रईसों न हाकिमों का मुह बोहने और किलारों की भूख का मूक धाम है। मूक क्यों कहे प्रतिपद्य की हुमस जिसे नहीं। विचारों परीक्षा में प्रतिपद्य बाहता है, हुकाम कारनुबारी न रईस सुहरत में। मुंशी जी की असाधारण प्रकृति के लिए सुहरत और विचाल ने कई धाम्बोलन न था यहाँ तक कि हुकाम से मुसाकस करना भी न पसन्द करते थे।

कुछ लोगों की स्वभावगत विशेषताएँ बहुत स्पष्ट और कुली हुई होती हैं कभी निरी हुई इतनी निरी हुई कि उसे धर्मनाक कह सकते हैं कहीं बुमग्न इतनी बुमन्ध कि अन्धी कहीं देखने की नहीं मिलती। मुंशी जी का स्वभाव समतल था और सैदान की तरह जिनमें कुनाफन है, हरियासी है, सरगता है, अंध-बाले का नाम नहीं। अन्धी जिनगी में क्या बीस सकते बड़ी थी इतना कैला मुश्किल है। वह कितनी तरह की उद्दाम प्रेरणाओं के व्यक्त न थे। यहाँ तक किताबी पढ़ता है, बीच का पस्ता ही समका रास्ता था। धर्मदों से भासते थे। बुनिया के मामलों में सोच-विचार करने की परबाह न थी। उनके दीवानखाने के नीचे ही बुक-रिपो है, यहाँ सैकड़ों मोप काम करते हैं मगर शायद जिनगी न दो-एक बार से ब्याचा रिपो में कदम नहीं रखा। अन्धा-बोड़ा इलाहा है मगर हावर ही जिनो रिस्ते में निगरानी के ब्याम से मये हों। विचारों और कर्मों से मुक्त जीवन व्यतीत करते थे। स्वाभियन्त सगाहवारों का

भारत वेकर होता था। इसी बीरम्योचित निस्पृहता को उनकी सबसे बड़ी विशेषता कह लीजिए।

शिकार और भुड़वीड़ में बहुत लौक था। राम में दो-बार हिमात्म की तरफ में शिकार लेमने बकर जाते थे। यहाँ तक कि बीमारी कुछ कम होते ही शिकार लेमने पये और वहीं बीमारी फिर बढ़ गयी। मिशान बभूक था। भुड़वीड़ में इससे भी ब्याप्य विमचस्पी थी। धब्बे-धब्बे असौरा भोडे जमा कर रले थे। मदास की प्राणान्तक भाषा भी भुड़वीड़ ही के सिमसिसे में की थी। वहाँ उन भोड़ों ने घूम मचा दी थी मगर मृत्यु शय्या पर इन पीठों से क्या पुरी होती।

ससनक के वारिशक थे। मापूसो रईस भी गर्मियों में पहाड़ों की तर करते हैं मूँशी की मई-जून की गर्मियाँ ससनक ही म गुबार होते थे पहाड़ की विमचस्पियों से उन्हें कोई वास्ता न था। उनका समतल स्वभाव हर तरफ की परेशानी और रिबाने से बबरता था। दोसत की हबस न की यों एक बार सट्टे का भी लौक हुमा मगर दोसत उनके हाथों में घसनी का पानी थी। बरबार के हिरैयियों की धारें बघाऊर को घापनी पट्टेच जाता कुछ न कुछ सेकर ही मींटा था।

ब्यापार की मंत्री कुछ रिनों से प्रबन्धकों के लिए बिन्ता का कारख हो रही थी। प्रस्ताव हुमा कि कमचारियों के वेतन में कटौती कर दी जाय। इसका मफरा लीयार हुमा घापस में मुबाहसे हुए और प्रस्ताव ने घमसो वूरत अस्तित्वार की। मगर मूँशी जी ने बहुत घापस किये जाने पर भी उस पर इस्तसत न किये। बात वहीं खत्म हो गयी। उनका कम परवरित करने के लिए या लून करने के लिए नहीं।

दिबंमस की यापमार वो बेटे हैं। बड़े साहजबादे की उम्र सोलह साल की है, छोटे घनी चौबे-नाबबें साल में हैं। तीन बेटियाँ भी हैं। बड़ी बेटो की शादी हो चुकी है। नाँ के प्यार से पहले ही बंभित हो चुके व बाप का सत्या भी उठ गया।

मगर इनसे भी ज्यादा बदनाक हालत उनकी माँ की है जिनका साल उनकी मोर से हमेशा के लिए छील लिया गया। कुशमसीब है वह जो नेकनाम जोते हैं और नेकनाम मरते हैं। घाब सारा सहर दिबंमस के लिए मातम कर रहा है और दुनिया एक घाबाब होकर रह रही है—

परती माता का एक सपूत उठ गया।

जमाना फरवरी १९३१

## कर्मवीर विद्यार्थी जी

कानपुर के इस हत्याकाण्ड में राष्ट्र को सबसे बर्षकर जो सति पहुँची है वह विद्यार्थी जी की शहारत है। मुदा हुमा जन फिर धा बापगा उमड़े हुए पर फिर

॥ कर्मवीर विद्यार्थी जी ॥

४१७

ध्यान हो जायेगा माताओं के दोष में फिर अपने खोलेंगे पर वह कर्मवीर भारत के  
 सदैव के लिए उठ गया । विद्यार्थी भी के जीवन की सरमता और पवित्रता सात्विक  
 थी । हम यह तो नहीं कह सकते कि हमारी उनसे अनिष्टता थी पर सात में दो-तीन  
 बार हमें उनके दृष्टान्तों का सीधायी प्रभाव हो जाता था और उनके दृष्टान्तों से आत्मा पर  
 आशीर्वाद का-सा जो असर पड़ता था वह अकल्पनीय है । स्वार्थ-चिन्ता न करी उनकी  
 आत्मा को मर्तिन नहीं किया । उनका समस्त जीवन यज्ञमय था और अथापि ईश्वर की  
 इच्छा थी कि उनकी मृत्यु उस यज्ञ की पूर्णतुष्टि हो । इस विरोध के एक या दो दिन  
 पहले सखनऊ काँग्रेस कमेटी के वक्तार में हम उनके दृष्टान्त हुए थे । उनके जेल से  
 मौतने के बाद मैं उनसे मिल न सका था । कितने उपार्क से गले मिले । विरोध महान  
 आत्माओं का स्वामी कुछ है । उनकी सीधी-सी बात में भी विरोध की कुछ न  
 कुछ मात्रा होती है । अपने जेल जीवन की एक बटना हँस-हँस कर सुनाने लगे । बिक्टर  
 ह्यूयो पर उनकी बड़ी प्रशंसा थी । 'मार्गनी वी' का अनुवाद वे पहले कर चुके थे । अथकी  
 जेल में ह्यूयो के बहुत प्रसिद्ध ग्रन्थ 'सेमिबरेबुल' का उन्होंने अनुवाद किया था । बोले  
 'कोई पत्रहूँ ही पृष्ठ होंगे । आपका प्रेस छापना चाहें तो मैं दे सकता हूँ ।

यह तो उनका विनीत मात्र था ।

कौन जानता कि यह उनके अन्तिम दृष्टान्त है । उस समय तो कपची जाने की  
 बाध्यता हो रही थी ।

विद्यार्थी भी ने बेश म था सम्मान और यह प्राप्त किया वह उनकी सेवा का  
 प्रसार था । वह बहुत बड़े विद्यालय न थे बड़ी-बड़ी उपाधियाँ न प्राप्त की थीं मगर हृदय  
 में सेवा की ऐसी जगह थी जिसने उनकी सेवाओं को श्रेष्ठ उनकी माया का स्फूर्ति  
 उनकी बाधा का प्रमाण और व्यक्तित्व को गौरव प्रदान कर दिया था । उनकी आत्मा  
 निष्कण्ट और निर्भीक थी । राजनीतिक सम्स्याओं पर वह कितने साहस से अपनी  
 सम्मति प्रकट करते थे उसने हमारे सम्पादकीय जीवन में असर स्फूर्ति दी थी ।  
 अत्याचार के विरुद्ध उनकी तलवार सदैव म्यान से बाहर रखी थी । 'प्रदाप' ने अपने  
 बीस बप के जीवन में कितनी बाधाओं पर सफलता के साथ विजय पायी वह विद्यार्थी  
 भी के सद्साहस न्याय-निष्ठा और कर्तव्य-धर्म का उज्ज्वल प्रमाण है ।

हिन्दू-मुसलिम एकता के बहु अग्रगण्य प्रकृत थे । विद्यार्थी भी उन राष्ट्र-सेवियों में  
 से थे जिन्होंने साम्प्रदायिकता को कभी अपने पास नहीं धारण किया । यह उनके राष्ट्रीय  
 जीवन का मूल सिद्धान्त था । हम यह अनुमान कर सकते हैं कि कानपुर में जब यह  
 भाग भड़की तो उनकी आत्मा का कितना आघात पहुँचा । शहर में हाहाकार मचा  
 हुआ था । शहर ने नेता कथम्य प्रकृत हैं । अपने-अपने पदों में बैठे थे । हिन्दू और मुसल  
 मान एक दूसरे पर अमानुषिक अत्याचार कर रहे थे पर यह कर्मवीर अपने प्राणों को  
 हवेसी पर लिये वीरिय परिवारों की सुखसुविधा स्थानों पर पहुँचाता साहसों की सेवा और



अनार्यों की सहायता करता फिरता था। हितचिन्तक गण मममयते व पर जिसका जीवन का मूल आधार इतनी निश्चयता से पर्यो अपने रीति का रहा हो उसे ऐसी चेतावनियों की क्या परवाह हो सकती थी। धर्म जैसी पवित्र वस्तु जो मलिन धारणाओं में जाकर इतना भयंकर रूप धारण कर लेती है। धर्म जिसका उद्देश्य है मनुष्य को सत्य की धोर से आना उसकी परमोक्त बुद्धि को शक्ति देना नहीं माननी कुवसताओं से कल्पित होकर धर्म हिंसक बन्धु के रूप में प्रकट हो रहा है। वह धर्मान्विताओं ऐसी पवित्र धारणाओं के रक्त से अपने हाथ रेंगती है उसकी किन् शक्तों में निम्न की आन। उन्हीं लोगों के हाथों यह धर्म हृषा जिनकी रता के लिए वह निकले हुए थे। धर्मान्विता तेरी बलिहारी है। तु शत्रु धोर मित्र का भी विवेक नहीं रखती।

धर्म इस कमवीर की मृत्यु ने हमारे राष्ट्रीय जीवन में ऐसा स्थान खाली कर दिया है, जिसकी पूर्ति होना कठिन है।

मार्च १९३१

## पं० पद्मसिंह जी शर्मा का स्वर्गवास

कोल आनता का कि हिन्दी-साहित्य का यह सुष अपने साहित्यिक जीवन के मध्याह्न में ही बों अस्त हो जायगा। पृथ्वी शर्मा जी उन धुन के पूरे मनुष्या में थे जो कभी बड़े नहीं होते। जिनके विचार समय के साथ प्रीड़ उभरत धीरे उभार होते जाते हैं। इन्हें अपने कई ऐसे मार्गों के लेख जिसे जिनमें सिद्ध हुआ कि आपकी धरत का कुछ ही हो आपके कलम में अक्षरी के शब्द स भी बढ़ा हुआ शब्द है। 'विराट भारत में हिन्दुस्तानी एकादमी द्वारा प्रकाशित मि अम्बुस्माह युग की आपने जो विद्वत्तारुण शोधना लिखी थी उसने बड़े-बड़े दिग्गज अहम्मय प्रोफेसरों की आपका शोभा लबा दिया। आपकी अकाल मृत्यु से हिन्दी-साहित्य का एक स्तंभ उठ गया। धर्म हम शरों धोर निराह शीड़ते हैं और हमें कोई ऐसा धारमी नहीं दीगता जो मुनेत्रक होने के साथ ही इतना प्रकाण्ड विज्ञान भी हो। धर्म में अक्षरी और प्राचीन का अमृतपुत्र मेल हो गया था। क्या सस्त्रुत क्या हिन्दी क्या उग्रु क्या धरमी आप इन सभी साहित्यिकों का शोभा थे। अक्षर अक्षर क तो आप धारिक ही बहू का सचते हैं। मैं धारमी अक्षर से अक्षर की शक्ति मुक्ति की सुभी है। आप उन पर भ्रम हा जाते थे। द्विती में आप एक लाम शोभा के अक्षरता है—जिसमें अक्षरमायन है शोभा है अक्षर है और उसके साथ ही धारमी भी। उमका पाठित्य उमक जानू ध है। वह उम पर अक्षरकार की शक्ति गवार होते हैं। उमकी सगाम बीली नहीं करते उमे बहने नहीं देते। अक्षरता के आप अक्षर व। धीरे उममें ता अक्षर ही नहीं कि अक्षर-शक्ति के

धाप ममज्ञ थे। उनके सतसई-सहार पर कुछ महानुभावों की यह एतराज है कि उसकी  
 बुद्धिमाँ बजरत्न से क्याया ठेक है—बुद्धिमाँ नहीं है, बल्कि बरसिमाँ की चोटे है।  
 कहीं-कहीं तो बममोज है लेकिन जब हम देखते हैं कि धामोच्य पुस्तक उस धारपी के  
 कम्म से निकली थी जो बिद्या-बारिधि का उपाधिचारी था तो हमें शर्मा जी को  
 कटुता स्वामाधिक-सी भगमे भगतो है। शर्मा जी किसी नये लेखक में उन धसतिमाँ को  
 बकर जमा कर देते। जो पुराना सिनाड़ी जिन्हु का मन्ग न जानते हुए, साँप के मुँह  
 में जयपी बसल उसक दुस्साहस को शर्मा जी बसा निर्भीक धामोचक कसे जमा कर  
 देता। धीर सतसई-सहार की भूमिका तो हिन्दी-साहित्य का रत्न है। शर्मा जी जितने  
 बडे साहित्य-सेवी थे उससे कहीं बड़े मनुष्य थे। धापसे मिलकर कभी भी नहीं भरता  
 था। नये लेखकों को धाप बह प्रोत्साहन देते थे जो माता धापने कटपटे वालक को बेटी  
 है। मेरे ऊपर तो उनकी कसीम कृपा थी। सिवासदन उपन्यास-क्षेत्र में मेरा पहला  
 प्रयास था। शर्मा जी ने जिस तरह मिल खोजकर उसकी वाद दी बह मैं भूल नहीं  
 सकता। उस समय उनकी कठोर धामोचना न मंदा बंध कर दिया होता। उसके बाद  
 जब-जब मुझे उनसे मिलने का सुझावसर मिला इस तरह टूटकर मसे जवाते थे कि बिना  
 उनके इस सौजन्य पर पुनश्चित हो उठता था। सरल जीवन धीर जैसे विचार की ऐसी  
 मिसाल मुश्किल से मिलेगी। हमें बिश्वास है, कि हिन्दी-संसार इस महारथी की कोई  
 ऐसी सावगार बनायेगा जिससे मामूम हो कि हिन्दीवाले बुद्धिमाँ का सम्मान करना  
 जानते हैं। बर्ना शर्मा जी के स्मारक तो उनकी बह रचनाएँ हैं जो बिरकाल तक उन्हें  
 भमर रखेंगी।

मई १९३२

## डाक्टर एनी बेसेंट की छियासिंदी जयन्ती

डाक्टर एनी बेसेंट ने जन्म से बाहरित होकर भारत के लिए जो कुछ किया है,  
 बह महत्त्वा पाँकी के सिवा शायद ही किसी ने किया हो। भारत में होम रूल का बीज  
 पहले-पहल उन्होंने बोया धीर उसके लिए धसाधारण स्वाध का परिचय दिया। उनके  
 जीवन का सबसे बड़ा काम बिरब-बंधुत्व का बह भाव है, जिसको उन्होंने मया जीवन  
 प्रदान किया है। उनके धसम्य परिधम की देकर धन्धे-धन्धे दंग रह जाते हैं। कई-  
 कई पत्रों का संपादन पुस्तकों की रचना देस-बिदेस में प्रचारण भ्रमल में सभी काम  
 बह एक धाव करती थीं। योरोप में कई सामाजिक प्रश्नों क विषय में जो कुछ बातें  
 हुई हैं उसमें डाक्टर एनी बेसेंट का भाव जितनी से कम नहीं है। धाव संसार में उनका  
 जितना सम्मान है उतना किसी भी बोधित व्यक्ति का नहीं है। हिन्हु-संस्कृति धीर

शास्त्रों की तो उनके हाथों जो प्रोत्साहन मिला है वह चिरस्थायी रहेगा। भारत के फिटने हो स्वार्थों में उनकी छियासिबों जयन्ती मनायो गयी। हम भी हम धरमर पर अपनी धटीबिसि उनकी सेवा में धर्पित करते हैं।

१२ अक्टूबर १९३२

## रूस का भाग्य-विधाता

सोवियत की मृत्यु के परन्तु उसके चित्त ही साधिया न जिनम ट्राटस्की जिनोबीऊ कार्मेनीऊ बुसारिन आदि जैसे प्रतिमातामी धौर सुयोग्य व्यक्ति न म्म की बागडोर अपने हाथों में लेने की च्छटा की पर एक एस अपरिचित व्यक्ति के कारण जिसका नाम उस समय तक सुनन म भी नहीं आया था उन सबको एक-एक करके निकाल बाहर किया और स्वयं इसका भाग्य-विधाता बन गया। इस व्यक्ति का नाम स्टेलिन है और इसके सम्बन्ध में विभिन्न देशों के पत्रों म तरह-तरह की बातें छपा करती हैं। कुछ दिन हुए उसके एक मृतपूज सेक्रेटरी ने पेरिस से निकलनेवासे एक बोसरोविक विरोध-पत्र में उसका बखानामक परिचय प्रकाशित कराया था। यद्यपि उसे पढ़न से तुरन्त ही प्रतीत हो जाता है कि यह लेख किन्ती व्यक्ति ऐसे का सिद्धा है जिनके स्वार्थ की स्टेलिन के कारण बनना पहुँचा है। तो भी उससे स्टेलिन की एसी फिटनी ही विरोधताओं का पता मगता है, जो लेखक की बुद्धि म यद्यपि घसम्यता और अस्थिचित होने की सूचक है, पर भारतवासियों की बुद्धि म वे एक सच्चे तपस्वी के गुण समझी जाता है। लेखक ने स्टेलिन और उसके साधियों को अविचारता विषयों में धयोम्य बतलाया है। पर उसके प्रबन्ध से उसकी जो धनुपम उन्नति हो रही है उसे देखते हुए उन बातों म कुछ सच्चाई नहीं जान पड़ती। नीचे हम उन लेख का कुछ धंरा देते हैं जिसन पाठक स्वयं इस सम्बन्ध में निर्णय कर सकेंगे।

‘स्टेलिन ऐसा व्यक्ति है, जिसने समस्त मानवीय आकाङ्क्षा का हर दर्जे तक बटा दिया है। एकमात्र प्रधानता की धसीम प्यास ने उसका पीछा नहीं छोड़ा है। वह एक त्वापी की भाँति कमलिन के दो छोटे-छोटे कमरों में जिनमें बार के समय महक के नीकर रहा करत वे रहता है। यह प्रसिद्ध है कि वह शासन हो कभी किन्ती प्रकार का धामोत्र-धमोत्र करता है। कभी किसी प्रकार की फिज्जुस लर्षों नहीं करता कभी सरकारी रकम से एक पसा भी धपने लिए नहीं मता। उसके लिए सबों धी निम बहसान का अस्तित्त्व ही नहीं है। अपनी स्त्री ने सिधाय वह ससाल की रिमा स्त्री की तरह धाँस नहीं उठाता।

‘जब कोई व्यक्ति प्रथम बार उससे मिलता है तो ऐसा प्रतीत होता है कि वह सीधा-साधा अपने ऊपर कम्ब्या रखनेवाला मिलभापी और बहुत बुरा व्यक्ति है। पर जब उसका विशेष परिचय प्राप्त होता है, तो पता लगता है कि वह विमकुल संस्कृति-विहीन व्यक्ति है। जैसे-जैसे उससे आपकी अनिच्छता बढ़ती जाती है आपका धारण्य बढ़ता जायगा। उसमें राजनीतिक समस्याओं का समझ मकने की बुद्धि नहीं है, उसे प्रबन्धन और धर्म-धर्म का कुछ भी ज्ञान नहीं। विदेशी भाषाओं से तो वह अनजान है ही बसी-साहित्य का भी उसे ज्ञान नहीं। वह हँसी-मजाक करना नहीं जानता। अपने पचीनस्व कमचारियों और कुटुम्बवालों के साथ वह बड़ी निरंकुशता और उच्छ्रिता का व्यवहार करता है। वह अपने भेष का बहुत धिपा कर रखता है और बड़ा जानाऊ तथा प्रतिहिंसा का भाव रखनेवाला मनुष्य है। वह अपनी गुप्त योजनाओं को किसी पर प्रकट नहीं करता। बरघसल वह बिना आवश्यकता के बोसता ही नहीं और प्रायः मौन रहा करता है।

३१ अक्टूबर १९३२

## सर अलीइमाम की स्वर्ग-यात्रा

सर अलीइमाम के उठ जाने से बिहार का वह सपूत उठ गया जिस पर बिहार को ही नहीं भारत को सब का। संसार में जितनी विमूर्तियाँ हैं वह सभी उनके हिस्से में प्रचुर मात्रा में पड़ी हैं। एक जमाने में वह मुसलिम सींग में थे लेकिन इधर कई साल से वह पक्के राष्ट्रवादी हो गये थे और जलनक के मुसलिम सम्मेलन की सभारत की थी। आप गौतमजी में भी शरीक हुए थे पर अस्वस्थ रहने के कारण उसमें प्रमुख भाग न ले सकें। विद्वानता यही है कि सभी आपके पिता भीलवी इमशदइमाम साहब जीवित हैं। इस प्रसंग पर, जबकि देश एकता के लिए माय बूँद रहा है सर अली इमाम की मौत देश के लिए बलघात से कम नहीं।

७ नवम्बर १९३२

## मि० थामस बाटा

मि थामस बाटा संसार में भूते के सबसे बड़ व्यापारी थे। उन्होंने करोड़ों की सम्पत्ति छोड़ी है और अब उनकी जगह उनके माई मि थाम बाटा उस कारखाने के अध्यक्ष हुए हैं। थामस बाटा ने यह विशाल सम्पत्ति अपने ही उद्योग और परिश्रम से प्राप्त की थी और यद्यपि वह व्यक्तिवाद के समर्थक थे पर उनका व्यक्तिवाद समष्टि

को परों से मुक्त कर नहीं उसके सहयोग पर आधारित था। वह अपने कारखाने के मजदूरों को भी लड़ा में भाग लेकर उन्हें एक प्रकार से अपना साम्प्रदाय बना सेते थे। यही कारण है कि मजूर उनके कारखानों को अपना समझते थे और भी ठोकर काम करते थे। मि बाटा का जीवन आदर्श कहा जा सकता है। वह सुर मय मजूरों को भाँति कारखाने से बहुत थोड़ा पारिश्रमिक से लिया करते थे हास्यिक काम औरों से कई गुना ज्यादा करते थे। उनके घर का खर्च भी हजार पाँच सानाना से अधिक न था। अपनी निपटा स्त्री को भी उन्होंने केवल उतनी ही रकम उनके मे दी है जिससे उनकी पुत्र हो जाय। मजूरों के लिए सम्पत्ति बनाना उनके जीवन का उद्देश्य न था। इन रकमों से कई गुनी रकम उन्होंने मजूरों के लिए व्यापारशाळा और विनोदग्रह बनाने के लिए छोड़ी है। कहते हैं कि जेकोस्तोवेकिया में जहाँ उनका हेड मास्टरिस था उनका मजूरों और जनता पर इतना धरम था कि म्युनिसिपलिटि के बयानिस मेम्बरों में एकतासिस केवल उनके भेजे हुए थे। धरम ऐसे पूर्वीपति हों तो कम्युनिस्म के लिए कहीं स्थान रह जाता है। यह तो पूर्वीपतियों की अन्धी स्वाधरता है जो कम्युनिस्म का पोषण करता है।

७ नवम्बर १९३०

## श्रीयुत सहगल का पद-त्याग

हमें इस समाचार से बड़ा श्रेय हुआ कि प्यारू वप तक 'चाँद' द्वारा समाज की सेवा करने के बाद मि सहगल को चाँद से सम्बन्ध तोड़ना पड़ा। मि सहगल में इसे दोष समझिए या कुछ कि बदन की धारत नहीं है। अपने आत्म-सम्मान की रक्षा के लिए वह बड़ से बड़े मुकमान की भी परवाह नहीं करते। धरम वह अपनी आत्मा को कुछ मयकवार बना सकते तो उनके भाग में कोई बाधा न खड़ी होती। सक्रिय इन नीति को उन्होंने हमेशा हीय समझ और उसका प्रत्यक्षित आर्थ उन्हें इन रूप में करना पड़ रहा है। इन दस बरनों में मि सहगल ने शिक्षा दिया कि मन्वी लगन और एकता से काम किया जाय तो पत्रकार भी सफल हो सकते हैं। भारतीय म कदाचित् 'चाँद' ही ऐसा मासिक पत्र है, जिसको आहूक संख्या सोलह हजार तक पहुँची। मि सहगल ने भारतीय महिलाओं की जागृति का लक्ष्य अपने नामने रखा था और उन्हें अपने उद्देश्य में जितनी सफलता मिली है उतनी बहुत कम किसी को मपीब होती है। उन्हें यह श्रेयकर जितना आनन्द हो रहा होगा कि बोर्डों और कॉमिषनों में महिलाओं का निर्वाचन होने मना विधानमयों में उनकी मक्या बढ़ती जाती है परन्तु अब मासिटी मीम से रहा है और भारतीय महिला-सम्भलन ने विवाह-विच्छेद और मदान-निपह का

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया है। उनके पक्ष-त्याग से चाहे चाँव व्यापारिक रूप से सफल हो चाय सेकिंग मि सहजस के व्यक्तित्व की जो छाप चाँव के एक-एक पृष्ठ पर रखी थी धीरे-धीरे मिटने लगी उसे यह सचप्रियता प्रदान कर रही थी वह सकेगी या नहीं कहा नहीं जा सकता। अब चाँव ठोस व्यापारिक नीति पर जसेगा पर हमें इस नीति की सफलता में संदेह है। हम यहाँ धीरे-धीरे जाया न लिखकर मि सहजस के उस बक्तव्य का एक घंटा देते हैं जो उन्होंने इस सम्बन्ध में प्रकाशित किया है—

‘मैंने इस संस्था को व्यापारिक दृष्टि से जन्म नहीं दिया था। मेरा एकमात्र लक्ष्य देश तथा समाज की सेवा करना था और मुझे इस बात का संतोष है कि पिछले समय में व्यापारिक बर्षों में मैंने अपने इस व्रत का ईमानदारी से पालन किया है पर उस समय मैं संस्था का एकमात्र स्वामी था। मेरी नीति में हस्तक्षेप करने का किसी को अधिकार नहीं था। मैंने जो चाहा किया और अपने साहस के कारण भावो ज्यवा स्वाहा भी कर दिये पर गलत बय से अभिष्य में धीरे-धीरे ठोस एवं व्यापक सेवा करण की भावनाओं से प्रेरित होकर मैंने संस्था को एक लिमिटेड कम्पनी का रूप दिया। मेरा अनुमान था कि देश में ऐसे व्यक्तियों की कमी नहीं है, जो निस्वार्थ भाव से कम्पनी के हिस्से खरीद कर इस पुनीत कार्य में संस्था की सहायता करेंगे पर मुझे पिछले एक बरस के अनुभव ने यह बतला दिया है कि यह मेरा भ्रम था। पूर्वीपतियों की मनोवृत्ति आज भी वैसी ही ठोस एवं धर्मात्मकीय है, वैसी धार से ही बय पूरा थी। कोई जोखिम उठाने को तैयार नहीं है। कम्पनी के डाइरेक्टर्स अभिष्य में किस व्यापारिक नीति से संस्था का संचालन करना चाहते हैं उससे मेरा धोर मतभेद है। इस प्रकार के मामलों में समझौता हो भी नहीं सकता। धारणा की पुकार के सामने अपना सबसब दानिदान कर देना ही एक ऐसी बचीबचत है, जो मुझे बाप-बाबा से मिली है और मैं भी अन्त तक उनकी रक्षा करने का पक्षपाती रहा हूँ।

प्रतिर में वही निश्चय हुआ कि डाइरेक्टरान वर्तमान परिस्थिति से तभी मुकाबला कर सकते हैं जब कि मि सहजस संस्था से असंग हो चाँव धीरे-धीरे इस बहुमत के सामने उन्हें सिर झुकाना पड़ा।

जनवरी १९३३

## बधाइयाँ

हम देवी सुमत्राकुमारी चौहान को साहित्य सम्मेलन द्वारा धीरे-धीरे जैनेन्द्रकुमार को हिन्दुस्तानी एकादमी द्वारा पुरस्कृत होने पर हृदय से बधाई देते हैं। पाँच ही रपया कोई बड़ी रकम नहीं है पर बधाई देते इस बात की है कि विद्वज्जनों ने उनके कमान

को स्वीकार किया। दोनों ही पुस्तकें देवी जी की विचारे मोठी' और अमन जी की 'परम' इन सम्मान के योग्य थीं। बिनार मोठी मारी-हुए का प्रतिबिम्ब है मारे-हुए की सारी अभिमापाओं और जाण्डियों का धारणा। परम' दम प्ररखा और दार्शनिक संकोच का संघष है, इतना हृदय को समोयनेवाला इतना स्वच्छ और निष्कपट जिस बंधनों में जकड़ी हुई धारणा की पुकार है।

बिधि की फिडमी कर सीमा है कि इतर तो यह पुस्तकानिमा उबर उनका धाम जर वा हसता-मेमता बच्चा परसोक निचार। अब बिम मुँह स कह कि निशों की दाबत करो। बिधि को धारण उन धारण का मन्त्र मना वा तो वह बिना धारण के मन से। बधाई तो दी है पर रोनी हुई धारणा म।

जनवरी १९३३

### अभिनन्दन

मध्य क प्रति यज्ञ का प्रयत्न करना एक बहुत बड़ा सामाजिक कलम्य है। जो समाज जिसकी ही उत्पत्ता और मर्चाई के साथ इन कलम्य का पालन करता है वह उतना ही मजबूत और समझिशाकी बना रहता है। जहाँ इन माय का अभाव है वही बिद्वय विपह और विनाश भी बसता है। जहाँ इनका प्रचार है वही स्वतः और मोजन्य की सति हुमा करती है और संयम-मुखा की कृष्टि भी। प्रचार वही बँटता है जहाँ पुत्र होती है, बड़े लोगों की मक्या वहीं बसती है जहाँ बड़पन के सच्च पारकी रहते हैं। इसीलिए बीरपूजा की प्रथा को हम मसार की समस्त सामाजिक प्रथाओं में बड़पन मानते हैं। यही प्रथा हमारे अकतारकाय की निधि है। अम आहिय गजमोति चाह दिसे से सीरिए, इनमें स प्रत्यक के काय अक्ष म इनो प्रथा के द्वारा प्ररखा शक्ति वा प्रादुर्भाव और प्रसार किया जाता है। बुद्ध ईसा और मुहम्मद की पुजा करके हम अपने धारण को उपभूत करते हैं महात्मा गांधी लेनिन और मुसोलिनी का धारण करके हम स्वय ममान्त होत हैं, तुलसी रामोत्र शोकसपियर, रोमेरोला और शा की मोक-विधा-नी मला को स्वीकार करके हम अपने धारण का बड़ा बनाते हैं। जो हमम बड़े हैं जिम्मेन हमको बनाया है उनके चरणों पर धडीबलि चडाकर ही हम बहु बरधम प्राप्त कर सकते हैं जो हमारी जीवन-म्योति को मरक जगाय रहे। यतएव धारण परम पुत्रनीय धारण कर हमें धारणा हर्ष हो रहा है। यह उम्माग हमार अभिप्य की उज्जमता का धेतक है। धारणिक हिन्दी की भी-कृष्टि करनेवाले इन तास्वी धारण की यह धारणा इस बाग की मूकता है रही है कि हम हिन्दीबाय भी अक्ष धारण धारण को परधान मकने को

॥ अभिनन्दन ॥

चमत्ता के निष्कट धा पहुँच है। हमने सब बातें हैं, पहले ही से जमी धा रखी है, धम्म  
 केवल इसी बात का है कि हम अपने घर के लोगों का अच्छा धार करमा नहीं जानते  
 या धान भूमकर नहीं करते। उदासीनता और उपेक्षा का वह रोग बड़ा ही विधातक  
 है। यह न होता तो धमी तक हिन्दी में धन्तर्राष्ट्रीय प्रतिष्ठा के धनेक लेखक धीर कवि  
 पैदा हो चुके होते। ध्यक्तित्व बनाया जाता है, स्वयं नहीं बनाता है। मोकलाका ही  
 ध्यक्तित्व की महिमा प्रतिष्ठित करती है। हमारे धाचार्य द्विवेदी भी इसके प्रत्यक्ष प्रमाथ  
 है। धपनी निस्वाध साहित्यिक साधना से उन्होंने जिस बातावरण की सृष्टि की उसके  
 भीतर से इसी मोकलाका का प्रावुर्माण हुआ धीर यही धात्र के हमारे इतने बड़े धाह्वाप  
 का कारण धनी। इस प्रकार की धाकांक्षाओं का हमारे बीच बिलना ही धमिक प्रसार होना  
 हम उतनी ही बल्बी धपने धाप को समुदाय बना सकेंगे। धात्म-धर्याय का सबसे बड़कर  
 धरम धीर सुन्दर उपाय है—धात्पापथ। धात्र साध हिन्दी जबत धपने धाप को धाचार्य  
 द्विवेदी की के धरखों पर धपित कर देने के लिए उन्मसित हा उठ है, यह उसके  
 सीमान्य का सबसे बड़ा धिन्त है। हम हिन्दीवाने धात्र उनके धरखाँ पर पूजा-धुष्य की  
 तरह पडे रचना बाहते है। हमारा धात्र का धिन केवल इसी धम में धाये यही हमारी  
 कामना है। क्या ? केवल इसलिए कि धात्र हम को कुछ भी है उन्ही के बनाने हुए है।  
 यदि पं महाधीर प्रसार भी द्विवेदी न होते तो धमी बेधारी हिन्दी कोसों पीछे होती—  
 समुद्रति की इस सीमा तक धाने का उसे धधसर ही नहीं मिसता। उन्होंने हमारे  
 लिए पथ भी बनाया धीर पथ प्रदर्शक का भी काम किया। हमारे ऊपर उनका भारी  
 ऋण है धीर उनके धरखों पर शुक कर ही हम उसे स्वीकार कर सकते है—किसी धम्य  
 प्रकार से नहीं।

इस पुनीत धवसर का मिधन-मिधन रूप से उपयोग किया जा रहा है। कासी  
 नाथरो प्रचारिणी सभा धाचार्य के कर कमलों पर 'धमिनन्धन धंय रक रखी है प्रमान  
 कुछ सीध द्विवेदी मेला का धायोजन कर रहे है। हमारे हृदय में भी धडा है पर  
 । साधनहीन है। धतएव हमारे पास को कुछ भी है इसी को सब कुछ मानकर हम  
 ने इस छोटे से मासिक पत्र 'हंस का 'धमिनन्धन' निकाल कर ही धपने धापको  
 लुप्त कर लेना बाहते है।

पर इस 'धमिनन्धन' क मध्याह्नक न नाते हम क्या क्या ममक में नहीं  
 ता। हमारा हृदय तो इतजता के धावों से इतना धरा हुआ है कि उधके भीतर  
 धी-विधान के लिए कोई स्थान हो नहीं दिखायी देता। हम हिन्दीवालों पर धाचार्य  
 इनेनी की के उपकारों का बोध सदा हुआ है—हम कुछ बोलें तो बोलें कैसे ? हमारे  
 लिए उन्होंने बड़ तपस्या की है जो हिन्दी साहित्य की बुनिया में बेजोड़ ही नहीं  
 धायगी। किसी ने हमारे लिए इतना नहीं किया जितना उन्होंने। न हिन्दी के धरम



सुन्दर रूप के विभायक बने हिन्दी साहित्य में विश्व साहित्य के उत्तमोत्तम उपकरणों का उन्होंने समावेश किया बर्जनों कवि सेनाक और सम्पादक बनाये। जिसमें कुछ प्रतिभा देखी उसी को अपना लिया और उसके द्वारा मातृभाषा की सच्ची सेवा करायी। हिन्दी के लिए उन्होंने अपना तन मन धन सब कुछ अर्पण कर दिया। हमारी उपस्थित न्य-कल्पि उन्हीं के त्याग का परिणाम है।

डिबेरी जी का व्यक्तित्व बड़ा ही प्रभावशाली है। मुसमलहस पर दृष्टि डालते ही यह बात स्पष्ट मासूम हो जाती है कि उनमें रचनात्मक शक्ति कूट-कूट कर मरी हुई है, व सञ्च युग प्रवर्तक है उनमें क्रान्ति से घाने की विमलसुख समता है। उत्पन्न लमाट घनी मीहें, रोजवार मुँहें रसमयी मंभीर झालें और अलव-मभोर बाणों उनकी विशिष्टता आपित करती है और बेसने से ऐसा मासूम पडता है मानों किसी बेसे व्यक्ति क पान है जो हमारे लिए हमारे बीच भेजा गया है—जो सब तरह से हमारा ही है।

स्वभाव से अत्यन्त दुःख-प्रतिज्ञ और हृदय से परम कोमल व हमारे अपने ही इस बात को हिन्दी जगत उसी दिन मान गया था जब वे घरखतो म थे। उन दिनों वे हम सब को पिता की तरह शासित किया करते थे और माता की तरह प्यार। वे हमें हमारी गलतियों पर फटकारते थे उन्हें प्रेमपूर्वक मुधार देते थे और हमारी सफलता पर हम प्रेम के मोहक भी मिनाते थे। उन्होंने ठोक-ठोक कर हम सुचारु पुष्कार पुष्कार कर ठीक रास्ते पर चढाया और उत्साह द-बेकर घामे बढाया। इन सबके चलते आज हम उनका जितना भी सत्कार करे बोड़ा है। यदि आज व वंगानी होते तो बंगाल के विश्वविद्यालय उन्हीं की सिद् धारि सम्मानित पदवियों से विभूषित करके अपना गौरव समझते। पर, हमारे प्राप्त क और-धीर विश्वविद्यालय को तो बात ही क्या हमारा अपना हिन्दी विश्वविद्यालय जिसके प्राण स्वयं महामना मानवीय भी है—कभी इस प्रकार का गौरव अनुभव करेगा या नहीं कह नहीं सकते। इतना ही कहने की इच्छा होती है कि इसे ऐसा करना चाहिए।

'हुँस' का यह अभिनन्दनाक कैसा हो पाया है, इसक सम्बन्ध में हमें कुछ कहने का अधिकार नहीं इतना ही निवेदन कर दिया चाहते हैं कि यह भद्र में डिबेरी जी के प्रति हमारी आन्तरिक अड्डा का विनम्र निबन्ध मात्र है। और हमसे इतना भी नहीं बन पडता यदि हमारे कृतान्तु सैकड़ और कवि हमारी सहायता न करते। अपनी साहित्यिक संस्कृति की रक्षा के लिए हम समय-समय पर इस प्रकार के अभिनन्दनात्मक साहित्य की महत्ता स्वीकार करते हुए आभाव दिवसों को भी शीर्षायु क लिए परमात्मा से प्रार्थना करते हैं और इस बात को कामना करते हैं डिबेरी जी की भगवो हुई यह बेनि विरकान तक फूलती-फूलती रहे।

अप्रैल १९३३

## ‘द्विज’ जी को बधाई

‘द्विज’ जी न भ्रम की हिन्दू विरक्तिधामय से हिन्दी में बड़े बीरम के नाम एम ए की डिग्री ली। धाप प्रथम अर्था में उत्तीर्ण हुए। अंग्रेजी में धाप पहले ही एम ए हो चुके थे। मातृकता के सागर में बुद्धिमान समानेवाला कवि और कल्पना के आकाश में उड़नेवाला मत्पकार और परिश्रम-सेवक परीक्षा भवन में बैठकर ऐसी सहायारण सफलता प्राप्त कर ले यह साधारण बात नहीं है। परीक्षाएँ तो रट्टुओं के लिए हैं और इस क्षेत्र में हमारे प्रतिभावालों का रट्टुओं से नीचा देखते पाया है। कवि को परीक्षा से क्या प्रयोजन। कल्पनावालों को भाषा-विज्ञान और भाषा के प्राचीन इतिहास से क्या प्रयोजन लेकिन ‘द्विज’ ने यह पाला जीतकर साबित कर दिया कि वह भ्रम भाव शास्त्र-शास्त्री की दुकान खोलकर बैठ जायें तो वहाँ भी सफल हो सकते हैं। हम इन सफलता पर आपको हृदय से बधाई देते हैं।

मई १९३३

## श्री राहुल सांकृत्यायन जी

राहुल जी काचित् वह पहले भारतीय बौद्ध सन्ध्याधी हैं जिन्होंने तीन बप सिम्बत में रहकर पानी का ज्ञान प्राप्त किया और वहाँ से बौद्ध साहित्य की सपन्न दस हजार प्राचीन पुस्तकें लेकर भारत लीं। आपने वह सब पुस्तकें पटना म्युजियम को भेंट कर लीं। ऐसा साहस ऐसी प्रतिभा ऐसा अध्ययन बहुत कम किसी ने पाया होगा। आबममड़ के एक ग्राम में एक साधारण ब्राह्मण कुल में आपका जन्म हुआ। आपने हिन्दी सिद्धि प्राप्त किया और कुछ दिन गौकरी की तस्तर में रहे। इसी बीच में आपको बौद्ध धर्म में प्रम हो गया और आपने उसकी सीखा ले ली। आपकी बुद्धि इतनी प्रखर है कि बोधे ही दिनों में आपने संस्कृत पानी संघषी बंगला खँच धादि भाषाओं का ज्ञान प्राप्त कर लिया और पुरातत्व के प्रकाण्ड पब्लिश हो गये। फिर तो स्वर्गीय श्री बर्मपाल जी से आपका परिचय हुआ गया और आपकी प्रतिभा और सिद्धता के कारण सभी आपका सम्मान करने लगे। बर्मपाल जी ही की प्रेरणा से आपने सिम्बत की नीपण यात्रा की। सिम्बत में बाहुरवाला का मिठना बहिष्कार किया जाता है, वह सभी जानते हैं पर राहुल जी ने सिम्बती भाषा पर ऐसा धमिकार कर लिया कि धाप सिम्बत के ही समझे जान लगे और फिर तो आपकी हरेक संग्रहणय हरेक बिहार में रसाई हो गयी। आपने वहाँ बौद्ध धर्म का लूब अध्ययन किया और हजारों पुस्तकें संग्रह लीं। वह भारत साहित्य आपने वहाँ धाकर पटना म्युजियम को भेंट कर दिया जैसा हम

पहले कह चुके हैं। आपन इसके बाहर बसारा की यात्रा की। फिर बीड़ बर्म का प्रचार करने के लिए इंग्लैण्ड और योरोप के अन्य देशों की यात्रा की। थोड़े दिन हुए आपने 'बुद्धधर्म' नामक पुस्तक लिखी है जो भगवान बुद्ध का प्रामाणिक जीवन चरित्र है। हृष की बात है कि इस रूप मागरी प्रचारिणी समा काशी न आपको उस पुस्तक की रचना के लिए पारितोषिक देकर आपका सम्मान किया है। कई महीने हुए आपने मागसपुर से निकलनबासी हिन्दी पत्रिका 'भगा' के पुरातत्वाङ्क का सम्पादन किया था और उसमें आपक कई पारिब्रत्यपूर्ण लेख प्रकाशित हुए थे। आपके ही परिश्रम से पुरातत्वाङ्क छटना सफल हुआ। अब ध्यान सिम्बत की दूमरी यात्रा करने का विचार कर रहे हैं और आप उषर से महान् कारावर आदि स्त्रानों में बीड़ धर्म की ऐतिहासिक शोध करने जायेंगे। आप जैसे शील के बलिष्ठ संजम्भो सौम्य पुरुष हैं। बड़े ही निम्न-सार और विनोदशील। योरोप के किसी व्यक्ति ने यह तिष्ठत-यात्रा की शोनी तो सारी दुनिया में उसका प्रोपेगण्डा होता पर भारत में आज भी एक धर्मवीर पड़े हुए हैं जो मार्ग बुद्धि से बच काम करके भी उसका विज्ञापन नहीं करते। हमारी हार्दिक कामना है कि आपकी यह नयी यात्रा सफल हो और आप अपना यात्रा-बुखाल्य निम्नकर हमारे मुबकों के सामने साहसिकता और सयन का धामार्श रखें।

मई १९३३

## श्रद्धांजलि

आज हम हिन्दी-साहित्य के समस्त तपस्वी पुरुष धारण्य में महाशोरप्रसाद की दिवसेरी की सत्तरवीं वषगांठ के पुनीत अवसर पर अपनी श्रद्धांजलि अर्पण करते हैं। नवीन हिन्दी-साहित्य के निर्माताओं में उनकी कीर्ति हमेशा चमकती रहेगी और इस मान के पधिकों की जीवन और आशा प्रदान करती रहेगी।

दिवसेरी की का जीवन साहित्य और साधना और तप का जीवन है। साहित्य ही उनका समन्वय था। उनकी चिन्ता और कल्पना और धारणा और विनोद सब का श्रोत एक था और वह साहित्य है। साहित्य उनके लिए कीर्ति का साधन न था और धर्म का तो ही क्या सफला था। पाश्चिम-प्रशसन भी उनकी मनीबलि न थी। उनके हृषय में इनकी जैसे उठनी हो गहरी थी जितनी हमारे जीवन में स्वाध और समत्व की होती है। उनका स्वाध भी यही था और पत्रमाध भी यही था।

और जहाँ ध्यासित्व है वहाँ शोनी भी है। शोनी भीतर की धाम्मा का बाह्य रूप है। उस शोनी में कितना गर्मज है, कितना प्रसार है कितना आनंद है कितना मुन

अप्य है । उसमें रसिकों का बौकापन नहीं पंडितों का गाम्भीर्य नहीं शायियों की सुकृष्ण नहीं एक सीधे-साधे उचार व्यक्ति की सजीवता है ।

साहित्य की सफलता का किताब उँचा धारदा है । कहीं से कमा से धीरे उसे किस तरह धक्के से धक्के रूप में ससारा की रें यही बुन है । जन-हित का कोई ध्येय इनसे नहीं छूटा । कहीं कोई उपयोगी बीज देखी जाहे वह पुरातन्य से सम्बन्ध रखती हो या दशन से या भाषा विज्ञान से या प्राकृतिक धर्मों से उसे पाठकों के लिए सकलन करना इनका कर्तव्य था । वह जिस बीज को पककर स्वयं बालगन्धित होतै से उसका रस पाठकों को बसना एक ताजिबी बात थी । 'सरस्वती' की अग्रिम छटाकर द्विबेदी थी की सम्प्राप्तकीय टिप्पणियाँ देखिए विविध ज्ञान का भंडार है । ऐसा कोई विषय नहीं जिस पर द्विबेदी थी ने न लिखा हां सहरे-सहरे सात्विक विवेचन और सामाज्य-के साधारण दत्त कथाएँ तक भाषको उनमें मिलेयी धीरे धाप उस व्यक्ति के ज्ञान-विस्तार पर बकित हो जायेवे ।

धीरे यह काम किसी बिना धीरे धान के केन्द्र में बैठकर नहीं एक पाँव की एकान्त कुटिया में होता था । साहित्य की वह छटा उठी कुटिया से निकलकर हिन्दी संसार का आलोकित कर देती थी ।

भाषा हिन्दी में ऐसा कौन सिद्धान्त सम्पादक है जो अपने काम का पञ्चाप बुद्धि से करता हो जो हरेक लेख को आलोचना पढ़ता हो उसकी भाषा का परिष्कार करता हो एक बचुर कलाकार की भाँति पत्थर के एक टुकड़े की बोलती हुई मूर्ति बना देता हो । हमारी कई कहानियाँ 'सरस्वती' ने द्विबेदी का के सम्पादन काल में लिखी । जब वह छप जाती थी धीरे धीरे यस्त से मिलता था ही मान्य होता था उसका किताब क्मान्तर हुआ है । वेरी एक कहानी 'पंच-परमेश्वर' है । मैंने जिस समय उसे द्विबेदी थी की सेवा में भेजा उसका नाम 'अर्चो ने ईश्वर' था । छपने पर देखा तो 'पंच-परमेश्वर' हो गया था । जय से परिवर्तन से वह नाम कौसा बचक उदा ।

द्विबेदी की साहित्य के सम्बन्ध पाठकी है । वहाँ कुछ देखते से बड़ी उबारता से उसका धारण करते थे । उनके प्रोत्साहन ने ही हिन्दी को कई ऐसे कवि धीरे लेखक विवे बिम्होने हिन्दी का नाम रोशन किया । अन्य भाषाओं से भी कोई धक्की बीज देखकर वह मुग्न हो जाते हैं । सबू से समय सम्प्राय हीपर धक्की सौख्य है । उन्होंने एक सम्पादन बीज 'हृकारते किम की कहानी' लिखी थी । द्विबेदी थी ने 'सरस्वती' में उस लेख की सुकृष्ण से प्रस्ताव की धीरे उठी उदात्त किया ।

द्विबेदी की साहाय्य है, लेकिन दान सेनेवाले साहाय्य मही दान सेनेवाने ब्रह्मण्ड । साहित्य की सेवा में जो कुछ सता-पता पोषी-पुस्तक गवह किया था वह सब का सब लोक-सेवा की भेंट कर दिया । साहित्य के पुकारिया में यह भाव कहां ? अन्य पुकारियों की भाँति यह पुजायी भी बिना का तय होता है । यह सब है कि साहित्य का पुजायी

अन्य पुत्रारियों की मूर्ति माग्यशास्त्री नहीं होता। धर्म चिन्ता में जिसे नीच न आती हो उससे उधारता की धारा रहना वायुमोक्ष से छटपटाते हुए धारणी से माना सुनने की धारा रहना है। कभी माया के बरतन भी हुए तो वह उससे हटने और से चिपटता है, कि प्राण निकल जाने पर ही उसके हाथ ढीसे हो सकते हैं। वह एक पसा भी वे तो उसे मात्र लयसे समझे। त्रिवेणी जो ने तो सब कुछ दे दिया। और उनके शिष्टाचार का क्या कहना। वह प्रकृति के नियमों की मूर्ति घटस है। धर्म पत्र लिखो तीसरे दिन किसी न किसी शक से बचाव आयेगा। ही सेटर-बन्ध में कोई तेजाव डाम दे तो घुसरी बात है। वह बन्धनी से धार्य मन से कोई काम नहीं करते। उनकी काया स्वत्व न हो पर मन स्वत्व है।

उन्होंने मौलिक रचनाएँ न की हों लेकिन मौलिक रचयिता पैदा कर दिये। उनका बीरब इसमें है कि उन्होंने अपनी बेलनी से हिन्दी की नीच डाली और उसमें ज्ञान का विस्तार किया और धर्म हिन्दी-संसार धारके उपकारों को माय करके धारके चरखों पर मज्जाबन्ध बद्ध रहा है और ईश्वर से प्राचना करता है कि धर्म बहुत दिनों तक धारकी देख-रेख उस पर रहे, कि धारने उसका मन में जो भक्तता बनाया था हिन्दी-अवन उस मज्जे के ठीक-ठीक अनुकूल बन रहा है या नहीं।

मई १९३३

## राजा राममोहन राय

राजा राममोहन राय का स्वर्गवास हुए ही साल पूरे हो गये और देश में उनकी यादगार मगाने की वीमारियाँ हो रही हैं। हम भी उनकी स्मृति में अपनी भक्ता के पुत्र बकते हैं। राजा राममोहन राय भारत के ही नहीं संसार के महान् पुरुषों में हैं और अब सच्चा धार्मिक इतिहास लिखा जायगा तो संसार के प्रबन्धकों में उनका नाम भी लिखा जायगा। भारत में धर्म जो धार्मिक सामाजिक राजनैतिक और साहित्यिक आनुति है, उसका सूत्रपात राजा राममोहन राय ने ही किया। हमारे राष्ट्रीय जीवन के हरेक क्षण पर उनके महान् व्यक्तित्व की धार्य मयी हुई है। हम उन्हें मनीष माय का जन्मदाता कह सकते हैं। डाक्टर टिगोर के शब्दों में—'वह इस मनीष के महान् पय निर्माता थे जिन्होंने उन बाधाओं का हमारे रास्त से हटा दिया जो हमारी प्रपति को रोके हुए थी और हमें संगार-भ्यापी सहयोग और मानवता के इन नबपुत्र में सम्मिश्रित कर दिया। ऐसे महान् व्यक्तित्वों की मूर्ति धारनी धारता से हममें जीवन का संचार करती है और हमारी यही कामना है कि उनका धार्य धनतकाल तक हमारी धारों के सामने बना रहे।

सितम्बर १९३३

## मिसेज ऐनी बेसेंट का स्वर्गवास

मिसेज ऐनी बेसेंट की मृत्यु का समाचार पढ़कर हमें दुःख नहीं हुआ क्योंकि वह उस मनस्वा को प्राप्त हो चुकी थी जब उन्हें विधाम की सख्त जरूरत थी। उनका प्रबन्धन उतना ही स्वाभाविक था जितना किसी भासक का विकास होता है। संसार में बहुत कम प्राणी हैं जिनके जीवन में कमयोग का ऐसा धारण मिलता हो। सत्य को ग्रहण करने में उन्होंने कईयों की कमी परचाह नहीं की। जब उन्हें ईसाई धर्म से असंतोष हुआ तो उन्होंने सात्वत की शोध में अपने पुराने गहरे लोह बिचे। धर्म में कई सिद्धांत में उनकी ईश्वर-तोही धारणा को शान्त किया और उनका सेव जीवन इसी सिद्धांत के प्रचार में स्थित हुआ। उनका काम करने की अद्भुत शक्ति थी। वह अनेकी जितना काम कर सकती थी वह सामान्य एक वर्जन मनुष्यों से भी न होता। एक सावैलिक साप्ताहिक और मासिक पत्रों का विकासना धर्म और काल पर अमर धर्मों की रचना करना अत्यंत सत्व के प्रचार के लिए व्याख्यान देते रहना और विबोसोफिकल-सोसाइटी जैसी संस्था का संभालन करना और उसके साथ ही भारत के स्वाधीनता-संग्राम में भी प्रमुख भाग लेना उन्हीं तपस्वी धारणा का काम था। धर्म विज्ञान हिन्दू विरबिद्वान् हैं उन्का हिन्दू-कामेज के रूप में मिसेज बेसेंट ने ही बीजापेख किया था। उनके दो एक सिद्धांतों से हमे अतमेव था पर उन्होंने किस बात को सत्य समझ लिया उसके प्रतिपादन में किसी बिरोध की चिन्ता नहीं की और उनकी बस्तुत्व-शक्ति तो अद्वितीय थी। वह इस सताज्जी की सबसे महत्ती महिमा भी थीर हमे निरबाध है कि उनकी विधान बहुत जिनो तक अत्यन्त ही पुरुषों की सार्विक उद्योग का धारण देती रहीं।

२५ सितम्बर १९३३

## मृत्यु पर विजय

एक सच्चे ईश्वर-मक्त के लिए जिस सच्ची से सच्ची मीत की कल्पना की जा सकती है, वही मीत ही सिद्धांत आई कर्मों को मिली। मातृ-भूमि से हजारों कोस पर, जहाँ अपना कोई नहीं है वह कर्मों से बुर लभुभ धपनी पूरी शक्ति से बार करता हुआ पर नहीं लेना वही गर्जन वही अत्यन्त सेव को मुश्किलों को लुप्त सनकता था। यह मीत नहीं है मीत पर विजय बड़ी शानदार, बड़ी ऐतिहासिक बड़ी सविश्रवणी और वह क्या शब्द थे जो अंत समय उन सच्चे राजपूत के मुँह से निकले—'मेरे देश बन्धुओं को और सभार भर के भारत के हितैषियों को मेरा धारणा' थे। जीवन

सीमा समाप्त करने के पहले मैं भारत की आबादी के लिए प्रार्थना कर रहा हूँ। क्या यह मरनेवाले के शत्रु है? नहीं निरपरा नहीं करी पराजय का चिह्न नहीं। एक-एक राज्य में एक विजयी आत्मा की उमंग भरी हुई है। उमने धन्य समय तक सतकार हाथ से नहीं छोड़ी। उस वक़्त भी क्रम पीछे न हटाना जब वह मँदान में धकेला था। कौन कहता है कि वह मर गया? उमने मीठ पर विजय पायी। उसके आशीर्वाद में विजय का र्जन है, धमरल्ल का प्रचार है। ऐसे भीर नहीं मरते। मरते हैं हम और थाप स्वाभों के दास पेट के गुलाम हिम्मत के कच्चे।

क्या उनका बीबन-बुछान्त करें? क्या एसेम्बली की उनकी वह मरदाना आबाज प्राण के कानों में नहीं धा रही है? क्या उनकी वह कल्पि आनको भुल गयी? क्या एसेम्बली की वह सघारत फूलों की शम्भा थी? सपत्नी शासन ने क्या-क्या हथकंडे नहीं कसे कौन-कौन-सी कूटनीति नहीं बनी लेकिन कभी धारने उनके माथे पर बस देना? वह राष्ट्र-सम्मान का रक्षक था। उसकी आँखों ने सामन सचरास्त्रिमाल सरकार की प्रजात न थी कि वह राष्ट्र सम्मान पर अपना आघात कर सके। क्या आपको वह धमर कुरती के मान और अधिकार को विस्तृत करने की निरंतर चपटा की है। एक मण्डित और सबल लोकशाही के विरुद्ध और मुझे विरवास है कि मैं बहुत कुछ सचक हुमा है। उनके बीबन का मुताआ कबल एक शब्द न बठा है—बह शब्द है संघाम। उनका बीबन भावि से सन्त तक एक मम्मा संघाम था जो न बाख मगिता था न बाख देता था। उन्होंने समझीठा करना सीखा ही न था। धरने जन्म-मिन्ड स्वत्वा के साथ संघा समझीठा? धारत कुछ न मिते कम कुछ न मिते पर कभी वो मिसगा। जब लेंगे एक वृष लेंगे। उनमें रशी भर कभी नहीं कर सकते यह उनका ध्येन था। समझीठा वह कपटे है जिन्हें धरने पक्ष में धलख विरवास था। वह बाव क्या मलाई जा मपत्ती है, जब धर सुरेन्द्रनाथ जी की प्ररखा से एसेम्बली ने मीठ छोड़ मुधारों पर सवनमेट हो बवाई ही थी। उस वक़्त धरने मि पटेल ने जिसने एक के अल्पमत से उठ प्रस्ताव न विरोध किया था। उनके बीबन न यदि कोई मामला भी तो वह स्वराज्य था यही उनका शोक था यही उनका नशा था और यही उनका हा था। और वह मीठ के घान बतनेवाले धारमी न था। जब १९३३ में काँग्रेस के सभी मेम्बरो ने एसेम्बली से विदा ली मि पटेल ने धरन पर पर स्थिर रहकर धरने विचार-स्वानम्य का पन्थन दिया था। हाँ जब उन्होंने सरकार की नीयत और नीति रग सी और उपर से निराश हो गय तो सघारत को साज मार दी और राष्ट्र के माप उगडे मँघाम में शरीक हो गये। अधिपियों की-नी उनकी तीव्रस्वी मूर्ति उनका धर्मुन तेज मस्तक उनकी बह बुनुपता धारो उनकी बह मनस्वी प्रतिमा और उनके बह धातुत बासन क्या कभी

विस्मृत हो सकते हैं। हाँ वह अपने शब्दों पर महामत्त का गिभाफ न बढ़ाते थे। वह महात्मा न थे। वह टेढ़े को टेढ़ा कह सकते थे। उनके पहलू में वर्ष बूबा हुआ रिखा जो घ्राह्य होने पर रोटा या चिन्हाइ मारकर, जो अप्रगमिष्ठ होमे पर घ्रावेश मया जाता था। ठीक है, उनके शब्दों में जहर होता था। हम तो कहते हैं—उमर ज्वाला होती थी। और क्या जलते हुए हृदय से आप हीरतल पाल की घाशा रखते हैं। जरा उस महान् आत्मा का उत्सव देखिय। वह उमर का बोध वह बीज स्वास्थ्य का नाटक रोग का प्रकोप और अमेरिका की वह कठिन यात्रा। हिमने की शक्ति नहीं है। यमराज का विनाश या चुना है पर स्ववेश मोह को हृदय से जगामे हुए है। धर मी यह माया उन्हें नहीं छोड़ती। कितना अशय धनुराग है। अंतिम कम्प जो उनके मुक्त से निकलता है, वह—स्वराज्य है। यही स्वराज्य उनके जीवन का स्वप्न था इसी के लिए जिसे इसी के लिए सड़े इसी पर धपना सब कुछ कुर्बान किया। यह बेटे बेटों का मोह नहीं है वह जन सम्पदा का मोह नहीं है जिसके बधन डीने पड़ जायें यह स्वदेश का प्रेम ॥ का आत्मा के धनु-भाग न व्याप्त हो पया है और अजर आत्मा अजर है तो वह प्रेम भी अजर रहेगा और शायद स्वर्ग की सुख शान्ति में भी यह प्रेम यह माया उन्हें लड़पाटी रहेगी और उनके सूक्ष्म मंत्र अपने उस अमाये देश की धार लमे रहेंगे जिस पर उन्होंने अपना सर्वस्व बार दिया।

३० अक्टूबर १९३३

## श्री रंगस्वामी आइंगर की शोक जनक मृत्यु

तामिल के प्रमुख वैदिक पत्र 'स्वदेशमित्रम्' के महत्सवी संपादक श्री रंगस्वामी आइंगर की मृत्यु से एक ऐसा व्यक्ति उठ गया जो राजनीतिक गुत्थियों को मुसम्हाने में अद्वितीय था और जो कुछ सत्य समझता था उसे प्रकट करने में सच्चा या अतिकार से शेरमात्र भी भयभीत न होता था। आप पहले मद्रास के प्रसिद्ध अंग्रेजी वैदिक पत्र 'हिन्दू' के संपादक रहे, फिर आपन अपना तामिल पत्र 'स्वदेशमित्रम्' निकाला और अपनी प्रतिभा और श्रेष्ठ से इस पद पर पहुँचा दिया कि वह बड़े से बड़े प्रभावशाली अंग्रेजी पत्रों से भी ज्यादा धाबर से पढ़ा जाता था। भाषा के पत्रों में कितना सम्मान 'स्वदेशमित्रम्' को मिला उतना शायद किसी अन्य भाषा के पत्र को नहीं प्राप्त हुआ। आप कुछ दिनों कांग्रेस के जनरल सेक्रेटरी रहे थे और स्वराज्य पार्टी के निर्वाहकर्तव्यों में आप भी थे। स्व पंडित मोतीलाल नेहरू और श्री धार दास आपको अपना दाहिना हाथ समझते थे। इसी यौलमेव समा में आप भी सम्मिलित हुए थे और उस वक्त आप का विचार यह था कि कांग्रेस को नदी व्यवस्था से दूर न रहना चाहिए, क्योंकि



इससे साम की बगल बहुत बढ़ी जाति होती। आपकी मृत्यु से राज को जो क्षति पहुँची है, उसका अनुमान जग शम्भू से हो सकता है, जो महात्मा गांधी न शोक प्रकट करते हुए लिखे हैं।

१२ फरवरी १९३४

## राजा सर मोतीचन्द का स्वर्गवास

राजा सर मोतीचन्द के उठ जाने से काशी को जो क्षति पहुँची है, वह मुश्किल से पूरी होगी। आप बड़े गनी परोपकारी और सहृदय व्यक्ति थे। आप की प्रभुत्वा शमी कुल घट्टावन साम की भी आपका स्वास्थ्य भी बुरा न था मगर पिछले साल आप पर सन्ने का जो आक्रमण हुआ था उसने अन्त में आपकी जान ही लेकर छोड़ी। कई मास पहले आप तीन सेशन तक एसेम्बली के मेंबर रहे, और हिन्दू विरभन्निघासन तथा अन्य सांख्यिक कार्यों में आप को बड़ी दिलचस्पी थी। देश के औद्योगिक उद्वार के लिए आप बराबर प्रयत्न करते रहे और काशी का काम मिल आप ही को याशगार है।

२६ मार्च १९३४

## स्व० पण्डित बदरीनाथ भट्ट

पण्डित बदरीनाथ भट्ट धार इस सभार न गद्दी हैं। बीमार तो वह थो-डाई साल से थे लेकिन बिज आशमी के पोर-पीर में जानबारी भरी हुई हो जो रोय-शमा पर पड़ा हुआ भी हँसता और हँसता रहा हो जिसके मनीष जाते ही मुरझाया हुआ मन सहस्रता उठना हो जो मानों धपन बाखी और स्नेह स जीवन बिलौरता रग हो वह मीठ के इतन समीप है यह हम न समझते थे। साल भर स अधिक हुआ हमने सदनरु में उनक बरान किये थे। धाराम कुर्सी पर लगे हुए थे। देह चीख हो गयी थी चहरे पर जरवी धापी हुई, धाँपा के नीच गहरे पड़े हुए, अन्त मूचे हुए, लेकिन बीमारी धात्मा तक न पहुँच सकी थी। बातों में तब भी बहो शोधी बही जिग्शा-दिनी थी। धपनो बीमारी का बिकरते रहे, मकर उच्चम अनाध्य रोगी की निराशा या कबूला न थी न वह मोह न था हसरत बन्कि एक जीवन से भरे हुए हृदय का चुरम और बिजोर था जो मानो मरु का नामने पड़ी देकर भी निःशक भाव स नह रहा था—जब मरु गा तब मर जाऊँगा माने के पहले बही मर सकता। हाथ के मट्टा बहुधा बड़े यन्मीर और मूचे होते हैं। भट्ट जी का मन भी हस्तमय था और तब भी। सतीर्थों और भट्टकुत्तों के ता

मानों वह अर्थात् वे धीरे मनुष्य की कमजोरियों की एक निमाह में पहचान सेते थे । अपने जीवन के दुःख प्रसंगों को भी जो विनोद के रंग में रंग सकता हो यह सिद्ध मट्ट जी ही में थी । दूसरे अपनी विजय को जितने आनन्द से बयान कर सकते हैं, उतने ही आनन्द से वह अपनी पराजय की कर्षा करते थे । हास्य की उस ज्ञान में जो जीव बाती थी विनोद बन जाती थी । हिन्दी-प्रेमी सञ्चयनों के व्यवहार के उन्हें कई बार कड़े अनुभव हुए थे और 'हिन्दी प्रेमी सञ्चयन' उनके सटीकों में बार-बार नये-नये रूप में आते रहते थे । जैव यही है कि उनके पाठकों के सिवा उनकी हास्य रचना कहीं संभव नहीं हुई । उन्होंने कई पत्रों में नियमित रूप से साहित्यिक विनोद के स्तंभ की पूर्ति की । उसमें राजनैतिक व्यंग भी होता था कट्टर भी चुटकियाँ भी गुदमुशियाँ भी । अतएव उनमें से रत्नों को छाँट लिया जाय तो हास्य का बड़ा ही रोचक संग्रह तैयार हो जाय । 'सोसालकारिणी-समा' के रिपोर्ट और 'मिन्टर की डायरी' में आज भी मनोरंजन की बहुत सामग्री मिल सकती है ।

मट्ट जी मिठाहारी थे मिठव्यपी थे संयमी थे स्पष्टवादी थे व्यवहार में सरे से उनमें कहीं भी वह नफासत और गवाकृत न थी जो हम उदीयमान कवियों में देखते हैं वह सैनाजी-पल न था जो साहित्यिकों की विशेषता समझी जाती है । उन्होंने दुनिया देखी थी दुनिया की कठिनाइयों का सामना किया था और उन पर विजय पायी थी उन फूलों में न थे जो हवा के एक झंके से धुरन्ध्र जाते हैं, वह मनुष्य पहले से कवि ड्रामेटिस्ट और हास्यकार पीछे । उनकी नाकुकता कभी संयम से बाहर न जाती थी । वह उन लोगों में न थे जो इस बात पर गर्व करते हैं कि उनके पास कौड़ी कपड़ों को नहीं है जो मित्रों की मेहमानी पर जीवन बिताकर बेछिन्नी का बन भरते हैं । वह स्वयं अपना भोजन पकाते थे पसे की बगल बेसा खर्च करते थे और हिस्सा छात्र रखते थे । बड़ी-बड़ी कठिनाइयाँ भेरी पर किसी का एहसान नहीं लिया । उन्हें कोई व्यसन न था (साहित्यिक व्यक्तियों के लिए कोई न कोई व्यसन पास लेना आवश्यक धार्मिक में बाधित है) उनकी कल्पना सक्ती टेकती हुई न बसती थी उनमें जो प्रोजेक्ट वा और संयम का उसी से रचना-शक्ति उत्पन्न होती थी उसी तरह जैसे बाहुबल से बया और जमा उत्पन्न होती है ।

मट्ट जी मौलिकता के पुजारी थे और जो कुछ सिखा मौलिक सिखा । बंदना अनुभवों से उन्हें बुझा थी । हिन्दी में जो निराशावाद का धीर है, इसकी जिम्मेदारी वह बैंगना साहित्य का भिर रखते थे । वह खुद धीर भक्त थे । बैंगनी नाटककारों के बोररस प्रश्न का खूब मजाक उड़ाते थे । प्राचीन कवियों का मूल मृगार-बर्तन को भी वह हिन्दी-साहित्य का कलंक समझते थे और यह उनके साहित्यिक परिहास का एक स्रोत था ।

मट्ट जी न जीवन में एक ही काम रोमांटिक रंग से किया और यह अपना

बिबाह था। जिस बेबी से उनका प्रेम था उससे बँध-परम्परा को खरा भी परबाह न करके उन्हें चुपके से बिबाह कर लिया। मित्रों को खबर तक न थी। इसकी खबर उस वक्त मिसी जब घापका भर घाबाद हो चुका था इसलिए बोली छेक कर दावत लेने का प्रबसर भी मित्रों ने हाथ से जाता रखा। कई दिन बाद मित्रों के पास मिठाई पहुँची जिसने उनके प्राण पोंछे। हमारे पास वह मिठाई भी न पहुँची। एक दिन रास्ते में उनसे हमारी मुसक़ात हुई। हँसकर बोले—‘गभी घापकी मिठाई रली हुई है घायमी घापका मकान तमारा करके जसा घाता है, नमी मकान सब कुछ बता देता हूँ पर उसे कुछ पता नहीं जसता। घब मे खुद ही लेकर घाऊँगा।

घाजिर हमने बेहयाई की थीर उनके बर जाकर मिठाई जामी।

बही जिन्या रिज बसिष्ठ संयमी प्रतिभाशाली ब्यक्ति ऐन जबानी में प्रकास मूयु का प्राप्त बन गया जब साहित्य को उसकी प्रौढ़ प्रतिभा से बहुत कुछ घाशार्पे बन रही थीं। घाज भी उनमे घण्डे कबि उनसे घण्डे नाटककार थीर उनसे घण्डे हास्य सेवक मौजूद है लेकिन ऐसी बिनोदशीलता ऐसी उबलती हुई प्रसन्नता एसी उच्चलती हुई मुरामिबाजी हमें कहीं नजर नहीं घाठी। घट्ट भी इस मैदान में बकेसे वे। उनकी यार बहुत दिनों घायेगी थीर हृदय में उनका जो स्वान था वह बहुत दिना ज्ञानी रहेगा।

१४ मई १९३४

## स्वर्गीय प० चन्द्रशेखर शास्त्री

घमी मत सप्ताह प्रयाग में पं चन्द्रशेखर शास्त्री का स्वर्गवास हो गया। शास्त्री भी संस्कृत के बिडान् होते हुए भी हिन्दी के बड़े हिमायती थीर सबक वे। बहुत बयों से घाप हिन्दी की सेवा करते घा रहे वे। कई बयों पूब घापने ससूत में ‘शाखा’ नामक उच्चकोटि की पत्रिका निकाली थी पर वह बबिक बयें न बन सकी। साहित्य मे घापका बड़ा प्रनुराग था बन्कि यह कहना चाहिए कि साहित्य-सेवा करना घापका एक ब्यसन ही था। घम-बारह बयों पूर्व घापने ‘समाज’ नामक एक हिन्दी पत्र भी निकामा था पर हिन्दी का दुर्गम कि वह भी न बन सका। पत्रा की सिधा के मम्पान-बिघाय से भी घापका सम्बन्ध रहा है। घापने घनेक घण्डों का निर्माण किया है। माहित्य सम्मेसन भी मेवा घाप बड़े नि-स्वार्थ भाव से करते रहे हैं। घायका साध जीवन साहित्य को सेवा करते ही बीता। हर एक बहुत बड़ा घायोजन घापने किया था— मन्त्रि और म्मूर्ध सटीक हिन्दी महाभारत प्रकाशन करने का। कुछ लख प्रकाशित हा भी चुके वे कि घाप बन बसे। हम शास्त्री जी के मुपुत्र भी प्रफुल्लबन्ध घोम्न थीर

उनके परिवार से समवेक्षणा प्रकट करते और धाता रखते हैं कि वे शास्त्री जी के रोप कार्य को उसी योग्यता और उत्साह से पूर्ण करने का प्रयत्न करें।

जुलाई १९३४

## स्वर्गीया मैडम क्यूरी

गत सप्ताह संसार प्रसन्न रेडियम की आविष्कारी मैडम मेरी क्यूरी का स्वर्गवास हो गया। इसमें सन्देह नहीं कि जगत के विद्वानों वास्तविक वैज्ञानिकों के लिए यह समाचार महान् दुःखदायी होगा। आपका रेडियम का आविष्कार विश्व के इतिहास में एक महान् कार्य है। रेडियम से साधारणतः सब सभी सोप बोरे-बहुत परिचित हो गये हैं। यह संसार में सबसे मुख्यतः धातु है और बहुत ही कम साधारण में पायी जाती है। कहा जाता है कि वो सी टन से भी अधिक कच्ची धातु के शोधन करने पर केवल एक ग्राम रेडियम प्राप्त हो सकता है और इस एक ग्राम रेडियम का मुख्य दो भाग स्वयं होता है। इससे ज्ञात किया जा सकता है कि संसार में इससे मुख्यतः धातु और कोई नहीं है। सन् १८९६ में बेक्वेरेल ने पित्तल के रेडियो-रेक्टिव धातुओं का ज्ञान प्राप्त किया। मैडम क्यूरी ने भी अपने पति के साथ इस तत्व पर अनुसंधान प्रारम्भ कर दिया। आस्ट्रियन सरकार के डॉक्टर पिब्ले नामक पित्तल की एक टन कच्ची धातु, इन्हें अनुसंधान के लिए प्राप्त हुई। आपने अपने टूटे स्रोतों में अपना कार्यालय कर दिया। भाव यह टूटा स्रोत वैज्ञानिकों की दृष्टि में बड़ा महत्वपूर्ण है।

मैडम क्यूरी ने कई पुस्तकों भी लिखी हैं। सन् १९१३ में आपको भौतिक विज्ञान विषय का नोबल पुरस्कार मिला था। रायस सोसायटी ने पश्क से और पेरिस विश्व विद्यालय ने डॉक्टर की उपाधि से आपको सम्मानित किया था। सन् १९१६ में आपके पति मिस्टर क्यूरी की मृत्यु हुई और सन् १९३४ के इसी सप्ताह में मैडम क्यूरी भी स्वर्गवासिनी हो गयीं। यद्यपि आप इस समय संसार में नहीं हैं पर इसमें सन्देह नहीं कि आपका यह सब-सर्वदा धर्म रहेगा।

जुलाई १९३४

## डाक्टर हीरालाल का स्वर्गवास

कठनी (सी पी) के डाक्टर हीरालाल जी पीपी के मुख्यतः मोठो की तरह साम्राज्यसे व्यक्ति थे। लगभग पचास वर्षों से आप हिन्दी-साहित्य की सेवा करते आ रहे थे। अंग्रेजी के आप पुराने प्रमुष्ट और संस्कृत पाली और प्राकृत के प्रकाण्ड विद्वान्

ये । माधारण-सी नौकरी में थाप डिप्टी कमिश्नर क पर तब पहुँच वे धीर हमी धरमर में धापने इतिहास धीर पुरातत्व-सम्बन्धी खोजों के द्वारा धाने को काफ़ी बिर्यात कर लिया था । यों कहना चाहिए, कि इतिहास-पुरातत्व क क्षेत्र में धाप भारत के एक दिने बने अन्तर्राष्ट्रीय ब्याति-प्राप्त महान् ब्यक्ति थे । कासो नागरी प्रचारिणी सभा तथा धनेक हिन्दी मस्बाधों से धापका सम्बन्ध था । कासो नागरी-प्रचारिणी सभा के ठो धाप बयों समापति भी रहे थे । वो बयों पूब पटना म होनबासो धोरियण्टस कांफ़ेस के धाप समापति बनाने गये थे । धीर धमो-धमो धाप बिरब-पुरातत्व-परिपद् में भारत क प्रतिनिधि की हूँसियत से गेबे गये थे । धाप बड़े ही सरल धीर उचार थे । धमिमात्र धाप में बरा भी नहीं था । धापने धावम्ब हिन्दी-माहित्य की सेवा की पर खेव कि हिन्दु स्तानियों क धापक यथाव सम्मान न किया । नापपुर बिरबिद्यालय मे ठो धव वाकर कहीं उन्हें डी सिद् को उपाधि से विमूषित करके शाउद धपने को धातेप म मुक्त किया था । पर डाक्टर साहब का ब्यक्तित्व धीर काउ ही ऐसा बबरदस्त था कि बिना माँसे उन्हें देश धीर बिदेश से महान् परा मिल गया था । धापने मो पी के कई त्रिमा के इतिहास-संबन्धी 'सागर सरोब' 'मोह धीपक' 'अबनपुर श्रोति धारि कई महत्त्वपूख पुस्तकें भी लिखो थीं । हिन्दी धीर देश का दुर्माप्य है कि १९ अगस्त को धापका स्वगवास हो गया । हम धापके परिवार के साथ मन्चे हृदय से समबदना प्रकट करते हैं ।

सितम्बर १९३४

## कालाकाकर नरेश का स्वर्गवास

साहित्य-क्षेत्र में ठो कालाकाकर का नाम पचासा बयों के पूब ही बमक उठा था पर इपर बहु राष्ट्रीय क्षेत्र में भी बगमगाने लगा था । कालाकाकर के बतमान नरेश की धबबत सिंह को न धपने को पूर्य राष्ट्रवासी धीर काँधम-अक्त बनाकर मु पी के तामुकेदार धर्म मे उच्च पर प्राप्त कर लिया था । कालाकाकर को महाम्मा की के पगान्य द्वारा धाप ही मे सबप्रथम पावन बनाया था । धानने धपने परिवार नर का ही रंग एकत्र धरल दिया था । धाप बड़े उल्पाही देशभक्त धीर निर्भीक ब्यक्ति थे । साइमन-नमीशन का बाउकाण करल में धानने बड़ा ओग्यार काम किया था धीर धनम्बक धारदो धनेक कष्ट उगान पड़े थे । खेव की बात है कि एमे धारश देश भक्त नरेश का जो धान को एक स्वयंसेवक समझना था ता ७ सितम्बर के प्राउ काय स्वगवास हो गया । हम धापके परिवार के साथ समबेगना प्रकट करते धीर ईरर मे प्रापना करते हैं कि उनकी धारभा को शान्ति प्रदान करे ।

सितम्बर १९३४

## श्रद्धाजलि

काशी के उस धवतारी महापुरुष 'भारतेन्दु' ने ब्रह्म संवत् १९७ में जन्म लिया और सम्बन् १९४१ के माघ मास की कृष्णा पक्षी की पुण्य-शोक का प्रयास किया था। बीतीस बर और कुछ महीनों के अल्प जीवन में उसने हिन्दी को जन्म देकर उसकी जो सेवा-सुधूपा की उसकी जो शरीर-संवर्द्धना की उसे वह तो नहीं देख सका पर मात्र पचास बरों के बाद हिन्दी का भक्त और सेवक उसे देख-देखकर निहाम हो रहे हैं। वास्तव में हिन्दी के विधि-विधान से 'भारतेन्दु' ने धवतार लिया था और धवतारी महापुरुषों की तरह ही अल्पकाल में वह बहुत कुछ करने निमीन हो गया। मात्र कौन है उनका समकक्ष ? कोई होगा इसकी किसे खबर। कुछ मित्रों ने अन्य भाषा-जगत में उनके समकालीन समक्ष साहित्य विधाताओं को शोक निकाला है, ठीक है, पर अभी भ्रांति देखने और विचार करने पर 'भारतेन्दु' का प्रकर प्रकाश तो असम ही एक बिसिष्ट अकार्षीय कैलाश नखर धाता है। अन्य भाषा-साहित्य के विधाताओं ने अपने जीवन के पचास-साठ या सत्तर बरों के काल में जो कार्य किया उससे कहीं अधिक और विविध-विध हमारे 'भारतेन्दु' ने सत्रह-अठारह बरों में कर दिखाया। उसकी बतुर्मुख प्रतिभा अस्मयनशील व्यक्तियों के हृदय धान्त्व विमोर कर देती है।

'भारतेन्दु' वास्तव में एक महान पुरुष था। उसके सच्चे हृदय में वहाँ राजा के प्रति प्रेम था वहाँ बुद्धता-अस्य अपने वैराग्यियों के प्रति भी सच्ची सहानुभूति और सच्चा श्रव था। महान् कवि होते हुए भी उसने गुणी कवियों को एक-एक शब्द के लिए एक-एक शतर्फी तक भेंट की। वह सच्चा मृगशीर्ष था। रस रंग में परिष्कारित रहते हुए, श्रव का विद्या बनाते हुए भी उसने गरीब भूखों को शरीर के बस्त्र तक उतारकर शान कर दिये। वह सच्चा बानी था। मात्र स साठ बरों पूर ही उसने बेश का जन विवेक बातें देखकर हृदय का धीसु बहाये थे और कहा था— वे जन विवेक बलि जात यह प्रति क्वारी। वह सच्चा बेश भक्त था। समाज-हित-साधन में जाति-विदाहरीबातों का और शक्तों की वीम शोभकर गवर्नमेण्ट का कोप प्राजन होने की उसने अर भी परवाह न की और कष्टों का बने साहस से सामना किया—ऐसा था वह भारतेन्दु।

परम प्रसन्नता की बात है कि मात्र पचास बरों के बाद हिन्दी के सेवकों ने उस महान विभूति का अर्द्ध-शातापी उत्सव मनाने का आयोजन किया है और सभी अपने-अपने हृदय की अर्द्धांशलि-अपवा कर रहे हैं। हम भी सब के साथ सारर अर्द्धांशलि अर्द्ध करते हुए ईश्वर से प्रार्थी हैं कि एक बार फिर एक बार उमे इस लोक में भेजकर अपनी आत्मजा हिन्दी को तनिक देख लेने का अवसर दे कि पचास बरों में वह कैंती फली-फूमी और राजमाया का रूप धारण कर चुकी है।

जनवरी १९३५

## स्वर्गीय सूर्यनाथ तकूरू

गत ११ दिसम्बर को १ बने दिन में सूर्यनाथ तकूरू का स्वर्गवास हो गया। किंतु मामूम था कि जबल निमोनिया के प्रहार से वह विषय बेहवासामा प्रतिमातामी बक मेवस पञ्चीस वर्षों की धर्म धामु में ही यों धकस्मात् कुचम दिया जायगा। जैसे बुनिया म नित्य ही बीब वम सेते धीर मय हो जाते हैं पर जिसके द्वारा भविष्यत् म हिन्दी की धर्ममुत् सेवा होगी उसका भी उस युवक के निधन पर प्रमा किंतु हिन्दी प्रदी को दुःख न होगा। जिसने उसे पने लक्ष्मणर बालों से मुक्त होर की तरह दर्दन उठाये दहाइते हुए देखा हो वह प्रमा बीबन भर उसे छेडे मूस सकता है। वह मस्ताला बीबटवाला युवक जब दरबाने पर पहुँचकर दहाइया था तब अलबेनिया करती हुई कम्पमाएँ उसके मुख की धोर देखित हो जाती थीं। वह बड़ा ही हँसोड युवक था। जब तक वह बैठता समा बँधा रहता था। वह दिन खोलकर निर्दुष्ट होकर बायाँसाप करता था। उसके ध्यवित्त में जाइ था। उसे पड़ने-सिलने का बड़ा शौक था। कोई भी धन्धी लकी छिटाव निकलती तो सबसे पहले लीटदकर बड़ी पबता। वह धन्धा सेबक था धीर कवि भी। धन्धी पचों म भी वह सेबक सिखा करता था। एम ए करके एम एम बी की तैयारी कर चुका था। इन्स्पेक्टरमन सिखने की उसम साध प्रवृत्ति थी। सामयिक प्रसंगों पर वह बड़े धन्धे ध्यय सिखा करता था बड़ी धन्धी बुटस्वियाँ लिखा करता था। धध्ययन करते हुए ज्ञानबद्विनी बातों का संग्रह करम म उसे बड़ी रित्तवस्ती थी। बड़ा धन्धा संग्रह उसने कर रखा था। हमने जब 'हंस' का स्वदेशिक' निकाला तो उसने 'स्वदेश के सम्बन्ध म शीर्षकवाली समत' के नाम ध सत पृष्ठों की एसी सामग्री दो जो समित समय तक परिधम करने धीर धनेध धचों क हबारों पृष्ठों का धध्ययन करने से ही प्राप्त हो सकती है। बातचीत करने म हुन्ती मजाक में बड़ा कुशल बड़ा हाजिर-अबाज। उसके ससम से बातावरख मस्त हा जाण था। एवं रित्तकृत युवक क नियम धं मन्ममूख लिम को महार दुख हुआ धीने मय हो गयीं। बीबन में उनकी यात्र हमसा वाजी बनी रह्यी। ऐसे समय उनके परिवारवातों के दुःख का बँध धन्धा मयाया था सपता है। दिबर उन्हें यह दुःख सह लेने की धन्धि दे। हम उन स्वर्गीय क परिवार के निवट धारिमक समबेधना प्रकट करते हैं।

जनवरी १६३७

## स्वर्गीय मौलाना हाली की शताब्दी-जयंती

स्वर्गीय मौलाना हाली (क्यामा धमशाक हुसेन) उर्दू साहित्य के युग-प्रवर्धकों में हैं और मय मस्ताह उनके जन्मस्थान पानीपत में जनमी जनमी जिम ममापीठ से मयायी

॥ स्वर्गीय मौलाना हाली की शताब्दी-जयंती ॥

गयी वह उनकी शान के सवचा योग्य थी। समापति के आसन को हिव हाइनेस नवाब साहब मोपास ने सुरोमित किया था और भारत ने प्रत्येक प्रान्त से भक्तों ने प्राकृत अपनी यज्ञावलि उनकी स्मृति की भेंट की। उनमें नवाब भी थे रईस भी थे साहित्य के उपासक भी थे। अशोकद्वय और ससमागिया विश्वविद्यालयों ने भी अपने प्रतिनिधि भेजे थे। निजाम हैदराबाद का प्रतिनिधि भी आया था। पानीपत में एक हामी मुसलिम हाईस्कूल है। एक कन्या पाठशाला जोसने का निरन्धय भी किया और नवाब साहब मोपास ने बीस हजार रुपये प्रदान किये। अन्य सज्जनों ने भी दस हजार भन्दा दिया।

मीसाला हामी उर्दू साहित्य में लक्ष्मण के प्रवर्तक हैं। उर्दू शायरी को अक्षकारों और कविम भावों और विरह के पंचकों से मुक्त करके उसमें आधुनिक पैदा करनेवासी मानाएँ भरीं। आपका 'मुसद्दस' उर्दू साहित्य का सबसे प्रसिद्ध काव्य-ग्रन्थ है जिसमें मीसाला हामी ने मुसलिम राष्ट्र के उत्थान और पतन का बुतान्त भोज और प्रसाद से भरी हुई सैनी में बयान किया है। पहल आप गजबें कसूते थे पर उसे ब्यक्त समझकर छोड़ दिया। लक्ष साहित्य में भी आपका स्थान उतना ही ऊँचा है। आपने सर सैयद अहमद का बीबल-वरिष 'हवाते जाबेव' (अमर बीबल) के नाम से लिखकर उर्दू में विचारालोक बीबल-वरिषों की बुनियाद डाली। उर्दू साहित्य में आलोचना के जन्मदाता भी मीसाला हामी ही हैं। आपकी शही गम्भीर विचारपूख होती है और कठिन में कठिन विषय की भी आप ऐसी व्याख्या करते हैं कि वह सुयम हो जाता है। साहित्यिक नैतिक और शारीरिक विषयों पर आपने लिखने ही लिखने सिले जो उर्दू साहित्य का धौरव बढ़ाते हैं। मीसाला हामी सर सैयद अहमद के बनिष्ठ मित्रों में थे और अलीगढ़ यूनिवर्सिटी की स्थापना में उनका पूर्ण सहयोग था। हम जो आपकी स्मृति में अपनी यज्ञावलि प्रपण करते हैं। कौम ऐसे ही कवियों और विचारकों से बनती है और हमें यह बँसकर पर्व होता है कि उर्दू के अन्त अपने महारथियों का सम्मान करने में किन्ती से पीछे नहीं है। खुशी की बात है, कि इस समारोह में हिन्दू साहित्यकार भी शरीक हुए थे। साहित्य एक ऐसा क्षेत्र है, जहाँ पंथिक भेद-भाव के लिए स्थान नहीं।

नवम्बर १९३४

## मि० किर्पिंग का स्वर्गवास

इंग्लैंड के मशहूर साहित्यकार रुह्याव किर्पिंग का स्वर्गवास हो गया। आपका जन्म भारत में हुआ था। आपके पिता बम्बई के प्रांत स्कूल में अध्यापक थे। रुह्याव किर्पिंग ने यहीं शिक्षा पायी यहीं अंग्रेजी पत्रों में लिखना शुरू किया और स्वाति पा जाने के बाद विभापत चले गये। उनकी भाषा में प्रवाह का विचारों में



प्रायः ही धीरे उनकी सुन-सन्निध प्रभु भी । उनकी रचनाओं में 'अथल बुक' किम  
 धीरे धीरे अज्ञानियां धरत है । धीरे धीरे के विषये यथापि किन्तु उन्होंने कीचे  
 धीरे में बहुत कम किन्ती के धीरे हूँगे । धाप साम्राज्यवा' के धन्य मन्त्र से धीरे  
 धापके मन्त्र में पश्चिम धन्य तक पूर पर प्रमुख धन्ये रखने के लिए धामा वा पर  
 इस मन्त्र को स्वीकार न करते हुए भी इसमें कोई संदेह नहीं है कि बहु ठीके धरजे के  
 धनाधार से धीरे धामे अलकर धापके उन्हे धपने गमती नजर भी धामे सयो धो ।  
 फरवरी १९३६

## सम्राट् जाज' प चम का स्वर्गारोहण

किन्ते इस धनिष्ट की संका भी कि सम्राट् जाज' प चम का इतने धान्तिमिक रूप  
 से स्वभाव हो धान्यगा । मृषु तो संसार का धर ब सत्य है । विषये धन्य लिखा है, वा  
 मरेना ही पर सम्राट् का धन्य इतना निष्ठ है, इसकी ही कल्पना तक न की जा सकती  
 भी । धीरे सासन में धो बुध करता है, मंत्रिमन्त्र करता है, पर धन्यत रूप से राजा का  
 धन्य पढ़ना धनिधाम है । यह धीरे नहीं धामता कि धुली भारत पर उनकी विरोध धृष्टि  
 रखी थी । धापके लिए धापका सामाज्य केवल एक मानधिष न वा बन्धि सत्रीव वस्तु  
 धा विषये धाप मत्तो-प्रति परिचित थे । धाप १६ १ में भारत धामे धीरे धरही से  
 धाकर धामे धर्नरत में धो धापक विवा वा उसमें भारत के प्रति सहायधुति की  
 प्रसा धी थी । इसी तरह दिल्ली दरबार के धुम धन्य पर भी धापने भारत के लिए मान्यना  
 धुनेधार्द प्रकट की थी । धापको धन-धन धन्यर मिले धापने भारत के लिए मान्यना  
 धरे उन्हाइ धननेधार्द सन्य धरहे । धान धापकी मरु धे भारत को धपने एक सन्ध  
 धिर्वी के उ' धाने का ठोक हो रहा है । धापका राज्यका धानी धुधेति के लिए  
 बहुत धिनों तक धा' रहेगा ।

फरवरी १९३६

## हजरत राशिद सैरी का स्वर्गवास

हजरत राशिद सैरी के स्वर्गवास में उर्दू-साहित्य में ऐसा स्वागत गानी हो गया  
 जिमको पूरि धुरिधन्य मे होपी । धान उन सेधकों में वे जो ममान में धन्याय नहीं देन  
 सकते धीरे धपेता उसके धिनाक वेहा' करते रहते हैं । धानने धपनी सारी प्रविषा  
 मुस्लिम महिनाओं धी बकामत की धोट धर थी । धापकी सेधनी से करणा भी धाननी  
 धरती थी । महिना-धीधन धीरे धनके धनोधाओं वा धापने गहरा धन्यधन किया धा

॥ हजरत राशिद सैरी का स्वर्गवास ॥

घीर जब अपने पात्रों को कलश-रुपा कहते थे तो उस व्यापका का चित्र-सा खींच देते थे । आपने संकड़ों पुस्तकें लिखी हैं घीर जो अनप्रियता आपको प्राप्त हुई वह फिरसे ही किसी को मिली होगी । आपकी शैली सबका बनठी है । बहुतों ने उसकी नकल की पर कोई सफल न हुआ । उसमें आपका व्यक्तित्व आहूने की तरह झमकता है । किसी की प्यारी जवान लिखनेवाला आपको बाद जब घीर कोई नजर नहीं आता । ईश्वर आपको स्वर्ग प्रदान करे ।

मार्च १९३६

## श्रीमती कमला नेहरू का स्वर्गवास

जिस वस्तु श्रीमती कमला नेहरू के स्वर्गवास की खबर प्रसंगों में किसी ता ऐसा कौन धायमी या जो प्रसंगों को पटककर सिर पर हाथ रखकर कई मिनट तक मर्महत की-सी बसा में जो न गया ही । यह केवल राष्ट्र की बीर सेविका की मृत्यु न ही अपनी ही बहन या माता की मृत्यु थी । उस सुख-खी देह में कितनी सामना शक्ति थी जिसने कभी स्वयं की स्वयं घीर छतरे को छतरा न समझा और कठिन से कठिन बातनाएँ हँसकर भेरी । यह आपके उस प्रेम की विभूति थी जिसने घारे देश को अपने अन्तर समेट लिया था । त्याग घीर सहस्र प्रेम ही के मित्र रूप तो है । जिसमें प्रेम का बल नहीं वह राष्ट्र पर अपने को होम कैसे कर सकता है । जिस वस्तु आप यहाँ से योरोप नहीं तो हम आशा थी आप वहाँ से स्वस्थ होकर लौटेंगी । आत्मी हानत कुल-कुल संभलने की छतरे भी आधी थीं । पवित्र जवाहरलाल जी जब बेडन-बाइलर से लम्बे आये तो हमने समझा अब कोई छतरा नहीं रहा मगर हमारी आशाएँ झूठी निकलीं और आप राष्ट्र के सामने बीर मारी का अमर धारक रखकर प्रस्थान कर गयीं । हमें पवित्र जवाहरलाल से इस मातम में किसी हमदर्दी है, जिनका उपस्वी कठोर कठम्य का अम्यस्त जीवन भी इस सुनेपन को शायद ही मिटा सके ।

अप्रैल १९३६

## श्री मैथिलीशरण स्वर्ण-जयन्ती

श्री मैथिलीशरण जी न हिन्दी-साहित्य की जो सेवा की है उतनी शायद किसी व्यक्ति ने नहीं की । हिन्दी के महीन पद्य-साहित्य में से उनकी विभूतियों को निकाल इसलिए तो वह केवल फुटकर वचिताओं का संग्रह मात्र रह जाता है । महाकाव्यों का धारि से ही साहित्य में सर्वोच्च स्थान रहा है । संसार-साहित्य में धार भी जिन पद्यों

का सबसे ज्यादा भावर है वह महाकाव्य ही है। और गुप्त जी ने एक-दो नहीं करीब करीब एक दर्जन महाकाव्यों की रचना कर डाली है। किसी भी साहित्य में यह गौरव दो ही बार कवि-सम्राटों को मिला होगा। आपकी रचनाओं का रूप तो पुराने मास्टों के अनुकूल ही है मगर उनमें नये युग का स्पन्द है और वायुति है। आपके रचे हुए चरित्र धातल होते हुए भी मानव है तुलसीदास के चरित्रों की भाँति देवता या राक्षस नहीं। रसों को व्यक्त करने में और उनके प्रवाह में पाठक को बहा ले जाने में गुप्त जी को कला है। आप इस समय पचासवें साल में हैं। आगामी आठवण शुक्ला याने २१ जुलाई १९३६ को आप पचास पूरे करके इत्यानवें वर्ष में पदापण करेंगे। श्री बालकृष्ण जी शर्मा 'नवीन' ने नागपुर के कवि-सम्मेलन में अपना सद्गारठी भाषण देते हुए यह प्रस्ताव किया था कि हिन्दी-साहित्य-प्रेमियों को उस दिन गुप्त जी की स्वस्थ-जयन्ती का उत्सव मनाया जाए। हम इस प्रस्ताव का हृदय से समर्थन करते हैं। आपने उत्सव मनाने के दो रूप बताये हैं। एक तो यह कि उस तिथि को हिन्दी के प्रमुख साहित्य सेवी गुप्त जी के निवास-स्थान चिरगाँव में बसा होकर उन्हें बधाई दें। दूसरा यह कि सभी बड़े-बड़े शहरों में समारोह की आर्य और गुप्त जी की साहित्य-सेवाओं की चर्चा हो और उनके दीर्घ जीवन की कामना की जाय। एक तीसरा प्रस्ताव श्रीधर रामचन्द्र जी टकड़न सम्पादक 'हिन्दुस्तानी' इसाहाबाद का है कि इस जयन्ती के उत्सव में गुप्त जी को सम्पूर्ण रचनाओं का एक स्टैंडर्ड एडीशन निकाला जाय मगर अभी तो गुप्त जी पचासवें साल में ही हैं। अभी उन्हें कम से कम सत्तर तक जीना है यानी साहित्यिक जीवन भीना है, इसलिए यह एडीशन तो फिर भी धबूरा ही रहेगा। हाँ नवीन जी के दोनों प्रस्ताव व्यवहारिक हैं और धबसर के अनुकूल हैं मगर हम इतना निबन्धन कर देना चाहते हैं कि अगर कोई साहित्य-सेवी चिरगाँव न पहुँचकर केवल पत्र द्वारा बधाई भेंट कर दें तो उसे भी बहो मरा मिले जो वहाँ उपस्थित होनेवालों का मिलेगा।

जून १९३६

## डाक्टर राम० रा० अंसारी का स्वर्गवास

डा अंसारी के स्वर्गवास से राष्ट्र को जो क्षति पहुँची है उसकी पूति होनी मुश्किल है। आपका जीवन श्याम और अदम्य उत्साह का धारण था। हठारा होना आपने कभी जाना ही नहीं। आप जितने योग्य जैनरत थे उतन ही योग्य वैदिक भी थे। श्रीमती काम के सामने आपल न धन को परबा की न स्वास्थ्य की। अगर धारका स्वास्थ्य कुछ दिनों से खराब हो रहा था मगर यह धारका तो ही नहीं सजनी कि आपका अन्त इतना निरन्तर है। शाक।

जून १९३६



फुटकर चुटकुले



## न्याय का प्रश्न

### जूरी-ट्रायल

जून या फौजदारी के मुकदमों में जूरी की—पंच की—सलाह सेना एक प्राचीन प्रथा है पर धाराकल भारत की अद्यतनों में इस प्रथा को जो रूप दिया गया है वह भारत के लिए नया है। जहाँ तक हमें मालूम है, यहाँ के न्यायालयों में जूरी का उठना भारत नहीं होता। उसके लिए कई ऐसी असुविधाएँ हैं, जिससे प्रतिदिन नगारिक इस पन् पर निमन्त्रित किये जाने से सहानुभावही कर काम नहीं करना चाहते। जूरी को जितना बचा मिसता है, वह उसकी हानि को देखते हुए इतना कम होता है, कि अचिरकाल भोग जूरी में बुलाये जाने के नाम से ही काँप उठते हैं। यही कारण है कि भारत में जूरी प्रथा विरोध सफल नहीं हो रही है।

फिर भी यह कहना कि यहाँ के जूरी नियम नहीं होते उनकी नीमत खरब होती है, उन पर विश्वास नहीं किया जा सकता ..इत्यादि यहाँ के बैठवासियों के अरिष्ट पर ही होय समाला है, और हमें बड़ा दुःख है कि पटना-हारिकोट के सम्मानित जजों ने केवल एक मुकदमे की गति देखकर इतनी कड़वी तथा विस्मेशर बात कह डाली। बिहार के एक गाँव में एक श्वाला घाम रास्ते से अपना बीस लिये जा रहा था। गाँव के कुछ बनीदार या पनी कारतकारों ने उसे सुना बीस ले जाने से मना किया क्योंकि इसमें फसल खर लिये जाने का भय था। श्वाल ने अपने अधिकार को छोड़ना अस्वीकार किया। बात बढ़ गयी और वह मार गया। मामला बीरज जब के इजलास पर आया। मौ से सप्त जूरियों ने अभियुक्तों को निरपराध पाया। और जब ने मामला पटना-हारिकोट में भेज दिया। वहाँ कई को फाँसी लगी या कालेपाली की सजा मिली।

मुकदमा बिहार का है, अतः पूरी रिपोर्ट हमारे पास नहीं है। पर, अज्ञातों वारीकियों पर कुछ मित्रता भी व्यर्थ है। अभी हाल में इलाहाबाद-हारिकोट ने मिर्जापुर के बंधे के विषय में जो फैसला सुनाया है, उससे यह स्पष्ट ही जाता है कि अरा-सी मूल से कानून बड़ी हानि कर सकता है। अतएव बीरज जब की हो राम टीन है या पटना हारिकोट का निर्णय ठीक है यह कालूम नहीं जानें हमारे रूप में दोनों के लिए समान धार है। पर इस विषय में जूरी की राय को 'पचपाठपूर्व' मान लेना उन्हें बेरिमान-सा समझ लेना तथा इस उदाहरण से यह सलाह दे बैठना कि भारत में जूरी प्रथा बलवदावित हो रही है, बड़ी कड़वी बात है। शायद अकण्ठ से प्यारा

है और हमारी सम्मति में हाईकोर्ट के धारणीय जजों ने समूचे भारत के लिए एक भीषण मौखन मगाना है।

भारतीयों की अयोम्यता प्रमाणित करते रहना हर तरह से उसका समत उम्ते पर बसनेवाला नैतिक दृष्टि से भ्रष्ट सिद्ध करना यह 'स्टेड्समैन' ऐसे पत्रों के लिए बड़ा ही ठमिकर काम है और हम यह बेसहकर धारण्य नहीं हुआ कि अपने छ-फरबरी के अंक में 'स्टेड्समैन' ने इसी पर एक अग्रभेक तक लिखा है और लिखने के बोध में हाईकोर्ट द्वारा सिद्ध धरानियों को 'मुग्धा' लिखा है। 'मुग्धा' (रफ़ियस) का प्रयोग शायद हाईकोर्ट के निष्ठय की महत्ता दिखाने और जूरियों के चरित्र बस की हीमता दिखाने के लिए किया गया है। इन्हीं ऐसे धारण देशों में भी जूरी-द्वारा मुद्दमे करने के विषय में विधाव उठ चुका है। हमें यह भी ज्ञात है कि वहाँ धनी तक भारत ऐसी बटगएँ होती है। क्या 'स्टेड्समैन' वही बातें इन्हीं के लिए भी लिखने को तैयार है। भारत तो पविठ मूक चरित्रहीन है ही पर यदि उससे कहीं भीषण धारण हम अपने शासकों की धारि पर करते तो यह हमारी नीचता या कानून के सिहात्र के पास समझ जाता। पर हमें मालूम है कि यदि ब्रिटिश चरित्र के दूषण है तो मूषण भी। उसी तरह भारतीय चरित्र के भी—और दूषण की धरणा मूषण धरिक है।

१६ फरबरी १९३३

## बनारस की अंधेरी कचहरियाँ

और जगहों का तो हमें अनुभव नहीं पर बनारस के धानरेठी मुंसिफ़ों के इजलास में जो मुकदमा एक बार गया बस समझ लीबिए कि चार-स महीने के लिए छुट्टी हो गयी। रोज़ रोगों क्रीकमाने इजलास के द्वार पर कृतियाँ बटकल है मुकदमा पैठ होता है और मुस्किम से धाव बटे की कार्याई के धाव दूसरे दिन के लिए मुस्तबी कर दिया जाता है। बस-बस पाँच-पाँच रुपये के मामलों की वैरबी में सिकड़ों का धारण-ध्याप हो जाता है। रोज़ रोगाहों की सवाठी और बलपान का धर्म और बकील का मेहनताना चाहिए। शायद सरकार ने इन धानरेठी मुंसिफ़ों को इतीलिए बनाया है कि उनके इजलास में जो एक बार फँस जाय वह फिर जिन्गी भर के लिए काम पकड़ से और भूल कर भी कचहरी के हाठ में न जाय। इन भले धारणियों को न जाने इतनी मोटी-सी बात क्यों नहीं मूमती कि जमकी इस बीस से मुकदमेवासों को कितनी तकमीक कितनी परेशानी होती है। धपना सरा काठोबार छोड़कर कचहरी में पड़े रहना और एक-दो दिन नहीं महीनों इस तरह की सैतान भी नहीं गुनाता। हमें धार



है ज़रूरत में ऐसे मुद्दामें दस-दस मिनिट में तय हो जाना करते थे। इन धंधे-  
 इनसातों में बकीलों को तो जानी है। यहाँ दिन भर टके से भेंट न होती थी वहाँ प्राण  
 कोई मुकदमा महीने भर भी चला तो बर्षों काही रुकन हाथ था यमी। यह प्राणरेती  
 मुंसिफ़ अपनी प्रयोग्यता के कारण खुद तो खोज-समझ सकते नहीं स्वार्थी बकीलों की  
 मनमानी करते हैं। पहले तो प्राणरेती मैजिस्ट्रेटों का ही रोना था। अब उनके बड़े भाई  
 प्राणरेती मुंसिफ़ भी पैसा हुए, जो बहुत-सी बातों में उनसे भी बड़े हुए हैं। हमारे एक  
 दोस्त करते हैं, कि एक मामूली मार-पीट का मुकदमा यहीं की धंधे-टी इनसात में भी  
 महीने चला घोर बलों फटीकों के एक-एक हजार बिगड़ पये तक सुनह हुई। इसी तरह  
 के घोर भी बहुत से मुद्दामें सुनने में पाये हैं। एक साहब तो चार बजे तक छाया  
 करते हैं। उधर भीम के पैर के नीचे मुकदमेवाले घोर उनके बकील पड़े ऊँचा करते  
 हैं। कहीं चार बजे मुंसिफ़ साहब आहिस्ता से इनसात पर जाते हैं घोर प्राय बंटा  
 टिकर डिर घन्दर हाथिल हो जाते हैं। फटीकेन तवाह हों उनकी बला से घोर है भी  
 टीक। उन्हें जब बतन नहीं मिसता तो क्यों उनवेही से काम करें। सरकार ने उन्हें  
 बेचार करने के लिए नामजद कर दिया है। बेगार भरते हैं। बसुए में कमी-कमी  
 के ब्याज-बिनाय के अधिकारी इस धंधे की घोर ब्याज देंगे ? प्राणरेती मुंसिफ़ बनना  
 ही है, तो ऐतों को बनाइये जो कुछ दिमाग़ रखते हों। निरुद्धे मुंसिफ़ बनाकर जनता  
 का पता क्यों फन्दे में डालते हो।

२ जून १९३३

## न्याय में विलम्ब अन्याय है

जस्टिस बग ने साहीर हार्नोट में बीकन बगो का जाज लेते हुए कहा कि धंधे-  
 के पैपला कारों की एक शत यह थी कि हम न्याय में विलम्ब न करिये जो अन्याय के  
 दुष्य है। प्राण ने कहा कि इन्सात में तो धर्मो तक उस शर्त की पाबन्दी होती जमी  
 बानी है, मैजिस्ट्रेट भारत में उसे धरातल में मूल गयी है घोर प्राण एक तरह से धरातल में  
 न्याय ही होता है, क्योंकि न्याय इतनी देर में होता है कि वह अन्याय के समान हो  
 जाता है। प्रस्तर घाठ-घाठ साम में धपीसों का गम्बर प्राण है। बजों की संख्या तो  
 बड़ापो नहीं का सत्रो। इसलिये मि रंग की राय है कि धरातलों की धुटियाँ पटा देनी  
 चाहिए, ताकि नाम बचाया में न रहे। प्राण के ब्याज में होती दशहूय बड़ा दिन  
 ईस्ट, ईर घोर मुहरम यही धुटियाँ बाधी है। प्राणने बहुत ही टीक बग कि जब  
 कामिफ़ ब्यापारी साम में इतनी प्राणी धुटियाँ भी नहीं बनाते तो क्या बकील घोर प्राण

॥ न्याय में विलम्ब अन्याय है ॥

उनसे क्या वास्तविक है जो आज में धर्म महीने बर्मास्य ही मनाया करें । बस्टिस संघ ने एक बड़े ही महत्व का प्रश्न उठाया है और यदि उनके उद्योग से अदालतों की तादीमें कम हो गयीं और न्याय की गति तेज हो गयी तो उनका नाम धर्म हो जायगा क्योंकि धर्म एक यहाँ ठिंदा और अदालत यह लोगों विभाग केमस चीन की बंठी बचाने के लिए है । सम्झी-सम्झी तादीनों में धर्मरेबुल जब साहबाग योरोप की तीर को निकमते है । मुफ्त में बेतल मिले तो काम क्यों किया जाय ?

१४ मई १९३४

## अंग्रेजी न्याय-परम्परा

उर शाहीलाल ने लखौर की बीऊ बची का पत्र त्याग करते समय अंग्रेजी न्याय परम्परा पर बड़ा रोचक भाषण किया और अंग्रेजी अदालतों की मिसालें पेश कीं । वहाँ न्याय-विभाग मबर्नमेंट से विलकुल अलग है । भारत में भी उही भाषण पर अदालतों की स्थापना हुई है, लेकिन वहाँ वह भावना कहीं ? अदालत ने मबर्नमेंट की नीति के विरुद्ध कोई फैसला किया तो इसका फल उसे अल्प ही मिलेगा । उर शाहीलाल ने बच्चों के लिए वही सबसे अच्छा मार्ग बतलाया कि वे निजी हानि लाभ का विचार न करके सबैव न्याय की रक्षा करें और मबर्नमेंट उसका जो इवड या पुरस्कार दे उसे गुपचाप स्वीकार कर लें ।

लेकिन बच्चों के दिल में यह बात समायेगी इसमें सन्देह है ।

१४ मई १९३४

## अदालतों में धोती

हमारी समझ में यह बात नहीं आती कि अदालतों में धोती का क्यों बहिष्कार किया जाता है ? धोती टोपी तो और राष्ट्रीयता का चिह्न है, लेकिन धोती तो धनी पहनते हैं, यहाँ तक कि मुसलमान भी घर पर अक्सर वहमक ही बाँधते हैं लेकिन फिर भी अदालतों में धोती पहनना अदालतों का अपमान करना है । क्या धोती से देह नीचे का नाम गन्म रहता है ? धोती तो अक्सर एड़ी तक सटकती रहती है । और अगर अँधी भी रहे, तो क्या वह अंध जाँचिये से भी अँधी होती है, जो लड़ाई के बाद से इतना प्रभावित हो गया है कि हुक्काम इजसास पर भी अँधे पहनते हैं । उस जाँचिये से तो धोती बाँध तक लुभी रहती है, धोती की तो अगर कायमी के रूप में भी पहना जाय तो

बढ़ बुढ़े से षोड़ी ही ऊपर रहती है। फिर बोती पहनना क्यों जुम समझा जाता है ? कोई-कोई छात्र महापुर को भीती बैकबे ही नामे से बाहर हो जाते हैं। बकील या डाक्टर या व्यापारी संघेजों को तो पोतियों से षिद नहीं है, वहाँ लोप बेभङ्ग बोती पहने जाते हैं। बोती की मुमानियत केवल प्रयासकों के लिए है। बम्बई और मद्रास में तो मत्सर हिन्दू बज भी जाते ही पहनते हैं। फिर क्या बोती इसी प्रान्त में धाकर बरमान की वस्तु हो जाती है ? क्या इससे भी यहाँ स्वाधीनता की गण्य जाती है ?

३१ अक्टूबर १९३२

## संयुक्त प्रांत में फलों की काश्त

बीस-पचीस साल पहले फल केवल मुँह का व्यापक बरमाने के लिए खाये जाते थे। इनके पोषक गुणों से जनता में बड़ी अनभिज्ञता थी। तब में भी इनका व्यवहार दूध-दोए की बीजों के बाद केवल मन-बहसाव के लिए कर लिया जाता था। रईस लोग अपने बगीचों में फल पैदा करते थे पर केवल शौक के लिए। फलों का कोई व्यावसायिक महत्व न था इसीलिए कि जनता से इनकी माँग न थी। सलगऊ के छार बुने और ग्राम प्रयाग के समक्य काशी के लंबड़े अकर महापुर से पर इनका स्वाद रईस लोग ही उठाते थे। गाँवों में हर किसान के पास दस-बीस पेड़ ग्राम महुआ कटहल शारि होठ से और बह हर छाल में दो-चार दिन इन बीजों का स्वाद से निभा करवा था। इनसे उनके जीवन की कोई आबरवकता न पूरी होती थी। ऐसा बिरला ही कोई फल है, जिसमें सबगुण न बढाये जाते हों। समक्य और डेर से छाँटी फलों की ग्राम बरनी करता था केसे बुहार पैदा करते थे तरीके बलघम जाते थे। पर इस तरह फलों का मोबद-मूल्म बहुत बढ़ गया है। इस प्रान्त में गानपुर से भाखो रुपये के संतरे, बिहार के ग्राम बम्बई और कमकता के केसे पेशावर के बनार, नारमीर के सेब पाकर खप जाते हैं। फिर भी थोड़ी तक फलों की कारत की धार न सिबित जनता का ध्यान है, न जमींदारों का। इस व्यवसाय के लिए बहुत बड़ी पूँजी की जरूरत वहाँ। जिसके पास दो-चार एकड़ जमीन बोझा-बा समम और दो चार ही रुपये हैं, वह इसे बने से कर सकता है। इन बीजों के लिए बाजार खोजने कहीं जाना नहीं है। बाजार बना-बनाया है। माम के धाने की डेर है। मन्दी-तेजी का समर भी इस पर बहुत कम पड़या है। इस विषय का साहित्य भी कृषि-विज्ञाप से धासानी से मिल सकता है। यदि कोई सम्झन इस विषय पर कुछ लिखना चाहे, तो हम धर्म्यधार के साथ उसे प्रकाशित करेंगे। हम प्रयत्न कर रहे हैं कि इस विषय पर 'जागरण' में एक संप्रमाण सम्म से

प्रकाशित करें। जो महानुभाव हमें इस विषय की उपयोगी पुस्तकों का नाम बताकर, या कुछ लिखकर सहायता करें हम उनके धन्यवर्ती होंगे।

७ नवम्बर १९३२

## कारनिवर्तों में जुआ

कारनिवर्तों का मुख्य उद्देश्य जनता के लिए स्वस्थ मनोबिभोर की सामग्री पहुँचाना है, लेकिन हमें कुछ से कहना पड़ता है कि कासी में धातकन जो कारनिवर्त धाम है, वहाँ जुए के सिवा और कुछ नहीं होता। दो-चार ऐंग्लो इंडियन माईसाई सुविधा सुबकों को प्राकृतिक करने के लिए बैठा बी जाती है और तरह-तरह के जुए खेलते जाते हैं। कहीं खूँड़ी है, कहीं धीर का निरागा है, कहीं कुत्त। इससे कितनी कुवधि फैसली है, और कुप्रवृत्तियों को कितनी उत्तमना मिलती है, इसका अनुमान करना कठिन है। मामूली जुआ खेलनेवालों पर पुलिस के जाने हुमा करते हैं हालाँकि वे गुप्त स्थान में गुप्त रूप से खेलते हैं, लेकिन यहाँ दिन बहाड़े जुधा होता है, पर कोई नहीं बोलता। इसमें क्या रहस्य है, यह समझ में नहीं आता। क्या अधिकारियों को इस जुए की खबर नहीं होती? हमने तो कई बार पुलिस के कमचारियों को जुआ खेलते देखा है। उच्च पदाधिकारी भी अक्सर कारनिवर्तों को घेर करने जाते हैं, पर किसी ने कुछ आपत्ति की हो ऐसा कभी सुनने में नहीं आया। हमारा अधिकारियों से अनुरोध है कि वह कारनिवर्तों पर कड़ी निगाह रखें जिससे इन्हें जहर कैसाने का अवसर न मिले।

७ नवम्बर १९३२

## जुए का युग २

यह तो नहीं कहा जा सकता कि पुराने जमाने में जुए का रिवाज न था क्योंकि गण्डर्वों ने कौरवों के साथ जुधा खेला था मत्त भी पक्के जुधाई वे धीरे पुराने गण्डर्वों में भी जुए का विक्रि आया है, पर यहाँ जुधा खेलना बुरा बकर समझ जाता था। देवासी के एक दिन प्रागे धीरे पीछे लोगों पर जुए का मूठ खबार हो जाया करता था। लेकिन वर्तमान युग में तो जुधा बीबन के हर पहलु म इस तरह घुस गया है कि इसे जुए का मुय कहे तो अनुचित न होगा। बाजार में साबुन तेस थियरेट बंठ-मंजन कुत्त लटीवने बाइए, धातको धाम के बदले में केवल सीधा ही न मिलेगा इनाम का प्रलोभन भी मिलेगा। इसलिए प्राय अकरत न रहने पर भी इस जुए में अपनी तक्रदीर धातमाने

लिए यह चीज करीब लेते हैं। बाटरी और बूटरीड को खोजिये वह तो पृथनी  
 हो मनी सब तो साहित्य में भी जाए का बीग है। प्रायः पुस्तकें करीबिये पुस्तक के  
 विरुद्ध प्रायः के इनाम भी मिलेगा। कारनिबलवाने इस तरह का प्रयोग देते ही  
 सब स्वदेशी प्रशंसनियों में भी मनी टिकेट रखे जाते हैं और जिनके नाम से टिकेट  
 होते हैं उन्हें इनाम मिलता है। समाचारवाने क्यों बुझने लगे उम्हें प्रतिबोधिता  
 स्वर निराल लिया और मुना है इंग्लैंड के बाबू प्रकाश एक या दो लाख पौड  
 विचार इनाम दे रहे हैं। गुमान हिन्दुस्तान के लिए, तो कई चीज योरोप से ला जानी  
 लिए, वह चीजें मूँद कर उसका स्वागत करने को तैयार है। आज एक अंग्रेजी पत्र में  
 प्रमथानी स्वरिषियों के नाम छपे हैं जिन्होंने कोपरन बंतर्यजन करीब का। इमलिए  
 उन्हें बेचरी घटा रही है, वे लपक कर कोपरन टूथ पेस्ट खरीद कर अपने भाग की  
 रोका करें। बाहू दे परिषद की सम्मता देने मानवता के लिए तो कहीं बयह हो नहीं  
 ही। चारों तरफ निकट व्यवसायिकता का राज है। मुतते हैं हमारे बड़े-बड़े नारबाही  
 मन को घाज भारत के नेता कहता रहे हैं सटुबासी की बयोजल कोरुपति बन  
 में। प्रायःकम तो बन पुकता है। प्रायः किसी तरह धन के प्रभु बन बाइए, रिबामा  
 लभन कर, जाती मोट बनाकर, या मकली दस्तावेज बनाकर—इससे मतमन मही।  
 प्रायःके पाठ बन होना चाहिए। प्रायःक चारों तरफ धावर होना सब प्रायःके मामने  
 देने टेकें। जो समाज मुबार के दीनले है वे भी प्रायःके द्वार पर हाडिरी गवे  
 योकि प्रायःके पाठ बन है। प्रायः जो पसु कर सकते हैं। सब जुधा खेनिए, सब ठराब  
 मिये, सब बूटरी औरतों को पुष्टि और अपनी शारी न कीजिए और दिन में दो  
 बार दमन डिम्बे डिमेट के पूँक डालिए, सब प्रायः धोषल करने के जेंटलमन हैं उनमें  
 भी एक करे बहु करतिए।

२२ दिसम्बर १९३३

## जुध का युग २

मोन को सब पर लग जाते हैं सब बहु जुधा हो जाता है। वीं कनी भी उनका  
 और कम मही रहा। धर्म ने अपनी सारी ईविक और धार्मिक शक्ति समकर भी  
 उसका और मही पदा पाया। नीति के विचारकों ने सब दसके विरुद्ध विहाण किया  
 मेडिन उसका और समय के नाम बड़ता ही जसा जाता है। चीं सब तो बहु हवाई  
 म्हात्र पर उड़ रहा है। विषय देविए उबर जाती वा दौर-बीरत है। ध्यानार में जुधा  
 व्यवहार में जुधा म्हुनी में जुधा मनोरंजन में जुधा गरज धाब वा संसार जुधावय  
 ही पया है। धन में उसका प्रवेश बहुत पहले ही जुधा था। सब साहित्य पर भी उनका  
 काम बड़ाया है। पहेलियों और शब्द वालों की बूम है। पत्रों और पुस्तकों पर मन्बर

जाने जाते हैं और जो चार चुन हुए नम्बरों पर इनाम रखा दिया जाता है। जिसके पास संसद नम्बर का पत्र पहुँच जाय वह एक निश्चित रकम पा जाता है। इस बंधारी और सद-बाजारों के खपाने में बस महो रोडगार बढ़ाने से बस रहा है। दरिद्रता के हारों सताये हुए साबुन धावमी इस तिलके के संहारे की धारा में अपने धराश्रमों के समान पैसों का खन करते हैं और अपने निरूपित ठोक कर रह जाते हैं। इन पत्रों और पुस्तकों के प्रकाशकों को अपनी विपत्ति के लिए ऐसा प्रभोगन देते हुए बरा भी शर्म नहीं जाती क्योंकि ब्यापार, ब्यापार है और उसका काम है—जैसे भी हो जनता की बेज से अपने निकाल लेता। इन प्रकाशकों को मालूम है कि वे जो चीजें जनता को दे रहे हैं व सचर है और उनका साहित्यिक महत्त्व कुछ नहीं है। इसलिए वह जनता की मौख मन्ना को उल्लेखित करके अपना मतलब खींचते हैं। बाहू रे योरोप। लेरी गुलामी हमें न जान पतन की किस गहराई तक से जायगी। और मजा यह है कि वे सज्जन अपने हकधरों की सफाई भी देते हैं और बड़े जोरों के साथ।

मार्च १९३५

## नगरों में दुर्घटनाएँ

जों तो जहाँ धामक-रपत बहुत होती है, वहाँ हमेशा ही दुर्घटनाएँ होती हैं लेकिन अब से बड़े-बड़े नगरों में ट्राम और टैक्सियों की वृद्धि हुई है ऐसी दुर्घटनाएँ दिन-दिन बढ़ती जाती हैं। वहीं एक-दोमि मोटरों से ठकरा जाते हैं, कहीं कोई ट्राम गाड़ियों की लपेट में धा जाता है। यह भी नयी समस्या के हवारों प्रसादों में से एक है। मन्दन म्यूसाक धादि महान् नगरों का ठो कलना ही क्या दिल्ली-जैसे नगर में जिसकी धान्वाही तीन लाख से अधिक नहीं प्रति सप्ताह सात धावमी के हिसाब से इन दुष्कामी सवारियों की भेंट बढ़ जाते हैं। पैनल कमनवालों के लिए वहाँ सड़क के दोनों ओर पटरि बनी हुई है और धमर लोग उन पटरियों ही पर चलें तो ऐसी दुर्घटनाओं की संभावना कम हो जाय। दिल्ली के पुलिस-अधिकारी ने दिल्ली म्युनिसिपैलिटी से इस विषय में लिखा-पढ़ी करते हुए लिखा है कि पटरियों पर जो ऑमबेवालों और दूकान धारों न क्रमा कर लिया है, इससे पब्लिकों के लिए इसके सिवा कोई उपाय ही नहीं रह जाता कि वे सड़कों पर न चलें अतएव म्युनिसिपैलिटी को चाहिए कि वह पटरियों पर से दूकान उठवा में अपना पुलिस कांस्टेबल वा माम में जाड़ा होना बेकार हो जाता है। हमारी समझ में पुलिस-अधिकारी का धादेश सधवा म्याम संयत वा और जनता की धाध रचा में नगर के पिठाधों को पुभीस से सहयोग करना चाहिए वा लेकिन म्युनिसि पैलिटी ने इस धावेश को शायद पुभीस की मुधाजलत बेजा समझा और उसे बिबाध का

विषय बना लिया। निस्सन्देह पट्टियों पर से दुकानें उठा देने में म्युनिसिपैलिटी की सामर्थ्य में कुछ कमी होगी और दुकानदार भी इसे शायद न पसन्द करेंगे। और इस लिए इन मेम्बरों को बोधारा उन व्यापारियों से बोट मिलना कठिन हो जायगा लेकिन वहाँ प्राक्-रक्षा का प्रयत्न था जाता है, वहाँ रुपये का या स्वाम का स्वाम पीछ हो जागा चाहिए। म्युनिसिपैलिटी केवल इतना ही नहीं है कि अपनी विन्धेदारियों को ॥ समझने वाले महानुभावों की भीराउत बनी रहे। उसका प्रयाग कठिन्य जगता की सेवा है और जो बोन इस विन्धेदारी का नहीं समझते उन्हें म्युनिसिपैलिटी में जाने की जकरत नहीं।

१४ नवम्बर १९३०

## खुब फल खाओ

विज्ञानयुत और अल्प परिचयी देशों में इन जिनो 'फल खाओ' आदीनाम चल रहा है। विज्ञान ने सिद्ध कर दिया है कि फलों में बितने पोषक पदार्थ और रोमनासक इत्य हैं उतने भोजन को और निचो सामग्री में नहीं है। मन्वास्त्रि की वृत्ता में तो फल-हार आवश्यक हो ही जाता है, साधारण अन्नमात्रों में जो हमारे स्वास्थ्य पर फलाहार का बहुत ही अन्धा असर होता है। हम ऐसे कई संस्कारों को जानते हैं जो अन्न पचान में असमर्थ हैं और कमजोर फलों के आहार पर रहकर कड़ी से कड़ी मानसिक और शारीरिक मेहनत कर सकते हैं। जो मन्वान और मांस-मद्यमी लागेवाले आरमिया में कहीं अधिक हो जाती है, जो वास्तव में रोष है। ऐसे आरवी कोई बड़ा परिश्रम नहीं कर सकते। फलाहार से देह में फुरती खुशी और मुस्ती बढ़ती है और विज्ञान वेत्तामा के मतानुसार फलाहार से मनुष्य दीर्घजीवी भी हो जाता है। मुश्किल नहीं है कि फलाहार अन्न से नहीं पड़ता है और साधारण आरमी उसका व्यवहार नहीं कर सकते अन्न हमारे अनीवार फलों की खेती पर ज्यादा ध्यान दें ता न देश के लाभ बड़ा उपकार करें। अनाज के लिए बितनी मेहनत की जकरत होती है, उतनी फलों में नहीं होती और हम उपजाऊ जमीन में जो जहाँ अनाज पैदा नहीं हो सकता फल पैदा हो सकते हैं।

१० दिसम्बर १९३०

## पश्चिमी व्यायाम का पागलपन

भारत इतिहास में ब्रह्मचर्य का अन्वेष में अनापति मंत्र एम० बी० नायडू ने आरम्भ के सामने सेवा और रोष-निवारण का जो कार्यक्रम उपस्थित किया दरि शास्त्र

समुदाय उस पर धमक करें तो देश में रोग का बढ़ता हुआ घातक बहुत कुछ खान्त हो जाय। मगर यहाँ ठा ऐसे डाक्टर हैं जो फीस पहले सेते हैं मरीज से बात पीछे करते हैं। उनके पढ़ीस में एक मरीज मरीज पड़ा कराह रहा है उसकी उन्हें परबाह नहीं होती। डाक्टरों में जब तक त्याग की भावना न हो उनकी बात से मरीजों का क्या उपकार हो सकता है। मेजर गायडू ने बहुत धरय कहा कि भारत शहरों में नहीं गाँवों में है, जहाँ कोई डाक्टर नहीं पहुँचता। अघर हमारे मरात्मी डाक्टर देहातों की धोर भी कुछ हुना करने लगे तो क्या कहना। आपने व्यायाम की खर्चा करते हुए कहा—

‘पश्चिमी व्यायाम का लम्ब दिन-दिन बढ़ता जा रहा है। भारतीय व्यायाम से शीघ्र उबासीन होते जाते हैं, जो तारिखक दृष्टि से अघर व्याया नहीं तो उतने कम्याड कारी अघरय है, जितने पश्चिमी व्यायाम। मुझे बिरबास है कि अघर किसी मुबक को प्राचीन व्यायाम का अम्यास प्राचीन नियमों धीर आबेहों के अनुसार, करवा जाय तो उससे कम लाभ न होया जितना पश्चिमी व्यायाम से होता है। भारतीय प्रछामी यहाँ के प्राणियों के लिए अधिक अनुकूल है, इसके साथ ही किठना कम कर्ष। देशीय खेल कहीं भी खेले जा सकते हैं बिना किसी अड़चन के धीर बहुत कम खच में। जिमनास्टिक के धीवार अघर यहीं क खेले हों तो भी छो खपये धीर छो खपये के बीच खच हो जायेंगे। क्रिकेट का एक बेट बीस खपये में घाता है धीर टेनिस का एक रैनेट तीस खपये में। फिर क्रिकेट हमकी फुटबाम धीर अघर खेल है जिनके लिए अख्खे मैदान अख्खे सामान धीर खड उरह के बूतों की जरूरत है। इनका मुकाबला हिन्दुस्तानी खेलों से कीजिए, जो अजकल के बालकों के लिए कहानी-मात्र रह गये हैं। यहाँ तक कि कुस्ती का रिबाज भी दिन-दिन कम होता जाता है धीर इसकी अगह खूबिबाजी का रिबाज बढ़ता जाता है। देशीय खेलों धीर कसरतों को लुप्त न होने देना चाहिए। हाँ जिनके पास साधन हैं वे पश्चिमी खेल भी खेल सकते हैं।

हमारे स्कूल में कम-दुडी गुल्मी डंडा लखनी धारि खेलों का बड़ी आसानी ध चार किया जा सकता है, लेकिन किसी का अघर व्यायाम नहीं है। यहाँ तो स्कूलबामे डकों से तीस खपये सामाना अघर लेकर अरंभ-अरंभ कर डालते हैं बहुत किया तो अ-श्रीम लड़कों का अम्यास करने मैचों में खेज दिया। न इतने मैदान है न इतने सामान कि इरेक लड़के का खेल में शरीक किया जा सके। यह भी मानसिक बामता का एक रूप है। अपनी कोई चीज अख्खी नहीं। बाहर की धमी चीजें अख्खी। हाँ अज पश्चिमबाले भारतीय खेलों का व्यवहार करने लगे तो यहाँ के मोर्चों की धारें लुप्त।

२ जनवरी १९३३



## मोटर व्यवसाय

एक विशेष कमेटी ने इस बात की जांच की है कि सरकारी रेलवे-विभाग को आर्टिफिकल द्वारा कितनी हानि उठानी पड़ती है। इस कमेटी की रिपोर्ट के बाद इस सरकार ने बड़ी कौंसिल में यह प्रस्ताव पास करा लिया है कि रेलवे की ओर से मोटरों की दीर्घायी जांचें जिससे उनका बाटा बरामद हो जाय। यद्यपि हमारी सम्मति में राज्य द्वारा बिना के व्यवसाय अपने हाथ में लिये जा सकें अथवा है पर रेलवे-विभाग सरकारी विभाग पूरी तरह से नहीं है। दूसरे, रेलवे-विभाग में छोटे मीटरों को इतनी ज्यादा मोटी तकवाहें मिलती हैं कि उनको बाटा होना ही चाहिए और बड़ी बाटा गरीब बनता पर किराया बढ़ाकर पूरा किया जाता है। इसके अलावा सरकार द्वारा पामित रेलवे की 'किराया-महसूल-मास बेचने का माफ़ा' ऐसी नीति से बनाया गया है कि देश का मोटरी व्यापार ही बहुत कुछ उनके कारण चौपट है और अब उन्हें मोटर बनाने का अधिकार देने का मतलब है रेलवे कम्पनियों की विभागीय क्लीक को और भी ज्यादा देना। अब वे मोटरों की लम्बन से मैगासेवी यहाँ के कुछ मोटर-व्यवसायी भूरा करें विभागीय व्यापारी को माल बेचने का नया मीका मिलेगा।

२० फरवरी १९३३

## देहरी और बड़ीनाथ का मंदिर

२७ मार्च को रामबहादुर बिक्रमाजीतसिंह के प्रश्न के उत्तर में सरकार ने एक जवाबी है जिससे यह प्रकट होता है कि इस समय देश की अधिकांस जिम्मेदार संस्थाएँ यह चाहती हैं कि बड़ीनाथ की का मन्दिर देहरी रियासत के हाथ में बना जायें। हमारे सहोदयी 'मारत' में इस विषय में कई सुन्दर लेख प्रकाशित हो चुके हैं। मुझ प्राचीन कौंसिल के भूतपूर्व उपर्युक्त भीयुष मुकुन्दजीसाल ने अपने सूचनापूर्ण लेख में यह सिद्धाया था कि हिन्दुओं के इतने पवित्र तीर्थ को एक महँव के हाथ में रहने देना निरास्य अनुचित है। महात्मा के पवित्र ज्योतिशरत्न रटोरी के लेख से यह प्रकट हुआ कि देहरी राज्य ही क्यों से इस मन्दिर का पालन कर रहा है राज्य के अधिकार परम्परागत है तथा राज्य का मन्दिर के प्रबन्ध में अधिकार न होने पर भी जमी क प्र से मन्दिर का पोषण होगा है। इसीलिए श्रीमारत पत्र महात्मलक्ष्मण काशी अम्बाला समाजनी समा अम्बाला बंगाल धर्म महामण्डल बाराकला देवप्रयाग के पंचपरदा बड़ीनाथ पंजाब प्राचीन महावीर वारा सम्मेलन सायसपुर सागातनधम समा बुखियावाँ रिस्ती समातन धम प्रतिनिधि समा अहमदाबाद इत्यादि संस्थानों ने एक स्वर से

॥ देहरी और बड़ीनाथ का मन्दिर ॥

इसका समर्थन किया है कि मन्दिर राज्य को मिल जाये। इसके विरोधियों की संख्या कम है और इतनी महत्वपूर्ण नहीं है। सरकार ने इस विषय को बुनाई की कौशल की बैठक के बाद ठप करने का निश्चय किया है।

हम यह नहीं चाहते कि हमारा कोई भी मन्दिर या संस्थाएँ बनता की रखा या देख-रेख से निकल जायें पर किसी एक महन्त या 'राज' के हाथ में हिन्दूजगत् के सर्वोच्च तीर्थों में से एक स्थान रहने देना नितास्त अनुचित प्रतीत होता है। मन्दिर टेहरी राज्य का है यह निश्चित-सा है। भवएव भाशा है, सरकार इस विषय की पूरी जाँच करके उचित निष्पत्ति करेगी। यह मन्दिर समूचे भारत के लिए महत्त्व का है।

३ अप्रैल १९३३

## हमारी सस्थाओं में व्यक्तिगत द्वेष

भारत में ऐसी बिगनी ही कोई संस्था होगी जिसके प्रमुख संभालकों में द्वेष न हो। मतभेद होना कुछ बात नहीं लेकिन जब यह मतभेद द्वेष का रूप में बँटा है, तो अधिरथ का उसे ध्यान नहीं रहता। जब वह व्यक्तिगत आक्षेप करने लगता है और अपने प्रतिद्वन्दी को बनता की निमाहों में गिराने या उसे तबाह कर देने के लिए मूठे आक्षेप करने से भी वह नहीं झिझकता। जब उसका प्रतिद्वन्दी उसे मिला कर बनता को चस्ते धुरे से मूँड़ता तो उसकी आत्मा को बरग भी चोट न लगती। यह तो उसकी आन्तरिक इच्छा ही थी लेकिन प्रतिद्वन्दी उसको प्रलय हटा कर खुद ब्या रहा है, तो वह कैसे सब कर जाय। जब वह अर्थात्मा बन जाता है, बड़ा-सा टिलक लगाता है, सदाचार का स्वामि भरता है और पब्लिक को बोझा देकर अपने दुरमन को मार भ्रमाने में सफल हो जाता है, लेकिन उचित हाथ में आते ही वह कुछ वही सब कुछ बस्कि उससे भी कुछ अधिक करने लगता है, जो उसके शत्रु ने किया था। इसलिए जब किसी बोज़ या सभा या सीप में हम किसी महानुभाव को वर्तमान कार्यकर्तियों के विच्छा बहर जयमते देखें तो हमें उनसे सतर्क रहना चाहिए।

३ अप्रैल १९३३

## माउंट एवरेस्ट की चढ़ाई

महीनों की तैयारी के बाद आखिर अंग्रेजी हवालाओं ने एवरेस्ट की चोटी के बर्तन कर ही मिय। मण्डली तीन बहाजों में बिठी और पीसीस हवाए फीट की ऊँचाई पर बढ़कर उसने एवरेस्ट की चोटी के चक्कर लगाये। वही कितनी टपड़ भी इसका अनुमान

इसी से किया जा सकता है, कि सूर्य बिन्दु से ज़मीन दरजे नीचे तापमान था। मगर हवाई जहाज पर बैठकर एक्स्ट्रेट की बर्बाद का क्या महत्व। आप वहाँ उतर तो सके नहीं केवल बर्फ से डेका एक मैदान देखा होगा। यह तो वही बात हुई कि कुस्ती का फैसला गोमियों से हो जाय। यह तो कोई कुस्ती न हुई। कुस्ती में हम दौड़-दौड़ देसना चाहते हैं पहलवानों का बम देसना चाहते हैं उनको चुस्ती और पुर्ती देसना चाहते हैं। यह क्या कि फिट से एक गोली बसा थी और मामला खतम। इस तरह तो सीकिया पहलवान भी खतमें हिन्द की जमीन पर मुसा सकता है। जब बड़नेबातों की मयदसी रास्ते की कठिनाइयों पर दिव्य पाती एक्स्ट्रेट पर पहुँचती तब हम उसकी तारीफ़ करते। लेकिन योरोप से मुबारकबाद के तार बनाना या रहे हैं और सुशियाँ मनायी जा रही हैं। हम तो यही कहें कि अभी तक बसनामिरि बसा हो बनेय है और मरन ठामे इन सुब्द मनुष्यों के बुस्साहस पर हँस रहा है।

१० अप्रैल १९३३

## श्री प्राणनाथ विद्यालंकार की अद्भुत खोज

श्री प्राणनाथ भी उन मनुष्यों में हैं जो कठिनाइयों और बाधाओं से भयभीत नहीं होते। आपने महजोबाड़ों और हरप्पा में पाये गये शिलासेखों और सिपियों से यह बात सिद्ध की है कि भाषों ने मिस्र की लिपि-लिपि से अपनी बड़मासा नहीं निकाली बस साधारणतः ज्ञान है, और बस परिचय के बिना कहते हैं। आज के पाँच-छ हजार बय पहले शीब उपासना प्रधान थी और महजोबाड़ों में जो लिपि प्राप्त हुई है, वह उसी उपासना की क्रियाओं और भावों से लिखी है और यही लिपि परिचय में पायी जानेवाली प्राचीन लिपि से बहुत कुछ मिलती-जुलती है साइप्रस और ब्रिट आदि द्वीपों में उसी तरह के लोग पाये गये हैं। इससे प्राणनाथ भी इस मतीजे पर पहुँचे हैं कि परिचय लिपि भी उसी शीब उपासनावाले चिन्हों से लिखी है, और आज के पाँच छ हजार बयों पूरे उन परिचय स्थानों में भी शीब उपासना ही प्रधान थी। उस समय अद्र उपासना भी होती थी और सिब सिनाई साइप्रस आदि नाम इस बात का प्रमाण है कि सिब या अद्रोपासना से उनका मनिष्ठ संबंध है। हमें चिन्ता है, जब यह धारा पूरी हो जायगी तो उसके इतिहास के एक महत्वपूर्ण विषय में बहुत कुछ परिशोध करना पड़ना।

अप्रैल १९३३

## गंगा सम्मेलन

हृदयार ऐसे पवित्र तीर्थ में नामियों का परणामों का—सबका एकत्रित मन गंगा भी में गिरता है। पुण्य-सलमा को इस प्रकार पूषित होने से बचाने के लिए बहुत दिनों से बेवटा की जा रही है। श्री बिजयराजभाचारियर ने इसकी एक बड़ी सुन्दर योजना बनायी है, जिस पर बिचार करने के लिए हृदयार में गंगा-सम्मेलन हो रहा है, जिसमें सरकारी प्रतिनिधि भी सम्मिलित होंगे।

हृदयार के बाव काशी ही ऐसा सर्वोच्च पवित्र नगर है, जहाँ नगर-नर का मन गंगा भी में गिरता है। यहाँ की बोड ने कई बार बेवटा कर गंगा भी को दुख करना बाहा पर सरकार ने कोई सहामता न दी। हम हिन्दुओं के तीर्थ को भ्रष्ट करने में उसका भी दोष है। क्या वह काशी की घोर भी ध्यान देने की कृपा करेगी ?

१७ अप्रैल १९३३

## भारत के कोढ़ी

बिन प्रति बिन बिबशों में कोढ़ का रोम बटवा जा रहा है और उचित नियमक से यह भीषण संक्रमक रोम फैलन नहीं पा रहा है। पर, अमाने भारत में यह बीमारी बड़ी तेजी से बढ़ रही है। कोढ़ी होकर शरीर का गन-गसकर फिर जाना बड़ी याचना और पीड़ा के साथ बर्पा जाड़ा भूप का कष्ट सहना—यह सब एक भयक कहानी है जिसे निखाने से रोमांच हो जायेगा। हृय का बिषय है कि इस दिशा में भी कुछ काम शुरू हो गया है। अभी १३ अप्रैल को कलकत्ते में ब्रिटिश साम्राज्य कोढ़-निवारक-संघ की भारतीय कौंसिल की बैठक हुई थी। राष्ट्र-परिषद् के कोढ़-कमीशन की धाबा के अनुसार यह समिति भी भारत में निस्तूत काम प्रारम्भ करने की योजना बना रही है। समिति प्रान्तीय शाखाएँ स्थापित करना चाहती है जिससे सभी माय्य साबबलिक संस्थाओं के प्रतिनिधि होंगे। काङ्गियों के लिए स्वान-स्वाल पर बस्यताम खुलेंगे। कोङ्गियों की दशा की जाँच के लिए कमीशन निमुक्त होगा। कोङ्गियों के बच्चों की बेक-रेक का भी प्रबन्ध होगा।

धारा है, यह सब काम जगता के सहयोग से होगा और जगता भी उबारता पूबक सहामता करेगी। इससे बढ़कर और कोई उबार कार्य नहीं हो सकता।

## काशी में पोस्टमैनों की कांफ्रेंस

काशी में पोस्टमैनों की सभा हो गयी। उसमें जो प्रस्ताव स्वीकृत किये उनमें सरकार से अनुदोब किया गया है कि इस बिभाग में चासीस रुपये से कम वेतन पानेवालों के

बेतन में किफायती कटीती न की जाय और पोस्टमैनों की संख्या कम न की जाय। सरकार के बिल भी विभाग हैं उनमें जनता का उपकार सबसे अधिक इसी विभाग से होता है पर वहाँ पुनिस विभाग में कम बेतन पानेवालों के साथ सरकार ने उदारता का व्यवहार किया है, पोस्टमैनों के साथ किसी तरह की रियायत नहीं की गयी। उनकी जगहें बराबर तोड़ी जा रही हैं जिससे बचे हुए आरामियों पर काम का भार पहले से कहीं अधिक हो गया है। काम बढ़ जाने पर भी उनका बिलन काटा जा रहा है। सरकार का कहना है कि इस विभाग में आमदनी कम हो गयी है इसलिए आरामियों का बिलन घटाकर और उनकी जगहें तोड़कर यह कमी पूरी की जायगी। लेकिन हम इस विभाग को कमानेवाला विभाग नहीं समझते न यह उचित है कि उसे भी सरकारी व्यवसाय का एक धर्म समझ लिया जाय। इस विभाग को प्रवर्धित का ही धर्म समझना चाहिए, उसी तरह जैसे चिकित्सा या शिक्षा-विभाग हैं। उसमें इसनी कमी कर देना कि जनता को कष्ट होने लगे किसी तरह न्याय नहीं कहा जा सकता। समा ने डाक का दर बढ़ाने का भी अनुरोध किया। हमारा भी विचार है कि यदि वह मनीग्रान्ट, रजिस्ट्री फार्मि का दर पुनश्च कर दिया जाय तो आमदनी बढ़ सकती है। आवश्यक तो वह सिखना बड़ी खर्चीली क्रिया है और कितने ही सोचों में तो पत्रों की संख्या बढ़ते-बढ़ते शून्य तक पहुँचा ही है। जब यह नीति सफल नहीं हो सकी तो सरकार क्यों उसमें परिवर्तन नहीं करती इसका कारण कौन जान सकता है।

२४ अप्रैल १९३३

## वी० एन० डब्ल्यू० रैलवे

हमारे पास कई संवादाशयों का पत्र आये हैं जिनसे शक होता है कि कुछ प्रान्त के भरपन्त उबर आम न बीड़नेवासी इस रेलवे-कम्पनी की टुनें बहुत गन्नी रहती है। गर्मी के दिनों में दिम्बों में मकली का मिन-मिनाना शोषालय का गन्ना रहना किनी डम्बे में कूड़े का ढेर लगा है तो किसी में कर्णों के धिलकों का यह सब साबारण बातें हैं। यद्यपि इसमें हम भारतीयों का भी बहुत कुछ शोष है। हम जिस स्थान पर बैठते हैं उसी को मन्ना करने में अपनी सत्रार्थ समझते हैं पर स्वास्थ्य के विचार से रेलवे कम्पनी को इन बातों का विचार ध्यान रखना चाहिए। इस कम्पनी के स्टेशन भी ई० फार्डि धार के समान साकू नहीं रहते। कम्पनी को काफी घाय है और उसे चाहिए कि वह अपने यहाँ एक विशेष स्वास्थ्य-विभाग लीमे। उसे सैनिटरी इन्सपेक्टर 'रख कर' माशियों की इस सिजायत को दूर कर देना चाहिए।

१ मई १९३३

## विदेशी कपड़े पर काँग्रेस की मुहर

तीन साल पहले काँग्रेस ने बजाजों के विभायती कपड़े की गाँठों पर मुहर लगायी थी। तब छा महीने की बात थी। पर वह मुहर आज तक नहीं खुली क्योंकि अभी तक स्वच्छता उठनी ही शुरू है बितना आज के तीन साल पहले था। तो फिर क्या इन गाँठों की मुहर कभी खुलेगी नहीं? गाँठें यों ही बंधी-बंधी सड़ जायेंगी! मठीवा क्या हो रहा है? बजाज बंधी हुई गाँठें मुसममान ठूकापवारों के हाथ धोने पीने बेचकर अपना नाम बना रहे हैं। यह तो नहीं बेला जाता कि आज बंधा-बंधा सड़ जाय। फिर जब कपड़े का व्यापारी बेचता है कि निष्कट भविष्य में भी गाँठों के खुलने की आशा नहीं तो वह झूठी हो जाता है। जब बोरी-झिपे-भाल की जपत ही रही है, तो हमारी समझ में नहीं आता गाँठें क्या नहीं खोल बी जातीं। ऐसे कितने ही काँग्रेसमैन हैं, जो इस नीति को अपनी समझते हैं और गाँठों की मुहर-बन्धी से कोई फायदा नहीं समझते लेकिन द्विविधित काम रचने के भय से कुछ नहीं कह सकते। हमें धारा है, काँग्रेस के नेता इस समस्या पर विचार करें और जिस बन्धन से अब हाथ के सिवा किसी काम की आशा नहीं उसे उठा लेने में सच्चा-साहस से काम लेंगे।

१ मई १९३३

## साबुन की देस-रैस

आजकल सेकड़ों तरह के साबुन बाजार में आ गये हैं। जगता के पास सुगन्ध के सिवा साबुन के कुछ-बोप बाँधने का कोई सामन नहीं है। खराब साबुन से बहुत से रोग पैदा हो सकते हैं। इसलिए हमें यह जानकर हय हुआ कि सरकार साबुन की बाँध करने के लिए शीघ्र ही कोई क़रम उठानना ही है।

## ऋण के लिए कैद की सजा

क़ानून में जहाँ और सेकड़ों धनोति मरी हुई है वहाँ एक यह भी है कि आज कोई महाजन किसी धसामी को कर्ब की इत्तत में बस भेज सकता है। कुछ स्कानटें पैदा की गयी हैं क़रर पर धमी यह धारा भीमूव है। सरकार ने इस प्ररन पर विचार करने के लिए एक कमेटी कायम की थी जिसने अपनी रिपोर्ट पेश कर दी है। बेचना बाहिए इसका क्या फैसला होना है।

१ मई १९३३

## फलों की खेती कैसे बढ़ायी जाय

हृय की बात है कि गौकरसाही का ध्यान फलों की खेती की ओर गया है और सखनऊ में राधा साहव अहोयोग्यचार क समापतिरव में एक बोड की स्थापना हुई है जो फल पदा करनेवालों को सहाय और सहायता देगा । उधर बम्बई से धामा का बाहर जाना शुरु हुआ है । बम्बई के गवर्नर न खुद अहाय पर धातर फलो का पैकिंग देखा और बड़ी विसवस्पी दिखायी । अगर हमें भय है, कही यह उद्योग भी टॉप-टॉप फिम होकर न रहे चाय ।

१ मइ १९३३

## विज्ञापन-कला

भारत में अपनी पत्रकार-कला का विकास ही साधारण हुआ है, ता विज्ञापन-कला क विषय म क्या कहा जाय ? हमार समाचार-पत्रों म अधिकतर विज्ञापन बड मइ इन के कुचिपुख तथा गीरस होते है । यदि विज्ञापन की चीज नहीं बिकती तो वह समाचार पत्र की खोप देता है । अपना खोप उसे क्या मानुम ? हृय है कि इन बातों की ओर हमारे देशवासियों का भी ध्यान आट्ट हो रहा है । सखनऊ में आट्टरोड पर एक उम्साही सज्जन ने 'एलेक्ट्रिक एडवर्टाइजिंग एजेंसी' नाम से एक कम्पनी खोसी है, जा कबल हमरों का विज्ञापन ही बनायेगी । इस संस्था के बनाय कुछ विज्ञापन हमन समाचारपत्रों में छपे देखे है, इसके सवालक मि सठ का एक भेख ईतिक 'बनमान म भी पद्य का । इन बातों से यह सिद्ध हाता है कि उन्हें अपनी कला का वास्तविक ज्ञान है । आशा है यह संस्था उत्पति करेगी और विज्ञापक लोग इस संस्था से मान उठावें ।

१४ मइ १९३३

## बेकारी का स्वास्थ्य पर प्रभाव

योरोप और अमरिका में बेकारी की संख्या निरिचत की जा सन्तो है । बगारा की दुमारे के लिए राठ की ओर से कृति मिमती है त्रिगस कम स कम मोशन मिम जाता है । फिर भी वहीं इस बेकारी का स्वास्थ्य पर बुरा अमर पड़ रहा है । अमरिका म बितने ही परिवार बेबल धानू तावर दिन बाट रहे है । एक जग म मूय म दुबल बावकों की संस्था बनार साठ प्रति मीबड़ हो गयी है । एक दुमरे मद्रग म सी म

॥ बेकारी का स्वास्थ्य पर प्रभाव ॥

४६२

गिन्याब्व छात्रों का बजान घोंसल से कम था । फलस्वरूप जय राय का जोर बढ़ रहा है । राष्ट्र-संघ न इस समस्या पर विचार प्रकट करते हुए मिखा है कि राष्ट्रों ने क्लिफायट की धुन में प्रगर बेकारों को कृति में कमी को या स्वास्थ्य-विभाग में कौट-कौट की गमी तो इसका बड़ा मर्यकर परिणाम होगा । इस बेकारी का शरीर पर ही बुरा असर नहीं पड़ रहा है । ब्रिटिश बामन और अमेरिकन जातियों में इसका मनोबैज्ञानिक असर और भी बुरा पदा है । आबश्यकताओं के पूरे न होने से जो ग्लानि उत्पन्न होती है, वह राजनितिक परिस्थिति का दूषित कर रही है और ऐसी सत्कार्यें बढ़ती जाती हैं, जिनका उद्देश्य अन्ति है । योरोप न जब यह हास है तो भारत का अनुमान कीबिए, जहाँ ची में पचास आबमी प्रबश्य ही बेकार है और उन्हें बलि के नाम पर मुट्टी-भर जना भी ममस्तर नहीं ।

१४ मई १९३३

## मीषण दुर्घटना

मनौही के समीप है धाई घार साइन पर मंगरवार को जो मीषण दुर्घटना हुई है उसका हास पढ़कर ऐसा कोन है जिसके रोंगटे न खड हो जायें और वह काँप न उठे । एक सारी जिसम तैसीस आबमी वे पचाब मेस से टकरा गमी । गाड़ी का रूही की सेकिन माड़ पर का फाटक जुमा हुआ था । सारीबाले न घामे-पीसे कुछ न देखा जैसे इनको आइल है, अंबाबुंड माड़ी छाड़ देते हैं । सारी साइन पर ही भी कि मेस का गया । फिर उस टकरा के तो केबल कल्पना की जा सकती है । अट्टाण् आबमी तो वहीं बुरी तरह पिस गये । जो बचे हैं उनकी दशा भी मायुस है । कई जसों तो रेल के इन्जिन से चिमटी हुई दूर तक बलौ गमी जब गाड़ी रुकी तो नीचे गिरी । सारी ता बुर-बुर हो गयी । आइमियो के छाटे-जूते धारि सी-सी गब पर जा गिरे । पूरी बाटात भी । पुमटी बामा पकड़ा गया है । उसे जो सजा चाहो वे अमूक्य जानें तो अब नहीं मिलन की । भारत जिस मीज में था रूही भी बड़ी उसके स्वायत की तैयारियाँ होती होंगी । पुमटी बाले का अपराध तो है ही सेकिन सारी का ड्राइवर जो धीरे-धीरे करके माड़ी बमाला था और बिठा रफले वे तैतोस आबमी । मायुस होता है सारी का भावा भाव साइन पार कर चुका है तब टकरा गमी है क्योंकि ड्राइवर अमी गिन्या है ।

१२ जून १९३३



## पन्द्रह दिना में मक्की की फसल

जर्मनी के एक वैज्ञानिक ने एक ऐसा जमाकारिक मात्र खोज निकाला है, जिससे मक्का और अन्य बीजों को साधारणतया तीन-चार महीनों में तैयार होती है कम से कम पन्द्रह दिनों में तैयार की जा सकता है और अनाज ब्याग मोटा ब्याग पापक ब्याग स्वादिष्ट होता है। सुना जाता है कि उसने बहुत से वैज्ञानिकों के सामने अपना आविष्कार सिद्ध भी कर दिया है। यह नहीं मालूम हुआ है कि कब से पहले से कितनी बृद्धि होगी। इस आविष्कार का सारा मकसद उसके संस्तेपन में है। अगर इस कृती पर यह पूरा उत्तर जाय तब तो मजार में भोजन की समस्या ही न रहेगी। गरीब भारत भी लोगों को बूत बटकर भोजन करेगा। भयवान करे वह वैज्ञानिक बस्त्र में जन्म अपने प्रयोग का प्रचार करे।

१८ जून १९३३

## अंग्रेजी समाचारपत्रों का प्रचार

इंग्लैण्ड के दैनिकों में डेली मेल का प्रचार सबसे अधिक है अर्थात् साठे सत्रह लाख और टाइम्स का सबसे कम अर्थात् सवा लाख। मासिक में 'न्यूज' पाठ की बरफ का प्रचार मात्रे तीस लाख है और सैंडे रिव्यू का सबसे कम अर्थात् एक लाख।

८ जून १९३३

## एबरस्ट की विजय

आखिर एबरस्ट का विजय करनेवालों को मुँह की लानी पनी और वह घाम भी मनेय पड़ा है। हवाई जहाजों पर उनके शिखर पर चढ़कर ममाना तो गोमी से कुरती लड़ना है। सारी बुनियाद हम मंडली की धार धारें मगाये हुए थी जो उन पर बर रहे थे। उसे नीचा बैठना पड़ा। कुछ तो धर्या पहल्यं शुरू हो गयी कुछ धारमियाँ के बीमार हो जाने के कारण हम बीरों को नीचे धाना पड़ा। मन्मथ है धमन बप यर मोय फिर धारें। योरोपियन जातियों की धरी धरम्य माहमिबता है जिसने उन्हें संभार का म्भायी बना दिया है।

३ जुलाई १९३३

## बात का बतगढ़

पिछमें दिना एसा हुआ कि हाईस्कूल सर्टिफिकेट के मतीज 'सीडर' से पहल 'पायोनियर' म छप गये । 'पायोनियर' वालों ने चाहे जो बाल बली हो सीडर स वाली मार ले गय । बही मतीजा सीडर में एक दिन पीछे निजसा । हा सकता है इयम पछ पाठ हुआ हा । हम मान लेते है कि कुछ पछपाठ हुआ मकिन इस बर-सी बात का इतना दुमार बीचना धीर कार्जन्तिस के लपने-वैश का ल्बन के तु-तु म-म म मट्ट करना कौन-सी राष्ट्र की सेवा है यह हमारी समझ म नही आया । वंसतो क सग बाड़ी बहुत रिघायत कौन नही करता । यह एक मानवीय दुबलता है जिसस वडे से बडा धान्नी भी लानी नही । वह धाठा करना कि सिद्धा-विमाम क सारे धान्नी बेबता है अपने खलन विमाम का परिचय देना है । एक बात हो यमी जलने किस्ता लठम हुआ । धब बार-बार उसी रीङ क बरखे को जलाय वाला धीर जही धपन मलमब की बात का बाय इसके लिए जमीन-घासमान के कुलसे मिजाना धीर कार्जन्तिस म हम स्वाय के लिए चिन्तन-यो मजाना एक ठेके दरज क जिम्मेशर धान्नी को लाना नही देता । इस तरह का बाल-बिबाद तो नीक दरजे के धान्मियों से हुआ करता है । कार्जन्तिस के लिए इस समय भी इस ल्बन के प्रनोत्तन से ज्यादा महत्ब के काम वडे हुए है । यही बात है जिन्होंने कार्जन्तिसों को डिबेटिम ल्बन बना रखा है ।

१० जुलाई १९३३

## रिखत की गर्मबाजारी

सुधार हुए कौन्तिस वने बोडे बहुत प्रपिचान भी मिस ठेके पदा पर भारत वालों की संख्या भी बडी बेतन भी बड पर भारत की कचहरियो धरालता से रिखत ज्यों की लों बाटी है बकि धीर भी बड यमी है । कोई कितना ही सच्चा धीर बेदुमाह क्यों न हो धरालत में रिखत गिये बपर उमकी कोई मुजबायी नही हा सकती । वह बात नही है, कि हुकूम इस रहस्य को न जानले हों । उनसे से कितन ही तो स्वय नीचे पनों से उदलि करते-करते उन पत्र एक पहुँचे है लेकिन या ही से कुछ कर नही सकते वा मुसाहड धीर मरीघत के कारण कुछ बड नही सखते धीर वा उनके महलबनर इस मूट म किसी न किसी कर म उनका हिस्सा भी रख बते है । इसी कारण बहुत से धने सोम मुकसान उठाकर धीर अग्याय सहकर भी धरालत नही पात । लोचते है कितना धपमान धीर मुकसान हुआ उससे कहीं प्रपिच कचहरी से सहना पड़वा इसनिए क्यों न चुन होकर बैठ रजो । धिया धीर म्युनिगिपम बोडों में ता बडे लर धीर मजरा

से कहना पड़ता है यथा धीर भी लड़ाया हा गया है । जब विना का हाकिम जेवरसम होता था तब तो बहलकारों को शायद कुछ भय होता रहा हा था जब मन्त्रों के राज म तो कोई उनका बाध भी बाँका नहीं कर सकता । दिन ग्हाडे मूत्र शोणो है सुते घबाने होती है, पर कोई पुछनेबाधा नहीं । गगेब मुक्तमेवाले बहाँ घपनी विपत्ति बंधन जाते है सुभार करने नहीं जाते कि रिशबत भाँगनबागों से मडाई कर । उनकी बुटिया बहलकारों के पाँव के बीच बधी रहती है धीर विना घममा की पुत्रा विष नही निकल सकती । जिसे दो बार बार कचहरी जाने की जरूरत पडी कम ममम सो कि उनका नैतिक पतन हो गया । धीर ब घममे बलमन बध्दी पडे-सिखे भोग होने है निठमे ही सो वेमुपट होते है पर कपया की भंडार के सामन मारी जिघा धीर भग्ना परी रह जाती है धीर सोत निरयता से घपन गगेब भाडया का मून कसम क विग नैवार हो जाते है ।

३१ जुलाई १९३३

## हमारी सचेली आदतें

विज्ञान-भारत क प्रपत्त के संक म बाक्य पी सो गय ने प्राक्कम के धारों की धर्मी धारतों पर एक विचार पूछ मेग सिखा है धीर बतसाया है कि इन तरह की शौकीनी उनके भविष्य को कितना बिभ्यामय बना रही है । प्राक्कम विनी विद्यालय में भी एक छात्र का भासिक जय वैतामीन रुपये से कम नहीं है । भाहो धीर बम्बई में तो सो रुपये के मयमम पड़ जाता है । कई साल पहले जब पत्रिमिटी से निकलते ही बध्दी जगह विम जाने की धारा होती थी धारा की व हन-पग्गी विनी हूब तक बम्ब पी लेकिन धर अब कि प्रथम खेड़ी के धारा क विग पा धर दै रहने के सिवा निरुट भविष्य म धीर कोई धारा नहीं है । धारा की उपमना किनी हापत में भी उम्य नहीं है । यह माय है कि जिनके पाम माधन है वसे धधिबार है कि जिनका बाई लच करे धीर जिन तरह बाड़े रहे ककिल घपन उमम कुछ गगनमूति हा धीर यह दैने कि बहु घपनी विज्ञान-भक्ति के माधनरीन धारा म विननी विपरा विनना धधरोप धीर कितनी ईर्ष्या धीर बमन दंडा कर रहा है ता शावर बह हपने म तीव्र दिन मिलेमा हेपने पर ज्वाश धाधह म करे । धीर क्या उम मग्गध धाध करो जो रुपये मिलते है बहु उमके माता-पिता के पात भी उगनी भी धामानी मे बने धाये x विननी धामानी मे बह लच करता है । ऐसे भाग्यवामा की मग्ग कल्प ही घोड़ी है जिनके धधिनकारों को उगना धर्मीभारत बुग क मयता हो । धधिक्कर मग्ग म एमा ही की है विननी मग्गता घपना स्वात्म्य गारर धागे काडकर स्वायमय जीवन विताकर

मिसती है। हमारा मनबन्धा यूनिवर्सिटी स्ट्रैट जब एक खपये की सीट पर सिनेमा हॉल में जा बैठता है, या घोबस्टीन का एक डब्बा और टूपपेस्ट की एक सीरीस खरीद कर घर आता है और बाजार की सीट में खपये कीग धाने केबल रेस्त्रों में बैठकर चाट खाने में उड़ा देता है, तो उसे कभी खयाल आता है कि इन बो-लीग खपयों के लिए उसके घर बामों को अपनी कितनी अकरतों इबानी पड़ी होगी। अगर ऐसा खयाल नहीं आता तो इसके सिवा क्या कहा जाय कि वह धात्मसंबो और स्वार्थी है।

सेक्रेन धात्मसंबा भाड़े कितना धान क बरबालों को न धसरे और न धपने लाइसे बेटे के लिए हरक तरह का कष्ट कुर्सी से उठाने के लिए तैयार हों और एसा कौन बाप है, जो अपनी सतान के लिए शक्ति से अधिक खयाल करने में धामन्ध न पाता है। पर यह धात्म खार्जों के लिए स्वयं उससे कहीं बिनाशाक है। उसके सामाजिक पहलू को भा धाड़ियं हालांकि फूट की ओपड़ी के पास पुलभुदियां छोड़ना बड़ा मयकर बिनो है और बोडे से भाय्यबागा की शौकीनी बहुत से भाय्यहीनों के लिए बाउक हो सकती है। पर इस धाने बीबिए यह सोचिए कि इन धाधतों का स्वय धपने भविष्य पर क्या असर पड़ेगा? मां बाप तो हमशा सँभालने के लिए बठे न रहेंगे। गतीबा यही होगा कि या तो धाप घर की बची-बचायी सम्पत्ति का सफाया करेग या सौदिध साधनों से काम सेग। कड़ी लौकर हो मये तो रिशबतें शुक होंगी या गबन की नीबठ पड़ेंगी। ध्यापार किया तो बोड़ दिनों में धुंजी ही मफा बन बाययी और धपर बेकार खूना पड़ा तो धात्म हुरपा के सिवा और कोई धबबन्ध ही नहीं रहे बायया। जीवन का स्टैड्ड ऊँचा रखने का धन यह नहीं है कि धपने सामर्थ्य से बाहर खच किया जाय। फिर, स्टैड्ड ऊँचा रखने का धन है कि बोडे से धाधभियों पर धाधिपत्य हो और वे उन्हें सुटकर धपना घर मरते हों। फॉस इन्डीड अमेरिका का एशिया और अफ्रीका दो महा-दीप ऐसे मिस मय जिससे दो सधियों तक उगहोने बोवन का स्टैड्ड खूब ऊँचा किया पर मन्वी क पहला ही हमले में धमी के हाक ठिकाने धा गये और जिस दिन वे बोनों महादीप सचेत हो जायेंगे इन महान् राष्ट्यों के बमन का अन्त हो बायया। तब बड़ी खेती और बड़ी छोटे-छोटे करसाने रहे बायेंम जा धपनी बकरत की बीबें बनायेंगे। संसार का ध्यापार हाक स निकल जायगा। धमी स यह समस्ता धनके सामने लड़ी हो मबी है, और शस्त्र-सम्मेलन और धध-सम्मेलन धाधि उसी समस्ता के मतोने है। हमारा तो खयाल है कि धपनी अकरतों का हम जिसता ही बढ़ाते हैं, उतना ही प्रकृत जीवन से दूर होते हैं और उतना ही ममय की प्रगति के प्रतिफल जाते हैं। संसार बड़ी तेजी से समष्टिबा की धार जा रहा है जिसमें ऊँच-नीच शिथिल और धसिधित का मेर न रहेगा। धात्र शिथिल और सस्कृत समाज न धपने को जिस किम में बन्द न रहता है, उसकी दीवारें टूट जायेंगी धीन भाड़े कान्ति से हा या शान्ति से मानव समता का धाना धाधर रहेगा। उस अन्त बड़ी जानिया बरी समान और धपन्ति बोधित रहने

जो उन नयी परिस्थितियों का स्वागत करेंगे। विशेष मुविद्याया विशेष साधना में पस हुए प्राणी उस संग्राम में मित जायेंगे। हमारे छात्रा और विद्यालयों के सामने यह प्रश्न लड़ा बुर कर देखा रहा है पर वे धीमे-धीमे करने उनके अस्तित्व का भूषण करने की योजना कर रहे हैं। फीमें बढ़ती जाती है छात्राओं के लक्षण बढ़ते जाते हैं और व्यक्तियों की धारणाएँ घटती जाती हैं। यह धारणा किताब दिनों थल सकेगा। धारण नहीं तो कम मुनिव्यक्तियों के सामने यह मसला आयेगा और भूमि धर सिद्धा का अधिक महत्त्व बहुत कम हो गया है केवल उसका सांस्कृतिक मूल्य ही बाकी रह गया है इसलिए धारणा ही ऐसे विद्यालय उत्पन्न हो जायेंगे जो समय के अधिक अनुभूत होंगे और तब वर्तमान विद्यालयों को भी विचारा होकर समय के सामने घुटने केवल पड़ेंगे। दूरदर्शिता कह रही है कि मनी से बत जान में कुशल है।

अगस्त १९३३

## भीषण नाव दुघटना

काशी में गत सप्ताह में आ भीषण नाव दुघटना हुई और जिनमें बार्डिन धारणा जसमन्त हो गये उस पर पब्लिक का धीरे हमारे व्यवस्थापकों को इस दृष्टि में विचार करने की आवश्यकता है कि ऐसी दुघटनाएँ किन कारणों से होती हैं और उनको रोक कैसे की जा सकती है। बहाली लोग जस से जस शहर की मंडिया में पहुँचकर धारणा लौटा करने की धुन में इस बात का विचार नहीं करते कि नाव पर बाकी धारणा की मुनाफा है या नहीं। मसाला भी पसे के लोभ से उन्हें रोकने की योजना नहीं कर सके। नतीजा यही होता है कि एनी कारणों धारणा टिन होती रहती है। सरकार द्वारा यदि हरेक नाव पर बैठने वाले धारणा यात्रियों की संख्या नियत कर दी जाय तो धारणा मसाला उसमें धारणा सवारियों को न बैठने और सवारियों भी समझ जायेंगे कि इससे धारणा सवारियों के जीवन से उत्तरा है। यदि हरेक नाव पर तुम्हियों का प्रबन्ध किया जा सके जिसका धारणा नाव के ठहरने पर रकना धारणा या शायद जनता का धारणा हो सक। हमें धारणा है कि जिन के धारणा नाव इन विषय पर विचार करके कोई एनी व्यवस्था करेंगे जिनमें धारणा जानों की जानि न हो। धारणा पर शायद धारणा यह धारणा हुआ है। धारणा सारोबायो धारणा का धारणा भूमण न पायी जो कि यह धारणा धारणा लगी।

१३ अगस्त १९३३



## काशी में विजली

युक्त प्रांतीय कौन्सिल के सप्रेम तथा म्युनिसिपल हायम म एच रत्नबामे राजनीतिकों का विश्वास है कि न जाने क्या हमारे प्रांत की सरकार के लिए माटिन कम्पनी को माफ़ी है। यह विशेष प्रम या कृपा दिपाये गयी छिपती। प्रबट ही हो जाती है। काशी को भी इसका बोझ बहुत धनुमय है। हम उस गिना का म्गण है अब स्वराज्य बोझ काशी म बिजली की रोशनी जालु करना चाहता था। काशी विरध विधायक का प्रस्ताव था कि सरकार को बिजली सप्लाई करन का काम उम विवा प्राप्त। माटिन कम्पनी यह अधिकार अपने लिये चाहती थी पर म्गणबी बोझ का यह विचार था कि काशी विरधविधायक काशी के लिए एक पीरव की बन्तु है। यदि काशी से उतकी सहारता हो सके वा यतीव उत्तम हा। साथ ही बोझ का यह भी धनुमान था कि यदि काशी म बिजली की रोशनी देने का काम काशी विरधविधायक के हाथ म हाया तो बोर्ड भी अपने लिये अधिक से अधिक मुविधा प्राप्त कर सकयी तथा नगर को भी म्गणों में बिजली का प्रशास निम जामेया। मस्ते-मईगे का विचार देबम धमीरा की दृष्टि में ही बरी सकके हित म होता है। काशी म बिजली लग जान म देबम धमीर ही मरी यरीव भी काफी फायदा उठा रहे हैं।

यस्तु स्वराज्यी बोझ की अपटा बकार गयी। बोझ की समेष्ट्या म सरकार ने ल्ते बाबाओं की पत्र लगा की कि मजबूरन माटिन कम्पनी को ठीका देना पडा। उमी टिके क परिखाम-स्वरूप काशी में 'इलेक्ट्रिक सप्लाई कम्पनी की स्थापना हुई है जिनमे मब पूषिय ठो मूट मचा रभी है। इस नगर मे यह कम्पनी कितना कामा रहे है यह नीचे की तालिका से ज्ञात हो जायगा—

घण्ट बप की समाप्ति पर	किने स्थान पर बिजली लगे	यूनिट बिधा	खामनी
११ डिसेम्बर, १९११	१५४४	११ ६० ११५	० १६ ०६४ ४
३ जून १९१२	१८१५	२० ०३ १०१	० २० १११ ४
३१ डिसेम्बर १९१२	० ६५	२२ १२ ८०२	२ ४६ २ ६०

इसम मे धाड़ालीस हजार चार मी मलाबन रजय पीनेडीन धान 'ट्रिप्लिनेशन फ्लड में निर्माण क समय को पूर्वी लगाबी बयी थी उमका मू प्राथमिक ब्यप कीर बलानी मरू तीम हजार रजये ब्यप किया। धाम तथा पम्हू हजार एक मी पकाम रजय माफ तान धाल जमा। अरु पर मुड पीर जमा मरू मजहू हजार था मी ब्यारुड रजये मया दो पाच बिजली देन करन में हकाबन हजार हो मी तीस दपय साध तरह धाना मरम्मत बनेट में उधोम हजार पाँच मी घटमठ रजय मी धाने किराये में तीय हजार दो दो साध रजये मया बाखू धाले मुन रजय हुआ। यह हिमाक ३१ डिसेम्बर, १९११ तक था है। इसके धमाया इन घण्ट बापिक के लिए चौथोम हजार एक मी तीतोत रजये

साझे नौ धाने बेसेंस है। अतिरिक्त फीस महत्तर रुपया तथा पिछले बच का बेसेंस  
 साठ हजार ए। सी टोगरुपये सबा बच धाने मात्र है। यानी कुल मिलाकर दो लाख  
 छियासिह हजार चौहत्तर रुपये साझे चौदह धाना !!! पाठक इस हिमाज की समीक्षा  
 करें ता उन्हें पता चलनेगा कि मार्टिन कम्पनी कारी से फिजगी जबरदस्त धामरुकी  
 कर रही है। और इस धामरुकी का कारण क्या है। 'पामोनियर में पचीस नवम्बर  
 १९२२ को प्रकाशित एक लेख के अनुसार इस कम्पनी का बिजली पैदा करने में छी  
 यूनिट चार पाई मात्र का व्यय होता है पर म्युनिसिपल संस्थाओं को साझे नौ पाई  
 प्रति यूनिट दी जाती है। निजी उपभोगियों को घाट धाना प्रति यूनिट के हिस्सा  
 से दिया जाता है। यानी म्युनिसिपल संस्थाओं से प्रति यूनिट साझे पाँच पाई तथा निजी  
 तौर पर सेनबालों से साठ धाना घाट पाई मुनाफे में प्राप्त होता है। क्यती ऐसे नगर  
 से इतनी रकम बसुल बच तक को जा सकती है, यह कहना कठिन है। यह बिजली के  
 प्रेमियों की ही दुर्बलता है कि एक कम्पनी नगर भर को इस तरह कंगाल बना रही है।

हमारा यह कथन अतिशयोक्ति नहीं है। विस्मी म चार धाना प्रति यूनिट (चारह  
 प्रतिशत की छूट के साथ भी) देना पड़ता है। कलकत्ता में डार्ई धाना दर है। सप्लान्ड  
 म पाँच पाई इलाहाबाद में दो पाई धामरु में साझे पाँच पाई बरेली में नौ पाई, कानपुर  
 म पौने दो पाई मसूरी म एक पाई जमीराम म कम्बन बाधा पाई बिजली का उत्पादन  
 व्यय है। कारी का चार पाई है। इस हिस्सा से देखने पर भी कारी का सर्वा कहीं  
 अधिक बडा हुमा मामूम होता है।

यह पदो दर की बात। कारी इस विषय म किसी भी जनी विदेशी देता से धाने  
 है। इण्डियन जामनी प्रांस रिबटकरलेड इटली अमेरिका और जपान म नौ पाई की दर  
 से ही बिजली प्राप्त हो जाती है।

हम ही नहीं कहते कि हमारे नगर म बिजली का रेट बहुत अधिक है। कानपुर  
 को बिजली देनेवाले मेसज बंग सघरलेड एरु कम्पनी ने मुक्त प्राप्त क बायिन्वमबडन  
 के एक प्रमुख सवस्य का एक पत्र म लिखा है, कि कारी का 'रेट' अत्यधिक है। इसी  
 प्रश्न पर विचार करने के लिए विगत सन्धार को कारी के प्रमुख बिजली उपभोगियों  
 की एक सभा हुई थी। सम्भवत यह निश्चय किया जा रहा है कि यदि कम्पनी सीधे  
 से न माने तो पहली नवम्बर से बिजली लेना ही बन्द कर दिया जाय। इस प्रकार  
 उत्पादक यदि सामूहिक रूप से हो सके तो मार्टिन कम्पनी को नीचा दिखाना सरल है  
 पर इससे कानूनी अड़चने भी होगी। कुछ मोम साल भर का 'कॉन्ट्रैट' कर चुके है।  
 कुछ अवश्य ही सरकारी विद्गु होने। कुछ उपभोग सरकारी अर्थात्ता में होता होया  
 और सबसे बड़ी बात यह है कि अब म्युनिसिपलिटी सरकार की है। उसका एक्सीक्युटिव  
 अफसर एक 'तहसीलदार' है। प्रधान सघर अतिरिक्त मैजिस्ट्रेट है। अतएव इनसे कैदे  
 धारा की जाय कि जमता के मोक्षप्रिय बनने की चेष्टा करेंगे। इनसे कैदे धारा की  
 जा सकती है कि हमारे मात्र कम्बे म कथा मिलाकर अपने देश को एक कम्पनी की मुट  
 से बचा लेंगे।



किर मा हमें नापरिलों को प्रयत्न करना चाहिए । हम विषय में धारोमत करन के सिध एक समिति कायम हा नही है । इसक सम्पन्न है श्री सरनसकर भायु एक्जोकेट । उपमन्त्री है बनारस इंस्टीट्यूट के श्री सिंहसा भी ए । बिजनी हम सम्पत्ता का एक वावरयक र्ण्य है और इसका उपयोग होना आवश्यकताभी है । बिजला क पत्र में नमी में बड़ी सहायता मिलती है । बनारस कम्पनी को काशी से अधिक से अधिक कार घाना प्रति यूकित सेना चाहिए । इसमें प्रकाश तथा पंसे क लिए पञ्चीम प्रतिशत मुजर का देना चाहिए । मोटर तथा 'गर्म करने के लिए एक घाना पति यन्त्र बना काफी होया ।

पार्टिन कम्पनी को किटना नाम है वह प्रत्यक्ष है । प्रकरय हमके बचन धंधल मामिकों को ऊंचे पर्वों पर प्राय सभी धंधल या बिजनी प्रकरण को मोटी मनदवाहें मिलती है तथा भारतीयों का उत्तना ही आम होता है बितना बिलायती कपडा बचन पर भारत क सोट हुकामदारों को होता होया । नारी में कम्पनी क प्रकरण में हमारा कोई हाथ नहीं है । इसाहम्बार में बिजनी कम्पनी में अनुनिमित्त बोड क ने मरम्य मामिक किमे बलै है पर यहाँ बातें जो हो हम कुछ पता भी नहीं चलता । ऐसी दशा में हमको इस बात का सोमहों घाना हक है कि या तो धरन नगर के लिए रं म्बय नय क मा कम्पनी से माता छोड़ दें ।

४ मितम्बर १९३३

## तम्बाकू पीने पर सजा

प्रभाव के जिना मेजिस्ट्रट ने एक कटमान बिकाला है कि कनस्टा में जो बान्नी तम्बाकू पीना बाया प्रायका उनको नडा दी जायगी । शाब कादर बगानु गुड सिपार या सिपरेट से शीक नहीं करती । हम तमानु के प्रमी नहीं है और बाजवन इस बुटी धारण से जितनी हानियाँ पैदा हो रही है उनसे भी बलबर नहीं भंविन हम जुम को हम सजा देने क समय नहीं समझते । जब एर धारणी जेब के धार घान तुब करके ईची की एक बिबिया धरीला है तो नरा उनको काफी नडा नहीं मिल जागी ? मगर यह हुकम मौजूदा बिभाषीय के बाव भी रह सकेगा इनम मन्देह है । बहुत मजब है कि उनके उत्तराधिकारी साहब सिधारों क ऐसे बिद्रोहा न हू । पर १९३१ पूर्ण उधाने की तहजीब तो हमने साहब महापुरां से ही भीतो है और बाव हुदारे बिलन हा कैमुनेबल पोसत पॉसिष को के एक ही मिन रोगा की उत्पत्त है । यह तो कोरं इमान नहीं कि धारा मेंह सम बाव पर उगना पीना जुम कर्ण दिया जाय । हम धारा है तमानु के प्रमी इन्शुरास मेकर मि बिहाप की मश म जायेंगे और उनमें करुण—

छटती नहीं है मुँह से वह जारिर नगी ह<sup>२</sup> ।

६८ मितम्बर १९३३

## कल्पना की उड़ान

समाचार-पत्रों को इससे ज्यादा मजा धीर किमी बात में नहीं पाता कि उन्हें कोई सनगनी देवा करनेवाले प्रसंग को मोटे-मोटे पत्रों में छापने का प्रयत्न मिले। इन दिनों प. जवाहरलाल जी और महात्मा जी म जो बातचीत हुई धीर उन दोनों महानुमाओं म अपने-अपने जो बयान प्रकाशित किये उसमें हमारे किये सहायिका को दोनों नेताओं में मतभेद का भूत नजर आया। फिर क्या था कल्पना ने अपना काम शुरू कर दिया। किसी सज्जन ने सिखा इन दोनों नेताओं म बहुत पुराना मतभेद है, पर जवाहरलाल जी महात्मा जी का प्रवचन से विरोध नहीं करना चाहते थे। यह वह अपना अलग धम बनायेंगे जो बिजकुल धार्मिक प्रस्ताव पर निर्धारित होया। किसी ने इससे भी भाग बचकर प. जवाहरलाल जी को उपदेश दे डाला। धीर शायद वे अपने दिल में कुरा हो रहे हाने कि दोनों महानुमाओं में जरा कम काम तो समाचारों में बरा लेवी पैदा हो जाय। धीर प. जवाहरलाल जी बार-बार कहते हैं कि महात्मा जी स उनका कोई मतभेद नहीं है धीर वह अपने को महात्मा जी का एक सैनिक मान समझते हैं। अज्ञा है पंडित जी के पिछले बयान स इन प्रकार की कल्पनाओं का अन्त हो जायगा।

२५ सितम्बर १९३३

## काशी में कमिश्नरों की जोड़ी

सह्यायी 'आज' को यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि काशी में एक छोड़ दो-दो कमिश्नर कैसे और क्यों आ गये? आपको यह पूछने का क्या हक है? आप तीन में है कि तरह म। सरकार मज शक्तिमान है वह चाहे तो इसी काशी में एक दरजन कमिश्नर रखकर बिजना से। धान बोही देखकर ही चकरा गये। फिर आप ने देखा नहीं एक आसिड कमिश्नर है दूसरा 'एडिसनन कमिश्नर'। एडिसनन को आप कुछ समझते ही नहीं। धान कमिस्ट कमिश्नर और डिप्टी कमिश्नर और भाँति-भाँति के कमिश्नरों को हलकर ही एक 'एडिसनन' में चबरा गय। 'कट' कसकों धीर अपरासियों के लिए है।

१६ अक्टूबर १९३३

## गाजीपुर का दगल

पूरब के लोग अपने का पश्चिमवालों से कुछ भाषा समझते हैं। जो बंगाली दो चार भाष समुक्त प्राप्त म रह लेता है वह कम से कम पशुवस में अपने को 'बेल

बासों से थोड़ा समझल जगता है। कहीं पंजाब में रूढ़न का संस्कार मिल जाय तो बरमा ही क्या। उसकी भाँट कम जाती है। पश्चिमवानों पुरखवालों को भाउयोग दोग न जान किन-किन उपाधियों से विभूषित किया करते हैं। शायद कुछ विग्न-गिया में पढ़नेवालों की ज़ारी पश्चिम रिशा में ही की जा सकती है, बाहे बस-बाँस मांग का ही धन बसो न हो। पंजाब में पढ़नेवालों का इन प्रान्तों के पढ़नेवालों पर कुछ ऐसा गैब छा गया है कि सहसा कोई पंजाबियाँ में सदन का साइस नहीं करता। लखन गाड़ीपुर में धमी हल में जो दंगल हुआ है उसमें धबिबुतर कृषिवाँ पुरखवाला न मारी दोग पाटीर धमूडमर धारि स्वार्थों के पढ़नेवाला को भीषा देखना पड़ा। शक्ति जिमी की मीराम नहीं। जहाँ साधना हावी नहीं कल्पि होयो। राटो दास दोग भाउ-भास का कोई मकल नहीं। बापान के सोय भाउ जाने हैं लेकिन संसार के किमी जालि व बीग में कम नहीं है। हमारे पुरख मी दाल-भाउ गल हैं। उस तरह में धीर हाँसा ही क्या है पर तब धीर साइस में किमी जाल या पठन में पोसी नहीं होने। तब ही दो-बाग उगला में पंख के सोय बासो मार में जावें तो पश्चिम की पाँट टूट जाय।

३० अक्टूबर १९३३

## दस साल की कैद

मरद्वर धपन मौकड़ों को पचपन माने में निकाम नहीं है मरद्वर हाँकाट के बस भाठ तल तक धपन की कुरसी को मुशामित कर मकने है। मरद्वर मरद्वर ? क्या मामली हपुटी मरिस्टेट या धपन पचपन ही में होश-हबाम को बँटा है धीर जब साम टिही पुण धासीबाँर में साठ गाँव तक होश-हबाम कायम गते है या हाँकोट के जलों के लिए होश-हबाम की जहरत नहीं समझी जाती धीर व केचन कुरमा भाउत के लिए रल जाते है ? धपन प्रयाग विश्वविद्यालय में जो यह उम्माब किया है कि भाठ साम से ऊपर कोई धामनी बाइम बाँसलर न रहे। धपन साठ साम तक धामनी हाँद कोट का बस रहे नचता है तो निस्संदिह पघतर साम की उल्ल मर बाँस बाँसवरी कर सचता है।

२७ नवम्बर १९३३

## प्रयाग में मादकता की वृद्धि

प्रयाग की त्रिशा-मशा-जर्मनी में किम में उन्नीम माँष बसुपा का दूधारे बाँस मर ही है। मरद्वर मरद्वर-मरद्वर से मरद्वर-प्रियाग का धपन मुशामित न देगा मया।

उसने शहर में तुरंत चार दूकानें खोल दीं। बेहाल को उन्नीस दूकानों में जो कुछ कमी हुई उसकी पूर्ति शहर की चार दूकानों से हो जायगी। अगर इस तरह यह कमी न पूरी हो तो कमेटी का चाहिए कि उसके लिए नये-नये आयोजन करे। जैसे सिगरेटबालों-डिब्बियों में टिकट रख देते हैं उसी तरह अफीम और चरस की दुकानों में या शराब की बोतलों में टिकट रख दिये जायें। इनमें के नालब से हजारों टीटोटमर कंटी ठोड़ कर कमबलिए में न पहुँच जायें तो हमारा जिम्मा। दूसरी तरफ़ीय यह है कि हरेक कमबलिए में न नशीबाओं का रेकाइ रखना जाय। जो सबसे बड़ा विषयकड़ हो उसे किसी तरह का सरकारी खिताब या सम्मान का कोई बुराद बिन्दु प्रदान कर दिया जाय। फिर देखिए इस विभाग से कितनी घामशनी बढती है।

४ दिसम्बर १९३३

## आतिशबाजियों का घातक परिणाम

शबराठ गुजरे पाँच दिन हो गये पर अभी तक पटाबे छूट रहे हैं और कमी-कमी हवाइयाँ और घघुबने भी मजबूर आ जाती हैं। होमी में भी हफ्तो तक लोवों पर आतिशबाजियों का मशा सवार रहजा है। हर साल कई लाख रुपये बाकब में उड़ जाते हैं। खामे तक ही बात रहती तो मनीमत भी कितनों हो की जान भी जाती है। मुनी समाचार-पत्रों में कई जिम्मे से आतिशबाजी के वास्तक परिणाम की खबरें आती हैं। और कई दिनों इस तरह की खबर आती रहेंगी। अगर समाज के नेताओं ने इस बुधित प्रथा को टोकन का प्रयत्न नहीं किया। कई साल हुए हिस्नी में मुसलिम नेताओं ने आतिशबाजियों के बिच्छू बड़ा धान्नीजन किया था उसका नतीजा यह हुआ कि दो तीन साल तक हममें कुछ कमी हुई लेकिन अब फिर वही हाल है। बुधियाने में तो एक पूरा परिवार ही सतम हो गया।

११ दिसम्बर १९३३

## बेकारी के करिश्मे

सबर है कि इलाहाबाद में अबकी मा'न वस्तुओं की दूकानों के ठाके के उम्मेदवारों में कई प्रनुएट और कई एम ए पास लोग भी हैं। इन्ही दूकानों पर जोड़े दिन पहले कविसे न रिक्टिंग की थी और कितने ही युवक उस जुम में जेल भेज गये थे। उन दूकानों की बोली बोलनेवाला न मिलत थे। और घाम शिचिद युवक उन दूकानों के ठाके के लिए कमबेसिग कर रहे हैं। इसमें खेब या धारणव की क्या बात है। शिचिद

युवक आचकारों के अकर्म नहीं हैं जिनका कर्तव्य ही यह है कि नरो की बिड़ी बढ़ायें ।  
 सिद्धि युवक राष्ट्रीय आरोग्य को कुचलने में क्या सरकार के साथ न ये ? अगर  
 सिद्धि वय में बिदेक आय उठे तो संसार स्वयं हा आय । क्या तो यह हाव है कि  
 सिद्धि समाज राष्ट्र को Exploit करने में मस्त है । दूसरा बात यह है कि राष्ट्र में  
 Exploit किये जाने की सामर्थ्य ही न रहे ।

२५ दिसम्बर १९३३

## सामाजिक नियंत्रण की जरूरत है या नहीं

इस दो-तीन महीने से सहायगी 'मीडर में एक बंगमगौरवक विचार चल रहा  
 है । सायद अक्टूबर के महीने में समाचार पत्रों या कि इरीर राज ने एक ऐसा कानन  
 जारी किया है कि बराहों और उल्लोनों में पचाप छ ग्याश मोहमानों को बुनाता एएडनीय  
 मममम बाय इस पर काशी के बिडान् नता बाबू भीप्रकाश जी ने 'मीडर में एक पत्र  
 लिखकर इन कानून का बिरोध किया । उनके खयाल में सामाजिक जीवन में इस तरह  
 का नियंत्रण अनावश्यक और अज्ञान है । बराहों का जीवन में धानन्य मनात के इतन  
 कम अक्षर मिलते हैं कि शाशो ग्याह में भा यह बाधा हाव वा पयो तो जीवन बिजकुम  
 ही शुष्क और निराल्प हो जायगा । इस पर काशी क ही एक उनीयमान सेलक  
 यो मरमीकति भा ने इरीर कानून का समर्थन करते हुए लिखा कि मरीशों का उनही ही  
 अक्षरशाशा के बचाना राज का धर्म है और इरीर में यह कानून जारी करके अपनी  
 प्रजा का बडा उपकार किया है । बाबू भीप्रकाश जी ने फिर अपना प्रत्यन्तर दिया है  
 और उनमें अपना पूरा कथन का समर्थन करते हुए लिखा है कि मरीशों को उन बन्धन तो  
 किम्वयत न खयाल नहीं आता जब वह अपनी दाहनों और पानियों में इज्रायें गन्ध  
 करके करबदार हा जाने हैं तो मरीशों का के माव क्या यह कानन करता आय ।

अन यह है कि सामाजिक नियंत्रण की आवश्यकता है या नहीं ? वर तो समा  
 जानते हैं कि अज्ञान शासन बहो है बिचमें राज का प र न क र से क र बग्न र रहे ।  
 अज्ञान मरीशों ही को नकन करतो है । अक्षर अन्धान भाग इन तरह का अक्षरन्य न  
 करें ता मरीशों को भी अज्ञान भर फूँकर तमाता देखने को हवन न हो । हम तो इमी  
 सिद्धान्त पर अन्धान सिद्धा का भा बिदाव करते हैं । अज्ञान इनके कि अज्ञान पर यह  
 का प्रतिबन्ध समाकर उन्हें किम्वयत का सबक दिया जाय यह कहीं अज्ञान है कि जानि  
 के अज्ञाना मुद किम्वयत का आदेश सामने रखें । जब तक मरी भाव अज्ञान के मोह में  
 पड़े रहें अज्ञान पर का का बन्धन समाकर उन्हें दूरशों नहीं बनाया जा सकता ।

२६ दिसम्बर १९३३

## पेरिस में भीषण दुर्घटना

सबसे है कि फ्रांस की राजधानी पेरिस में एक बहुत बड़ी रेलबंद दुर्घटना हो गयी। एक मारी साठ मीन की बाल से घा रही थी कि एक स्टेशन पर वह एक बड़ी मुसाफिर गाड़ी से टकरा गयी। दोनों गाड़ियाँ भरी हुई थी। बड़े बिन का उत्सव मनाने के लिए लोग अपने-आपके घर आ रहे थे। बड़ा जबरदस्त टक्कर था। एक ही बस्ती से ऊपर तो नहीं मर गये और तीन तो से ऊपर जख्मी हुए। ऐसा मामूली होता है, फ्रांस में रेलों का प्रबन्ध कुछ बड़बड़ है। अभी तो एक टक्कर में इतनी जानों की खति हुई। क्या ही धक्का हो कि भारत का रेलबंद बोझ अपने हाथ में वहाँ का प्रबन्ध से-से और उन्हे सिखा दे कि या टाठिक कटोम किया जा सकता है। यहाँ गाड़ियाँ लड़ती हैं वहीं लेकिन कुछ इस खूबी से लड़ता है कि दो बार घातियों को मामूली खोचें लगाकर रह जाते हैं मरे भी तो दो-बार मर गये। यह नहीं कि एक टक्कर में पाँच ही से ज्यादा जान बर्से। इस मामले से असम्भव भारत योरोप को धमी कुछ लिन सिखा सकता है।

१ जनवरी १९३४

## एम० सी० सी० की धूम

घाब घारे देश में एम सी सी की धूम है। खिलाड़ियों का नागरिक स्वागत किया जा रहा है, ऐड्स स थिये जा रहे हैं और कहा जा रहा है कि भारत के स्वराज्य का प्रश्न क्रिकेट के मैदान में हल होगा। जिस उत्साह से हमारे राजे और महाराजे और मिनों के स्वामी और बड़े-बड़े लोग इस शोपिंग में चिन्तन हुए हैं उससे इस विषय में खबर भी संदेह नहीं रह गया कि बस घाबकी मीच जीते और स्वराज्य मिला। हाकी में हिन्दुस्तानियों ने सारी दुनिया को जीता स्वराज्य को एक मंजिल पूरी हुई। पोर्सों में जीत कर हम बुरा मंजिल पर जा पहुँचे। टीराकी में घोषणा धाकर टीसरी मंजिल मार ली। फुटबाल में पहले से हमारा सिकका झूटा हुआ है। घाब सम-चार धाया है कि टेनिस में घास्ट्र मियाबालों को हमने जीता दिखा दिया। बीबी मंजिल भी पूरी हो गयी बस क्रिकेट में जीतने की बेर है। जीते और पूछ स्वराज्य मिला। और जीत तो होती बंबई ही में लेकिन उस इलेविन में शरीक होने के लिए कैबल घिसाई होना कान्सी नहीं। घाब घाबो सिमाई है तो क्या बैठ रहिए। यहाँ जिस पर घाब कारियों की कृपा है, वह इलेविन में मिया जाता है। गुना है बाइसराय साहब को क्रिकेट से बड़ा प्रेम है। जगानी में घाबो क्रिकेटर थे। घाब घाल तो नहीं सकते मगर घाबों स बेस तो मकसे है। और जिस बीब में हुमुर बाइसराय की दिव्यम्पी हो उस

में हमारे राजों महाराजों नवाबों धीर धनवानों को मसा हो जाय तो कोई भारभर्य नहीं। हुजूर बाइसराम धगर प्रिस दलीप सिंह से गुस होते तो शायद वह भी भारत के साथ बुनाये जाते लेकिन नहीं उन्हें क्रिकेट से क्या मतलब। यहाँ तो पक्का सिमाही वह है, जिसे अधिकारी लोग नामबद करें। भारत की ओर से बाइसराम बधाई देते हैं, भारत का प्रतिनिधित्व अधिकारियों ही के हाथ में है। फिर क्रिकेट के क्षेत्र में क्यों न निर्वाचन अधिकार उनके हाथ में रहे। इस बूम-बाम धीर टीम-टाम का यही रहस्य है। रैस में क्लिसन दे बिये एक्सप्रस बाइयाँ दीड रही है, तमासाई लोग बमियाँ तिये कलकत्ता भाने जा रहे है।

धीर हजर गुल मन्वीया का रहा है कि मन्वी है धीर मुस्ती है। मन्वी धीर मुस्ती है मन्डूरी घटाने के लिए, मीकरोँ का बेतन काटने के लिए, ऐसे सुघामिसों म हनेया ऐबी रखी है।

१ जनवरी १९३४

## एम० सी० सी० की जय

कहते है कि कॅच-कान्ति के पहले जमता तो भूखों मखी थी धीर उनके शानक धीर जमींदार धीर महाजन माटक धीर मूल्य में रत रहते थे वही बुरय धात्र हम भारत में रैस रहे है। देखतों में हाहाकार मचा हुआ है। शहरों में गुलबदरें उड रहे हैं। वहीं एम सी सी० की बूम है, वही हवाई जहाजों के मेले की। बडी बेरहीं से रुपये उड रहे हैं। काशी के हम क्रिकेट-मैच में कम से कम पाँच हजार धावमी तमासा देन रहे थे। कम से कम पन्नीस हजार रुपये केजल टिकटों से बमूम हुए धीर तिया फिसने उही बाबुधों धीर धमीरों ने जिनसे शायद किसी राष्ट्रीय काम के लिए कौडी न मिल सके। पूर तमारो देखे जावे सूब भजे उडाये जाव। यह बुनिया है, कीन किसी के हुए ने बुन्दी होता है। यह सिरफिरी का काम है। संघार जनका है, जा मीन कलें है। शहर कि मन्देसों से मरनेवाले धमागे काबी को मरना ही चाहिए। क्या धमोरों का चोचता है, उसकी हमें बस्यत नहीं। म्याम के भाने में देर है, तक तक बिन किये जावे। मुना हम मैच में बिजयनमरम् टोम जीत गयी। बस धात्र स्वराज्य मितन में देटी नहीं है।

१५ जनवरी १९३४

## सी० पी० सरकार की सतर्कता

मी पी के होम मैनबर एक हिमुस्तामी सज्जन है। महारामा की धमी जय उस प्रांत में बीरा कर रहे थे तो धायने एन मरफुलर निकाला या कि सरकारी मोरतों

॥ सी० पी० सरकार की सतर्कता ॥

५२१

को इस प्रावधान में माय न सेना चाहिए। विनियम ठीक। संश्लेषक बीमारियों में बाहरवालों को छूट सम कामे का व्यापक भय रहता है।

२६ जनवरी १९३४

## बैंकर्स की फरियाद

धीरे कोई माने या न माने बैंकधारकों ने तो गवर्नर को डिप्टेटर मान ही लिया। हुयकों के उद्धार का जो विम कौंसिल में मंजूर हुआ है, वह बैंकधारकों को कई कारणों से रक्कड़ नहीं है। हम भी विम को निर्घोष नहीं समझते। जसमें किसानों के साथ जितनी रियायत होनी चाहिए वही उतसे बहुत व्यापक कर दी गयी है। यों कही कि उतसे विशेषकर जमींदारों का ही फायदा होया लेकिन बैंकर्स को क्वार्टिसल के मेम्बरों से फरियाद करना चाहिए वा। वा सम्भव है, उन्होंने फरियाद की हो धीरे मेम्बरों पर कुछ असर न हुआ हो लेकिन अब मेम्बरों पर कोई असर नहीं हुआ तो गवर्नर पर कोई असर होने की बहुत ही कम संभावना है। धीरे असर असर हो भी जाय तो हम पचायत के फंसले की प्रपील ऐसे हथकास में करने के विनाशक हैं जो तिरकुटा है। बैंकधारकों ने समझ होया अब एक की सुझाव करने से काम निकल सकता है, तो बहुतों की सुझाव क्यों की जाय लेकिन यह नीति जनतंत्र के अनुकूल नहीं है। जनता के हित के लिए असर प्रमीय को कुछ कष्ट धीरे हाजि भी हो तो वह सहनी चाहिए। जनतन्त्र का यह सिद्धान्त है।

२६ मार्च १९३४

## डाक्टर भी संरक्षण चाहते हैं

जर्मनी से निकले हुए यहूदी डाक्टर भारत आ रहे हैं। अभी तक तो भारत के मरीज इलाज कराने के लिए जर्मनी जाया करते थे। अब जर्मन डाक्टर लुब यहाँ आ रहे हैं। इससे हमें खुश होना चाहिए वा मगर हमारे डाक्टरों को संकल्प हो रहा है कि कहीं ये डाक्टर यहूदीधर्मों का राजगार न धीन लें। हाहा समझते हैं मरीज किसी डाक्टर के पास इसलिए नहीं जाता कि वह हिन्दुस्तानी है वा हिन्दू वा किसी धर्म जाति का। वह सिर्फ उस डाक्टर के पास जाता है, जिस पर उसे बिरबास हो जो उसे प्रच्छा कर सके। असर हमारे डाक्टर चाहते हैं कि जगका मुख्य बना रहे, तो उन्हें अपने बियय वा पुत्र ज्ञान प्राप्त करना चाहिए धीरे अपनी फीस भी ऐसी रखनी चाहिए, जो मामूली धारमी की पहुँच के बाहर न हो। कलकत्ते में प्रच्छे डाक्टर के एक विविट की फीस



बर्तीस रुपये से कम नहीं है अगर जमन डाक्टरों के घाने से यह सुट कम हो बात तो हम उनका स्वागत करेंगे। सरचाण की यह हवा देखें हम कहीं-कहीं से जाती है।

२६ मार्च १९३४

## कोर्ट-शिप

प्रपाम में बसवान महिला महाउमा की सयानेबी जी ने समाज की ईवाहिक कुटीतियों को दूर करने के लिए कोर्ट-शिप की बात कही। लेकिन कोर्ट-शिप स्वयं ही एक बर्तीसी बस्तु है। कारों की छीर घोर रस्दों की बाबतों घोर घावे बिन नये-नये उप हार, यह क्या मई-बाप के लिए कुछ हल्के टैक्स होंगे। और बखी-भूली कोर्ट-शिप मरभूमि में पड़े हुए बीर की भाँति शामद ही बंधुरित हो कमना-भुलना तो दूर की बात है।

१६ अप्रैल १९३४

## डाकों की धूम

डाकों की लागद बढ़ती जाती है। धर तो बालित-बवास की पूरी सरसन फीजें डाके मारने लगीं। गाँववाले बन्दूक की भावाब धुलते ही दम साध लेते हैं। डाकुओं का माँब पर पूरा राज्य हो जाता है। उनकी इच्छा है जो चीज चाहें ले जायें जो चीज चाहें छोड़ दें किसी मजाल है कि चूँकर सके। अगर गाँववासों को पड़ोस का इक धन करने की सूझ पयो तो दस-माँब नहीं शहीद हो गये। डाकू मजे से बिन तरह पाते बजाते घावे से उसी तरह हँसते-खेसते बने गये। तीसरे बिन पुनिस तर्कीकत करने पहुँची और यह मनी हुई बात है कि डाकू घास-पास के गाँवों के लोप ही रहे होंगे संभव है दो-बार दस माँब के घारमी भी उनमें मिले रहे होंगे। यह चीन नहीं जानता कि गाँववासों के सहपोष के बहेर डाके नहीं पड़ सकते। इसलिए दो-बार माँब के मने घारमी दस-माँब पड़ोस के गाँवों के मोसबर घारमी ही डाके में शरोक हुए। सबूत की क्या कमी। इन धमाकों ग धर शरोगा बी को प्रसन्न कर रिया ही बाल बध गयो नहीं बल्कि बीसनी पड़ी। रोज नहीं तमासा होता है मगर बिछी का परबाह नहीं। सरवार की पुनिस का नाम है सरवार से शत्रुओं को पकड़ना और मिटाना। प्रजा की रचा सरकार की पुनिस क्यों बरे? प्रजा की रचा प्रजा की पुनिस करेगी जो अनन्त मबिद्व में बसगी। प्रजा का बम है सरकार को टैक्स धीर कर बरत करना। सरकार का बम है कर लेना बानी रचा करना। प्रजा के प्रति सरवार बाधीर क्या बम हो लकता है। सरायों घारमी घों ही सरजन-तोड़ धीर जियर-मरोड़ बुतार से मरते हैं दो-बार ही

भारती डाक्टरों के हाथों शहीद हो जायें तो क्या गम । प्रवा के हाथ में हस्त भला कैसे बिया जा सकता है । क्या मेकियावेसी का ऐसा आवेक नहीं है ।

३० अप्रैल १९३४

## अंग्रेजी औषधियों का बल-पूर्वक प्रचार

कानपुर के हाकिम जिन्ना साहब ने बोर्ड को इसलिए करारी फटकार बराम्बी है कि बोर्ड ने अपने रोग निवारक बरत को औपचारिक मन्त्र और होमियोपैथिक दवाखाने खोलने में कर्ष किया है और इसके बरत-स्वरूप यह इस फरक को प्रवा से बधुन करना नहीं चाहते । साहब एम्पैथिक औषधियों के खासतौर पर प्रेमी मानुम होते हैं । हम भी मानते हैं कि बहुत-सी बीमारियों में एम्पैथिक दवाएँ ही ही शरह निराने पर जा बैठती हैं, मगर यह किसी तरह नहीं मान सकते कि आयुर्वेदिक युवाती या होमियोपैथिक की दवाएँ बिलकुल बेकार हैं । प्राय भी कितने मरीज एम्पैथिक दवाओं से अपनी बेह को बिपास्त करने के बाद निराश होकर आयुर्वेद या सिव की शरह पाते हैं और कष्ट हो जाते हैं । ऐसे संशय भी मौजूद हैं जो आयुर्वेदिक और सिव की दवाओं पर पूरा बिरवास रखते हैं और अक्सर डाक्टर भी आयुर्वेदिक औषधियों का व्यवहार करते हैं और होमियोपैथिक तो मानो किसी देवता का प्राणीभाव है, जिसकी राई मर मोनियों में बह टासीर है जो एम्पैथिक की बोलनों म भी नहीं । और अस्तोपन के सिद्धांत से तो यह भारत जैसे दरिद्र देश के लिए खासतौर पर अनुकूल है । हमें यह बेचकर भारतव्य हुधा कि प्राय भी ऐसे लंग क्याम संशय पड़े हुए हैं जो इतना नहीं समझते की भारतवालों के लिए भारत में पैदा होनेवाली औषधियाँ कितनी फलप्रसन्न हो सकती हैं, उसी विदेशी एम्पैथिक दवाएँ नहीं हो सकतीं और कितने ही निपट्रवन लोग तो एम्पैथिक से इसलिए घृणा करते हैं कि उसमें शरण ही नहीं मान और सुधर तक की बर्षी भी मिली होती है । माना कि रोगी को इस तरह के बिचार करना युवातिव नहीं लेकिन यह नहीं का ईसाफ है कि यह हाकिम जिन्ना ही क्यों न हों अन्तता को एक आस तरह की दवाओं का सेवन करने के लिए भयभूर करे । क्या औषधियों के बारे में भी हमें आजादी नहीं ?

७ मई १९३४

## पत्रों में अधूरी खबरें

दैनिक समाचारों में कभी-कभी ऐसी खबरें छपती हैं कि जनता में उससे बड़ी समत-  
 प्थमी पैदा हो जाती है और ऐसा मामूली होता है खबरें देनेवाले एजेंट किसी कारण  
 से बालबुद्ध कर धपूरी खबरें भेजते हैं। मुसलमन् चम्पारन में धमी यह खबर छपी कि  
 मुसलमानों ने हिन्दुओं की बो सी पचास गायें छीन लीं जिन्हें उनके स्वामी बचप्राहों को  
 भोर लिये जा रहे थे और जब उन्होंने अपनी गायें माँगी तो उन्हें माघ-पीटा। इस पर  
 बोग हमार हिन्दू बया हो गये उधर पाँच हजार मुसलमान भी बया हुए। पुलिस को  
 पता लगा। उसने धाकर हिन्दुओं पर गोमियाँ बलासी और बहूतों का पकड़ लिया।  
 खबर साङ्ग कइ रही है कि मुसलमानों की ब्यान्टी है और कोई कितना ही उधार हिन्दू  
 क्यों न हो वह यह कमी पसंद न करेया कि मुसलमान या कोई और उन गायों को  
 छीन ले। यह तो बाला है, उह्यनी है और जब बेचारे हिन्दू इस बात पर बिमड़ कर  
 एक होये हैं, तो उनके साथ कितना बड़ा धत्याचार किया जाता है। ऐसी खबरों से  
 ब्याम-ब्याह साम्प्रदायिक भावनाएँ प्रबल होती हैं और हिन्दू समझने लगता है कि जब  
 हमारे ही ऊपर बाटों तरफ से बार पड़ता है, तो फिर हमें भी लड़ मरना चाहिए। मगर  
 वास्तव में बात कुछ और थी। मुसलमानों की गायें भी बर रही थीं और जब यह रेबड़  
 उस गाँव में पहुँचा तो दोनों भुइए एक में मिल गये। हिन्दुओं ने अपने रेबड़ को ब्रमम  
 करना चाहा पर संभव है उसमें दो एक गाय मुसलमानों की भी रह गयी हों। इन पर  
 दोनों में झगड़ा हो गया। मुसलमानों ने रेबड़ को रोक दिया और कहा—जब तक  
 हमारा वसकिया न हो जायया हम गायों को न जाने देंगे। इस पर बात बड़ गयो।  
 इतना स्पष्ट कइ देन से खबर में वह मुसलमन् ब्यावरी का पहलू साम्य हो जाता है और  
 मामूली मवेशियों का झगड़ा रह जाता है, जैसा धाये दिन देहालों में होता रहता है।

१४ मई १९३४

## बातचीत करने की कला

बातचीत करना उतना आसान नहीं है, जितना हम समझने हैं। यों मामूली  
 मबान ब्याब तो सभी कर लेते हैं अपना कुछ सजी रो लेते हैं, उसी तरह, जैसे सभी  
 बीड़ा-बहुत नाकर अपना मन प्रमत्त कर लेते हैं लेकिन जिस तरह माने की कला कुछ  
 और है और उसे सीखने की जरूरत है, उसी तरह बातचीत करने की भी एक कला है  
 जो कुछ लोगों में तो ईरबदरत होती है और कुछ लोगों को धम्यास से घातो है और जो  
 पात्र प्रभाव कारणों से मुत्त होती जा रही है। धात्र बो-बार हजार मुदिरिध धारिधियों  
 में एक ही दो एने निकलेंगे जो अपने समाज से किसी समाज या मंडली वा मनोरंजन  
 कर सकते हों अपनी लियारत वा सिक्का बया सकते हों या अपने पक्ष वा समजन कर

एकते हों। और विविध बात यह है कि पके-सिसे और चिटानू लोग इस कला से बितने शूय्य रहे बाकी हैं, उतने अशिथिल और ग्रामीण लोग नहीं।

किसी पाड़ी में दो पके-सिसे सज्जन हवार थो हवार मीम की यात्रा साथ करने पर एक दूसरे से सलाम-कसाम भी न करवे। एक अपना धखबार पकता रहेता दूसरा अपने उपन्यास में डूबा रहेगा। इससे जस्टे थो ग्रामीण क्योंही पाड़ी में बैठे कि उनमें बिलम बाबी शुरू हो जाती है, फिर जेती-बारी का बिक छिड़ जाता है, फिर मन्मसे मुकरने की बर्बा होने लगती है, जमींदार ने कैसे धसे बेवखन किया या साहूकार ने कैसे धूब दर धूब सगाकर पचास के थो ती पचास रुपये कर लिये और उसकी सारी कामरत मीसाम करा लो। जब तक यात्रा समाप्त न होगी उनकी बखान बंध न होगी। संभव है वे यात्रा शुरू कर दें। जबसे-जबसे उनमें एक सद्मान पया हो जाता है। यहाँ हमारे बाबू साहब अपनी बगह पर बैठे अपने बूसरे मुसाफिर भाई की पहरी बालोचना की बातों से बह कर रह जाते हैं। धाप एक ग्रामीण क साथ लंबी से लंबी यात्रा हँकते हुए कर सकते हैं लेकिन बाबू साहब के साथ धाम छोटी यात्रा कर के उन भी जाते हैं। उस ग्रामीण के जीवन में कुछ रस है कुछ उत्साह है, कुछ आस्थापरिता है, कुछ बातों का-सा कुतूहल है, कुछ अपनी विपत्ति पर हँसने की सामर्थ्य है लेकिन मिस्टर या बाबू साहब अपने धाप में सिमट कर मनो सारो बुनिया से बूठ गये हैं। ऐसा क्यों होता है समझ में नहीं आता।

लेकिन ग्रामीणों में भी यह कला लगभग पर है। पुराने जमाने में नार्द संनमक कला में जन्म ही से निपुण होता था उसी तरह, जैसे बोबी बन्म ही से कविता की कला में सिद्ध होता है। बलिपरीक्षा में नाइसों-डाएर कही गदी कई कहानियाँ हैं और यद विदेयता कुछ ईदनी या धरबी हज्जामों ही में न थी। हमारे जहाँ भी नार्द पक्का बगुरी होता था बहा हारिबबबाब जिउका रिमाए लोकोविशों और बुगुरी की बाल हिया था। वहाँ में नाऊ टाकुपों की हवारों कपारें धाब जो प्रचलित है लेकिन नार्दों न भी धब उद कला का धोन होता था रहा है। धब तो यह मुहरली मूरत बिने धला है बु-धान बन बनया है, और दैस लेकर जाता जाता है।

नार्दों में ठा इस कला के निग्ने का नारण हैहार्दों की बरहानी और साधारत उदत को टटिरी हो सकी है। बिलके पाद धसे है वे धब धाने हारों धनी धाई धाक कर लेते हैं कहीं छंटे नहिन उन्हे बाब बटबान के निरु नार्द को उकरत परती है। और हेराने में किन्त ध ही दत क नहानही नार्द का देन कहीं से धरे। जब रिमल के बखतों में धण्ड और धने धैतों क धनों में धूब मय होता था उबकत टकुर धुंकों का टर रते व और मय धा देन उरधते धू धने को उरह बिनेने करत का धामन धनेधने धाने न न धने धै धैर बुकतों के रर में सिक्कतों थी। यहाँ किन्त धने धैर धने के नैर नै बुकत-उठण हो और उधके रने मय ध सिक्कतों हों, धै हँकतत क सिद्ध मुकती है।

शिखित मार्गों में जो बचापन और उदासीनता था मयो है, उसका कारण शायद  
 धारकम की शिखा प्रणाली है। पहले साहित्य ही मुख्य पाठ्य विषय था। हम बड़े-बड़े  
 कवियों की सूक्तियाँ याद कर लिया करते थे। सुभाषितों का एक खजाना हमारे दिमाग  
 में जमा हो जाता था और कंठस्थ होने के कारण बचसुर पढ़ने पर हम संभाषण में  
 उनका व्यवहार करते थे। धर्म बाल्यावस्था में जो किस्से कहानियाँ या ग्रन्थ पाठ पढ़ाये  
 जाते हैं उनमें सुभाषितों का नाम जो नहीं होता। और जब ऊँची कक्षाओं में क्लासिक पढ़ने  
 का समय आता है, तो उसके लिए पाठ्य क्रम में इतना कम समय होता है कि केवल  
 उसका धर्म समझ लेना ही काफी समझ आता है। रटत की किसे फुरसत है। धर्म  
 संभाषण के लिए अच्छी स्मरण शक्ति का होना आवश्यक है, और यह शक्ति धारकम  
 उपाधा की दृष्टि से देखी जाती है। बड़े-बड़े विद्वानों से कहिए कि लेक्सिकन की बो-बार  
 सूक्तियाँ सुनाइए, तो वे केवल मुसकुराकर रह जायेंगे। ग्रीक को कुछ याद हो तब तो  
 सुनाये। एक कारण यह भी है कि हमने बनता में मिलना-जुलना तक कर दिया है,  
 बड़ी भावनाएँ अपने मौलिक और प्राकृतिक रूप में निवास करती हैं। अब तक धारको  
 हकार-बीच सी ठेर और कविता या बोहे, सी बो सी बुटकुमें बो-बार सी सुभाषित और  
 सूक्तियाँ याद न हों धार मनोरंजक संभाषण नहीं कर सकते। किसी की स्वीच सुनने  
 जायें, धार वह केवल फिसलपत्ती बघार रहा है, या बड़ी धोबस्त्रिनी भाषा न परि  
 स्वितियों पर धारना मत प्रकट कर रहा है, तो धार बहुत बस्त ऊँच जायेंगे लेकिन  
 धार वह बीच-बीच में अपने कयनों को विनोद-भरे बुटकुमें और सतीकों से धमकूट  
 करता जाता है, तो धार अन्त तक मुग्ध बैठे रहेंगे। एक सतीके से धार संभाषण में  
 जान-सी पड़ जाती है। सिकड़ों यलोमें एक तरह और एक बुटत सुभाषित एक तरह।  
 वह प्रतिद्वन्द्वी को निरुत्तर कर देता है, उसके बचाव में उसकी बचाव नहीं दुमती। धार  
 का पच चिठना ही प्रबल हो पर सुभाषितों में कुछ ऐसा आहू होता है कि मानो वह  
 एक लूँठ से बनीसा को उड़ा देता है। मीनागा मुहम्मद अली मरहूम जिन गिनों धंधरी  
 'कामरंड' नाम का साप्ताहिक-पत्र लिखा करते थे तो उनके सेलों का हरेक पटापाठ  
 गानिब के शेरों से धर्मकूट होता था और उसके राजनीति के रसे विषय में भी रम धा  
 जाता था। उनके इस तरह के लेख लाजबाव होते थे और बड़ी रचि से पड़ जाने प।  
 मीनागा मुहम्मदअली को गानिब का पूरा हीबान' कण्ड था और शेरों को वह कुछ  
 इन तरह चिपका दिया करते थे कि मामूम होता था गानिब ने वह शेर इमी धरमर  
 के लिए कहा हो। स्व धरमर की व्यगाकिनियाँ भी संशिकन है इतनी सञ्च और  
 पुनपुनी कि धार हम धरमी बातचीत में धीके पर उनका व्यवहार कर गकें तो मुने  
 धारों को उड़ा दें। कबीर और तुलसी रहीम गिरधर धारि की रचनाएँ सुभाषितों  
 से मटी पड़ी है मकर धंधरी स्कुनों में हिन्दी साहित्य एक गौण विषय है, और जिन  
 लोगों ने इन महाकवियों को केवल स्कुनों में पड़ा है, वे शायद ही उनके सूक्तियाँ को

याद रख सकते हों। सतीशों की कोई धन्वी पुस्तक हिन्दी में हमारी ग़रब से नहीं गुज़री। बीरबल प्रक़्खर और कुसरो के नाम से जो सतीश प्रचलित है उनमें अधिकांश गन्दे और कुशुधि-मूख है। अगर कोई सज्जन सतीशों को संग्रह कर सकें तो साहित्य का उपकार करें। समाज में बाढी-कुसल ध्यनित का कितना सम्मान और प्रभाव होता है, यह जिसने की बख़रत नहीं। ऐसा धारमी किसी मंडली में पहुँच जाता है, तो तुरन्त सब का ध्यान अपनी ओर खींच लेता है और मंडली पर मानों उसका आधिपत्य हो जाता है। हाँ मीन्य देखकर ही खबान खोलना चाहिए और उसी विषय में बोलने का साहस करना चाहिए जिसका हमें कुछ अनुभव या ज्ञान है। मीन की बड़ी प्रशंसा की गयी है लेकिन इसका यह धन नहीं कि हम मीनका धाने पर भी मुँह बन्द किये बैठे रहें। हाँ अगर हमारे पास कहने को कुछ नहीं है, तो मौन रहना ही उचित है। मीन से कम से कम हमारी मूर्खता का परवा तो बका रहता है। हम तो कहते हैं हमारे बोधेपन के लिए बड़ी हब तक हमारी अयोग्यता ही जिम्मेवार है। अगर हमारे स्टीक में लोकोक्तियों और सतीशों का प्रभाव न हो तो हम बोधे बैठे ही नहीं रह सकते। जिसे नाचना छाता है वह प्रबसर पढ़ने पर बिना नाचे रह ही नहीं सकता। अगर उसे नाचने का प्रबसर न मिले तो वह मन में बहुत दुखी होबा और भाव भवियों से अपना असन्तोष प्रकट करेगा। जो धन्वे बकता है, वे किसी सम्मेलन में चुप बैठ ही नहीं सकते। उनकी बीम खूबसानी समती है। और वे बार-बार स्मिप सिख-सिखकर समापति से बोलने की अनुमति लेकर ही रहते हैं। जिन शरोबों को बोलने की शक्ति या धम्यास नहीं है, वे तो बार बार कहने पर भी मंच पर नहीं छाते मनाते रहते हैं कि यह बसा मेरे सिर न भा जाय।

सगमय एक महीना हुआ हमारी मुसाकाठ एक ऐसे सज्जन से हुई जिनकी बाबामता देखकर हम बंग रह गये। सतीशों और सुभाषितों का एक छोटा बा जो उबलता चला छाता बा। ऐसा कोई विषय न बा जिस पर उनकी अपनी एक स्वतन्त्र राय न ही और जिसका समर्जन वह कायल कर लेनेवाले डंब से न कर सकें। कई बार यह बालते हुए भी कि उनकी कथन प्रममूलक है, उनकी बाबामता से साबबाब हो बने। अपने पक्ष में एक मामिक सतीशका कहकर वह कह-कहा मारते वे और इसके साथ मैदान मार लेते वे। वह जानते वे इस कैसले के सिमाफु में कुछ नहीं कह सकता। उन्होंने कितने सतीशके कहे, इस बकल सब ता याद नहीं छाते लेकिन बो-बार याद है उन्हें में पाठकों के मनोरंजन के लिए यहाँ बेता हूँ और उनसे धनुरोप करता हूँ कि वह अपने विभाग को ऐसे सतीशों से कितना ससस्र कर सकें कर बें। इससे वे अपने ही दुःखों पर नहीं दूसरे के दुःखों पर भी प्रहार कर सकेंगे और अपने धन्यामूर्धों का वापरा र्दमा सकेंगे—

(१) बचिखी धकीका में एक बार एक सरकारी कमचारी जन-गणना के विषय जिसे में एक भोपड़ी के सामने पहुँचा जहाँ कई धन्वे खोल रहे थे। उसने प्राबाब की

तो उसके जबाब में एक -हबस्तिन बाहर निकल आयी। कागजों की खानापुरी करने के लिए कमचारी ने पूछा—तुम्हारा सौहर क्या काम करता है ?

हबस्तिन ने जबाब दिया—बह क्या करेगा। उसे मरे तो बीस साल हो चुके हैं।

‘तो यह बच्चे किसके हैं ?

मेरे हैं।

‘लेकिन तुम तो कहती हो कि तुम्हारे सौहर को मरे बीस साल हो गये ?

‘हाँ बह मर गया है लेकिन मैं तो अभी जियेवा हूँ।

(२) एक तेजी ने अपने बीस के गले में बटी बाँध रखी थी। एक सज्जन ने पूछा—क्यों सड़ भी बीस की मदन में बटी क्यों बाँध रखी है ?

तेजी ने जबाब दिया—इसलिए कि बीस जसता रहता है, तो मस्टी बजती रहती है। मैं कोई बूझा काम भी करता रहता हूँ तो मुझे मामूम रहता है कि बस बस रहा है, सड़ा नहीं हो गया।

‘लेकिन अगर बीस लड़ा होकर फिर हिमाता रहे ?

महालय मेरा बीस इतना समझदार नहीं है।

(३) एक हिजाबवाँ ने बरिया को यहूदाई का अनुपात निकाल कर बरबातों से कहा—पत्नी बोझा है, कोई डर नहीं हम इसे पार कर लेंगे लेकिन जब मरने से सब सोच मध्य बाट में पहुँचते ही उसकी आँखों के सामने डूब गये तो वह फिर कितारे पर पहुँचे और फिर अनुपात निकाला। वही जबाब निकालता जो पहले था तो बोले—अभी क्यों का क्यों कुर्बा हुआ क्यों ?

(४) एक अश्लिमची पिनक में राह में पड़ा हुआ था। एक फणकड़ ने उसक सिर को पकड़ी उठार ली और उसकी जगह बोझी-सी रई रख ली। अश्लिमची जब पिनक से जाता तो पकड़ी समझने के लिए सिर की तरफ हाथ बढ़ाया। पकड़ी की जगह रई उसके हाथ आयी तो बोला—कम्बकत धुनकी गयी काठी गयी बुनी गयी पकड़ी बनी। इतना सब कुछ हो चुकने के बाद फिर रई की रई।

(५) एक बार मि हबट स्वेसर कहीं सिर करने जा रहे थे। घाप हंगलैड के बहुत बड़े फिलासॉफर हो गुजरे हैं। रास्ते में घाप को एक सौ साल के बुढ़िया मजदूर पकड़ी। हबट स्वेसर को मजाक की मूर्खी बोले—वीडम बुनिया में तुम्हारा कोई प्रमी भी है ? बुढ़िया ने घुंटे ही जबाब दिया—बटा मरे प्रमी तो सब स्वयं सिपारे, बस एर तुम जीते बचे हो। फिलासॉफर साहब ऐसे भ्रमे कि भागते ही बना।

(६) गुरमी के प्रसिद्ध प्रधान मन्त्री असमत पाठा जब सोबाण की वाँडेल में सेवती की सन्धि को बदलवाने के लिए आये तो घाप का सामना भाड करन से हुआ।

साहस कर्म की शक्ति तो मशहूर है। आपने इस समय में कि वह दुनिया के सबसे शक्ति-सम्पन्न साम्राज्य के प्रतिनिधि हैं, तुर्की-प्रतिनिधियों पर रोब बनाने के लिए राष्ट्र-बासी तुर्कों पर झुड़ हमसे किये। साहस कर्म का यह डग देखकर असमत् पाशा ने ऐसा मुँह बना लिया मानो साहस कर्म बोल ही नहीं रहे हैं। जब साहस कर्म बेड़-दो बंटे तक बीनों मार कर बैठ गये तो गाबी अघमत्त पाशा चौक कर उठ खड़े हुए और क्रान्त पर हाथ रखकर बोले—क्या आप तुर्की के विषय में कुछ कह रहे हैं। मैंने तो कुछ सुना ही नहीं। दूसरे बिचारों में डूबा हुआ था। साहस कर्म पर मर्दों पानी पड़ गया।

दिसम्बर १९३४

## वशाकरण का नया रूप

हमारे रतिशास्त्र में बशीकरण का एक विरोध महत्त्व है। ऐसी हरेक पुस्तक में आपको बशीकरण की विधि और मन्त्र और उसकी क्रियाएँ सब बड़ी तल्लीन के साथ मिलेंगी। अन्त का उन पर विश्वास भी है और हजारों प्रेमी-जन एकान्त में बैठकर इन क्रियाओं को सिद्ध किया करते हैं। योरोप में भी अब बशीकरण का प्रचार होने लगा है, लेकिन नवी पद्धति के अनुसार हरेक काम बहो व्यवस्थित संवृत्त और व्यापारिक रीति से किया जाता है। बशीकरण भी इसका अपवाद न था। एक महात्म ने इसका एक स्कूल भी खोल लिया और अच्छी प्रीस लेकर सिध्यों को उसके सबकु भी देने लगे। हाँ सबकु पत्रों द्वारा दिये जाते थे। प्रचार इतना बढ़ा कि बहुत अल्प सिध्यों की संख्या बाख्द हवार से ऊपर पहुँच गयी। शिक्षक महोदय केवल बानन पाठों में सिध्यों में ऐसी योग्यता पैदा कर देने का जिम्मा लेते थे कि उसके प्रमी या प्रमिका उससे मिलने के लिए धन्युर हो उठें। बिबर वह तक थे उस पर उसका आशु बम बाय। इस विज्ञप्ति का वह मतीबा हुआ कि सारी दुनिया से पक्क-व्यवहार होने गया और एक हवार से प्रमिक लाभ यह कमा सीखने लगे। अब यह प्रम बा पया तो उसकी पावमाइत भी होगी ही चाहिए। युवक और युवतियाँ शिक्षार की खोज में घूमने लयीं। धान्निर प्रेम लुप्त गया और शिक्षक महोदय गिरफ्तार हुए और उनके ऊपर मुक्यमा चलाना गया। प्रमियोग यह था कि यह लोय युवकों को दुश्चरित्रता का पाठ पढ़ाते हैं जिससे बरों की बरबादी के सिवा और कोई नतीजा नहीं। यह बिद्यालय पेरिस में था अगर इसका प्रचार बीस मिल-मिल मापाघां में होता था। मजा यह है कि बहुधा यह बशीकरण विधि केवल मनोरंजन के लिए सीखी जाती थी।

अतीत भारत के उपासकों को योरोप की इस तकामी पर शायद इस पुरानी कमा को फिर बनाने की धुन सवार हो क्योंकि योरोप मना-बुरा तो कुछ करे, हम उनके पीछे चलने की तैयार हैं।

फरवरी १९३५



‘हस’-कथा



## कुछ अपने विषय में

'हूँ' का एक रूप समाप्त हो गया। हम इसके बावजूद बंध निकाम सके इसकी बग़ाई हमें दूसरे हैं या न दें हम स्वयं अपने धाप की बिये लेते हैं। जिन उद्देश्यों के साथ वह क्षेत्र में उतरा या उर्खे हमने कहीं तक पूरा किया इसका निखय पाठक करें। हम तो यही कह सकते हैं कि हमने अपनी धीर से कोई भीतापन नहीं किया। हम धार्मिक हानि भी हुई रात्रैतिक संक भी भोगना पड़ा पर हमने हिम्मत न हारी। हम अपनी बुद्धियों को जानते हैं धीर यथासक्ति उनके दूर करने की चेष्टा कर रहे हैं। कुछ संज्ञकों की सलाह है कि 'हूँ' में धारि से अंत तक कहानियों के सिवा धीर कुछ न हो। यह प्रथमरूप से कहानियों की परिचा न रहकर पुण्य रूप से हो जाय। कुछ संज्ञक मुक्ता-संज्ञा धीर इसकी टिप्पणियों को कायम रखना चाहते हैं धीर परिचा का एकही नहीं बनाना चाहते। हम सुद यभी तक कुछ निरूपण नहीं कर सके। हम अपने प्रेमी पाठकों से अनुरोध करते हैं कि वह इस विषय में अपनी सम्पत्ति प्रशास करके हमारे पक्ष को निरिषत कर दें। हमें इसका खेर भी है कि हम मौलिक कहानियों की संख्या धीर धार्मिक न बढ़ा सके। हम अपने जीवनाल दोस्तों से धार्या करते हैं कि वह अपने नये रक्त धीर उस्ताह से साहित्य के इस धंग की पुति करेंगे। हम हर एक नये संस्कार को प्रोत्साहित करने को उत्तर है। हाँ यह धररय चाहते हैं कि जो संज्ञक इस मैदान में धार्ये वह एक धार्य लेकर धार्ये धीर साहित्य रचना को बन्धों का लेन न समझें। परिचयबामों के प्रभाव में आकर हम सोम भी श्रुंवार-प्रधान कहानियाँ लिखने ही में बना या विकास समझते हैं। कुछ जोम जीवन के गम चिन्तों को सीखना ही साहित्य का ध्येय समझ बैठे हैं किन्तु मानव जीवन में ऐसे अनेक त्राव हैं जिनका पाठक पर हमसे नहीं सम्झा सकर पड़ सकता है। मोटी बात इसी ही है कि जो कुछ लिखा जाय धार्या से धीर धार्या के निदू लिखा जाय।

पाठकों से किन्ही प्रकार की सहायता माँगना हम अपना धर्पिचार नहीं समझते। हम जब साहित्य-क्षेत्र में धार्ये से तो पाठकों से पुण्यकर न धार्ये से। हमें साहित्य में पून मिरान पुण करवा या उसे पूण करने का प्रयत्न कर रहे हैं। पाठकों को धर्पि हमारे उद्देश्यों से सहानुभूति है तो वह स्वयं हमारी सहायता करेंगे। धपर नहीं तो हमारा बहना ध्यन है। हमन धपन सामन जो धार्या रखना है, वह हमारा उत्साह बढ़ाते ररन

के लिए काफ़ी है। हम बाटे-गुटे के काममें नहीं जिसे स्त्रियर ने किस योग्य बनाया हो उस कठम्य को पासन करना उसका बम है और बम ब्यवसाय की बस्तु नहीं।

जून १९३१

## भारतीय साहित्य का संगठन

हाम में यी कन्हैमात्मान बी मुंशी ने इस प्रश्न पर अंग्रेजी पत्रों में एक बिचार पूरा लेख लिखा है जिसमें आपने यह दिखाने की चेष्टा की है कि अन्तर्प्रान्तीय साहित्यों का राष्ट्रीय संगठन किस प्रकार और किस रूप में किया जाना चाहिए। हम उसका स्वतन्त्र अनुवाद देते हैं—

‘इसमें कुछ समय से जब सभी प्रान्तों में साहित्यिक जागृति उत्पन्न हो रही है जिनके पास अपनी-अपनी विशेषताएँ हैं। इसका गतीका यह हुआ है कि हर एक प्रान्त में छोटी-छोटी साहित्यिक संस्थाएँ पैदा हो गयी हैं और वे सब प्रान्तीय साहित्य परिषदों का संघ बन गयी हैं, किन्तु साधारणतः ये संस्थाएँ अपने अक्षय-अक्षय चरित्र पर बस रही हैं। जिनमें कोई पारिस्परिक आदान-प्रदान नहीं होता। यहाँ तक कि इंडीय की साहित्यिक और सांस्कृतिक कृतियों के विषय में हमारा बिचाना ज्ञान है, उसना अपने पड़ोसी प्रान्तों के साहित्य के विषय में नहीं है। उस प्रान्त के बाहर ऐसे कम लोग हैं, जिन्हें उदीयमान सेलकों की संज्ञा और कला या उसकी साहित्यिक आराधों का कुछ ज्ञान हो। जिन प्रान्तों में हिन्दी नहीं बोली जाती वहाँ कुछ लोग तुलसी या सूरदास के नाम से भले ही परिचित हों लेकिन वे साहित्यिक उद्योग से अपरिचित हैं, जो धारा हिन्दी में हो रहा है। बंगला साहित्य का हमें जो कुछ परिचय है, वह केवल डाक्टर रबीन्द्रनाथ टैगोर की रचनाओं का है। गुजराती साहित्य के विषय में हम जो कुछ जानते हैं वह महारमा जी की आत्म-कथा के प्रसंगी अनुवाद द्वारा है। मबीन गुजरात ने किस रोमांटिसिज्म (मानव-मन्सी) साहित्य का विकास किया है, वह अन्य प्रान्तवासियों के लिए एक मुहुरजन्म स्थान है। कर्नाटक तामिलनाडु आन्ध्र केरल आदि प्रान्तों में किस नये साहित्य का निर्माण हो रहा है, उसका गोदावरी के उत्तर के निवासियों को कुछ भी ज्ञान नहीं है।

‘लेकिन वर्तमान साहित्य पर राष्ट्र भावना का आधिपत्य है और आपे भी रहेगा। सभी प्रान्तीय कृतियाँ एक विशाल राष्ट्रीय एकता की ओर उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही हैं और अगर भारत को अपनी राष्ट्रीयता सम्पूर्ण रीति से प्राप्त करना है, तो एक राष्ट्रीय साहित्यिक संघ भारत के लिए आवश्यक है, जिसमें हर एक प्रान्त अपना सहयोग प्रदान करे, लेकिन ऐसा संघ केवल हिन्दी के माध्यम द्वारा ही संभव है, जिसमें सभी भाषाओं के साहित्यकार संमिलित रूप से हार्दिक सहयोग दें। ऐसा होने पर ही हम प्रान्तीय साहित्य

परिषदों के संघ की स्थापना कर सकेंगे भी वास्तव में अखिल भारतीय साहित्य परिषद् होनी। सन् १९२५ से अब कि मैं गुजराती साहित्य परिषद् में सक्रिय भाग लेने गया था यह विचार मेरे मन में पुष्ट होता गया है।

‘गद धर्मस में महात्मा गांधी की अध्यक्षता में जो हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन हुआ उसमें यह योजना स्वीकार कर ली गयी। अन्ध साहित्यिक शक्तियों के साथ इस विषय पर मेरी जो बातचीत हुई, उसमें मुझे मामूली हुआ कि बहुतायत के मन में इसी तरह के विचार उठ रहे हैं और अब इस दिशा में प्रयत्न करने का समय था पहुँचा है। स्वयं महात्मा जी ने भी हिंदी माध्यम द्वारा निम्न-निम्न प्रांतीय भाषाओं के प्रतिनिधियों को एकत्र करने की व्यवस्था को काय-रूप में लाने में एक प्रवर्तक बनना स्वीकार किया। साधारणरूप से वह प्रतीत हुआ कि यदि इस तरह की कोई व्यवस्था सम्भव हो नाय तो फिर किसी न किसी रूप में एक अन्तर्प्रान्तीय साहित्यिक संस्था या ही जायगी। इस सम्मेलन ने यह प्रस्ताव स्वीकार किया—

देश के निम्न-निम्न प्रांतों के साहित्य-सेवियों में पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित करने और हिन्दी भाषा के सत्प्रवृत्ति के कार्य में उन लोगों का सहयोग प्राप्त करने के विचार से यह सम्मेलन निम्नलिखित राज्यों की एक समिति कायम करता है और भारवकता होने पर उन्हें अधिक आवश्यक बना लेने का अधिकार भी देता है—

१—धीपुत कर्नूलमागत भाखिकनास मुगली।

२—श्री हरिहर शर्मा।

३—श्री० विरभर शर्मा।

‘उक्त समिति नये सदस्यों का चुनाव करेगी और धारमिक कार्य हो जाने के बाद अपना काम शुरू कर देगी।

‘सबसे पहले प्रांतीय साहित्यों में समीपता लाने के लिए यह सोचा गया कि या तो हिन्दी के किसी वर्तमान मासिक पत्र का उपयोग किया जाय या एक नया पत्र निकाला जाय जिसमें प्रत्येक प्रांतीय साहित्य के लिए कुछ स्थान सुरक्षित रहे। प्रांतीय विद्वान उनके लिए लेख लिखें जो हिन्दी में क्पांतरित होकर प्रकाशित किये जायें। इस प्रकार इस पत्र में प्रति मास ये विषय रह्ये—

१—निम्न-निम्न प्रांत की साहित्यिक तथा सांस्कृतिक घटनाओं पर संक्षिप्त टिप्पणियाँ।

२—प्रांतीय साहित्यों के विकास का संक्षिप्त इतिहास जिसमें प्राचुरिक साहित्यों की उन्नति तथा उनमें पैदा होनेवाले राष्ट्रीय भावों की ओर विशेष ध्यान।

३—विभिन्न प्रांतीय भाषाओं में निर्माण होनेवाले भाषागत।

४—प्रांतीय साहित्य में निधी जानेवाली उच्च शक्तों की लघु कथाएँ

( कहानियाँ )।

३—उपन्यास ( कथा ) ।

६—प्रांतीय लोक-साहित्य का परिचय ।

७—एकता की माटक ।

८—प्रांतीय लोक-साहित्य के प्रमुख कवियों एवं सुमेसकों के विस्तृत शब्द-विषय तथा उनकी कथाकृतियों की साहित्यिक आलोचनाएँ ।

९—विभिन्न भाषाओं के प्रमुख साहित्यिकों के विहंगम शब्द-विषय ।

१०—विभिन्न प्रांतों की साहित्यिक एवं सांस्कृतिक तुलना ।

११—भिन्न-भिन्न भाषाओं में प्रकाशित होनेवाली पुस्तकों की साहित्यिक समालोचना ।

१२—विभिन्न प्रांतीय भाषाओं के पद्यों में प्रकाशित होनेवाले सामयिक साहित्य के अन्तर्गत तथा उनके हिन्दी अनुबाद ।

१३—विदेशी साहित्य सम्बन्धी संक्षिप्त टिप्पणियाँ ।

१४—प्रांतीय भाषाओं में प्रकाशित आदर्श उपन्यासों का मर्मनुबाद ।

१५—राष्ट्र-निधि सम्बन्धी कथा ।

संक्षेपतः यह मासिक पत्र आगमन महसूस होनेवाली एक अविनाशनीय भारतीय साहित्यिक मुक्तपत्र की आवश्यकता की पूर्ति करेगा । इस कार्य को सफल बनाने के लिए विभिन्न प्रांतों के मुख्य साहित्य-सेवियों साहित्य परिषदों तथा अन्य साहित्यिक समितियों और आसकर राज्याधी समाचारपत्रों के सहयोग की नितांत आवश्यकता है । इस आवाहन को सफल बनाने के लिए पहले कुछ कमीन तैयार करने की जरूरत है और हर एक प्रांत में कुछ ऐसे साहित्य-सेवियों की जरूरत है, जिन्हें इस उद्यम में दृढ़ उत्साह हो और इस पत्र के द्वारा मैं देख सकूँ कि उन साहित्य परिषदों साहित्यिक संस्थाओं तथा उन साहित्य-सेवियों से सहयोग के लिए आग्रह और अनुमति कर पाऊँ जो इस कार्य से प्रेम रखते हों ।

‘मुक्तकाल में आम संस्कृति की लगी हुई लगन ने प्रांतीय सीमाओं को मिटाकर भाषा और निधि का भेद छोड़ दिया है साहित्यिक और सांस्कृतिक एकता प्रस्थापित करने की अरिष्ट कोशिश की थी । वर्तमान संस्कृति से साधना की जो सुरक्षाएँ मिलती हैं और राष्ट्रीय भावना राजनैतिक जीवन में जो प्राण संचार कर रही हैं, उसका परिष्कार ही सांस्कृतिक एकता प्रस्थापित करने में अवरुध होगा और बस-बीस वर्ष की अल्प अवधि में ही हम लोप देखेंगे कि अद्विशांतिनी राजभाषा का उदय और प्रांतीय साहित्यों का पारम्परिक अस्तित्व हो चुका है, जिसमें हर एक प्रांत ने अपने सर्वोत्कृष्ट सृजन की भेंट दी है ।

जुलाइ १९३५

## ‘हंस नये रूप मे

राष्ट्रभाषा की वर्तमान भागति के बाद अगरे राष्ट्र-साहित्य के समन्वय के मद्देनार कुछ सिद्धि तो यह उक्त भागति का अयमान होगा । जिन उपकरणों से राष्ट्र बनता है, उनमें भाषा और साहित्य का स्थाप कितना ठँबा है यह हम सभी जानते हैं । हिन्दी को उसकी व्यापकता और सरलता के कारण राष्ट्र ने अपनी भाषा स्वीकार कर लिया और अट्टारह वर्षों से सम्पूर्ण देश में उसके प्रचार का आयोजन सफलता के साथ हो रहा है और अब समय आ गया है कि हम अपना क्रम भाषे बढ़ाये और राष्ट्रभाषा के प्रचार में जो सुविधा तयार कर दी है, उसमें भारतीय राष्ट्र-साहित्य का भाग लगायें । यह मानना सिद्धने ही सज्जनों के मन में कई साल से उठ रही थी पर उसे कार्य रूप में लाने से लिए जिस पक्ष प्रदत्तकी अकरत थी वह न मिला । इस अय इन्हीं हिन्दी साहित्य सम्मेलन में—जिसके समापति महारमा थाभी से—इस आशय का प्रस्ताव मजूर हुआ और जिन पब्लिश हासों से अट्टारह अय पहले राष्ट्रभाषा प्रचार का आयोजन हुआ था उन्हीं हासों से भारत के प्रांतीय साहित्यों के समन्वय का आयोजन भी हुआ । बीजन और संस्कृति के अय सभी विभागों में अलिप्त भारतीय संस्थाएँ मौजूद हैं लेकिन आशाओं के अंदे के कारण अभी तक अलिप्त भारत की कोई साहित्यिक संस्था नहीं है । भाषा-अंधे की दुगम आई को पार करने के बाद हमारा रास्ता साफ हो गया है और वह अयसर आ गया है कि हम साहित्यिक समन्वय का काम शक कर व ।

इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए पहली आवश्यकता एक एस मासिक पत्र की है जिसमें सभी प्रांतीय महारबियों के लेख प्रकाशित हो और भाषाओं में अर भाषा-प्रधान होने अये जिससे राष्ट्र-साहित्य का प्रोत्साहन और प्रगति मिले । इसी तरह साहित्य में वह उन्नीय मनोबुत्ति उत्पन्न होगी जिससे भाषे अकरत राष्ट्रीय साहित्य परिपद् का विकास होना

अतएव हमने निश्चय किया है कि आगामी अक्टूबर से हिन्दी के सुप्रसिद्ध मासिक पत्र ‘हंस’ को इस अये रूप में प्रकाशित किया जाय । ‘हंस’ अब एक निमित्त अयनी द्वारा प्रबंधित रूप में निकलेगा जो इसी उद्देश्य से बनायी गयी है । उममें प्रति मास ती लच्छ होयें और उक्तका आर्थिक मूल्य पाँच रुपये होयगा । प्रांतीय विद्वानों और सुलेखकों से लेख प्राप्त करना उन्हीं हिन्दी रूप में आगा साहित्य के प्रत्यक्ष अंग की पूर्ति का प्रयत्न करना मेहनत का काम भी है और लख का भी । दग-आरु प्रांतीय साहित्यों के लेखों का अनुवाद करने के लिए हम योय्य अनुवाहकों का प्रपण करना पड़ा है और कई सज्जनों में तो त्याग भाव से हमारी सहायता करने का अयन किया है । प्रत्येक प्रांत में राष्ट्र-साहित्य के प्रेमियों में इस उद्योग का जिन उगाह से अगात किया है वह अकार लिए अट्टर आशाजनक है । हमें विश्वास है कि राष्ट्र के सुतारा

घौर पाठक दोनों ही अपने सहयोग सह हम प्राप्त हो सकेंगे। तभी वह उपासीनता और प्रसन्न हो होगी जो एक प्राप्त को दूसरे प्राप्त के साहित्य से है। हमें हय है कि हमें सम्पादन काम में गुजरात के प्रमुख साहित्यकार श्रीमत् कर्णामाताल मुंशी का सहयोग प्राप्त हो गया है, जो इस विचार के अन्वयात् कर्ण आ सकता है।

काम कितना महत्वपूर्ण है, यह सिद्ध करने की जरूरत नहीं। हम तो उस भविष्य की अन्वयना करते हैं जब भारत के सुविधागत सेक्टरों की रचनाएँ भारत के एक कोने से दूसरे कोने तक आने से पड़ी आवेगी और सम्पूर्ण देश उन पर गव करेगा। तभी हमारे साहित्य को संसार के साहित्य-समाज में और अन्तर का स्थान मिलेगा और संसार के सांस्कृतिक विकास में उसका भी भाग होगा।

जिस पत्रिका के निर्माण में प्रमुख भारत की साहित्यिक प्रतिभा योग देवी वह किस कोटि की होगी इसका अनुमान किया जा सकता है।

हम यहाँ उस लक्ष्य का निवारण कर देना उचित समझते हैं जो दुर्भाग्य से कुछ संशयों के मन में उत्पन्न हुई है। यों तो चारों तरफ हमारी योजना का स्वागत ही हुआ है पर कुछ ऐसे महानुभाव भी हैं जिनका कथन है कि जब हम अंग्रेजी भाषा का माध्यम से अपना काम चला सकते हैं तो हमें राष्ट्रभाषा नीवर्धन की क्या जरूरत है। उनका कथन है कि राष्ट्र-साहित्य का स्वीकार केवल हिन्दी को अन्य प्रांतीय भाषाओं पर अपना प्राधिपत्य बनाने के लिए करना किया गया है। हम बड़ी मन्नता से निवेदन करना चाहते हैं कि हमारा प्राधिपत्य प्रांतीय भाषाओं को अति पहुँचाना नहीं बल्कि उनके सहयोग से राष्ट्र-साहित्य का निर्माण करना है। जिस हाल पर बैठे हों उन्हीं की जड़ में कुल्हाड़ी मारकर हम अपनी भूलता ही का परिचय दे सकते हैं। हाँ यह हम अक्षर्य स्वीकार करते हैं कि हम राष्ट्र के प्रत्येक व्यक्ति के लिए राष्ट्रभाषा का ज्ञान आवश्यक समझते हैं अन्वयात् यह राष्ट्रभाषा ही फैली होगी किन्तु हमने तो भाषाओं को अति पहुँचाने की कोई सम्भावना नहीं। उनका जो श्रेय है वह तो बना ही रहेगा हाँ उनके प्रतिभाशाली सेक्टरों के लिए यश प्राप्ति का श्रेय और विलुप्त हो जायगा। अन्वय इस उस भाषा को अति पहुँचती है तो उसे लाभ कैसे पहुँचेगा इसका अनुमान हम नहीं कर सकते। उन्हीं अंग्रेजी के पक्षपातियों की बात उनसे हम इसके सिवा और क्या कह सकते हैं कि जब तक राष्ट्र के अर्थों रूपसे अर्थ करके हय भी में एक धार्मी की भी अंग्रेजी पढ़ने और समझने के योग्य नहीं बना सके और सम्पूर्ण राष्ट्र को अंग्रेजी पढ़ाने के लिए कितने धन की जरूरत है, वह इस कथन से ही गाम्भीर्य से बाहर है।

जुलाई १९३४



## हंस' का नया रूप

प्रायः के यह धारणा परसे जब 'हंस' का जन्म हुआ तभी से उसमें भारत की धर्म-शासनों की साक्षिक प्रगति से अपने पाठकों को परिचित कराने का प्रयत्न किया है। यद्यपि छात्रों के अभाव से उसे इस उद्देश्य में इच्छित सफलता नहीं मिल सकी पर यह उद्देश्य हमेशा उसके सामने रहा। कोई राष्ट्र केवल इसलिए राष्ट्र नहीं होता कि वह एक राज्य के अन्तर्गत है बल्कि इसलिए भी कि उसमें सामूहिक एकता हो चुकती है। सिंधि भाषा और साहित्य संस्कृति का मुख्य धर्म है। सिंधि का प्रथम तो राष्ट्र ने तब कर दिया और नामही सिंधि राष्ट्र की सिंधि स्थिर हो गयी है। भारत के विषय में भी अब कोई मतभेद नहीं रहा। हिन्दुस्तानी हमारे राष्ट्रभाषा स्थिर हो गयी है। अब साहित्य को भी हम प्राणोदया के मनुष्यित्व धर्म से निकालकर राष्ट्रीयता के बुद्धि धर्म में लाकर सांस्कृतिक एकता में जो कर्म भी उसे पूरा कर देगा चाहे है। यह साम्प्रदायिक और बौद्धिक धारणा जो इस समय सम्पूर्ण राष्ट्र में ममान कर में प्रवाहित हो रही है भाषा-भेद के कारण अक्षय होकर रह जाती है और सम्पूर्ण राष्ट्र को उसके अन्त-मुखा से सामान्यित होने का अवसर नहीं मिलता। अतः भारत का अपनी राष्ट्रीयता सम्पूर्ण रीति से प्राप्त करना है ता वह भारतीय साहित्य का मन्दन और प्रचार करना होगा। इस महत्वपूर्ण कार्य का भार 'हंस' ने अपने ऊपर लिया है। अतः प्रथम में हंस भारतीय साहित्य के मुख्यपत्र के रूप में निकलना। उसमें एक ही भाषा पठे जाने और उसके सांस्कृतिक मुख्य धर्म रूप और अन्त-सांस्कृतिक धर्म रूपों का धारण होना। उसका सम्पादन श्रीमंत कर्तव्यवान् मन्त्री और मेरे हाथों होना। हम प्रयत्न कर रहे हैं कि भारत के सभी बुद्धिवात साहित्यकारों का सहयोग प्राप्त करें। अतः भाषा को हमें धर्मोत्तरित किया है। सब तो यह है कि यह काम अभी की प्रवृत्ति में उद्योग गया है। 'हंस' के प्रकाशन के लिए अर्थ में एक निमित्तक सम्पत्ति बनायी गयी है और अब बड़ी उत्तम प्रकाशन करेगी।

'हंस' पूर्ववत् 'हंस' कार्यालय बनारस में निकलना। उसका एक कार्यालय एक ही प्लाट एस्पेन्स रोड अम्बई में भी है। हमें यह धारणा बनत राष्ट्र भाषा और राष्ट्र-साहित्य की सेवा के उद्देश्य से किया है। अतः कोई व्यापारिक स्वार्थ हममें नहीं है अतः हम अपने सभी पाठकों से यह आशा करते हैं कि जैसे अब तक हमें 'हंस' को अपनाया है उसी भाँति उसके अन्तर्गत रहे और केवल धर्मोत्तरित रूपों को अन्तर्गत के कारण हमें किमुत न हार्ने। उक्त बुद्धि धर्म में हमें हंस यह मन्द-रहित हुए भी नहीं है। अनुमान कीजिये कि कनाड़े सामान्य समस्त संस्था मराठी गजराणी उक्त धारि भाषाओं की सामान्य रीति में उपस्थित करने के लिए हम विद्वान् व्यय और विद्वान् उपयोग करना पडा है और आगे पड़ेगा। अतः 'हंस' के द्वारा सम्पूर्ण भारत के साहित्य के

परिचित हो जायेंगे। प्राचीन साहित्यों में जो कुछ अष्ट घोर सुन्दर है, वह आपको 'हुस' द्वारा प्राप्त हो जायगा। उसके साथ ही यह पूर्ववत् हिन्दी-साहित्य की धनुषी रचनाएँ भी आपको अँट करता रहेगा। क्या यह खेप की बात नहीं है कि अभी तक हम प्राचीन साहित्यों की प्रगति और उनकी मूल धारणों से बेखबर है? पुराने बँदाभी साहित्य से हम बहुत कुछ परिचित हैं। लेकिन उसकी साम्प्रतिक गति का हमें कुछ पता नहीं है। दक्षिण भारत के साहित्य से तो हम सर्वथा अज्ञान हैं। जब भारत एक राष्ट्र है, हिन्दी राष्ट्र-निधि है, तो भारतीय साहित्य में वां कुछ भी निकले वह राष्ट्र-साहित्य है। तभी हमारे साहित्यिक वृत्तियों का विकास होगा तभी हम साहित्य को राष्ट्रीय आपस से आपस तभी हमारे साहित्यिक आदर्श ठके होंगे। आप हुस' के प्राहक बने रहकर राष्ट्र-साहित्य के प्रति अपने कर्तव्य की इतिभो न समझें। यथासम्भवं हुस' के प्रचार का सहयोग भी करें और इस सांस्कृतिक यज्ञ में सहयोग देने का यश लें। जब अन्य भाषा भाषी सम्मन राष्ट्रभाषा के प्रति इतना उत्साह दिखा रहे हैं और हुस' के प्रकाशन के लिए धन का आसोजन कर रहे हैं और अन्य भाषाओं के उद्योगी संसक 'हुस' के साथ सहायतापूर्ण सहयोग कर रहे हैं, तो क्या हमारे पाठक वा इतने विनों 'हुस' के प्राहक रहकर अपने साहित्य-धर्म का परिचय देते रहे हैं अथवा अपने राष्ट्र-साहित्य-धर्म से हम प्रोत्साहन न लेते? हमारे जिन माननीय सहयोगियों ने इस विचार के प्रचार में हमारे सहमता की हैं, उनके हम हृदय से धनुषद्वेष है।

अगस्त मितम्बर १९३५

## भारतीय साहित्य के संगठन की एक आलोचना

'हुस' के पाठकों को ज्ञात होना कि यह मास धीमुठ कन्हैमासास मुक्ती ने 'भारतीय साहित्य का संगठन' नामक एक पम्पलेट प्रकाशित किया वा जिसमें उन्होंने हिन्दी में एक ऐसे पत्र की आवश्यकता बतसाबी की और उसके लिए एक स्कीम भी पैरा की की जिसमें प्राचीन साहित्यों के विषय में हिन्दी में प्राचीन विद्वानों के लेख प्रकाशित किये जायें और हिन्दी के माध्यम से एक ऐसा शोध वेद्यार किया जाय जिसके द्वारा मित्र-मित्र प्राप्त तथा हिन्दी के पाठकों को अन्य प्राचीन के साहित्य में परिचय हो जाय और राष्ट्र के मित्र साहित्यों में जो खेपेठ इतिथी निकलें वह केवल उन प्राप्त के धन्दर न रहकर सम्पूर्ण राष्ट्र तक पहुँच सकें। हमारे मित्र धीमुठ कन्हैगुण की विद्याभकार ने अन्त के विज्ञान भारत' में एक विचारपूर्ण लेख लिखकर यह शंकाएँ प्रकट की हैं—

१—जिन साहित्यिकों की रचनाएँ उन पत्र में अर्पणी उन्हें भी ठीक ठीक से

आस नहीं होगा कि उसकी रचना का हिन्दी में अनुचित होकर बना कर बन गया है। यद्यपि परोपकार को भाषना से किना क मिहात्र में धाकर धरवा धोर कितो प्ररणा से धन्य प्राप्ती के साहित्यिक उन पत्र के लिए सेह जाहे भले भेज व तयारि वह उस पत्र से कोई बिना शिलकस्तो नहीं रह सक्ती। परिछाम यह होया कि यत्र पत्र बहुत रोध दूरर नरे का धोर कुछ समय क बार तोमरे एरे का बन जायगा।

२—हिन्दी समय को उस पत्र से धन्य प्राप्तीय भाषाया की रचनाया का मकेएइ ईइ सास्वान् धवरम मिल जायगा परन्तु उनके द्वारा धन्य प्राप्ता की जनता को मपूछ राए क साहित्यिकों का परिचय किस प्रकार मिल सकेगा ?

—इस विषय का जकेया एक पत्र बना कर भगा यह ता प्रचार का-या काय है धोर हम इच्छि से ता यह धरवा रहेगा कि हिन्दी क सम्पुष्ट पत्रा तथा पत्रिकाया म हिन्दी ही क्यों सम्पूष भारतवष की सभी पत्र-पत्रिकायो म यह भाषना भग्न का प्रयत्न किया जाय कि वे धन्य प्राप्ता का रचनाया मे भी धन्य प्राप्ता का परिचय करान का अधिकतम प्रयत्न करे।

४—धन्य म धान्य राष्ट्रीय साहित्य परिषद् को उन्नत बनानी है धोर इस पर बार दिया है कि पहल यह परिषद् बनाया जाय धोर एया न उनी परिषद् को धोर स पूष साहित्यिक बनकर निकल।

हमें चन्द्रगुप्त जी की यह धानाचना पकर मुगा हुई। उनम मापम हाता है कि विचारवान लोग इस प्रश्न पर विचार कर रहे हैं, या धाने बन्द करके निमो बाण को स्वीकार कर लेन से या साक उपासीन हो जाने से कहीं धरवा है। हम माई चन्द्रगुप्त जी की संकाधों का महत्व समझने हुए भी यह निवेदन करते हैं—

१—हम जिन साहित्यिकों के सेव प्ररक्षित करते यह सीधे उही से 'हम के लिए प्राप्त किये जायेंगे धोर यह प्रयत्न करते कि वे गुरु धन्य सेखों के अनुवाद करा के या स्वयं हिन्दी में लिखकर ( अगर उन्होंने हिन्दी का ज्ञान प्राप्त कर लिया है ) भेजें। धपर यह दोनों बातें न हुईं तब हम उनसे सेखों के अनुवाद करावेंगे। हम यह प्रयत्न करते कि उनके तात्र सेव ही हम जिनें धोर हमारे लिए गाम धोर पर लिये य हा। को धन्य नहीं है कि कब वे अपनी भाषा व पत्रों की सेव देते हैं तो 'हम' को न दें जा उनके भग की सम्पूष भारत म परेचान का इरासा रखता है। हमारा तो क्यान है कि कयता मराठी धारि मगध माराधों के मुनेयक मा इमे कभी मारण न करे कि उनके सेव एम पत्र में धरे जो सभी भाषाया की जनता के पाम परेचने का धारा धाने मामने राता है धोर उनको बुरा करने के लिए प्रयत्नशास है। हिन्दी मराठी ही का सीधिए। माई चन्द्रगुप्त जी को धपर यह विरवान हा जाय कि धम पत्रिका में धरना सेव भेजन से बह सम्पूष भारत के राभागा प्रथियों के हाथों में परेच जायगा तो हमें निरयाम है यह उमो पत्र में लिखे। ऐसी नशा में हमें ता बाई कारन नहीं

मान्य होता कि हंस को अष्ट सामग्री में मिश्रित और वह तीसरे बरतने का पत्र होकर रह जाय ।

२—हिन्दी जगत् को अब अंग्रेजी फॉन्ट या योरोप की अन्य भाषाओं की सेक्रेटरी हूँ नहीं अब फोन्ट और फिग्य हूँ सामग्री बाह्य हो सकती है तो हमारा क्या है कि अन्य भारतीय भाषाओं की सेक्रेटरी हूँ सामग्री भी बाह्य हो सकती है । लेकिन अब हम वह सामग्री स्वयं लेकर स लेगे और यह बाह्य कर लेगे कि वह 'हंस' के लिए ही मिली गयी हो ता वह सामग्री सेक्रेटरी हूँ न होकर फस्ट हूँ ही होगी । और एक प्रान्त के निवासियों के लिए दूसरे प्रान्त के साहित्य का परिचय पाने की अथवा इच्छा होगी ता 'स' उनकी सेवा के लिए तैयार ही है । अगो अथवा एक गुजराती पाठक वेतगू साहित्य के विषय में कुछ जानना चाहे, तो इसका उसके पास कोई साधन नहीं है । 'हंस' के प्रकाशित हो जाने पर उसकी यह इच्छा बड़ी आसानी से पूरी हो जायगी । इस तरह 'हंस' के द्वारा सभी प्रान्तों के साहित्य-प्रमियों को अन्य प्रान्तीय साहित्या से परिचय मिलना बहुत आसान हो जायगा ।

३—हमारे भाई सम्पूर्ण भारत के पत्र-पत्रिकाओं में जिस प्रकार की भावना भरने का प्रयत्न करना चाहते हैं 'हंस' वही प्रयत्न है । सभी पत्र गल्प छापते हैं इसलिये कोई पत्र कुछ गर्वों ही का न हा यह तो उनका अभिप्राय नहीं हो सकता । राजनैतिक लेख सभी पत्रिकाओं में अन्य विषयों के साथ मिले जाते हैं लेकिन ऐसे पत्र नी तो हैं जो राजनैतिक और केवल राजनैतिक लक्ष्य ही छापते हैं । इन उद्देश्य का एक पत्र जारी करके हम सभी प्रान्तीय साहित्यों का एक-दूसरे के समीप कर देना चाहते हैं और हमारे मुख्य विचार में राष्ट्र-साहित्य को यही बुनियाद हो सकती है ।

अन्त में हम यही निश्चय करना चाहते हैं कि राष्ट्र-साहित्य-परिषद् स्थापित करने का विचार भी हमारे मन में है और यह पत्र उसी परिषद् के लिए जमीन तैयार करेगा । पहले हमारी साहित्यिक अभिरक्षा में राष्ट्रीयता का विकास तो हो फिर परिषद् बनने की तैयारी देर लगती है । हंस की महाहकारी समिति में सभी प्रान्तीय भाषाओं के प्रतिनिधि रहे गये हैं और हमें आशा है शीघ्र ही वह कार्य बन जायगा । हम अन्तमुष्ट थी की और समस्त साहित्य प्रमियों का विचार विमते हैं कि हमें राष्ट्र साहित्यिक पत्र होना जैसा उमम रहनेवाले स्थानों की मूर्त्ति से मान्य बाहिर है । उनका प्रयास काय है—साहित्य-सेवा । और प्रचार भी साहित्य-सेवा का एक अंग है इनमें कौन इन्कार करेगा । हम भाई अन्तमुष्ट में प्रार्थना करते हैं कि इन शुभकार्य में सहयोग दें । उद्देश्य हमारा और उनका एक है जबकि साधनों में अन्तर है और सभी वर्ये काय पहल सुल-स्वप्न से शक होते हैं । अथवा सुल-स्वप्न बगनेवाले न होते तो संगार मन्मूढि होकर रह जाय ।

अगस्त सितम्बर १९३५

## श्री मुंशी गुलाबराय राम० रा० का पत्र

हम का वह काय चिन्ता महत्त्वपूर्ण है। इस संबंध में हमारे पास कई पत्र आये हैं। पर अभी तक मुंशी गुलाबराय का पत्र विशेष महत्त्व रखता है। इसलिए कि उसमें केवल इस धारणा का प्रस्ताव ही नहीं है बल्कि भाषा का प्रयोग के विषय में कुछ सम्मति भी प्रदान की है जो हर प्रकार से अनुमोदनीय है और हमें आगे चलकर विशेष रूप से सहायता देनी। ध्यान सिद्ध है—

यह कार्य बड़ा महत्त्व का है और विचार-रूप में तो बहुत दिना से चला आता है किन्तु अभी तक इस सम्बन्ध में कोई कार्य नहीं हुआ था। अब बड़े रूप की बात है कि उसके कार्य करने में परिश्रम श्रम में परमा कदम रखा गया है। इसका अर्थ विशेषकर श्री कर्मदासाह जी मुंशी ही को है। बड़े जिन लोगों ने इन योजना में सहयोग दिया है वे सभी धन्यवाद के पात्र हैं।

'यदि हम इस बात का और अधिक मना चाहते हैं कि हम या कुछ मौखिक कार्य करें और संसार के ज्ञान-संचार में कुछ बड़क कर दूसरे देशों का कुछ सुकाव ता परन्पर सहकारिता के बिना काम नहीं चल सकता। भारत में न पारिभाषिक शब्द प्राप्त एक से है किन्तु भारतभय में एक प्राप्त में भी पारिभाषिक शब्द एक नहीं है। प्रायः केवल अपनी उड़ बाबल की शिक्षाओं धारण करता है। इतिहास का पुति के लिए यह ज्ञानता परमापरक है कि हमने प्राप्त के इतिहासों में अपने-अपने प्राप्त के इतिहास के विषय में क्या सोच को है क्योंकि इतिहास की बहुत कुछ नामों धारिण्य और जनयुतियों में रखा करती है। इस कार्य का सुचारु रूप में चलाने के लिए कुछ प्रारम्भिक कार्य करने की आवश्यकता है। उन कार्य के सम्बन्ध में प्राप्त लोया न ही बहुत कुछ मोचा हाया मने जो दो-एक बालों मोचो है वे आपसे विवेक करता है—

१—प्राचीन साहित्यों की एक विषयवार अनुसंधानों की आवश्यकता। जिनमें सब सहायता जान कि एक-एक विषय पर किन्-किन् प्राप्त में कौन-कौन सी किताबें लिखी गयी हैं।

२—विभिन्न प्रांतों के लेखकों को सूची। जिनमें यह रहे कि कौन-कौन सगक किन्-किन् विषय में लिखे रहते हैं।

३—उपरोक्त प्राप्त में परिष्कृत का छात्र से एक-एक परिष्कृत हूँ किन्तु हिन्दी विधि का व्यवहार ही भारत बाह्य प्राचीन ही रहे। यदि उन प्राप्त की विधी पत्र या पत्रिका में कोई महत्त्वपूर्ण लेख हो ता उनकी सूचना और उपयुक्त भीष्टा मार रखा करे। विभिन्न-विभिन्न प्राप्त के पत्र पत्रिकाओं के बरतार परिषद का भी उद्योग रहे।

४—हिन्दी साहित्य सम्मेलन के साथ ही सचका सत्य दिनों धरम पर धरम प्राचीन-साहित्य-परिषद् हुआ करे।

५—अन्तर-राष्ट्रीय खेलकों के परस्पर पत्र-व्यवहार का सुयोग्य करणमा पाव ।

६—पारिभाषिक शब्दों के एकिकरण के लिए एक समिती बने जिसमें मिश्र-मिश्र प्रायों के और मिश्र-मिश्र विषयों के विशेषज्ञ रहे ।

७—मिश्र मिश्र साहित्य सम्मेलनों में अल्प प्राय क मोम भी धामनिष्ठ किये जाया करें और उनसे सामान्य उन सम्मेलनों में भी एक या दो व्याख्यान हिन्दी में हुआ करें । धाशा है कि अपनी योजना बनाने समय आप लोग इन बातों का भी ध्यान रखेंगे ।

अगस्त-सितम्बर १९३५

## प्रोफेसर सिलवन लेवी का स्वर्गवास

ईरान के सुविख्यात धाचार्य प्रो सिलवन लेवी के स्वर्गवास से धाय संस्कृति और वंश के ऐसे महान का स्थान सुना हा गया जो बरब पूरा न हो सकेगा । धाय पुरातत्व के प्रकृत्य परिष्ठत में और संस्कृत के भी पूरे विद्वान् थे । इसके साथ ही धाय बड़े ही उदार, ब्याप्तु और नरम प्रकृति क मनुष्य थे जो विद्वान् में बहुत कम पायी जाती हैं । पेरिस में भारतीय विद्यार्थियों को धाय हर तरह की सहायता देते रहते थे । धाय कुछ दिनों के लिए बोलपुर के शांतिनिकेतन में भी आकर रहे थे । धायने ईश भाषा में भारतीय संस्कृति वंश और पुरातत्व पर कई प्रमाणिक अर्थ लिखे हैं । धायके बहु भाषा विद् होने का यह हाल का कि वंश की शायद ही ऐसी सुसंस्कृत भाषा हो जिसका धायको ज्ञान न हो । धायका मनु स्वभाव और युवकों के प्रति सरल स्नेह देखकर प्राचीन काल के धायों की याद ताजी हो जाती थी । कितने ही छात्रों की बहु वन से भी सहायता करते थे । मुसीबत और दुःख के मत्तयें हुए प्रायिका के लिए धायको सहायता नदीन कुपाशीम रहती थी ।

जनवरी १९३६

